Katha Sahitya Evam Nibandh

DHIN403

LOVELY PROFESSIONAL UNIVERSITY

LOVELY PROFESSIONAL UNIVERSITY

कथा साहित्य एवं निबंध

Copyright © 2012 Laxmi Publications (P) Ltd.
All rights reserved

Produced & Printed by
LAXMI PUBLICATIONS (P) LTD.
113, Golden House, Daryaganj,
New Delhi-110002
for
Lovely Professional University
Phagwara

पाठ्यक्रम

(SYLLABUS)

कथा साहित्य एवं निबंध

उद्देश्य

- छात्रों में साहित्य को समझने एवं उसके आस्वादन की योग्यता का विकास करना।
- छात्रों को गद्य साहित्य की विभिन्न विधाओं से परिचित कराना।

Sr. No.	Content
1	मुंशी प्रेमचंद की लेखन कुशलता एवं साहित्यिक योगदान। गोदान : कथावस्तु, उद्देश्य, मुख्य समस्या, सभी पात्रों का चरित्र-चित्रण, संवाद योजना एवं आलोचनात्मक समीक्षा।
2	अचार्य हज़ारी प्रसाद द्विवेदी जी की लेखन कुशलता। बाणभट्ट की आत्मकथा : कथावस्तु का सारांश, कलात्मक सौंदर्य, सभी पात्रों का चरित्र-चित्रण, संवाद योजना एवं तात्विक समीक्षा।
3	फणीश्वरनाथ रेणु की लेखन कुशलता एवं साहित्यिक योगदान। मैला ऑचल : कथावस्तु/कथासाहित्य, ऑचलिकता, उद्देश्य, सभी पात्रों का चरित्र-चित्रण, संवाद योजना एवं तात्विक समीक्षा।
4	भीष्म साहनी की लेखन कुशलता एवं साहित्यिक योगदान। तमस : नामकरण, प्रमुख उद्देश्य, कथावस्तु का सारांश, तमस की सांप्रदायिकता, संवाद योजना, भाषा-शैली एवं तात्विक समीक्षा।
5	मन्नू भंडारी की लेखन कुशलता। आपका बंटी : कथावस्तु का सारांश, उद्देश्य, प्रमुख समस्या, सभी पात्रों का चरित्र-चित्रण, संवाद योजना एवं भाषा शैली।
6	प्रेमचंद की प्रतिनिधी कहानियॉ : कहानियों का सार एवं प्रमुख पात्रों का चरित्र-चित्रण एवं प्रेमचंद की लेखन कुशलता।
7	आचार्य रामन्द्र शुक्ल का साहित्यक योगदान।
8	चिन्तामणि (श्रद्धा, भक्ति, लोभ-प्रीति, लज्जा-ग्लानि, शीर्षक निबंधों का सार एवं प्रमुख गद्यांशों की सप्रसंग व्याख्या)।
9	विष्णु प्रभाकर की लेखन कुशलता। जीवनी आवारा मसीहा : कथावस्तु, उद्देश्य, नामकरण, प्रमुख गद्यांशों की सप्रसंग व्याख्या एवं प्रमुख पात्रों का चरित्र-चित्रण।
10	निर्मल वर्मा - यात्रा वृत्तांत : चीड़ों पर चॉदनी (कथावस्तु, उद्देश्य, भाषा-शैली, प्रमुख गद्यांशों की सप्रसंग व्याख्या)।

विषय-सूची

इकाई (Units) **(CONTENTS)** **पृष्ठ संख्या (Page No.)**

1.	मुंशी प्रेमचंद का साहित्यिक योगदान	1
2.	'गोदान' का उद्देश्य	10
3.	'गोदान' के पात्रों का चरित्र–चित्रण	22
4.	'गोदान' की संवाद–योजना	40
5.	आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी का साहित्यिक योगदान	51
6.	'बाणभट्ट की आत्मकथा' : पात्रों का चरित्र–चित्रण	63
7.	'बाणभट्ट की आत्मकथा' : संवाद–योजना	73
8.	'बाणभट्ट की आत्मकथा' : तात्विक समीक्षा	90
9.	फणीश्वरनाथ रेणु का साहित्यिक योगदान	113
10.	'मैला आँचल' की आँचलिकता	140
11.	'मैला आँचल' का उद्देश्य	151
12.	'मैला आँचल' की पात्र–योजना एवं चरित्र–चित्रण	159
13.	'मैला आँचल' की संवाद–योजना	171
14.	'मैला आँचल' की तात्विक समीक्षा	181
15.	भीष्म साहनी का साहित्यिक योगदान	188
16.	'तमस' की कथावस्तु का सारांश	196
17.	'तमस' की साम्प्रदायिकता एवं संवाद–योजना	207
18.	'तमस' की भाषा–शैली	223
19.	'तमस' की तात्विक समीक्षा	239
20.	'मन्नू भण्डारी' का साहित्यिक योगदान	255
21.	'आपका बंटी' का उद्देश्य एवं मूल समस्या	273
22.	'आपका बंटी' के पात्रों का चरित्र–चित्रण	283
23.	'आपका बंटी' की संवाद–योजना एवं भाषा–शैली	303
24.	प्रेमचंद की प्रतिनिधि कहानियों का सार एवं पात्रों का चरित्र–चित्रण	313
25.	आचार्य रामचन्द्र शुक्ल का साहित्यिक योगदान	321
26.	'चिन्तामणि' के निबंधों का सार एवं प्रमुख गद्यांशों की व्याख्या	326
27.	'विष्णु प्रभाकर' का साहित्यिक योगदान	356
28.	'आवारा मसीहा' : कथावस्तु एवं उद्देश्य	371
29.	'आवारा मसीहा' : प्रमुख गद्यांशों की व्याख्या	394
30.	'आवारा मसीहा' : प्रमुख पात्रों का चरित्र–चित्रण	425
31.	'चीड़ों पर चाँदनी' : कथावस्तु एवं उद्देश्य	442
32.	'चीड़ों पर चाँदनी' : भाषा–शैली एवं गद्यांशों की व्याख्या	461

नोट

इकाई–1: मुंशी प्रेमचंद का साहित्यिक योगदान

अनुक्रमणिका (Contents)

उद्देश्य (Objectives)

प्रस्तावना (Introduction)

1.1 मुंशी प्रेमचंद की लेखन कुशलता एवं साहित्यिक योगदान

1.2 गोदान : कथावस्तु

1.3 मेहता एवं मालती से संबद्ध नागर-कथा

1.4 सारांश (Summary)

1.5 शब्दकोश (Keywords)

1.6 अभ्यास प्रश्न (Review Questions)

1.7 सन्दर्भ पुस्तकें (Further Readings)

उद्देश्य (Objectives)

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् विद्यार्थी योग्य होंगे–

- मुंशी प्रेमचंद की लेखन कुशलता को जानने में;
- मुंशी प्रेमचंद के साहित्यिक योगदान को समझने में;
- 'गोदान' की कथावस्तु को जानने में;
- 'गोदान' में उठाई गई सामाजिक समस्या की जानकारी प्राप्त करने में।

प्रस्तावना (Introduction)

'गोदान' प्रेमचंद जी का एक ऐसा उपन्यास है, जिसके माध्यम से उन्होंने देश की ग्राम्य आत्मा को सशक्त अभिव्यक्ति दी है। इसी कारण डा. गंगाप्रसाद विमल ने इसे भारतीय ग्राम्य परिवेश की समस्याओं का 'महाकाव्य' और 'गीता' की संज्ञा दी है। होरी के रूप में ग्राम्य-जीवन की करुण गाथा इसमें कही गयी है। ग्राम्य-जीवन की इस गाथा के साथ-साथ उपन्यास में नागर-जीवन की एक कथा मुख्य कथा के समानान्तर चलती है, जिसके मुख्य पात्र हैं–मेहता और मालती। इस प्रकार 'गोदान' दोहरे कथानक वाला उपन्यास है।

1.1 मुंशी प्रेमचंद की लेखन कुशलता एवं साहित्यिक योगदान

प्रेमचंद जी ने उपन्यास और कहानी दोनों ही क्षेत्रों में क्रांतिकारी काम किया है। इन्होंने 28 वर्ष के साहित्यिक जीवन में लगभग 300 कहानियाँ, 10 उपन्यास, 3 नाटक और कितने ही लेख लिखे। इनकी उल्लेखनीय रचनाओं में सेवासदन, प्रेमाश्रम, रंगभूमि, कर्मभूमि, निर्मला गबन, कायाकल्प, गोदान प्रसिद्ध उपन्यास हैं। मानसरोवर (आठ भाग)

नोट

तथा गुप्तधन (दो भाग) में 250 से अधिक कहानियाँ संग्रहीत हैं। कर्बला, प्रेम की बेदी और संग्राम नाट्य कृतियाँ हैं। कुछ विचार और विविध प्रसंग (तीन भाग) में इनके महत्त्वपूर्ण निबंध संकलित हैं।

1.2 गोदान : कथावस्तु

गोदान दोहरे कथानक वाला उपन्यास है। इसमें ग्राम्य एवं नागर जीवन शैली का वर्णन किया गया है। ये दोनों कथाएँ परस्पर बहुत कम संबद्ध हैं, अत: यहाँ अलग-अलग इन दोनों कथाओं का सारांश प्रस्तुत किया जा रहा है।

ग्रामीण जीवन की त्रासदी : होरी की कथा–होरी लखनऊ के निकटवर्ती बेलारी गाँव का किसान है। उसके पास केवल पाँच बीघा ज़मीन थी, किंतु रायसाहब अमरपाल सिंह की कृपादृष्टि से गाँव में उसका काफी सम्मान था और वह महतो कहलाता था। उसका ज़मींदार के यहाँ आना-जाना था। उसकी पत्नी धनिया कुछ तीखे स्वभाव की स्त्री है, किंतु साथ ही वह बड़ी सहनशील और भावनामयी स्त्री है। पुत्र गोबर उग्र स्वभाव का विद्रोही युवक है। होरी की दो पुत्रियाँ भी हैं–सोना और रूपा, जिनकी आयु क्रमश: बारह और आठ साल है। एक दिन वह रायसाहब से मिलने जा रहा था, तो उसकी भेंट भोला अहीर से हुई, जो गाय चराने वाला था। गायों को देखकर होरी के मन में गाय खरीदने की चिर-संचित अभिलाषा जाग उठी। बातों ही बातों में उसने जान लिया कि भोला पत्नी के मरने के बाद अब दूसरी शादी करना चाहता है। होरी ने उसकी सगाई करने का आश्वासन दिया और साथ ही गाय खरीदने की इच्छा भी प्रकट की। भोला उसे गाय देने को तैयार हो गया, किंतु जब उसे मालूम हुआ कि भोला भूसा क्रय न कर पाने के कारण गाय बेच रहा है, तो उसका विचार बदल गया। उसने भोला से भूसा ले जाने को कहा और रायसाहब से मिलने चला गया।

होरी जब रायसाहब के घर से वापस लौटा, तो कुछ ही क्षणों में भोला भी भूसा लेने आ पहुँचा। उसे तीन खांचे भूसा देकर होरी ने विदा किया और गोबर के साथ पहुँचाने भी गया। लौटते समय आधे रास्ते तक झुनिया उसे छोड़ने आयी। उनका पारस्परिक प्रेम गहरा होता जा रहा था। इधर गाय की प्रतीक्षा में होरी, धनिया, सोना और रूपा सभी प्रसन्न थे। होरी ने अपने भाइयों के साझे के बाँस बेचकर कुछ रुपए बचाने का असफल प्रयास किया। होरी के घर गाय आ गयी है, होरी का परिवार फूला नहीं समा रहा है। विशेषकर होरी, क्योंकि उसकी तो आज चिर-संचित अभिलाषा पूर्ण हुई है। गाय बहुत सुंदर और अच्छी थी, यह समाचार सारे गाँव में आग की भाँति फैल गया। किन्तु गाय क्या आयी, होरी के दुर्दिन अपने साथ लायी। भाइयों में मन-मुटाव तो था ही, हीरा से विशेषकर। एक दिन मौका मिलते ही रात में हीरा ने चुपचाप गाय को विष दे दिया और रात में ही गाय मर गयी। होरी ने उसे देख लिया था। जब होरी ने धनिया पर अपने संदेह की बात कही, तो धनिया सीधे हीरा के घर पहुँची और हीरा पर हत्या का आरोप लगाया। पुलिस ने हीरा के घर की तलाशी लेनी चाही, लेकिन होरी ने अपने भाई की रक्षा के लिए अपने गोबर की झूठी कसम खायी कि उसे यह पता नहीं है कि गाय को किसने ज़हर दिया।

नोट्स होरी का अपने भाई को बचाना तथा उसके धानों की रोपाई करना भाईचारे का संकेत है।

हीरा घर से भाग गया था। उसकी पत्नी पुनिया असहाय हो गयी थी। अब होरी को पुनिया की भी चिंता होने लगी। सावन में होरी ने अपने धान की रोपाई नहीं की, लेकिन पुनिया के धानों की रोपाई समय पर कर दी। परिणामस्वरूप होरी की फसल बहुत कम हुई और पुनिया के घर अनाज रखने की जगह न थी। धनिया के स्वभाव में भी अब पुनिया के प्रति सदाशयता जाग उठी थी और पुराने बैर को वह भूल चुकी थी।

झुनिया और गोबर के प्रेम का परिणाम यह हुआ कि झुनिया गर्भवती हो गयी और गोबर उसे अपने घर में आने को कहकर खुद भाग गया। होरी उस समय खेत पर था, धनिया घर में अकेली थी। झुनिया जब घर पहुँची, तो धनिया ने उसे खूब भला-बुरा कहा। झुनिया रोने लगी, रोते-रोते उसने सारी बातें बता दीं। धनिया इस स्थिति में उसे घर से

नोट

निकालने का साहस न कर सकी। वह होरी को इसकी सूचना देने खेत पर गयी। पहले तो होरी भी घटना सुनकर क्रुद्ध हुआ, किंतु बाद में धनिया के समझाने पर उसे घर में रखने पर उद्यत हो गया। धनिया का हृदय अब दयार्द्र हो गया था। झुनिया ने होरी से शरण मांगी और उसके पांवों पर गिर पड़ी। होरी ने उसे आश्वासन दिया और अपने घर में रख लिया। गोबर छिपे-छिपे यह सब क्रिया-कलाप देख चुका था और संतुष्ट होकर कमाई करने के उद्देश्य से नगर की ओर चला गया।

उदाहरण–समाज की परवाह ना करते हुए होरी द्वारा झुनिया को घर में शरण देना मानवता का प्रतीक है।

झुनिया चूँकि जाति-बाहर की थी, इसलिए उसे शरण देने और बहू बनाने के प्रश्न पर गाँवों वालों ने होरी का बहिष्कार कर दिया, उसका हुक्का-पानी बंद कर दिया। एक दिन झुनिया को लेकर दातादीन और धनिया में वाद-विवाद हो गया और फिर दातादीन ने गाँव के कुछ प्रमुखों को इस पक्ष में कर लिया कि होरी पर सौ रुपए की डांड और तीस मन अनाज का दंड लगाया जाए। यही हुआ, असहाय होरी घर का सारा अनाज झिंगुरी सिंह की चौपाल में भरता रहा और अपना घर रेहन रखकर रुपयों की व्यवस्था की। धनिया इस पर बहुत झुंझलायी, मगर व्यर्थ! अब होरी के घर खाने तक को अनाज न था। इससे वह चिन्तित रहने लगा और गोबर की भी कोई सूचना नहीं मिली थी। भोला भी इससे क्रुद्ध हो गया था क्योंकि झुनिया को घर में रखकर उसने भोला का अपमान कर दिया था। अत: वह गाय का मूल्य लेने घर आ धमका। होरी रुपये कहाँ से देता? फलत: भोला उसके दोनों बैल खोल ले गया। होरी के तो जैसे दोनों हाथ ही कट गये।

बैलों के बिना होरी के खेतों की जुताई न हो सकी और वह दूसरों के खेतों में काम करने लगा। धनिया, सोना और रूपा भी दूसरों के खेतों में काम करने लगीं। एक दिन दातादीन ने साझे में खेती करने का प्रस्ताव रखा। होरी ने इसे मान लिया और वह अपने ही खेतों में मज़दूर की हैसियत से काम करने लगा। होरी सोचता था कि ईख बेचकर वह बैल ले लेगा, किंतु साहूकार-महाजन ईख के सारे रुपये ले गए।

इधर गोबर को लखनऊ नगर में रहते सालभर हो गया है। अब वह गाँव का सीधा-सादा नवयुवक नहीं है, बल्कि नगरसभ्यता से अच्छी तरह परिचित हो गया है। पहले उसने मिर्जा खुरशेद के पास 15 रुपए मासिक पर माली की नौकरी की और बाद में कुछ रुपए जमा कर खोमचा लगाना प्रारंभ कर दिया। अब उसने एक दुकान खोल ली है, जिससे उसको ढाई-तीन रुपए रोज की आमदनी होने लगी। इन ग्यारह महीनों की दो सौ की कमाई लेकर वह झुनिया को लाने चल पड़ा।

एक दिन होरी खेत में ईख काट रहा था कि दातादीन ने उसकी पत्नी धनिया को फटकारा। इसका प्रभाव यह हुआ कि काम करते-करते अचानक होरी अचेत हो गया। धनिया अपने पति की यह दशा देखकर व्याकुल हो उठी और उसकी सेवा-सुश्रुषा में लग गयी। इसी समय गोबर भी आ पहुँचा। सब लोग बड़े प्रसन्न हुए। उसने अपने साथ लाया हुआ सब सामान एक-दूसरे को बांटा और फिर गांव में घूमकर सब पर अपना प्रभाव जमाया। वह भोला के गाँव भी गया और उसे बातों में फुसलाकर अपने बैल ले आया। गोबर से गाँव के सब मुखिया चिढ़े हुए थे। दातादीन से उसने साफ कह दिया कि होरी अब किसी का काम नहीं करेगा। दातादीन ने अपने रुपये मांगे, तो गोबर ने सरकारी ब्याज के हिसाब से रुपये देने चाहे। किंतु होरी को लगा कि यह अधर्म है। दोनों बाप-बेटे में मन-मुटाव हुआ और वह झुनिया तथा छोटे पुत्र को लेकर लखनऊ लौट गया। गोबर के चले जाने के बाद होरी का घर सूना हो गया। उधर गाँव में दातादीन के पुत्र मातादीन ने सिलिया चमारिन को रखैल के रूप में रखा था। एक दिन मातादीन, सिलिया, दातादीन और होरी आदि खेत में अनाज ओसा रहे थे तभी सिलिया के माँ-बाप और दोनों भाई अपनी बिरादरी के साथ वहाँ पहुँचे। उन्होंने मातादीन का जनेऊ तोड़ डाला और उसके मुँह में हड्डी डाल दी। सिलिया को वे लोग ले जाना चाहते थे किंतु बहुत मार खाने पर भी वह उनके साथ नहीं गयी। इससे मातादीन के धर्मभ्रष्ट होने की बात सारे गाँव में फैल गयी। दातादीन ने मातादीन को समझाया कि वह सिलिया का साथ छोड़ दे, बाकी वह

नोट

सब ठीक कर लेगा। मातादीन ने सिलिया को बुरा-भला कहा तो विवश होकर सिलिया होरी की शरण में आयी और उसी के यहाँ रहने लगी।

अब होरी को अपनी लड़की सोना के ब्याह की चिंता होने लगी, क्योंकि गाँव के मनचले लड़के उसका पीछा करने लगे थे। होरी के सोनारी गाँव के एक धनी किसान गौरी महतो के लड़के मथुरा से सोना का विवाह करना निश्चित किया। सोना और सिलिया के प्रयास से दहेज की भी समस्या नहीं रही। इस प्रकार बिना किसी कठिनाई के सोना का विवाह संपन्न हो गया। भोला ने अपना दूसरा विवाह कर लिया था, किंतु इससे उसके घर में झगड़ा इतना बढ़ा कि बेटों ने उसे पीटकर घर से निकाल दिया। भोला और उसकी पत्नी नोहरी ने नोखेराम के यहाँ शरण ली। नोखेराम ने नोहरी पर अपना अधिकार कर लिया। भोला इतना दुर्बल हृदय था कि न वहाँ रह सकता था, न कहीं जा सकता था। फलतः वह नौकर की भाँति वहाँ रहने लगा। इधर पटेश्वरी की चाल में आकर मगरू शाह ने होरी पर डिग्री कर दी और उसका ईख नीलाम हो गया।

गोबर जब लखनऊ पहुँचा, तो उसने देखा कि जहाँ पर वह खोमचा लगाता था, वहाँ पर किसी दूसरे ने अधिकार कर लिया है। विवश होकर उसने खन्ना की चीनी मिल में नौकरी कर ली। झुनिया से भी वह विरक्त-सा रहने लगा। दोनों का मन-मुटाव इतना बढ़ा कि गोबर ने एक दिन उसे पीट भी दिया। गोबर शराब भी पीने लगा था। बच्चे की उचित देखभाल न होने के कारण एक दिन वह मर गया। उधर खन्ना की मिल में मज़दूरों ने वेतन के प्रश्न पर हड़ताल कर दी, दंगे में गोबर बुरी तरह मार खा बैठा। उसे अस्पताल पहुँचाया गया। उसकी इस शोचनीय दशा को देखकर झुनिया द्रवित हो उठी। गोबर अचेत पड़ा था। उस समय झुनिया ने अपने प्राणों से भी बढ़कर उसकी सेवा की। इधर उसे बच्चा भी हो गया। चुहिया नाम की एक पड़ोसन ने उस बच्चे की बड़ी देख-रेख की। तभी एक दिन, जब गोबर काम की तलाश में था, उसे मालती मिल गयी। उसने गोबर को अपने घर में माली के रूप में रख लिया। झुनिया भी वहीं रहने लगी। उन्हीं दिनों गोबर के बच्चे को चेचक निकल आयी। मालती के प्रयासों से बच्चा जल्दी ठीक हो गया।

स्व-मूल्यांकन (Self-Assessment)

बहुविकल्पीय प्रश्न (Multiple Choice Questions) :

1. रायपाल अमरपाल सिंह कहाँ के ज़मीदार थे?

   (क) बनारस (ख) अवध

   (ग) लखनऊ (घ) इनमें से कोई नहीं।

2. होरी किसके रूपये लौटाने की चिंता में रहता था?

   (क) रामसेवक (ख) रायसाहब

   (ग) मालती (घ) इनमें से कोई नहीं।

3. गोबर को लखनऊ में कहाँ नौकरी मिल गई थी?

   (क) आटा मिल (ख) चीनी मिल

   (ग) चावल मिल (घ) इनमें से कोई नहीं।

सिलिया ने एक बच्चे को जन्म दिया, तो मातादीन उसके निष्कपट प्रेम से प्रभावित होकर एक दिन होरी को उसके लिए दो रुपये दे आया। सिलिया रुपये और मातादीन का प्यार पाकर इतनी प्रसन्न हुई कि उसी रात सोना से मिलने नदी पार उसके गाँव पहुँच गयी। मथुरा उसे देखकर उसका हाथ पकड़ने लगा, तभी सिलिया ने अपना हाथ छुड़ा लिया। उसी समय अंदर से सोना की आवाज आयी। मथुरा के साथ जब सिलिया अंदर पहुँची, तो इतनी रात गये

नोट

उसका आना सोना को अखर गया। सिलिया वहाँ आकर पछता रही थी। सोना ने उसका बहुत तिरस्कार किया और फिर कभी वहाँ न आने को कहा। सिलिया अपना-सा मुँह लेकर, दुखी हृदय लौट आयी।

सिलिया ने होरी के घर में अपना एक अलग फूल का झोंपड़ा बना लिया था। उसका बच्चा धीरे-धीरे बड़ा होने लगा। मातादीन कभी-कभी एकांत पाकर उसे प्यार कर जाता। अब उसकी आत्मा सिलिया के प्रति उसके कर्त्तव्य का भान करा रही थी। अकस्मात् सिलिया का बच्चा निमोनिया के कारण चल बसा। मातादीन ने जब यह सुना, तो वह आपे में न रह सका। उसने बिना किसी की परवाह किये बालक के शव को अपने हाथों में उठा लिया और अकेले में नदी-तट की ओर चला। बालक को नदी की धारा में बहाकर जब लौटा, तो वह ब्राह्मणत्व के अभिमान से शून्य हो चुका था। उसने सिलिया को संपूर्ण रूप से स्वीकार कर लिया।

होरी अपने जीवन के दिन किसी तरह पूरे कर रहा था। जीवन में अनेक संकट सहे, बदनामी सही, भूखे रहे केवल इसलिए कि उसकी परंपरागत कुछ बीघे ज़मीन बच जाए। तीन साल से वह लगान न दे सका था। नोखेराम ने उस पर बेदखली का दावा कर दिया था। कहीं से रुपये उधार मिलने की आशा नहीं थी। इसी समय दातादीन ने आकर उसे एक उपाय सुझाया। होरी की छोटी लड़की रूपा का विवाह नहीं हुआ था। उसने उसका विवाह बूढ़े रामसेवक महतो से करने की सलाह दी। होरी ने उसकी सलाह सुनकर ग्लानि और अपमान से अपना मस्तक झुका दिया। धनाभाव ने उसको लड़की बेचने को विवश कर दिया। उसका आदर्शवाद एक ही झोंके में तिनके के समान उड़ गया। वह रूपा का विवाह रामसेवक से करने को तैयार हो गया। धनिया ने भी दुखी मन से दातादीन के प्रस्ताव को मान लिया। विवाह का एक दिन नियत कर दिया। दातादीन ने विवाह हेतु दो सौ रुपये दे दिए। होरी ने अपनी ज़मीन को बेदखली से बचा लिया। विवशता मनुष्य से क्या नहीं करवा लेती है?

नोट्स गोबर भी रूपा के विवाह में आया। गोबर ने माता-पिता की शोचनीय दशा देखी तो उसे बहुत दुख हुआ। उसने होरी को आश्वासन दिया कि अब होरी को काम करने की आवश्यकता नहीं है, वह हर महीने कुछ रुपये भेज देगा। वह लखनऊ चला गया, किंतु झुनिया को धनिया ने जाने नहीं दिया। होरी और धनिया गोबर के व्यवहार से संतुष्ट व प्रसन्न थे। अब उन्हें अपने उज्ज्वल भविष्य का कुछ-कुछ आभास होने लगा था।

रूपा अपनी सुसराल में सुखी थी। उसे वहाँ किसी चीज की कमी न थी। वह बूढ़े पति को पाकर भी प्रसन्न थी और अपने मन ही मन में प्रसन्न रहती थी। रामसेवक भी उसको पाकर प्रसन्न है। वह हर समय उसकी प्रत्येक इच्छा को पूरी करने को उद्यत रहता है। रूपा से जरा-सा संकेत पाते ही उसने उसके यहाँ गाय भेज दी। गोबर के लड़के को देख होरी भी प्रसन्नचित रहता है।

अब होरी को केवल एक चिंता रहती है कि किसी प्रकार रामसेवक के रुपए लौटा दे। इसके लिए वह कठिन परिश्रम करता है। गाँव में कंकड़ की खुदाई दिनभर की लू-धूप में करके रात को घर लौटता है और देर तक सूत काता करता है। इसी बीच एक दिन अकस्मात् हीरा घर लौट आता है और होरी से अपने दुष्कृत्य के लिए क्षमा-याचना करता है। सहृदय होरी उसे गले से लगा लेता है और आत्मविभोर हो उठता है। रामसेवक से रुपए उधार लेते समय जिस पराजय का बोध उसे हुआ था, हीरा के आ जाने से वह विजय में परिणत हो जाता है। प्रसन्नता के इस उल्लास में वह जी-तोड़ काम करने लगता है। एक दिन दोपहर को काम करते समय लू लगने से वह अचेत हो जाता है। उसके घर खबर पहुँचाई गयी। धनिया दौड़ी आयी। हीरा और शोभा भी आ पहुँचे। धनिया ने यह दशा देखी तो उसे अपना सुहाग लुटता दिखायी दिया। उसे होरी के चेहरे पर मृत्यु की झलक दिखायी दी। सब लोगों ने जब कहा कि गोदान का समय आ गया है, तो वह विक्षिप्त-सी घर में गयी और बीस आने पैसे पंडित दातादीन के हाथ में रखती हुई बोली कि घर में न गाय है, न बछिया, सूत कताई के यही बीस आने पैसे हैं, यही इनका गोदान है। यह कहते ही वह पछाड़ खाकर गिर पड़ी और उधर होरी का प्राणान्त हो रहा था।

टास्क गोदान की कथावस्तु पर अपने मत प्रकट कीजिए।

स्व-मूल्यांकन (Self-Assessment)

रिक्त स्थानों की पूर्ति करें (Fill in the blanks) :

4. गोदान का नायक .... है।
5. होरी की पत्नी का नाम .... था।
6. गोबर .... से बहुत प्रेम करता था।

1.3 मेहता एवं मालती से संबद्ध नागर-कथा

रायसाहब अमरपाल सिंह अवध क्षेत्र के ज़मींदार हैं और लखनऊ में रहते हैं। होरी आदि ग्रामीण पात्र उन्हीं की रियासत में रहते हैं। वैसे रायसाहब बेलारी गाँव में भी रहते हैं। सैद्धांतिक रूप से रायसाहब राष्ट्रवादी विचारों के हैं और सत्याग्रह आंदोलन के सिलसिले में कौंसिल की सदस्यता छोड़कर जेल-यात्रा भी कर आए हैं। वे मन से अत्यंत उदार, सहिष्णु और कोमल हैं। चूँकि ज़मींदारी ही उनकी जीविका है, इसलिए व्यवहारिक दृष्टि से कठोर एवं शोषक भी हैं। धार्मिक प्रवृत्ति होने के कारण प्रतिवर्ष दशहरे पर धनुष-यज्ञ लीला भी करवाते हैं। इस वर्ष भी धनुष-यज्ञ लीला का आयोजन हुआ, होरी को उसमें जनक के माली की भूमिका दी गयी। आयोजन में रायसाहब के मित्र लखनऊ के डॉ. मेहता (दर्शनशास्त्र के प्रवक्ता), डॉ. मालती, मि. खन्ना (मिलमालिक पूंजीपति), ओंकारनाथ (बिजली के संपादक), खुरशेद (व्यापारी) और मि. तंखा (चालबाज राजनीतिज्ञ) आदि भी पधारे हैं। प्रसंगवश इन सब बौद्धिकों में ज़मींदारी प्रथा को लेकर बहस छिड़ जाती है, और भी अनेक बातें होती रहती हैं। यहीं पर पता चलता है कि खन्ना अपनी पत्नी गोबिन्दी से संतुष्ट नहीं हैं और मालती के प्रति आकृष्ट हैं, जबकि मालती डा. मेहता के प्रति आकर्षित है। इसी बीच, जब धनुष-यज्ञ की लीला चल रही थी और रायसाहब अपनी मित्र-मंडली के साथ अंदर कमरे में हास-परिहास कर रहे थे, तभी मेहता अफगान का वेश धारण कर यह कहते हुए सबको चौंका देते हैं कि रायसाहब के आदमियों ने उनके आदमियों को लूटा है और वह अफगान अब या तो एक हज़ार रुपए और मालती को ले जाएगा या रायसाहब को अपनी बंदूक की गोली से मार डालेगा। अफगान की यह धमकी सुनकर सबकी सिट्टी-पिट्टी गुम हो जाती है। रायसाहब ने थोड़ा-बहुत प्रतिरोध किया, किंतु अफगान का क्रोध देखकर वह भी सहम गए। उसी समय होरी किसी काम से आया और अफगान को देख उसे दबोच लिया। दाढ़ी नोचते ही भेद खुल गया और अफगान के रूप में मेहता को देखकर सभी व्यक्ति अपनी कायरता पर लज्जित हुए।

इसके बाद सब लोगों ने तीन दलों में बँटकर शिकार के लिए प्रस्थान किया। मेहता-मालती एक साथ थे, रायसाहब और खन्ना का एक दल बना और तीसरे में थे मिर्जा खुरशेद और तंखा। जंगल में जाकर तीनों दल अगल-अलग हो गए। मालती मेहता से प्रेम करती थी, अत: एकांत चाहती थी। किंतु मेहता को शिकार की धुन थी। मालती उन्हें रोकना चाहती है, किंतु वे आगे बढ़ते जाते हैं। कुछ देर में वे एक नाले के पास पहुँच गए मेहता नाले को पार करने के लिए पानी में घुस गए। नाला गहरा था और प्रभाव तेज था। जब पानी मेहता की छाती तक आ गया तो डर के मारे मालती उन्हें वापस बुलाने लगी, किंतु जब वे नहीं लौटे तो स्वयं भी नाले में घुस गयी। उसके पाँव उखड़ने लगे। मेहता ने उसे कंधे पर ले लिया और नाला पार कर गए। मालती उन पर पूरी तरह समर्पित हो जाना चाहती थी किंतु मेहता अभी उसे इस योग्य नहीं समझते थे। तभी अचानक मेहता ने एक चिड़िया को देखा और बंदूक दाग दी। घायल चिड़िया नाले में गिर पड़ी और बहने लगी। मेहता भी पानी में घुस गए, किंतु बहुत दूर निकल जाने पर भी उसे पकड़

नोट

नहीं पाए। तभी एक ग्राम्य बाला ने चिड़िया को पकड़ लिया और मेहता एवं मालती को अपने झोंपड़े में ले गयी। वहाँ ग्राम्य बाला के व्यवहार से मेहता अति प्रसन्न हुए और मालती के दुर्व्यवहार पर उन्हें क्षोभ भी हुआ। दोनों वापस लौट गए। दूसरी ओर खन्ना, तंखा, रायसाहब और ओंकारनाथ भी खाली हाथ वापस लौट आए थे।

एक दिन खुरशेद ने नगर में बूढ़े लोगों की कबड्डी करवायी। मेहता और मिजी ने भी खेल में भाग लिया। खेल में मेहता की विजय होती है। खुरशेद ने गोबर को अपने साथ नौकर रख लिया। अभी तक मेहता की दृष्टि में मालती में वे गुण नहीं थे, जो एक पत्नी में अपेक्षित होते हैं। मालती इस तथ्य को जानती है, इसलिए स्वयं को मेहता के अनुरूप आदर्शों में ढालने का प्रयत्न करती है। उसने एक बार महिलाओं के एक क्लब की ओर से मेहता का भाषण करवाया, जिसमें मेहता ने नारी की सदाशयता, महानता एवं उसके देवी रूप का बखान किया। जब भाषण समाप्त हुआ, तो मेहता और मालती साथ ही घर को चले गए। मार्ग में मेहता ने बताया कि आजकल खन्ना और गोबिन्दी में तीव्र मतभेद चल रहे हैं और इस मन-मुटाव का कारण मालती है, क्योंकि वह उन दोनों के प्रेम के बीच में दीवार बनी हुई है। मालती खन्ना का तिरस्कार करती है।

उधर रायसाहब को जब यह मालूम हुआ कि पंचों ने होरी से डांड ली है, तो उन्होंने कारकुन नोखेराम को बुलाकर खूब डांटा और डांड के रुपए सबसे भरवा लिए। नोखेराम ने 'बिजली' के संपादक ओंकारनाथ को रिपोर्ट छपने भेज दी, जिसमें यह दर्शाया गया था कि रायसाहब किस ढंग से जनता का शोषण करते हैं? रायसाहब को जब यह ज्ञान हुआ तो उन्होंने ओंकारनाथ को खूब फटकारा। खन्ना और गोबिन्दी में प्राय: अनबन रहती थी जब उनका लड़का बीमार पड़ा और खन्ना ने डॉक्टर मालती को बुलाना चाहा, तो झगड़ा हो गया और खन्ना ने गोबिन्दी को पीट दिया। गुस्से में भरी गोबिन्दी कभी न लौटकर आने के उद्देश्य से घर से निकल पड़ी, किंतु चिड़ियाघर पार्क में मेहता ने जब उसे बहुत समझाया तो वह पुन: घर लौट आयी। उधर रायसाहब कौंसिल का चुनाव राजा सूर्यप्रताप सिंह के विरुद्ध लड़ रहे थे, पुत्री का विवाह भी करना था और ससुराल की जायदाद के विषय में भी मुकदमा चल रहा था।

खन्ना की मिल में मज़दूरों ने हड़ताल कर दी और फिर एक दिन खन्ना की चीनी मिल में किसी ने आग लगा दी। मिल को जलता देख खन्ना विक्षिप्त-सा हो उठा और लाखों रुपए की संपत्ति स्वाहा होते देखता रहा। किसी प्रकार मेहता और मालती उसे घर लाए। गोबिन्दी के व्यवहार से खन्ना का कायाकल्प हो गया और उनका मनमुटाव सदैव के लिए समाप्त हो गया। मालती खन्ना गोबिन्दी के मार्ग से हट चुकी थी। मालती का भी धीरे-धीरे कायाकल्प हो रहा था। अब वह एक आदर्श भारतीय रमणी बन चुकी थी और मेहता एवं मालती पुन: एक-दूसरे की ओर खिंचने लगे थे।

रायसाहब के लड़के की शादी हो गयी। उनके दो अन्य उद्देश्य भी पूरे हो गए। उनके विरोधी राजा साहब उनसे पराजित हो गए और मुकदमे में भी ससुराल की जायदाद उन्हें मिल गयी। अब राजा साहब अपनी लड़की का विवाह उनके लड़के रुद्रपाल से करना चाहते थे, किंतु रुद्रपाल ने पहले ही उनकी अनुमति के बिना मालती की छोटी बहन सरोज से विवाह कर लिया। फलत: रायसाहब से रुद्रपाल का झगड़ा हो गया। वह सरोज को लेकर इंग्लैंड चला गया। साथ ही, उसने तंखा के भड़काने पर फिजूलखर्ची के लिए रायसाहब पर दावा कर दिया और जो जायदाद उन्हें मिली थी, वह भी चली गयी।

रायसाहब को अब अपनी पुत्री मीनाक्षी की ओर से भी कोई अच्छा समाचार नहीं मिल रहा था। पति-पत्नी दोनों में कलह इतना बढ़ गया था कि वह अलग रहने लगी और अपने खर्चे के लिए दिग्विजय सिंह पर दावा ठोक दिया। रायसाहब भी निराश होकर उपासना और भक्ति की ओर उन्मुख हो गए, किंतु फिर भी उन्हें शांति न मिल सकी। वे वास्तव में जीवन में सफल होकर भी अन्तत: पराजित हो गए थे।

मालती ने अब मेहता से मिलना बहुत कम कर दिया था, किंतु फिर भी एक दिन मेहता उससे मिल ही गए। मेहता की दयनीय दशा देखकर वह द्रवित हो उठी। यद्यपि मेहता एक हजार वेतन पाते थे, फिर भी वे अपने कपड़े सिला न पाते थे, क्योंकि निर्धन छात्रों में ही उनका वेतन बंट जाता था। बात यहाँ तक बढ़ गयी थी कि वे अपने मकान का कई महीनों का किराया भी न दे सके। एक दिन मालती जब उसके घर पर बैठी थी, तो कुर्की आयी देखकर

नोट

मालती ने सारा किराया भुगतान कर दिया और मेहता को अपने बंगले पर ले गयी। उनके लिए उसने दो कमरे खाली करवा दिए। अब मेहता को मालती से मिलने का पर्याप्त अवसर मिलता है। उनके मित्र समझते हैं कि यह उनके विवाह की तैयारी है।

> *नोट्स* मालती को गोबर के पुत्र की देखभाल करते देख मेहता का मालती के प्रति विचारों में परिवर्तन हो गया था। एक स्त्री में माता-देवी विद्यमान होती है, ऐसा उसको विश्वास हो गया था।

गोबर अब मालती के पास माली का काम करता है। वह अपनी पत्नी झुनिया और पुत्र मंगल के साथ बाग में एक छोटी-सी झोंपड़ी बनाकर रहता है। मालती मंगल को बहुत प्यार करती है। एक दिन मालती ने देखा कि मंगल को ज्वर है। मालती को भय हुआ कि कहीं चेचक न हो। मालती रात-दिन उसकी तीमारदारी करने लगी और रात में भी उसे अपने पास ही सुलाती। बच्चे को चेचक निकल आयी थी। वह खुजली और पीड़ा से बेचैन होकर करुण स्वर में कराहता और मालती की ओर दयनीय नेत्रों से ताका करता था।

अब मेहता को भी मंगल की बड़ी चिन्ता होने लगी थी। वह भी दिन में दो-चार बार उसको देख लिया करते थे। मालती उसे कोमल हाथों से उठाती, कन्धे पर उठाकर कमरे में टहलाती और बड़े स्नेह से बहलाकर उसे दूध पिलाती। मालती का यह वात्सल्य-स्नेह देखकर मेहता की दृष्टि उसे केवल रमणी नहीं, परंतु सच्चे अर्थों में माता और देवी समझने लगी थी। इससे पूर्व जब खन्ना की पत्नी गोबिन्दी बीमार पड़ी थी, तब भी वह उसकी तीमारदारी से अत्यधिक प्रभावित हुए थे, किंतु उसका यह रूप तो उनके लिए आश्चर्यजनक ही था। एक रात अचानक मंगल के रोने की आवाज सुनकर मेहता कमरे में आए, तो देखा कि मालती बच्चे को गोद में लिए बैठी थी और बच्चा अनायास ही रो रहा था। मालती ने उसे गोद में लेकर टहलाकर मनाने और चुप कराने का प्रयत्न किया, किंतु बच्चा रोता रहा। मालती का यह वात्सल्य और मातृ-भाव देखकर मेहता मन्त्रमुग्ध से उसे देखते रहे और उनकी आँखें सजल हो आयीं। मेहता ने बच्चे को अपनी गोद में ले लिया और टहलाने लगे। उनकी गोद में आते ही बच्चा चुप हो गया और थोड़ी ही देर में सो भी गया। बच्चे को सुलाकर मेहता मालती को सतृष्ण दृष्टि से देखते रहे। मालती ने कहा, "मैंने बहुत दिन हुए अपने को तुम्हारे चरणों पर समर्पित कर दिया। तुम्हारा प्रेम और विश्वास पाकर अब मेरे लिए कुछ भी शेष नहीं रह गया है। यह वरदान मेरे जीवन को सार्थक कर देने के लिए काफी है।" मेहता मालती को पत्नी रूप में ग्रहण करना चाहते थे, किंतु मालती मित्र बनकर रहना चाहती है। दोनों इतने भावावेश में आ गए कि एक-दूसरे के आलिंगनपाश में आबद्ध हो गए।

1.4 सारांश (Summary)

- 'गोदान' प्रेमचंद जी का एक ऐसा उपन्यास है, जिसके माध्यम से उन्होंने देश की ग्राम्य आत्मा को सशक्त अभिव्यक्ति दी है। इसी कारण डा. गंगाप्रसाद विमल ने इसे भारतीय ग्राम्य परिवेश की समस्याओं का 'महाकाव्य' और 'गीता' की संज्ञा दी है।
- होरी लखनऊ के निकटवर्ती बेलारी गाँव का किसान है। उसके पास केवल पाँच बीघा ज़मीन थी, किंतु रायसाहब अमरपाल सिंह की कृपादृष्टि से गाँव में उसका काफी सम्मान था और वह महतो कहलाता था।
- झुनिया और गोबर के प्रेम का परिणाम यह हुआ कि झुनिया गर्भवती हो गयी और गोबर उसे अपने घर में आने को कहकर खुद भाग गया।
- झुनिया चूँकि जाति-बाहर की थी, इसलिए उसे शरण देने और बहू बनाने के प्रश्न पर गाँवों वालों ने होरी का बहिष्कार कर दिया, उसका हुक्का-पानी बंद कर दिया।

- गोबर से गाँव के सब मुखिया चिढ़े हुए थे। दातादीन से उसने साफ कह दिया कि होरी अब किसी का काम नहीं करेगा।
- गोबर जब लखनऊ पहुँचा, तो उसने देखा कि जहाँ पर वह खोमचा लगाता था, वहाँ पर किसी दूसरे ने अधिकार कर लिया है। विवश होकर उसने खन्ना की चीनी मिल में नौकरी कर ली।
- अब होरी को केवल एक चिंता रहती है कि किसी प्रकार रामसेवक के रुपए लौटा दे। इसके लिए वह कठिन परिश्रम करता है।
- मार्ग में मेहता ने बताया कि आजकल खन्ना और गोबिन्दी में तीव्र मतभेद चल रहे हैं और इस मन-मुटाव का कारण मालती है, क्योंकि वह उन दोनों के प्रेम के बीच में दीवार बनी हुई है। मालती खन्ना का तिरस्कार करती है।
- गोबर अब मालती के पास माली का काम करता है। वह अपनी पत्नी झुनिया और पुत्र मंगल के साथ बाग में एक छोटी-सी झोंपड़ी बनाकर रहता है।

1.5 शब्दकोश (Keywords)

1. आत्मविभोर – अपने में मस्त
2. तीमारदारी – रोगी की सेवा-सुश्रुषा
3. अचेत – बेहोश
4. द्रवित होना – पिघलना।

1.6 अभ्यास प्रश्न (Review Questions)

1. प्रेमचन्द की लेखन कुशलता पर एक संक्षिप्त नोट लिखिए।
2. मेहता एवं मालती से सम्बद्ध नागर-कथा को संक्षेप में लिखिए।
3. गोबर ने लखनऊ में अपना समय किस प्रकार व्यतीत किया? वर्णन कीजिए।

उत्तर : स्व-मूल्यांकन (Answers : Self-Assessment)

1. (ग)
2. (क)
3. (ख)
4. होरी
5. धनिया
6. झुनिया।

1.7 सन्दर्भ पुस्तकें (Further Readings)

पुस्तकें गोदान–प्रेमचन्द

नोट

इकाई–2: 'गोदान' का उद्देश्य

अनुक्रमणिका (Contents)

उद्देश्य (Objectives)
प्रस्तावना (Introduction)
2.1 प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष उद्देश्य
2.2 आदर्शोन्मुख यथार्थवाद का चित्रण
2.3 सामाजिक यथार्थ का चित्रण करना
2.4 'गोदान' की मुख्य समस्या का चित्रण
2.5 सारांश (Summary)
2.6 शब्दकोश (Keywords)
2.7 अभ्यास प्रश्न (Review Questions)
2.8 सन्दर्भ पुस्तकें (Further Readings)

उद्देश्य (Objectives)

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् विद्यार्थी योग्य होंगे–

- 'गोदान' के आदर्शोन्मुख यथार्थवाद का चित्रण करने में;
- समाज में व्याप्त अनाचार, पापाचार और भ्रष्टाचार का वर्णन करने में;
- देश की आर्थिक दुर्व्यवस्था को जानने में;
- 'गोदान' की मुख्य समस्याओं का वर्णन करने में।

प्रस्तावना (Introduction)

परिस्थितियाँ अनेक हो सकती हैं, किंतु उनकी भावनाओं को प्रेरणा देने वाली उपन्यास की रचना में सहायक केवल एक परिस्थिति अथवा विचार होता है, यद्यपि उससे संलग्न अनेक विचार हो सकते हैं। अत: 'गोदान' उपन्यास के उद्देश्य का विवेचन करने के लिए हमें लेखक की इसी प्रेरणादायी परिस्थिति को खोजना होगा।

2.1 प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष उद्देश्य

कोई भी रचना निरुद्देश्य नहीं होती, उसकी सर्जना के पीछे कोई न कोई उद्देश्य अवश्य होता है। यह उद्देश्य प्रत्यक्ष भी हो सकता है और अप्रत्यक्ष भी। प्रत्यक्ष उद्देश्य 'कला जीवन के लिए' के सिद्धांत का पोषक है और अप्रत्यक्ष उद्देश्य 'कला कला के लिए' के सिद्धांत का प्रतिपादक है। यद्यपि लेखक का किसी भी रचना के पीछे स्वभावनाओं एवं आत्माभिव्यक्ति का प्रकाशन ही मुख्य उद्देश्य होता है–वह अपने मन की सर्जनेच्छा का शमन करने के लिए

ही साहित्य-सर्जना करता अथवा अपने मन की वासना को ही परिष्कृत रूप में साहित्य-जगत् में प्रस्तुत कर देता है। किंतु ये तो किसी रचना की सर्जना के अप्रत्यक्ष उद्देश्य हैं। इसके साथ ही वातावरण, समाज और परिस्थितियों के आधार पर अपनी भावनाओं को अभिव्यक्ति देने के लिए वह कोई न कोई आधार ग्रहण करता है, जिस पर कथावस्तु का सांचा तैयार करता है।

प्रेमचंद जी की इस प्रेरणा का निदर्शन करने से पूर्व हमें यह समझ लेना चाहिए कि प्रेमचंद जी किसी कला अथवा रचना को उसके सर्जक की स्वानुभूति मानते हैं। प्रेमचंद जी यद्यपि यथार्थवाद के पक्षधर हैं, किंतु कुछ आदर्श भी होते हैं, जिनसे हटकर यथार्थ मात्र नंगापन ही रह जाता है और चूँकि प्रेमचंद जी मानववादी साहित्यकार हैं, इसलिए उन्होंने नग्न यथार्थ को अपनी रचनाओं में स्थान नहीं दिया है। यथार्थवाद उनके उपन्यास में है और इतना है कि ग्रामीण कृषक वर्ग उसमें अपनी संपूर्ण दीनताओं, कुण्ठाओं, शोषण और उत्पीड़न के साथ व्यक्त हो गया है, किंतु आदर्श का एक ऐसा आवरण भी उन्होंने रखा है ताकि रचना समाजोपयोगी और जन-हिताय रूप ले सके।

2.2 आदर्शोन्मुख यथार्थवाद का चित्रण

इस दृष्टि से प्रेमचंद जी के उपन्यास 'गोदान' का सर्वप्रथम उद्देश्य यही है कि ऐसे यथार्थ का चित्रण किया जाए, जो आदर्श से आवेष्टित हो। इसी को मूर्तता प्रदान करने के लिए उन्होंने दो कथानकों का तुलनात्मक अध्ययन भी दिया है। होरी की मुख्य कथा तो गहन यथार्थ को लेकर चली है, किंतु मालती-मेहता का प्रसंग विशुद्ध रूप से आदर्श की स्थापना हेतु ही चित्रित किया गया है। वास्तव में, मेहता के रूप में स्वयं प्रेमचंद कथा के बीच में अवतरित हुए हैं। मेहता का समूचा दृष्टिकोण ही प्रारंभ से लेकर अंत तक लेखकीय और प्रकारान्तर से आदर्शवादी रहा है। मेहता स्वयं तो आदर्शवादी हैं ही, अपने प्रभाव से मिस मालती के चरित्र को भी आदर्श से परिपूरित कर देते हैं अन्यथा क्या कारण है कि जो मालती प्रारंभ में इस रूप में चित्रित की गयी है–

"दूसरी महिला, जो ऊँची एड़ी का जूता पहने हुए हैं और जिनकी मुख-छवि पर हँसी फूटी पड़ती है, मिस मालती हैं। आप इंग्लैंड से डाक्टरी पढ़ आयी हैं और अब प्रैक्टिस करती हैं। ताल्लुकेदारों के महलों में उनका बहुत प्रवेश है। आप नवयुग की साक्षात् प्रतिमा हैं। गात कोमल, पर चपलता कूट-कूट कर भरी हुई। झिझक या संकोच का कहीं नाम नहीं, मेकअप में प्रवीण, बला की हाजिर-जवाब, पुरुष-मनोविज्ञान की अच्छी जानकार, आमोद-प्रमोद को जीवन का तत्व समझने वाली, लुभाने और रिझाने की कला में निपुण। जहाँ आत्मा का स्थान है, वहाँ प्रदर्शन, जहाँ हृदय का स्थान है, वहाँ हाव-भाव, मनोद्‌गारों का कठोर निग्रह, जिसमें इच्छा या अभिलाषा का लोप-सा हो गया।"

और वही मालती कालांतर में मेहता के प्रभाव से इतनी आदर्शवादी चरित्र बन जाती है कि मेहता स्वयं रायसाहब के सामने उसके इस आदर्श चरित्र का बखान करते हुए कहते हैं–

"मालती को आपने जाना नहीं, और न जानने की परवाह की। मैंने भी यही समझा था, लेकिन अब मालूम हुआ कि वह आग में पड़कर चमकने वाली सच्ची धातु है। वह उन वीरों में है, जो अवसर पड़ने पर अपने जौहर दिखाते हैं, तलवार घुमाते नहीं चलते।.... और मालती रात की रात उसके सिरहाने बैठी रह जाती है–वही मालती, जो किसी राजा-रईस से पाँच सौ फीस पाकर भी रातभर न बैठेगी। खन्ना के छोटे बच्चों को पालने का भार भी मालती पर है। वह मातृत्व उसमें कहाँ सोया हुआ था, मालूम नहीं। मुझे तो मालती का यह स्वरूप देखकर अपने भीतर श्रद्धा का अनुभव होने लगा, हालांकि आप जानते हैं, मैं घोर जड़वादी हूँ और भीतर के परिष्कार के साथ उसकी छवि में भी देवत्व की झलक आने लगी है। मानवता इतनी बहरंगी और इतनी समर्थ है, इसका मुझे प्रत्यक्ष अनुभव हो रहा है।"

मालती-मेहता की आदर्श में पगी कथा से जहाँ उपन्यास में आदर्शवाद आ गया है, वहीं गोबर, होरी, धनिया, झुनिया आदि प्रसंगों में घोर यथार्थ है। होरी तो यथार्थ का पुतला ही है। उसके जीवन में जो परिस्थितियाँ आती हैं, जिन घटनाओं का वह शिकार बनता है, वे सब यथार्थ हैं, पछाई गाय को द्वार पर बांधने की लालसा रखने वाले होरी को

नोट

अंत में गोदान करने के लिए भी गाय नहीं मिलती। किंतु कहीं न कहीं-बाह्य दृष्टि से यथार्थ होते हुए भी, अंदर से होरी का चरित्र भी आदर्श से उत्प्रेरित रहा है। वह किसान होने के नाते सहज स्वार्थी तो है, किंतु किसी के जलते घर को देख सकने वाला नहीं है। पुनिया और हीरा के कारण उसे क्या-क्या लांछन नहीं सहने पड़ते, उधार लायी गाय को हीरा विष देकर मार डालता है; किंतु जब हीरा के भाग जाने पर पुनिया पर विपत्ति आती है तो वह भागा-भागा उसकी सहायता को दौड़ता है, कहीं उसके खेत परती न रह जाएँ वह उसके खेतों में हल चलाता है, फसल उत्पन्न करता है। अंत में भी हीरा जैसे दुष्ट भाई के लिए भी उसके मुख से यही ममता-भरे शब्द निकलते हैं–

"क्यों रोते हो भैया? आदमी से भूल-चूक होती ही है। कहाँ रहा इतने दिन? तुम नाहक भागे। अरे, दरोगा को दस-पाँच देकर मामला रफे-दफे कर दिया जाता और होता क्या? मैं कोई गैर थोड़े ही हूँ भैया!"

नोट्स प्रेमचंद जी के उपन्यास 'गोदान' में आदर्शवाद की झलक अप्रत्याशित नहीं है। वास्तविकता यह है कि प्रेमचंद ने जीवन में जो आदर्श पाले थे और जिन आदर्शों की कल्पना की थी, वे यदा-कदा उनकी रचनाओं में अपनी झलक दिखा ही जाते हैं। इस प्रकार यह निर्विवाद रूप से कहा जा सकता है कि इस आदर्शोन्मुख यथार्थवादी उद्देश्य की नींव पर उनके उपन्यास की मूल भित्ति आधारित है, यद्यपि अधिकता उसमें जीवन के यथार्थ चित्रण की ही रही है।

2.3 सामाजिक यथार्थ का चित्रण करना

प्रेमचंद जी ने यद्यपि कहीं-कहीं अपनी दृष्टि आदर्श पर रखी है, किंतु मुख्य कथा को देखने में पता चलता है कि उसका सर्वप्रमुख उद्देश्य यही है कि ऐसे यथार्थ का चित्रण किया जाए, जिसमें भारतीय ग्राम्य जीवन से संबद्ध व्यक्ति एवं समाज का सच्चा प्रतिबिम्ब हो। इसी को मूर्तता प्रदान करने के लिए उन्होंने होरी, धनिया, गोबर, झुनिया, सिलिया, मातादीन, दातादीन, नोहरी, भोला, पटेश्वरी, झिंगुरीसिंह और नोखेराम एवं दुलारी तथा शोभा आदि से संबद्ध सामाजिक यथार्थ का चित्रण करने के साथ ही ग्रामीण क्षेत्र के एवं नगरीय समाज के निम्न एवं उच्च वर्गीय समाज की झांकियाँ भी प्रस्तुत की हैं।

यह सामाजिक यथार्थ 'गोदान' उपन्यास में विविध संदर्भों में प्रस्तुत किया गया है। ये संदर्भ इस प्रकार हैं–

1. धार्मिक पाखण्ड का चित्रण करना–हमारा समाज धर्म की आड़ लेकर अपने आपको स्थापित करने के चाहे कितने ही प्रयास क्यों न करे, किंतु भारतीय सामान्य जन-मानस को उत्पीड़ित करने एवं उसके साथ छल करने के अपराध से वह मुक्त नहीं हो सकता। स्वयं रायसाहब इस धार्मिक पाखण्ड दान-धर्म आदि पर प्रहार करते हुए होरी से कहते हैं–

"हम भी दान देते हैं, धर्म करते हैं। लेकिन जानते हो, क्यों? केवल अपने बराबर वालों को नीचा दिखाने के लिए। हमारा दान और धर्म कोरा अहंकार है, विशुद्ध अहंकार।" वह पुन: आगे कहते हैं–"हमारे मुँह की रोटी कोई छीन ले, तो उसके गले में उंगली डालकर निकालना हमारा धर्म हो जाता है।"

इतना ही नहीं, प्रेमचंद जी धर्म और ईश्वर के पाखण्ड पर चोट करते हुए गोबर को जिस विद्रोही रूप में प्रस्तुत करते हैं, उसके पीछे भी उनका यही उद्देश्य रहा है कि धार्मिक पाखण्ड पर खुला प्रहार किया जाए। होरी और गोबर के बीच रायसाहब को लेकर यही विवाद आगे प्रस्तुत किया जा रहा है, जिसमें होरी एक धर्मभीरु और कर्मवादी और गोबर एक विद्रोही युवक के रूप में प्रस्तुत हुए हैं, देखिए–

"तुम्हारी समझ में हम और वह बराबर हैं?"

"भगवान ने तो सबको बराबर ही बनाया है।"

"यह बात नहीं है बेटा, छोटे-बड़े भगवान के घर से बनकर आते हैं। संपत्ति बड़ी तपस्या से मिलती है। उन्होंने पूर्वजन्म में जैसे कर्म किए हैं, उनका आनंद भोग रहे हैं। हमने कुछ नहीं संचा, तो भोगें क्या?"

"यह मन को समझाने की बातें हैं। भगवान सबको बराबर बनाते हैं। यहाँ जिसके हाथ में लाठी है, वह गरीबों को कुचलकर बड़ा आदमी बन जाता है।"

"यह तुम्हारा भरम है। मालिक आज भी चार घण्टे रोज भगवान का भजन करते हैं।"

"किसके बल पर यह भजन-भाव और दान-धर्म होता है?"

"अपने बल पर।"

"नहीं, किसानों के बल पर और मजदूरों के बल पर। यह पाप का धन पचे कैसे? इसलिए दान-धर्म करना पड़ता है, भगवान का भजन भी इसीलिए होता है। भूखे-नंगे रहकर भगवान का भजन करें, तो हम भी देखें। हमें कोई दो जून खाने को दे, तो हम आठों पहर भगवान का जाप ही करते रहें। एक दिन खेत में ऊख गोड़ना पड़े तो सारी भक्ति भूल जाए।"

> *नोट्स* धार्मिक पाखण्ड के रूप में छुआछूत भी हमारे देश में अपनी इतनी गहरी जड़े जमा चुका है कि आए दिन हरिजनों पर होने वाले अत्याचारों के समाचार, समाचारपत्र में पढ़ने को मिलते रहते हैं। प्रेमचंद जी ने इस पर कठोर प्रहार किया है।

दातादीन नित्य स्नान-ध्यान करने वाला एक ब्राह्मण है, किंतु अपने पुत्र मातादीन की भाँति ही बदचलन रह चुका है। लेखक ने निम्नलिखित उद्धरणों में धार्मिक पाखण्ड के इस रूप को भी वर्णित किया है–

"दातादीन, अपनी जवानी में स्वयं बड़े रसिया रह चुके थे, लेकिन अपने नेम-धर्म से कभी नहीं चूके। मातादीन भी सुयोग्य पुत्र की भाँति उन्हीं के पद-चिह्नों पर चल रहा था। धर्म का मूल तत्व है पूजा-पाठ, कथा, व्रत और चौका-चूल्हा। जब पिता-पुत्र दोनों ही मूल तत्व को पकड़े हुए हैं, तो किसकी मजाल है कि उन्हें पथभ्रष्ट कह सके?"

"और मातादीन एक चमारिन से फंसा हुआ था। इसे सारा गाँव जानता था, पर वह तिलक लगाता था, पोथी-पत्रे बाँचता था, कथा-भागवत कहता था, धर्म-संस्कार कराता था। उसकी प्रतिष्ठा में जरा भी कमी न थी। वह नित्य स्नान-पूजा करके अपने पापों का प्रायश्चित कर लेता था।"

2. **समाज में व्याप्त अनाचार, पापाचार, भ्रष्टाचार का वर्णन**–प्रेमचंद जी ने इस उपन्यास में दूसरा उद्देश्य समाज की पोल खोलना रखा है। इस समाज में फैले हुए अनाचार, पापाचार, व्यभिचार आदि का उन्होंने पर्दाफाश किया है। पटेश्वर, झिंगुरीसिंह, दातादीन, मातादीन एवं नोखेराम आदि निर्धन किसानों का गला काटते फिरते हैं और अपने घरों में पनपते पाप और अनाचार की ओर ध्यान भी नहीं देते, हाँ, दूसरों का मजाक उड़ाने में रस उन्हें अवश्य मिलता है। झिंगुरीसिंह के विषय में समाज में व्याप्त अनाचार का यह वर्णन देखिए–

"अब इनकी पचास की अवस्था थी और दो जवान पत्नियाँ घर में बैठी थीं। उन दोनों ही के विषय में तरह-तरह की बातें फैल रही थीं। पर ठाकुर साहब के डर से कोई कुछ कह न सकता था और कहने का अवसर भी तो हो। पति की आड़ में सबकुछ जायज है। मुसीबत तो उसकी है, जिसे कोई आड़ नहीं। ठाकुर साहब स्त्रियों पर बड़ा कठोर शासन रखते थे और उन्हें घमण्ड था कि उनकी पत्नियों का घूंघट तक किसी ने न देखा होगा। पर घूंघट की आड़ में क्या होता है, उसकी उन्हें क्या खबर?"

नोट

और दूसरी ओर भक्त कहलाने वाले नोखेराम की कुदृष्टि और बाद में पापाचार-कर्म में निरोही (भोला की दूसरी पत्नी) के साथ रत होने के पीछे भी यही सामाजिक पापाचार दिखाई देता है।

स्व-मूल्यांकन (Self-Assessment)

रिक्त स्थानों की पूर्ति करें (Fill in the blanks) :

1. मिस मालती इंग्लैंड से .... पढ़कर आई है।
2. धार्मिक पाखण्ड के रूप में .... भी हमारे देश में अपनी गहरी जड़े जमा चुका है।
3. दातादीन अपनी जवानी में बड़े .... रह चुके थे।

3. देश की आर्थिक दुर्व्यवस्था का चित्रण करना–लेखक देश में व्याप्त आर्थिक विषमता का भी इस उपन्यास के माध्यम से चित्रण करता है। एक ओर रायसाहब जैसे ताल्लुकेदार और खन्ना जैसे मिल मालिक हैं, जो पूँजीपति वर्ग का प्रतिनिधित्व करते हुए बड़ी चालाकी से ग्रामीण कृषक वर्ग और श्रमिक वर्ग का शोषण करते हैं, तो दूसरी ओर होरी जैसे निर्धन किसान भी हैं, जो सतत् परिश्रम करने के पश्चात् भी भरपेट रोटी नहीं पा सकते। रायसाहब एक ओर तो होरी जैसे निर्धन किसान के सामने संपत्ति वालों की बुराई करते हैं और जमींदारी प्रथा शीघ्र समाप्त होने की कामना करते हैं, दूसरी ओर–

"रायसाहब ने फिर गिलौरीदान निकाला और कई गिलौरियाँ निकालकर मुंह में भर लीं। कुछ और कहने वाले थे कि एक चपरासी ने आकर कहा–सरकार, बेगारों ने काम करने से इंकार कर दिया है। कहते हैं, जब तक हमें खाने को न मिलेगा, हम काम न करेंगे। हमने धमकाया, तो सब काम छोड़कर अलग हो गए।"

रायसाहब के माथे पर बल पड़ गए। आँखें निकालकर बोले–"चलो मैं इन दुष्टों को ठीक करता हूँ। जब कभी खाने को नहीं दिया, तो आज वह नयी बात क्यों? एक आने रोज के हिसाब से मजदूरी मिलेगी, जो हमेशा मिलती रही है और इस मजदूरी पर काम करना होगा, सीधे करें या टेढ़े।"

रायसाहब झल्लाते हुए चले गए। होरी ने मन में सोचा, अभी यह कैसी-कैसी नीति और धर्म की बातें कर रहे थे और एकाएक इतने गर्म हो गए।

होरी का तो जैसे समूचा जीवन ही प्रेमचंद जी ने देश की दीन-हीन, शोषित और पीड़ित जनता के प्रतीक रूप में किया है। उसकी आर्थिक दुरावस्था का इससे अधिक मार्मिक चित्र और क्या हो सकता है–

"इस फसल में सबकुछ खलिहान में तोल देने पर भी अभी उस पर कोई तीन कर्ज था, जिस पर कोई सौ रुपए सूद के बढ़ते जाते थे। मंगरू शाह से आज पाँच साल हुए, बैल के लिए साठ रुपए लिए थे, उनमें साठ दे चुका था, पर वह साठ रुपए ज्यों के त्यों बने हुए थे। दातादीन ने पंडित से तीस रुपए लेकर आलू बोये थे। आलू तो चोर खोद ले गए और उस तीस के इन तीन बरसों में सौ रुपए हो गए। दुलारी विधवा सहुआइन थी, जो गाँव में नून, तेल, तंबाकू की दुकान रखे हुए थी, बंटवारे के समय उससे चालीस रुपए लेकर भाइयों को देना पड़ा था। उसके भी लगभग सौ रुपए हो गए थे, क्योंकि आने रुपए का ब्याज था।..... प्रायः सभी किसानों का यही हाल था। अधिकांश की दशा तो इससे भी बदतर थी। शोभा और हीरा को उससे अलग हुए अभी कुल तीन साल हुए थे, मगर दोनों पर चार-चार सौ का बोझा लद गया। झींगुर दो हल की खेती करता है। उस पर एक हजार से कुछ बेसी ही देना है। जियावन महतो के घर भिखारी भीख भी नहीं पाता, लेकिन करजे का कोई ठिकाना नहीं। यहाँ कौन बचा है?"

इस विवेचन से 'गोदान' उपन्यास में निहित प्रेमचंद जी का उद्देश्य स्पष्ट हो जाता है। ग्रामीण कृषकों की दीन-हीन आर्थिक दुरावस्था का यथार्थवादी किंतु साथ ही आदर्शोन्मुख चित्रण करना ही उनका प्रमुख उद्देश्य रहा है, यही कारण है कि उन्होंने ग्रामीण परिवेश की अनेक समस्याओं का यथार्थपरक चित्रण किया है। कुल मिलाकर प्रेमचंद जी का मूल उद्देश्य ग्रामीण समाज के परिप्रेक्ष्य में शोषक और शोषितों की स्थिति का चित्रण करना ही है।

टास्क 'गोदान' उपन्यास में निहित उद्देश्य को लिखिए।

2.4 'गोदान' की मुख्य समस्या का चित्रण

सामाजिक यथार्थ का चित्रण होने के कारण 'गोदान' उपन्यास में ग्रामीण एवं नगरीय जीवन की अनेक समस्याओं का अत्यंत सुंदर एवं यथार्थपरक चित्रण हुआ है। ये समस्याएँ समाज के विभिन्न पक्षों से संबंधित हैं—विशेष रूप से जमींदारों एवं साहूकारों द्वारा किसानों के आर्थिक शोषण और सामाजिक ढाँचे से ये समस्याएँ संबंधित हैं और इस उपन्यास में जीवन के गहन प्रश्नों पर भी विचार किया गया है। अत: अनेक वैचारिक समस्याएँ भी इस उपन्यास में दिखाई देती हैं।

'गोदान' उपन्यास में वर्णित समस्याओं को दो वर्गों में विभाजित किया जा सकता है—

1. बाह्य परिस्थितियों से संबंधित और
2. अंतर्वृतियों से संबंधित।

देहात की बाह्य समस्याएँ हैं—किसान-हाकिम, किसान-महाजन और किसान-जमींदार की समस्या। 'गोदान' में किसान-महाजन समस्या तो इतने उग्र रूप में चित्रित हुई है कि रोंगटे खड़े हो जाते हैं। इस प्रकार उपन्यास में वर्णित समस्याओं पर निम्नलिखित उपवर्गों में विचार किया जा सकता है—

1. किसान-महाजन समस्या—इस उपन्यास की सर्वप्रमुख और मूल समस्या किसान-महाजन की ही है। एक ओर रायसाहब जैसे जमींदार हैं, जो आदर्शवादी सिद्धांत रखते हुए भी बेगार लेना नहीं छोड़ते और अपने झूठे ऐश्वर्य एवं मान-प्रदर्शन के लिए किसानों को चूसने में नहीं झिझकते, दूसरी ओर पटेश्वरी, दातादीन, झिंगुरीसिंह, दुलारी सहुआइन, नोखेराम और मंगरू शाह जैसे शोषक भी हैं जो जोंक की भाँति अंत तक निर्धन किसान का रक्त-शोषण करते हैं और अंत में वह दृश्य सामने आता है, जब किसान वर्ग का प्रतिनिधि होरी अकाल मृत्यु को प्राप्त जो जाता है। कृषक वर्ग की यह समस्या प्रारंभ में ही इतनी भयानक रूप से दिखाई देती है कि उसे पढ़कर पाठक के रोंगटे खड़े हो जाते हैं। होरी का यह चिंतन इस समस्या की गंभीरता का ही तो उद्घाटन कर रहा है, देखिए—

"इस फसल में सबकुछ खलिहान में तोल देने पर भी अभी उस पर कोई तीन सौ कर्ज था, जिस पर कई सौ रुपए सूद के बढ़ते जाते थे। मंगरू शाह से आज पाँच साल हुए बैल के लिए साठ रुपए लिए थे, उसमें साठ दे चुका था। पर वह साठ ज्यों के त्यों बने हुए थे। दातादीन ने पंडित से तीस रुपए लेकर आलू बोये थे। आलू तो चोर खोद ले गए और उस तीस के इन तीन बरसों में सौ हो गए थे। दुलारी विधवा सहुआइन थी, जो गाँव में नून, तेल, तंबाकू की दुकान रखे हुए थी। बंटवारे के समय उससे चालीस रुपये लेकर भाइयों को देना पड़ा था। उसके भी लगभग सौ रुपये हो गये थे क्योंकि आने रुपये का ब्याज था। लगान के भी अभी पच्चीस रुपए बाकी पड़े हुए थे और दशहरे के दिन सगुन के रुपयों का भी कोई प्रबंध करना था।"

क्या आप जानते हैं आर्थिक समस्याओं से घिरे होरी की आर्थिक दशा दिनों-दिन बिगड़ती ही जाती है। वह भोला से एक गाय उधार लेता है, जो मर जाती है और जिसके बदले में उसे अपने दोनों बैल गंवाने पड़ते हैं। बैल न रहने से होरी को पंडित दातादीन के साथ साझे में खेती करनी पड़ती है और केवल बौआई करा देने पर आधी फसल दे देनी पड़ती है। इतना ही नहीं, अपनी कुल मर्यादा के विपरीत उसे मजदूरी भी करनी पड़ती है।

नोट

दातादीन होरी की विवशता का लाभ उठाकर उसका शोषण करते हैं। होरी से इतनी कठोरता और निर्दयतापूर्वक काम लेते हैं कि एक दिन वह खेत में भी काम करते-करते मूर्च्छित हो जाता है। उसे खाने को भरपेट भोजन नहीं मिलता। धनिया पटेश्वरी से कहती है–

"आजकल हमारे ऊपर जो बीत रही है, वह क्या तुमसे छिपा है? महीनों से भरपेट रोटी नसीब नहीं हुई।"

इन महाजनों द्वारा किसान जिस प्रकार शोषित होते हैं, वह केवल होरी की ही समस्या नहीं है बल्कि यह प्रत्येक भारतीय किसान की समस्या है। आर्थिक शोषण का यह चक्र इस प्रकार सदियों से घूम रहा है कि हमारा कृषक वर्ग उससे कभी निस्तार नहीं पा सका। वह ऋण लेकर ही जन्म लेता है और अपनी संतान को ऋण ही उत्तराधिकार में सौंपकर मर जाता है। होरी के निम्नलिखित स्वगत-चिंतन में इस समस्या का कितना लोमहर्षक चित्र प्रेमचंद जी ने प्रस्तुत किया है, देखिए–

"अगर संतोष था तो यही कि यह विपत्ति अकेले उसी के सिर न थी। प्रायः सभी किसानों का यही हाल था। अधिकांश की दशा तो इससे भी बदतर थी। शोभा और हीरा को उससे अलग हुए अभी कुल तीन साल हुए थे, मगर दोनों पर चार-चार सौ का बोझ लद गया था। झींगुर दो हल की खेती करता है। उस पर एक हजार से कुछ बेसी ही देना है। जियावन महतो के घर भिखारी भीख भी नहीं पाता, लेकिन करजे का कोई ठिकाना नहीं।"

इन्हीं समस्याओं के कारण "ऐसा एक भी आदमी नहीं, जिसकी रोनी सूरत न हो, मानो उनके प्राणों की जगह वेदना ही बैठी उन्हें कठपुतलियों की तरह नचा रही हो। चलते-फिरते, काम करते थे, पिसते-घुटते थे, इसलिए कि पिसना और घुटना उनकी तकदीर में लिखा था। जीवन में न कोई आशा है न कोई उमंग, जैसे उनके जीवन के सोते सूख गए हों और हरियाली मुरझा गयी हो। जेठ के दिन हैं, अभी तक खलिहानों में अनाज मौजूद है, मगर किसी के चेहरे पर खुशी नहीं है। बहुत कुछ तो खलिहान में ही तुलकर महाजनों और कारिन्दों की भेंट हो चुका है और जो कुछ बचा है, वह भी दूसरों का है। भविष्य अंधकार की भाँति उनके सामने है। उन्हें कोई रास्ता नहीं सूझता.....स्वाद से उन्हें प्रयोजन नहीं। उनकी रसना मर चुकी है। उनके जीवन में स्वाद का लोप हो गया है। उनसे धेले के लिए बेईमानी करवा लो, मुट्ठी भर अनाज के लिए लाठियाँ चलवा लो। पतन की वह इंतिहा है, जब आदमी शर्म और इज्जत को भी भूल जाता है।"

किसान और महाजन के बीच की इस आर्थिक शोषण की दीवार ने न जाने कितने 'होरियों' को मरने को विवश किया है। होरी की मृत्यु और उस समय भी गोदान के लिए हाथ पसारे दातादीन के हाथ में बीस आने रखने का दृश्य, युग-युग से दलित मानवता की करुण पुकार और शोकार्त धनिया के क्रन्दन में एक किसान की जीवनगाथा को मुखर कर रहा है। जमींदार और हाकिम के अत्याचारों से त्रस्त किसान महाजन के चंगुल से जीवन-पर्यन्त न छूट सका, इसका एक अत्यंत मार्मिक और यथार्थ चित्र प्रेमचंद जी ने नगर से लौटे गोबर द्वारा आयोजित होली के उत्सव में गिरधर द्वारा बनायी झिंगुरी सिंह की नकल में प्रस्तुत किया है, जिसमें दस रुपए का दस्तावेज लिखकर किसान पाँच ही रुपए पाता है।

स्व-मूल्यांकन (Self-Assessment)

बहुविकल्पीय प्रश्न (Multiple Choice Questions) :

4. 'गोदान' उपन्यास में रायसाहब क्या थे?

   (क) किसान (ख) ताल्लुकेदार

   (ग) लेखक (घ) इनमें से कोई नहीं।

5. दातादीन ने किससे रुपये लेकर आलू बोये थे?

   (क) होरी (ख) झुनिया

   (ग) पंडित (घ) इनमें से कोई नहीं।

6. गोबर का होरी से क्या रिश्ता था?

(क) नौकर (ख) भाई

(ग) बेटा (घ) इनमें से कोई नहीं।

2. व्यक्ति और समाज के द्वन्द्व अथवा सामाजिक दबाव की समस्या–आलोच्य उपन्यास में यद्यपि बाह्य स्तर पर होरी के जीवन की समस्त परिस्थितियाँ एवं घटनाओं में महाजनों, साहूकारों द्वारा किसान के शोषण की समस्या ही चित्रित हुई है, किंतु इस समस्या के परिपार्श्व में एक अंत:संघर्ष की समस्या भी है–यह अंत: संघर्ष है व्यक्ति और समाज के मध्य। हमारा समाज अपने द्वारा बनाए गए ऐसे दायरे अथवा खांचे में सिमट गया है कि उसके बाहर वह कुछ देखता ही नहीं। उस दायरे में ही उसने कुछ न्याय, नैतिकता और चरित्र के मानदंड स्थापित किए हैं। स्वनिर्मित इस दायरे से हटकर उसके लिए किसी दूसरे प्रकार का बनाम मानवता संभव ही नहीं है। यदि कोई व्यक्ति मानववादी स्तर पर नैतिकता के नये और व्यक्तिगत मानदंड स्थापित करना चाहता है तो समाज भूखे भेड़िए की भाँति उस पर ही टूट पड़ता है। होरी के जीवन की सारी परिस्थितियाँ इसी व्यक्ति और समाज के द्वंद्व पर आद्धृत हैं। सामाजिक दबाव उसकी वर्जना करता है। चूँकि वे कार्य होरी की दृष्टि से उचित हैं इसलिए वह समाज के दबाव को स्वीकार नहीं करता, किंतु जब संपूर्ण समाज उसका सामाजिक बहिष्कार कर देता है तो अंतत: होरी के व्यक्तित्व को झुकना पड़ता है। गोबर को भोला की विधवा लड़की झुनिया से प्रेम हो जाता है और उसकी परिणति गर्भ रहने में होती है तो गोबर झुनिया को अपने घर बिठाकर भाग जाता है। ऐसी स्थिति में होरी और धनिया, झुनिया को निकालना पाप समझते हैं, क्योंकि एक तो वे जानते हैं कि झुनिया के जो गर्भ है, वह उनके पुत्र से ही है और दूसरे यदि उसे घर से निकाल दिया और उसने आत्महत्या कर ली तो इसका पाप भी उन्हें लगेगा। वे चुपचाप अपने मानवतावादी दृष्टिकोण का परिचय देकर उसे वधू के रूप में स्वीकार कर लेते हैं। किंतु समाज भला ऐसा क्यों स्वीकार करता? उसकी दृष्टि में चूँकि झुनिया अहीर थी और होरी की जाति की न थी, इसलिए होरी की वधू बनने के योग्य न थी। सबने उसे घर से निकाल देने को कहा, किंतु जब होरी न माना तो गाँव के कथाकथित पंचों ने एक स्वर से यह निर्णय दिया कि होरी पर सौ रुपए नकद और तीन मन अनाज डांड लगाया जाए, क्योंकि उसने समाज और उसके नियमों के विरुद्ध एक बहिर्जातीय युवती को अपनी पुत्रवधू के रूप में स्वीकार किया है और–

"होरी पहर रात तक खलिहान से अनाज ढो-ढोकर झिंगुरी सिंह की चौपाल में ढेर करता रहा। बीस मन जौ था, पाँच मन गेहूँ और इतना ही मटर था, थोड़ा-सा चना और तेलहन भी था। अकेला आदमी और दो गृहस्थियों का बोझ। यह जो कुछ हुआ, धनिया के पुरुषार्थ से हुआ। झुनिया भीतर का सारा काम कर लेती थी और धनिया अपनी लड़कियों के साथ खेती में जुट गयी थी। दोनों ने सोचा था, गेहूँ और तेलहन से लगान की एक किस्त अदा हो जाएगी और हो सके तो थोड़ा-थोड़ा सूद भी दे देंगे। जौ खाने के काम में आएगा। लंगे-तंगे पाँच-छ: महीने कट जाएँगे, तब ज्वार, मक्का, सांवा, धान के दिन आ जाएँगे। वह सारी आशा मिट्टी में मिल गयी। अनाज तो हाथ से गये ही, सौ रुपए की गठरी और सिर पर लद गयी। अब भोजन का कहीं ठिकाना नहीं और गोबर का क्या हाल हुआ, भगवान जाने। न हाल, न हवाल। अगर दिल इतना कच्चा था, तो ऐसा काम ही क्यों किया, मगर होनी को कौन टाल सकता है? बिरादरी का वह आतंक था कि अपने सिर पर लादकर अनाज ढो रहा था, मानो अपने हाथों अपनी कब्र खोद रहा हो। जमींदार, साहूकार, सरकार, किसका इतना रौब था? कल बाल-बच्चे क्या खाएँगे, इसकी चिंता प्राणों को सोखे लेती थी, पर बिरादरी का भय पिशाच की भाँति सिर पर सवार आंकुस दिए जा रहा है। बिरादरी से पृथक् जीवन की वह कोई कल्पना ही न कर सकता था। शादी-ब्याह, मुंडन-छेदन, जन्म-मरण सबकुछ बिरादरी के हाथ में है। बिरादरी उसके जीवन में वृक्ष की भाँति जड़ जमाये हुए थी और उसकी नसें उसके रोम-रोम में बिंधी हुई थीं। बिरादरी से निकलकर उसका जीवन विश्रृंखल हो जाएगा, तार-तार हो जाएगा।"

और समस्या की पराकाष्ठा देखिए कि एक ओर तो घर में झुनिया का लड़का पैदा होने की प्रसन्नता थी और दूसरी ओर, उसी वक्त होरी अपने घर को अस्सी रुपए पर झिंगुरीसिंह के हाथ गिरवी रख रहा था। डांड के रुपए का इसके

सिवा वह कोई प्रबंध न कर सकता था। बीस रुपए तो तेलहन, गेहूँ और मटर से मिल गए। शेष के लिए घर लिखना पड़ गया। इस प्रकार होरी सामाजिक दबाव के आगे नतमस्तक हो गया।

आर्थिक शोषण की समस्या का यह दूसरा पहलू भी कम महत्त्वपूर्ण नहीं है क्योंकि इसी परिस्थिति ने होरी के संपूर्ण जीवन को तहस-नहस करके रख दिया और उसकी अंतरात्मा तक को झकझोर डाला।

3. **अंतर्जातीय एवं अनुलोम विवाह की समस्या**–ज्यों-ज्यों समाज बदल रहा है, पुरानी मान्यताएँ दम तोड़ रही हैं, बुद्धि नये रूप को ग्रहण करती जा रही है, पर संस्कारों में बंधा मन उन्हें स्वीकार नहीं करता, परिणामत: बुद्धि और हृदय के संघर्ष से उनकी समस्याएँ जन्म ले रही हैं। इनमें अंतर्जातीय और अनुलोम विवाह की समस्या भी मुख्य है। आज भी हमारे समाज में कोई ब्राह्मण व्यक्ति किसी अन्य जाति की लड़की से विवाह नहीं कर सकता। समाज का भय इतना व्याप्त है कि वैधानिक रूप से छूट होने पर भी यदि आप समाज में प्रतिष्ठित बने रहना चाहते हैं तो ऐसा नहीं कर सकते और गाँवों की बात ही क्या है! यहाँ तो समाज के दबाव के आगे व्यक्ति घुटनों के बल बैठा हुआ है। तब सोचिये, प्रेमचंद जी के समय में यह समस्या कितनी उग्र रही होगी?

'गोदान' उपन्यास में इन दोनों ही समस्याओं को उठाया गया है। गोबर कुर्मी महतो है, किंतु अनायास ही उसका प्रेम भोला अहीर की विधवा कन्या झुनिया से हो जाता है और यह प्रेम इतना बढ़ता है कि झुनिया को गर्भ रह जाता है। झुनिया जब उसे यह बात बताती है तो बिरादरी और जाति-पांति के भय से गोबर का मुँह पीला पड़ जाता है। किंतु फिर भी वह उसे अपने घर छोड़कर स्वयं गाँव से भाग जाता है। इस कांड से सारा गाँव क्रुद्ध हो उठता है और अंतत: हुक्का-पानी रखने के लिए होरी को ऐसी डांड देनी पड़ती है कि उस आर्थिक बोझ से उसकी कमर ही टूट जाती है।

दूसरी ओर, ब्राह्मण मातादीन और चमारिन सिलिया के प्रसंग में अनुलोम विवाह की समस्या है।

नोट्स 'जिसकी लाठी उसकी भैंस' वाली कहावत के अनुसार गरीब ही सबके दंड का भागी होता है। दातादीन का लड़का मातादीन एक चमारिन से फंसा हुआ था। इसे सारा गाँव जानता था, पर वह तिलक लगाता था, पोथी-पत्रे बांचता था, कथा-भागवत कहता था, धर्म-संस्कार कराता था। इसलिए उसकी प्रतिष्ठा में जरा भी कमी न थी। वह नित्य स्नान-पूजा करके अपने पापों का प्रायश्चित कर लेता था।

"हमको कुल-प्रतिष्ठा इतनी प्यारी नहीं है महाराज कि उसके पीछे एक जीव की हत्या कर डालते। ब्याहता न सही, पर उसकी बांह तो पकड़ी है मेरे बेटे ने ही। किस मुँह से निकाल देती? यही काम बड़े-बड़े करते हैं, मगर उनसे कोई नहीं बोलता, उनके कलंक ही नहीं लगता। वही काम छोटे आदमी करते हैं, तो उनकी मरजाद बिगड़ जाती है नाक कट जाती है। बड़े आदमियों को अपनी नाक दूसरों की जान से प्यारी होगी, हमें तो अपनी नाक इतनी प्यारी नहीं।"

और यह समस्या एक ओर तो इतनी उग्र हो उठती है कि झुनिया को बहू बनाने के प्रतिकारस्वरूप गाँव के पंचों के निर्णयानुसार 30 मन अनाज 100 रुपए का दंड देना पड़ता है और दूसरी ओर मातादीन सिलिया को एक बार ठुकराकर भी अन्तत: उसके सात्विक प्रेम से प्रभावित होकर चमार बनने को तैयार हो जाता है और सिलिया की ही झोंपड़ी में रहने-खाने लगता है।

स्व-मूल्यांकन (Self-Assessment)

निम्नलिखित कथनों में सत्य अथवा असत्य की पहचान करें

(State Whether the following statements are True or False) :

7. दातादीन अपनी जवानी में बड़े रसिया रह चुके थे।

नोट

8. ठाकुर साहब अपनी स्त्रियों पर कठोर शासन नहीं करते थे।

9. गोबर को झुनिया से कदापि प्रेम नहीं था।

4. अनमेल विवाह की समस्या–आत्मसुख के लिए अथवा संतानहीन होने के कारण संतान प्राप्ति हेतु अनेक व्यक्ति वृद्धावस्था में भी विवाह कर लेते हैं स्वभावत: ऐसे में जिस तरुणी से वे विवाह करते हैं, उसकी आयु उनसे 20-25 वर्ष कम ही होती है। वृद्ध भोला और नोहरी तथा झिंगुरीसिंह के प्रसंग में प्रेमचंद जी ने इस समस्या को उठाया है और यह दर्शाने का प्रयत्न किया है कि ऐसे विवाह न केवल असफल और अनुचित हैं, बल्कि इनसे व्यभिचार को भी बढ़ावा मिलता है। भोला वृद्ध होने के बावजूद केवल आत्मतुष्टि हेतु नोहरी से विवाह करता है, किंतु जब उसके लड़के उसे घर से निकाल देते हैं और वह नोखेराम के यहाँ शरण लेता है तो अवसर पाकर नोहरी नोखेराम को अपने वासनात्मक प्रेम-पाश में बांध लेती है। वृद्ध भोला की दुर्गति के रूप में प्रेमचंद जी ने वृद्ध और अनमेल विवाह की समस्या के दुखद परिणाम प्रस्तुत किए हैं।

दूसरी ओर, "झिंगुरीसिंह दो स्त्रियों के पति थे। पहली स्त्री पाँच लड़के-लड़कियाँ छोड़कर मरी थी। उस समय इनकी अवस्था पैंतालिस के लगभग थी, पर आपने दूसरा ब्याह किया और जब उससे कोई संतान न हुई तो तीसरा ब्याह कर डाला। अब इनकी पचास की अवस्था थी और दो जवान पत्नियाँ घर में बैठी थीं। उन दोनों के विषय में तरह-तरह की बातें फैल रही थीं, पर ठाकुर साहब के डर से कोई कुछ न कह सकता था, और कहने का अवसर भी तो हो। पति की आड़ में सबकुछ जायज है। मुसीबत तो उसकी है, जिसे कोई आड़ नहीं। ठाकुर साहब स्त्रियों पर बड़ा कठोर शासन रखते थे और उन्हें घमंड था कि उनकी पत्नियों का घूंघट तक किसी ने न देखा होगा। मगर, घूंघट की आड़ में क्या होता है, उसकी उन्हें क्या खबर?"

किंतु अनमेल विवाह का एक और उदाहरण भी इस उपन्यास में है, जो केवल होरी की आर्थिक विपन्नता के कारण हुआ है और साथ ही उसमें कोई अन्य बुराई दृष्टिगत नहीं होती। लगान चुकता न कर पाने के कारण दातादीन उसे यह सुझाव देते हैं कि यदि वह अधेड़ रामसेवक से अपनी पुत्री रूपा का विवाह कर दे तो उसे लगान हेतु 200 रुपए मिल जाएँगे तो विवशत: होरी को इस विवाह हेतु तैयार होना पड़ता है। इस प्रकार यहाँ पर केवल आर्थिक समस्या ही आड़े आती है।

> *नोट्स* 'गोदान' उपन्यास में दर्शाया गया है कि किस प्रकार पूँजीपति वर्ग गरीब किसान होरी और उसके परिवार का शोषण करता है।

5. नारी की घुटन की समस्या–नवीन सभ्यताओं और संस्कृतियों के समागम से हमने अपने देश को तो बदल लिया, पर अपने संस्कारों को नहीं बदल सके। वे अब भी पुराने और खोखले हैं और फिर हमारे समाज में नारी की समस्या सबसे अधिक विकराल है। नारी-स्वतन्त्रता की हामी भरते हुए भी उसे वह स्वतंत्रता नहीं है, जो होनी चाहिए अथवा जिन्हें यह स्वतंत्रता मिल गयी है, वे उसका सही उपयोग नहीं कर पाती। नारी-स्वतंत्रता की समस्या के रूप में एक ओर मिस मालती हैं, जो–"नवयुग की साक्षात् प्रतिमा हैं। गात कोमल, पर चपलता कूट-कूट कर भरी हुई है। झिझक या संकोच का कही नाम नहीं, मेक-अप में प्रवीण, बला की हाजिर-जवाब, पुरुष-मनोविज्ञान की अच्छी जानकार, आमोद-प्रमोद को जीवन का तत्व समझने वाली, लुभाने और रिझाने की कला में निपुण। जहाँ आत्मा का स्थान है, वहाँ प्रदर्शन, जहाँ हृदय का स्थान है, वहाँ हाव-भाव, मनोद्गारों पर कठोर निग्रह, जिसमें इच्छा व अभिलाषा का लोप-सा हो गया।"

और दूसरी ओर गोबिन्दी का नारी-जीवन है, जो अटल पतिव्रत धर्म का पालन करते हुए भी घुटन का शिकार हो रही है। उसकी इस घुटन की समस्या का मूल कारण भी मालती जैसी ही नारियाँ हैं, जो अपनी चपलता, वाचालता एवं छल-छद्मों से खन्ना जैसे काम-लोलुप पतियों को पत्नियों से विमुख कर अपनी ओर आकर्षित कर लेती हैं।

नोट

आलोच्य उपन्यास में खन्ना और गोबिन्दी के प्रसंग में नारी की विवशतापूर्ण घुटन का चित्र सामने आता है। इसमें पूंजीवादी समाज में नारी के प्रति दृष्टिकोण को स्पष्ट किया गया है। उसकी इस घुटन को प्रेमचंद जी ने इन शब्दों में व्यक्त किया है–

"गोबिन्दी निराशा की उस दशा को पहुँच गयी थी, जब आदमी को सत्य और धर्म में भी संदेह होने लगता है।"

गोबिन्दी ने करुण स्वर में कहा–"मुझे अपना जीवन असह्य हो गया है। मुझसे अब तक जितनी तपस्या हो सकी, मैंने की, लेकिन अब नहीं सहा जाता। मालती मेरा सर्वनाश किए डालती है। मैं अपने किसी शस्त्र से उस पर विजय नहीं पा सकती। आपका उस पर प्रभाव है। वह जितना आपका आदर करती है, शायद और किसी मर्द का नहीं करती। अगर आप किसी तरह मुझे उसके पंजे से छुड़ा दें, तो मैं जन्म-भर आपकी ऋणी रहूँगी। उसके हाथों मेरा सौभाग्य लुटा जा रहा है।..... मैंने आज तक अपनी व्यथा अपने मन में रखी, लेकिन आज मैं आपसे आंचल फैलाकर भिक्षा माँगती हूँ। मालती से मेरा उद्धार कीजिए। मैं इस मायाविनी के हाथों मिटी जा रही हूँ।...."

इस प्रकार 'गोदान' उपन्यास में प्रेमचंद जी ने अनेक सामाजिक, आर्थिक एवं धार्मिक समस्याओं को उठाया है और चूँकि ये समस्याएँ अभी तक समस्याएँ ही बनी हुई हैं इसलिए उन्होंने इनके समाधान भी प्रस्तुत नहीं किए हैं। यथार्थवादी कथा होने के कारण केवल इन समस्याओं को यथार्थ के धरातल पर प्रस्तुत कर दिया है।

2.5 सारांश (Summary)

- वह अपने मन की सर्जनेच्छा का शमन करने के लिए ही साहित्य-सर्जना करता अथवा अपने मन की वासना को ही परिष्कृत रूप में साहित्य-जगत् में प्रस्तुत कर देता है।
- यथार्थवाद उनके उपन्यास में है और इतना है कि ग्रामीण कृषक वर्ग उसमें अपनी संपूर्ण दीनताओं, कुण्ठाओं, शोषण और उत्पीड़न के साथ व्यक्त हो गया है, किंतु आदर्श का एक ऐसा आवरण भी उन्होंने रखा है ताकि रचना समाजोपयोगी और जन-हिताय रूप ले सके।
- मालती-मेहता की आदर्श में पगी कथा से जहाँ उपन्यास में आदर्शवाद आ गया है, वहीं गोबर, होरी, धनिया, झुनिया आदि प्रसंगों में घोर यथार्थ है। होरी तो यथार्थ का पुतला ही है। उसके जीवन में जो परिस्थितियाँ आती हैं, जिन घटनाओं का वह शिकार बनता है, वे सब यथार्थ हैं।
- हमारा समाज धर्म की आड़ लेकर अपने आपको स्थापित करने के चाहे कितने ही प्रयास क्यों न करे, किंतु भारतीय सामान्य जन-मानस को उत्पीड़ित करने एवं उसके साथ छल करने के अपराध से वह मुक्त नहीं हो सकता।
- इतना ही नहीं, प्रेमचंद जी धर्म और ईश्वर के पाखण्ड पर चोट करते हुए गोबर को जिस विद्रोही रूप में प्रस्तुत करते हैं, उसके पीछे भी उनका यही उद्देश्य रहा है कि धार्मिक पाखण्ड पर खुला प्रहार किया जाए।
- होरी का तो जैसे समूचा जीवन ही प्रेमचंद जी ने देश की दीन-हीन, शोषित और पीड़ित जनता के प्रतीक रूप में किया है। उसकी आर्थिक दुरावस्था का इससे अधिक मार्मिक चित्र और क्या हो सकता है?
- देहात की बाह्य समस्याएँ हैं किसान-हाकिम, किसान-महाजन और किसान-जमींदार की समस्या। 'गोदान' में किसान-महाजन समस्या तो इतने उग्र रूप में चित्रित हुई है कि रोंगटे खड़े हो जाते हैं।
- किसान और महाजन के बीच की इस आर्थिक शोषण की दीवार ने न जाने कितने 'होरियों' को मरने को विवश किया है। होरी की मृत्यु और उस समय भी गोदान के लिए हाथ पसारे दातादीन के हाथ में बीस आने रखने का दृश्य, युग-युग से दलित मानवता की करुण पुकार और शोकार्त धनिया के क्रन्दन में एक किसान की जीवनगाथा को मुखर कर रहा है।
- 'गोदान' उपन्यास में इन दोनों ही समस्याओं को उठाया गया है। गोबर कुर्मी महतो है, किंतु अनायास ही उसका प्रेम भोला अहीर की विधवा कन्या झुनिया से हो जाता है और यह प्रेम इतना बढ़ता है कि झुनिया को गर्भ रह

जाता है। इस कांड से सारा गाँव क्रुद्ध हो उठता है और अंतत: हुक्का-पानी रखने के लिए होरी को ऐसी डांड देनी पड़ती है कि उस आर्थिक बोझ से उसकी कमर ही टूट जाती है।

2.6 शब्दकोश (Keywords)

1. विवशता – मजबूरी
2. इंतिहा – सीमा
3. प्रतिष्ठा – मान-सम्मान
4. पाखण्ड – दिखावा।

2.7 अभ्यास प्रश्न (Review Questions)

1. 'गोदान' में प्रेमचन्द जी ने समाज में व्याप्त धार्मिक पाखण्ड का किस प्रकार चित्रण किया है?
2. 'गोदान' में दर्शाई गई आर्थिक दुर्व्यवस्था का वर्णन अपने शब्दों में कीजिए।
3. 'गोदान' उपन्यास में नारी की घुटन की समस्या पर प्रकाश डालिए।
4. निम्नलिखित पर संक्षिप्त टिप्पणी लिखिए–
   (क) अनुलोम विवाह की समस्या (ख) अनमेल विवाह की समस्या।

उत्तर : स्व-मूल्यांकन (Answers : Self-Assessment)

1. डॉक्टरी
2. छुआछूत
3. रसिया
4. (ख)
5. (ग)
6. (ग)
7. सत्य
8. असत्य
9. असत्य।

2.8 सन्दर्भ पुस्तकें (Further Readings)

पुस्तकें गोदान–प्रेमचन्द

नोट

इकाई–3: 'गोदान' के पात्रों का चरित्र-चित्रण

अनुक्रमणिका (Contents)

उद्देश्य (Objectives)
प्रस्तावना (Introduction)
3.1 'गोदान' के गौण पात्र
3.2 'गोदान' के मुख्य पात्र
3.2.1 गोदान के पुरूष पात्र
3.2.2 गोदान के स्त्री पात्र
3.3 गोदान के प्रमुख पात्रों का चरित्र-चित्रण
3.3.1 होरी का चरित्र-चित्रण
3.3.2 मेहता का चरित्रांकन
3.3.3 रायसाहब अमरपाल सिंह का चरित्र
3.3.4 गोबर का चरित्र-चित्रण
3.3.5 धनिया का चरित्र
3.3.6 मालती का चरित्र
3.4 सारांश (Summary)
3.5 शब्दकोश (Keywords)
3.6 अभ्यास प्रश्न (Review Questions)
3.7 सन्दर्भ पुस्तकें (Further Readings)

उद्देश्य (Objectives)

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् विद्यार्थी योग्य होंगे–

- 'गोदान' के मुख्य एवं गौण पात्रों के चरित्र-चित्रण को समझने में;
- 'गोदान' के पुरूष एवं स्त्री पात्रों की व्याख्या करने में;
- समालोचकों द्वारा 'गोदान' के पात्रों पर की गई टिप्पणी को जानने में;
- पात्रों के माध्यम से 'गोदान' की कथावस्तु की जानकारी प्राप्त करने में।

प्रस्तावना (Introduction)

'गोदान' उपन्यास के माध्यम से प्रेमचन्द जी ने समाज में व्याप्त बुराइयों और समस्याओं का वर्णन हमारे समक्ष प्रस्तुत

नोट

किया है। 'गोदान' के सभी पात्रों की ओर ध्यान आकर्षित करने वाली विशेष बातों से अवगत कराया है। और सभी पात्रों का सफलतापूर्वक चरित्र-चित्रण भी किया है।

3.1 'गोदान' के गौण पात्र

1. **भोला**–होरी के गाँव से मिले पुरवे का ग्वाला, झुनिया और कामता का पिता।
2. **हीरा**–होरी का छोटा भाई, पुनिया का पति, होरी की गाय को ज़हर देकर इसी ने मारा था।
3. **शोभा**–होरी का छोटा भाई, सारे गाँव का विदूषक बल्कि नारद। हर एक बात की टोह लगाता था।
4. **सोना**–होरी की बड़ी पुत्री, उम्र 12 साल, उम्र से किशोरी, देह के गठन से युवती, बुद्धि से बालिका।
5. **रूपा**–होरी की छोटी पुत्री उम्र 6 साल।
6. **पण्डित ओंकारनाथ**–दैनिक पत्र बिजली के संपादक, रायसाहब के मित्र, स्वयं को आदर्शवादी मानते हैं, पर हैं पक्के स्वार्थी।
7. **श्याम बिहारी तंखा**–पेशे से वकील पर वकालत न चलने के कारण बीमा कंपनी के एजेंट हैं। ताल्लुकेदारों को महाजनों एवं बैंकों से कर्ज दिलाकर वकालत से ज्यादा कमाई करते हैं। रायसाहब के मित्र हैं।
8. **मिस्टर खन्ना**–बैंक के मैनेजर एवं शक्कर मिल के मैनेजिंग डॉयरेक्टर।
9. **सरोज**–मालती की बहन।
10. **मिर्जा खुर्शेद**–दिल्लगीबाज, बेफिक्र व्यक्ति, लखनऊ में जूते की दुकान थी तथा काउंसिल के मेम्बर थे। राय साहब के मित्र हैं।
11. **पण्डित नोखेराम**–जमींदार के कारकुन, गाँव के प्रमुख व्यक्ति, किसानों के शोषक, भोला की दूसरी पत्नी, नोहरी नामक अहीरिन को घर में रखे हुए हैं।
12. **झिंगुरी सिंह**–गाँव के महाजन, शहर के बड़े महाजन के एजेंट, स्वार्थी, सूदखोर, दूसरों की मुसीबत से लाभ उठाने वाले साहूकार। दो बीवियाँ रखते थे।
13. **गण्डासिंह**–हलके का थानेदार, रिश्वती, निर्दयी एवं क्रूर।
14. **पटेश्वरी**–गाँव का पटवारी, भ्रष्टाचारी एवं स्वार्थी, पुलिस से मिलकर किसानों को लूटने वाले, जाति के कायस्थ।
15. **नोहरी**–जाति की अहीरिन, झुनिया के पिता भोला से उसने दूसरा विवाह किया था, बाद में भोला को लेकर नोखेराम के यहाँ रहने लगी।
16. **मंगरू साह**–गाँव का सबसे धनी व्यक्ति, पूजा-पाठ में रत।
17. **दुलारी सहुआइन**–गाँव की साहूकारिन।
18. **चुहिया**–झुनिया की शहर में रहने वाली पड़ोसिन, झुनिया को प्रसव में सहायता करने वाली तथा उसके बच्चे को अपना दूध पिलाने वाली नरमदिल स्त्री।

नोट

3.2 'गोदान' के मुख्य पात्र

3.2.1 गोदान के पुरुष पात्र

क्र.सं.	पात्र का नाम	परिचयात्मक विवरण	प्रमुख चारित्रिक विशेषताएँ
1.	होरी	1. उपन्यास का नायक 2. वेलारी ग्राम का साधारण कृषक 3. कृषक वर्ग का प्रतिनिधि पात्र 4. होरी की पत्नी का नाम है धनिया तथा उसके पुत्र का नाम है गोबर। सोना और रूपा उसकी दो पुत्रियाँ हैं। 5. होरी के पास कुल पाँच बीघा ज़मीन है। 6. हीरा और शोभा उसके दो भाई हैं, जो उससे अलग रहते हैं।	1. सीधा-सादा साधारण किसान 2. परिश्रमी एवं ईमानदार 3. आर्थिक अभावों से ग्रस्त 4. शोषण का शिकार 5. आस्थावान एवं भाग्यवादी 6. परिवार की मर्यादा का रक्षक 7. समाज एवं बिरादरी से भयभीत 8. सीमित जीवन दृष्टि से युक्त 9. व्यवहारकुशल 10. साधारण हिन्दू गृहस्थ 11. मर्यादावादी एवं नैतिकतावादी 12. पैतृक संपत्ति का रक्षक 13. मानवीय दुर्बलताओं से युक्त 14. कृषक वर्ग का प्रतिनिधि पात्र
2.	रायसाहब अमरपाल सिंह	1. सेमरी ग्राम के निवासी 2. अवध प्रान्त के एक जमींदार 3. होरी इन्हीं की जमींदारी में रहने वाला किसान है। 4. मेहता, खन्ना, मिर्जा खुर्शेद, ओंकरनाथ आदि नगर में रहने वाले पात्र रायसाहब के मित्र हैं। 5. जमींदार वर्ग के प्रतिनिधि पात्र हैं। 6. रायसाहब के पुत्र का नाम रुद्रपाल है तथा पुत्री का नाम मीनाक्षी है।	1. रायसाहब रंगे सियार हैं। पाखण्डी व्यक्तित्व के स्वामी हैं। 2. कथनी और करनी में अंतर 3. सभा चतुर व्यक्ति 4. मानव स्वभाव के पारखी 5. जर्जर सामन्ती व्यवस्था के शिकार 6. धर्मात्मा एवं भक्त 7. किसानों के शोषक 8. राष्ट्रवादी बातों पर सरकार के भक्त 9. विचारों से प्रगतिशील 10. जमींदार वर्ग के प्रतिनिधि पात्र
3.	प्रोफेसर मेहता	1. प्रोफेसर वी. मेहता यूनिवर्सिटी में दर्शनशास्त्र के प्राध्यापक हैं। 2. बुद्धिजीवी वर्ग के प्रतिनिधि पात्र हैं। 3. मालती से प्रेम करते हैं। 4. रायसाहब, संपादकजी, खन्नाजी, मिर्जा	1. कथनी एवं करनी में एकरूपता 2. परिश्रमी एवं नैतिकतावादी 3. दृढ़ चरित्र वाले व्यक्ति। 4. विनोदी स्वभाव 5. नारी जाति के प्रति श्रद्धावान

नोट

		खुर्शेद के मित्र हैं प्रोफेसर मेहता। 5. मेहता जी कुंवारे हैं।	6. प्रकृति प्रेमी 7. प्रेमचंद के विचारों के वाहक 8. बुद्धिजीवी वर्ग के प्रतिनिधि पात्र 9. सिद्धांतवादी दार्शनिक 10. मालती के उपासक 11. कुशल वक्ता
4.	गोबर	1. होरी और धनिया का पुत्र 2. सोलह वर्ष का युवक 3. झुनिया का पति 4. विद्रोही चेतना का प्रतीक 5. सोना और रूपा का भाई	1. विद्रोही स्वभाव का युवक 2. जागरूक एवं प्रगतिशील 3. अल्हड़ प्रेमी 4. धनी बनने का आकांक्षी 5. परिश्रमी एवं ईमानदार 6. निर्भीक एवं निडर 7. शोषण का शिकार 8. भाग्य पर विश्वास न करने वाला 9. मातृ-पितृ भक्त 10. विद्रोही चेतना का प्रतीक पात्र
5.	पण्डित दातादीन	1. होरी के गाँव में रहने वाले वृद्ध पण्डित 2. मातादीन के पिता 3. गाँव के सम्मानित व्यक्ति 4. कृषकों को सूद पर रुपया देते हैं।	1. कर्मकाण्ड में विश्वास 2. अनेक विषयों के जानकार 3. सम्मान एवं श्रद्धा के आकांक्षी 4. धूर्त एवं चालाक 5. कृषक वर्ग के शोषक 6. जमींदार एवं पुलिस के सहायक 7. दम्भी एवं अहंकारी

3.2.2 गोदान के स्त्री पात्र

क्र.सं.	पात्र का नाम	परिचयात्मक विवरण	प्रमुख चारित्रिक विशेषताएँ
1.	धनिया	1. होरी की पत्नी 2. उपन्यास की नायिका 3. गोबर, रूपा एवं सोना की माँ 4. कृषक स्त्री वर्ग की प्रतिनिधि पात्र	1. परिश्रमी महिला 2. पति के प्रति पूर्ण समर्पित 3. निर्भीक एवं निडर 4. लड़ाकू स्वभाव वाली 5. मातृत्व भावना से युक्त 6. संघर्ष से जूझती नारी 7. सेवा और त्याग की देवी 8. व्यवहारकुशल

नोट

			9. शोषण की विरोधिनी 10. भारतीय आदर्श नारी 11. कृषक स्त्री वर्ग की प्रतिनिधि पात्र
2.	मालती	1. इंग्लैण्ड से डॉक्टरी पढ़कर आयी हुई नवयुवती 2. सरोज की बहन 3. प्रोफेसर मेहता के प्रति आकृष्ट 4. गतिशील चरित्र वाली युवती	1. सुंदर व्यक्तित्व की स्वामिनी 2. पढ़ी-लिखी शिक्षित युवती 3. बाहर से तितली भीतर से मधुमक्खी 4. प्रोफेसर मेहता के प्रति आकृष्ट 5. गतिशील चरित्र 6. सेवा एवं त्याग से युक्त 7. चारित्रिक दृढ़ता 8. नारी स्वातंत्र्य की समर्थक 9. मालती का हृदय परिवर्तन 10. बुद्धिजीवी महिला वर्ग प्रतिनिधि
3.	झुनिया	1. भोला की विधवा पुत्री 2. अहीर जाति की कन्या 3. गोबर की प्रेमिका एवं पत्नी 4. धनिया के प्रति सेवाभाव से युक्त	1. वैधव्य की पीड़ा से त्रस्त 2. कर्त्तव्यमयी पत्नी 3. उन्मादिनी प्रेमिका 4. वात्सल्यमयी माँ 5. सेवाभावी एवं कर्त्तव्यपरायण
4.	गोविन्दी	1. खन्ना साहब की पत्नी 2. प्रेमचंद की नारी भावना को मूर्त करने वाली नारी 3. मेहता की दृष्टि में आदर्श नारी 4. प्रेमचंद ने प्रारंभ में इसका नाम कामिनी खन्ना दिया है।	1. पतिपरायण पत्नी 2. आदर्श नारी पात्र 3. त्यागमयी 4. सेवाभावना से युक्त 5. वफादार पत्नी 6. मालती के प्रति ईर्ष्यालु
5.	सिलिया	1. जाति की चमारिन 2. पं. मातादीन की प्रेमिका 3. जाति प्रथा की शिकार युवती 4. मातादीन द्वारा अन्त में पत्नी रूप में उसे स्वीकार कर लिया गया।	1. रूपवती युवती 2. गुणवती स्त्री 3. सेवा भावना से युक्त 4. मातादीन के प्रति समर्पित 5. आदर्श प्रेमिका

स्व-मूल्यांकन (Self-Assessment)

रिक्त स्थानों की पूर्ति करें (Fill in the blanks) :

1. होरी की पत्नी का नाम .... है।

2. प्रोफेसर बी. मेहता यूनिवर्सिटी में .... के अध्यापक हैं।

3. दातादीन .... के पिता हैं।

नोट

3.3 'गोदान' के प्रमुख पात्रों का चरित्र-चित्रण

3.3.1 होरी का चरित्र-चित्रण

गोदान का प्रधान पात्र होरी अवध के एक ग्राम बेलारी का पाँच बीघे का कृषक है। प्रेमचंद जी ने होरी के रूप में एक अमर पात्र की सृष्टि की है जो भारतीय कृषक वर्ग का प्रतिनिधित्व करता है। होरी के चरित्र में उपलब्ध दो गुण–उसकी शाश्वत गरीबी और परिश्रम करते रहने की दृढ़ इच्छाशक्ति वास्तव में प्रेमचंद के अपने व्यक्तित्व से मेल खाते हैं। इसी प्रकार प्रो. मेहता के माध्यम से प्रेमचंद ने अपने 'विचारों' को इस उपन्यास में अभिव्यक्त किया है। **डॉ. राम विलास शर्मा** ने इसीलिए मेहता और होरी के मेल से बने व्यक्ति को प्रेमचंद का व्यक्तित्व निरूपित करते हुए लिखा है, **"गोदान के किसी एक पात्र को प्रेमचंद का प्रतिनिधि पात्र नहीं कहा जा सकता, लेकिन अगर मेहता से होरी को जोड़ा जा सके तो जो व्यक्ति बनेगा वह बहुत कुछ प्रेमचंद से मिलता-जुलता होगा। मेहता में यदि उन्होंने अपने विचार डाले हैं तो होरी में बराबर परिश्रम करते रहने की दृढ़ इच्छाशक्ति।"**

नोट्स होरी गाय पालने की अभिलाषा को अपने भाई हीरा की ईर्ष्या के कारण पूरा नही कर पाता है।

होरी को अपने जीवन में प्राय: उन्हीं समस्याओं से जूझना पड़ा जो एक सामान्य भारतीय कृषक के जीवन में रहती हैं। होरी रायसाहब का आसामी है और **भाग्यवादी** है। गोबर से वह यही कहता है कि हमें परमात्मा ने गरीब बनाया है। होरी **व्यवहारकुशल है,** जब-तब रायसाहब को सलाम करने उनके यहाँ जाता रहता है क्योंकि वह जानता है कि **"जब हमारी गर्दन दूसरों के पैरों के नीचे दबी हुई है तब अकड़कर निबाह नहीं हो सकता।"**

होरी निहायत ईमानदार, परोपकारी एवं सीधा-सादा कृषक है किंतु उसमें भी वे दुर्गुण हैं जो एक सामान्य कृषक में होते हैं। वह पक्का स्वार्थी भी है, बांस बेचते समय कुछ ही पैसों के लिए अपने भाई का हिस्सा मारने हेतु बंसोर से सौदा करता है। अन्य किसानों की भांति वह भी रुई में बिनौले मिला देता है, सन को गीला कर देता है तथा घर में कुछ रुपए होते हुए भी रुपए न होने की बात कहकर झूठ बोलता है। होरी की धर्मभीरुता, भाग्यवादिता और व्यवहारकुशलता एक साधारण कृषक जैसी ही है।

आर्थिक अभाव से ग्रस्त होरी कर्ज एवं ऋणग्रस्तता के बोझ से दबा हुआ है और शोषण का शिकार है। प्राचीन मान्यताओं, संस्कारों एवं रूढ़ियों में जकड़ा हुआ होरी समाज एवं बिरादरी से इतना डरता है कि जब झुनिया के प्रकरण में बिरादरी उसे दंड देती है तो अपना हुक्का-पानी खुलवाने के लिए वह अपनी सारी उपज ढो-ढोकर पंचों को दे देता है और दंड के रुपए देने हेतु कर्ज लेता है।

होरी की एकमात्र अभिलाषा थी कि उसके पास एक गाय हो। गाय उसके लिए प्रतिष्ठा की वस्तु है, इसलिए जब उसे भोला ने गाय उधार में दे दी तो उसे धनिया के विरोध के बावजूद अपने द्वार पर बांधता है। ईर्ष्यावश हीरा ने गाय को विष खिला दिया और गाय का 'गोरस' पाने की होरी की लालसा धरी की धरी रह गयी। यह गाय उसके लिए विपत्ति लेकर आयी। किसान के जीवन की यह कितनी बड़ी ट्रेजिडी है कि वह अपनी छोटी सी अभिलाषा को भी जीवन में पूरा नहीं कर पाया और मृत्यु के अवसर पर उससे 'गोदान' के लिए कहा जाता है।

होरी परिवार की मर्यादा का रक्षक है। वह जानता है कि हीरा ने उसकी गाय को जहर दिया है किंतु इस बात को

नोट

सार्वजनिक नहीं करना चाहता। धनिया से उसकी लड़ाई इसी बात को लेकर होती है। यही नहीं पुलिस जब हीरा के घर की तलाशी लेना चाहती है तो वह परिवार की मर्यादा को बचाने के लिए कर्ज लेकर थानेदार को रिश्वत देना चाहता है। पुनिया की खेती की देखभाल भी उसी ने की क्योंकि हीरा तो घर से भाग गया था।

होरी जानता है कि किसानी से पेट नहीं भरता, किंतु किसानी छोड़कर मजदूरी करने में उसकी प्रतिष्ठा को ठेस लगती है। अपने खेत-खलिहान एवं घर-द्वार से उसे लगाव है। होरी मानवीय गुणों से संपन्न है। मालिक के लिए वह जान की बाजी लगा सकता है। रायसाहब के आयोजित उत्सव के अवसर पर वही पठान वेशधारी बन्दूक हाथ में लिए मेहता को निहत्था होने पर भी अपने काबू में कर लेता है। झुनिया की बांह उसके बेटे गोबर ने पकड़ी थी अतः गर्भवती होने पर जब वह अपना घर छोड़कर उसके घर में रहने आ गई तब होरी और धनिया ने उसे आश्रय दिया और अपने लिए बिरादरी एवं समाज से दुश्मनी मोल ली। बिरादरी ने भले ही उसका हुक्का-पानी बंद कर दिया, उसे आर्थिक दंड दिया पर उसे इस बात का संतोष है कि उसने झुनिया एवं उसके होने वाले बच्चे की जान बचाई, अन्यथा झुनिया निश्चित रूप से आत्महत्या कर लेती।

निराश्रित सिलिया को भी होरी और धनिया ने अपने घर में पनाह दी। भले ही होरी को जीवनपर्यन्त आर्थिक तंगी से जूझना पड़ा तथापि उसने मानवता का त्याग कभी नहीं किया और अनैतिक आचरण से सदैव दूर रहा। अपने पाँच बीघे खेत की रक्षा करने के लिए वह संघर्ष करता रहा। किंतु अन्ततः वह ज़मीन उसके हाथ से निकल ही तो गयी। अन्त में मज़दूरी करके उसे अपना जीवन यापन करना पड़ा और अत्यधिक श्रम करने के कारण उसे लू लग गई और काम करते-करते अंततः होरी का प्राणान्त हो गया। **डॉ. रामविलास शर्मा** ने होरी के विषय में लिखा है, **"उपन्यास का प्रमुख पात्र होरी उपन्यासकार की अमर सृष्टि है। यह पहला अवसर है जबकि हिन्दी कथा साहित्य में किसान का चित्रण एक व्यक्ति के रूप में किया गया है। .....होरी पेशे और व्यक्ति दोनों दृष्टियों से किसान है। उसके चरित्र का चित्रण करने में प्रेमचंद ने अपनी समस्त कला उड़ेल दी है।"**

उदाहरण—समाज के विरूद्ध सिलिया को अपने घर में शरण देना, होरी और धनिया द्वारा मानवता का त्याग न करने का एक बड़ा उदाहरण है।

प्रेमचंद ने होरी को 'हीरो' के रूप में चित्रित नहीं किया। होरी में परंपरागत नायकत्व की कोई पहचान शेष नहीं है क्योंकि न तो वह धीरोदात्त गुणों से संपन्न है और न ही उसे अंतिम फल की प्राप्ति होती है भले ही होरी वर्ग चरित्र हो और कृषक वर्ग का प्रतिनिधि पात्र हो किंतु उसकी व्यक्ति के रूप में एक अलग पहचान है और वह है उसकी मनुष्यता जिसका प्रमाण देने वाली कई घटनाएँ गोदान में हैं। वह किसी के संकट का लाभ नहीं उठा सकता, निराश्रित झुनिया, सिलिया को अपने घर में पनाह देता है, पुनिया की खेती की देखभाल करता है और घर के मुखिया का दायित्व आर्थिक अभाव में भी यथासंभव पालन करता है।

निश्चय ही होरी प्रेमचंद की अमर सृष्टि है और जब तक प्रेमचंद का नाम रहेगा तब तक लोग होरी को भी स्मरण रखेंगे।

स्व-मूल्यांकन (Self-Assessment)

बहुविकल्पीय प्रश्न (Multiple Choice Questions) :

4. होरी किस गाँव का किसान था?

(क) सेमरी ग्राम (ख) इंग्लैण्ड

(ग) बेलारी गाँव (घ) इनमें से कोई नहीं।

नोट

5. गोबर किसका पति था?

(क) सोना (ख) रूपा

(ग) झुनिया (घ) इनमें से कोई नहीं।

6. 'गोदान' में मेहता जी कौन थे?

(क) डॉक्टर (ख) प्रोफेसर

(ग) ज़मींदार (घ) इनमें से कोई नहीं।

3.3.2 मेहता का चरित्रांकन

प्रोफेसर मेहता गोदान उपन्यास के एक प्रमुख पात्र हैं। वह दर्शनशास्त्र के प्रोफेसर हैं तथा रायसाहब अमरपाल सिंह के मित्रों में से एक हैं। मेहता जी अविवाहित हैं तथा बुद्धिजीवी वर्ग के प्रतिनिधि पात्र हैं। आलोचकों ने उनमें स्वयं 'प्रेमचंद' के व्यक्तित्व की झलक पाई है। वास्तव में वह प्रेमचंद के विचारों के वाहक हैं। गोदान में प्रेमचंद जिन विचारों को व्यक्त करना चाहते थे, उन्हें मेहता के माध्यम से व्यक्त किया है। उपन्यास में उनकी यही उपयोगिता है। मेहता जी का चरित्र रायसाहब के चरित्र से ठीक विपरीत है क्योंकि रायसाहब जहाँ कहते कुछ हैं वहीं करते कुछ और हैं किंतु प्रो. मेहता साहब कथनी और करनी की एकरूपता में विश्वास करते हैं। रायसाहब को संबोधित करते हुए प्रोफेसर मेहता कहते हैं, **"मैं चाहता हूँ कि हमारा जीवन हमारे सिद्धांतों के अनुकूल हो।.....मुझमें और आप में अंतर इतना ही है कि मैं जो कुछ मानता हूँ, उस पर चलता हूँ। आप लोग मानते कुछ हैं, करते कुछ हैं।"**

मेहता बुद्धिजीवी वर्ग के ऐसे चरित्र हैं जो शोषण का विरोध करते हैं किंतु साम्यवाद के समर्थक नहीं हैं। उनकी मान्यता है कि **"संसार में छोटे-बड़े हमेशा रहेंगे और उन्हें हमेशा रहना चाहिए। इसे मिटाने की चेष्टा करना मानव जाति का सर्वनाश करना होगा।"** मेहता जी आकर्षक व्यक्तित्व के स्वामी हैं, अथक परिश्रमी हैं। प्रेमचंद के शब्दों में **"वह आधी रात को सोते थे और घड़ी रात रहे उठ जाते थे।"** कैसा भी काम हो उसके लिए वह समय निकाल लेते थे। वह उदार एवं सहृदय व्यक्ति थे, कई विद्यार्थी उन्हीं के पैसों से शिक्षा पाते थे। वह समाज कल्याण के लिए तत्पर रहने वाले, सेवाभावी व्यक्ति थे।

कथनी और करनी में एकरूपता के समर्थक मेहता चाहते हैं कि व्यक्ति को कायर एवं धूर्त नहीं होना चाहिए। वह यह मानते हैं कि बुद्धि हमेशा से राज करती आई है और करेगी। छोटे बड़े का भेद ही हमेशा से है और रहेगा क्योंकि यह भेद केवल धन के कारण नहीं होता अपितु बुद्धि, रूप, चरित्र, शक्ति प्रतिभा आदि के कारण भी होता है। मेहता जी विनोदी स्वभाव के जिन्दादिल इंसान हैं। पुरुषों के समाज में खूब चहकते हैं किंतु नवयुग की रमणियों से पनाह मांगते हैं। ज्योंही कोई महिला आई और आपकी जबान बंद हुई। यद्यपि वे मालती के साथ शिकार पार्टी में गए किंतु मालती के प्रति आकृष्ट न होकर उस काली-कलूटी जंगली युवती के प्रति अपना स्नेह भाव दिखाते हैं जो सेवाभाव से उन्हें मुग्ध कर लेती है। मालती जब उन्हें छिछोरा कहती है तब वे मालती को चिढ़ाते हुए कहते हैं, **"कुछ बातें तो उसमें ऐसी हैं कि अगर तुम में होती तो तुम सचमुच देवी हो जाती।"** जंगल से चलते समय वह उसे बहन का संबोधन देकर अपनी चारित्रिक दृढ़ता का परिचय देते हैं।

मेहता जी के नारी विषयक विचार प्रेमचंद की नारी भावना को अभिव्यक्त करते हैं। मिर्जा खुर्शेद से वह अपनी नारी संबंधी धारणा को अभिव्यक्त करते हुए कहते हैं, **"मैं आप से किन शब्दों में कहूँ कि स्त्री मेरी नजरों में क्या है? संसार में जो कुछ सुंदर है, उसी की प्रतिमा को मैं स्त्री कहता हूँ। मैं उससे यह आशा करता हूँ कि मैं उसे मार भी डालूँ तो भी प्रतिहिंसा का भाव उसमें न आए। अगर मैं उसकी आँखों के सामने किसी स्त्री को प्यार करूँ तो भी उसकी ईर्ष्या न जागे। ऐसी स्त्री को पाकर मैं उसके चरणों में गिर पड़ूँगा और उस पर अपना जीवन अर्पण कर दूँगा।"**

नोट

क्या आप जानते हैं मेहता जी ने मालती के उद्योग नगर में स्थापित संस्था 'वीमेन्स लीग' में भाषण देते हुए नारियों को यह सुझाव दिया कि उन्हें पश्चिम का अंधानुकरण नहीं करना चाहिए। पश्चिम की नारियाँ स्वच्छंद बनकर विलास करना चाहती हैं तथा अपने शरीर का प्रदर्शन करती हैं किंतु भारतीय रमणियों का आदर्श यह कभी नहीं रहा।

उनकी मान्यता है कि **"स्त्री पुरुष से उतनी ही श्रेष्ठ है जितना प्रकाश अंधेरे से।"** उनकी यह भी धारणा है कि नारियाँ अपनी सेवा और अपने त्याग से अधिकार प्राप्त करती हैं जो वोट के अधिकार से बड़े हैं, **"संसार में सबसे बड़े अधिकार सेवा और त्याग से मिलते हैं और वह आपको मिले हुए हैं। उन अधिकारों के सामने वोट कोई चीज़ नहीं है।.....हमारी माताओं का आदर्श कभी विलास नहीं रहा। उन्होंने केवल सेवा के अधिकार से सदैव गृहस्थी का संचालन किया है।"**

मेहता जी की दृष्टि में खन्ना साहब की पत्नी गोविन्दी आदर्श स्त्री है और वे उसके प्रति श्रद्धा भाव रखते हैं। जब उन्हें गोविन्दी के बारे में यह पता चलता है कि वह मालती के कारण दुखी है तब उन्होंने यह जिम्मा अपने ऊपर ले लिया कि उनके पति को मालती के चंगुल से छुड़ा देंगे। वह नकली जीवन के विरोधी हैं और कहते हैं, **"मैं प्रकृति का पुजारी हूँ और मनुष्य को उसके प्राकृतिक रूप में देखना चाहता हूँ जो प्रसन्न होकर हँसता है, दुखी होकर रोता है और क्रोध में आकर मार डालता है। जो दुख और सुख दोनों का दमन करते हैं, जो रोने को कमजोरी और हँसने को हल्कापन समझते हैं उनसे मेरा कोई मेल नहीं।"**

मेहता जी का यह भी विचार है कि **"नारी केवल माता है और इसके उपरान्त वह जो कुछ है, वह सब मातृत्व का उपक्रम मात्र मातृत्व संसार की सबसे बड़ी साधना, सबसे बड़ी तपस्या, सबसे बड़ा त्याग और सबसे महान विजय है।"**

मेहता की दृष्टि में विवाह एक समझौता है जिसे करने के बाद उसे तोड़ने का अधिकार न स्त्री को है, न पुरुष को। प्रेम के विषय में उनके विचार हैं कि **"प्रेम सीधी-सादी गऊ नहीं खूंखार शेर है जो अपने शिकार पर किसी की आँख नहीं पड़ने देता।"**

मेहता जी निर्भीक एवं स्पष्ट वक्ता हैं। **डॉ. रामविलास शर्मा** ने मेहता की चारित्रिक विशेषताओं पर टिप्पणी करते हुए लिखा है, **"यह कुंआरा अध्यापक न मिस मालती जैसी लेडी डॉक्टरों को बख्शता है और न रायसाहब जैसे रईसों को। वह उन बुद्धिजीवियों में से है जो जनता से प्रेम करते हैं और उनके शोषकों से घृणा करते हैं लेकिन जिनकी सहानुभूति और घृणा ने अभी सक्रिय रूप नहीं लिया है।"**

प्रेमचंद जी ने अपने प्रत्येक उपन्यास में एक पात्र 'आदर्शवादी' सृजित किया है। गोदान में प्रोफेसर मेहता आदर्शवादी चरित्र हैं। वह बुद्धिजीवी वर्ग के पात्र हैं अतः प्रत्येक विषय पर उनकी अपनी धारणा एवं चिंतन पद्धति है। नारी के विषय में उनके विचार परंपरावादी ही कहे जाएँगे। उनके अनुसार, **"मेरे ज़ेहन में औरत वफा और त्याग की मूर्ति है जो अपनी बेजुबानी से, कुर्बानी से अपने को बिल्कुल मिटाकर पति की आत्मा का अंश बन जाती है।"**

मेहता जी नकली ज़िंदगी के विरोधी हैं, इसलिए रायसाहब जैसे रंगे सियारों को अच्छी तरह फटकारते हैं। वह एक कुशल वक्ता हैं, गरीबों के प्रति सहानुभूति रखते हैं, निर्धन छात्रों के मददगार हैं तथा प्रकृति के पुजारी हैं। मानव मात्र को वह उसके स्वाभाविक असली अर्थात् प्रकृत रूप में देखने के पक्षपाती हैं। यद्यपि उनका चरित्र अपने वर्ग का प्रतिनिधित्व करता है, पर वह व्यक्ति चरित्र को भी वहन करते हैं। मेहता जी को प्रेमचंद ने अपने विचारों का प्रवक्ता बनाया है। **डॉ. रामविलास शर्मा** का विचार है कि होरी और मेहता के गुणों को यदि मिला दिया जाए तो प्रेमचंद का अपना व्यक्तित्व निर्मित होता दिखाई देगा। मेहता जी निश्चित रूप से गोदान के एक आदर्शवादी चरित्र के रूप में पाठकों पर अपनी छाप छोड़ते हैं।

स्व-मूल्यांकन (Self-Assessment)

निम्नलिखित कथनों में सत्य अथवा असत्य की पहचान करें

(State Whether the following statements are True or False) :

7. हीरा होरी का बड़ा भाई था।
8. मिस्टर खन्ना बैंक के मैनेजर हैं।
9. धनिया होरी की बेटी है।

3.3.3 रायसाहब अमरपाल सिंह का चरित्र

गोदान उपन्यास के प्रमुख पात्रों में रायसाहब अमरपाल सिंह का चरित्र भी अपनी विशिष्टताओं के कारण वर्ग चरित्र का उदाहरण बन गया है। वह अवध प्रान्त के एक जमींदार हैं तथा उनमें वे सभी विशेषताएँ तथा गुण-अवगुण विद्यमान हैं जो तत्कालीन जमींदारों में कमोवेश दिखाई पड़ते थे। इस प्रकार वह जमींदार वर्ग का प्रतिनिधित्व करने वाले वर्ग चरित्र के रूप में हमारे सामने प्रस्तुत किए गए हैं। रायसाहब सेमारी ग्राम में रहते हैं, कौंसिल के मेम्बर हैं, सभाचतुर व्यक्ति हैं, अच्छे वक्ता हैं। वह राष्ट्रवादियों से भी संपर्क रखते हैं और अंग्रेज हुक्मरानों एवं अफसरों को भी डालियाँ भिजवाते हैं।

रायसाहब को अच्छी तरह पता है कि जमींदारी प्रथा अब अधिक दिनों तक नहीं चलेगी। होरी के समक्ष अपनी वास्तविक स्थिति को बखान करते हुए वह कहते हैं, **"तुम हमें बड़ा आदमी समझते हो? हमारे नाम बड़े हैं, पर दर्शन छोटे।.... बड़े आदमियों की ईर्ष्या और बैर केवल आनंद के लिए है। हम इतने बड़े आदमी हो गए हैं कि हमें नीचता और कुटिलता में ही नि:स्वार्थ और परम आनंद मिलता है।"**

वह अच्छी तरह जानते हैं कि सब उन्हे लूट रहे हैं। दुनिया उन्हें सुखी समझती है क्योंकि उनके पास इलाके, महल, सवारियाँ, नौकर-चाकर, वेश्याएँ सबकुछ हैं, पर वे सुखी नहीं हैं क्योंकि उनकी इंसानियत मर गई है, आत्मबल नष्ट हो गया है तथा उनका स्वाभिमान समाप्त हो गया है। जमींदारी प्रथा का अवसान उन्हें समीप ही दिख रहा है। वह स्वीकार करते हैं कि **"बहुत जल्द हमारे वर्ग की हस्ती मिट जाने वाली है। मैं उस दिन का स्वागत करने को तैयार बैठा हूँ। ईश्वर वह दिन जल्द लाए। वह हमारे उद्धार का दिन होगा। हम परिस्थितियों के शिकार बने हुए हैं।"**

रायसाहब कृषकों के शुभेच्छु हैं किंतु परिस्थितियों से विवश होकर अपने अनाप-शनाप खर्चों को पूरा करने के लिए उन्हें किसानों का शोषण करना पड़ता है। प्रेमचंद जी ने रायसाहब को **'रंगा सियार'** कहा है अर्थात् वह देखने में तो अन्य जमींदारों से अलग लगते हैं किंतु वास्तव में वह उतने ही क्रूर, निर्दयी, स्वार्थी जमींदार हैं जितने अन्य जमींदार होते हैं। उनकी कथनी एवं करनी में एकरूपता नहीं है। वह बातें तो बड़ी ऊँची-ऊँची करते हैं यथा **"किसी को भी दूसरे के श्रम पर मोटे होने का अधिकार नहीं है। उपजीवी होना घोर लज्जा की बात है। कर्म करना प्राणिमात्र का धर्म है।"** किंतु किसानों के शोषण में पीछे नहीं रहते। मेहता जी उनकी पोल खोलते हुए कहते हैं, **"आपकी ज़बान में जितनी बुद्धि है काश! उसकी आधी भी मस्तिष्क में होती। खेद यही है कि सबकुछ समझते हुए भी आप अपने विचारों को व्यवहार में नहीं लाते।"**

रायसाहब किसानों के शुभेच्छु बनते हैं, पर उन पर रियायत तनिक भी नहीं करते। वह भी नज़राने लेते हैं, बेगार लेते हैं, इज़ाफा लगान वसूल करते हैं, उन्हें कोड़ों से पिटवाने की धमकी देते हैं। उनकी बातें तो कम्युनिस्टों जैसी हैं पर जीवन है रईसों जैसा, उतना ही विलासमय एवं स्वार्थ से भरा हुआ।

जमींदार अधिकार के नाम पर किसान को कोई रियायत नहीं देता, हाँ उन पर दया करके, उन्हें अपनी प्रजा समझकर उनको मदद दे सकता है। रायसाहब की उपयोगिता गोदान में दो दृष्टियों से है। एक तो वह जमींदार वर्ग का प्रतिनिधित्व करने वाले ऐसे पात्र हैं, जो किसानों के शोषण से सीधे-सीधे जुड़े हुए हैं। दूसरे वह गोदान की दोनों

नोट

कथाओं–नगर की कथा एवं ग्राम्य जीवन की कथा को जोड़ने वाले सेतु हैं। उनका संबंध नगर के मित्रों–मेहता, खन्ना, संपादक ओंकारनाथ, श्याम बिहारी तंखा, मिर्जा खुर्शेद, मालती जैसे पात्रों से भी है और होरी दातादीन, नोखेराय आदि से भी है।

रायसाहब के चरित्रांकन द्वारा प्रेमचंद ने सामंती व्यवस्था के जर्जर होते रूप को प्रस्तुत किया है। रायसाहब की अमीरी एवं विलासिता के वर्णन द्वारा होरी की निर्धनता, लाचारी एवं अभाव को और भी अधिक उभारा जा सका है। रायसाहब बदलते हुए युग के जमींदार हैं। वह विचारों से प्रगतिशील किंतु कार्य से प्रतिक्रियावादी हैं। उपन्यास के अंत में रायसाहब की पुत्री मीनाक्षी का विवाह-विच्छेद हो जाता है और उनका पुत्र रायसाहब की इच्छा के विरुद्ध मालती की बहन सरोज से विवाह कर लेता है। इन दोनों घटनाओं से खिन्न होकर रायसाहब आध्यात्मिकता की ओर झुकते हैं पर उन्हें शांति नहीं मिलती। दुख और निराशा ने उन्हें भक्ति की ओर उन्मुख कर दिया। **डॉ. रामविलास शर्मा** ने रायसाहब के व्यक्तित्व का विश्लेषण करते हुए लिखा है, **"रायसाहब उन हिंसक पशुओं में से हैं जो गरजने और गुर्राने के बदले मीठी बोली बोलना सीख गए हैं। शिकार तो अपनी जान से हाथ धोता ही है लेकिन मीठी बोली सुनता हुआ।"**

वस्तुतः रायसाहब मानव स्वभाव के पारखी हैं। वह जानते हैं कि काम कैसे बनता है? होरी उनका प्रशंसक है किंतु उसका पुत्र गोबर उनकी असलियत जानकर उनसे घृणा करता है। वह रायसाहब की आलोचना करता हुआ कहता है, **"यह सब धूर्तता है, निरी मोटमर्दी। जिसे दुख होता है, दर्जनों मोटरें नहीं रखता, महलों में नहीं रहता, हलवा-पूड़ी नहीं खाता और न नाच-रंग में लिप्त रहता है। मजे से राज के सुख भोग रहे हैं, उस पर दुखी हैं।"**

होरी रायसाहब को धर्मात्मा और भक्त बताता है क्योंकि वह चार-चार घंटे पूजा करते हैं किंतु गोबर कहता है, **"यह पाप का धन पचे कैसे, इसलिए दान-धर्म करना पड़ता है। एक दिन खेत में ऊख गोड़ना पड़े तो सारी भक्ति भूल जायें।"**

रायसाहब के एक अन्य आलोचक मिस्टर मेहता हैं, जो जानते हैं कि रायसाहब के सिद्धांत एवं व्यवहार में भारी अंतर है। वस्तुतः रायसाहब उस सामंती व्यवस्था के प्रतिनिधि हैं जो पतनशील हो चुकी थी और इसीलिए अब मीठी छुरी से वार करना सीख रही थी। राष्ट्रवाद की रामनामी चादर ओढ़कर वह लूट-खसोट को अपना अधिकार समझे हुए थे।

नोट्स रायसाहब जमींदार वर्ग का प्रतिनिधित्व करने वाले एक प्रभावशाली पात्र हैं। वह प्रेमचंद के अमर पात्रों में से एक हैं तथा उन्हें पूरी तरह खल-पात्र नहीं कहा जा सकता। प्रेमचंद यह निरूपित करना चाहते थे कि उनकी प्रवृत्तियाँ एवं कमियाँ उनकी परिस्थितियों से उत्पन्न हैं। अपनी करनी के लिए वह स्वयं उतने उत्तरदायी नहीं जितनी कि परिस्थितियाँ उसके लिए जिम्मेदार हैं।

3.3.4 गोबर का चरित्र-चित्रण

होरी का पुत्र नई पीढ़ी का ऐसा किसान है जिसमें प्रगतिशील चेतना है। उसके विचार अपने पिता के विचारों से मेल नहीं खाते। उसे यह अच्छा नहीं लगता कि होरी रायसाहब की खुशामद करने बार-बार उनके पास क्यों जाता है। वह अपने पिता होरी से इस विषय में अपना विरोध व्यक्त करता हुआ कहता है, **"यह तुम रोज-रोज मालिकों की खुशामद करने क्यों जाते हो? बाकी न चुके तो प्यादा आकर गालियाँ सुनाता है, बेगार देनी ही पड़ती है। नज़र नज़राना सब तो हमसे भराया जाता है फिर किसी की क्यों सलामी करो?"**

नोट

गोबर यह जानता है कि जमींदार उसके शोषक हैं किंतु होरी अपने जमींदार रायसाहब को औरों की तुलना में अच्छा समझता है। होरी जहाँ उन्हें धर्मात्मा एवं पुण्यात्मा मानता है क्योंकि वह चार-चार घंटों तक पूजा करते हैं, वहीं गोबर इसे धूर्तता मानता है।

गोबर होरी की भांति सीधा-सादा और दब्बू नहीं है अपितु अपने भीतर विद्रोह एवं असंतोष की आग लिए हुए गोबर जमींदारों एवं महाजनों जैसी जोंकों को मिटाने की बात सोचता है। खेती से भी उसका वैसा मोह नहीं जैसा होरी का है। वह परिश्रमी है तथा पैसा कमाने के लिए गाँव को छोड़कर शहर आ जाता है।

गोबर को जमींदारों का सुख भोगना अच्छा नहीं लगता। वह होरी की तरह यह मानने को तैयार नहीं कि यह पुण्यों का फल भोग रहे हैं। वह जानता है कि गरीबों का खून चूसकर ही ये लोग मजे से सुख भोग रहे हैं। वह कहता है, **"हम लोग दाने-दाने को मोहताज हैं, देह पर साबुत कपड़े नहीं हैं, चोटी का पसीना एड़ी तक आता है, तब भी गुजर नहीं होता। उन्हें क्या? मजे से गद्दी-पसंद लगाए बैठे हैं, सैकड़ों नौकर-चाकर हैं, हजारों आदमियों पर हुकूमत है।"**

होरी उसे समझाता है कि छोटे-बड़े भगवान के घर से बनकर आते हैं तथा संपत्ति बड़ी तपस्या से मिलती है। उन्होंने पूर्वजन्म में अच्छे कर्म किए होंगे तभी इस जन्म में आनंद भोग रहे हैं, किंतु गोबर इसे स्वीकार नहीं करता। वह कहता है, **"यह सब मन को समझाने की बातें हैं। भगवान सबको बराबर बनाते हैं, यहाँ जिसके हाथ में लाठी है, वह गरीबों को कुचलकर बड़ा आदमी बन जाता है।"**

गोबर को होरी का धर्मात्मापन भी अच्छा नहीं लगता, होरी जब भोला को मुफ्त में भूसा देने की बात करता है, तो गोबर इसे पसंद नहीं करता किंतु पिता का विरोध नहीं करता।

गोबर में युवकोचित रसिकता विद्यमान थी। झुनिया ने इसे अच्छी तरह परख लिया और उसे अच्छी तरह अपने प्रेम जाल में उलझा लिया। जब झुनिया गर्भवती हो गई और उसे लेकर जब वह अपने घर पर लाया तो स्वयं माता-पिता का सामना करने का साहस नहीं जुटा सका। चोरी से बाहर खड़ा होकर धनिया-झुनिया का वार्तालाप सुनता रहा। जब उसे विश्वास हो गया कि उसकी माँ ने झुनिया को घर में आश्रय दे दिया तब रुपया कमाने के उद्देश्य से वह बिना किसी को बताए शहर चला गया। यद्यपि इसमें उसकी कायरता की गंध आती है तथापि यह अपने माता-पिता के कष्टों को दूर करने का प्रयास अधिक है। वह परिश्रमशील, कर्तव्यनिष्ठ युवक है किंतु गाँव वाले जब उसके परिवार का शोषण करते हैं तो उसमें वह प्रतिशोध भाव जाग्रत नहीं होता जो प्रेमचंद ने प्रेमाश्रम के बलराज में जाग्रत होता दिखाया है। इस संबंध में डॉ. रामविलास शर्मा ने अपने विचार व्यक्त करते हुए लिखा है, **"होरी के लड़के गोबर में प्रेमाश्रम के बलराज की सी दृढ़ता न हो तब भी वह नए जमाने की रोशनी देख चुका है। चाहे गाँव में खेती करे, चाहे शहर में मज़दूरी, वह दूसरों का अन्याय बर्दाश्त करने के लिए तैयार नहीं है।"** नगर में रहने से उसकी राजनीतिक चेतना भी जाग्रत हुई है। उसने **"राजनीतिक जलसों के पीछे खड़े होकर भाषण सुने हैं और अंग-अंग में बिंधा है। उसने सुना है और समझा है कि अपना भाग्य खुद बनाना होगा, अपनी बुद्धि और साहस से इन आफतों पर विजय पाना होगा।"**

नोट्स शहर जाकर गोबर में अनेक प्रकार के दोष उत्पन्न हो गये परन्तु झुनिया की सेवा से विवश होकर उसे स्वयं को बदलना पड़ा।

धनिया से लड़कर गोबर झुनिया को लेकर शहर चला जाता है, जहाँ शहर के संपर्क से उत्पन्न दोष उसमें आ जाते हैं। वह ताड़ी पीकर घर आने लगा और झुनिया को पीटने लगा। यही नहीं गर्भवती झुनिया की वह देखभाल भी नहीं करता। गोबर के चरित्र में प्रेमचंद ने यहाँ यथार्थवादी रुझान का परिचय दिया है। हड़ताल में लाठी खाने से चोटिल गोबर की सेवा जिस तत्परता से झुनिया ने की उसका बहुत प्रभाव गोबर पर पड़ा। **बाबू गुलाबराय** के अनुसार, "मुंशी

नोट

जी का मनुष्यत्व पर घोर विश्वास है। नीच से नीच मनुष्य में वह मानवता की झलक पा जाते हैं। उनके पात्र गिरते हैं सुधरते जाते हैं। गोबर काफी गिर गया था पर झुनिया की सेवा का उस पर काफी प्रभाव पड़ा।"

गोबर यह भली-भांति जानता है कि जमींदार, साहूकार एवं उनके गुर्गे किसानों का शोषण करते हैं किंतु वह नहीं जानता कि इस अन्याय का प्रतिकार कैसे करना चाहिए। रात-दिन खेती में मेहनत करने पर भी परिवार का पेट नहीं भरता अत: खेती से उसका मोह भंग हो जाता है और वह मज़दूरी करने तथा धन अर्जित करने हेतु गाँव से नगर में पलायन कर आता है। वह जानता है कि होरी के रूढ़िवादी संस्कारों को तोड़ सकने की शक्ति उसमें नहीं है। गोबर धनी बनने का आकांक्षी है क्योंकि वह देखता है कि समाज में धनी व्यक्ति ही प्रतिष्ठा पा रहे हैं। शहर में आकर वह खोंमचा लगाता है और जो पैसे बचते हैं उन्हें वह अपने गाँव के साहूकारों की भांति सूद पर उठा देता है। सूदखोरों की भांति वह भी शहर में आकर स्वार्थी बन जाता है। उसके इस रूप को देखकर वास्तव में दुख होता है कि जो गोबर सूदखोरी, धूर्तता एवं अत्याचार का विरोध करता था वह स्वयं आज इन दुर्गुणों से युक्त हो गया है।

गोबर एक निर्भीक चरित्र वाला युवक है। होरी को सताने के लिए जब कारकुन नोखेराम उससे दोबारा लगान वसूल करने की बात करते हैं तब वह उनसे भिड़ जाता है और कहता है कि वह गाँव वालों से गवाही दिलाकर यह साबित कर देगा कि नोखेराम बिना रसीद दिए लगान वसूलते हैं। साथ ही वह धमकी भी देता है कि नोखेराम की इस कारगुजारी की शिकायत रायसाहब से कर देगा। नोखेराम यह सुनकर सहम जाते हैं और होरी से दोबारा लगान नहीं मांगते।

संक्षेप में गोबर नई पीढ़ी का प्रतिनिधित्व करने वाला ऐसा युवक है जो अन्याय एवं अत्याचार का प्रतिरोध करने को तत्पर रहता है।

टास्क गोदान के सभी पात्रों के चरित्र पर विचार करके अपने मत प्रकट कीजिए।

3.3.5 धनिया का चरित्र

धनिया गोदान उपन्यास की नायिका कही जा सकती है क्योंकि वह कथा के केंद्र में सदैव रही है तथा उपन्यास में प्रथम पृष्ठ से लेकर अंतिम पृष्ठ तक उपस्थित है। धनिया इस उपन्यास के नायक होरी की पत्नी है और कृषक स्त्री के रूप में वह उस संपूर्ण वेदना को भोगती-झेलती है, जो अभिशप्त समाज में शोषण के कारण किसान और उसके परिवार को अनिवार्यत: सहनी पड़ती है। धनिया का चरित्र भारतीय ग्रामीण नारी का प्रतिनिधित्व करता है। जीवन भर निर्धनता की चक्की में पिसने वाली धनिया की संघर्ष क्षमता निश्चय ही अद्वितीय है। शोषण के अबाध चक्र में पिसता हुआ होरी धनिया के बिना अधूरा ही है। धनिया के बाह्य व्यक्तित्व में इस्पात जैसी कठोरता है किंतु उसका अंतर्मन करुणा, ममत्व से भरा हुआ है। होरी और धनिया का जीवन प्रेमचंद ने आपस में ऐसा एकाकार कर दिया है कि हम उसे एक-दूसरे से अलग करके नहीं देख सकते। "विपन्नता के इस अथाह सागर में सुहाग ही वह तृण था जिसे पकड़े हुए वह सागर को पार कर रही थी।" वह स्नेहमयी, कर्तव्यपरायण पत्नी होने के साथ-साथ ममतामयी माता भी है। वस्तुत: उपन्यासकार ने होरी के चरित्र को पूर्णता देने के लिए ही धनिया को निर्मित किया है।

जीवन संघर्ष को निरंतर झेलने वाली धनिया छत्तीस वर्ष की अवस्था में ही कैसी हो गई इसका चित्रण करते हुए प्रेमचंद लिखते हैं, **"सारे बाल पक गए थे, चेहरे पर झुर्रियाँ पड़ गई थीं। सारी देह ढल गई थी। सुंदर गेहुँआ रंग साँवला हो गया और आँखों से कम सूझने लगा।"** दुख और विपदा में सदैव पति का साथ देने वाली धनिया को होरी के सीधेपन पर क्रोध आता है। किंतु जब धनिया होरी से लड़ती है तो रणचंडी बनकर जो वाग्प्रहार करती है उससे होरी भी परास्त हो जाता है, **"तू हट जा गोबर, देखूँ तो क्या करता है मेरा? दरोगा जी बैठे हैं। इसकी**

नोट

हिम्मत देखूँ। घर में तलाशी होने से इसकी इज्जत जाती है, अपनी मेहरिया को सारे गाँव के सामने लतियाने से इसकी इज्जत नहीं जाती। यही तो वीरों का धर्म है। बड़ा वीर है तो किसी मर्द से लड़, जिसकी बांह पकड़कर लाया, उसे मारकर बहादुर न कहलायेगा। तू समझता होगा मैं इसे रोटी कपड़ा देता हूँ। आज से अपना घर संभाल। देख तो इसी गाँव में तेरी छाती पर मूँग दलकर रहती हूँ कि नहीं और उससे अच्छा खाऊँ पहनूँगी।"

होरी को इस स्थिति में धनिया से परास्त होना पड़ता है। वह जानता है कि स्त्री के सामने पुरुष कितना निर्बल है। होरी तो अपने भाइयों के आरोप चुपचाप सहन कर लेता है, पर धनिया मुँहतोड़ जवाब देती है। गाँव भर में वह अपने लड़ाकू स्वभाव के लिए प्रसिद्ध है, इसीलिए लोग उससे कतराते हैं। होरी की गाय को देखने सारा गाँव आया लेकिन उसके अपने भाई न आए। इस पर धनिया साफ कहती है, **"मैंने तुमसे सौ बार, हजार बार कह दिया, मेरे मुँह पर भाइयों का बखान न किया करो। उनका नाम सुनकर मेरी देह में आग लग जाती है।....सारा गाँव देखने आया, उन्हीं के पाँव में मेंहदी लगी हुई थी, मगर आयें कैसे? जलन हो रही होगी कि इसके घर में गाय आ गई। छाती फटी जाती होगी।"**

धनिया ऊपर से भले ही कठोर हो पर हृदय से कोमल है। झुनिया और सिलिया को वही अपने घर में आश्रय देती है। यह जानते हुए भी कि झुनिया को घर में रखने से बिरादरी उसे समाज से बहिष्कृत कर देगी और उसके परिवार का हुक्का पानी बन्द हो जाएगा, वह अपने कर्तव्य से पीछे नहीं हटती। जब इस अपराध के कारण गाँव के पंच उस पर दंड लगा देते हैं तो वह उत्तेजित होकर कहती है, **"पंचो गरीब को सताकर सुख न पाओगे, इतना समझ लेना। हम तो मिट जाएँगे, कौन जाने इस गाँव में रहें या न रहें, लेकिन मेरा सराप तुमको भी जरूर लगेगा। मुझसे इतना कड़ा जरीबाना इसलिए लिया जा रहा है कि मैंने अपनी बहू को क्यों अपने घर में रखा? क्यों उसे घर से निकालकर सड़क की भिखारिन नहीं बना दिया?"**

झुनिया जब गर्भवती हो जाने पर उसके घर आश्रय पाने के लिए आई तब धनिया होरी को इस बात के लिए मनाती है कि वह झुनिया को अपने घर में जगह दे। होरी के यह कहने पर कि वह तो झुनिया का झोंटा पकड़कर घर से बाहर निकाल देगा, धनिया कहती है, **"देखो तुम्हें मेरी सौंह, उस पर हाथ न उठाना। वह तो आप ही रो रही है। भाग की खोटी न होती तो यह दिन ही क्यों आता?"** प्रेमचंद ने धनिया के चरित्र को यहाँ जो गरिमा प्रदान की है वह अपूर्व है। झुनिया को पहले उसने गालियाँ सुनाई थीं किंतु अब जब झुनिया उसके आश्वासन भरे शब्दों को सुनकर पैरों से लिपट गई तो **"वही साध्वी जिसने होरी के सिवा किसी पुरुष को आँख भरकर देखा भी न था, इस पापिष्ठा को गले लगाए उसके आँसू पोंछ रही थी और उसके त्रस्त हृदय को अपने कोमल शब्दों से शांत कर रही थी जैसे कोई चिड़िया अपने बच्चे को परों में छिपाए बैठी हो।"**

जब दातादीन धनिया से कहते हैं कि तुम्हें इस दुष्ट झुनिया को अपने घर में नहीं रखना चाहिए तब वह तमककर कहती है, **"हमको कुल परतिष्ठा इतनी प्यारी नहीं है महाराज कि उसके पीछे एक जीव की हत्या कर डालते। ब्याहता न सही, पर उसकी बांह तो पकड़ी है मेरे बेटे ने। किस मुँह से निकाल देती?**

झुनिया तो फिर भी उसके बेटे की बहू थी, सिलिया से तो उसका कोई नाता न था किंतु धनिया का मातृत्व उस निराश्रित को भी शरण देता है। सिलिया को उसके अपने माँ-बाप ने ठुकरा दिया और दातादीन ने अपने घर में न घुसने दिया तो धनिया ही करुणार्द्र होकर सिलिया से कहती है, **"जगह की कौन कमी है बेटी! तू चल मेरे घर रह।"** होरी के यह कहने पर कि इससे दातादीन बिगड़ेंगे वह कहती है, **"बिगड़ेंगे तो एक रोटी बेसी खा लेंगे और क्या करेंगे। कोई उनकी दबैल हूँ।"**

धनिया साहसी नारी है। होरी जहाँ पुलिस से डरता है, वहीं धनिया रिश्वती दरोगा को फटकार लगा देती है, **"देख लिया तुम्हारा न्याय और तुम्हारी अक्ल की दौड़। गरीबों का गला काटना दूसरी बात है, दूध का दूध और पानी का पानी करना दूसरी।"** यही नहीं इसी अवसर पर वह सारे गाँव के सामने गाँव के साहूकारों को फटकारती हुई कहती है, **"ये हमारे गाँव के मुखिया हैं, गरीबों का खून चूसने वाले। सूद, ब्याज ड्योढ़ी-सवाई,**

नोट

नज़र-नज़राना, घूस-घास, जैसे भी हो गरीबों को लूटो। उस पर सुराज चाहिए। जेल जाने से सुराज न मिलेगा, सुराज मिलेगा न्याय से।"

जब होरी का खेत भी हाथ से चला गया तो वह धनिया के साथ दातादीन के यहाँ काम करने लगा। एक दिन दातादीन धनिया को डांटते हुए कहते हैं, **"अगर यही हाल है तो भीख भी मांगोगी।"** तो धनिया तमककर उन्हें करारा जवाब देती है, **"भीख माँगो तुम, जो भिखमंगों की जात हो। हम तो मजूर ठहरे। जहाँ काम करेंगे, चार पैसे पाएँगे।"** विषय परिस्थितियों में ऐसा उत्तर धनिया जैसी तेजस्विनी नारी ही दे सकती थी।

धनिया में सभी मानवीय गुण हैं। वह परिश्रमी, कर्तव्यपरायण, सत्यवादिनी, पतिपरायण, मातृत्व भाव से युक्त, तेजस्विनी एवं साहसी नारी है। झूठ और दंभ से उसे घृणा है। अभी निर्भीकता एवं स्पष्टवादिता के कारण भले ही लड़ाकू कही जाए पर उसके साहस की प्रशंसा सभी पात्र करते हैं। उसके पति होरी ने उसे सारे गाँव के सामने पीटकर बेइज्जत किया था। धनिया उससे रूठी हुई थी किंतु जब होरी बीमार पड़ा तो उसने मान-अपमान को भूलकर पति की प्राणपण से सेवा की। वह सोचती है, **"पति जब मर रहा है तो उससे कैसा बैर? ऐसी दशा में तो बैरियों से भी बैर नहीं रहता, वह तो अपना पति है। लाख बुरा हो, पर उसी के साथ जीवन के पच्चीस साल काटे हैं। सुख लिया है तो उसी के साथ, दुख भोगा है तो उसी के साथ। अब तो चाहे अच्छा हो या बुरा अपना है।"**

भले ही धनिया अपने देवरों को फूटी आँख नहीं देख सकती किंतु हीरा के भाग जाने पर जब पुनिया विपत्ति में होती है तो धनिया उससे मनमुटाव नहीं रखती। होरी जब पुनिया तथा उसकी खेती की देखभाल करता है तो उसे बुरा नहीं लगता। वह सबके दुख में साथ देती है।

> *नोट्स* निश्चय ही धनिया प्रेमचंद की जीवंत पात्र है। वह ग्रामीण समाज की उन तमाम स्त्रियों का प्रतिनिधित्व करती है जो जीवनभर परिश्रम करती हैं, संघर्ष झेलती हैं, पर जीवन से हार नहीं मानतीं। उसके चरित्र में कोमलता और पुरुषता का अद्‌भुत संगम है। दैन्य उसकी नियति है और विवशता उसकी जिंदगी है। जब तक भारतीय संस्कृति ग्राम प्रधान रहेगी तब तक हम धनिया जैसे चरित्रों को अपने आस-पास देख सकेंगे।

होरी ने धनिया के चरित्र को इन शब्दों में स्पष्ट कर दिया है, **"सेवा और त्याग की देवी, जबान की तेज पर मोम जैसा हृदय, पैसे-पैसे के पीछे प्राण देने वाली, पर मर्यादा रक्षा के लिए अपना सर्वस्व होम कर देने को तैयार।"**

प्रेमचंद ने धनिया के चरित्र को अपनी पूरी कुशलता से गढ़ा है। हर स्त्री आत्मप्रशंसा की भूखी होती है। होरी इस तथ्य से अवगत है। वह कहता है कि "भोला मुझसे जब मिलता है तेरा बखान करता है—ऐसी लक्ष्मी है, ऐसी सलीकेदार है।" धनिया इसे सुनकर स्निग्ध हो उठती है और भोला को होरी जितना भूसा देना चाहता है, उससे अधिक दिलवा देती है। **डॉ. रामविलास शर्मा** ने भी धनिया को प्रेमचंद की अद्‌भुत सृष्टि मानते हुए कहा है, **"वह अन्याय के विरुद्ध पाठक और लेखक की भावनाओं को व्यक्त करने का एक माध्यम है। ऊपर से कठोर है, हृदय बहुत ही कोमल है। प्रेमचंद के नारी पात्रों में वह अन्यतम है।"**

3.3.6 मालती का चरित्र

मालती गोदान का एक गतिशील नारी चरित्र है। प्रारंभ में वह चंचल तितली की भांति दिखाई देती है किंतु बाद में प्रो. मेहता के संपर्क में आकर सेवा और त्याग को अपने जीवन का आदर्श बना लेती है। मालती शिक्षित नारी वर्ग का प्रतिनिधित्व करने वाली आधुनिक नारी का प्रतीक है। वह इंग्लैण्ड से डॉक्टरी पढ़कर आयी है और नवयुग की साक्षात् प्रतिमा है। ताल्लुकेदारों के महलों में उसका प्रवेश अधिक है, गरीबों में कम। प्रेमचंद ने मालती का परिचय इन शब्दों में दिया है, **"आप नवयुग की साक्षात् प्रतिमा हैं। गात कोमल, पर चपलता कूट-कूटकर भरी हुई।**

नोट

झिझक या संकोच का कहीं नाम नहीं, मेकअप में प्रवीण, बला की हाजिरजवाब, पुरुष मनोविज्ञान की अच्छी जानकार, आमोद-प्रमोद को जीवन का तत्व समझने वाली, लुभाने और रिझाने की कला में निपुण। जहाँ आत्मा का स्थान है वहाँ प्रदर्शन, जहाँ हृदय का स्थान है वहाँ हाव-भाव, मनोद्गारों पर कठोर निग्रह जिसमें इच्छा या अभिलाषा का लोप सा हो गया।"

मालती केवल सुंदर ही नहीं है, बुद्धिमती भी है। उसके तर्क अकाट्य होते हैं। रायसाहब के आयोजन में जब बिजली पत्र के संपादक पण्डित **ओंकारनाथ** सिद्धांतों की दुहाई देते हैं, तब वह उन्हें यह कहकर निरुत्तर कर देती है, **"तो आपके पत्र में विदेशी वस्तुओं के विज्ञापन क्यों होते हैं? मैंने किसी भी पत्र में इतने विदेशी विज्ञापन नहीं देखे।"**

उद्योगपति खन्ना साहब मालती के प्रति आकर्षित हैं। वह उसके रूप की दीपशिखा पर पतंगे की भाँति जलने को आतुर हैं किंतु वह चरित्रहीन नहीं है और उन्हें साफ-साफ बता देती है कि धन ने आज तक किसी नारी के हृदय पर विजय नहीं पायी और न कभी पायेगा। वह प्रोफेसर मेहता के प्रति आकृष्ट है। मेहता के संपर्क में आने के बाद उसका चरित्र दूसरी दिशा की ओर मुड़ता है। और वह अपने चरित्र में आमूल-चूल परिवर्तन कर सेवा एवं त्याग की ऐसी देवी बन जाती है कि अब मेहता उसके प्रति आकृष्ट हैं किंतु वह उनके विवाह प्रस्ताव को स्वीकार नहीं करती।

मालती के पिता अपाहिज हैं। उसकी दो छोटी बहनें हैं। परिवार के भरण-पोषण का उत्तरदायित्व मालती पर है। पिता की आदतें बिगड़े रईसों जैसी हैं, वह शराब-कबाब के शौकीन हैं। मालती पिता के अपव्यय पर झुंझलाती है पर परिवार में रहकर सब सहन करती है। छोटी बहनों–'सरोज' एवं 'वरदा' की शिक्षा-दीक्षा का भार भी उसी के कंधों पर है। पारिवारिक दायित्वों का पालन वह बड़ी कुशलता से करती है।

प्रेमचंद ने स्वयं मालती के चरित्र का विश्लेषण करते हुए लिखा है, **"मालती बाहर से तितली है, भीतर से मधुमक्खी। उसके जीवन में हँसी ही हँसी नहीं है, केवल गुड़ खाकर कौन जी सकता है।.... उसका चहकना और चमकना इसलिए नहीं है कि वह चहकने को ही जीवन समझती है....नहीं, वह इसलिए चहकती है और विनोद करती है कि इससे उसके कर्तव्य का भार कुछ हल्का हो जाता है।"**

मालती के चरित्र के तीन रूप 'गोदान' में हैं–तितली रूप, मानवीय रूप एवं देवी रूप। एक तितली के रूप में वह पाश्चात्य रंग में रँगी हुई दिखाई देती है। पुरुषों की मण्डली में चहकती है, मनोरंजन एवं विलास को जीवन समझती है, अपने चारों ओर रसिक पुरुषों का जमघट लगाए रहती है। वह शराब भी पीती है तथा दूसरों को शराब पिलाने के लिए अपने रूप का जादू भी प्रयोग में लाती है।

प्रोफेसर मेहता के संपर्क में आकर उसका तितलीपन दूर हो रहा है अब वह मधु संचित करने वाली मधुमक्खी बनती जा रही है। मेहता के प्रति वह इतनी आकृष्ट है कि अपने और मेहता के बीच किसी तीसरे की उपस्थिति को सहन नहीं कर पाती। जब शिकार पार्टी में वह मेहता के साथ जाती है तब जंगली युवती की मेहता द्वारा प्रशंसा करने पर वह जल-भुन जाती है और उस युवती को कलूटी, असभ्य कहकर अपनी ईर्ष्या व्यक्त करती है। मेहता को वह 'छिछोरा' तक कह देती है। वस्तुत: वह मेहता से प्रेम करती है, इसलिए उस जंगली युवती को सहन नहीं कर पाती।

मालती में 'आत्मालोचन' का गुण भी विद्यमान है। रायसाहब के यहाँ जब धूर्त खन्ना और आडम्बर प्रिय रायसाहब उसे चुनाव में खड़ा होने के लिए कहते हैं तो वह साफ कहती है कि एक बार जेल जाने के सिवा मैंने और क्या जन सेवा की है। इसी प्रकार मेहता जब उसे त्याग की देवी कहते हैं तो वह कहती है, "मैं और त्याग! मैं तुमसे सच कहती हूँ, सेवा या त्याग का भाव कभी मेरे मन में नहीं आया।"

मेहता के संपर्क में आने के बाद मालती के चरित्र में बदलाव दिखाई देता है। वह ग्रामीणों की सेवा में पूरी तरह अपने को डुबा देती है। अब उसे लगता है कि, **"इस त्यागमय जीवन के सामने वह विलासी जीवन कितना तुच्छ, बनावटी था। आज उसके वह रेशमी कपड़े जिन पर ज़री का काम था और सुगन्ध से महकता शरीर और वह पाउडर से अलंकृत मुखमण्डल उसे लज्जित करने लगा।"**

अब मेहता उसकी ओर आकर्षित है और वह उससे विवाह करने के इच्छुक हैं। परंतु वह उनके प्रस्ताव को स्वीकार नहीं करती। अपने इस देवी रूप में मेहता का आदर्श चरित्र भी वह बौना सिद्ध कर देती है। प्रेमचंद ने विलासिनी

नोट

मालती को मानवता के उच्च शिखर पर पहुँचा दिया, जहाँ पहुँचकर वह संसार के अन्याय, आतंक, भय, अंधविश्वास एवं कष्ट के निवारण में अपने को उत्सर्ग कर देती है। मालती का हृदय परिवर्तन एवं चारित्रिक विकास एक दिन में या अनायास नहीं हुआ अपितु उसके चरित्र का यह विकास धीरे-धीरे एवं उत्तरोत्तर हुआ है इसलिए विश्वसनीय लगता है। **डॉ. गोपाल राय** मालती के विषय में अपने विचार व्यक्त करते हुए लिखते हैं, **"प्रेमचंद चाहते थे कि भारत की शिक्षित स्त्रियाँ पारिवारिक बंधन में न पड़कर पुरुषों को देश सेवा के लिए प्रेरणा दें और स्वयं भी मैदान में आकर समाज की सेवा करें। मालती उनकी इस आकांक्षा को रूपायित करती है।"**

मालती प्रेमचंद द्वारा गढ़ा गया एक प्रभावशाली नारी चरित्र है। यह एक गत्यात्मक चरित्र है तथा प्रेमचंद ने उसे यथार्थ से आदर्श की ओर उन्मुख किया है।

3.4 सारांश (Summary)

- होरी निहायत ईमानदार, परोपकारी एवं सीधा-सादा कृषक है किंतु उसमें भी वे दुर्गुण हैं जो एक सामान्य कृषक में होते हैं। वह पक्का स्वार्थी भी है, बांस बेचते समय कुछ ही पैसों के लिए अपने भाई का हिस्सा मारने हेतु बंसोर से सौदा करता है।
- होरी की एकमात्र अभिलाषा थी कि उसके पास एक गाय हो। गाय उसके लिए प्रतिष्ठा की वस्तु है। ईर्ष्यावश हीरा ने गाय को विष खिला दिया और गाय का 'गोरस' पाने की होरी की लालसा धरी की धरी रह गयी। यह गाय उसके लिए विपत्ति लेकर आयी।
- पुलिस जब हीरा के घर की तलाशी लेना चाहती है तो वह परिवार की मर्यादा को बचाने के लिए कर्ज लेकर थानेदार को रिश्वत देना चाहता है।
- मेहता बुद्धिजीवी वर्ग के ऐसे चरित्र हैं जो शोषण का विरोध करते हैं किंतु साम्यवाद के समर्थक नहीं हैं। उनकी मान्यता है कि "संसार में छोटे-बड़े हमेशा रहेंगे और उन्हें हमेशा रहना चाहिए। इसे मिटाने की चेष्टा करना मानव जाति का सर्वनाश करना होगा।"
- कथनी और करनी में एकरूपता के समर्थक मेहता चाहते हैं कि व्यक्ति को कायर एवं धूर्त नहीं होना चाहिए। वह यह मानते हैं कि बुद्धि हमेशा से राज करती आई है और करेगी। छोटे बड़े का भेद ही हमेशा से है और रहेगा क्योंकि यह भेद केवल धन के कारण नहीं होता अपितु बुद्धि, रूप, चरित्र, शक्ति प्रतिभा आदि के कारण भी होता है।
- नारी केवल माता है और इसके उपरान्त वह जो कुछ है, वह सब मातृत्व का उपक्रम मात्र मातृत्व संसार की सबसे बड़ी साधना, सबसे बड़ी तपस्या, सबसे बड़ा त्याग और सबसे महान विजय है।
- मेहता की दृष्टि में विवाह एक समझौता है जिसे करने के बाद उसे तोड़ने का अधिकार न स्त्री को है, न पुरुष को।
- उनमें वे सभी विशेषताएँ तथा गुण-अवगुण विद्यमान हैं जो तत्कालीन जमींदारों में कमोवेश दिखाई पड़ते थे। रायसाहब सेमारी ग्राम में रहते हैं, कौंसिल के मेम्बर हैं, सभाचतुर व्यक्ति हैं, अच्छे वक्ता हैं।
- रायसाहब कृषकों के शुभेच्छु हैं किंतु परिस्थितियों से विवश होकर अपने अनाप-शनाप खर्चों को पूरा करने के लिए उन्हें किसानों का शोषण करना पड़ता है। प्रेमचंद जी ने रायसाहब को 'रंगा सियार' कहा है अर्थात् वह देखने में तो अन्य जमींदारों से अलग लगते हैं किंतु वास्तव में वह उतने ही क्रूर, निर्दयी, स्वार्थी जमींदार हैं जितने अन्य जमींदार होते हैं।
- होरी का पुत्र नई पीढ़ी का ऐसा किसान है जिसमें प्रगतिशील चेतना है। उसके विचार अपने पिता के विचारों से मेल नहीं खाते। गोबर यह जानता है कि जमींदार उसके शोषक हैं किंतु होरी अपने जमींदार रायसाहब को औरों की तुलना में अच्छा समझता है।
- सूदखोरों की भांति वह भी शहर में आकर स्वार्थी बन जाता है। उसके इस रूप को देखकर वास्तव में दुख

नोट

होता है कि जो गोबर सूदखोरी, धूर्तता एवं अत्याचार का विरोध करता था वह स्वयं आज इन दुर्गुणों से युक्त हो गया है।

- धनिया गोदान उपन्यास की नायिका कही जा सकती है क्योंकि वह कथा के केंद्र में सदैव रही है। धनिया इस उपन्यास के नायक होरी की पत्नी है और कृषक स्त्री के रूप में वह उस संपूर्ण वेदना को भोगती-झेलती है। वह स्नेहमयी, कर्तव्यपरायण पत्नी होने के साथ-साथ ममतामयी माता भी है।
- होरी ने धनिया के चरित्र को इन शब्दों में स्पष्ट कर दिया है, "सेवा और त्याग की देवी, जबान की तेज पर मोम जैसा हृदय, पैसे-पैसे के पीछे प्राण देने वाली, पर मर्यादा रक्षा के लिए अपना सर्वस्व होम कर देने को तैयार।"
- मालती गोदान का एक गतिशील नारी चरित्र है। वह इंग्लैण्ड से डॉक्टरी पढ़कर आयी है और नवयुग की साक्षात् प्रतिमा है। मालती केवल सुंदर ही नहीं है, बुद्धिमती भी है।
- उद्योगपति खन्ना साहब मालती के प्रति आकर्षित हैं। वह उसके रूप की दीपशिखा पर पतंगे की भाँति जलने को आतुर हैं किंतु वह चरित्रहीन नहीं है।
- मालती के पिता अपाहिज हैं। उसकी दो छोटी बहनें हैं। परिवार के भरण-पोषण का उत्तरदायित्व मालती पर है। पिता की आदतें बिगड़े रईसों जैसी हैं, वह शराब-कबाब के शौकीन हैं। मालती पिता के अपव्यय पर झुंझलाती है पर परिवार में रहकर सब सहन करती है।

3.5 शब्दकोश (Keywords)

1. ब्याहता – शादीशुदा
2. बर्दाशत – सहनशक्ति
3. बेफिक्र – निश्चिंत
4. कृषक – किसान
5. सूद – ब्याज
6. निराश्रित – बेघर, बेसहारा।

3.6 अभ्यास प्रश्न (Review Questions)

1. 'गोदान' के गौण पात्रों का संक्षिप्त विवरण दीजिए।
2. 'गोदान' के मुख्य पात्र कौन-कौन से हैं?
3. होरी पेशे और व्यक्ति दोनों दृष्टियों से किसान है। इस पर एक लेख लिखिए।
4. 'रंगा सियार' कहे जाने वाले रायसाहब अमरपाल सिंह का चरित्र-चित्रण कीजिए।
5. रायसाहब के प्रति गोबर के विचारों को स्पष्ट कीजिए।
6. धनिया 'क्रोधमयी' होने के साथ-साथ 'भावनामयी' स्त्री भी है। इस पर अपने विचार व्यक्त कीजिए।

उत्तर : स्व-मूल्यांकन (Answers : Self-Assessment)

1. धनिया	2. दर्शनशास्त्र	3. मातादीन	4. (ग)
5. (ग)	6. (ख)	7. असत्य	8. सत्य
9. असत्य।			

3.7 सन्दर्भ पुस्तकें (Further Readings)

पुस्तकें गोदान–प्रेमचन्द

नोट

इकाई–4: 'गोदान' की संवाद-योजना

अनुक्रमणिका (Contents)

उद्देश्य (Objectives)
प्रस्तावना (Introduction)
4.1 संवादों का उद्देश्य
4.2 संवादों की संक्षिप्तता, सरसता एवं सजीवता
4.3 संवादों द्वारा कथानक में सम्बंध-निर्वाह
4.4 विषय की दृष्टि से किये गये भेद : भावावेश के संवाद
4.5 'गोदान' की आलोचनात्मक समीक्षा
4.6 सारांश (Summary)
4.7 शब्दकोश (Keywords)
4.8 अभ्यास प्रश्न (Review Questions)
4.9 सन्दर्भ पुस्तकें (Further Readings)

उद्देश्य (Objectives)

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् विद्यार्थी योग्य होंगे–

- संवादों के मुख्य उद्देश्य को समझने में;
- संवादों की पात्रानुकूलता की जानकारी प्राप्त करने में;
- संवादों की भाषा का वर्णन करने में;
- 'गोदान' की आलोचनात्मक समीक्षा करने में।

प्रस्तावना (Introduction)

संवादों के गुणों की दृष्टि से उनमें संक्षिप्तता, रोचकता और प्रवाहमयता आदि गुणों का होना आवश्यक होता है। संवादों की भाषा भी कुछ गुणों की अपेक्षा रखती है–स्वाभाविकता, पात्रानुकुलता आदि। 'गोदान' में प्रेमचंद ने संवादों का प्रचुर प्रयोग किया है। संवादों में अपेक्षित गुणों तथा उनके उद्देश्यों की दृष्टि से 'गोदान' में प्रेमचंद की संवाद-योजना कहाँ तक सफल बन पड़ी है, इसका मूल्यांकन यहाँ किया जा रहा है।

4.1 संवादों का उद्देश्य

उपन्यासों में संवादों का उद्देश्य प्राय: पात्रों के चरित्र की उन्हीं के मुख से विवेचना कराना होता है। इसके अतिरिक्त

नोट

कथा-विकास को गति देना और वातावरण की सृष्टि करना भी संवादों का उद्देश्य होता है। इस प्रकार मुख्य रूप से संवादों के तीन उद्देश्य होते हैं–

1. पात्रों के चरित्र-चित्रण में सहायक होना
2. कथा विकास को गति देना
3. वातावरण की सृष्टि करना।

'गोदान' के कथोपकथन अपना विशेष महत्त्व रखते हैं। ये कथा-प्रसार में सहायक होते हैं। उपन्यास के प्रारंभ में ही हम होरी और धनिया को वार्तारत देखते हैं। उनके वार्तालाप से पता चलता है कि होरी बहुत देर के लिए बाहर जा रहा है और उसने सुबह से अब तक जलपान नहीं किया है। उदाहरणार्थ–

होरी ने दोनों बैलों को सानी-पानी देकर अपनी स्त्री धनिया से कहा–"गोबर को ऊख गोड़ने भेज देना। मैं न जाने कब लौटूँ। जरा मेरी लाठी दे दे।"

धनिया के दोनों हाथ गोबर से भरे थे। उपले पाथ कर आई थी। बोली–"अरे, कुछ रस-पान तो कर लो, ऐसी जल्दी क्या है?"

होरी ने अपने झुर्रियों से भरे हुए माथे को सिकोड़ कर कहा–"तुझे रस-पान की पड़ी है, मुझे यह चिंता है कि अबेर हो गई है मालिक से भेंट न होगी। असनान-पूजा करने लगेंगे, तो घंटों बैठे बीत जायेगा।"

"इसी से तो कहती हूँ, कुछ जलपान कर लो और आज न जाओगे, तो कौन हरज होगा, अभी तो परसों गए थे।"

कथा-प्रसार में सहायक–प्रेमचंद जी के छोटे-छोटे वाक्यों में भी कथा-प्रसार के बीज विद्यमान रहते हैं। भोला-होरी का प्रथम संभाषण जिस प्रकार भोला की परदुःखकातरता, कृतज्ञता तथा सरलता का परिचय देता है, उसी प्रकार होरी की उदार-मनोवृत्ति, ईश्वर-विश्वास, धर्म-भावना का द्योतक भी कहा जा सकता है क्योंकि इसमें भोला की इस उक्ति से–"मगर यह गाय तुम्हारी हो गई। जिस दिन इच्छा हो आकर ले जाना"–यह संकेत मिलता है कि भविष्य में भोला के घर से गाय लाई जाएगी। इस प्रकार यह कथोपकथन कथा-प्रसार में सहायक होता है और यही उक्ति पूरे उपन्यास का एक अभिन्न अंग बन जाती है।

4.2 संवादों की संक्षिप्तता, सरसता एवं सजीवता

प्रेमचंद के संवाद 'गोदान' में संक्षिप्ता, सरल एवं सजीवता लिए हुए हैं। झुनिया और गोबर का प्रथम प्रेम-संभाषण संक्षिप्त, सरल और सजीव होते हुए भी इस बात की सूचना दे देता है कि दोनों ओर प्रेम का बीज अंकुरित हो चुका है और आगे चलकर विकसित हो जाएगा। झुनिया और गोबर का पृथक् होते समय का वार्तालाप देखिए–

"रात को मेरे द्वार पर अच्छी संगत होगी। चले आना, मैं अपने पिछवाड़े मिलूँगी।"

"और जो न मिली?"

"तो लौट जाना।"

"तो फिर मैं न आऊँगा।"

"आना पड़ेगा, नहीं तो कहे देती हूँ।"

"तुम भी वचन दो कि मिलोगी।"

"मैं वचन नहीं देती।"

"तो मैं भी नहीं आता।"

नोट

"मेरी बला से।" झुनिया अँगूठा दिखाकर चल दी।

इस प्रकार इस छोटे से वार्तालाप द्वारा ही प्रेमचंद ने इसका परिणाम भी बता दिया कि प्रथम मिलन में ही दोनों एक-दूसरे पर अपना अधिकार जमा चुके थे।

4.3 संवादों द्वारा कथानक में संबंध-निर्वाह

प्रेमचंद ने बड़ी कुशलता से संवादों द्वारा कथानक में संबंध बनाए रखा है। 'गोदान' में घटनाएँ प्राय: व्यवधान के साथ होती हैं। वह व्यवधान देशकाल का होता है। एक घटना यदि एक स्थान पर होती है, तो दूसरी घटना किसी दूसरे स्थान पर घटित होती है। देश संबंधी अंतर को सुरक्षित रखना और साथ ही कथा-प्रवाह के व्यवधान को दूर करना लेखक के लिए आवश्यक है। इसके बिना घटनाएँ पृथक्-पृथक् दिखाई देती हैं। 'गोदान' में प्रेमचंद ने भूसा लेने के लिए भोला के आने से पहले होरी के परिवार में निम्नलिखित कथोपकथन दिखाया है–

होरी ने उसके भोलेपन पर मुग्ध होकर कहा–"नहीं, गाय का गोबर तू पाथना। सोना गाय के पास जाय, तो भगा देना।"

रूपा ने पिता के गले में हाथ डालकर कहा–"दूध भी मैं ही दुहूँगी।"

"हाँ-हाँ, तू न दुहेगी तो और कौन दुहेगा?"

"यह मेरी गाय होगी।"

"हाँ, सोलहों आने तेरी।"

कुछ लम्बे संवादों की योजना–कहीं-कहीं कुछ लम्बे संवादों की योजना भी 'गोदान' में हुई है। मेहता उस युवती का अतिथि सत्कार देखकर मालती से कहते हैं।

मेहता ने इस आक्षेप से चिढ़कर कहा–"इस युवती के प्रति मेरे मन में जो प्रेम और श्रद्धा है, वह ऐसी है कि अगर मैं उसकी ओर वासना से देखूँ तो आँखें फट जाएँ। मैं अपने किसी घनिष्ठ मित्र के लिए भी इस धूप और लू में उस ऊँची पहाड़ी पर न जाता और हम केवल घड़ी भर के मेहमान हैं, यह वह जानती है। वह किसी गरीब औरत के लिए भी इसी तत्परता से दौड़ जाएगी। मैं विश्व-बंधुत्व और विश्व-प्रेम पर केवल लेख लिख सकता हूँ, केवल भाषण दे सकता हूँ। वह उस प्रेम और त्याग का व्यवहार कर सकती है। कहने से करना कहीं कठिन है, उसे तुम भी जानती हो।"

संवादों की पात्रानुकूलता–उपन्यासों में विभिन्न प्रकार के पात्र होते हैं। उनके संस्कार, शिक्षा-दीक्षा, आयु-विचार और दृष्टिकोण तथा सांस्कृतिक स्तर में अंतर होता है जिस प्रकार के संवादों का प्रयोग वकील और प्रोफेसर करें, उसी प्रकार के संवादों का प्रयोग उनके अपढ़ नौकर से कराना उपन्यास में दोष माना जाएगा।

नोट्स पात्रानुकूलता का यही अर्थ है कि संवाद पात्र के वर्ग, सांस्कृतिक शिक्षा-दीक्षा के अनुकूल होने चाहिए।

प्रेमचंद ने 'गोदान' में पात्रानुकूलता का बहुत ध्यान रखा है। जैसी भाषा का प्रयोग मेहता और मालती करते हैं। उससे विपरीत (गाँव की भाषा) भाषा का प्रयोग होरी और धनिया करते हैं। मालती (लेडी डॉक्टर) का एक कथन देखिए–

"मगर मेरी समझ में आपकी यह नीति नहीं आती कि जब आप मामूली शिष्टाचार से अधिकारियों का सहयोग प्राप्त कर सकते हैं, तो क्यों उनसे कन्नी काटते हैं? अगर आप अपनी आलोचनाओं में आग और विष जरा कम कर दें तो मैं वादा करती हूँ कि आपको गवर्नमेंट मदद दिला सकती हूँ।"

× × × ×

होरी ने चिलम के कई कश लगाकर कहा–"मजूरी करना कोई पाप नहीं है। मजूर बन जाए, तो किसान हो जाता है। मजूरी करना भाग्य में न होता तो यह सब विपत क्यों आती? क्यों गाय मरती? क्यों लड़का नालायक निकल आता?"

इस प्रकार प्रेमचंद ने पात्रों के अनुकूल ही संवादों की रचना की है।

स्वाभाविकता का निर्वाह–उपन्यासों में पात्रों के संवाद स्वाभाविक होने चाहिए, तभी प्रभाव की सृष्टि संभव हो सकती है, साथ ही वे संवाद पात्रों के चरित्र-चित्रण तथा कथा के विकास में भी सहायक होते हैं। आजकल मनोवैज्ञानिकता के समावेश को भी स्वाभाविकता की एक शर्त माना जाता है। पात्रों की मनोदशा के अनुकूल जो संवाद हों, वही स्वाभाविक हैं। यहाँ शोभा और पटेश्वरी का एक वार्तालाप दृष्टव्य है–

शोभा बोल पड़ा, "मेरे पास रुपए नहीं हैं; तुम्हें जो कुछ करना हो, कर लो।"

पटेश्वरी ने गर्म होकर कहा–"ऊख बेची है कि नहीं?"

"हाँ, बेची है।"

"तुम्हारा यही वादा तो था कि ऊख बेचकर दूँगा?"

"हाँ, था तो।"

"फिर, क्यों नहीं देते। और सब लोगों को दिए हैं कि नहीं?"

"हाँ, दिए हैं।"

"तो मुझे क्यों नहीं देते?"

"मेरे पास जो कुछ बचा है, वह बाल-बच्चों के लिए है।"

यहाँ शोभा और पटेश्वरी के वार्तालाप में नितान्त स्वाभाविकता है।

प्रसंगानुकूलता की योजना–संवाद प्रसंग विषय के अनुकूल होने चाहिए। 'गोदान' के नायक होरी पर डांड लगा दिया गया है और होरी ने उसे चुका दिया है। इससे होरी के परिवार पर क्या प्रभाव पड़ा, इसका वर्णन जानने के लिए प्रेमचंद ने पुनिया और धनिया के इस कथोपकथन की योजना की है। उदाहरणार्थ–

पुनिया बोली–"महतो को डांड देने की ऐसी जल्दी क्या पड़ी थी?"

धनिया ने कहा–"बिरादरी में सुरखरू कैसे होते?"

"भाभी, बुरा न मानो, तो एक बात कहूँ?"

"कह, बुरा क्यों मानूँगी?"

"न कहूँगी, कहीं तुम बिगड़ने न लगो?"

"कहती हूँ, कुछ न बोलूँगी, कह तो।"

"तुम्हें झुनिया को घर में रखना न चाहिए था।"

"तब क्या करती? वह डूबी मरती तो?"

"मेरे घर में रख देतीं। तब तो कोई कुछ न कहता।"

"यह तो तू आज कहती है। उस दिन भेज देती, तो झाड़ू लेकर दौड़ती।"

"इतने खरच में तो गोबर का ब्याह हो जाता।"

नोट

"होनी को कौन टाल सकता है, पगली!"

मार्मिकता और रोचकता–उपन्यास में कथोपकथन का मार्मिक और रोचक होना उपन्यास के प्रभाव और रोचकता को बढ़ाता है। 'गोदान' का अंतिम प्रसंग बहुत ही मार्मिक और करुणार्द्र बन पड़ा है। होरी मृत्यु-शय्या पर पड़ा है। धनिया के पास केवल बीस आने पैसे हैं। वह उसी से 'गोदान' करा देती है। उदाहरणार्थ–

और कई आवाजें आईं–"गोदान करा दो, अब यही समय है।"

धनिया यन्त्र की भाँति उठी, आज जो सुतली बेची थी, उसके बीस आने पैसे लाई और पति के ठण्डे हाथ में रखकर सामने खड़े दातादीन से बोली–"महाराज, घर में न गाय है, न बछया, न पैसा, यही पैसे हैं, यही इनका गोदान है।" और पछाड़ खाकर गिर पड़ी।

नोट्स धनिया के पछाड़ खाकर गिरने से उसके हृदय की टीस, वेदना और पीड़ा व्यक्त हुई है जिससे एक मार्मिक एवं अश्रुपूर्ण वातावरण की सृष्टि हो जाती है।

संवादों के विविध रूप–संवादों के विविध गुणों की दृष्टि से जहाँ संवादों के विविध रूप हो जाते हैं, वहीं दूसरी ओर विषय की दृष्टि से भी उनमें परिवर्तन स्पष्ट लक्षित होता है। इस दृष्टि से भावावेश के संवाद भावात्मक संवाद या काव्यात्मक संवाद, विचारात्मक संवाद, विचारात्मकता और भावात्मकता का सामंजस्य रखने वाले आदि रूप भी मिलते हैं। रचना-लक्ष्य या संवादों के उद्देश्य की दृष्टि से भी उनके भेद किए जाते हैं, जैसे कथा-विकास को अग्रसर करने वाले संवाद, चरित्र-चित्रण पर प्रकाश डालने वाले संवाद, लेखक के दृष्टिकोण की अभिव्यक्ति करने वाले संवाद और वातावरण की सृष्टि करने वाले संवाद। स्वरूप की दृष्टि से संवादों के तीन और भी भेद हैं–पूर्ण नाटकीय संवाद, संवादों के बीच में पात्रों की मनोदशा का चित्रण और मनोदशा के चित्रण के साथ पात्रों के क्रिया-कलाप का वर्णन। यहाँ इनका सोदाहरण वर्णन किया जाएगा।

स्व-मूल्यांकन (Self-Assessment)

रिक्त स्थानों की पूर्ति करें (Fill in the blanks) :

1. रूपा ने पिता के गले में हाथ डालकर कहा .... मैं ही दुहूंगी।
2. धनिया के पास 'गोदान' के लिए सिर्फ .... थे।
3. गोदान की महत्ता बताना 'गोदान' की .... को सिद्ध करना है।

4.4 विषय की दृष्टि से किए गए भेद : भावावेश के संवाद

भावावेश में व्यक्ति की वाणी में एक विशेष गति और तीव्रता आ जाती है। कभी-कभी यह भावावेश नशे आदि का प्रभाव भी हो सकता है। यहाँ मि. खन्ना का बच्चा बीमार होने पर वह मालती को बुलाने की सलाह देते हैं, उनकी पत्नी गोविन्दी जल-भुन जाती है। यहाँ भावावेश का एक सुंदर उदाहरण प्रस्तुत है–

"मिस मालती को क्यों न बुला लूँ? फीस भी कम और बच्चे का हाल लेडी डॉक्टर जैसा समझेगी, कोई मर्द डॉक्टर नहीं समझ सकता।"

गोविन्दी ने जलकर कहा–"मैं मिस मालती को डॉक्टर नहीं समझती।"

खन्ना ने भी तेज आँखों से देखकर कहा–"तो वह इंग्लैण्ड घास खोदने गई थी और हजारों आदमियों को आज जीवनदान दे रही है, यह सबकुछ नहीं है?"

"होगा, मुझे उन पर भरोसा नहीं है। वह मर्दों के दिल का इलाज कर लें और किसी की दवा उनके पास नहीं है।"

बस ठन गई। खन्ना गरजने लगे, गोविन्दी बरसने लगी। उनके बीच में मालती का नाम आ जाना मानो लड़ाई का अल्टीमेटम था।

यहाँ संवादों की रूप-रचना में भावावेश की अनुकूलता का ध्यान रखा गया है।

भावात्मक संवाद–भावनाओं की अनुभूति की तीव्रता में संवादों का भावात्मक हो जाना स्वाभाविक है। पात्र जब प्रेम, घृणा, क्रोध आदि भावों के वशीभूत होते हैं, उनकी वाणी में भावों की स्पष्ट छाया प्रतिकृति रहती है। वातावरण का साम्य इस प्रकार के संवादों का प्रमुख गुण है। खन्ना और गोविन्दी का एक और वार्तालाप देखिए–

"तुम्हारे ख्याल में मैं बुद्धू और मूर्ख हूँ, तो ये हजारों क्यों मेरे द्वार पर नाक रगड़ते हैं? कौन राजा या ताल्लुकेदार है, जो मुझे दंडवत् नहीं करता। सैकड़ों को उल्लू बनाकर छोड़ दिया।"

"यही तो मालती की विशेषता है कि जो औरों को सीधे उस्तरे से मूँड़ता है, उसे वह उल्टे छूरे से मूँड़ती है।"

"तुम मालती की चाहे जितनी बुराई करो, तुम उसके पाँव की धूल भी नहीं हो।"

"मेरी दृष्टि में वह वेश्याओं से भी गई बीती है क्योंकि परदे की आड़ में शिकार खेलती है।"

इस प्रकार अन्य स्थलों पर भी भावानुरूप संवादों की कमी नहीं है। प्रायः संवादों में भावों को सफलतापूर्वक उतारा गया है।

विचारात्मक संवाद–पात्र कभी-कभी गंभीर मनोदशाओं में भी बात करता है। विवेचना और विचार की दृष्टि से वाणी स्वाभाविक रूप में कुछ गंभीर एवं विचारात्मक होनी ही चाहिए। यहाँ मेहता के भूत, वर्तमान और भविष्य पर गंभीर, परंतु विचारात्मक विचारों की एक छटा देखिए–

"जीवन मेरे लिए आनन्दमय क्रीड़ा है। सरल, स्वच्छन्द, जहाँ कुत्सा, ईर्ष्या और जलन के लिए कोई स्थान नहीं। मैं भूत की चिंता नहीं करता, भविष्य की परवाह नहीं करता, मेरे लिए वर्तमान ही सबकुछ है। भविष्य की चिंता हमें कायर बना देती है। भूत का भार हमारी कमर तोड़ देता है। हममें जीवन की शक्ति इतनी कम है कि भूत और भविष्य में फैला देने से वह और भी क्षीण हो जाती है।"

चरित्र-प्रकाशक-संवाद–संवाद में पात्रों के चरित्र पर प्रकाश पड़ता है। यह चरित्र-चित्रण की कलात्मक प्रणाली है कि पात्र परस्पर एक-दूसरे के चरित्र पर प्रकाश डालें या कोई पात्र स्वयं अपने चरित्र पर प्रकाश डाले। यहाँ होरी, भोला की स्त्री के बारे में, धनिया से बात कर रहा है, जिससे भोला की स्त्री के चरित्र एवं स्वभाव पर प्रकाश पड़ता है। उदाहरणार्थ–

होरी ने स्नेह-भरी मुस्कान के साथ कहा–"मैंने तो कह दिया, भैया, वह नाक पर मक्खी भी नहीं बैठने देती, गालियों से बात करती है, लेकिन वह यह कही जाए कि वह औरत नहीं लक्ष्मी है। बात यह है कि उसकी घरवाली जबान की बड़ी तेज थी। बेचारा उसके डर के मारे भगा-भगा फिरता था।"

नोट्स वातावरण की सृष्टि करने वाले संवादों में प्रेम-प्रसंगों की विशेष रूप से महत्ता है। आपस में हंसी-मजाक के संवाद भी वातावरण को प्रेममय बना देते हैं।

नोट

वातावरण की सृष्टि करने वाले संवाद–पात्रों के संवाद कथा-विकास के उपयुक्त वातावरण की सृष्टि करते हैं। विशेषकर प्रेम-प्रसंगों में संवादों का बड़ा महत्त्व है, क्योंकि पात्रों के वार्तालाप से ही प्रेम के मधुर वातावरण की सृष्टि होती है। साधारण हास-परिहास, परस्पर विनोद और हृदय अन्तस् के माधुर्य प्रेम के वातावरण को साकार रूप देता है। मालती-मेहता का एक हास-परिहासपूर्ण वार्तालाप देखिए जो कि प्रेममय वातावरण की सृष्टि करता है–

पानी कम होने लगा था। मालती ने प्रसन्न होकर कहा–"अब तुम मुझे उतार दो।"

"नहीं-नहीं चुपचाप बैठी रहो। कहीं आगे कोई गड्ढा मिल जाए।"

"तुम समझते होगे, यह कितनी स्वार्थिनी है।"

"मुझे इसकी मजदूरी दे देना।"

"मालती के मन में गुदगुदी हुई, क्या मजदूरी लोगे?"

"यही कि जब तुम्हारे जीवन में ऐसा कोई अवसर आए, तो मुझे बुला लेना।"

पारस्परिक विनोद का यह वार्तालाप उपन्यास में मेहता-मालती की आन्तरिक प्रसन्नता का परिचायक है।

लेखक के दृष्टिकोण की अभिव्यक्ति करने वाले संवाद–उपन्यास में विश्वस्त पात्रों के माध्यम से उपन्यासकार अपने दृष्टिकोण की अभिव्यक्ति भी करता है। विस्तार से लेखक के दृष्टिकोण से संबंधित अनेक उदाहरणों पर न जाकर एक विशेष उदाहरण देना ही उपयुक्त होगा। गोदान की महत्ता बताना-'गोदान' की चरितार्थता को सिद्ध करना ही यहाँ प्रेमचंद का मुख्य लक्ष्य है। होरी जमींदार रायसाहब के यहाँ जा सकता है, वह मन ही मन सोचता है–

"भगवान कहीं से गौ की बरखा कर दें और डाँड़ी भी सुभीते से रहे, तो एक गाय जरूर लेगा। देशी गाएँ तो न दूध दें, न उनके बछड़े ही किसी काम के हों। बहुत हुआ, तो तेली के कोल्हू में चले। नहीं, वह पछाई गाय लेगा। उसकी खूब सेवा करेगा। कुछ नहीं, तो चार-पाँच सेर दूध होगा। गोबर दूध के लिए तरस-तरस कर रह जाता है। इस उमर में न खाया-पिया, तो फिर कब खायेगा? साल-भर भी दूध पी ले तो देखने लायक हो जाए। बछड़े भी अच्छे बैल निकलेंगे। दो सौ से भी कम गौई न होगी। फिर गऊ से ही द्वार की शोभा है। सबेरे-सबेरे गऊ के दर्शन हो जाएँ, तो क्या कहना। न जाने कब यह साध पूरी होगी, कब वह शुभ दिन आएगा?"

इसके पश्चात् ही प्रेमचंद होरी की साध के बारे में अपना दृष्टिकोण भी रख देते हैं–

"हर एक गृहस्थ की भाँति होरी के मन में भी गऊ की लालसा चिरकाल से संचित चली आई थी। यही उसके जीवन का सबसे बड़ा स्वप्न, सबसे बड़ी साध थी। बैंक-सूद से चैन करने या जमीन खरीदने या महल बनवाने की विशाल आकांक्षाएँ उसके नन्हें से हृदय में कैसे समाती।"

टास्क 'गोदान' की संवाद-योजना पर अपने विचार प्रकट करें।

संवादों की भाषा–'गोदान' उपन्यास में संवादों की भाषा पात्रानुकूल, व्यावहारिक, लाक्षणिक और चमत्कारिक, हास्य-विनोद और व्यंग्य आदि गुणों से युक्त है। कहीं-कहीं काव्यात्मकता का समावेश भी पात्र की प्रकृति के अनुकूल किया है। यहाँ होली के अवसर पर नाटक में एक ठाकुर की नकल उतारी गई है, जो दस रुपए का दस्तावेज लिखकर आसामी को केवल पाँच रुपए देता है। आधे रुपए नजराने, तहरीर, दस्तूरी तथा ब्याज में काट लेता है। पाँच रुपए पाकर आसामी कहता है–

"यह तो पाँच ही हैं, मालिक।"

"पाँच नहीं दस हैं। घर जाकर गिनना।"

नोट

"नहीं सरकार, पाँच हैं।"

"एक रुपया नजराने का हुआ कि नहीं?"

"हाँ, सरकार।"

"एक तहरीर का?"

"हाँ, सरकार।"

"एक कागद का?"

"हाँ सरकार।"

"एक दस्तूरी का?"

"हाँ, सरकार!"

"एक सूद का?"

"हाँ सरकार!"

"पाँच नगद, दस हुए कि नहीं?"

"हाँ सरकार! अब यह पाँचों भी मेरी ओर से रख लीजिए।"

"कैसा पागल है?"

"नहीं सरकार, एक रुपया छोटी ठकुराइन का नजराना है, एक बड़ी ठकुराइन का। एक रुपया छोटी ठकुराइन के पान खाने को, एक बड़ी ठकुराइन के पान खाने को। बाकी बचा एक वह आप की क्रिया-करम के लिए।"

इस प्रकार 'गोदान' संवाद-योजना की दृष्टि से अत्यंत सफल उपन्यास बन पड़ा है। इसकी संवाद-योजना विस्तार, भार की उपयुक्ता अर्थात् संक्षिप्तता, पात्रानुकूलता, प्रसंगानुकूलता, स्वाभाविकता, विलक्षणता, हास्य, व्यंग्य आदि सब गुणों का निर्वाह करने में प्रेमचंद के अद्‌भुत कला-कौशल का परिचायक है।

स्व-मूल्यांकन (Self-Assessment)

बहुविकल्पीय प्रश्न (Multiple Choice Questions) :

4. 'गोदान' उपन्यास में पंचायत में डांड किस पर लगाया गया था?
   (क) होरी (ख) पुनिया
   (ग) रायसाहब (घ) इनमें से कोई नहीं।
5. 'गोदान' उपन्यास में होरी किससे गाय खरीद कर लाया था?
   (क) गोबर (ख) मालती
   (ग) भोला (घ) इनमें से कोई नहीं।
6. मि. खन्ना की पत्नी कौन है?
   (क) मालती (ख) झुनिया
   (ग) गोविन्दी (घ) इनमें से कोई नहीं।

4.5 'गोदान' की आलोचनात्मक समीक्षा

गोदान प्रेमचंद का सर्वश्रेष्ठ उपन्यास है जो भारतीय कृषक की संघर्ष गाथा को यथार्थ रूप में प्रस्तुत करता है। इस

नोट

उपन्यास का शिल्प भी बेजोड़ है। इसका कथानक यद्यपि विस्तृत है तथा अपने भीतर दो कथाओं का समावेश किए हुए है। इनमें से एक कथा ग्रामीण जीवन के पात्रों की कथा है और दूसरी नगरीय जीवन को व्यक्त करती है। दोनों कथाएँ समानान्तर चलती हैं। इन दोनों कथाओं को जोड़ने में सेतु का कार्य करते है रायसाहब अमरपाल सिंह, जो जमींदार होने के कारण ग्रामीण पात्रों से भी जुड़े हैं और धनवान एवं रईस होने के कारण नगर के उन गणमान्य प्रतिष्ठित लोगों से भी जुड़े हैं, जो उन्हीं के समान धन संपन्न एवं उच्चवर्ग के हैं। दोनों कथाएँ अनेक स्थानों पर जुड़ती हैं। मुख्य कथा ग्रामीण परिवेश वाली ही है तथापि किसानों के शोषण का पूरा चित्र प्रस्तुत करने के लिए नगर की कथा एवं पात्रों की भी आवश्यकता थी।

प्रेमचंद ने मुख्य कथा के साथ-साथ अनेक गौण कथाओं का समावेश भी इसमें किया है। घटनाएँ एक-दूसरे से जुड़ी हुई हैं तथा उपन्यासकार ने कहीं प्रत्यक्ष एवं कहीं परोक्ष ढंग से पात्रों के चरित्र पर प्रकाश डाला है। शांतिप्रिय द्विवेदी का मत है कि नगर की कथा से जुड़े हुए कई अंश यदि उपन्यास से निकाल दिए जाएँ तो उपन्यास का आकार भी संतुलित हो जाएगा और कथानक में कसावट आ जाएगी। ओंकारनाथ को शराब पिलाने का प्रसंग, पिकनिक पार्टी, कबड्डी प्रतियोगिता एवं मिर्जा साहब से जुड़े हुए कथा प्रसंग फालतू हैं। गोविन्दी की कहानी, नारी की स्थिति पर दिए गए भाषण, मालती-मेहता प्रसंग भी गोदान की मुख्य कथा से जुड़े हुए प्रतीत नहीं होते। यदि प्रेमचंद केवल 'किसानों की शोषण गाथा' तक विषय को सीमित रखते तथा अन्य विचारों को व्यक्त करने के लिए मोह को संवलित कर लेते, तो गोदान की कथा में अधिक कसावट आ सकती थी।

गोदान की भाषा प्रेमचंद की भाषागत विशिष्टताओं से युक्त है। वह सरल, प्रवाहपूर्ण एवं सहज है तथा उसमें लोकोक्तियों एवं मुहावरों का सटीक प्रयोग स्थान-स्थान पर किया गया है। भाषा को सक्षम बनाने के लिए अप्रस्तुतों, दृष्टांतों, प्रतीकों एवं बिंबों का सहारा भी लिया गया है। चलते हुए उर्दू एवं अंग्रेजी शब्दों से युक्त हिंदी का प्रयोग गोदान में किया गया है।

नोट्स पात्रों की संख्या 'गोदान' में कुछ अधिक हो गई है। लगभग 70 पात्र 'गोदान' में हैं। प्रेमचंद ने प्रत्येक की बाह्य रूपरेखा एवं उसके आंतरिक गुणों का उद्घाटन बड़े मनोयोग से किया है।

होरी के गाँव में रहने वाले झिंगुरी सिंह की रूपरेखा प्रस्तुत करते हुए प्रेमचंद लिखते हैं–**"नाटे, मोटे, खल्वाट, काले, लंबी नाक और बड़ी-बड़ी मूंछों वाले आदमी थे, बिल्कुल विदूषक जैसे और थे भी बड़े हँसोड़।"**

गोदान के संवाद पात्रों की मानसिक स्थिति के अनुकूल हैं। उनमें संक्षिप्तता, सजीवता, प्रवाहमयता जैसे गुण विद्यमान हैं। यथा झुनिया एवं गोबर का यह संवाद द्रष्टव्य है:

"तुम मेरे हो चुके कैसे जानूँ?

जुम जान भी चाहो, तो दे दूँ?

जान देने का अरथ भी समझते हो?

तुम समझा दो ना!

जान देने का अरथ है साथ रहकर निबाह करना।

एक बार हाथ पकड़कर उमिरभर निबाह करते रहना।"

प्रेमचंद के 'गोदान' के संवादों में स्वाभाविकता, पात्रानुकूलता, मर्मस्पर्शिता, नाटकीयता एवं भावात्मकता जैसे सभी गुण विद्यमान हैं। कहीं-कहीं संवाद अधिक लंबे भी हो गए हैं, विशेष रूप से वहाँ जहाँ वह दार्शनिक विवेचन करते हैं। गाँव के पात्र भी कहीं-कहीं ऐसी तार्किकता दिखाते हैं कि बड़ों-बड़ों को निरुत्तर कर दें।

नोट

प्रेमचंद जी को भाषा पर जबरदस्त अधिकार प्राप्त था। वह भाषा को साधन मानते हैं साध्य नहीं। उनकी दृष्टि में जो कुछ लिख दिया जाए वह सब साहित्य के अंतर्गत नहीं आता। साहित्य उसी रचना को कहा जा सकता है जिसमें कोई सच्चाई हो, जिसकी भाषा प्रौढ़ एवं परिमार्जित हो, जिसमें दिल और दिमाग पर असर डाल सकने की क्षमता हो। वह अंग्रेजी के समर्थक नहीं थे। उन्होंने हिंदी भाषा के महत्त्व को प्रतिपादित किया और अंग्रेजी का विरोध करते हुए कहा–**"यह समझ लीजिए कि जिस दिन आप अंग्रेजी भाषा का प्रभुत्व तोड़ देंगे और अपनी कौमी भाषा को अपना लेंगे उसी दिन आपको स्वराज्य के दर्शन हो जाएंगे। मुझे याद नहीं आता कि कोई राष्ट्र विदेशी भाषा के बल पर स्वाधीनता प्राप्त कर सका हो।"**

गोदान की भाषा पात्रानुकूल है। गाँव के पात्र ग्रामीण भाषा एवं ग्राम्य शब्दों का प्रयोग करते हैं जबकि नगर के पढ़े-लिखे पात्र अपनी भाषा में अंग्रेजी शब्दों का प्रयोग करते हैं। गोदान में प्रयुक्त कुछ ग्रामीण शब्द हैं–असुभ, बरखा, साइत, जैजात, जतन, परेम, सांसत, परस, हिस्ट-पुस्ट, पिंसिन, अढ़ौना, भिनसार, घामड़, चंगेरी टिकौना, उटंगी आदि। इसी प्रकार इसमें प्रयुक्त कुछ तत्सम शब्द भी द्रष्टव्य हैं यथा–शोभा, संध्या, शुभेच्छा, उन्माद, विच्छेद, यौवन, विधुर, वैमनस्य, पराकाष्ठा, परित्याग, प्रकृति, ध्येय, स्वादिष्ट, कर्तव्य, विकृति आदि। गोदान में अंग्रेजी शब्दों का भी पर्याप्त प्रयोग मिलता है, यथा–नेशनलिस्ट, कम्युनिस्ट, फिलासफर, यूनिवर्सिटी, इन्श्योरेंस, बैंक, डाइरेक्टर, शेयर, मेडल, फेबर विजिट, मैनीफेस्टो, काउंसिल, मिनिस्टर अल्टीमेटम आदि।

गोदान में प्रयुक्त कुछ उर्दू शब्द इस प्रकार हैं–खुशमिजाज, हसीन, इल्म, तारीफ, फकीर, एहसास, शागिर्द, वसूल, नजराना, इम्तहान, अदा, लिहाज, बेइज्जती, जवांमरदी, कोशिश, रकम, नमाज, फरियाद आदि।

प्रेमचंद शैली में मनोभाव के अनुरूप बदलती का विवरण देते समय व रेखाचित्र शैली का प्रयोग विषय-वस्तु का विवेचन करते समय विवरणात्मक प्रयोग करते हैं। कहीं भावात्मक शैली का प्रयोग तो कहीं आलंकारिक शैली का उपयोग करते दिखाई देते हैं। समग्रत: यह कहा जा सकता है कि गोदान की दृष्टि से भी यह एक सशक्त उपन्यास है। पाठकों पर उद्देश्यपूर्ण कथानक के माध्यम से प्रेमचंद अमिट छाप में समर्थ रहे हैं।

स्व-मूल्यांकन (Self-Assessment)

निम्नलिखित कथनों में सत्य अथवा असत्य की पहचान करें

(State Whether the following statements are True or False) :

7. गोदान की भाषा प्रेमचन्द की भाषागत विशिष्टताओं से युक्त है।
8. साहित्य उसी रचना को कहा जा सकता है जिसमे कोई सच्चाई ना हो।
9. धनिया होरी की पत्नी थी।

4.6 सारांश (Summary)

- 'गोदान' के कथोपकथन अपना विशेष महत्त्व रखते हैं। ये कथा-प्रसार में सहायक होते हैं। उपन्यास के प्रारंभ में ही हम होरी और धनिया को वार्तारत देखते हैं।
- प्रेमचंद जी के छोटे-छोटे वाक्यों में भी कथा-प्रसार के बीज विद्यमान रहते हैं। भोला-होरी का प्रथम संभाषण जिस प्रकार भोला की परदु:खकातरता, कृतज्ञता तथा सरलता का परिचय देता है, उसी प्रकार होरी की उदार-मनोवृत्ति, ईश्वर-विश्वास, धर्म-भावना का द्योतक भी कहा जा सकता है।
- प्रेमचंद ने बड़ी कुशलता से संवादों द्वारा कथानक में संबंध बनाए रखा है। 'गोदान' में घटनाएँ प्राय: व्यवधान के साथ होती हैं। वह व्यवधान देशकाल का होता है।
- प्रेमचंद ने 'गोदान' में पात्रानुकूलता का बहुत ध्यान रखा है। जैसी भाषा का प्रयोग मेहता और मालती करते हैं। उसके विपरीत (गाँव की) भाषा का प्रयोग होरी और धनिया करते हैं।

नोट

- उपन्यास में कथोपकथन का मार्मिक और रोचक होना उपन्यास के प्रभाव और रोचकता को बढ़ाता है। 'गोदान' का अंतिम प्रसंग बहुत ही मार्मिक और करुणार्द्र बन पड़ा है। होरी मृत्यु-शय्या पर पड़ा है। धनिया के पास केवल बीस आने पैसे हैं। वह उसी से 'गोदान' करा देती है।
- भावावेश में व्यक्ति की वाणी में एक विशेष गति और तीव्रता आ जाती है। कभी-कभी यह भावावेश नशे आदि का प्रभाव भी हो सकता है।
- पात्रों के संवाद कथा-विकास के उपयुक्त वातावरण की सृष्टि करते हैं। विशेषकर प्रेम-प्रसंगों में संवादों का बड़ा महत्त्व है, क्योंकि पात्रों के वार्तालाप से ही प्रेम के मधुर वातावरण की सृष्टि होती है।
- हर एक गृहस्थ की भाँति होरी के मन में भी गऊ की लालसा चिरकाल से संचित चली आई थी। यही उसके जीवन का सबसे बड़ा स्वप्न, सबसे बड़ी साध थी। बैंक-सूद से चैन करने या जमीन खरीदने या महल बनवाने की विशाल आकांक्षाएँ उसके नन्हें से हृदय में कैसे समाती?
- प्रेमचंद ने मुख्य कथा के साथ-साथ अनेक गौण कथाओं का समावेश भी इसमें किया है। घटनाएँ एक-दूसरे से जुड़ी हुई हैं तथा उपन्यासकार ने कहीं प्रत्यक्ष एवं कहीं परोक्ष ढंग से पात्रों के चरित्र पर प्रकाश डाला है।
- प्रेमचंद जी को भाषा पर जबरदस्त अधिकार प्राप्त था। वह भाषा को साधन मानते हैं साध्य नहीं। उनकी दृष्टि में जो कुछ लिख दिया जाए वह सब साहित्य के अंतर्गत नहीं आता। साहित्य उसी रचना को कहा जा सकता है जिसमें कोई सच्चाई हो।

4.7 शब्दकोश (Keywords)

1. वार्तालाप – बातचीत
2. घनिष्ठ – गहरा
3. आन्तरिक – अंदरूनी
4. अबेर – देर
5. विष – ज़हर
6. यंत्र – औजार
7. सामंजस्य – तालमेल।

4.8 अभ्यास प्रश्न (Review Questions)

1. उपन्यास के संवादों का क्या उद्देश्य है?
2. संवादों की पात्रानुकूलता से क्या तात्पर्य है?
3. धनिया, होरी का 'गोदान' किस प्रकार कराती है?
4. 'गोदान' की आलोचनात्मक समीक्षा अपने शब्दों में कीजिए।
5. प्रेमचन्द जी के संवादों की भाषा किस प्रकार की है?

उत्तर : स्व-मूल्यांकन (Answers : Self-Assessment)

1. दूध
2. बीस आने
3. चरितार्थता
4. (क)
5. (ग)
6. (ग)
7. सत्य
8. असत्य
9. सत्य।

4.9 सन्दर्भ पुस्तकें (Further Readings)

पुस्तकें गोदान—प्रेमचन्द

नोट

इकाई–5: आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी का साहित्यिक योगदान

अनुक्रमणिका (Contents)

उद्देश्य (Objectives)
प्रस्तावना (Introduction)
5.1 पं० हजारी प्रसाद द्विवेदी जी की लेखन कुशलता
5.2 साहित्य सम्बंधी मान्यताऐं
5.3 'बाणभट्ट की आत्मकथा' : कथासार/कथावस्तु
5.4 सारांश (Summary)
5.5 शब्दकोश (Keywords)
5.6 अभ्यास प्रश्न (Review Questions)
5.7 सन्दर्भ पुस्तकें (Further Readings)

उद्देश्य (Objectives)

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् विद्यार्थी योग्य होंगे–

- आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी जी के साहित्यिक योगदान को जानने में;
- पं० हजारी प्रसाद द्विवेदी जी की लेखन कुशलता का वर्णन करने में;
- साहित्य संबंधी मान्यताओं की जानकारी प्राप्त करने में;
- बाणभट्ट की आत्मकथा के कथासार को समझने में।

प्रस्तावना (Introduction)

पं० हजारी प्रसाद द्विवेदी हिंदी-साहित्य के विख्यात कृती हैं। अन्वेषक, इतिहास लेखक, आलोचक, निबंध-लेखक, संपादक, व्याख्याता तथा उपन्यासकार के अतिरिक्त आप कुशल वक्ता और सफल अध्यापक भी हैं। आपके अध्ययन की विशालता के भीतर ये सभी व्यक्तित्व निर्बंध होकर स्फुटित हुए हैं। यह कहना कठिन है कि आपका कौन-सा साहित्यिक व्यक्तित्व सर्वाधिक महिमामय है।

5.1 पं० हजारी प्रसाद द्विवेदी जी की लेखन कुशलता

हिंदी-साहित्य में अन्वेषण की अनेक नवीन दिशाओं की ओर संकेत करके द्विवेदी जी ने उसकी परिधि का विस्तार किया है और साहित्य के इतिहास-लेखन के आदर्श को आगे बढ़ाया है। आलोचक के रूप में आपने साहित्य के मूल्यांकन की मानवतावादी भूमि की प्रतिष्ठा की है। निबंध-लेखक के रूप में आपने आत्म-व्यंजना के अनेक सफल प्रयोग किए हैं। संपादक के रूप में आपने मौखिक परंपरा से विकसित क्षेपक की माया से मुक्त करके 'रासो' जैसी विवादास्पद कृति को उसके मूल रूप में व्यवस्थित किया है। व्याख्याता के रूप में आपने कालिदास के काव्य में

नोट

संश्लिष्ट दार्शनिक तत्ववाद को सहृदयतापूर्वक विश्लिष्ट करके व्याख्या की एक नवीन मर्मोद्घाटिनी परंपरा को जन्म दिया है और उपन्यासकार के रूप में आपने इतिहास की प्राणशक्ति को उद्दीप्त किया है। आज का कोई अन्य गद्यकार व्यक्तित्व के इस बहुमुखी विकास का दावेदार नहीं है।

पं० हजारी प्रसाद द्विवेदी की समस्त कृतियों की संख्या 30 से ऊपर है। 'हिंदी साहित्य की भूमिका' (1940 ई०), 'हिंदी साहित्य का आदिकाल' (1952 ई०), और 'हिंदी साहित्य उद्भव और विकास' (1953 ई०) आपके प्रसिद्ध साहित्येतिहास ग्रंथ हैं। 'अशोक के फूल' (1948 ई०), 'कल्पलता' (1951 ई०), 'विचार और वितर्क' (1954 ई०), 'विचार-प्रवाह' (1959 ई०), 'कुटज' (1964 ई०) और 'आलोक पर्व' (1972 ई०) आपके निबंध-संग्रह हैं। 'सूर-साहित्य' (1936 ई०), 'कबीर' (1942 ई०), 'नाथसंप्रदाय' (1950 ई०), 'आधुनिक हिंदी साहित्य पर विचार', 'साहित्य का मर्म' (1949 ई०), 'लालित्य मीमांसा' (1962 ई०), 'साहित्य सहचर' (1965 ई०), 'कालिदास की लालित्य योजना' (1965 ई०), 'मृत्युजंय रवीन्द्र', 'मध्यकालीन बोध का स्वरूप' (1970 ई०) आदि आपके अनुसंधान एवं आलोचना ग्रंथ हैं। 'प्राचीन भारत के कलात्मक विनोद', 'मध्यकालीन धर्म साधना' (1952 ई०), 'सहज-साधना' (1963 ई०) आदि आपकी धर्म एवं संस्कृति से सम्बंधित कृतियाँ हैं। 'बाणभट्ट की आत्मकथा' (1947 ई०), 'चारु चंद्रलेख' (1963 ई०), 'पुनर्नवा' (1973 ई०) और अनामदास का पोथा' (1976 ई०) आपके प्रसिद्ध उपन्यास ग्रथ हैं। 'नाथ सिद्धों की बानियाँ' (1957 ई०), 'संक्षिप्त पृथ्वीराज रासो' (1957 ई०), 'संदेश रासक' (1960 ई०), 'दशरूपक' (1963 ई०) आदि ग्रंथों का आपने संपादन किया है। 'मेघदूत: एक पुरानी कहानी' में आपने मेघदूत काव्य में अंतर्निहित तत्ववाद का मार्मिक विश्लेषण किया है। 'सिक्ख गुरुओं का पुण्य स्मरण' (1979 ई०) लिखकर आपने इन गुरुओं के प्रति अपनी श्रद्धा निवेदित की है। 'लालकनेर', 'मेरा बचपन' (1956 ई०) और 'दो बहनें' (1956 ई०) आपकी अनूदित कृतियाँ हैं। 'महापुरुषों का स्मरण' (1987 ई०) का प्रकाशन आपकी मृत्यु के बाद किया गया है। इसका संपादन आपके सुपुत्र **मुकुंद द्विवेदी** ने किया है। यह एक प्रकार से संस्मरण ग्रंथ है। इसमें ज्योतिर्विद **आर्यभट्ट** से लेकर कवि **श्री सोहनलाल** द्विवेदी तक कुल 29 महापुरुषों को याद किया गया है। इससे द्विवेदीजी की भाव-परिधि के विस्तार की सूचना मिलती है। 'पत्र हजारी प्रसाद द्विवेदी' (1983 ई०) शीर्षक से आपके बिखरे हुए महत्त्वपूर्ण पत्रों का संपादन भी **मुकुंद द्विवेदी** ने किया है इससे द्विवेदीजी के व्यक्तित्व को भीतर से पहचानने के लिए दृष्टि मिलती है। अब यह समूचा कृतित्व 'हजारी प्रसाद द्विवेदी ग्रंथावली' शीर्षक से 'राजकमल प्रकाशन' द्वारा कुल ग्यारह खंडों में प्रकाशित कर दिया गया है। इस वैविध्यपूर्ण विशाल वाङ्मय के स्रष्टा रूप में द्विवेदीजी का व्यक्तित्व अभिनंदनीय है।

5.2 साहित्य सम्बंधी मान्यताऐं

पं० हजारी प्रसाद द्विवेदी ने साहित्य की व्याख्या में सर्वाधिक पृष्ठ खर्च किए हैं। उनके अध्ययन की सबसे बड़ी विशेषता यह है कि उन्होंने साहित्य को मनुष्य-सत्य के संदर्भ में देखा है। मनुष्य को ही साहित्य का लक्ष्य स्वीकार किया है और उस सारे वाग्जाल को साहित्य मानने में संकोच प्रकट किया है, जो मनुष्य की आत्मा को तेजोद्दीप्त न बना सके। आपके अनुसार **"साहित्य, वस्तुतः मनुष्य का वह उच्छलित आनंद है जो उसके अंतर में अँटाए नहीं अटा सका था।"** इस आनंद का आधार 'एकत्व की अनुभूति' है। इस अनुभूति को ही हम मनुष्य का धर्म या मनुष्यता कह सकते हैं। इस प्रकार मनुष्यता का उच्छलन ही साहित्य का मर्म है। इसलिए साहित्य की सभी विधाओं का मूल्यांकन 'मनुष्यता' के संदर्भ में ही किया जाना चाहिए। मनुष्य की चरम मनुष्यता—एकत्व की अनुभूति-संवेदना के आधार पर ही संभव है। संवेदना एक अपूर्व द्रावक रस है, जो हमें दूसरों के लिए आत्म-बलि देना सिखाता है। यही संवेदना ललित कलाओं का प्राण है। इसी संवेदना के विस्तार से हम संसार की नाना ज्ञानधाराओं की बाहरी विरोध-मूलक स्थिति को भेदकर उनके मूल में मानव-चेतना का अखंड विलास देख सकते हैं। अतएव ज्ञान-धाराओं को उनकी अखंडता में ग्रहण करने के लिए साहित्य को उसकी पूर्णता में अनुभूत करने के लिए, हमें काव्य, धर्म, दर्शन, ज्योतिष, विज्ञान, इतिहास आदि सभी कुछ देखना होगा। मनुष्य जीवन का अखंड

प्रवाह इन्हीं के माध्यम से प्रवाहित हुआ है और साहित्य का इतिहास वस्तुत: मनुष्य-जीवन के अखंड प्रवाह का इतिहास है। द्विवेदी जी के शब्दों में साहित्य मानव-जीवन से उत्पन्न होकर सीधे मानव-जीवन को प्रभावित करता है। साहित्य में उन सारी बातों का जीवन्त विवरण होता है, जिसे मनुष्य ने देखा है, अनुभव किया है, सोचा है और समझा है।

द्विवेदीजी ने 'मनुष्य ही साहित्य का लक्ष्य है', 'मानव-सत्य', 'सच्चा साहित्यकार', 'मानवधर्म', 'साहित्य का मर्म' आदि निबंधों में अपनी इसी मान्यता को अनेक प्रकार से व्यक्त किया है। उन्होंने सारे काव्य, साहित्य, ज्ञान, विज्ञान, कला, दर्शन के मूल में मानवीय चेतना को लक्षित किया है। मानवीय चेतना भाव और तथ्य के किनारों को स्पर्श करती हुई प्रवाहित होती है। जब वह 'भाव' को स्पर्श करती है तब काव्य और कला की सृष्टि होती है और जब वह तथ्य को स्पर्श करती है तो दर्शन और विज्ञान का विकास होता है। इस प्रकार काव्य-कला और दर्शन-विज्ञान एक दूसरे के पूरक हैं। सबके मूल में अखंड चेतना का ही प्रवाह लक्षित होता है।

स्व-मूल्यांकन (Self-Assessment)

रिक्त स्थानों की पूर्ति करें (Fill in the blanks) :

1. आज का कोई अन्य .... व्यक्तित्व के इस बहुमुखी विकास का दावेदार नहीं है।
2. 'महापुरुषों का स्मरण' का प्रकाशन आपके सुपुत्र .... ने किया है।
3. सबके मूल में अखंड .... का ही प्रवाह लक्षित होता है।

5.3 'बाणभट्ट की आत्मकथा' : कथासार/कथावस्तु

बाणभट्ट जो कि इस उपन्यास का नायक है, मगध प्रदेश के प्रख्यात वात्स्यायन वंश में उत्पन्न हुआ था। उसके पिता चित्रभानु भट्ट एक उद्‌भट पंडित थे। उसके घर का समूचा वातावरण पाण्डित्यपूर्ण था और घर की शुकसारिकाएँ तक शुद्ध मंत्रों का उच्चारण किया करती थीं। बाणभट्ट सचमुच अभागा था कि ऐसे परिवार में उत्पन्न होने के बावजूद वह उस वातावरण से विरत रहा।

> *क्या आप जानते हैं* बचपन में ही माता-पिता का देहावसान हो जाने के कारण बाणभट्ट आवारा बन गया। इसीलिए जनपदवासी उसे 'बंड' (पूँछ कटा बैल) कहते थे। कालांतर में इसी 'बंड' शब्द को संस्कृत करके उसने स्वयं को 'बाणभट्ट के नाम से अभिहित किया। उसका मूल नाम दक्षभट्ट था।

बाणभट्ट का एक चचेरा भाई था, 'उड्डपति' जिसने तत्कालीन प्रख्या तार्किक एवं बौद्ध भिक्षु वसुभूति को शास्त्रार्थ में पराजित किया था। बाणभट्ट को वह भी न रोक सका और बाणभट्ट घुमक्कड़ बनकर इस नगर से उस नगर में घूमने लगा। कहीं वह नट बनता, कहीं पुतलियों का नाच दिखाता फिरता, कहीं नाट्य-मंडली स्थापित कर नाटक प्रदर्शित करता। देखने में उसका व्यक्तित्व आकर्षक था, इसी कारण लोग उससे प्रभावित हुए बिना नहीं रहते थे। वह स्वयं नाटक लिखकर उन्हें रंगमंच पर प्रदर्शित करता था।

एक बार बाणभट्ट यों ही भटकता हुआ स्थाण्वीश्वर (थानेश्वर) जा पहुँचा। वहाँ उसने राजमार्ग पर एक जुलूस जाते देखा। ज्ञात करने पर उसे मालूम हुआ कि महाराजाधिराज हर्षवर्द्धन के भाई कुमार कृष्णवर्द्धन को पुत्र-रत्न प्राप्त हुआ है और आज उसी बालक का नामकरण संस्कार संपन्न होने जा रहा है। इसी के उपलक्ष्य में पूरा नगर बधाई देने के लिए उमड़ पड़ा था। बाणभट्ट ने सोचा कि वह ब्राह्मण है, क्यों न वह भी कुमार को आशीर्वाद एवं बधाई दे आए। वह यह भी सोचने लगा कि अब वह कुलीन का बाना पहनेगा और अपने वंश का कलंक कदापि नहीं बनेगा।

नोट

वह शीघ्रता से राजमहल की ओर बढ़ा चला जा रहा था कि तभी उसे किसी स्त्री-स्वर ने चौंका दिया। वह उसी को पुकार रही थी। यह पुकारने वाली और कोई नहीं, उज्जयिनी में उसकी नाट्य-मंडली में अभिनय करने वाली निम्नवर्गीय निपुणिका थी, जो अब पान बेचा करती थी। निपुणिका विवाह के तुरंत बाद विधवा हो जाने पर बाणभट्ट की नाट्य-मंडली में सम्मिलित हो गई थी। बाण के प्रति वह आसक्त थी किंतु एक दिन जब उसे ज्ञात हुआ कि वह उसकी उपेक्षा करता है तो क्षोभवश वह चुपचाप भाग आई थी। बाण उसे चाहता था और इसीलिए उसने नाट्यमंडली भंग कर दी। नाटक को शिप्रा नदी में फेंक दिया और विक्षिप्त-सा उसे खोजने निकल पड़ा। और आज छः वर्ष बाद निपुणिका से वह मिल सका। निपुणिका से यह ज्ञात होने पर कि वह छोटे राजकुमार के अंतःपुर में पान पहुँचाया करती है, बाण ने उसे इस घृणित कार्य से मुक्ति दिलाने की प्रतिज्ञा की, किंतु निपुणिका ने उसे एक अन्य महान कार्य करने की प्रेरणा दी। उसने बताया कि छोटे राजकुल में एक राजकुमारी को जबरदस्ती लाया गया है और छोटे राजकुल का तथाकथित महाराज उसे अपनी वासना का शिकार बनाना चाहता है। वह राजबाला पवित्रता की मूर्ति है और देवमंदिर की भांति निष्कलुष है। बाणभट्ट ने स्वयं को इस कार्य के लिए तत्पर कर लिया और यह निश्चय कर लिया कि आत्योद्धार चाहे हो न हो, उस राजबाला का उद्धार अवश्य करेगा।

थानेश्वर का शासन-सूत्र यद्यपि महाराज हर्षवर्द्धन के हाथ में था, किंतु वास्तव में इसके उत्तराधिकारी मौरवरि वंश के कान्यकुब्ज थे। इसी कारण अपने इस संबंधी राजा को हर्षवर्धन ने पूरी सुख-सुविधाएँ दे रखी थीं और वह आज भी 'महाराजा' कहलाने में गौरव का अनुभव करता था। प्रचुर संपत्ति ने उसे कामी बना दिया और इसी का यह परिणाम था कि उक्त राजकुमारी उसके महल में पिछले एक माह से बंदिनी थी। उस दिन शुक्ल त्रयोदशी होने के साथ ही सब कान्यकुब्ज कामदेव की पूजा का उत्सव मना रहे थे। अच्छा अवसर मिलते ही निपुणिका और बाणभट्ट ने अंतःपुर में जाकर उस अभागिनी राजबाला को मुक्ति दिला दी। चहारदीवारी लाँघकर वे सब बाहर निकल आए और एक निर्जन स्थान पर स्थित देवी के मंदिर की ओर चले। मंदिर के पीछे एक टूटी-फूटी कुटिया सी थी और मंदिर में एक द्रविड़ साधु रहता था। वह कहने को तो चंडी का परम भक्त था किंतु वास्तव में बड़ा कामी, लोलुप, दंभी और नीच था। अपने इस पाखंड के कारण ही वह अपने शरीर का सत्यानाश कर चुका था। निपुणिका उसके विषय में जानती थी इसीलिए उसने उसे बहलाकर यह स्थान पा लिया। किंतु बाण को वह स्थान पसंद न था। फिर जब साधु के विषय में उसे जानकारी मिली तब तो वह स्थान बदलने को विह्वल हो उठा।

टास्क 'बाणभट्ट की आत्मकथा' के कथासार पर संक्षिप्त टिप्पणी लिखिए।

बाणभट्ट को इसी साधु से बौद्ध भिक्षु सुगतभद्र का पता चला तो वह निपुणिका और राजबाला (भट्टिनी) को उनके विषय में बताने लगा। वार्ता के दौरान ही यह ज्ञात हुआ कि राजबाला सुगतभद्र को जानती है। भट्टिनी बोली कि यदि वह वही सुगतभद्र हों जो तक्षशिला धर्म-प्रचार हेतु गए थे तो उनसे कहना कि देवपुत्र तुवरमिलिंद की कन्या ने प्रणाम कहा है और वह आपका दर्शन करना चाहती है। बाण को जब मालूम हुआ कि भट्टिनी महाराजा तुवरमिलिंद की राजकन्या है तो उसे उसकी वर्तमान दशा पर दुख हुआ। वह तुरंत बौद्धविहार गया और सुगतभद्र से पूरा वृतांत कहा। सुगतभद्र भट्टिनी के विषय में जानकर बहुत दुखी हुए और उसकी रक्षा की व्यवस्था का वचन दिया। उन्होंने उसी समय कुमार कृष्णवर्द्धन को बुलवाने का आदेश दिया और बाणभट्ट उन्हें प्रणाम कर वापस चला आया।

मंदिर में लौटकर उसने राजबाला चंद्रदीधिति को सारा वृतांत कह सुनाया किंतु भट्टिनी को जब मालूम हुआ कि उसकी उचित व्यवस्था हेतु सुगतभद्र ने कृष्णवर्द्धन को बुलवाया है तो उसे बहुत दुख हुआ। वह थानेश्वर के राजवंश से घृणा करती थी। इसीलिए राजवंश के किसी भी पुरुष का आश्रय पाने की अपेक्षा मर जाना उचित समझती थी। किंतु बाणभट्ट ने उसे आश्वस्त किया कि राजवंश का आश्रय नहीं लिया जाएगा। तभी आचार्य सुगतभद्र के शिष्य ने आकर बताया की उसे बुलाया गया है। कृष्णवर्द्धन विहार में आ गए हैं और बाण से बात करना चाहते हैं। बाण तुरंत चल

पड़ा। कृष्णवर्द्धन बड़ा गुणी, कोमल और सच्चिरित्र व्यक्ति था किंतु बाण द्वारा यह कहने पर कि वह लोग राजवंश के किसी भी व्यक्ति का आश्रय नहीं लेंगे, तो कुमार को बहुत ठेस लगी। दोनों में तीखी झड़प हो गई। इसी समय आचार्य ने आकर स्थिति को संभाला। फिर यह निश्चित हुआ कि राजबाला नदी तट तक जाते समय पैदल न जाकर कुमार की भेजी हुई शिविका पर जाएगी और वह राजबाला का भाई बनने में गर्व महसूस करेंगे।

बाणभट्ट ने कुमार की भेजी हुई शिविकाओं पर चंद्रदीधिति और निपुणिका को नदी तट की ओर भेज दिया। उसी समय जोगिया वस्त्र पहने एक भैरवी ने वहाँ प्रवेश किया और साधना गृह को भ्रष्ट करने पर उसे प्रताड़ित किया। वह उसे निकट ही स्थित वाममार्गी अवधूत के पास ले गई। अवधूत के प्रभामंडित व्यक्तित्व से बाण इतना प्रभावित हुआ कि कुछ भी न छिपा सका। बाबा ने उसे अनेक चमत्कार दिखाए। अपनी सिद्धि द्वारा बाबा ने उसके मन की गहराई तक पहुँचने का प्रयास किया। तभी यह भी प्रकट हुआ कि बाण के मन में राजबाला के प्रति अक्षय आसक्ति भाव है। फिर वे सब चले गए और बाण उनकी स्मृति मन में संजोए नदी तट की ओर चला गया।

निपुणिका और भट्टिनी नदी तट पर बाण की व्यग्रता से प्रतीक्षा कर रही थी। बाण ने निपुणिका को सारा वृत्तांत कह सुनाया और कहा कि अवधूत ने कहा है कि त्रिपुर सुंदरी ने जिस रूप में तुझे लुभाया है उसे स्वीकार कर। निपुणिका समझ गई और उसके हृदय पर गहरी चोट लगी। वह स्वयं बाण से प्रेम करती थी, किंतु यह भी जानती थी कि भट्टिनी के प्रति बाण के मन में आसक्ति है। किसी प्रकार निपुणिका ने स्वयं को संभाला। उसने बाण को बतलाया कि कुमार ने उसे बुलाया है। बाण कुमार से मिलने उनके महल में गया। कुमार ने उसे दो मूर्तियाँ दी और कहा कि बुद्ध की मूर्ति वह कुमार की ओर से तथा महावराह की मूर्ति अपनी ओर से भट्टिनी को भेंट में देगा। बाण वापस लौट आया। गोधूलि वेला में उन्होंने यात्रा आरंभ की। भट्टिनी को पिता की याद आ रही थी इसलिए वह चिंतातुर दिखाई दे रही थी। उसे स्मरण आया कि नगरद्वार के मार्ग में दस्युयों ने उसके दो-सौ विश्वस्त सेवकों को मार उसका अपहरण कर लिया था और तब इस छोटे राजकुल से बाण ने उसे मुक्त किया। बाण ने उसे समझाया और कहा कि अगर वह कवि होता तो उसका यश-गान लिखता। यह सुनते ही निपुणिका सिहर उठी। एकांत पाकर उसने बाण के पाँवों में सिर रखकर यह वचन ले लिया कि वह भट्टिनी या और किसी भी जीवित व्यक्ति पर काव्य नहीं लिखेगा। कारण पूछने पर उसने बताया कि जब वह उसकी नाटक-मंडली छोड़कर भाग आई थी तो मार्ग में एक ज्योतिषी ने उसे बाण के भविष्य के विषय में पूछने पर बताया था कि वह बड़ा यशस्वी होगा, परंतु कोई रचना समाप्त नहीं कर सकेगा। उससे कह देना कि किसी जीवित व्यक्ति के नाम पर काव्य न लिखे अन्यथा एक हजार दिन बाद वह मर जाएगा। निपुणिका ने बताया कि जब उसे ज्ञात हुआ कि बाण ने न लिखने की प्रतिज्ञा की है तो वह उसके पास लौटने वाली थी किंतु ज्योतिषी की बात से वह न आ सकी और कभी न मिलने की प्रतिज्ञा करके भाग निकली।

> *नोट्स* अपने प्रति निपुणिका के अप्रतिम प्रेम एवं त्याग का परिचय पाकर बाण हतप्रभ रह गया। वह ज्योतिष को नहीं मानता था। लेकिन निपुणिका का मान रखने के लिए उसने किसी जीवित व्यक्ति पर काव्य न लिखने की प्रतिज्ञा की।

इन लोगों की नावें कान्यकुब्ज राज्य के अंतिम छोर पर पहुँच गई थीं। यहाँ से अन्य राज्यों की सीमाएँ प्रारंभ होती थीं। ये राज्य कान्यकुब्जों के शत्रु थे और यहाँ अराजकता का वातावरण फैला हुआ था। यद्यपि इनके साथ कुमार द्वारा भेजे गए पर्याप्त अंगरक्षक सैनिक चल रहे थे किंतु फिर भी आमीर सामंत ईश्वरसेन के गश्ती सैनिकों से इनका टकराव हो ही गया। दोनों ओर से घनघोर युद्ध होने लगा। भट्टिनी ने आगत भय की आशंका से मर जाना ही उचित समझा और महावराह की प्रतिमा को हृदय से लगाए वह नदी में कूद पड़ी। उसे बचाने के लिए निपुणिका और बाण भी नदी में कूद पड़े। बाण ने भट्टिनी को पकड़ लिया और प्रवाह के साथ बहते हुए उसे किसी प्रकार किनारे ले आया किंतु निपुणिका का क्या हुआ, यह वह न जान सका। इसी बीच भट्टिनी को बचाने के प्रयास में उसे महावराह

नोट

की प्रतिमा को भी नदी में फेंक देना पड़ा। किनारे आकर वह बेहोश भट्टिनी के साथ रेत पर पड़ा रहा। प्रात:काल जब भट्टिनी होश में आई तो बाण उसे लेकर किसी सुरक्षित स्थान की खोज में चल पड़ा।

पास ही उसे एक घना साल का पेड़ मिल गया जो संभवत: ग्रामीणों का पूजा स्थल था। बाण को लगा कि निकट में ही कोई गाँव अवश्य होगा। अत: वह भट्टिनी को लेकर वहीं आराम करने के विचार में बैठ गया। वास्तव में यह उसी भैरवी का स्थान था जो उसे थानेश्वर के चंडी मंदिर में मिली थी। बाण महामाया भैरवी के संरक्षण में भट्टिनी को छोड़कर निपुणिका को खोजने लगा किंतु जब वह न मिली तो निराश लौट आया। भैरवी द्वारा दिए गए फल खाकर जब वह पुन: निपुणिका को ढूँढ़ने निकला तो दुर्भाग्यवश एक शमशान के निकट स्थित देवी के मंदिर में जा पहुँचा। वहाँ अघोरघण्ट और चंड-मंडता ने उसकी बलि देने का प्रयास किया तभी महामाया भट्टिनी और निपुणिका को लेकर वहाँ आ पहुँची और इस प्रकार बाण की रक्षा हुई।

महामाया के प्रयास से ही आमीर महाराज लोरिकदेव के महल में इन तीनों के विश्राम की व्यवस्था हो गई। निपुणिका अभी काफी अस्वस्थ थी। बाणभट्ट सोच रहा था कि निपुणिका के ठीक होते ही वह मगध के लिए चल देगा किंतु तभी उसे मौरवरियों के गुरु भर्वृशर्मा का एक पत्र मिला जिसमें बाहरी शत्रुओं के आने का विस्तार में वर्णन करते हुए आर्यावर्त की रक्षा हेतु सबको तत्पर होने को कहा गया था और बताया गया था कि महाराज तुवरमिलिंद शत्रुओं को खदेड़ भगाते किंतु अपनी प्रिय पुत्री के वियोग से वे क्लांत हैं। जो व्यक्ति उनकी पुत्री चंद्रदीधिति को खोज कर लाएगा वह आर्यावर्त की रक्षा का उपहार पाएगा। पत्र को पढ़कर बाण उत्तेजित हो उठा किंतु भट्टिनी को बताना उसने उचित न समझा। वह भट्टिनी से मिला तो मालूम हुआ कि सामंत की रानी उसके पास भी वह पत्र भिजवा चुकी है। भट्टिनी के धैर्य को देख बाण आश्वस्त हुआ।

रातभर बाणभट्ट को नींद न आई। वह भट्टिनी के विषय में ही सोचता रहा। उसने सोचा प्रात: निपुणिका से इस संबंध में बात करेगा। प्रात: निपुणिका स्वयं उसके पास चली आई और पूछा कि रात में उसने भट्टिनी से कुछ अनुचित तो नहीं कहा, तो बाण ने उसे पूरी बात बता दी। बाण ने निश्चय कर लिया कि वह तुरन्त थानेश्वर जाकर भट्टिनी को उसके पिता के पास पहुँचाने की व्यवस्था करेगा। वह थानेश्वर जाने की सोच ही रहा था कि तभी कुमार के दूत ने आकर उसे बताया कि कुमार कृष्णवर्द्धन उससे मिलने के इच्छुक हैं और वह महाराज हर्षवर्द्धन से बैर त्यागकर उनसे भी अवश्य मिले। उधर भट्टिनी ने भी उसे थानेश्वर जाने को प्रेरित किया और कहा कि यदि समय मिले तो निपुणिका की सखी सुचरिता से मिलकर उसकी भी खबर लेता आए। बाण जब थानेश्वर पहुँचा तो वह सीधा सुगतभद्र से मिलने बौद्ध-विहार चला गया। वहीं महाराज हर्षवर्द्धन और कुमार से भी उसकी भेंट हो गई। कुमार ने उससे संध्या समय मिलने का आग्रह किया।

बाणभट्ट महाराज हर्षवर्धन की राजसभा में पहुँचा किंतु वहाँ तिरस्कृत होने पर उसे क्रोध आ गया। वह सभा-भवन से बाहर आ गया। तभी उसे सुचरिता का ध्यान आया और वह बताए गए स्थान की ओर चल पड़ा। सुचरिता को जब यह ज्ञात हुआ कि वह निपुणिका द्वारा भेजा गया है और उसका नाम बाणभट्ट है तो वह बहुत प्रसन्न हुई और उसे अपने घर ले गई। उसे नारायण का प्रसाद दिया। बाण उसके भक्ति-भाव से बहुत प्रभावित हुआ। अगले दिन संध्या समय फिर मिलने का वचन देकर बाण वहाँ से चला गया। जब बाण अपने विश्रामालय में पहुँचा तो वहाँ उसे कुमार का दूत मिला, जिसने उसे तीन पत्र दिए। पहले पत्र के अनुसार उसे महाराज का राजपंडित नियुक्त किया गया था। दूसरा पत्र आमीर सामंत लोरिकदेव के नाम था जिसमें उससे कहा गया था कि वह महाराज का सामंत बन जाए। और तीसरा पत्र भट्टिनी के नाम था।

स्व-मूल्यांकन (Self-Assessment)

बहुविकल्पीय प्रश्न (Multiple Choice Questions) :

4. बाणभट्ट का मूल नाम क्या था?

   (क) उड्डपति (ख) बाणभट्ट

   (ग) दक्षभट्ट (घ) बंड।

5. थानेश्वर का शासन-सूत्र किसके हाथ में था?

   (क) हर्षवर्द्धन (ख) कृष्णवर्द्धन

   (ग) कान्यकुब्ज (घ) इनमें से कोई नहीं।

6. सुचरिता के पति का क्या नाम था?

   (क) लोरिकदेव (ख) विरतिवज्र

   (ग) तुवरमिलिंद (घ) इनमें से कोई नहीं।

प्रातःकाल उठकर बाण कुमार से मिला। कुमार ने उसे बधाई दी और आतिथ्य-सत्कार के बाद कहा कि जैसे भी हो वह भट्टिनी को थानेश्वर ले आए। बाण अगले दिन राजपंडित के रूप में 'दरबार' में गया और महाराज को आशीर्वाद दिया तथा उनकी प्रशस्ति में एक आर्या सुनाई। सभा भंग होने पर बाण सीधे सुचरिता से मिलने चला गया। मार्ग में उसने देखा कि लोगों की भीड़ लगी है। पूछने पर पता चला कि सुबह ही सुचरिता और उसके योगी पति विरतिविज्र को बंदी बना लिया गया है। अघोरभैरव को नाव द्वारा कहीं दूर भेज दिया गया है। महाराज हर्षवर्द्धन के इस कृत्य से जनता उत्तेजित हो उठी थी। सभा में अनेक लोग बोले और अंत में सभापति ने जनता को शांत रहने को कहा, क्योंकि देश पर शत्रुओं की आँखें लगी थीं और देवपुत्र तुवरमिलिंद का सहयोग लेना आवश्यक था। सभा सहमत हो गई किंतु तभी एक कोने से महामाया का स्वर गूँजा। उन्होंने अपने लंबे भाषण में सभा के निर्णय का उग्र विरोध किया और कहा कि राजपुरुषों की आशा छोड़कर देश के नवयुवक स्वयं आगे आकर देश की रक्षा करने को सन्नद्ध हों। यह कहकर वह न जाने किधर चली गई।

बाणभट्ट को इस प्रकार महामाया का आना और तिरोहित हो जाना बड़ा अजीब लगा। वह मार्ग में यह सोचते हुए चलने लगा कि सुचरिता और विरतिविज्र को महाराज हर्ष ने क्यों बंदी बनाया है। तभी उसे राजकवि धावक मिल गया। उसने बताया कि सुचरिता ने यह बयान दिया है कि बाणभट्ट उसे जानता है इसलिए कुमार की इच्छा है कि बाण बंदीगृह में सुचरिता से मिले और उसे राज्य के अनुकूल बनाए। उसने यह भी बताया कि महामाया वास्तव में महारानी राजश्री की सौत है और महारानी का पद छोड़कर भैरवी बन गई हैं। बाण इन सब बातों पर विचार करता हुआ बंदीगृह जा पहुँचा। उसके आग्रह पर सुचरिता ने अपना सारा जीवन-वृत्तांत कह सुनाया। उसने बताया कि बचपन में ही उसका विवाह हो गया था किंतु पति मोक्ष पाने के लालच में भिक्षु बन गया और फिर कालांतर में वह अघोरभैरव का शिष्य बन गया। एक दिन एक सरोवर के निकट उसे अपना पति विरतिवज्र मिल ही गया। उसने सुचरिता का पाणिग्रहण तो कर लिया किंतु अपनी भक्ति से नहीं डिगा। सुचरिता भी उसी के रंग में रंग गई और उसकी भक्ति में सहयोग देने लगी। जब बाण ने उसके पकड़े जाने का कारण पूछा तो उसने बताया कि झूठ-मूठ ही धार्मिक प्रतिद्वंद्वितावश उसे पकड़ लिया गया है। बाण हर्शदेव से मिला और उन्हें वस्तुस्थिति समझाकर उसने उन दोनों को मुक्त करा दिया।

बाण महाराज एवं राजश्री का संदेश लेकर भट्टिनी से मिलने पुनः लोरिकदेव के पास पहुँचा और लोरिकदेव को वह पत्र दिया जिसमें महाराज ने उससे सामंत बन जाने का आग्रह किया था। फिर वह भट्टिनी से मिला और उसे पत्र दिया। पूरी तरह सोच-विचार कर भट्टिनी थानेश्वर जाने को राजी हो गयी और कहा कि वह या तो सुचरिता के घर रहेगा या जहाँ वह उचित समझेगी वहां रहेगी किंतु राजवंश के महलों में नहीं रहेगी। उधर आमीर-सामंत लोरिकदेव को पत्र से जब यह जानकारी मिली कि भट्टिनी ही देव पुत्र तुवरमिलिंद की प्राणधिका राजकन्या है तो वह पूरी साज-सज्जा के साथ उसका स्वागत करने उसके द्वार पर आ पहुँचा। उसने देवकन्या की रक्षा का वचन तो ले लिया किंतु हर्षदेव का सामंत बनना अस्वीकार कर दिया।

नोट्स निपुणिका ने प्रेम से विवश होकर बाणभट्ट को बलि से बचाने के लिए कराला देवी के मंदिर में इस प्रकार नृत्य किया कि वह अत्यंत कमजोर हो गई।

नोट

बाणभट्ट बड़े असमंजस में पड़ गया। एक ओर कुमार कृष्णवर्द्धन का आदेश था और दूसरी ओर लोरिकदेव का आग्रह, क्या करे, और क्या न करे, यह बाणभट्ट की समझ में नहीं आ रहा था। दूसरे दिन प्रात:काल अपनी समस्या के समाधान के लिए वह निपुणिका से मिला। निपुणिका ने निर्णय दिया कि भट्टिनी थानेश्वर जाएगी किंतु वह वहाँ किसी की अतिथि नहीं होगी। उनका अपना स्वाधीन राज्य अपने साथ होगा। भट्टिनी वहाँ उसी प्रकार रहेगी जैसे स्वतंत्र देश की रानी अपने राज्य में रहती है। बाण को निपुणिका का सुझाव ठीक लगा। अभी वह विचार कर ही रहा था कि लोरिकदेव का बुलावा आ गया। बाण उससे मिलने चला गया। लोरिकदेव का सात्विक रहन-सहन उसे अच्छा लगा। लोरिकदेव ने कहा कि कान्यकुब्जों का शासन नपुंसक हो गया और ऐसे समय में जबकि आर्यावर्त पर संकट के बादल छाए हैं वह देवपुत्र तुवरमिलिंद का सहयोगी बनना पसंद करेगा। उसने कहा कि कान्यकुब्ज नरेश के हाथों में भट्टिनी कदापि न पड़ने पाये। उसने भट्टिनी की रक्षा हेतु अपने दस हजार सैनिक देने का भी वचन दिया। उसने इच्छा प्रकट की कि इन सैनिकों के साथ ही राजकुमारी पुरुषपुर को प्रस्थान करें तो अच्छा होगा।

बाणभट्ट ने यह कहकर उससे विदा ली कि वह भट्टिनी से इस विषय में विचार-विमर्श करेगा। यदि उसने आज्ञा दी तो जैसा लोरिकदेव चाहते हैं वही होगा। उसने कह तो दिया किंतु मन ही मन में वह यह निर्णय कर चुका था कि भट्टिनी को राज राजेश्वरी बनाकर ही वह प्रस्थान करेगा। यह कम महत्त्व की बात नहीं थी कि चंद्रदीधिती की सेवा में दस हजार आमीर सैनिक रहेंगे जो किसी भी समय उसके एक संकेत पर अपने प्राणों की बाजी लगा देंगे। वह सोच रहा था कि उसके इस निर्णय से न तो कुमार कृष्णवर्द्धन को ही कोई आपत्ति होगी और न आमीर सामंत लोरिकदेव को।

कराला देवी के मंदिर में बाणभट्ट को बलि होने से बचाने के सम्मोहन के वशीभूत होकर निपुणिका ने जो भयानक नृत्य किया था, उससे वह बहुत दुर्बल और मतिभ्रमित हो गई थी। अभी तक उसकी दुर्बलता का परिहार नहीं हो पाया था। बाण को उसकी इस दुर्बलता से बड़ी चिंता हो रही थी। जिन दिनों निपुणिका उसके साथ नाट्य-मंडली में थी और उसके प्रति-स्नेह रखती थी, आज बाणभट्ट को बार-बार उन दिनों की याद आ रही थी। निपुणिका के प्रति उसका स्नेह उमड़ आया किंतु भट्टिनी भी अपने हृदय के एक कोने से उसे पुकार रही थी।

अभी वह इसी चिंता में विचारमग्न था कि भट्टिनी उसके निकट आ गई और कहने लगी कि यहीं पर कहीं पास ही सौरभह्रद नामक एक सरोवर है जिसके निकट ही महादेव का मंदिर स्थित है उसने बताया कि चूँकि निपुणिका सम्मोहन ग्रस्त है और कहते हैं कि उस मंदिर में महादेव के दर्शन करने पर सम्मोहन की बाधाएँ दूर हो जाती हैं। अत: उचित होगा कि निपुणिका को लेकर वहाँ भगवान महादेव के दर्शन कर लें। बाणभट्ट को भट्टिनी का यह प्रस्ताव ठीक लगा और वे तीनों उस मंदिर में पहुँच गए। सचमुच भगवान महादेव के दर्शन करते ही निपुणिका के अशांत चित्त को कुछ शांति मिली। उसे बाणभट्ट की आँखों में अपने प्रति जो अनुराग की भावना दिखाई दी, उसे देखकर वह कृतकृत हो उठी और भाव-विह्वल होकर उसने इसी में अपने जीवन की सम्पूर्ण सार्थकता मान ली। प्रेमाधिक्य के कारण निपुणिका का मुख कमल की भांति खिल उठा।

वे तीनों काफी देर तक वहाँ रहे और जब संध्या समय लौटकर भद्रेश्वर दुर्ग में आए तो उन्हें कुमार कृष्णवर्द्धन का भेजा हुआ एक पत्र मिला। पत्र बाणभट्ट को प्रेषित किया गया था। पत्र में लिखा हुआ था कि जिस शर्त पर भी भट्टिनी आना चाहें उसी शर्त पर ले आओ, और आर्यावर्त पर प्रत्यन्त शत्रु आ रहे हैं, जिनकी गति को केवल आमीर सेना ही रोक सकती है। पत्र में कुमार ने स्पष्ट रूप से यह भी लिखा था कि यदि आमीरराज सामंत बनने को प्रस्तुत न हो तो उन्हें मित्र राजा के रूप में निमंत्रित किया जा सकता है। राजकुमारी के मिलने का समाचार देवपुत्र तुवरमिलिंद को भेज दिया गया है और आचार्य भर्वुपाद उन्हें लेने स्वयं आ रहे हैं। पत्र के अंत में अत्यंत आवश्यक कहकर यह और लिख दिया गया था कि बाण अपने बड़े भाई उड्डुपति को, जो इन दिनों काशी के मीमांसकों के श्रेष्ठ समझे जाते हैं, उन्हें भी अवश्य साथ लेते आयें। बाणभट्ट ने पूरा पत्र पढ़ लिया किंतु उसकी समझ में यह नहीं आ रहा था कि पत्र में जो उद्गार व्यक्त किए गए हैं, उनसे कुमार की स्वीकारोक्ति झलकती है या इसमें भी कान्यकुब्ज नरेश की कोई कूटनीतिक चाल छिपी हुई है।

भट्टिनी को जब बाणभट्ट से सारी स्थिति का ज्ञान हुआ तो वह यह सोचकर अगले ही दिन थानेश्वर को प्रस्थान करने को तत्पर हो गई क्योंकि उसे भय था कि यदि उसने विलंब किया तो आचार्य भर्वुपाद स्वयं उसे लेने आ जाएँगे। आचार्य की आयु लगभग अस्सी वर्ष की थी और उन्हें कष्ट देना भट्टिनी को उचित नहीं जान पड़ा किंतु यदि थानेश्वर में उन्हें वे लोग न मिले तो भट्टिनी को संदेह था कि वे यहीं आ पहुँचेंगे। इस प्रकार उन्होंने अविलंब थानेश्वर को प्रस्थान करने का निश्चय कर लिया।

आमीर सामंत लोरिकदेव के दस हजार सैनिकों की सुरक्षा में बाण, निपुणिका और भट्टिनी ने थानेश्वर की ओर प्रस्थान किया। थानेश्वर नगर से कोस भर पहले ही उन्होंने खेमे गाड़ दिए और वहाँ पर भट्टिनी का एकंधागार सज्जित हो गया। कुमार कृष्णवर्द्धन को ज्यों ही उनके आगमन की सूचना मिली तो वे तुरंत उनकी अगवानी को आ पहुँचे। कुमार ने भट्टिनी को बताया कि छोटे राजकुल के अंतःपुर से जब वे मुक्त हुई थीं तो उनकी देखरेख करने वाले आर्य वाभ्रव्य को उन्होंने राजकोप से बचा लिया था और इस समय वह उन्हीं के राजमहल में कुशल से हैं। इतना ही नहीं, कुमार ने यह भी बतलाया कि छोटे राजकुल के चरित्र का ज्ञान होते ही उसकी सारी संपत्ति छीन ली गई और भट्टिनी जैसा चाहेगी वैसा दंड उस धृष्ट राजकुमार को दिया जाएगा।

नोट्स कुमार की सहृदयता, मधुर संभाषण एवं उच्च चरित्र ने भट्टिनी को तुरंत ही प्रभावित कर दिया। भाई-बहन का यह अपूर्व मिलन बड़ा ही हृदयकारी था। वे दोनों ऐसे मिले जैसे युग-युगों से बिछुड़े सगे भाई-बहन हों।

काफी देर तक भाई-बहन में वार्तालाप होता रहा और फिर कुमार ने जाने की आज्ञा चाही। ज्यों ही कुमार बाहर निकले तभी बाहर से भैरवियों का गायन सुनाई दिया। भट्टिनी और बाणभट्ट भी उनका गायन सुनने बाहर निकल आए। ये भैरवियाँ महामाया की शिष्या थीं और महामाया का यह संदेश जन-जन तक गाकर पहुँचा रही थीं कि जवानों, जागो, देश पर प्रत्यंत शत्रुओं का आक्रमण होने ही वाला है। संकट की इस घड़ी में राजपुत्रों एवं राजपुरुषों की ओर टकटकी मत लगाओ, वे अपना सुख भोग छोड़कर तुम्हारी रक्षा नहीं कर पाएंगे। अपनी रक्षा का भार किसी दूसरे के कंधों पर छोड़ना बुद्धिमानी नहीं है। इसीलिए वीरो, स्वयं उठो और हाथों में तलवार लेकर प्रत्यन्त शत्रुओं को समूल उखाड़ फेंकने के लिए तैयार हो जाओ। अपने रक्त के अणु-अणु को भी बहाकर देश की रक्षा में जुट जाओ। वास्तव में महामाया भैरवी देश-सेवा का व्रत ले चुकी थीं। इसीलिए घूम-घूमकर देश-रक्षा हेतु जन-चेतना जाग्रत करने में लगी हुई थीं। महामाया के इस महान और दुष्कर कृत्य को देखकर बाणभट्ट को विश्वास हो गया कि अब देश शीघ्र ही संकट से मुक्ति पा लेगा। जिस देश की रक्षा का उत्तरदायित्व महामाया जैसी स्त्रियाँ और नवयुवक ले रहे हों, उस पर सकंट आ भी कैसे सकता है? अब कोई शत्रु आर्यावर्त का बाल-बाँका भी नहीं कर पाएगा।

इसी प्रसंग में बाण जब भट्टिनी से यह पूछता है कि ऐसी क्या बात है जिसके कारण देश में अशांति पैदा हो जाती है? क्या इस राष्ट्रीय अशांति का परिहार नहीं किया जा सकता? क्या देश को अशांति रूपी संकट से बचाया नहीं जा सकता? तब भट्टिनी बाणभट्ट के प्रश्नों का उत्तर देते हुए कहती है—"एक जाति दूसरी जाति को म्लेच्छ समझती है, एक मनुष्य दूसरे मनुष्य को नीच समझता है, इससे बढ़कर अशांति का कारण और क्या हो सकता है? और इस अशांति को दूर करने का एकमात्र उपाय है कवि! वह कवि ही है जो लोभ, मोह और रोष में फँसे विभिन्न राष्ट्रों में रागात्मक संबंध स्थापित करके भेद को मिटा सकता है।" इसी प्रसंग में भट्टिनी बाणभट्ट को काव्य सर्जना के लिए प्रेरित करते हुए उसे वर्तमान युग का दूसरा कालिदास कहकर सम्बोधित करती है और कहती है कि यदि वह चाहे तो अपने काव्य द्वारा जागतिक अशांति को दूर कर संपूर्ण सृष्टि में शांति स्थापित कर सकता है। इस कार्य के लिए वह बाण को प्रेरित ही नहीं करती, उससे प्रार्थना भी करती है।

बाणभट्ट चिंतन-मनन कर रहा होता है कि तभी उसका मित्र और राजकवि घावक उससे मिलने चला जाता है। घावक

बड़ा विनोदी स्वभाव का व्यक्ति था और हर बात को हास्य में ही कहने की उसकी आदत थी। बाणभट्ट से विदा लेते समय वह कहता है–"कान्यकुब्ज में किसी पर विश्वास न करना, सब तुम्हें कतरना ही चाहेंगे। और वह जो काशी वाले मीमांसक को ले आ रहे हो, उसे भी समझा देना कि बेकार जहाँ-तहाँ भिड़ता न फिरे।" घावक से ही बातों-बातों में बाण को ज्ञात होता है कि महाराज हर्षवर्द्धन ने 'रत्नावली' शीर्षक से एक नाटिका भी लिखी है और उस नाटिका की विशेषता यह है कि बौद्ध मतावलंबी होते हुए भी महाराज ने उसमें महात्मा बुद्ध का स्तुति गायन न करके शिव और पार्वती की वंदना की है।

घावक के जाने के बाद बाणभट्ट यह सोचने लगा कि क्यों न उस नाटिका को मंचस्थ किया जाए। तभी निपुणिका उसके पास आती है और वह भी यही बताती है कि महाराज के स्वागत में एक उत्सव मनाना चाहती है और उनकी इच्छा है कि उस उत्सव में बाणभट्ट और निपुणिका 'रत्नावली' नाटिका का अभिनय करें। बाणभट्ट सहर्ष तैयार हो जाता है और नाटिका मंचन की तैयारी करने लगता है।

भट्टिनी चाहती थी कि किसी प्रकार एक बार वह अपने पुराने कंचुकी आर्य वाभ्रव्य से मिल ले। कुमार ने उसकी इच्छा पूरी कर दी। वाभ्रव्य अब काफी वृद्ध हो चले थे। उन्होंने बताया कि जीवन में अपने उत्तरदायित्व का कुशलतापूर्वक निर्वाह करने के बावजूद उनसे असावधानी हो ही गई थी किंतु वे दोनों असावधानियाँ कालांतर में मंगलकारी ही सिद्ध हुईं। इन असावधानियों में पहली तो थी भट्टिनी का अंत:पुर से निकल भागना, और दूसरी घटना बीस वर्ष पूर्व घटी थी जब वाभ्रव्य ने महारानी महामाया को स्वयं सहयोग देकर महल से निकल जाने दिया था। वास्तव में महाराज गुरु वर्मा महारानी को पूर्ण स्नेह नहीं दे पा रहे थे और इसका कारण स्वयं महामाया थी। महामाया का वाग्दान महाराज के विवाह से पूर्व ही हो चुका था। उसका पूर्वपति ही अधोर भैरव था, कालांतर में महामाया भी भैरवी बनकर महल से निकल पड़ी और अघोरभैरव की शिष्या बन गई। महामाया एवं अघोरभैरव के विषय में आर्य वाभ्रव्य से यह वृत्तांत सुनकर भट्टिनी एंव बाणभट्ट दोनों आश्चर्यचकित रह गए।

स्व-मूल्यांकन (Self-Assessment)

निम्नलिखित कथनों में सत्य अथवा असत्य की पहचान करें

(State Whether the following statements are True or False) :

7. घावक बाणभट्ट का मित्र और राजकवि था।
8. 'रत्नावली' नाटिका में महात्मा बुद्ध का स्तुति गान किया गया है।
9. निपुणिका ने बाणभट्ट को बलि से बचाने के लिए भयानक नृत्य किया।

महाराज के स्वागतार्थ भट्टिनी की ओर से उत्सव की तैयारी धूमधाम से होने लगी। बाणभट्ट ने श्री हर्ष से 'रत्नावली' नाटिका मंगवाई। नगर की प्रसिद्ध नगरवधू चारुस्मिता रत्नावली की भूमिका करने को तैयार हो गई। बाणभट्ट राजा बना और निपुणिका ने वासवदत्ता की भूमिका निभाई। नाटिका का मंचन बड़ा कलात्मक, मर्मस्पर्शी एवं सफल था। निपुणिका वासवदत्ता का चरित्र इतनी कुशलता से निभा रही थी कि अंतिम दृश्य में जब उसने रत्नावली (चारुस्मिता) का हाथ राजा (बाणभट्ट) के हाथ में थमाया तो उसकी प्रेमविह्वलता भी जैसे अपने चरम पर पहुँच गई। अभिनय, अभिनय नहीं रहा, मानो वास्तविकता बन गया। निपुणिका आपाद-मस्तक सिहर उठी और पछाड़ खाकर गिर पड़ी। लोग उसे मात्र कुशल अभिनय समझ रहे थे किंतु निपुणिका का प्रणांत हो चुका था।

बाणभट्ट और भट्टिनी को निपुणिका का वियोग संतप्त करता रहा। महामाया की प्रेरणा से लाखों युवक देश रक्षा को कटिबद्ध हो चुके थे। आचार्य भर्वुपाद ने बाणभट्ट को आदेश दिया कि वह पुरुषपुर जाकर वहाँ की व्यवस्था संभाले। बाण की इच्छा भट्टिनी को भी साथ ले चलने की थी किंतु आचार्य ने तब तक भट्टिनी को थानेश्वर में रुकने को कहा जब तक कि पुरुषपुर की व्यवस्था ठीक न हो जाए। विवशत: बाण को अकेले ही पुरुषपुर को प्रस्थान करना पड़ा। भट्टिनी ने उससे जल्दी लौटने का अनुरोध किया किंतु बाणभट्ट को ऐसा प्रतीत हो रहा था, जैसे भट्टिनी और उसका मिलन अब संभव न हो पाएगा, जैसे वह सदैव के लिए भट्टिनी से विदा ले रहा हो।

5.4 सारांश (Summary)

- हिंदी-साहित्य में अन्वेषण की अनेक नवीन दिशाओं की ओर संकेत करके द्विवेदी जी ने उसकी परिधि का विस्तार किया है और साहित्य के इतिहास-लेखन के आदर्श को आगे बढ़ाया है।
- पं० हजारी प्रसाद द्विवेदी ने साहित्य की व्याख्या में सर्वाधिक पृष्ठ खर्च किए हैं। उनके अध्ययन की सबसे बड़ी विशेषता यह है कि उन्होंने साहित्य को मनुष्य-सत्य के संदर्भ में देखा है।
- बाणभट्ट ने सोचा कि वह ब्राह्मण है, क्यों न वह भी कुमार को आशीर्वाद एवं बधाई दे आए। वह यह भी सोचने लगा कि अब वह कुलीन का बाना पहनेगा और अपने वंश का कलंक कदापि नहीं बनेगा।
- थानेश्वर का शासन-सूत्र यद्यपि महाराज हर्षवर्द्धन के हाथ में था, किंतु वास्तव में इसके उत्तराधिकारी मौरवरि वंश के कान्यकुब्ज थे।
- बाणभट्ट ने कुमार की भेजी हुई शिविकाओं पर चंद्रदीधिति और निपुणिका को नदी तट की ओर भेज दिया। उसी समय जोगिया वस्त्र पहने एक भैरवी ने वहाँ प्रवेश किया और साधना गृह को भ्रष्ट करने पर उसे प्रताड़ित किया।
- निपुणिका और भट्टिनी नदी तट पर बाण की व्यग्रता से प्रतीक्षा कर रही थी। बाण ने निपुणिका को सारा वृत्तांत कह सुनाया और कहा कि अवधूत ने कहा है कि त्रिपुर सुंदरी ने जिस रूप में तुझे लुभाया है उसे स्वीकार कर।
- पास ही उसे एक घना साल का पेड़ मिल गया जो संभवत: ग्रामीणों का पूजा स्थल था। बाण को लगा कि निकट में ही कोई गाँव अवश्य होगा। अत: वह भट्टिनी को लेकर वहीं आराम करने के विचार में बैठ गया।
- रातभर बाणभट्ट को नींद न आई। वह भट्टिनी के विषय में ही सोचता रहा। उसने सोचा प्रात: निपुणिका से इस संबंध में बात करेगा। प्रात: निपुणिका स्वयं उसके पास चली आई और पूछा कि रात में उसने भट्टिनी से कुछ अनुचित तो नहीं कहा, तो बाण ने उसे पूरी बात बता दी।
- प्रात:काल उठकर बाण कुमार से मिला। कुमार ने उसे बधाई दी और आतिथ्य-सत्कार के बाद कहा कि जैसे भी हो वह भट्टिनी को थानेश्वर ले आए। बाण अगले दिन राजपंडित के रूप में 'दरबार' में गया और महाराज को आशीर्वाद दिया तथा उनकी प्रशस्ति में एक आर्या सुनाई।
- कराला देवी के मंदिर में बाणभट्ट को बलि होने से बचाने के सम्मोहन के वशीभूत होकर निपुणिका ने जो भयानक नृत्य किया था, उससे वह बहुत दुर्बल और मतिभ्रमित हो गई थी। अभी तक उसकी दुर्बलता का परिहार नहीं हो पाया था।
- भट्टिनी को जब बाणभट्ट से सारी स्थिति का ज्ञान हुआ तो वह यह सोचकर अगले ही दिन थानेश्वर को प्रस्थान करने को तत्पर हो गई क्योंकि उसे भय था कि यदि उसने विलंब किया तो आचार्य भर्वुपाद स्वयं उसे लेने आ जाएँगे।
- निपुणिका वासवदत्ता का चरित्र इतनी कुशलता से निभा रही थी कि अंतिम दृश्य में जब उसने रत्नावली (चारुस्मिता) का हाथ राजा (बाणभट्ट) के हाथ में थमाया तो उसकी प्रेमविह्वलता भी जैसे अपने चरम पर पहुँच गई। अभिनय, अभिनय नहीं रहा, मानो वास्तविकता बन गया। निपुणिका आपाद-मस्तक सिहर उठी और पछाड़ खाकर गिर पड़ी। लोग उसे मात्र कुशल अभिनय समझ रहे थे किंतु निपुणिका का प्रणांत हो चुका था।

5.5 शब्दकोश (Keywords)

1. अन्वेषक – खोज करने वाला
2. प्रख्यात – मशहूर, प्रसिद्ध
3. देहावसान – मृत्यु
4. क्षोभ – दुख

नोट

5. विश्रामालय – आराम करने का स्थान
6. बंदीगृह – जेल
7. अविलंब – बिना देर किए।

5.6 अभ्यास प्रश्न (Review Questions)

1. आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी जी की लेखन कुशलता पर एक लेख लिखिए।
2. पं. हजारी प्रसाद द्विवेदी जी के साहित्य से संबंधित मान्यताओं पर प्रकाश डालिए।
3. बाणभट्ट को जनपदवासी 'बंड' के नाम से क्यों सम्बोधित करते थे?
4. भट्टिनी ने किस प्रकार सम्मोहन से ग्रस्त निपुणिका को छुटकारा दिलाया?
5. कुमार कृष्णवर्द्धन एवं भट्टिनी के अपूर्व मिलन का वर्णन कीजिए?

उत्तर : स्व-मूल्यांकन (Answers : Self-Assessment)

1. गद्यकार
2. मुकुंद द्विवेदी
3. चेतना
4. (ग)
5. (क)
6. (ख)
7. सत्य
8. असत्य
9. सत्य।

5.7 सन्दर्भ पुस्तकें (Further Readings)

पुस्तकें बाणभट्ट की आत्मकथा–हजारी प्रसाद द्विवेदी (2008), राजकमल प्रकाशन (प्रा.) लि., नई दिल्ली।

नोट

इकाई–6: 'बाणभट्ट की आत्मकथा' : पात्रों का चरित्र-चित्रण

अनुक्रमणिका (Contents)

उद्देश्य (Objectives)
प्रस्तावना (Introduction)
6.1 'बाणभट्ट की आत्मकथा' का कलात्मक सौन्दर्य
6.2 'बाणभट्ट की आत्मकथा' : प्रमुख चरित्र (बाणभट्ट)
6.3 भट्टिनी का चरित्र-चित्रण
6.4 निपुणिका का चरित्र-चित्रण
6.5 सारांश (Summary)
6.6 शब्दकोश (Keywords)
6.7 अभ्यास प्रश्न (Review Questions)
6.8 सन्दर्भ पुस्तकें (Further Readings)

उद्देश्य (Objectives)

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् विद्यार्थी योग्य होंगे–

- बाणभट्ट की आत्मकथा के कलात्मक सौंदर्य को जानने में;
- बाणभट्ट की आत्मकथा की भाषा के रूप को समझने में;
- बाणभट्ट की आत्मकथा के प्रमुख पात्रों के चरित्र का वर्णन करने में।

प्रस्तावना (Introduction)

आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी संस्कृत के प्रकांड विद्वान थे। अत: उनकी भाषा में संस्कृत की तत्सम शब्दावली का प्रचुरता से प्रयोग मिलता है। यही नहीं उसमें सामासिक पदावली की प्रधानता है, वाक्य गठन प्राय: मिश्रित एवं संयुक्त हैं। लंबी-लंबी वाक्यावली के कारण भाषा निश्चित रूप से सामान्य पाठक वर्ग के लिए दुरूह एवं कहीं-कहीं दुर्बोध भी हो गई है। वस्तुत: 'बाणभट्ट की आत्मकथा' में जिस युग एवं परिवेश को उभारा गया है, उसमें इस प्रकार की भाषा का प्रयोग अनुचित नहीं जान पड़ता।

6.1 'बाणभट्ट की आत्मकथा' का कलात्मक सौंदर्य

आचार्य द्विवेदी ने जहाँ-जहाँ दार्शनिक विवेचन किया है वहाँ विषय के अनुरूप भाषा परिमार्जित, संस्कृतनिष्ठ एवं पारिभाषिक शब्दावली से युक्त है। इस संबंध में **डॉ. बी.एल. आच्छा** का कथन द्रष्टव्य है, **"सामाजिक-सांस्कृतिक, धार्मिक, राजनीतिक परिवेश तथा उस काल की काव्यभाषा के रंगो को उभारने के लिए युग संबंद्ध**

नोट

शब्दावली का नियोजन किया गया है। काल या कथा के संदर्भ के अनुसार शब्दावली भी संस्कृतनिष्ठ या संस्कृतयुक्त होती चली गई है।"

बाणभट्ट की आत्मकथा की भाषा में विशेषणों की भरमार है, लंबे-लंबे पदबंधों के कारण भाषा में जो शैथिल्य आ जाता है, उस दोष से 'बाणभट्ट की आत्मकथा' को रहित नहीं कहा जा सकता। भट्टिनी को जब वे **"विषम समर विजयी वाल्हीक विमर्दन प्रत्यंत बाडव देवपुत्र तुवरमिलिंद की कन्या"** कहकर संबोधित करते हैं तब सामान्य पाठक को अर्थ समझने में कठिनाई होती है।

कहीं-कहीं द्विवेदी जी ऐसे शब्दों का प्रयोग करते हैं जो सामान्य पाठक के ही नहीं अपितु जानकार पाठकों के लिए भी पहली ही बार देखने-सुनने में आए हैं। यथा–**स्थंडिल कुसुमास्तरण, प्रज्ञप्ति, पुष्पस्तबक, अयत्न परिपुष्ट भांडरीक** आदि।

'बाणभट्ट' ने जिस कादंबरी की रचना की है उसमें भी भाषा का यही रूप दिखाई देता है। संभवत: द्विवेदी जी ने बाणभट्ट की आत्मकथा में भाषा-शैली का रूप कादंबरी के अनुसार ही रखा है जहाँ लंबे-लंबे वाक्यों के कारण अर्थबोध में कठिनाई आ गई है।

बाणभट्ट की आत्मकथा की भाषा वस्तुत: उन पाठकों के लिए तो दुरूह ही है जो संस्कृत से परिचित नहीं है। प्रकृति वर्णन जहाँ-जहाँ भी किया गया है वहाँ विशेषणों की झड़ी सी लग गई है, किंतु किंचित धैर्य से सामासिक भाषा को पढ़ने पर जब अर्थ खुलता है तो पाठक को अभूतपूर्व आनंद प्राप्त होता है। निष्कर्ष रूप में यह कहना युक्तिसंगत होगा कि बाणभट्ट की आत्मकथा में द्विवेदी जी ने अपने शब्दशिल्पी होने का परिचय दिया है। 'बाणभट्ट की आत्मकथा' में भाषा को जो स्वरूप है उसे स्पष्ट करने के लिए एक उदाहरण प्रस्तुत है, **"क्रमश: पश्चिम दिग्वधू के कानों को सुशोभित करने वाले रक्तोत्पल के समान मनोहर सूर्यमंडल अस्त हो गया, आकाशरूप सरोवर में संध्यारूप पद्‌मिनी प्रकाशित हो उठी, कृष्णागुरु के पंक से निर्मित पत्रलेखा की भांति तिमिररेखा दिङ्‌मुखों में परिव्याप्त हो उठी और उससे संध्या की लालिमा इस प्रकार आच्छादित हो गई, मानो भ्रमर भूषित नीलोत्पलों ने रक्तपद्‌म के सरोवर को आच्छन्न कर लिया हो। धीरे-धीरे निशाविलासिनी के अवतंस पल्लव की भांति शोभमान संध्याराग विलुप्त हो गया। पारावतगण भवनवलभियों में लौटने लगे, मानो अट्टालिका स्थित भवनलक्ष्मी ने नैशविहार के लिए कानों में नील कमल धारण कर लिया हो।"**

'बाणभट्ट की आत्मकथा' की भाषा में आलंकारिकता की प्रचुरता है। उपमा, रूपक एवं उत्प्रेक्षा के सुंदर प्रयोग इसमें किए गए हैं। कहीं-कहीं भाषा का स्वरूप पूरी तरह काव्यात्मक हो गया है। भाषा का स्वरूप पात्रों के अनुरूप बदलता है। महामाया की भाषा एक प्रकार की है तो 'निउनिया' की भाषा दूसरे प्रकार की है।

बाणभट्ट की आत्मकथा में भाषा के दो रूप दिखाई पड़ते हैं–

(1) सरल स्वाभाविक भाषा

(2) अलंकृत, काव्यात्मक क्लिष्ट भाषा।

इनमें से भाषा का पहला रूप बहुत कम स्थलों पर है। बाण और निउनिया के संवादों में इस भाषा को देखा जा सकता है। यथा–

"कौन करता भला"

"पुजारी"

"पुजारी? पर तू तो पुजारी से डरी हुई थी निउनिया।"

"पुजारी जैसे मूर्ख रसिकों से डरती तो निउनिया आज से छ: वर्ष पहले ही मर गई होती भट्टा।"

बाणभट्ट की आत्मकथा का संबंध संस्कृत के सुप्रसिद्ध कवि बाणभट्ट से है। अत: उसमें संस्कृतनिष्ठ, काव्यात्मक, अलंकृत भाषा का होना स्वाभाविक ही है। इसके अतिरिक्त द्विवेदी जी ने तत्कालीन युग एवं परिवेश को उभारने के

लिए भी भाषा को विशिष्ट रूप प्रदान किया है। दार्शनिक विवेचन एवं प्रकृति निरूपण में भी भाषा प्राय: संस्कृत तत्सम शब्दावली से युक्त हो गई है।

द्विवेदी जी सामासिक पदावली से युक्त वाक्य रचना करते हैं। वाक्य लंबे-लंबे हैं, संस्कृत के उद्धरण, सूक्तियाँ, अलंकार एवं मुहावरों का प्रयोग भी उनकी भाषा में है।

बाणभट्ट की आत्मकथा का शिल्प विधान भी अन्य उपन्यासों से अलग है। संपूर्ण उपन्यास 20 उच्छ्वासों में विभक्त है तथा प्रारंभ में लिखा गया है, **"अथ बाणभट्ट की आत्मकथा लिख्यते"।** संस्कृत साहित्य में आत्मकथा जैसी कोई विधा नहीं है। अत: उपसंहार में 'कैथराइन दीदी' को क्रोध करते दिखाया गया है कि द्विवेदी जी ने इसे 'आटोबायोग्राफी' क्यों कहा है?

आत्मकथा में अतीत की स्मृतियाँ होती हैं। इसमें भी 'बाणभट्ट' अपने अतीत जीवन को स्मृत करता है। अत: पूर्वदीप्ति पद्धति (फ्लैश बैक) का उपयोग इस उपन्यास में किया गया है। बाणभट्ट अपने कुल का परिचय देता है और यह भी बताता है कि उसे 'बण्ड' या बाण क्यों कहा जाने लगा। उपन्यास में अनेक स्थलों पर विवरणात्मक, वर्णनात्मक एवं नाटकीय शैली का भी प्रयोग किया गया है। कथानक में ऐसी घटनाओं का समावेश किया गया है जो पाठक की जिज्ञासा बढ़ाने वाली है तथा उपन्यास की रोचकता में वृद्धि करती है।

मनोविश्लेषण एवं आत्मविश्लेषण की पद्धति द्वारा पात्रों का चरित्रांकन इस उपन्यास में द्विवेदी जी ने किया है। बाणभट्ट वैचारिक द्वंद्व से बार-बार गुजरता है और तब कहीं जाकर अपना रास्ता खोज पाता है। इस उपन्यास के प्रारंभ में जो 'कथामुख' दिया गया है उसमें आस्ट्रिया निवासिनी कैथराइन दीदी का उल्लेख है। उन्हें बाणभट्ट की आत्मकथा के कुछ अंश मिले जिनका हिंदी अनुवाद करके उन्होंने व्योमकेश शास्त्री को दे दिया।

नोट्स व्योमकेश शास्त्री स्वयं हजारी प्रसाद जी ही हैं। उन्होंने जब बाणभट्ट की कृतियों में दिए गए विवरणों से मिलान करते हुए इसकी परीक्षा की तो उन्हें इसमें सत्य प्रतीत हुआ। बाणभट्ट की अधिकांश रचनाएँ अपूर्ण हैं, इसीलिए इस उपन्यास को भी अपूर्ण ही छोड़ा गया है। उपसंहार में कैथराइन दीदी का एक पत्र है। इस सबके द्वारा यह विश्वास दिलाने की चेष्टा की गई है कि यह वास्तव में बाणभट्ट की आपबीती कथा है और पाठक एक सत्यकथा पढ़ रहे हैं। शैली-शिल्प की दृष्टि से भी इसे हजारी प्रसाद द्विवेदी का अभिनव प्रयोग माना जा सकता है।

स्व-मूल्यांकन (Self-Assessment)

रिक्त स्थानों की पूर्ति करें (Fill in the blanks) :

1. 'बाणभट्ट की आत्मकथा' की भाषा उन पाठकों के लिए कठिन है जो .... से परिचित नहीं हैं।
2. इस उपन्यास में द्विवेदी जी ने मनोविश्लेषण एवं .... की पद्धति द्वारा पात्रों का चरित्रांकन किया है।
3. 'बाणभट्ट की आत्मकथा' की भाषा में .... की प्रचुरता है।

6.2 'बाणभट्ट की आत्मकथा' : प्रमुख चरित्र (बाणभट्ट)

बाणभट्ट की आत्मकथा का केंद्रीय चरित्र 'बाणभट्ट' ही है। वह संपूर्ण उपन्यास का केंद्रबिंदु है, प्रधान पात्र है तथा उपन्यास के नायक पद का अधिकारी है। बाण का वास्तविक नाम 'दक्ष' था तथा वह प्रसिद्ध पंडित वात्स्यायन वंशी जयंत भट्ट का पौत्र था। अल्पायु में ही वह मातृसुख से वंचित हो गया और चौदह वर्ष की अवस्था में पितृस्नेह से भी वंचित हो गया।

बाणभट्ट अस्थिर चित्त व्यक्ति था, अत: किसी कार्य की योजना पहले से नहीं बनाता था। वस्तुत: किसी बंधन में बंधना उसे कभी अच्छा नहीं लगा किंतु जब भी कोई साहस का काम उसे करना होता, वह पूरी योग्यता एवं दायित्व से उस कार्य को पूर्ण करता। भट्टिनी की मुक्ति एवं रक्षा के दायित्व का निर्वहन वह बड़ी कुशलता से करता है।

बाण कवि हृदय होने से सौंदर्योपासक था। उसका सौंदर्य बोध अत्यंत गंभीर एवं गहन था। निपुणिका की आँखें और अँगुलियाँ उसे बहुत आकर्षक लगती थीं। वह इस विषय में अपने विचार इन शब्दों में व्यक्त करता है, **"निपुणिका बहुत अधिक सुंदर नहीं थी। उसका रंग अवश्य शेफालिका के कुसुमनाल के रंग से मिलता था परंतु उसकी सबसे बड़ी चारुता संपत्ति उसकी आँखें और अंगुलियाँ ही थीं। अंगुलियों को मैं बहुत महत्त्वपूर्ण सौंदर्योपादान समझता हूँ। नटी की प्रणामांजलि और पताक मुद्राओं को सफल बनाने में पतली छरहरी अंगुलियाँ अद्‌भुत प्रभाव डालती हैं।"**

बाणभट्ट स्त्री जाति के प्रति सम्मान का भाव रखता है। वह नारी सौंदर्य का प्रशंसक तो है किंतु उसकी दृष्टि में कलुष रंचमात्र नहीं है। भट्टिनी के सौंदर्य से अभिभूत बाणभट्ट को उसके सौंदर्य में परमात्मा के सौंदर्य की झलक दिखाई देती है, **"भट्टिनी के चारों ओर एक अनुभाव राशि लहरा रही थी। मैं थोड़ी देर तक उस शोभा को देखता रहा। मन ही मन मैंने सोचा कि कैसा आश्चर्य है? विधाता का कैसा रूप विधान है?"**

सौंदर्य प्रेमी बाण नारी की पवित्रता, गरिमा को विशेष महत्त्व देता है। नारी शरीर को देव मंदिर की भांति पवित्र समझने वाला बाण इस विषय में अपने विचार व्यक्त करता हुआ कहता है, **"मैं नारी सौंदर्य को संसार की सबसे अधिक प्रभावोत्पादिनी शक्ति मानता रहा हूँ। ....नारी सौंदर्य पूज्य है, वह देव प्रतिमा है।"**

निपुणिका और भट्टिनी दोनों ही बाण से प्रेम करती हैं। निपुणिका की दृष्टि में तो बाण देवतुल्य है। वह अपनी भावनाओं को व्यक्त करती हुई बाण से कहती है, **"देखो भट्ट, तुम नहीं जानते कि तुमने मेरे इस पाप पंकिल शरीर में कैसा प्रफुल्ल शतदल खिला रखा है। तुम मेरे देवता हो, मैं तुम्हारा नाम जपने वाली अधम नारी हूँ।"**

बाणभट्ट अनेक विधाओं एवं कलाओं में पारंगत तो है ही, साथ ही वह सहृदय, उदार, धैर्यवान, कष्टसहिष्णु एवं अत्यंत मेधावी भी है। निराहार रहने की साधना में वह सिद्ध है। वह वीर, साहसी एवं प्रणपालक भी है। न तो वह मिथ्याचारी है और न ही अनर्गल वार्तालाप करता है। उसका विनोदी स्वभाव, स्वाभिमानी वृत्ति उसे चरित्र की ऊँचाइयों पर अवस्थित करती हैं। निश्चय ही बाण के चरित्र के विषय में जो प्रवाद संस्कृत साहित्य में परंपरा से व्याप्त रहा है, उसका खंडन कर बाण को एक सच्चरित्र एवं उदार मानव के रूप में प्रतिष्ठित करने में द्विवेदी जी को सफलता मिली है।

बाण की प्रशंसा निपुणिका एवं भट्टिनी दोनों करती हैं। निपुणिका से तो बाण मित्रवत व्यवहार करता है किंतु भट्टिनी के प्रति वह भक्तिभाव रखता है। उन दोनों के प्रति बाण के मन में जो भावगत अंतर है उसे स्पष्ट करते हुए वह कहता है, **"निपुणिका से मैं खुलकर बातें कर सकता हूँ, भट्टिनी के सामने मुझमें एक प्रकार की मोहनकारी जड़िमा आ जाती है।"** वह भट्टिनी के रूप पर मुग्ध होकर उसे बस देखता ही रह जाता है किंतु उसकी दृष्टि में वासना का कलुष रंचमात्र भी नहीं है। बाण निपुणिका के सेवाभाव से प्रभावित है। भट्टिनी को पहली बार जब बाण ने देखा तो उसकी अतुलित रूपराशि को देखकर उसके मुख से ये शब्द निकल पड़े, **"इतनी पवित्र रूप राशि किस प्रकार इस कलुष धरित्री में संभव हुई।"** भट्टिनी भट्ट को अपना अभिभावक मानती है और उसका बहुत सम्मान करती है।

नोट्स बचपन से ही बाण आवारा, घुमक्कड़, अस्थिर चित्त था। नगर-नगर, जनपद-जनपद में मारा-मारा फिरता था इसीलिए उसे 'बंड' कहते थे। वह एक स्थान पर कभी टिक नहीं सका। यही नहीं उसने कभी नाट्य अभिनय को अपनी जीविका बनाया तो कभी कठपुतलियों के खेल को, कभी पुराण वाचन से कुछ उपार्जित किया तो कभी नट कर्म से लोगों का मनोरंजन किया।

नोट

समग्रत: यह कहा जा सकता है कि 'बाणभट्ट की आत्मकथा' में बाणभट्ट ही लेखक का प्रिय पात्र रहा है। उसकी पूरी सहानुभूति भी बाण को ही मिली है। बाण के चरित्र के विविध पक्षों को उजागर करने वाली घटनाओं को उपन्यासकार ने इसमें स्थान दिया है। उसकी उदात्त प्रवृत्तियाँ निश्चय ही पाठकों को प्रभावित करती हैं। नारी के प्रति उसकी दृष्टि निश्चय ही प्रशंसनीय है। निपुणिका तो यह स्वीकार भी करती है कि भट्ट के संपर्क में आने से ही वह अपने को हाड़-माँस की गठरी से कुछ अधिक समझने लगी। निश्चय ही बाणभट्ट के चरित्र को उदात्त मूल्यों से संपृक्त कर द्विवेदी जी ने उसके परंपरागत लांछित चरित्र को नए आयाम देकर उसका पवित्र प्राक्षालन कर दिया है।

स्व-मूल्यांकन (Self-Assessment)

बहुविकल्पीय प्रश्न (Multiple Choice Questions) :

4. देवपुत्र तुवरमिलिंद की अत्यंत रूपवती कन्या का क्या नाम है?

   (क) निपुणिका (ख) महामाया

   (ग) भट्टिनी (घ) सुचरिता।

5. बाणभट्ट किसके प्रति भक्तिभाव रखता है?

   (क) निपुणिका (ख) भट्टिनी

   (ग) सुचरिता (घ) इनमें से कोई नहीं।

6. भट्टिनी किसको आर्यावर्त का द्वितीय कालिदास कहती है?

   (क) बाणभट्ट (ख) कृष्णवर्द्धन

   (ग) हर्षवर्द्धन (घ) इनमें से कोई नहीं।

6.3 भट्टिनी का चरित्र-चित्रण

बाणभट्ट की आत्मकथा में यद्यपि कई नारी पात्र हैं, यथा—भट्टिनी, निपुणिका, महामाया, सुचरिता आदि तथापि इनमें सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण नारी पात्र भट्टिनी है। भट्टिनी देवपुत्र तुवरमिलिंद की अत्यंत रूपवती कन्या है। जिसका बलात् अपहरण कर लिया गया है। छोटा राजकुल से उसकी मुक्ति बाणभट्ट, निपुणिका एवं कुमार कृष्णवर्द्धन के सहयोग से ही संभव हो सकी।

भट्टिनी के सौंदर्य से हर कोई अभिभूत है। बाणभट्ट तो भट्टिनी को देखकर आश्चर्यचकित हो जाता है और उसके मुख से ये शब्द निकलते हैं—**"इतनी पवित्र रूप राशि किस प्रकार इस कलुष धरित्री में संभव हुई।"** भट्टिनी महावराह की आराधिका है। उसका व्यक्तित्व अप्रतिम सौंदर्य से मंडित है और स्वभाव शांत है। भट्ट को वह अपना अभिभावक मानती है और उसका बहुत सम्मान करती है। उसके आचरण में एक स्वाभाविक गंभीरता एवं औदात्य का समावेश है। वह संतुलित वाणी में अपना मंतव्य व्यक्त करती है। उसके हृदय में किसी के प्रति ईर्ष्या-द्वेष नहीं है। वंदिनी भट्टिनी कातर स्वर में महावराह से अपने उद्धार की प्रार्थना करती है। स्वभाव से गंभीर एवं वाणी से कोमल भट्टिनी नारी जाति का भूषण है। बाणभट्ट तो उसे साक्षात् देवी ही मानता है। वह कहता है—**"मैं अकिंचन हूँ, साधनहीन हूँ, पथभ्रांत हूँ। मेरे पास है ही क्या, जिससे तुम्हारी पूजा करूँ? तुम देवी हो, सौ बार प्रतिवाद करो, तो भी देवी हो—इस कलुष-पंकिल संसार-सागर की प्रफुल्ल पद्मिनी, इस धूलि धूसर वन भूमि की मालती लता।"**

उदाहरण—भट्टिनी को नगरहार से पुरुषपुर, पुरुषपुर से जालंधर और फिर न जाने कहाँ-कहाँ दस्युओं के साथ घूमना पड़ा और अंत में स्थाणीश्वर के छोटे राजकुल में वह लाई गई। दस्युओं के स्पर्श से उसका अहंभाव

नोट

एवं अभिमान चूर-चूर हो चुका था। अब वह अपने को देवपुत्र तुवरमिलिंद की पुत्री होने के कारण विशिष्ट नारी न मानकर एक सामान्य नारी मानने लगी है। परिस्थिति के अनुसार स्वयं को ढालने का यह एक अच्छा उदाहरण है।

भट्टिनी अपने को घर्षिता, अपमानिता, कलंकिनी स्त्री मानती है, किंतु बाणभट्ट उसे कलंकिनी नहीं मानता। वह उसे आश्वस्त करता हुआ कहता है–**"देवी, पावक को कभी कलंक स्पर्श नहीं करता, दीपशिखा को अंधकार की कालिमा नहीं लगती....जाह्नवी की वारिधारा को धरती का कलुष स्पर्श नहीं करता। देवी! स्यारों के स्पर्श से सिंह किशोरी कलुषित नहीं होती। असुरों के गृह में जाने से लक्ष्मी घर्षिता नहीं होती। चींटियों के स्पर्श से कामधेनु अपमानित नहीं होती। चरित्रहीनों के बीच वास करने से सरस्वती कलंकित नहीं होती।"**

बाण के इन आश्वासनकारी वचनों ने भट्टिनी का मुख प्रभातकालीन नवमल्लिका की भांति खिला दिया। वह बाणभट्ट की प्रशंसा करती हुई कहने लगी–**"तुम सच्चे कवि हो। मेरी बात गाँठ बाँध लो तुम इस आर्यावर्त के द्वितीय कालिदास हो।"**

महावराह की आराधना में लीन रहने वाली भट्टिनी भक्ति कातर स्वर में महावाराह की स्तुति करती है। भक्ति के इस संबल ने उसे संकल्प शक्ति एवं दृढ़ता प्रदान की है। अपने इन गुणों के कारण वह नारी जाति की भूषण बन गई है। बाणभट्ट भट्टिनी की सेवा करके अपने को धन्य समझता है–**"मैं बड़ा भागी हूँ जो इस महिमाशालिनी राजबाला की सेवा का अवसर पा सका।"** भट्टिनी के स्वभाव में मूल्यांकन एवं विश्लेषण की अपूर्व क्षमता है। बाणभट्ट ने उसके पाप बोध एवं अपराध बोध को दूर करते हुए उसके व्यक्तित्व का जो महिमामंडन किया उससे उसे बड़ी शांति मिली। अपने भावों का परिचय देती हुई वह कहती है–**"जिस दिन भट्ट ने मुझसे प्रथम वाक्य कहा था, उस दिन मेरा नवीन जन्म हुआ था। मैंने उस दिन अपनी सार्थकता को प्रथम बार अनुभव किया। उनकी कोमल मधुर वाणी में अद्‍भुत मिठास था।......मैंने प्रथम बार अनुभव किया कि मेरे भीतर एक देवता है जो आराधक के अभाव में मुरझाया हुआ छिपा बैठा है।"**

वह परिस्थितियों के अनुकूल स्वयं को ढाल लेने में कुशल है। उसके चरित्र में आत्मगौरव, भक्तिभावना, आराध्य में निष्ठा, हृदय की निष्कपटता और पवित्र भाव विद्यमान हैं। बाणभट्ट से वह मन ही मन प्रेम करती है, किंतु इस प्रेम को व्यक्त नहीं कर पाती। इसीलिए इसे द्विवेदी जी अदृप्त प्रेम कहते हैं।

भट्टिनी के चरित्रांकन के लिए द्विवेदी जी ने दोनों विधियों का उपयोग किया है। कहीं-कहीं वे प्रत्यक्ष विधि से उसके चारित्रिक गुणों को उजागर करते हैं तो कहीं परोक्ष विधि से उसके चरित्र पर प्रकाश डालते हैं। भट्टिनी स्वयं अपने बारे में अभिभाषण करती है वह भी उसके चरित्र का उद्‍घाटन करने वाला है। बाणभट्ट तो भट्टिनी से इतना अभिभूत है कि वह उसे पवित्र देवी एवं स्वयं को उनका सेवक ही मानता है। लोरिकदेव से वह स्पष्ट कहता है–**"मैं भट्टिनी का विनीत सेवक हूँ। उनकी आज्ञा थी कि मैं किसी को उनका यथार्थ परिचय न बताऊँ। मैंने कान्यकुब्ज नरेश को भी उनका कोई परिचय नहीं दिया। उन्हें कुमार कृष्णवर्द्धन से मालूम हुआ।"**

भट्टिनी का सौंदर्य अत्यंत आकर्षक एवं विस्मय विमुग्धकारी था। इस सौंदर्य का वर्णन बाणभट्ट इन शब्दों में करता है–**"उस समय उनकी शोभा देखते ही बनती थी। अत्यंत विस्तृत चिकुर राशि के भीतर वह आर्द्रार्द्र मुखमंडल शैवाल जाल से घिरे हुए सीकर सिक्त प्रफुल्ल शतदल के समान मनोहर लगता था, किंतु कातरता के कारण शिथिल बनी हुई भ्रूलताएँ मनोजन्मा देवता के भग्नचाप की भांति भीषण-मनोहर शोभा विस्तार कर रही थीं।"**

बाणभट्ट ने भट्टिनी की स्तुतियाँ अनेक स्थलों पर की हैं। भट्टिनी बाण से यह आग्रह करती है कि वह अपने काव्य से मानव की वृत्तियों को उच्चतर कार्य में नियोजित करे–**"भट्ट मैं तुम्हारी काव्य-संपद पाकर शक्ति पा जाऊँगी। तुम मेरी विनती स्वीकार करो।"**

बाणभट्ट उसकी इस प्रार्थना को सुनकर अभिभूत हो उठता है। वह भट्टिनी को गंगा के समान पवित्र मानता हुआ कहता है–**"जिस कुल ने इस देव दुर्लभ सौंदर्य को, इस ऋषि दुर्गम सत्य को, इस कुसुम कमनीय चारुता**

नोट

को उत्पन्न किया है, वह धन्य है। वह कुल पवित्र है, वह जननी कृतार्थ है, वह पिता सफलकाय है। देवी! तुममें निश्चय ही वह शक्ति है जिससे म्लेच्छ जाति का हृदय संवेदनशील बनेगा, उनमें उच्चतर साधना का संचार होगा, वे सम्मानित भूमि का सम्मान सीखेंगे।"

भट्टिनी बाण से उपकृत हुई है। वह उसकी कृतज्ञता ज्ञापित करती हुई कहती है–**"भट्ट तुम्हारी इस पवित्र वाक्स्त्रोतस्विनी में स्नान करके ही मैं पवित्र हुई हूँ। इसी से मुझमें आत्मबल आया है। तुम्हारे निष्कलुष हृदय को देखकर ही मुझे सेवा का प्रशस्त पथ दिखा है।"**

नोट्स निपुणिका महाराज हर्ष द्वारा रचित रत्नावली नाटिका में वासवदत्ता की भूमिका करते हुए जब वास्तव में स्वर्ग सिधार गई तब भट्टिनी करुणा विगलित होकर मूर्च्छित हो गई। अंत में वह भट्ट के साथ म्लेच्छों का हृदय परिवर्तन करने के लिए तत्पर हो गई, पर जा नहीं सकी क्योंकि आचार्य भर्वुपाद ने बाणभट्ट को पुरुषपुर जाने की आज्ञा दे दी और भट्टिनी को तब तक स्थाणीश्वर में रुकने के लिए कहा।

बाणभट्ट की आत्मकथा में चित्रित भट्टिनी निश्चय ही एक प्रभावशाली चरित्र है जिसकी संकल्पना आचार्य द्विवेदी जी ने इतिहास और कल्पना के समन्वय से इस भव्य रूप में की है कि वह एक अमर चरित्र बन गई है।

6.4 निपुणिका का चरित्र-चित्रण

'निपुणिका' बाणभट्ट की आत्मकथा का सर्वाधिक प्रभावित करने वाला स्त्री पात्र है। उपन्यास के प्रारंभिक पृष्ठों में ही निपुणिका का परिचय मिल जाता है। वह एक अस्पृश्य जाति की कन्या थी जिसका विवाह उस कांदविक वैश्य के साथ हुआ था जो भड़भूजे से सेठ बना था। विवाह के एक वर्ष के भीतर ही वह विधवा हो गई और ससुराल में मिले दुखों को न झेल पाने के कारण घर छोड़कर भाग आई। बाण से उसकी भेंट उज्जयिनी में हुई जहाँ वह एक नाटक मंडली का सूत्रधार था। निपुणिका ने नाटक मंडली में भर्ती होने की इच्छा प्रकट की और बाण ने स्वीकृति दे दी।

निपुणिका के रूपरंग और सौंदर्य के विषय में बाण अपना मंतव्य इन शब्दों में व्यक्त करता है–**"निपुणिका बहुत अधिक सुंदर नहीं थी। उसका रंग अवश्य शेफालिका के कुसुमनाल के रंग से मिलता था, परंतु उसकी सबसे बड़ी चारुता-संपत्ति उसकी आँखें और अंगुलियाँ ही थीं। अंगुलियों को मैं बहुत महत्त्वपूर्ण सौंदर्योपादान समझता हूँ।"**

निपुणिका कुशल अभिनेत्री है। एक बार उज्जयिनी में बाणभट्ट की नाटक मंडली ने परम भट्टारक की उपस्थिति में नाट्य अभिनय किया। निपुणिका ने उस रात ऐसा जीवंत अभिनय किया कि बाण विस्मय विमुग्ध हो गया। उसने निपुणिका को बधाई देने के लिए आवाज दी और उसे देखकर हँस पड़ा। पता नहीं, निपुणिका ने इस हँसी में अपनी उपेक्षा की गंध कहाँ से पाली, वह उसकी नाटक मंडली को छोड़कर चली गई। वस्तुतः निपुणिका बाणभट्ट को मन ही मन अपने हृदय मंदिर का देवता मानने लगी थी। पुरुष की उपेक्षा नारी जीवन की सबसे बड़ी पराजय होती है। निपुणिका उसी रात नाटक मंडली छोड़कर चली गई। बाण ने उसे खोजने का बहुत प्रयास किया पर खोज न सका। बाण ने नाटक मंडली भंग कर दी और प्रतिज्ञा की कि जब तक निपुणिका को खोज नहीं लेता तब तक न कोई नाटक लिखूँगा, न खेलूँगा। छह वर्ष के उपरांत निपुणिका की भेंट स्थाणीश्वर में बाणभट्ट से होती है। यहाँ वह पान की दुकान करती है। बाण उसे देखकर आश्चर्यचकित रह गया और उसकी दुखभरी कथा सुनने के लिए उसी के पास ठहर गया। यहीं निपुणिका ने भट्टिनी की विपत्ति कथा से बाण को अवगत कराया और छोटा राजकुल से उसकी मुक्ति के लिए सहायता की प्रार्थना की।

नोट

टास्क निपुणिका की त्यागवृत्ति को स्पष्ट उदाहरण देकर समझाइए।

निपुणिका में अनेक गुण थे। जिन्हें देखकर बाण विस्मय विमुग्ध था। वह सोचता था कि जिस स्त्री में इतने गुण हों वह समाज के लिए तो पूजनीय ही है। वह हँसमुख, अभिनय कुशल, साहसी एवं आत्मविश्वासी थी। उसमें त्यागवृत्ति एवं सहनशीलता भी पर्याप्त मात्रा में है। वह इतनी साहसी है कि अंतःपुर से भट्टिनी को मुक्त कराने हेतु बाण की सहायता लेती है और इस कार्य को सफलतापूर्वक संपन्न भी करती है। उसकी त्यागवृत्ति का उत्कृष्ट उदाहरण वह दृश्य है जब वह और भट्टिनी दोनों गंगा में डूब रही थीं तब वह बाणभट्ट से कहती है–**"मुझे छोड़ो, भट्टिनी को संभालो।"** मृत्यु मुख में पड़े व्यक्ति से ऐसे त्याग की अपेक्षा निश्चय ही अनुकरणीय है।

निपुणिका अपने मन की व्यथा बाण के सम्मुख तब व्यक्त करती है जब वह छह वर्ष उपरांत स्थाणीश्वर में उससे मिलता है। वह कहती है–**"हां भट्ट, मेरे भाग आने का कारण तुम्हीं हो, परंतु दोष तुम्हारा नहीं है, दोष मेरा ही है। तुम्हारे ऊपर मुझे मोह था। उस अभिनय की रात को मुझे एक क्षण के लिए ऐसा लगा था कि मेरी जीत होने वाली है, परंतु दूसरे ही क्षण तुमने मेरी आशा को चूर कर दिया। निर्दयी, तुमने बहुत बार बताया था कि तुम नारी देह को देव मंदिर के समान पवित्र मानते हो, पर एक बार भी तुमने समझा होता कि वह मंदिर हाड़-माँस का है, ईंट-पत्थर का नहीं।"**

स्व-मूल्यांकन (Self-Assessment)

निम्नलिखित कथनों में सत्य अथवा असत्य की पहचान करें

(State Whether the following statements are True or False) :

7. बाणभट्ट, भट्टिनी को गंगा के समान पवित्र मानता है।
8. निपुणिका एक अस्पृश्य जाति की कन्या नहीं थी।
9. सोलह वर्ष की आयु में निपुणिका विधवा हो गई थी।

किंतु अब निपुणिका का वासनामय प्रेम भक्ति में बदल चुका था। वह बाणभट्ट को अपना गुरु मानती है जिसने उसे स्त्री धर्म सिखाया है।

निपुणिका बाण से प्रेम करती है। उसके प्रति आदर एवं श्रद्धा का भाव भी रखती है। वह संसार की चिंता नहीं करती। वह यह कदापि सहन नहीं कर सकती कि भट्ट पर कोई लांछन लगाए। वह कहती है–**"भट्ट तुम मेरे गुरु हो, तुमने मुझे स्त्री धर्म सिखाया है।"** वह बाण को संबोधित करती हुई कहती है–**"भट्ट मैंने तुम्हारा नाम कलंकित किया था, पर तुमने मेरा मान रख लिया। मैंने उस अभागी रात के समस्त क्षोभ को धो दिया। मैं उसी दिन से अपने को हाड़-माँस की गठरी से अधिक समझने लगी। तुमने मुझे मुक्ति दी है भट्ट।"**

निपुणिका का संपूर्ण जीवन उसके अदम्य साहस एवं जीवट का परिचायक है। सोलह वर्ष की विधवा घर से भागकर जब जीवन-यापन के लिए संघर्ष करती है, तो निश्चय ही अपने सतीत्व की रक्षा करना उसके लिए अत्यंत दुष्कर रहा होगा। उस विलास प्रधान समाज में जहाँ नारी पर पुरुष भेड़ियों की तरह टूटते हों, निपुणिका जैसी साहसी स्त्री ही अपने सतीत्व की रक्षा कर सकती थी। यही नहीं जब उसे भट्टिनी की विपत्ति का पता चलता है तो वह उसके उद्धार के लिए प्राण-पण से जुट जाती है। बाण को अपना सहायक बनाकर वह इसे पूर्णता तक पहुँचाती है। वह बाण से कहती है–**"तुम न आते तो भी मुझे तो यह करना ही था। बोलो भट्ट, तुम यह काम कर सकोगे? तुम असुर गृह में आबद्ध लक्ष्मी का उद्धार कर सकते हो? मदिरा के पंक में डूबी कामधेनु को उबारना चाहते हो? बोलो, अभी मुझे जाना है?"**

इन पंक्तियों में उसका संकल्प, आत्मविश्वास, साहस, उत्साह, करुणा, धैर्य जैसे भाव अभिव्यक्त हो रहे हैं। निपुणिका

जानती है कि भट्टिनी भी बाण से प्रेम करती है पर उसके प्रति कभी ईर्ष्या और असूया भाव उसके मन में जाग्रत नहीं हुआ। द्विवेदी जी ने स्वयं निपुणिका से इस सत्य का उद्घाटन इन शब्दों में करवाया है–**"प्रेम एक और अविभाज्य है। उसे केवल ईर्ष्या और असूया ही विभाजित करके छोटा कर देते हैं।"**

निपुणिका बाण के प्रति पूर्ण समर्पित प्रेमिका है। वह हर हाल में बाण की उन्नति चाहती है। वह कहती है–**"भट्ट, मुझे किसी बात का पछतावा नहीं है। मैं जो हूँ, उसके सिवा और कुछ हो ही नहीं सकती थी, परंतु तुम जो कुछ हो, उससे कहीं श्रेष्ठ हो सकते हो।"**

निपुणिका कुशल अभिनेत्री है। नृत्य-संगीत में पारंगत निपुणिका का अभिनय कुशलता का परिचय रत्नावली नाटिका में 'वासवदत्ता' का अभिनय करते समय मिलता है। बाणभट्ट उसकी प्रशंसा करता हुआ कहता है–**"वासवदत्ता की भूमिका में निपुणिका ने उन्माद बरसा दिया। उसके हर्ष, शोक और प्रेम के अभिनय में वास्तविकता थी। अंतिम दृश्य में जब वह रत्नावली का हाथ मेरे हाथ में देने लगी तो सचमुच विचलित हो गई। उसके शरीर की एक-एक शिरा शिथिल हो गई। भरत वाक्य समाप्त होते-होते वह धरती पर लोट गई। नागरजन जब साधु-साधु की आनंद ध्वनि से दिगंतर कंपा रहे थे उस समय यवनिका के अंतराल में निपुणिका के प्राण निकल रहे थे।"**

निश्चय ही निपुणिका नारी जाति का शृंगार है, सतीत्व की प्रतिमा है एवं करुणा की साक्षात् प्रतिमूर्ति है। अभिनय, कुशल निउनिया, अपने अद्‌भुत साहस, धैर्य, त्याग, प्रेम से प्रत्येक पाठक का मन मोह लेती है। वह आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी की कल्पना से उद्‌भुत एक अद्‌भुत चरित्र है।

6.5 सारांश (Summary)

- आचार्य द्विवेदी ने जहाँ-जहाँ दार्शनिक विवेचन किया है वहाँ विषय के अनुरूप भाषा परिमार्जित, संस्कृतनिष्ठ एवं पारिभाषिक शब्दावली से युक्त है।
- बाणभट्ट की आत्मकथा की भाषा वस्तुत: उन पाठकों के लिए तो दुरूह ही है जो संस्कृत से परिचित नहीं है। प्रकृति वर्णन जहाँ-जहाँ भी किया गया है वहाँ विशेषणों की झड़ी-सी लग गई है, किंतु किंचित धैर्य से सामासिक भाषा को पढ़ने पर जब अर्थ खुलता है तो पाठक को अभूतपूर्व आनंद प्राप्त होता है।
- बाणभट्ट की आत्मकथा का संबंध संस्कृत के सुप्रसिद्ध कवि बाणभट्ट से है। अत: उसमें संस्कृतनिष्ठ, काव्यात्मक, अलंकृत भाषा का होना स्वाभाविक ही है।
- आत्मकथा में अतीत की स्मृतियाँ होती हैं। इसमें भी 'बाणभट्ट' अपने अतीत जीवन को स्मृत करता है। अत: पूर्वदीप्ति पद्धति (फ्लैश बैक) का उपयोग इस उपन्यास में किया गया है।
- बाणभट्ट अस्थिर चित्त व्यक्ति था, अत: किसी कार्य की योजना पहले से नहीं बनाता था। वस्तुत: किसी बंधन में बंधना उसे कभी अच्छा नहीं लगा किंतु जब भी कोई साहस का काम उसे करना होता, वह पूरी योग्यता एवं दायित्व से उस कार्य को पूर्ण करता।
- बाण की प्रशंसा निपुणिका एवं भट्टिनी दोनों करती हैं। निपुणिका से तो बाण मित्रवत व्यवहार करता है किंतु भट्टिनी के प्रति वह भक्तिभाव रखता है।
- भट्टिनी के चरित्रांकन के लिए द्विवेदी जी ने दोनों विधियों का उपयोग किया है। कहीं-कहीं वे प्रत्यक्ष विधि से उसके चारित्रिक गुणों को उजागर करते हैं तो कहीं परोक्ष विधि से उसके चरित्र पर प्रकाश डालते हैं।
- बाणभट्ट की आत्मकथा में चित्रित भट्टिनी निश्चय ही एक प्रभावशाली चरित्र है जिसकी संकल्पना आचार्य द्विवेदी जी ने इतिहास और कल्पना के समन्वय से इस भव्य रूप में की है कि वह एक अमर चरित्र बन गई है।
- 'निपुणिका' बाणभट्ट की आत्मकथा का सर्वाधिक प्रभावित करने वाला स्त्री पात्र है। उपन्यास के प्रारंभिक पृष्ठों

नोट

में ही निपुणिका का परिचय मिल जाता है। वह एक अस्पृश्य जाति की कन्या थी जिसका विवाह उस कांदविक वैश्य के साथ हुआ था जो भड़भूजे से सेठ बना था।

- निपुणिका कुशल अभिनेत्री है। एक बार उज्जयिनी में बाणभट्ट की नाटक मंडली ने परम भट्टारक की उपस्थिति में नाट्य अभिनय किया। निपुणिका ने उस रात ऐसा जीवंत अभिनय किया कि बाण विस्मय-विमुग्ध हो गया।
- निपुणिका बाण से प्रेम करती है। उसके प्रति आदर एवं श्रद्धा का भाव भी रखती है। वह संसार की चिंता नहीं करती। वह यह कदापि सहन नहीं कर सकती कि भट्ट पर कोई लांछन लगाए।
- निपुणिका का संपूर्ण जीवन उसके अदम्य साहस एवं जीवट का परिचायक है। सोलह वर्ष की विधवा घर से भागकर जब जीवन-यापन के लिए संघर्ष करती है, तो निश्चय ही अपने सतीत्व की रक्षा करना उसके लिए अत्यंत दुष्कर रहा होगा।
- निश्चय ही निपुणिका नारी जाति का शृंगार है, सतीत्व की प्रतिमा है एवं करुणा की साक्षात् प्रतिमूर्ति है। अभिनय, कुशल निउनिया, अपने अद्भुत साहस, धैर्य, त्याग, प्रेम से प्रत्येक पाठक का मन मोह लेती है।

6.6 शब्दकोश (Keywords)

1. दुरूह – कठिन, मुश्किल
2. सरोवर – तालाब
3. घुमक्कड़ – घूमने-फिरने वाला
4. चारूता – सुंदरता, खूबसूरती
5. शतदल – कमल का फूल
6. अराधिका – पूजा करने वाली
7. नरेश – राजा
8. दुष्कर – कठिन
9. विचलित – बैचेन।

6.7 अभ्यास प्रश्न (Review Questions)

1. 'बाणभट्ट की आत्मकथा' के कलात्मक सौंदर्य पर प्रकाश डालिए।
2. बाणभट्ट को 'बंड' क्यों कहा जाने लगा था?
3. 'बाणभट्ट की आत्मकथा' में प्रयुक्त भाषा का उल्लेख कीजिए।
4. भट्टिनी द्वारा बाणभट्ट को कहे गए शब्दों 'मेरी बात गाँठ बाँध लो तुम इस आर्यावर्त के द्वितीय कालिदास हो' पर अपने विचार प्रकट कीजिए।
5. बाणभट्ट निपुणिका के सौंदर्य की व्याख्या किस प्रकार करता है?

उत्तर : स्व-मूल्यांकन (Answers : Self-Assessment)

1. संस्कृत
2. आत्मविश्लेषण
3. अलंकारिता
4. (ख)
5. (ग)
6. (क)
7. सत्य
8. असत्य
9. सत्य।

6.8 सन्दर्भ पुस्तकें (Further Readings)

पुस्तकें बाणभट्ट की आत्मकथा–हजारी प्रसाद द्विवेदी, राजकमल प्रकाशन (प्रा.) लि., नई दिल्ली।

नोट

इकाई–7: 'बाणभट्ट की आत्मकथा' : संवाद-योजना

अनुक्रमणिका (Contents)

उद्देश्य (Objectives)

प्रस्तावना (Introduction)

7.1 'बाणभट्ट की आत्मकथा' : संवाद-योजना अथवा कथोपकथन

7.1.1 संवादों का विस्तार

7.1.2 संवादों के प्रकार

7.1.3 संवादों के गुण

7.1.4 संवादों का उद्देश्य

7.1.5 संवादों की भाषा

7.2 सारांश (Summary)

7.3 शब्दकोश (Keywords)

7.4 अभ्यास प्रश्न (Review Questions)

7.5 सन्दर्भ पुस्तकें (Further Readings)

उद्देश्य (Objectives)

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् विद्यार्थी योग्य होंगे–

- 'बाणभट्ट की आत्मकथा' की संवाद-योजना की जानकारी प्राप्त करने में;
- 'बाणभट्ट की आत्मकथा' के संवादों के प्रकारों को समझने में;
- संवादों के गुण एवं उद्देश्य का उल्लेख करने में;
- संवादों की भाषा के प्रकार एवं निष्कर्ष का विवरण देने में।

प्रस्तावना (Introduction)

उपन्यास में जितना महत्त्व कथानक और पात्रों का है, उतना ही संवाद का अथवा यों कहिए कि इनके बाद तीसरे स्थान पर संवाद ही आते हैं। संवादों के माध्यम से जहाँ पात्रों का चरित्र-चित्रण प्रत्यक्ष रीति से होता है, वहाँ लेखक को भी प्रत्यक्ष रूप से सामने आने का कार्य बच जाता है। वह किसी पात्र की कोई विशेषता स्वयं न कहकर उसके क्रिया-कलापों, इसके पात्रों के साथ बातचीत अथवा अन्य पात्रों द्वारा उसके संबंध में की गई टिप्पणियों से कर देता है और ये सब क्रियाएँ संवादों के माध्यम से ही संभव हैं, अत: उपन्यास में संवादों का महत्त्वपूर्ण स्थान होता है।

7.1 'बाणभट्ट की आत्मकथा' : संवाद-योजना अथवा कथोपकथन

संवादों का संबंध चूँकि पात्रों के चरित्र-चित्रण एवं कथावस्तु के विकास से है। अत: इन दोनों बातों का ध्यान रखकर

नोट

जो संवाद लिखे जाते हैं वे ही सफल होते हैं। संवाद जितने अधिक पात्रानुकूल, स्वाभाविक, अभिनयात्मक, संक्षिप्त, सरल एवं प्रभावी होंगे, घटना और चरित्रों में उतनी ही सजीवता आएगी। उपन्यासकार में चुस्त, चुटीली एवं प्रसंगानुकूल कथोपकथन प्रस्तुत करने की अद्‌भुत क्षमता होनी चाहिए। गठे हुए कथोपकथनों से कृति में एक विशिष्ट वातावरण की गरिमा के साथ स्पंदनपूर्ण जीवन भी परिप्लावित होने लगता है। संवाद उपन्यास में दृश्यकाव्य की सजीवता और वास्तविकता का अत्यंत मोहक संचार कर उसे एक भव्य-कलापूर्ण एवं प्रेष्यत्वयुक्त कृति की महत्ता प्रदान करते हैं। लेखक का कौशल अन्य बातों में तो परखा ही जाता है, परंतु कथोपकथन में विशेष रूप से, उसके संवादों का एक-एक शब्द भेदी-बाण की तरह मर्मच्छेदी भी होता है।

'बाणभट्ट की आत्मकथा' आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी जी का वृहदाकार उपन्यास है। इसमें उन्होंने आत्मकथात्मक शैली को व्यवहृत करते हुए भी संवादों का प्रचुर परिमाण में प्रयोग किया है क्योंकि आचार्य द्विवेदी जी यह भली-भांति जानते हैं कि इनके प्रयोग से घटनाक्रम में स्वाभाविकता आ आती है और पाठक अनायास ही उस घटनाक्रम अथवा भाव-क्रम को समझ लेते हैं। द्विवेदी जी संवाद-योजना द्वारा अपने अनेक उद्देश्यों की पूर्ति करते हैं।

'बाणभट्ट की आत्मकथा' उपन्यास की संवाद-योजना या कथोपकथनों पर निम्नलिखित दृष्टियों से विचार किया जा सकता है–

(क) संवादों का विस्तार

(ख) संवादों के प्रकार

(ग) संवादों के गुण

(घ) संवादों का उद्देश्य

(ङ) संवादों की भाषा।

अब इन पर 'बाणभट्ट की आत्मकथा' के संदर्भ में द्विवेदी जी द्वारा लिखित संवाद-योजना की समीक्षा क्रमबद्ध रूप से सोदाहरण की जाएगी।

7.1.1 संवादों का विस्तार

'बाणभट्ट की आत्मकथा' में संवाद-योजना कहीं तो अत्यंत विस्तृत है और कहीं अति संक्षिप्त है। कुछ संवाद लंबे-लंबे और दुरुह तथा कई-कई पृष्ठों तक चलते हैं। एक-एक संवाद कई-कई पंक्तियों का है और कोई संवाद पूर्वा से संबंधित तथा अति संक्षिप्त है। अत: इस दृष्टि से संवादों अथवा कथोपकथनों के दो रूप दिखाई देते हैं–

(1) संक्षिप्त संवाद-योजना

(2) दीर्घ संवाद-योजना।

1. संक्षिप्त संवाद-योजना–'बाणभट्ट की आत्मकथा' उपन्यास में कथा के विकास, पात्रों के क्रिया-कलाप, वातावरण के चित्रण और लेखकीय उद्देश्य की पूर्ति के लिए द्विवेदी जी ने सानुकूल संवाद दिए हैं। उनके कुछ संवाद तो सिर्फ एक-एक शब्द के ही हैं, और कुछ संवाद एक-दो कथनों-उपकथनों तक चलते हैं। लेकिन इनसे भी चरित्र-चित्रण बड़ी कुशलता के साथ हुआ और इनमें लेखक की कलात्मकता सुनियोजित है। अपने अभिव्यंजना-कौशल से लेखक ने एक-एक दो-दो शब्दों में ही संपूर्ण अर्थ को स्पष्ट कर दिया और बातचीत भी छोटी-सी रहती है। उदाहरण के रूप में निपुणिका एवं बाणभट्ट के निम्नलिखित संवाद को प्रस्तुत किया जा सकता है–

"निपुणिका, कल सौभाग्य से मुझसे तेरी मुलाकात हो गई।"

"हाँ, भट्ट।"

"मैं सोचता हूँ कि कहीं तू अकेली ही भट्टिनी को लेकर आई होती, तो कितना कष्ट होता।"

"सो तो होता ही।"

"इस समय, मैं जो कुछ कर रहा हूँ, उस समय उतना भी नहीं हो पाता।"

"इतना तो हो जाता भट्ट।"

"कौन करता भला।"

"पुजारी।"

"पुजारी। पर तू तो पुजारी से डरी हुई है निपुणिका।"

"पुजारी जैसे मूर्ख रसिकों से डरती तो निपुणिका आज से छः वर्ष पहले ही मर गई होती, भट्ट।"

"पर, तू प्रत्यूष-काल में डरी हुई जरूर थी।"

"सो तो थी ही।"

"तो तू किससे डरी थी भला।"

"तुमसे।"

"मुझसे।"

"हाँ भट्ट ! तुमसे।"

"तुम मुझसे क्यों डरी थी निपुणिका?"

"क्या बताऊँ भट्ट! मेरी जैसी स्त्री, तुम्हारे जैसे पुरुष से क्यों डरती है, यह बात अगर आज तक तुम्हारी समझ में नहीं आई तो अब नहीं आएगी।"

बाणभट्ट एवं निपुणिका के इस संवाद यद्यपि एक-एक शब्द के भी संवाद यथा–पुजारी, तुमसे, मुझसे आदि है, फिर भी इनमें गहरी अर्थवत्ता है। बाणभट्ट के पौरुषगत अहं एवं संदेह को व्यक्त करने तथा निपुणिका के साहस को व्यक्त करने में ये संवाद पूर्णतः सक्षम रहे हैं।

> *नोट्स* द्विवेदी जी ने आत्मकथा में स्त्री-पुरुषों के परस्पर संबंधों का बड़े रोचक और आकर्षक तरीके से वर्णन किया है।

2. **दीर्घ संवाद-योजना**–इस प्रकार के संवाद विस्तृत, लंबे तथा कहीं-कहीं भाषण जैसे लगते हैं, परंतु रोचकता तथा सजीवता यहाँ भी पूर्ववत है, बल्कि कृति को महाकाव्यात्मक गरिमा देने में ये सहायक सिद्ध हुए हैं। इनमें अनपेक्षित विस्तार या निरर्थकता कहीं भी नहीं है, जो भी विस्तार दिखई देता है, वह पात्रों की स्थिति अथवा कथानक को गति देने के लिए एक आवश्यकता बनाकर ही दिया है। बाणभट्ट एवं महामाया का एक संवाद यहाँ उदाहरणार्थ प्रस्तुत किया जा रहा है। वैसे अघोरभैरव सहित यह संवाद सात-आठ पृष्ठों का है–

"मैं समझ नहीं सका।"

"समझ जाएगा, तेरे गुरु प्रसन्न हैं, तेरी कुंडलिनी जाग्रत है, तुझे कौलअवधूत का प्रसाद प्राप्त है, उतावला न हो। इतना याद रख कि पुरुष वस्तु विच्छिन्न भाव रूप सत्य में आनंद का साक्षात्कार करता है, स्त्री वस्तु-परिगृहीत रूप में रस पाती है। पुरुष निःसंग है, स्त्री आसक्तः पुरुष निर्द्वंद्व है, स्त्री द्वंद्वोमुखीः पुरुष मुक्त है, स्त्री बद्ध। पुरुष स्त्री को शक्ति समझ कर ही पूर्ण हो सकता है, पर स्त्री, स्त्री को शक्ति समझकर अधूरी रह जाती है।"

"तो स्त्री की पूर्णता के लिए पुरुष को शक्तिमान मानने की आवश्यकता है न, अम्ब।"

"ना! उससे स्त्री अपना कोई उपकार नहीं कर सकती, पुरुष का अपकार कर सकती है। स्त्री प्रकृति है। वत्स, उसकी

नोट

सफलता पुरुष को बाँधने में है, किंतु सार्थकता पुरुष की मुक्ति में है।" मैं कुछ भी नहीं समझ सका। केवल आँखें फाड़-फाड़ कर महामाया की ओर देखता रहा। वे समझ गई कि मैंने कहीं भूल में ही प्रमाद किया है। बोलीं,–"नहीं समझ सका न। मूल में ही प्रमाद कर रहा है, भोले। तू क्या अपने को पुरुष समझ रहा है और मुझे स्त्री। यहीं प्रमाद है। मुझमें पुरुष की अपेक्षा प्रकृति की अभिव्यक्ति की मात्रा अधिक है, इसलिए मैं स्त्री हूँ। तुझ में प्रकृति की अपेक्षा पुरुष की अभिव्यक्ति अधिक है। इसलिए तू पुरुष है। यह लोक की प्रज्ञप्तिप्रज्ञा है, वास्तविक सत्य नहीं। ऐसी स्त्रीप्रकृति नहीं है। प्रकृति की अपेक्षाकृत निकटस्थ प्रतिनिधि है और ऐसा पुरुष प्रकृति का दूरस्थ प्रतिनिधि है। यद्यपि तुझ में तेरे ही भीतर के प्रकृति-तत्व की अपेक्षा पुरुष तत्व अधिक है, पर वह पुरुष तत्व मेरे भीतर के पुरुष तत्व की अपेक्षा अधिक नहीं है। मैं तुझसे अधिक नि:संग, अधिक निर्द्वंद्व और अधिक मुक्त हूँ। मैं अपने भीतर की अधिक मात्रावली प्रकृति को अपने ही भीतर वाले पुरुष तत्व से अभिभूत नहीं कर सकती। इसलिए मुझे अघोरभैरव की आवश्यकता है। कोई भी 'पुरुष' प्रज्ञप्तिवाला मनुष्य मेरे विकास का साधन नहीं हो सकता।"

"और अघोरभैरव को आपकी क्या आवश्यकता है।"

"मुझे मेरी ही अंत:स्थिति प्रकृति रूप से सार्थकता देना। वे गुरु हैं, वे महान् हैं, वे मुक्त हैं, वे सिद्ध हैं। उनकी बात अलग है।"

"किंतु यह कारण-द्रव्य इस तत्व में क्या सहायता पहुँचाता है।"

"तू नहीं समझ सकेगा। मदिरा प्रकृति की सुव्यक्ति का कारण है। वह उसे छिपी नहीं रहने देती। यह गोपनीय रहस्य है।"

स्थानाभाववश हमने उक्त संवाद को आंशिक रूप में ही प्रस्तुत किया है। इस पूरे संवाद में कथोपकथन लंबे होने पर भी सजीव आकर्षक और रोचक हैं। उनके संवाद कहीं भी विचारों की दुरूहता से बोझिल नहीं हैं।

7.1.2 संवादों के प्रकार

संवादों के रूपों पर दृष्टिपात किया जाए तो संवादों के अनेक प्रकार दिखाई देते हैं। इन प्रकारों का अनेक रूपों में वर्गीकरण किया जा सकता है। आकार की दृष्टि से यदि संवादों का वर्गीकरण किया जाए तो कुछ लंबे संवाद होंगे और कुछ संक्षिप्त। इसका विवेचन पहले ही किया जा चुका है। इसके अतिरिक्त भी संवादों के अन्य अनेक प्रकार हो सकते हैं। यथा–

(1) नाटकीय संवाद

(2) विश्लेषणात्मक पद्धति पर लिखे गए संवाद

(3) मानसिक ऊहापोह को व्यक्त करने वाले संवाद

(4) स्वगत कथन

(5) चिंतन-प्रधान संवाद

(6) भावात्मक अथवा काव्यात्मक संवाद।

1. नाटकीय संवाद–इस प्रकार के संवादों में लेखक नाटकीय पद्धति पर पात्रों की बातचीत प्रस्तुत करता है। इन संवादों से उपन्यास में नाटकीयता उत्पन्न होती है। इनकी विशेषता यह होती है कि इस प्रकार के संवादों में उपन्यासकार अपने संकेत-पात्रों की भावभंगिमा, मन:स्थिति अथवा चरित्र संबंधी विश्लेषण नहीं देता। इस प्रकार के संवादों का 'बाणभट्ट की आत्मकथा' में प्रचुरता से प्रयोग किया गया है। इसका एक उदाहरण यहाँ प्रस्तुत किया जा रहा है।

"क्या कहते हो भट्ट, सोच-समझ कर बोलो।"

"सोच लिया है, कुमार।"

"तुम्हें मालूम है कि तुम किससे बात कर रहे हो।"

"मैं कान्यकुब्ज साम्राज्य के महासांधिविग्रहिक कुमार कृष्णवर्द्धन से बात कर रहा हूँ।"

"दुर्विनीत हो, भ्रद।"

"कुमार से ऐसी बात सुनने की मुझे आशा न थी।"

"तुम्हें ऐसी बात करते लज्जा महसूस होनी चाहिए।"

"लज्जा मुझे क्यों होगी, कुमार।"

"तो किसे होगी।"

"उस शक्तिशाली शासक वंश को जिसने छोटे राजकुल जैसे अत्याचारियों को प्रश्रय दिया है और अपने को कलंकित कर लिया है।"

नोट्स मानसिक ऊहापोह के संवादों की तरह स्वगत-कथन भी एक ही पात्र के होते हैं। इनमें और मानसिक ऊहापोह वाले संवादों में अंतर यह है कि मानसिक ऊहापोह वाले संवादों का संबंध सिर्फ अंतर्द्वंद्व अथवा उलझन से होता है जबकि स्वगत-कथन पात्र के मन की भावनाओं तथा व्यावहारिक वार्तालाप का अंतर प्रदर्शित करते हैं।

2. **विश्लेषणात्मक पद्धति पर लिखे गए संवाद**—इस प्रकार के संवादों में पात्रों के कथोपकथनों के अतिरिक्त उनकी मन:स्थिति, भाव-भंगिमा और क्रिया-कलापों का भी बीच में संकेत होता रहता है। इस प्रकार के प्रयोग उपन्यास में बड़े ही कलात्मक बन पड़ते हैं। 'बाणभट्ट की आत्मकथा' में इसका पर्याप्त प्रयोग है। एक उदारण देखिए–

कुमार यथापूर्वक निर्विकार बैठे रहे। केवल भीगे स्वर में बोले–

"नागरिक वेश में पाँच सशस्त्र सैनिक चंडी-मंडप की रखवाली कर रहे हैं।"

आचार्य ने साधुवाद दिया। फिर कुमार की ओर देखकर बोले–"क्या सोच रहे हो बेटा। तुम्हारा क्रोध क्या अभी शांत नहीं हुआ?"

अवसर देखकर मैंने विनीत भाव से कहा,–"कुमार को उत्तेजित करने का अपराध मैंने किया है, आर्य! उसका दंड भी मुझे मिलना चाहिए। परंतु मेरे औद्धित्य से देवपुत्र नंदिनी का कोई अनिष्ट नहीं होना चाहिए।"

कुमार ने मेरी ओर देखकर कहा–"मैं तुम्हारे साहस का प्रशंसक हूँ भट्ट। मैंने आज से पहले तुम्हारे जैसे ब्राह्मण को क्यों नहीं देखा यही सोच रहा हूँ।" आचार्य ने प्रेम-भरे स्मित के साथ कहा,–"कभी खोजा था वत्स।"

इस संवाद में पात्रों की भावभंगिमाएँ तो दर्शनीय हैं ही, साथ ही यह संवाद-योजना अत्यंत चित्ताकर्षक और मोहक बन पड़ी है। एक ओर कुमार कृष्ण का राजमद है और दूसरी ओर ब्राह्मण की सत्यवादिता एवं न्यायप्रियता, इसमें द्विवेदी जी की अभिव्यक्ति-कुशलता का सुंदर परिचय मिलता है।

3. **मानसिक ऊहापोह को व्यक्त करने वाले संवाद**—इस प्रकार के संवादों का संबंध मन:स्थिति से होता है। 'बाणभट्ट की आत्मकथा' में इस प्रकार के संवादों की प्रचुरता है। इन संवादों की एक विशेषता यह होती है कि इनमें अन्य संवादों की तरह अनेक व्यक्ति भाग नहीं लेते, अपितु ये केवल एक ही व्यक्ति के संवाद होते हैं। बाणभट्ट के मानसिक अंतर्द्वंद्व को प्रकट करने वाला यह संवाद उदाहरणार्थ प्रस्तुत है–

"मेरा कोई नहीं है–न बिलखने वाला, न सांत्वना की आशा लगाए रहने वाला। मैं अकेला हूँ, संगहीन हूँ, हतभाग्य हूँ, रह-रहकर मेरा मन मुझे अवश करने लगा। मुझे यह दुर्निमित्त-सा लगा। अब तक जिसके हृदय पर संसार की

नोट

हँसी और रुलाई पद्म-पत्र के सलिल-बिंदु के समान आई और गई, वह व्यक्ति आज व्याकुल क्यों है? क्या अरुण को देखकर सूर्योदय की संभावना नहीं होती। क्या पवन को देखकर जलागम का अनुमान संगत नहीं है। तो क्या मेरे चित्त का यह विकार किसी पूर्व-निदर्शन के उदय के समान है?"

4. स्वगत कथन–स्वगत-कथन किसी भी विषय पर हो सकते हैं। अपने मन से किसी बात पर विचार देना स्वगत-कथन कहलाते हैं। इनका अधिकतर प्रयोग नाटकों में होता है, पर उपन्यासों में भी यदा-कदा इनका प्रयोग दिखाई देता है। इस उपन्यास में बाणभट्ट ने अनेक अवसरों पर दूसरे पात्रों के कथन स्वगत-कथन के रूप में बोले हैं। यथा–

मेरे सामने अवधूत बाबा अघोरभैरव की प्रसन्न मूर्ति खेल गई। ऐसा लगा कि वे प्रेमपूर्वक डाँट रहे हैं। "फिर झूठ बोलता है जन्म का पातकी, कर्म का अभागा, मिथ्यावादी पाखण्ड। महावराह को बचाएगा तू दंभी!" मैं कुछ, लज्जित-सा हो रहा फिर ऐसा लगा कि वे स्नेहपूर्वक कह रहे हैं–"देख बाबा, इस ब्रह्मण्ड का प्रत्येक अणु देवता है, त्रिपुरसुंदरी ने जिस रूप में तुझे सबसे अधिक प्रभावित किया है, उसकी पूजा करो," फिर महावराह की मूर्ति मेरे हाथ से खिसक गई।

स्व-मूल्यांकन (Self-Assessment)

रिक्त स्थानों की पूर्ति करें (Fill in the blanks) :

1. नाटकीय संवादों का 'बाणभट्ट की आत्मकथा' में .... से प्रयोग किया गया है।
2. स्त्री की सफलता पुरुष को बाँधने में है किंतु .... पुरुष की मुक्ति में है।
3. मानसिक .... को व्यक्त करने वाले संवाद केवल एक ही व्यक्ति के होते हैं।

5. चिंतन-प्रधान संवाद–इस प्रकार के कथन लेखक के विचारपक्ष को प्रकट करते हैं और अधिकांश पात्रों के कथनों में विचार आए हैं। इन संवादों की यह विशेषता है कि इनमें चिंतन के साथ ही दार्शनिक मतवाद भी स्पष्ट हुए हैं। यथा–

"हाँ आयुष्मान्, तू पूछ रहा था कि आर्य असंगत ने 'शून्यता' शब्द को ही इतना महत्त्व क्यों दिया। जो वस्तु है भी नहीं, नहीं भी नहीं, है और है और-नहीं दोनों भी नहीं और इन दोनों का अभाव भी नहीं, उसे शून्यता क्यों कहा। यही तेरा प्रश्न है न।"

"हाँ, आर्य।"

"तो आयुष्मान्, तू कोई उचित शब्द चुन सकता है। शंका की कोई बात नहीं, बोल कोई शब्द।"

"हाँ आर्य, निरालंब 'या' परम तत्व जैसे शब्दों के कहने में क्या दोष होता है।"

'साधु आयुष्मान्' आज सौगत पंडितों का एक संप्रदाय 'निराबल' शब्द को बहुत महत्त्व देने लगा है, पर इस निषेधात्मक शब्द से तू उस वस्तु का बोध करा सकता है, जो 'नहीं' भी नहीं।

"नहीं, आर्य।"

"और, 'परमतत्व' कहने से 'तत्' की सत्ता तो माननी पड़ेगी। फिर उसे है भी नहीं, कह सकता है।"

"नहीं, आर्य।"

"साधु आयुष्मान्, तो मेरे शब्द निरर्थक हुए न।"

"ऐसा ही दिखता है, आर्य।"

"साधु वत्स। वस्तुस्थिति यह है आयुष्मान् कि शून्यता या निरालंब या निर्वाण एक अनुभवगम्य वस्तु है। भाषा की कमजोरी है कि वह उस पदार्थ को कह नहीं सकती। यह तो केवल प्रज्ञप्ति के लिए एक काम-चलाऊ शब्द व्यवहार

नोट

किया गया है। तू उसके शब्दार्थ पर मत जा। मनन कर। यह गुह्य रहस्य है। केवल पुस्तक पढ़ने से तू इसे नहीं समझ पाएगा।

6. **भावात्मक अथवा काव्यात्मक संवाद**–इस प्रकार के संवाद वहाँ पर प्रयुक्त किए गए हैं जहाँ पर बाणभट्ट प्रकृति के रम्य रूप से अतिशय प्रभावित होता है या जहाँ प्रणय-प्रसंग वर्णित हुए हैं। ऐसे संवाद अधिकांशतः भट्टिनी, निपुणिका एवं बाणभट्ट से प्रसंगों में व्यवहृत हुए हैं। बाणभट्ट का यह संवाद उदाहरणार्थ प्रस्तुत है–

मैं अधिक नहीं सुन सका। उत्तेजित होकर बोला–"कौन कहता है देवी कि आप कलंकिनी नारी है। पार्वती के समान निर्मल अंत:करण, गंगा के समान पूतकारी विचारधारा, कैलास के समान शुभचरित्र और मानसरोवर के समान सकरुण हृदय ने जिस देवी को अशेष-लोक की पूजनीया बनाया है, उसे कलंकिनी समझने वाला नरक-भागी होगा। देवी, पावक को कभी कलंक स्पर्श नहीं करता, दीपशिखा को अंधकार की कालिमा नहीं लगती, चंद-मंडल को आकाश की नीलिमा कलंकित नहीं करती और जाह्नवी की वारि-धारा को धरती का कलुषस्पर्श भी नहीं करता। आपके अवसादयुक्त वाक्य आपके योग्य नहीं है। देवी, स्यारों के स्पर्श से सिंह-किशोरी कलुषित नहीं होती। असुरों के गृह में जाने से लक्ष्मी घर्षिता नहीं होती। चींटियों के स्पर्श से कामधेनु अपमानित नहीं होती। चरित्रहीनों के बीच वास करने से सरस्वती कलंकित नहीं होती। आश्वत हो देवी, तुम पवित्रता की मूर्ति हो, कल्याण की खनि हो। समग्र आर्यावर्त के ब्राह्मण और श्रमपा, देव-मंदिर और शल्य-क्षेत्र, अनाथ और नारी, पौर और जनपद जिस दिन अपने रक्षक देवपुत्र तुवरमिलिंद की नयनतारा को पहचान लेंगे, उस दिन वे मंदिरों में तुम्हारी मूर्तियाँ बनाकर पूजेंगे, और यदि कहीं भी इस चिरहृप्त देश में प्राण-कण का लेशमात्र भी अवशिष्ट होगा, तो प्रत्यंत दस्युओं को अपने किए का कठोर प्रायश्चित करना होगा। देवी, मैं सचमुच नहीं जानता कि मैं कवि हूँ। मुझे एक-एक श्लोक लिखने में घंटों तक माथापच्ची करनी होती है, परंतु मैं यदि कवि होता, तो क्या करता, आप जानती हैं। मैं ऐसा गान लिखता कि आर्यवर्त के इस कोने से, उस कोने तक देवपुत्र की नयनतारा का धवल यश फैल जाता। मैं ऐसा काव्य लिखता कि युग-युग तक इस पवित्र आर्य भूमि में नारी सौंदर्य की पूजा होती रहती और इस पवित्र देव-प्रतिमा को अपमानित करने का साहस किसी को न होता। पर देवी, मैं कवि नहीं हूँ।"

7.1.3 संवादों के गुण

उपन्यास में प्रयुक्त संवाद कुछ विशेष गुणों से संपन्न होने पर ही पाठकीय प्रभावकता प्राप्त करते हैं। उनमें मार्मिकता और स्वाभाविकता तो होनी ही चाहिए, साथ-ही-साथ अन्य गुण भी हैं जो भाव-संप्रेषण में सहायक होकर पाठक को रससिक्त कर देते हैं। 'बाणभट्ट की आत्मकथा' में प्रयुक्त संवादों में जो गुण हैं, उन्हें निम्नलिखित रूपों में देखा एवं परखा जा सकता है–

1. **अनुकूलता**–अनुकूलता से आशय अवसर एवं पात्रानुकूलता से है। कथानक को जिस आधार पर विकसित किया जाए, उसके पात्र भी तदनुकूल होने चाहिए और स्वाभाविकता लाने के लिए उनकी संवाद-योजना भी ऐसी होनी चाहिए कि वह पात्रों के बौद्धिक, सामाजिक और सांस्कृतिक स्तर के अनुकूल हो। यह अनुकूलता भाषा, विचार, रहन-सहन एवं ध्वनि-सभी के संदर्भ में कही जा सकती है। 'बाणभट्ट की आत्मकथा' के संवादों में पात्रानुकूलता का गुण पर्याप्त है और इस अनुकूलता के लिए द्विवेदी जी ने भाषा और भाव दोनों का ही समावेश किया है। बाणभट्ट चूँकि एक आभिजात्यवर्गीय संस्कृत कवि था और यह उसी की आत्मकथा है इसलिए उसके संपर्क में आने वाले पात्र भी अधिकांशतः आभिजात्य हैं। इस प्रकार प्रायः सभी पात्र उसी प्रकार की भाषा व्यवहृत करते हैं। दूसरे जिस युग को लेकर इस उपन्यास को लिखा गया है, वह संस्कृत युग था। इसलिए भी पात्रों के संवादों में शिष्टता, सौम्यता एवं गंभीरता मिलती है। साथ ही उनमें अवसरानुकूलता भी परिलिक्षित होती है। महामाया के दीर्घ संवाद का एक अंश यहाँ उदाहरणार्थ प्रस्तुत किया जा रहा है, जो महामाया के चरित्र का उद्घाटन करने के साथ ही अवसरानुकूलता का भी परिचायक है, देखिए–

"कौन है, जो आज आर्यावर्त का दस्युओं के दंष्ट्-जाल से उद्धार करेगा। आज स्कंद के अवतार स्कंदगुप्त नहीं हैं,

नोट

जिनके धनुष-टंकार ने यौधयों का दर्पदलन किया था, म्लेच्छों का मान-मर्दन किया था, मंदिरों और मठों के विध्वंसकों का प्राण-हरण किया था। आज नृसिंह पराक्रम चंद्रगुप्त नहीं है जिन्होंने चारों समुद्रों को अपने सुरभित यश से सुगंधमय बना दिया था, जिनके हुँकार मात्र से प्रत्यंत सामंत सिर झुकाने को बाध्य हुए थे, जो विद्या और कला के सर्वस्व थे, जो स्त्रियों और बालकों के अभयदाता थे, जो देवमंदिरों और बिहारों के आश्रयस्थल थे, आज प्रचंड-पराक्रम मोरवरि वीर विग्रहवर्मा भी नहीं हैं, जो शत्रुओं के लिए काल और दीनों के लिए कल्पवृक्ष थे। आज टिड्डियों से भी विपुल, भेड़ियों से भी क्रूर, गधों से भी निर्घृण, शृंगालो से भी हीन और कृकालासों से भी अधिक बहुरूरीहूंण दस्युओं से इस पवित्र भूमि को बचाने की सामर्थ्य कौन रखता है। एकमात्र देवपुत्र तुवरमिलिन्द। भाइयो, प्रत्यंत दस्यु फिर आ रहे हैं।"

> *नोट्स* प्रकृति के रम्य रूप से प्रभावित होकर बाणभट्ट, भट्टिनी का बड़े सटीक तरीके से उत्साहवर्धन करता है।

2. उपयुक्तता—उपयुक्तता से आशय संवादों के घटना, अवसर और वातावरण के उपयुक्त होने से है, इससे संवादों में सजीवता आती है, पात्रों की बातचीत प्रासंगानुकूल लगती है और अस्वाभाविकता आदि दोषों का परिहार होता है। यदि संवादों में घटना, भाव और अवसर के उपयुक्त दृष्टिकोण नहीं है तो वह संवाद दोषमय हैं, किंतु 'बाणभट्ट की आत्मकथा' में प्रयुक्त संवादों में उपयुक्तता का गुण सर्वत्र विद्यमान है। बाणभट्ट एवं निपुणिका का यह संवाद देखिए—

"क्या कहती है निउनिया, तू उज्जयिनी में मुझे मिली थी।"

"हाँ भट्ट, मैं उज्जयिनी में तुमसे मिली थी। तुम उस सयम शार्विलक के अड्डे पर मुझे ही खोजने गए थे।"

"तू वहाँ कैसे गई, निउनिया।"

"मैं मदयायियों को चषक भर-भरकर मद्य दिया करती थी।"

"इसी रूप में।"

"नहीं, मैंने बालक-वेष धारण किया था।"

"तू स्वेच्छा से गई थी, निउनिया।"

"हाँ भट्ट, मैंने स्वेच्छा से केवल एक दिन के लिए नौकरी कर ली थी और वेतन लिए बिना ही दूसरे दिन भाग आयी। मैं आश्चर्य से निपुणिका के मुँह की ओर ताकने लगा।"

3. सरलता—विशालकाय होते हुए भी इस उपन्यास के संवादों में सरलता का गुण सर्वत्र दिखाई देता है। वास्तव में कहीं-कहीं जो दुरूहता दिखाई भी देती है, वह उपन्यास की कथा के लिए आवश्यक भी थी क्योंकि उसके बिना भाव-गरिमा आ ही नहीं सकती थी। फिर भी संवादों की भाषा पाठकों की समझ में पूर्णत: आ जाती है। उदाहरणार्थ यहाँ बाणभट्ट एवं अघोरभैरव के इस संवाद को प्रस्तुत किया जा सकता है—

"मेरा अपराध क्षमा करें आर्य!"

"तूने कोई अपराध किया है रे।"

"मैं साधारण मनुष्य हूँ, आर्य। अपराध करता ही रहता हूँ किंतु जान-बूझकर कभी किसी का अनिष्ट नहीं किया है। मैं अमंगल से डरता हूँ।"

"ब्राह्मण है।"

"हाँ आर्य।"

"तेरी जाति ही डरपोक है। क्यों रे, महावराह पर तेरा विश्वास नहीं है।"

"मानता हूँ, आर्य।"

नोट

"पाखंडी। तेरे सब शास्त्र पाखंड सिखाते हैं। क्यों रे, कर्म-फल मानता है।"

4. **स्वाभाविकता**–स्वाभाविकता से यह आशय है कि पात्रों द्वारा कहे गए संवाद में स्वाभाविकता हों और कृत्रिम न लगें। अस्वाभाविक संवाद कथा की गति को तो अवरुद्ध करते ही हैं, पाठक का मन भी उनसे उचट जाता है। 'बाणभट्ट की आत्मकथा' उपन्यास के संवादों में स्वाभाविकता का गुण सर्वत्र देखा जा सकता है। बाणभट्ट एवं अघोरभैरव के उपर्युक्त संवाद में यह गुण स्पष्ट दिखाई देता है।

5. **संबद्धता**–पात्रों के संवाद स्वतंत्र न होकर कथानक और पात्रों से संबद्ध होने चाहिए। उपन्यास में कथा-गति और संवाद प्रायः साथ-साथ चलते हैं, अतः उनकी परस्पर संबद्धता अत्यावश्यक है। 'बाणभट्ट की आत्मकथा' उपन्यास के संवादों में यह गुण भी मिलता है। द्विवेदी जी के पात्रों के संवादों का प्रयोग कथानक से मेल खाता हुआ और कथा-गति के अनुकूल है। इनका एक-दूसरे से संबंध है। कुछ संवाद कथा के पीछे की ओर संकेत करते हैं, तो कुछ से आगामी कथा के संकेत मिलते हैं। कुछ में वातावरण का प्रभाव है। निम्नलिखित संवाद में कथा के पूर्व संबंध पर कितना अच्छा प्रकाश पड़ता है, देखिए–

भट्टिनी ने इसी बीच पूछा–"सुगतभद्र वे ही हैं न, भट्ट।"

"हाँ देवी, वे ही हैं। उन्होंने आपसे मिलने की उत्कण्ठा प्रकट की है और आपको स्नेहपूर्वक आश्वासन भेजा है कि आज कोई भद्रतर व्यवस्था करके आपसे मिलेंगे। वे आपसे बहुत स्नेह करते हैं।"

भट्टिनी की बड़ी-बड़ी आँखें वाष्पाकुल हो उठीं। उन्होंने संक्षेप में उत्तर दिया–"हाँ, भद्र।"

मैंने बात और आगे बढ़ाई–"आपको यह जानकर आश्चर्य होगा देवी कि वे मेरे पितामह के सतीर्थ हैं। मेरे ऊपर भी उनका संतान जैसा ही प्रेम है। मैं यह बात बिल्कुल नहीं जानता था।"

भट्टिनी आश्चर्य के कारण दीर्घ-दीर्घायित नयनों से मेरी ओर थोड़ी देर तक देखती रही। बोली–"आप एकदम नहीं जानते थे।"

"एकदम नहीं।"

"आश्चर्य है।"

मैं कुछ संकुचित हो गया। भट्टिनी की सरलता देखकर मैं भी कम आश्चर्यान्वित नहीं हुआ। बात को और किसी दिशा में मोड़ने के उद्देश्य से बोला–"उन्होंने कुमार कृष्णवर्द्धन को बुलवाया है। शायद वे ही व्यवस्था करें। सुनते ही भट्टिनी को जैसे काठ मार गया। क्षण-भर में स्फटिक प्रतिमा की भाँति हत-चेष्ट हो गई। निपुणिका कुछ शंकित हुई। मैं भी चौंका। बोला–"कुछ अनुचित हो गया है क्या, देवी!"

भट्टिनी संभल गई। बोलीं–"मैं स्थाण्वीश्वर के राजवंश से घृणा करती हूँ। राजवंश से संबद्ध किसी व्यक्ति का आश्रय पाने से पहले, मैं यमराज का आश्रय ग्रहण करूँगी। भ्रद, आचार्यवाद ने मेरी कल्याण-कामना के भ्रम में मेरा सत्यानाश किया है।"

नोट्स संवादों की योजना ऐसी होनी चाहिए कि उसमें पाठकों का हृदय छूने की क्षमता हो, उन पर प्रभाव डालने की शक्ति हो और पाठकों का मन उनमें रम जाए। यह मार्मिकता का गुण ही संवादों को प्रभविष्णु बनाता है।

6. **संक्षिप्तता**–इस लेख के प्रारंभ में संक्षिप्त संवाद-योजना के अंतर्गत इसका वर्णन किया ही जा चुका है, यह भी संवादों का एक गुण है कि वे छोटे और प्रवाहपूर्ण हों। 'बाणभट्ट की आत्मकथा' उपन्यास के संवादों में यह गुण पर्याप्त है। एक उदाहरण इस संदर्भ में प्रस्तुत किया जा रहा है–

भट्टिनी ने क्षीण कंठ से सुचरिता को पुकारा–"भद्रे सुचरिते।"

"हाँ, आर्ये!"

"भट्ट आ गये।"

"आ गए हैं, देवी।"

"बुला दो।"

"यहीं है।"

7. **मार्मिकता**–'बाणभट्ट की आत्मकथा' में सर्वत्र संवादगत मार्मिकता का गुण द्रष्टव्य है। यथा–

भट्टिनी ने जरा रुक-रुककर कहना शुरू किया–"भट्ट? मैं अभागिनी हूँ। तुमने ही मुझे जीने की सार्थकता दिखाई है। मैं नहीं जानती थी कि किस प्राक्तन पुण्य से महावराह ने तुम्हें मेरे पास भेज दिया था, तुम्हारे साथ रहकर मैं भूल गई थी कि मैं भाग्यहीना हूँ। मैंने तुम्हें बहुत कष्ट दिया है। और भी बहुत देती रहूँगी। मैं अबोध बाला हूँ। निपुणिका ने आज उन्मत्त प्रलाप के भीतर से मुझे मेरा स्वरूप दिखा दिया है। कौन जाने, उसका कहना ही ठीक हो कि मैं तुम्हें गंगा में डुबाने के लिए स्वयं गंगा में कूद पड़ी थी। मैं नहीं कह सकती। मुझे क्षणभर के लिए ऐसा मालूम था कि मौरवरियों के उस निर्घृण महाराज ने मुझे फिर से कैद करना चाहा था। जब विग्रहवर्मा तुमसे बता रहा था कि वह मौरवरि है, तभी मुझे संदेह हुआ था। निर्बुद्ध बालिका को क्षमा करना भट्ट! निपुणिका कह रही थी कि यदि भट्ट न होते, तो तुम गंगा में कभी न कूदतीं। आज मैं सब बातें विचार कर देखती हूँ, तो मुझे ऐसा लगता है कि मेरे मन के किसी अज्ञात कोने में यह भावना जरूर थी कि तुम मुझे डूबने नहीं दोगे, तुम मुझे बचा लोगे। तुमने मेरा शरीर, मन, लाज-शर्म सबकुछ बचाया है। मैं भाग्यहीना, अपने सबसे बड़े हिताकांक्षी को विपत्ति में झोंक देने की अपराधिनी हूँ। मेरा अपराध क्षमा करो भट्ट।" कहते-कहते भट्टिनी ने हाथ जोड़कर भूमितल में सिर रखकर मुझे प्रणाम किया।

> *टास्क* 'बाणभट्ट की आत्मकथा' में 'व्यंग्यात्मक संवादों' की झलक किन स्थानों पर दिखाई पड़ती है? टिप्पणी कीजिए।

8. **मनोरंजनपूर्णता**–उपन्यास के संवादों को संवेद्य बनाने के लिए उनमें कहीं-कहीं मनोरंजकता का पुट देना भी आवश्यक है। 'बाणभट्ट की आत्मकथा' में इस प्रकार के जो संवाद प्रस्तुत किए गए हैं उनमें जो मनोरंजकता है, वह अपनी सादगी से और भी निखर उठी हैं। धावक और बाणभट्ट का यह संवाद उदाहरण स्वरूप प्रस्तुत है–

मेरा कंधा हिलाकर ताम्बूलरस-सिक्त वाणी में उसने कहा–"चाँद देखते हो क्या, आर्य! किसी की याद आ गई है क्या?" उसके परिहास से मैं चौंक पड़ा क्योंकि मुझे सचमुच ही भट्टिनी की याद आ गई थी। लेकिन धावक रुकना नहीं जानता। वह बोलता ही गया–"सच्ची बात बताऊँ मित्र, मैं प्राची में उदयगिरी-तटान्तरित निशानाथ (चन्द्रमा) को देखता हूँ, तो बरबस किसी ऐसी उदास-प्रिया की स्मृति जाग उठती है, जिसका प्रिय उसके हृदय के अंतराल में बैठा होता है और वियोग-व्यथा से उसका मुख पाण्डुर हो गया होता है। तुम्हें कैसा लगता है?" मैंने रस लेते हुए कहा–"अनुभव की बात कर रहे हो या कल्पना की, सखे?" धावक ने मस्ती के साथ जवाब दिया–"अनुभव तुम्हारा, कल्पना हमारी। क्यों सखे, इतना भाग तो मुझे मिलना ही चाहिए! सुनो, मैं तुम्हें वह बात भी सिखा दूँगा, जो तुम भेंट होने पर अपनी उस उदास प्रिया से कहोगे। मैंने बड़ों-बड़ों को सिखाया है गुरु। महाराजाधिराज तक इस विषय में मेरे चेले हैं।"

9. **व्यंग्यात्मकता**–व्यंग्यात्मकता जहाँ मनोरंजन करने में समर्थ है, वहाँ वह लेखकीय उद्देश्य को भी पूर्ण करती है। 'बाणभट्ट की आत्मकथा' उपन्यास में संवादगत व्यंग्यात्मकता अनेक स्थलों पर दर्शनीय हो उठी है। यह व्यंग्यात्मकता बाणभट्ट, कुमार कृष्णवर्द्धन, भट्टिनी, निपुणिका एवं धावक के अतिरिक्त अनेक सहायक पात्रों संवादों में भी मुखर हुई है। एक उदाहरण यहाँ पर प्रस्तुत किया जा रहा है–

"भट्ट, किस अपराध पर कान्यकुब्ज का लम्पट-शरण्य राजा मुझे फांसी देना चाहता है? मेरे उसी अपराध के बल पर वह देवपुत्र तुवरमिलिन्द से मित्रता करना चाहता है। मेरी जैसी असहाय अबलाओं को दण्ड देने वाला उसका कठोर भुजदंड क्या म्लेच्छ-वाहिनी से अपनी प्रजाओं को नहीं बचा सकता? सचमुच तुम विश्वास करते हो आर्य कि इस निवीर्य शासन-तंत्र से देवपुत्र की सेना का मिलाप होते ही आर्यावर्त रक्त-स्नान से बच जाएगा? आर्यावर्त के समाज के मूल में घुन लग गया है, उसे महानाश से कोई नहीं बचा सकता। मैं पूछती हूँ आर्य, क्या छोटा सत्य का विरोधी होता है?" निपुणिका ने उत्तर पाने की आशा से मेरी ओर देखा। मैं इस प्रश्न का कोई प्रयोजन नहीं समझ सका, सहज भाव से उत्तर दिया–"सत्य अवरोधी होता है, ऐसा ही तो सुना है।" निपुणिका ने आश्वस्त होकर कहा–"आर्य, तुम्हीं मेरे देवता हो, तुम्हीं मेरे सत्य हो। तुम्हारे साथ दीर्घ काल तक रहने का सौभाग्य मुझे मिला है, मेरी ही शपथ करके तुम सत्य-सत्य कहो, मेरा कौन-सा ऐसा पापचरित्र है जिसके कारण मैं निदारुण दुख की भट्टी में आजीवन जलती रही? क्या स्त्री होना ही मेरे सारे अनर्थों की जड़ नहीं है? तुम इस छोटे-से सत्य के साथ राष्ट्र-जीवन के बड़े सत्य को अविरोधी पा रहे हो? क्या वृहत्तर सत्य के नाम पर मिथ्या का ताण्डव नहीं चल रहा है? कैसे आशा करते हो आर्य कि देवपुत्र का प्रबल भुजदंड इस समाज को नाश के गर्त से बचा लेगा? महाकालिका खुलकर इस देवभूमि पर नृत्य करेंगी, महानाश के बवंडर में यह सब कुछ तूलखंड की भाँति उड़ जाएगा, विच्छिन्न अदृश्य खंडपापों का प्रायश्चित असंभव है। निपुणिका सामान्य अपमानिता नारी है।"

स्व-मूल्यांकन (Self-Assessment)

बहुविकल्पीय प्रश्न (Multiple Choice Questions) :

4. नागरिक वेश में कितने सशस्त्र सैनिक चंडी-मंडप की रखवाली कर रहे थे?

   (क) एक (ख) तीन

   (ग) पाँच (घ) सात।

5. चरित्रहीनों के बीच वास करने से कौन कलंकित नहीं होती?

   (क) लक्ष्मी (ख) सरस्वती

   (ग) सीता (घ) इनमें से कोई नहीं।

6. 'अमृत के पुत्रों, मृत्यु का भय माया है।' किसका कथन है?

   (क) महामाया (ख) सुचरिता

   (ग) भट्टिनी (घ) निपुणिका।

10. चरित्र प्रकाशन की क्षमता–उपन्यास के संवाद ऐसे होने चाहिए जो पात्रों के चरित्रों का उद्घाटन करने की क्षमता रखते हों, पात्रों की मनोदशा, उनके आन्तरिक ऊहापोह और उनकी मन:स्थिति इसी प्रकार के संवादों से जानी जा सकती है। 'बाणभट्ट की आत्मकथा' में ऐसे संवादों की भी कमी नहीं है। बाणभट्ट एवं भट्टिनी के इस संवाद को उदाहरणार्थ प्रस्तुत किया जा सकता है–

भट्टिनी संभल गई बोली–"मैं स्थाण्वीश्वर के राजवंश से घृणा करती हूँ। राजवंश से संबद्ध किसी व्यक्ति का आश्रय पाने से पहले मैं यमराज का आश्रय ग्रहण करूँगी। भद्र, आचार्यपाद ने मेरी कल्याण-कामना के भ्रम में मेरा सत्यानाश किया है।"

मैं धक् से रह गया। लेकिन स्थिति सुकुमार थी। जरा-सी त्रुटि होने से इस महीयसी राजबाला का सर्वनाश हो जाएगा। मैंने दृढ़ता के साथ कहा–"भद्र, आप बाणभट्ट पर भरोसा रखें। समग्र कान्यकुब्ज की सैन्य-शक्ति भी आपकी इच्छा के विरुद्ध आपको कहीं नहीं ले जा सकती। कल तक यह अंकिचन पथ-भ्रांत अकर्मा था। आज से इसे विषय समर-विजयी, वाह्लीक विमर्दन, प्रत्यन्त बाडव, देवपुत्र तुवरमिलिन्द की प्राणाधिक कन्या का सेवक बनने का गौरव

नोट

प्राप्त है। मैं कुमार, कृष्ण से निपटने की मर्यादा जानता हूँ। दृढ़ रहो, राजनन्दिनी! सिंह किशोरी का भीत होना अशोभन है। इधर देखिए, अपने सेवक पर भरोसा कीजिए।"

भट्टिनी आश्वस्त हो गई। टोककर बोली–"सेवक नहीं भट्ट, अभिभावक कहो।"

"मैं देवपुत्र तुवरमिलिन्द की प्राणाधिक कन्या की मर्यादा का पालन करना और कराना जानता हूँ देवी! आप निश्चित मानें कि आपके एक इशारे पर बाणभट्ट सम्राटों का मुण्डपात कर सकता है। जिन लोगों ने सिंह के सटाभार को पैरों से कुचलने का साहस किया था, वे उसका फल पाएंगे।"

11. **प्रभाव-क्षमता**–पात्रों के संवाद जितने अधिक प्रभावशाली होंगे, उपन्यास की रमणीयता में उतनी ही वृद्धि होगी। जिस उपन्यास के संवाद नहीं होते, उसके पात्र अथवा कथा चाहे कितनी भी प्रभावशाली क्यों न हों वह पाठक को प्रभावित नहीं कर सकते, दूसरी ओर प्रभावक संवाद कथा में जान डाल देते हैं। 'बाणभट्ट की आत्मकथा' उपन्यास के संवादों में पर्याप्त प्रभाव-क्षमता है। संभवत: किसी भी पात्र के संवाद ऐसे नहीं हैं जो निष्प्रभावी और भरती के हों। एक उदाहरण प्रस्तुत है–

निपुणिका ने दीर्घ नि:श्वास लेते हुए कहा–"हाँ भट्ट, मेरे भाग आने का कारण तुम्हीं हो, परन्तु दोष तुम्हारा नहीं है। दोष मेरा ही है। तुम्हारे ऊपर मुझे मोह था। उस अभिनय की रात को मुझे एक क्षण के लिए ऐसा लगा था कि मेरी जीत होने वाली है, परन्तु दूसरे ही क्षण तुमने मेरी आशा को चूर कर दिया। निर्दयी, तुमने बहुत बार बताया था कि तुम नारी देह को देवमन्दिर के समान मानते हो, पर एक बार भी तुमने समझा होता कि यह मन्दिर हाड़-मांस का है, ईंट-चूने का नहीं। जिस क्षण मैं अपना सर्वस्व लेकर इस आशा से तुम्हारी ओर बढ़ी थी कि तुम उसे स्वीकार कर लोगे, उसी समय तुमने मेरी आशा को धूलिसात कर दिया। उस दिन मेरा निश्चित विश्वास हो गया कि तुम जड़ पाषाण पिण्ड हो, तुम्हारे भीतर न देवता है, न पशु, है एक अडिग जड़ता, इसीलिए वहां ठहर नहीं सकी। जीवन में मैंने उसके बाद बहुत दुख झेले हैं, पर उस क्षण के प्रत्याख्यान का कष्ट मुझे कभी नहीं हुआ। छ: वर्षों तक इस कुटिल दुनिया में असहाय मारी-मारी फिरी और अब मेरा मोह भक्ति के रूप में बदल गया है। भट्ट, तुम मेरे गुरु हो, तुमने मुझे स्त्री-धर्म सिखाया है। छ: वर्षों के कठोर अनुभवों के बल पर, मैं कह सकती हूं कि तुम्हारी जड़ता ही अच्छी थी। मैं अभागिन थी जो तुम्हारा आश्रय छोड़कर चली आई। मेरे जीवन में जो कुछ घटा है, उसे जानने की क्या जरूरत है?"

12. **उद्देश्यपूर्णता**–सोद्देश्य संवाद कथा के विस्तार पात्रों की मन:स्थिति और वातावरण का चित्रण करने में सक्षम होते हैं। इनसे लेखक का प्रतिपाद्य भी स्पष्ट होता है। निरुद्देश्य संवाद-योजना व्यर्थ का शब्द-जाल मात्र होती है। 'बाणभट्ट की आत्मकथा' के संवाद सोद्देश्य है, वे लेखक को सर्वत्र पूर्ण करते हैं। इस उपन्यास के द्वारा लेखक एक तो विश्व-विश्रुत संस्कृत कवि बाणभट्ट के जीवन को प्रस्तुत करना चाहता है और उसके जीवन की तमाम असंगतियों-विसंगतियों एवं अव्यवस्थाओं को मुखरित करना चाहता है, और दूसरे तत्कालीन युग की छवि से भी पाठकों को परिचित कराना चाहता है। महामाया का यह उद्बोधनपरक संवाद इस दृष्टि से विशेष उल्लेखनीय है जो लेखकीय उद्देश्य की भी पूर्ति करता है–

"अमृत के पुत्रों, मृत्यु का भय माया है, राजा से भय दुर्बल चित्त का विकल्प है। प्रजा ने राजा की सृष्टि की है। संगठित होकर म्लेच्छवाहिनी का सामना करो। देवपुत्रों और महाराजाधिराजों की आशा छोड़ो। समस्त उत्तरापथ की लाज तुम्हारे हाथों में है। अमृत के पुत्रों, आर्य विरतिव्रज और आयुष्मती सुचरिता को बन्दी बनाना, लाख-लाख निरीह, ब्राह्मणों और श्रमणों की रक्षा के लिए नहीं हुआ है। वह महाराजाधिराज या उनके किसी आश्रित सामन्त की नाक बचाने के लिए हुआ है। यह पहला अन्याय नहीं है, अंतिम भी नहीं होगा। यह दुर्वह संपत्ति-मद का चिराचरित्र रूप है। इसवे लिए न्याय की प्रार्थना व्यर्थ है। अमृत के पुत्रों, धर्म की रक्षा अनुनय-विनय से नहीं होती, शास्त्र-वाक्यों की संगति लगाने से नहीं होती, वह होती है अपने को मिटा देने से न्याय के लिए प्राण देना सीखो, सत्य के लिए प्राण देना सीखी, धर्म के लिए प्राण देना सीखो। अमृत के पुत्रों, मृत्यु का भय माया है।"

नोट

7.1.4 संवादों का उद्देश्य

उपन्यास में संवादों का कुछ उद्देश्य अवश्य होता है, प्रत्येक संवाद की कुछ-न-कुछ विशेषता होती है। यही विशेषता उसकी उद्देश्यता को प्रकट करती है। संवादों को देने में लेखक के निम्नांकित उद्देश्य होते हैं–

1. **कथा-विकास को गति देने वाले संवाद**–संवादों के माध्यम से उपन्यासकार कथा को गति देता है। स्वयं किसी घटना का वर्णन करने की अपेक्षा पात्रों के वार्तालाप में किसी घटना का विवरण देना उपन्यास की स्वाभाविकता तथा रोचकता को बढ़ाता है। इससे पाठकों की रुचि भी कथा के प्रति बढ़ती है और लेखक का कार्य भी हल्का हो जाता है, साथ ही कथा शीघ्रता से आगे बढ़ती है। 'बाणभट्ट की आत्मकथा' के अनेक संवाद कथा के विकास को गति देते हैं। एक उदाहरण इस संदर्भ में यहाँ प्रस्तुत किया जा रहा है–

भट्टिनी की उदासी का समाचार सुनकर मुझे बड़ा कष्ट हुआ। मैंने ढांढस बंधाते हुए जरा जोर से ही कहा–"भट्टिनी को उदास होने की कोई आवश्यकता नहीं। मैं अभी कोई व्यवस्था करने जा रहा हूँ। आसपास क्या है, मुझे बिल्कुल पता नहीं। केवल पुजारी ने बताया है कि यहाँ से पास ही कोई बौद्ध-विहार है, जहाँ 'सुगतभद्र' नामक कोई भिक्षु रहते हैं। मैं एक बार उस तरफ जाकर पता लगाता हूँ कि क्या व्यवस्था संभव है। भिक्षु लोगों को बहुत-कुछ पता होता है।"

मेरी बात भट्टिनी ने सुन ली। वस्तुतः उनको सुनाना ही मेरा उद्देश्य था। उन्होंने मुझे बुलाकर कहा–"क्या कहते हो भट्ट! सुगतभद्र क्या वही है, जो तक्षशिला की ओर धर्मप्रचार करने गए थे। क्या वे नालन्दा के आचार्य शीलभद्र के गुरु भाई है?"

"मैं नहीं जानता, देवी, मैंने इतना ही सुना है कि कोई सुगतभद्र नामक भिक्षु पास के विहार में रहते हैं।"

"पता लगा लो भद्र! यदि वे आचार्य शीलभद्र के सहपाठी तक्षशिला से लौटे हुए हैं, तो मेरा भाग्य आज प्रसन्न है। वह मेरे पिता के समान है, उन्हें मैं सन्देश भेजूंगी।"

मैंने विनीत भाव से कहा, "भद्रे! मैं अभी पता लगाऊंगा। किंतु यदि वही हों, तो मैं क्या संदेश ले जाऊं?"

भट्टिनी ने कहा–"कह देना भद्र कि देवपुत्र तुवरमिलिन्द की कन्या आपको प्रणाम कहती है और यदि प्रसाद हो तो दर्शन पाना चाहती है।"

मेरे हृदय में धक् से लगा। बोला–"तो देवी, क्या आप तत्रभवान् विषय समर विजयी, वाह्लीक विमर्दन, प्रत्यंत-बाड़व देवपुत्र तुवरमिलिन्द की कन्या है?"

2. **चरित्र-प्रकाशन संवाद**–कुछ संवाद ऐसे होते हैं जिनसे पात्रों के चरित्रों पर प्रकाश पड़ता है। चरित्रों पर लेखक दो प्रकार से प्रकाश डालता है, इस प्रकार हैं–

(क) प्रत्यक्ष रूप से–दो या दो से अधिक पात्रों के संवादों उनकी गतिविधि, भाषा, व्यवहार और क्रिया-कलापों के माध्यम से उनके चरित्रों पर प्रकाश पड़ता है। इस प्रकार के संवाद प्रत्यक्ष चरित्र-प्रकाशक संवाद कहलाते हैं, उदाहरणार्थ–

कुमार की भृकुटियां तन गई–"दुर्विनीत ब्राह्मण बटु! तुम कल जिस व्यक्ति से भीख मांगने जा रहे थे, उससे बात करने की यह पद्धति है?"

"कल मैं राह का भिखारी था, कल मैं स्थाण्वीश्वर में राज्य करने वाले राजवंश के कलंक से परिचित नहीं था।"

"और आज क्या हो?"

"आज मैं विषम समर विजयी वाह्लीक विमर्दन प्रत्यंत बाड़व देवपुत्र तुवर-मिलिन्द की प्राणधिका कन्या का अभिभावक हूं।"

"अभिभावक।"

नोट

"हां, अभिभावक।"

"मेरे एक इशारे पर तुम्हारी रक्षणीय! देवपुत्र-कन्या और तुम्हारा क्या हाल हो सकता है, तुम जानते हो?"

"जानता हूं, परंतु कुमार को शायद 'बाणभट्ट' का पूरा परिचय नहीं मालूम। उस इशारे के होने के बहुत पूर्व इशारा करने वाली आँखें नहीं रहेंगी।"

कुमार ने उत्तेजित होकर कहा–"दुर्विनीत ब्राह्मण बटु, भिक्षा-जीवी, दम्भी!" बाण हंस दिया। कुछ कहा नहीं। कुमार और उत्तेजित हो गये। बोले–"अन्त:पुर में चीर की तरह प्रवेश करने वाले अधार्मिक, तुम्हें लज्जा नहीं है?"

"मुझे स्थाण्वीश्वर के लम्पट राजकुल के अंत:पुर के विषय में श्रद्धा नहीं है। जहां चौर्य-लब्ध अत्याचारित बधुएं वास करती हैं, उस अन्त:पुर की कोई मर्यादा नहीं होनी चाहिए। ऐसे अन्त:पुरों को प्रश्रय देने वाले लज्जित होना चाहें तो हो लें, उन्हे शोभा दे सकता है। कुमार, साम्राज्य गर्व से अन्धे न बनो। स्थाण्वीश्वर ने राजलक्ष्मी का अपमान किया है और ब्राह्मण पर तुम्हारा कोप व्यर्थ है। वह न भिखारी होता है, न महासान्धिविग्रहिक। वह धर्म का व्यवस्थापक होता है। मैंने जो कुछ कहा है, उससे न मैं लज्जित हूं, न मेरा ब्राह्मणत्व कलुषित हुआ है। मैं देवपुत्र तुवरमिलिन्द की मर्यादा का पूर्ण जानकार हूँ और निर्भय भाव से फिर कहता हूं कि स्वाण्वीश्वर के राजवंश ने अपने को पूज्य-पूजन के अयोग्य सिद्ध किया है। देवपुत्र नन्दिनी इस राजवंश से घृणा करती हैं।"

(ख) अप्रत्यक्ष रूप से–जहां पर कुछ पात्र मिलकर आपस में बातचीत द्वारा वहां पर अनुपस्थित किसी अन्य पात्र के बारे में अपनी टीका-टिप्पणी करते हैं, वहां अप्रत्यक्ष रूप से चरित्र का प्रकाशन होता है। इस प्रकार, के संवाद अप्रत्यक्ष चरित्र-प्रकाशक संवाद कहलाते हैं। इनके द्वारा किसी पात्र के विषय में जन-साधारण की धारणा का भी पता चल जाता है। बौद्ध भिक्षु सुगतभद्र के विषय में जनसाधारण की जो धारणा है, उसका परिचय इस संवाद में स्पष्ट मिल जाता है–

"ये सुगतभद्र कौन है?"

सामनेर की आँखों में जरा क्रोध का भाव खेल आया। बोला–"क्या आप आचार्य सुगतभद्र को भी नहीं जानते! स्वयं महाराजाधिराज श्री हर्षवर्द्धन ने उन्हें तक्षशिला से यहां बुलाया है। जिनकी चरण-धूलि पाने के लिए महाराजाधिराज सर्वदा समुत्सुक रहते हैं, उन आचार्य प्रवर सुगतभद्र को भी आप नहीं जानते?"

मैंने टोककर कहा···"परदेसी हूं भद्र!"

"कहां से आये हैं?"

"मैं मगध का निवासी हूं।"

"भद्र, आपने मगध का नाम कलंकित किया है। नालन्दा के भुवन-विश्रुत आचार्य शीलभद्र के सहाध्यायी सुगतभद्र को आप नहीं जानते और फिर भी कहते हैं, मगध के निवासी हैं।"

टास्क द्विवेदी जी द्वारा उपन्यास में प्रयोग की गई भाषा पर अपने मत प्रकट कीजिए।

3. वातावरण की सृष्टि करने वाले संवाद–संवादों के माध्यम से घटना अथवा पात्रों की मानसिक स्थिति का वातावरण प्रस्तुत करना भी लेखक का उद्देश्य है जिनमें वातावरण मूर्त हो उठा है। यथा–

मेरी बात समाप्त होते वह क्रुद्ध नागिन की भांति फुँफकार उठी। उसकी आंखों से मानो अग्नि-स्फुलिंग की धारा ही उमड़ पड़ी। वह एक ही सांस में न जाने क्या-क्या कह गई। अंत में पादाहत सिंहिनी की भांति गरजकर अपना कंधा झाड़ते हुए उसने कहा–"धिक्कार है भट्ट! तुम कैसे भट्टिनी का अपमान करने पर राजी हो गये? कान्यकुब्ज का लम्पट-शरण्य राजा क्या भट्टिनी के सेवक को अपना सभासद बनाने की स्पर्धा रखता है? किस बुद्धि ने तुम्हें

नोट

मौरवरियों की रानी का निमंत्रण ढोने को उत्साहित किया? धिक्कार है भट्ट! तुम अत्यंत सहज बात भी नहीं समझ सके? क्या इस पत्र को चिथड़े कर फेंक देने लायक शक्ति भी तुममें नहीं थी?" कहते-कहते भावावेश में वह सचमुच ही उस पत्र को चिथड़ने लगी। उसकी अँगलियाँ इतनी तेजी से चल रही थीं, मानो जल्दी से जल्दी व मौरवरियों के प्रत्येक वंशधर को रगड़ देना चाहती हों। भट्टिनी ने निपुणिका को धीरे-धीरे अपनी ओर खींच लिया। बड़े प्रेम से उसके ललाट पर हाथ फेरती हुई बोली–"ना बहन, ऐसा भी कहना होता है! भट्ट हमारे अभिभावक हैं, उनको सब करने का अधिकार है। हमारे मंगल के लिए और सारे देश के मंगल के लिए उन्होंने जो कुछ भी किया है वह हमें मान्य होना चाहिए। तू अपनी भट्टिनी को इतना क्या समझती है बहन! छि:, इतना उत्तेजित हुआ जाता है।" निपुणिका भट्टिनी की गोद में अवसन्न होकर गिर पड़ी, उसकी आंखों से अविरल अश्रुधारा झरकर गण्डस्थल को धोने लगी।

इसमें निपुणिका की मन:स्थिति और उसके आंतरिक वातावरण का बड़ा प्रभावी चित्रण हुआ है।

4. यथार्थपरक दृष्टिकोण का प्रस्तुतीकरण–जब तक उपन्यास में स्वाभाविकता तथा यथार्थपरकता नहीं होती, उसमें रोचकता एवं सजीवता नहीं आती। उपन्यास में यथार्थपरकता लाने के लिए उपन्यासकार पात्रों का वार्तालाप प्रस्तुत करता है क्योंकि वार्तालाप से ही पात्रों की मानसिक स्थिति, बोलचाल और अपने एवं दूसरों के चरित्र को खोलने की प्रवृत्ति स्पष्ट होती है। यदि किसी के बारे में लेखक स्वयं कहे तो वह उतना यथार्थ नहीं होता, जितना स्वयं पात्र के क्रियाकलापों से ज्ञात होता है। अत: यथार्थ का पुट देने के लिए संवादों की योजना आवश्यक होती है। द्विवेदी जी के उपन्यास 'बाणभट्ट की आत्मकथा' के संवाद यथार्थ का पुट लिए हुए हैं। चूंकि सर्वत्र यह गुण मिलता है इसलिए उदाहरण देने की आवश्यकता नहीं है।

स्व-मूल्यांकन (Self-Assessment)

निम्नलिखित कथनों में सत्य अथवा असत्य की पहचान करें

(State Whether the following statements are True or False) :

7. जबतक उपन्यास में स्वाभाविकता तथा यथार्थपरकता नहीं होती, उसमें रोचकता एवं सजीवता नहीं आती।
8. महामाया के माध्यम से लेखक राष्ट्र की समृद्धि एवं सामर्थ्य बढ़ाने तथा उसे शक्तिशाली देखने की कामना करता है।
9. भट्टिनी बोली, मैं राजवंश से प्रेम करती हूँ।

5. उपन्यासकार के उद्देश्य को प्रकट करने वाले संवाद–इस प्रकार के संवादों का प्रयोग सर्वत्र न होकर यथास्थान ही होता है। इनसे लेखक की मान्यतायें तथा दृष्टिकोण का ज्ञान होता है। यद्यपि प्रत्येक संवाद लेखक के दृष्टिकोण को प्रकाशित करता है, किंतु अधिकांश में पात्रों की मानसिक स्थिति का चित्रण होने अथवा कथानक को गति देने के कारण यह उद्देश्य दब-सा जाता है। महामाया एवं भट्टिनी के संवादों में लेखक का उद्देश्य प्रमुखत: स्पष्ट हुआ है। महामाया के माध्यम से लेखक राष्ट्र की समृद्धि एवं सामर्थ्य बढ़ाने तथा उसे शक्तिशली देखने की कामना करता है, जबकि भट्टिनी के माध्यम से वह कवि के वास्तविक स्वरूप का निदर्शन इस प्रकार करता है–

"एक जाति दूसरी को म्लेच्छ समझती है, एक मनुष्य दूसरे को नीच समझता है, इससे बढ़कर अशान्ति का कारण और क्या हो सकता है, भट्ट! तुम्हीं ऐसे हो जो नर-लोक से किन्नर-लोक तक एक ही रागात्मक हृदय, एक ही करुणायित चित्त को हृदयंगम करा सकते हो।"

7.1.5 संवादों की भाषा

'बाणभट्ट की आत्मकथा' में संवादों की भाषा के निम्नलिखित रूप प्रयोग किये गये हैं–(1) साधारण बोलचाल की भाषा (2) शुद्ध परिनिष्ठित हिंदी खड़ी बोली का रूप (3) गंभीर चिन्तन प्रधान भाषा (4) अलंकृत और काव्यात्मक भाषा।

नोट

निष्कर्ष

निष्कर्षत: 'बाणभट्ट की आत्मकथा' उपन्यास में संवाद-योजना औपन्यासिक कथा की गरिमा के उपयुक्त है। उसके संवाद संक्षिप्त, कलात्मक सहज स्वाभाविक, मार्मिक, प्रसंगानुकूल, यथार्थपरक और पात्रानुकूल हैं। जिस युग और उससे संबद्ध पात्रों को इस उपन्यास में चित्रित किया गया है, इसके अनुरूप ही उनके संवाद भी हैं और इस प्रकार पात्रों की अस्मिता-गौरव को बनाये रखते हैं। निस्संदेह आलोच्य उपन्यास संवाद-योजना की दृष्टि से पूर्णत: सफल बन पड़ा है।

7.2 सारांश (Summary)

- संवाद जितने अधिक पात्रानुकूल, स्वाभाविक, अभिनयात्मक, संक्षिप्त, सरल एवं प्रभावक होंगे, घटना और चरित्रों में उतनी ही सजीवता आएगी।
- 'बाणभट्ट की आत्मकथा' उपन्यास में कथा के विकास, पात्रों के क्रिया-कलाप, वातावरण के चित्रण और लेखकीय उद्देश्य की पूर्ति के लिए द्विवेदी जी ने सानुकूल संवाद दिए हैं। उनके कुछ संवाद तो सिर्फ एक-एक शब्द के ही हैं और कुछ संवाद एक-दो कथनों-उपकथनों तक चलते हैं।
- संवादों के रूपों पर दृष्टिपात किया जाए तो संवादों के अनेक प्रकार दिखाई देते हैं। इन प्रकारों का अनेक रूपों में वर्गीकरण किया जा सकता है। आकार की दृष्टि से यदि संवादों का वर्गीकरण किया जाए तो कुछ लंबे संवाद होंगे और कुछ संक्षिप्त।
- उपन्यास में प्रयुक्त संवाद कुछ विशेष गुणों से संपन्न होने पर ही पाठकीय प्रभावकता प्राप्त करते हैं। उनमें मार्मिकता और स्वाभाविकता तो होनी ही चाहिए, साथ-ही-साथ अन्य गुण भी हैं जो भाव-संप्रेषण में सहायक होकर पाठक को रससिक्त कर देते हैं।
- उपयुक्तता से आशय संवादों के घटना, अवसर और वातावरण के उपयुक्त होने से है, इससे संवादों में सजीवता आती है, पात्रों की बातचीत प्रासंगानुकूल लगती है और अस्वाभाविकता आदि दोषों का परिहार होता है।
- पात्रों के संवाद स्वतंत्र न होकर कथानक और पात्रों से संबद्ध होने चाहिए। उपन्यास में कथा-गति और संवाद प्राय: साथ-साथ चलते हैं, अत: उनकी परस्पर संबद्धता अत्यावश्यक है।
- उपन्यास के संवादों को संवेद्य बनाने के लिए उनमें कहीं-कहीं मनोरंजकता का पुट देना भी आवश्यक है। 'बाणभट्ट की आत्मकथा' में इस प्रकार के जो संवाद प्रस्तुत किए गए हैं उनमें जो मनोरंजकता है, वह अपनी सादगी से और भी निखर उठी है।
- उपन्यास के संवाद ऐसे होने चाहिए जो पात्रों के चरित्रों का उद्घाटन करने की क्षमता रखते हों, पात्रों की मनोदशा, उनके आन्तरिक ऊहापोह और उनकी मन:स्थिति इसी प्रकार के संवादों से जानी जा सकती है।
- सोद्देश्य संवाद कथा के विस्तार पात्रों की मन:स्थिति और वातावरण का चित्रण करने में सक्षम होते हैं। इनसे लेखक का प्रतिपाद्य भी स्पष्ट होता है। निरुद्देश्य संवाद-योजना व्यर्थ का शब्द-जाल मात्र होती है।
- संवादों के माध्यम से उपन्यासकार कथा को गति देता है। स्वयं किसी घटना का वर्णन करने की अपेक्षा पात्रों के वार्तालाप में किसी घटना का विवरण देना उपन्यास की स्वाभाविकता तथा रोचकता को बढ़ाता है।
- जहाँ पर कुछ पात्र मिलकर आपस में बातचीत द्वारा वहां पर अनुपस्थित किसी अन्य पात्र के बारे में अपनी टीका-टिप्पणी करते हैं, वहां अप्रत्यक्ष रूप से चरित्र का प्रकाशन होता है।
- जब तक उपन्यास में स्वाभाविकता तथा यथार्थपरकता नहीं होती, उसमें रोचकता एवं सजीवता नहीं आती। उपन्यास में यथार्थपरकता लाने के लिए उपन्यासकार पात्रों का वार्तालाप प्रस्तुत करता है।
- 'बाणभट्ट की आत्मकथा' उपन्यास में संवाद-योजना औपन्यासिक कथा की गरिमा के उपयुक्त है। उसके संवाद संक्षिप्त, कलात्मक सहज स्वाभाविक, मार्मिक, प्रसंगानुकूल, यथार्थपरक और पात्रानुकूल हैं।

नोट

7.3 शब्दकोश (Keywords)

1. संदेह – शक
2. गोपनीय – छिपा हुआ, गुप्त
3. वंश – कुल
4. प्रश्रय – सहारा
5. लज्जा – शर्म
6. सांत्वना – तसल्ली
7. व्याकुल – परेशान।

7.4 अभ्यास प्रश्न (Review Questions)

1. 'बाणभट्ट की आत्मकथा' की संवाद-योजना पर अपने विचार प्रकट कीजिए।
2. 'बाणभट्ट की आत्मकथा' में द्विवेदी जी ने संवादों का विस्तार किस प्रकार किया है?
3. 'बाणभट्ट की आत्मकथा' में संवादों के प्रकार पर प्रकाश डालिए।
4. 'बाणभट्ट की आत्मकथा' में प्रयुक्त संवादों के गुणों पर एक लेख लिखिए।
5. द्विवेदी जी के उपन्यास के क्या उद्देश्य हैं?

उत्तर : स्व-मूल्यांकन (Answers : Self-Assessment)

1. प्रचुरता
2. सार्थकता
3. ऊहापोह
4. (ग)
5. (ख)
6. (क)
7. सत्य
8. सत्य
9. असत्य।

7.5 सन्दर्भ पुस्तकें (Further Readings)

पुस्तकें बाणभट्ट की आत्मकथा–हजारी प्रसाद द्विवेदी, राजकमल (प्रा.) लि., नई दिल्ली।

नोट

इकाई–8: 'बाणभट्ट की आत्मकथा' : तात्विक समीक्षा

अनुक्रमणिका (Contents)

उद्देश्य (Objectives)

प्रस्तावना (Introduction)

8.1 कथावस्तु/कथानक के आधार पर

8.2 पात्र-योजना एवं चरित्र-चित्रण कौशल के आधार पर

8.3 देशकाल एवं वातावरण के आधार पर

8.4 भाषा-शैली सौष्ठव के आधार पर

8.5 उद्देश्य के आधार पर

8.6 शीर्षक के आधार पर

8.7 सारांश (Summary)

8.8 शब्दकोश (Keywords)

8.9 अभ्यास प्रश्न (Review Questions)

8.10 सन्दर्भ पुस्तकें (Further Readings)

उद्देश्य (Objectives)

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् विद्यार्थी योग्य होंगे–

- 'बाणभट्ट की आत्मकथा' की तात्विक समीक्षा के आधारों को जानने में;
- मुख्य तथा गौण पात्रों की जानकारी प्राप्त करने में;
- आत्मकथा के देशकाल एवं वातावरण को समझने में;
- भाषा एवं इसके प्रकारों का विवरण प्रस्तुत करने में;
- 'बाणभट्ट की आत्मकथा' के उद्देश्य एवं शीर्षक की व्याख्या करने में।

प्रस्तावना (Introduction)

'बाणभट्ट की आत्मकथा' द्विवेदी जी का एक ऐसा वृहदाकार उपन्यास है जो आत्मकथात्मक शैली में लिखा गया है, इसीलिए उसके शीर्षक में भी 'आत्मकथा' शब्द को व्यह्वत किया गया है। सातवीं शताब्दी के ख्यातिशब्द संस्कृत कवि बाणभट्ट के जीवनगत प्रसंगों को लेकर-जिसमें कुछ ऐतिहासिकता है और कुछ लेखक की उर्वरक कल्पना-लिखा गया यह उपन्यास कवि के जीवन को तो व्याख्यायित करता ही है, साथ ही कुछ शाश्वत तथ्यों, दार्शनिक मत-मतांतरों एवं युगीन परिवेश का भी रूपायन इसमें हुआ है। इसमें एक ओर सामंती व्यवस्था की शिकार नारियों की दु:ख गाथाएँ हैं तो दूसरी ओर राष्ट्रीय-गौरव की सुरक्षा का प्रश्न। इसलिए कथा प्रसंगों में भी पर्याप्त विविधता परिलक्षित होती है। यह विविधता विभिन्न प्रकार की मन:स्थितियों के अनुरूप है और इसमें एक वैचारिक प्रवाह है।

नोट

इस उपन्यास की तात्विक समीक्षा निम्न तत्वों के आधार पर की जा सकती है–

8.1 कथावस्तु/कथानक के आधार पर

उपन्यास को एक विशिष्ट आकार प्रदान करने में कथावस्तु का विशेष योगदान होता है और विषयवस्तु के क्षेत्र की दृष्टि से–व्यापकता के परिमाण में उनमें विभिन्न मुख्य एवं प्रासंगिक कथा-प्रसंगों की योजना भी होती है जो केंद्रीय कथा को गति देते हैं, उसे स्पष्ट करते हैं। उपन्यासकार की प्रतिभा का परिचय इसी से मिलता है कि वह इन विविध कथा-प्रसंगों की योजना करके भी इनमें पारस्परिक सम्बंध-निर्वाह किस प्रकार करता है। इसके अतिरिक्त इनके प्रस्तुतीकरण के ढंग में भी उसकी प्रतिभा के दर्शन होते हैं।

उपन्यास में कथानक की स्थिति और उसके महत्त्व को दर्शाते हुए एक विचारक का कथन है कि प्रत्येक उपन्यास में एक कथासूत्र (थीम) आदि से अंत तक प्रवर्धमान रहता है। साहित्यकार साधारण में से असाधारण को चुनकर ही महान बन सकता है। साहित्य-स्रष्टा सदैव महती अंतर्दृष्टि, प्रभावात्मकता एवं व्यापक संवेदनशीलता की वरेण्य कसौटी पर कसकर ही किसी विषय को चुनता है। जो घटना जीवन के मर्म को घर्षित कर उसमें प्राण, ज्योति और गति का संचार करने में पूर्णतय: समक्ष हो सके, वही स्रष्टा की प्रतिभा एवं मेघा की संगिनी बनकर कलापूर्ण महती का रूप धारण कर सकती है। वस्तुत: बात यह है कि उपन्यास मुख्यत: एक कलापूर्ण-कृति है, अत: उसमें दिग्दर्शित जीवन के कार्य-व्यापार एवं सामान्य घटनाएँ सरल एवं स्वाभाविक होते हुए भी कलाकार की प्रतिभा, कौशल एवं शिल्प के संयोग में असाधारण हो जाते हैं। कथानक का चयन एवं उसका व्यवस्थित कलापूर्ण प्रस्तुतीकरण ही लेखक की महानता के मानदंड है। कथावस्तु उपन्यासों में विविध रूपों में प्रस्तुत होती है, यथा-कथासूत्र-थीम, मुख्य कथानक प्लाट, प्रासंगिक कथाएँ, अंतर्कथाएँ-एपीसोड, उपकथानक-अंडरप्लाट, उपन्यास में इन विविध प्रकारात्मक कथानक रूपों के आ जाने से उसमें पात्रों की संख्या और कृति के कलेवर में वृद्धि हो ही जाती है। फलत: न मुख्य कथानक का ही पूर्ण संगठन हो पाता है और न पात्रों का चरित्र-विकास ही ऐसी अवस्था में संभव होता है। कई पात्र तो उपन्यास की घटना-भित्ति में निर्जीव पुतलिकाओं जैसे रहकर अपने सारहीन, स्पंदनहीन एवं मृतप्राय व्यक्तित्व की करुणगाथा को ही मौनभाव से संकेतिक करके रह जाते हैं और उन्हें अपने विकास का अवसर ही नहीं मिल पाता, जिससे उस पात्र की स्थिति से पाठक भी विभ्रमित होकर रह जाता है।

उपन्यास का मुख्य एवं अकेला कथानक ही अपने आप में इतना मर्यादित, सुगठितपूर्ण, गतियुक्त, मौलिक, प्रभावपूर्ण एवं अभिराम होना चाहिए कि पाठक को मनोरंजन के लिए किसी अन्य दिशा की ओर दृष्टि न दौड़ानी पड़े। प्रभावान्वित के लिए भी यह कथानक-दृष्टि परमावश्यक है। यदि किसी प्रकार से लेखक को उपकथानक अथवा अंतर्कथा की अपनी रचना में अनिवार्यता अनुभूत हो तो उसकी मुख्य कथा के साथ शत-प्रतिशत संगति बैठनी चाहिए ताकि पाठक की अनुभूति एवं संप्रेषणीयता विशृंखलित न हो। यही एक श्रेष्ठ उपन्यास की कसौटी है।

8.2 पात्र-योजना एवं चरित्र-चित्रण कौशल के आधार पर

उपन्यास में कथावस्तु का विकास एवं उसके स्वरूप का निर्माण पात्रों के माध्यम से होता। विभिन्न प्रकार की घटनाओं को किसी पात्र के द्वारा ही प्रस्तुत किया जाता है, पात्रहीन कोई घटना हो ही नहीं सकती। अत: उपन्यास में जितना महत्त्व कहानी का है, उतना ही महत्त्व पात्रों का है। एतदर्थ, उपन्यासकार अपने उपन्यास की कहानी के अनुकूल पात्रों की संयोजना करके उनकी आकृति, अनुकृति, विचार, मनोभाव, कार्य-कलाप एवं अनुभव आदि का चित्रण करता है और इस प्रकार कथा को सजीव, रोचक एवं आकर्षक बनाता है। उपन्यासकार की सफलता इसी में है कि उसके पात्र सजीव एवं स्वाभाविक हों। पात्रों की अनुकूलता में ही कथानक की अनुकूलता है।

उपन्यास में पात्रों की उपस्थिति और उनके चरित्रांकन की नियोजना के विषय में अपना मत प्रतिपादित करते हुए एक आलोचक लिखते हैं कि 'पात्रों की सजीवता, स्वतंत्रता और क्रियाशीलता' उपन्यास का प्राण है। इस प्राण को

नोट

प्रभावक एवं ज्योतिर्मय बनाने के लिए उपन्यासकार में मानव मन के गहन संवेदन एवं विश्लेषण की अपूर्व क्षमता अपेक्षित है। कोरा निरपेक्ष एवं वस्तुवादी अध्ययन कार्य नहीं हो सकता। अत: उसमें पूर्णतया लाने के लिए लेखक की कल्पनाशक्ति और कलात्मक योजना भी अपेक्षित है। चरित्र-चित्रण की प्रभावमयी पूर्णता पर ही महान् उद्देश्यों की अवतारणा संभव है। देशीय के साथ अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर ही महान् एवं आत्मीय सिद्ध होने वाले चरित्रों की सृष्टि केवल वही साहित्यकार कर सकता है जो स्वयं महती संवेदनशीलता, अंतर्दृष्टि, ईमानदारी से युक्त निर्भीकता, अकुंण्ठता एवं कलापूर्ण अभिव्यक्ति से परिव्याप्त हो, जिसने चरित्रों की प्रभावात्मक स्वाभाविकता को अधिकाधिक उद्घाटित किया हो।

नोट्स पात्रों में जो जीवन है, कार्य-व्यापार है, भावनाएँ हैं, लालसाएँ हैं, वे सब यदि ऐसी हैं जिन पर सहज ही विश्वास होता चले, उनके साथ हम हँसने-रोने लगें, जीने-मरने लगे तो समझना चाहिए कि हम वस्तुत: किन्ही महान चरित्रों के साथ हैं। महत्ता स्वाभाविकता से उद्भूत कलात्मकता में ही है।

इसी प्रकार पाश्चात्य विद्वान जे० डब्ल्यू० बीच का यह कथन भी इस संदर्भ में अत्यधिक महत्त्वपूर्ण है–"उपन्यासकार मुख्यत: अधिकाधिक मनोरंजन देने के लिए कृतप्रतिज्ञ है इसके लिए वह पाठक के निमित्त विविधता, वैचित्य उत्सुकता एवं भावनात्मक परितुष्टि की व्यापक योजना करता है। महच्चरित्रों की सृष्टि के द्वारा ही उसका कर्त्तव्य अपनी सार्थकता ग्रहण कर सकता है। चरित्रों की महत्ता उनके अलौकिक अथवा आधिभौतिक चमत्कारों और शक्तियों से संपन्न होने में नहीं है, असंभव और दुर्लभ ही जिसके उपजीव्य हों, ऐसे अस्वाभाविक एवं अटपटे रोमांस में भी वह नहीं है। वह है संभव और सुलभ में, सहज और सुंदर में। पात्र कैसे भी हों, किसी भी वर्ग अथवा जाति के हों, सामाजिक, राष्ट्रीय एवं वैयक्तिक जीवन के प्रति उनकी आचार-विचार की पद्धति कुछ भी हो, यह सब उनकी औपन्यासिक महत्ता के लिए अपेक्षित नहीं है।"

स्व० डॉ० हजारी प्रसाद द्विवेदी के उपन्यास 'बाणभट्ट की आत्मकथा' में भी पात्र-योजना और चरित्र-चित्रण अपने ढंग का है और बड़ा ही महत्त्वपूर्ण है। चूँकि यह एक वृहदाकार उपन्यास है इसलिए जिस प्रकार इसमें कथा-प्रसंगों की विविधता है, उसी प्रकार पात्र-योजना में भी विविधता है। अत: इसमें पात्रों का वर्गीकरण दो प्रकार से किया जा सकता है–

1. मुख्य तथा गौण पात्र
2. पुरुष तथा नारी पात्र

पुरुष पात्र मुख्य भी हैं और गौण भी। इसी प्रकार नारी पात्र भी प्रमुख तथा गौण दोनों ही प्रकार के हैं। अत: इन दोनों वर्गों पर संक्षेप में विचार कर लेना अपेक्षित है।

1. मुख्य तथा गौण पात्र–मुख्य और गौण पात्रों की दृष्टि से देखा जाए तो उपन्यास में कुछ स्त्री पात्र मुख्य हैं और कुछ पुरुष पात्र। पुरुष पात्रों में मुख्य पात्र बाणभट्ट, कृष्णवर्द्धन, अघोरभैरव, सुगतभद्र आदि हैं और नारी पात्रों में प्रमुख भट्टिनी, निपुणिका, महामाया एवं सुचरिता का नाम लिया जा सकता है। इनके अतिरिक्त अन्य सभी पात्र गौण पात्र हैं। लेकिन यह दृष्टव्य है कि शेष पात्र गौण भले ही हों [गौण इस कारण हैं कि उनके चरित्रों का विकास समग्रता से नहीं हुआ है] पर उपन्यास की पूर्णता इनके बिना संभव नहीं है।

2. पुरुष तथा नारी पात्र–'बाणभट्ट की आत्मकथा' में यथार्थपरक दृष्टिकोण होने के कारण पुरुष और नारी दोनों प्रकार के अनेक पात्र हैं और कथा-प्रसंगों के अनुकूल इनमें विविधता है। यह विविधता घटना-क्रम के अनुरूप उचित भी है। कुछ प्रमुख पात्र निम्नलिखित हैं–

नोट

पुरुष-पात्र

बाणभट्ट : आत्मकथात्मक उपन्यास का नायक, अप्रतिम विद्वान् एवं विश्रुत कवि, कुशल अभिनेता, अप्रतिम साहसी, मानवमात्र से प्रेम करने वाला, सुसंस्कृत, शिष्ट, भावुक एवं सत्यभाषी।

कृष्णवर्द्धन : साहसी, वीर, राजनीति के प्रकांड, व्यवहार कुशल, पवित्र हृदय, भावुक, विनयशील, उदारता की खिन, विद्या के भण्डागार, तेजस्वी, प्रतिभा संपन्न एवं प्रत्युत्पन्नमति। सम्राट हर्षवद्धन के अनुज एवं स्थाण्वीश्वर के प्रख्यात नीतिज्ञ।

विग्रहवर्मा : मौरवरिराज यशोवर्मा का सेवक, वीर, साहसी सेनानायक, मौरवरिवंशी के प्रति अटूट श्रद्धालु, स्वामिभक्त, आत्मविश्वासी एवं स्वाभिमानी।

लोरिकदेव : भद्रेश्वर दुर्ग का स्वामी, अशिक्षित किंतु नीति-कुशल, शालीनता, शिष्टता, साम्यता, वीरता एवं सत्यता का प्रतीक, स्वाभिमानी, सादगीपसंद, कृत्रिमताविहीन और संयमी।

अघोरभैरव : वाममार्गी साधक, गंभीर एवं निश्छल, चमत्कारी, तेजस्वी एवं सत्याश्रयी अवधूत।

सुगतभद्र : बौद्ध भिक्षु एवं आचार्य, परम विद्वान एवं अलौकिक अध्ययनशील।

इसके अतिरिक्त कंचुकी वाभ्रव्य, विरतिव्रज, ग्रहवर्मा, शार्विकल, धावक, सामने, देवी मंदिर का पुजारी, महाराज हर्षदेव, वसुभूति, उड्डुपति, अघोरघंट एवं तुवरमिलिंद आदि अनेक पात्र इस उपन्यास में आते हैं, इन सबका यहाँ परिगणन कराना आवश्यक नहीं है।

स्त्री-पात्र

भट्टिनी : उपन्यास की नायिका, बाणभट्ट की प्रेमिका, देवपुत्र तुवरमिलिंद की अपहृता कन्या, कोमल, मधुर एवं उदार हृदया, भगवान महावराह की उपासिका, अद्वप्त प्रेम की साधिका करुणा एवं निराशा की मूर्ति।

निपुणिका : उपन्यास की प्रधान पात्र, बाणभट्ट की प्रेमिका, अभागिनी किंतु उत्सर्गमयी, बाल-विधवा कुशल अभिनेत्री एवं राजकुल की परिचारिका, अशिक्षिता किंतु अथाह हृदया और प्रत्युत्पन्न बुद्धिवाली।

महामाया : वाममार्ग में दीक्षित संन्यासिनी, पहले मौरवरिनरेश ग्रहवर्मा की रानी, कुलूतराज कन्या। अत्यधिक गरिमामयी नारी, विवाह से पूर्व अघोरभैरव की वाग्वदत्ता और कालांतर में शिष्या।

सुचरिता : उपकथा की नायिका, नारी की अन्तर्व्यथा की प्रतीक, विरंतिविज्र की पत्नी और नारायण की उपासिका।

इनके अतिरिक्त गणिका मदनश्री, चारूस्मिता, अंतपुर की द्वार-रक्षिणी तथा परिचारिकाएँ आदि स्त्री पात्र 'बाणभट्ट की आत्मकथा' के कथानक में आते हैं।

8.3 देशकाल एवं वातावरण के आधार पर

साहित्य में विशेष रूप, से कथा साहित्य में देशकाल एवं वातावरण की संयोजना करना आवश्यक होता है। इसी कारण इसे एक पृथक् तत्व के रूप में स्वीकृति मिली है। उपन्यास में वास्तविकता, सजीवता और गरिमा लाने के लिए अनुकूल वातावरण भी अत्यंत महत्वपूर्ण उपकरण है। देशकाल की परिस्थितियों, परंपराओं और जीवन पद्धतियों की दिग्दर्शिका की वेशभूषा आदि का जितना अच्छा चित्रण उपन्यास में होगा उतनी ही सजीवता एवं प्रभावोत्पादकता उसमें आ सकेगी। ऐतिहासिक एवं आंचलिक उपन्यासों में वातावरण का सर्वाधिक महत्त्व है। ऐसे उपन्यास वातावरण की रंचमात्र भी उपेक्षा करके नहीं चल सकते। औपन्यासिक पात्रों के वस्त्राभूषण-विधान, आचार-व्यवहार, उनके कार्यन्व्यापाक्, उनका परिवेश, उनकी भाषा आदि के प्रति उपन्यासकार यदि सजग नहीं है तो वह कथा में यथार्थता और सजीवता की सृष्टि कदापि नहीं कर सकता। इसका कारण यह है कि उसे जिस युग के कथानक को प्रस्तुत करना होता है, बिना उपर्युक्त सतर्कताओं के वह उसे युगानुकूल रूप में प्रस्तुत नहीं कर पाएगा। यहाँ उपन्यास की सूझबूझ उसका अनुभव और परिवेश-सृष्टि की उसकी सामर्थ्य ही उसके उपन्यास को सफल से सफलतम बनाने

नोट

में योगदान देती है। इस प्रकार यह स्पष्ट है कि उपन्यास में जिस काल-विशेष की कथा प्रस्तुत की जा रही हो उसमें उसकी सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक, सांस्कृतिक एवं धार्मिक आदि परिस्थितियों का भी सफलता के साथ चित्रण होना अपरिहार्य है। वातावरण के विषय में यह अत्यंत स्मरणीय है कि यह कथानक एवं चरित्र के प्रकाशन एवं स्पष्टीकरण का साधन मात्र है। अत: साधन कहीं साध्य न बन जाए, या साध्य के व्यक्तित्व को आच्छादित करके हीन एवं उपेक्ष्य न बना दे, इस मूल पकड़ का ध्यान सृष्टा को आरंभ से ही होना चाहिए। वातावरण में देशकाल बाह्य है और मनोदशा आंतरिक, अत: दोनों ही प्रकारों की पूरी क्षमता कृति में आवश्यक है। इस उभयपक्षीय पूर्ति द्वारा ही सच्चा एवं पूर्ण वातावरण तैयार होता है। जहाँ वातावरण पात्रों की मानसिक एवं शारीरिक तैयारी में एक उष्णता और प्रवाह का संचार करता है, वहाँ दर्शकों एवं पाठकों की भी मानसिक तैयारी में भी सहायक सिद्ध होता है। कभी-कभी ही नहीं, प्राय: सदा वातावरण की प्रतिकूलता एवं अनुकूलता रचना के महत्त्व को ही अन्यथा कर देती है।

नोट्स हास्य के अवसर पर शोक का वातावरण और शोक के समय हर्षोल्लास निश्चित रूप से मूल रस के स्वाद में बाधा ही उत्पन्न नहीं करता, अपितु उसे स्वाद की स्थिति में पहुँचने ही नहीं देता। प्राकृतिक चित्रणों और पात्रों की मानसिक स्थिति का सामंजस्य उपन्यास को पर्याप्त मात्रा में स्पंदनयुक्त, सरस, प्रभाव एवं उष्णप्राण बनाता है। इससे उपन्यास में काव्य का-सा लालित्य एवं माधुर्य प्रवाहित होने लगता है। हमारे संवेग भी बड़ी प्रबलता से उभरते हैं।

स्पष्ट है कि वातावरण की समुचित योजना रचना को सपंख प्रभावक एवं प्रेष्यत्वपूर्ण बनाती है उपन्यास को विशेष रूप से। श्रेष्ठ वातावरण की सृष्टि उपन्यास में शब्दाचित्रों पर निर्भर करती है। अत: स्रष्टा को एक निष्णात शब्दशिल्पी होना चाहिए। ऐसे मर्मी स्रष्टा द्वारा प्रस्तुत वातावरण सहज ही उपन्यास को मर्मस्पर्शी बना देता है।

डॉ० हजारी प्रसाद द्विवेदी जी का उपन्यास 'बाणभट्ट की आत्मकथा' उस ऐतिहासिक परिवेश की पृष्ठभूमि में लिखा गया है जब भारत में सम्राट हर्षवर्द्धन का साम्राज्य था। यह सातवीं शती की बात है। बाणभट्ट उपन्यास का नायक हर्षवर्द्धन का सभा पंडित था। इसलिए उपन्यास का वातावरण भी सातवीं शती के युगीन परिवेश को प्रतिफलित करता है।

'बाणभट्ट की आत्मकथा' उपन्यास में देशकाल अथवा वातावरण का चित्रण किस सीमा तक स्वाभाविक, सुंदर और कलात्मक बन पड़ा है, इसका विचार करते समय हमें उसके वातावरण के रूप को देखना पड़ता है। वातावरण दो प्रकार का हो सकता है। (1) आंतरिक वातावरण और (2) बाह्य वातावरण।

आंतरिक वातावरण में घटनाओं और परिस्थितियों का चित्रण आता है तथा पात्रों की मानसिक स्थिति, उनके हाव-भाव तथा अंतर्द्वन्द्व का चित्र आता है। दूसरी ओर बाह्य वातावरण में तत्कालीन सभी परिस्थितियाँ आ जाती हैं। इस दृष्टि से हम दोनों प्रकार के वातावरण को निम्नांकित उपवर्गों में विभक्त कर सकते हैं–

1. आंतरिक वातावरण

(क) घटनाओं और परिस्थितियों का चित्रण

(ख) पात्रों की मानसिक स्थिति का चित्रण

(ग) पात्रों के हाव-भावों और अंतर्द्वंद का चित्रण।

2. बाह्य वातावरण

(क) स्थानीय वातावरण

(ख) प्रकृति-चित्रण के रूप में

नोट

(ग) सामाजिक परिस्थितियाँ

(घ) धार्मिक-सांस्कृतिक परिस्थितियाँ

(ङ) राजनीतिक परिस्थितियाँ

(च) आर्थिक परिस्थितियाँ।

अब आगे इन पर 'बाणभट्ट की आत्मकथा' के परिप्रेक्ष्य में विचार किया जाएगा।

1. आंतरिक वातावरण

(क) घटनाओं और परिस्थितियों का चित्रण–घटनाओं और परिस्थितियों के चित्रण द्वारा उपन्यासकार उपन्यास की पृष्ठभूमि का वातावरण प्रस्तुत करता है और इससे परिस्थितियाँ स्वाभाविक बनती हैं। घटना-विशेष अथवा परिस्थिति विशेष से आंतरिक वातावरण पूर्व रूप में सामने आता है। 'बाणभट्ट की आत्मकथा' में लेखक ने उलझे हुए त्रिकोणात्मक प्रणय-प्रसंग, भट्टिनी की हीन-भावना, बाणभट्ट एवं निपुणिका के विषम परिस्थितियों में मिलन, विरतिवज्र और सुचरिता के मिलन आदि का चित्रण करते समय पृष्ठभूमि का विशेष ध्यान रखा है। निपुणिका एवं बाणभट्ट के मिलन की परिस्थिति का यह चित्र उदाहरणार्थ प्रस्तुत है–

मैं बड़ी देर तक कुछ बोल न सका। केवल निर्निमेष नयनों से निपुणिका को देखता रहा। वह पान लगा रही थी, पर यह अनाड़ी आदमी भी समझ सकता था कि उसके चित्त में कोई भयंकर उथल-पुथल चल रही थी। बहुत दिनों के बाद पान पर फिरती हुई निपुणिका की शिथिल अंगुलियों को देखकर मुझे एक अभूतपूर्व आह्लाद हो रहा था। निपुणिका के अधरों पर मुस्कान थी और आँखों में पानी, वह भी चुप थी। पान का एक बीड़ा एक घंटे में लग सका। तब उसने मेरी ओर ताका। आँसू रुक नहीं सके, वे झरते रहे, झरते रहे। मैं निर्वाक निश्चल देखता रहा। अश्रु फिर भी झरते रहे। अंत में मैं ही चिल्ला उठा 'निउनिया रो मत'। मेरी वाणी जरूर कायतर रही होगी। निउनिया अब सिसकने लगी। मैं फड़फड़ा कर उठा कि उसके आँसू पोंछ दूँ। फिर तो वह सावधान हो गई। जरा भर्त्सना-सी करती हुई बोली–"छी, छी, क्या कर रहे हो? बाजार में बैठे हैं, नहीं देखते?"

और दूसरी ओर भक्ति-रस से डूबी भट्टिनी की स्थिति का यह चित्र भी देखिए–

"फिर उसने अश्रुपूर्ण नयनों से एक बार महावराह की ओर देखा। अत्यंत धीर पद-संचार से उसने अपने इष्टदेव की परिक्रमा की और शय्या की ओर अग्रसर हुई। शय्या पर बैठने के थोड़ी देर बाद तक भी उसकी आँखें भक्ति की मादकता से मुक्त नहीं हुई। कुछ देर बाद हम दोनों की ओर उसने देखा। अहा, दृष्टि में इतनी पूतकारिता भी होती है। मानो वह दृष्टि पुण्य-रश्मियों से द्रष्टव्य को उद्भाषित कर रही थी, तीर्थ वारिधारा से प्लावित कर रही थी, तपस्या से पवित्र बना रही थी और सत्य से अंतर्निहित ताप से हृदय के अशेष पाप-भावों को भस्म कर रही थी। मुझे ऐसा लगा कि वेदों की पवित्र वाणी विग्रहवती होकर मुझे आज ब्राह्मणत्व के वरण योग्य बना रही है। आज मेरी प्रतिज्ञा सफल होगी क्या?"

(ख) पात्रों की मानसिक स्थिति का चित्रण–'बाणभट्ट की आत्मकथा' में पात्रों की मानसिक स्थिति का चित्रण बड़े विस्तार से एवं सूक्ष्म विश्लेषण के साथ हुआ है। बाणभट्ट, निपुणिका, भट्टिनी, मदनश्री आदि सभी प्रमुख पात्रों की मानसिक स्थिति का इस उपन्यास में बड़े विस्तार के साथ वर्णन हुआ है। सुचरिता कारागार में बंद है और प्रहरी उसे सूचना देता है कि बाणभट्ट उससे मिलना चाहता है। प्रहरी के कथन का सुचरिता पर जो प्रभाव हुआ, उसकी जो मानसिक दशा हो गई, उसको स्पष्ट करने वाला यह उदाहरण द्रष्टव्य है–

"सुचरिता की आँखें आश्चर्य से विस्फारित हो रहीं। उसने बड़े आयासपूर्वक विश्वास किया कि प्रहरी सचमुच सत्य ही कह रहा है। क्षणभर में उसका मुखमंडल आनंद की ज्योति से उद्भासित हो गया। एक तरल सौंदर्य-धारा से सारा कुट्टिम प्लावित-सा हो गया। सुचरिता ने उठने की चेष्टा की, परंतु उसके हाथ और पैर लौह-शृंखला से बंधे थे। उठ न सकी। उसकी वह कातरता मेरे हृदय को बुरी तरह से द्रवित करती रही।"

नोट

(ग) पात्रों के हाव-भावों और अंतर्द्वंद्व का चित्रण–पात्रों के हाव-भावों का द्विवेदी जी ने दो रूपों में वर्णन किया है–

(क) संवादों के बीच पात्रों के हाव-भावों का वर्णन–वार्तालाप में द्विवेदी जी ने मात्र कथन ही नहीं दिए हैं अपितु प्रत्येक कथन का दूसरे पात्र पर क्या प्रभाव होता है, और कथन कहने से पूर्व अपनी बात का दूसरे द्वारा दिए गए प्रत्युत्तर की स्वयं पर क्या प्रतिक्रिया होती है, इसका भी अच्छा निदर्शन किया है। इसके पात्रों की गूढ़ता आंतरिक स्थिति का सम्यक् परिचय मिल जाता है। महामाया एवं भट्टिनी का यह संवाद उदाहरणर्थ प्रस्तुत है, जिसमें दोनों की मानसिक स्थिति भी स्पष्ट है–

महामाया ने अपने ललाट पर हाथ फेरते हुए कहा–"मुझे आश्चर्य होता है कि भट्ट किस प्रकार सम्मोहन का शिकार हो गया? इसकी कुल-कुंडलिनी जाग्रत है इसे अवधूत गुरु का प्रसाद प्राप्त है। देख बिटिया, भट्ट की मनोगमा पाँचों नाड़ियाँ अब पूर्ण स्वस्थ हैं। यह देख, काल्पिका है, इससे संकल्प होता है, यह विकल्पिका है, इससे मन में विकल्प होते हैं, यह स्थीवा है, इससे जड़ता आती है, यह मूर्च्छना है, इससे मूर्च्छना होती है और यह मान्य है, इससे मननशक्ति प्राप्त होती है। भट्ट की स्थीवा कमजोर है। अब ठीक हो जाएगी। मगर अद्‌भुत शक्ति है निपुणिका की नाड़ियों में। एक बात बताऊँ बेटी, निपुणिका महामाया-स्वरूप है, उसे सामान्य नारी न समझ। सम्मोहन का प्रतिप्रसव बड़ा कठिन होता है, बेटी! प्रथम बार मैं दस पल भी नहीं संभाल सकी थी। उफ!" महामाया मानो कुछ भूली हुई बात सोचने लगी। फिर एकाएक बोली–"आज तो मुझे जाना होगा बेटी! अक्षय तृतीया में तो अब अधिक देर नहीं है। यहाँ तुम्हें कोई भय नहीं है। लोरिकदेव बड़ा धार्मिक सामंत है। तुझे कोई कष्ट नहीं होगा। क्या कहती है, जाऊँ न?"

भट्टिनी ने दृढ़ता के साथ संक्षेप में उत्तर दिया–"ना!"

महामाया गुनगुनाती हुई मानो अपने-आपसे ही बोली–"फिर माया के कंचक में कसी जा रही हूँ। त्रिपुर भैरवी, तुम्हारी लीला अपरंपार है। काल, नियति, राग, विद्या और कला माया के कंचुक हैं, पर सत्य हैं। इन्हें अतिक्रमण कौन कर सकता है? त्रिपुर सुंदरी की लीला है।"

भट्टिनी ने चिंतित होकर कहा–"मैं तप से विघ्न पैदा कर रही हूँ माता?"

स्व-मूल्यांकन (Self-Assessment)

रिक्त स्थानों की पूर्ति करें (Fill in the blanks) :

1. सुचरिता की आँखें आश्चर्य से ··············· हो गईं।
2. सम्मोहन का ··············· बड़ा कठिन होता है।
3. निपुणिका के नृत्य से कराला का ··············· खटखटा उठता था।

(ख) वर्णन-विश्लेषण द्वारा पात्रों के हाव-भावों का वर्णन–किसी व्यक्ति के कार्य से दूसरे व्यक्ति के मन पर होने वाली प्रतिक्रिया के द्वारा वातावरण की सृष्टि करने में द्विवेदी जी अत्यंत दक्ष हैं। निम्नलिखित उद्धरण में बाणभट्ट करालादेवी के मंदिर में चंडमंडना एवं अघोरघंट के हाथों बलि होने जा रहा है। सामने निपुणिका, भट्टिनी एवं महामाया खड़ी हैं। उस समय इन पात्रों की जो मन:स्थिति थी, उसका यह विश्लेषण देखिए कितना यथार्थ और मार्मिक बन पड़ा है–

"भट्टिनी कातर-भाव से मुझे देख रही थी। मैं अवश, व्याकुलता से उन्हें देख रहा था। मेरी शिराएँ अधिक नहीं संभल सकीं। मुझे लगा कि कान के पास से रक्त की धारा फूट पड़ी है। रक्त देखकर अघोरघंट विचलित हुआ। उसने चंडामंडना को शीघ्रता करने का आदेश दिया। उधर भट्टिनी मूर्च्छित होकर गिर गई। भट्टिनी को मूर्च्छित देखकर मेरा उद्विग्न मस्तिष्क और भी विचलित हुआ। निपुणिका उन्मत्त की भाँति वेदी की ओर बढ़ी। जैसे उसके पैरों में किसी ने आँधी बाँध दी हो। महामाया प्रस्तर-प्रतिमा की भाँति निश्चल खड़ी थी भट्टिनी की ओर उन्होंने देखा भी नहीं।

उनकी आँखों से एक अद्‌भुत ज्वालामयी ज्योति निकल रही थी। वह स्थिर से निपुणिका को देख रही थी। निपुणिका आँधी की तरह आयी। उसने एक ही धक्के में चंडामण्डना को पटक दिया और उसके हाथ का खटवांग झटककर छीन लिया। खड्‌वांग लेकर निपुणिका ने विकट नृत्य शुरू किया। उसके उद्धत संचार से हवन-कुण्ड विध्वस्त हो गया, खाल पताका छिन्न-विच्छिन्न हो गई और पूपकाष्ठ चूर्ण-विचूर्ण हो गया । ओह, कितना उत्पल था वह नर्तन। उसने एक-एक पद संचार से धरित्री धमक सी रही थी, तारामंडल लड़खड़ाता-सा जान पड़ता था और कराला का मुंडमाल खटखटा उठता था।"

अंतर्द्वंद्व का चित्रण कर वातावरण की सृष्टि–द्विवेदी जी के इस उपन्यास में पात्रों का विशेष रूप से बाण भट्ट का अंतर्द्वंद्व अत्यंत यथार्थ रूप में प्रस्तुत किया गया है और उसके द्वारा उसके मानसिक वातावरण की सृष्टि की गई है एक उदाहरण यहाँ प्रस्तुत किया जा रहा है–

"मुझे अपना प्रमाद स्पष्ट समझ में आ रहा था। मैंने यह क्या किया? क्यों मेरी बुद्धि इतनी मोथी हो गई थी? हाय अभागे बंड, तुमने भट्टिनी का सम्मान बचाने के लिए अपने को विपत्ति में क्यों नहीं झोंक दिया? जिस समय मदयर्वित कान्यकुब्जेश्वर ने तुम्हें लंपट कहा था, उस समय तुमने भट्टिनी का उपयुक्त उत्तर क्यों नहीं दिया? धिक् भाग्यहीन, धिक्। मौरवरियों की रानी का निमंत्रण तुम्हें कान्यकुब्जेश्वर के सामने ही पैरों से कुचल देना था। परंतु मेरा स्वाभिमान उस समय कहाँ चला गया था? हाय, मैंने भट्टिनी को अपमानित होने दिया है मेरे पाप का कोई प्रायश्चित नहीं है। तुषाग्नि में जलने से भी यह पाप प्रायश्चित नहीं होगा।"

टास्क 'बाणभट्ट की आत्मकथा' में द्विवेदी जी ने कितने प्रकार के वातावरण की सृष्टि की है?

2. बाह्य वातावरण

बाह्य वातावरण में स्थान-विशेष अथवा परिस्थिति-विशेष का ध्यान रखा जाता है। 'बाणभट्ट की आत्मकथा' उपन्यास में लेखक ने इस प्रकार के चित्रण की ओर भी पर्याप्त ध्यान दिया है।

(क) स्थानीय वातावरण–स्थान विशेष का बाहरी वातावरण जन-जीवन, प्रकृति, स्थान, सबका मिला-जुला रूप 'बाणभट्ट की आत्मकथा' में चित्रित हुआ है। इस प्रकार का चित्रण यद्यपि कम ही हुआ है, किंतु जितना भी हुआ है वह सुंदर ही कहा जाएगा। बैशाखी पूर्णिमा के दिन स्थाण्वीश्वर का यह उत्सव-निमग्न वातावरण देखिए–

"वीथियाँ सुगंधि से सिक्त थीं, पौर-भवनों में मंगल-पताकाएँ सुशोभित हो रही थीं, राजमार्ग की ओर के सभी वातायन मालती-दाम से अलंकृत हो रहे थे और पौरजन नवीन वस्त्रभूषा से सुसज्जित थे। राजमार्ग श्वेत वस्त्रधारी नागरिकों से पूर्ण था। उनके वस्त्र, उष्णीय, अंगराग और माल्य सभी श्वेत थे। ऐसा जान पड़ा था, सब लोगों ने रजत-धारा में स्नान किया है। ऊपर सौधवातायनों से युवतियों के स्वर्णालंकारों की पीली प्रभा व्याप्त हो रही थी। नीचे की श्वेतच्छटा के ऊपर सौध-वातायनों की सौवर्णच्छटा ऐसी मनोहर मालूम हो रही थी, मानों कैलाश पर्वत पर शरत्कालीन प्राभातिक धूप फैली हुई हो।"

और दूसरी ओर इसी स्थाण्वीश्वर में कुमार कृष्णवर्द्धन के पुत्र के नामकरण संस्कार के उत्सव के समय का यह स्थानीय वातावरण कितना मनोमुग्धकारी और युग छवि का निदर्शन करता है, देखिए–

"कर्मपृष्ठ के समान उन्नतोदर राजमार्ग पर एक बड़ा भारी जुलूस चला जा रहा था। उसमें स्त्रियों की संख्या ही अधिक थी। राजबहुएँ बहुमूल्य शिविकाओं पर आरूढ़ थी। साथ-साथ चलने वाली परिचारिकाओं के चरण विघट्टजनित नुपुरों के क्वणन से दिगंत शब्दायमान हो उठा था। वेगपूर्वक भुज-लताओं के उत्तोलन के कारण मणि जटित चूड़ियाँ चंचल गंगा में खिली हुई कमलिनियाँ हवा के झोंको से विलुलित होकर नीचे उतर आई हों। भीड़ के

नोट

संघर्ष से उनके कानों के पल्लव खिसक रहे थे। वे एक-दूसरे से टकरा जाती थीं। इस प्रकार एक का केयूर दूसरी की चादर में लगकर उसे खरोंच डालता था। पसीनों से धुल-धुलकर अंगपाग उनके चीनाशुंकों को रंग रहे थे। साथ में नर्तकियों का भी एक दल जा रहा था। उनके हँसते हुए वदनों को देखकर ऐसा भाव होता था कि कोई प्रस्फुटित कुमुदों का वन चला जा रहा है। उनकी चंचल हार लताएँ जोर-जोर से हिलती हुई उनके वक्षभाग से टकरा रही थीं, खुली हुई केशराशि, सिंदुर बिंदु पर अटक जाती थी। निरंतर गुलाल और अबीर के उड़ते रहने के कारण उनके केश पिंग वर्ण के हो उठे थे और उनके मनोरम गान से सारा राजमार्ग प्रतिध्वनित हो उठा था।"

इन पंक्तियों में स्थाण्वीश्वर के उत्सव-पूरित वातावरण को साकार रूप में देखकर पाठक स्वयं उस युग का एक दर्शक स्वयं को प्रतीत करता है और यहीं पर उपन्यासकार की वातावरण-चित्रण की सफलता भी दिग्दर्शित होती है।

(ख) प्रकृति-चित्रण के रूप में–'बाणभट्ट की आत्मकथा' उपन्यास में कहा जाए तो प्रकृति का जो चित्रण हुआ है, वह हिंदी-उपन्यास जगत में न केवल अद्वितीय है बल्कि ऐसे वर्णनों ने उपन्यास को महाकाव्योचित गौरव-गरिमा प्रदान करने में भी पर्याप्त सहायता की है। इस प्रकार के चित्रण का एक उदाहरण द्रष्टव्य है–

"देखते-देखते चंद्रमा पद्म-मधु से रंगे हुए वृद्ध कलह की भाँति आकाश गंगा के पुलिन से उदास भाव से पश्चिम जलधि के तट पर उतर गया। समस्त दिडमंडल वृद्ध रंकुमृग की रोमराजि के समान पांडुर हो उठा। हाथी के रक्त से रंजित सिंह के सटाभार की भाँति किंवा लोहित वार्ण लाक्षारस के सूत्र के समान सूर्यकिरणें आकाश-रूपी वन भूमि से नक्षत्र रूपी फूलों को इस प्रकार झाड़ देने लगीं, मानो वे पद्मरागमणि की शलाकाओं से बनी हुई झाडू हों। तारिकाएँ लुप्त होने लगीं। दो-एक जो अब भी बच रही थीं, वे पश्चिमाकाश-रूपी समुद्र-तट पर सीपियों के उन्मुक्त मुख से बिखरे हुए मुक्ता-पटल की भाँति दिख रही थी। पूर्व की ओर प्रकाश आविर्भूत होने लाग। धीरे-धीरे शिशिर-बिंदु को वहन करता हुआ, पद्मवन को प्रकंपित करता हुआ, परिश्रांत नगर-रमणियों के धर्म-बिंदु को विलुप्त करता हुआ, वन्य-महिषों के फेन-बिंदु से सिंचा हुआ, कंपमान पल्लवों और लता-समूहों को नृत्य की शिक्षा देता हुआ, प्रस्फुटित पद्मों का मधुर बरसा कर, पुष्प-सौरभ से भ्रमरों को संतुष्ट करके मंद-मंद संचारी प्रभात-वात बहने लगा।"

(ग) सामाजिक परिस्थितियाँ–'बाणभट्ट की आत्मकथा' उपन्यास में यद्यपि बाणभट्ट को केंद्र बनाकर ही आत्मकथात्मक रूप में कथानक को प्रस्तुत किया गया है तथापि व्यक्तिगत चित्रण होने के साथ ही चूँकि व्यक्ति समाज की ही एक इकाई है, इसलिए स्वभावत: उपन्यास में सामाजिक परिस्थितियों का भी यथाशक्य चित्रण हुआ है। उपन्यास में यद्यपि समाज के केवल उसी वर्ग का चित्रण हुआ है जिससे बाणभट्ट का संबंध रहा है अर्थात् सत्ता-समाज किंतु फिर भी पूरे समाज की कुछ-न-कुछ झलक तो मिल ही जाती है और इसका कारण है निपुणिका एवं सुचरिता की सामाजिक पृष्ठभूमि। इन्हीं प्रसंगों से यह ज्ञात होता है कि तत्कालीन, भारतीय में वर्ग-भेद अपने चरम पर होने के कारण सामाजिक सुदृढ़ता का अभाव था। जन्म से ही जाति का संबंध यद्यपि निश्चित था तथापि निपुणिका और सुचरिता को देखकर ऐसा प्रतीत होता है कि अपने सत्कार्यों के कारण समाज के संभ्रांत वर्ग में भी उनका उठना-बैठना था और उन्हें कुलीन समझा जाता था। उस युग के समाज में बाल-विवाह की प्रथा, सुचरिता इसका उदाहरण है। समाज में कुल मिलाकर नारी की दशा दयनीय ही थी। नारी का बलात् अपहरण करना कोई बड़ी बात नहीं थी। भट्टिनी का अपहरण करके दस्युओं ने उसे बेच दिया और फिर किसी प्रकार वह स्थाण्वीश्वर के कामुक छोटे राजकुल के अंत:पुर में डाल दी गई। उस अंत:पुर में ऐसी ही न जाने कितनी अपहृत तरुणियाँ थीं। इसी प्रकार महामाया का बलात् अपहरण कर उसका विवाह मौरवरि-नरेश ग्रह वर्मा से करा दिया गया, जबकि वर्षों पूर्व ही उसका वाग्दान हो चुका था। ब्राह्मण समाज में सम्मानित व्यक्ति होते थे। ज्योतिष पर पूरा समाज विश्वास करता था। गणिका प्रथा भी उस समय थी। बड़े लोगों के आपसी स्वार्थों में जनता किस प्रकार पिस जाती थी, किस प्रकार उसको प्रताड़ित-लांछित किया जाता था, इसका साक्षात् विग्रह सुचरिता है। उसी के शब्दों में–

"मेरे और मेरे पिता के निर्दोष-निरीह आचरण से जिस प्रकार राजकार्य में बाधा पड़ी है, उसी प्रकार प्रजा की शांति में बाधा पड़ी है, यह दो प्रतिद्वंद्वी स्वार्थों का संघात है। आर्य, हम लोग तो निमित्त बने हैं। मनुष्य जाए चूल्हे-भाड़ में, इन्हें अपने धर्ममत का डिमडिम पीटना है। एक की पीठ पर राज्य शक्ति है और दूसरे की हथेली में प्रजा का विद्रोह।"

तत्कालीन भारतीय समाज की इन्हीं दुर्बलताओं पर हम उपन्यास में बाणभट्ट को विचार करते देखते हैं। वह पूर्णत: मानवीय दृष्टिकोण से विचार करते हुए इसी निष्कर्ष पर पहुँचता है कि–

"मेरा चित्र कहता है कि कहीं-कहीं मनुष्य समाज ने अवश्य गलती की है। यह उन्मत्त उत्सव, ये रासक गान, ये शृंगक सीत्कार, ये अबीर-गुलाल, ये चर्चरी और पटह मनुष्य की किसी मानसिकता दुर्बलता को छिपाने के लिए हैं, ये दुख भुलाने वाली मदिरा हैं, ये हमारी मानसिक दुर्बलता के पद हैं। इनका अस्तित्व सिद्ध करता है कि मनुष्य का मन रोगी है, उसकी चिंताधारा आविल है, उनका पारस्परिक संबंध दुखपूर्ण है।"

और दूसरी ओर, स्थाण्वीश्वर के राजसी जीवन का यह चित्र देखिए जिसमें तत्कालीन राजसी वैभव और कृत्रिमतापूर्ण जीवन एवं उसकी परिस्थितियाँ साकार हो उठी हैं–

"वीथियाँ सुगंधि से सिक्त थीं, और पौर-भवनों में मंगल-पताकाएँ सुशोभित हो रही थीं, राजमार्ग की ओर के सभी वातायन मालती, दाम से अलंकृत हो रहे थे और पौरजन नवीन वस्त्रभूषा से सुसज्जित थे। राजमार्ग श्वेत वस्त्रधारी नागरिकों से पूर्ण था। उनके वस्त्र, उष्णीष, अंगराग और माल्य सभी श्वेत थे। ऊपर सौध-वातायनों से युवतियों के स्वर्णालांकारों की पीली प्रभा व्याप्त हो रही थी। नीचे की श्वेतच्छटा के ऊपर सौध-वातायनों की सौवर्णच्छटा ऐसी मनोहर मालूम हो रही थी, मानो कैलाश पर्वत पर शरतकालीन प्राभातिक धूप फैली हुई हो।"

नोट्स द्विवेदी जी ने 'बाणभट्ट की आत्मकथा' में बाणभट्ट के अन्तर्द्वन्द्व का यथार्थ चित्रण प्रस्तुत करके उसके मानसिक वातावरण का निर्माण किया है।

(घ) धार्मिक-सांस्कृतिक परिस्थितियाँ–'बाणभट्ट की आत्मकथा' में तत्कालीन धार्मिक और सांस्कृतिक परिस्थितियों का चित्रण भी पर्याप्त परिणाम में हुआ है। यह चित्रण एक ओर तो सुगतभद्र के परिप्रेक्ष्य में बौद्ध धर्म के वर्चस्व के रूप में हुआ और दूसरी ओर महामाया एवं अघोरभैरव के वाममार्ग-साधना के प्रसंग में। इन दोनों के बीच विरतिवज्र और सुचरिता का भी प्रसंग है जिसके माध्यम से वैष्णव मत का निदर्शन तो हुआ है, साथ ही लेखक ने यह भी दर्शाना चाहा है कि किस प्रकार दो धर्मों–'बौद्ध एवं वैष्णव' के द्वंद्व में साधारणजन को उत्पीड़ित लांछित किया जाता था। कान्यकुब्ज की यह विशेषता थी कि वहाँ नित नए धर्माचरित्र प्रतिष्ठित हो रहे थे। बौद्ध धर्म राजधर्म था किंतु जब सनातनी ब्राह्मण उडपति ने आचार्य वसुमति को शास्त्रार्थ में पराजित कर दिया तो राजधर्म भी बदल कर सनातनधर्मी हो गया। वैष्णव तंत्र अलग अपने को प्रतिष्ठित करने में लगा हुआ था, जिसके प्रधान आचार्य थे वेंकटेश भट्ट। इसी तंत्र का वर्णन करते हुए लेखक लिखता है–

"आचार्य वेंकटेश भट्ट एक चंदन-काष्ठ के आसन पर पद्मासन बाँधकर बैठे थे। उनके मुख से एक प्रकार का आनंद गदगद भाव प्रकट हो रहा था। आसन के ठीक सामने एक वेदी पर कलश स्थापित था। मैंने आश्चर्य के साथ देखा कि भाषा और तंदुल से एक उर्ध्वमुख त्रिकोण को आड़े भाव से बिद्ध करके अधोमुख त्रिकोण चक्र ठीक इसी प्रकार अंकित था, जिस प्रकार शाक्त तांत्रिकों का श्री चक्र हुआ करता है। उस चक्र के मध्य में प्रफुल्ल शतदल देखकर तो मैं और भी आश्चर्यचकित रह गया। मैंने अब तक यही समझा था कि उर्ध्वमुख त्रिकोण शिव तत्व का प्रतीक है और अधोमुख त्रिकोण शक्ति तत्व का। भागवत संप्रदाय से तो इनका दूर का संबंध भी नहीं है और यह पद्म तो किसी प्रकार वहाँ नहीं चल सकता, क्योंकि पद्म के साथ वज्र होना चाहिए। ऐसा होता, तो सौगत तंत्र ही उसे मान लेते, परंतु यह तो अद्भुत मिश्रण है। मगध का साधारण मनुष्य भी इस अनुष्ठान का विरोध किए बिना न रहता,

नोट

परंतु कान्यकुब्ज विचित्र देश है। यहाँ बाह्य आचारों में तो तिल-मात्र परिवर्तन भी नहीं सहन किया जाता, पर धार्मिक अनुष्ठान में प्रतिदिन नए-नए उपादान मिश्रित होते रहते हैं।"

इसी प्रकार सांस्कृतिक परिस्थितियाँ भी थीं। मदनोत्सव, होलिकोत्सव आदि बड़े धूमधाम से मनाए जाते थे और सामान्य प्रजा भी इसमें बढ़-चढ़कर भाग लेती थी। गणिकाओं के नृत्य, कवि-कलाकारों की कला एवं नाट्याभिनय प्राय: हुआ ही करते थे। कला एवं शिल्प अपनी उन्नत दशा में थे और राजकीय पक्ष से उन्हें प्रोत्साहन प्राप्त था। इस प्रकार के अनेक वर्णन उपन्यास में हैं जिनसे तत्कालीन तक दशा का परिचय मिलता है। होलिकोत्सव का यह दृश्य देखिए–

"सारा नगर पुरवासियों की करतलध्वनि, मधुर संगीत और मृदंग के घोष से गूँज उठा था। मधुमत्त नगर-विलासिनियों के सामने जो भी पुरुष पड़ जाता था, उस पर श्रृंगक (पिचकारी) के रंगीन जल की बौछार हो जाती थी। बड़े-बड़े चौराहे मर्दल गंभीर घोष और चर्चरी ध्वनि से शब्दायमान हो रहे थे। ढेर सुगंधिति अबीर दशों दिशाओं में ऐसा उड़ा था कि दिशाएँ रंगीन हो उठी थीं और नगरी के राज पथ केसर मिश्रित पिष्टातक (अबीर) से इस प्रकार भर गए, जैसे उन पर उषा की छाया पड़ी हुई हो।"

(ङ) राजनीतिक परिस्थितियाँ–उपन्यास में बाणभट्ट का संबंध चूँकि राजनीतिक परिवेश से भी रहा है, इसलिए स्वभावत: उसमें राजनीतिक परिस्थितियों का भी पर्याप्त निदर्शन हुआ है। यह उस समय के परिवेश की कथा है जब भारत में राजनीतिक उथल-पुथल और बाह्याक्रमणों की हर समय संभावना रहती थी। हर्षवर्धन जैसे उदार, चरित्रवान एवं नीतिकुशल व्यक्ति के सम्राट होते हुए भी न जाने कितने सामंत उनकी छत्रछाया में ऐसे पल रहे थे जिनके जीवन का एकमात्र उद्देश्य विभव-विलास भोगना और इसके लिए कन्याओं का अपहरण करना था। लोरिकदेव जैसे सामंत भी थे, जो सम्राट को कुछ न कुछ समझकर अपना झंडा अलग बुलंद किए हुए थे। धार्मिक व्यक्ति राजसत्ता पर हावी रहा करते थे। एक ओर देश पर म्लेच्छों के आक्रमण की आशंका थी और दूसरी ओर शासक वर्ग निवीर्य से हो गए थे, इसी प्रकार प्रजा में धीरे-धीरे विद्रोह की आग प्रज्वलित होने लगी थी। एक उदहारण द्रष्टव्य है–

"भेड़ियों के समान निर्घृण और चींटियों से भी अधिक संघबद्ध प्रत्यंत दस्यु सीमांत पर फिर एकत्र हो रहे हैं। फिर आर्यावर्त के देवमंदिर और विहार, वृद्ध और बालक, साधु और स्त्रियाँ, ब्राह्मण और श्रमण सत्यानाश के बवंडर के शिकार होने वाले हैं। आज गुप्तों का प्रताप प्रस्तमित है, दुर्मद यौधेय उत्पाटितदंत व्याघ्र की भांति हीन दर्प हो गए हैं, मौरवरियों का विक्रमानल निर्वापित हो गया है, केवल कान्यकुब्ज का साम्राज्य ही आज इस विनाश से आर्यावर्त को बचा सकता है। परंतु देखा भट्ट, एक बार यदि दस्युओं ने गिरिवर्त्म लांघकर मैदान में प्रवेश किया, तो उन्हें रोकना कठिन हो जाएगा। इस विषय में मुक्ति पाने के एक मात्र आस्थावान भट्टिनी के पिता हैं।"

इस उद्धरण से यह तो पता चलता है ही कि राजनीतिक संकट कितना गहरा था, साथ ही कृष्णवर्द्धन के रूप में राजनायिकों की यह चाल भी द्रष्टव्य है कि वे भट्टिनी का आदर केवल इसलिए करते हैं क्योंकि उत्तर से भट्टिनी के पिता देवपुत्र तुवरमिलिंद एक प्रबल शासक थे और उनके सहयोग के बिना कान्यकुब्ज साम्राज्य निश्चिंत नहीं रह सकता था।

(च) आर्थिक परिस्थितियाँ–जैसा कि हम पहले ही लिख चुके हैं कि उपन्यास में 'बाणभट्ट की आत्मकथा' होने के कारण यद्यपि बाण एवं उससे संबंध परिवेश के चरित्रांकन को ही प्रमुखता मिली है तथापि उसमें सामाजिक, धार्मिक, सांस्कृतिक एवं राजनीतिक परिस्थितियों की भाँति ही आर्थिक परिस्थितियों का भी यथाशक्य चित्रण हो गया है। उपन्यासकार ने यद्यपि कहीं भी व्यक्ति अथवा किसी समुदाय विशेष की आर्थिक दशा का वर्णन नहीं किया है किंतु जितने भी पात्र हमारे सामने उभरते हैं, उन्हें देखते हुए कहा जा सकता है कि तत्कालीन समाज में अर्थाभाव बिल्कुल नहीं था। सर्वत्र सुख और समृद्धि परिव्याप्त थी। यद्यपि लेखक ने 'दीनार' सिक्के के चलन का उल्लेख किया है, किंतु सर्वत्र इस प्रकार के सिक्के चलते हों ऐसी बात नहीं है। दूसरे, वर्णनों में जहाँ-जहाँ उत्सवों का वर्णन लेखक ने किया है उससे पता चलता है कि सर्वत्र समृद्धि होने के कारण ही लोग बड़े उत्साहपूर्वक इन उत्सवों में भाग लेते थे। बाणभट्ट को एकाध स्थलों पर ब्राह्मण होने के नाते भिखारी शब्द सुनना अवश्य पड़ा है; किंतु तब भिक्षा

का आशय आज जैसी भिक्षा से न होकर दान लेने से था। इस प्रकार तत्कालीन समाज में जो आर्थिक दशा थी, उसे समुन्नत ही कहा जाएगा।

वातावरण संबंधी चित्रण का मूल्यांकन

किसी उपन्यास में लेखक का वातावरण चित्रण किस तरह का है, यह उसके वर्णन कौशल को ध्यान में रखकर देखा जाता है, इसी से उसकी विशेषता का भी ज्ञान होता है। इस दृष्टि से हम निम्नांकित रूपों में विचार कर सकते हैं–

1. **चित्रण की सूक्ष्मता और गहनता–**द्विवेदी जी का देशकाल संबंधी वर्णन अत्यंत सूक्ष्म और गहन है। मानव चरित्रों में उनकी गहरी पैठ है। इसके द्वारा आंतरिक और बाह्य, दोनों प्रकार के वातावरण की सृष्टि हुई है। बाणभट्ट कुमार कृष्णवर्द्धन का यह निमंत्रण पत्र लेकर भट्टिनी के पास पहुँचता है कि वह स्थाण्वीश्वर लौट आए और वहाँ उसका वही सम्मान किया जाएगा जो सम्राट की गरिमा के उपयुक्त है। पत्र के विषय को जानकर निपुणिका बहुत उत्तेजित हो उठती है और बाणभट्ट को इसके लिए फटकारती है कि उसने कैसे इस प्रकार का धूर्तता भरा निमंत्रण पत्र चुपचाप ले लिया? बाद में एकांत मिलते ही बाण स्वयं इस विषय पर विचार करता है। उस समय की उसकी मन:स्थिति द्विवेदी जी ने निम्नलिखित पंक्तियों में अत्यंत सूक्ष्म और गहन स्तर पर उद्घाटन किया है तथा इससे बाणभट्ट का आंतरिक वातावरण सहज ही में रूपायित हो उठा है। उदाहरण देखिए–

"मैं चुपचाप भट्टिनी का आदेश पालन करता गया परंतु एक क्षण के लिए भी निपुणिका के कड़े धिक्कार वाक्यों की चोट को नहीं भुला सका। मुझे अपना प्रमाद स्पष्ट समझ में आ रहा था। मैंने यह क्या किया? क्यों मेरी बुद्धि इतनी मोथी हो गई थी? हाय अभागे बंड, तुमने भट्टिनी का सम्मान बचाने के लिए अपने को विपत्ति में क्यों नहीं झोंक दिया? जिस समय मदगर्वित कान्यकुब्जेश्वर ने तुम्हें लंपट कहा था, उस समय तुमने भट्टिनी का उपयुक्त उत्तर क्यों नहीं दिया? धिक् भाग्यहीन, धिक्! मौरवरियों की रानी का निमंत्रण तुम्हें कान्यकुब्जेश्वर के सामने ही पैरों से कुचल देना था परंतु मेरा स्वाभिमान उस समय कहाँ चला गया था? हाय, मैंने भट्टिनी को अपमानित होने दिया, मेरे पाप का कोई प्रायश्चित नहीं है। तुषाग्नि में जलने से भी यह पाप प्रशमित नहीं होगा।"

स्व-मूल्यांकन (Self-Assessment)

बहुविकल्पीय प्रश्न (Multiple Choice Questions) :

4. महामाया कौन-सी प्रतिमा की भाँति निश्चल खड़ी थी?
   (क) मोम (ख) लकड़ी
   (ग) प्रस्तर (घ) इनमें से कोई नहीं।
5. बाल-विवाह की प्रथा के लिए उपन्यास में किसका उदाहरण दिया गया है?
   (क) सुचरिता (ख) निपुणिका
   (ग) महामाया (घ) भट्टिनी।
6. द्विवेदी जी कौन-सी भाषा के प्रकांड पंडित हैं?
   (क) हिंदी और अंग्रेजी (ख) हिंदी और संस्कृत
   (ग) उर्दू और संस्कृत (घ) इनमें से कोई नहीं।

2. **चित्रण की यथार्थता और स्वाभाविकता–**द्विवेदी जी का देशकाल व वातावरण संबंधी चित्रण यथार्थ और स्वाभाविक है। लेखक ने जहाँ एक ओर नागर वातावरण को सजीव और यथार्थ रूप में प्रस्तुत किया है, वहीं वाममार्गी साधकों की एकांत साधना स्थली के दृश्यों को भी सजीव और यथार्थ बना दिया है। एक उदाहरण द्रष्टव्य है–

"वज्रतीर्थ का एक विशाल शमशान था। चारों ओर नीम के तेल में भूने जाते हुए लशुन के समान जलते हुए शवों की दुर्गंध व्याप्त हो रही थी। सारा शमशानघाट गिद्धों, और सियारों के पद-चिह्नों से भरा था। हड्डियों और माँस के छिन्न खंडों के ऊपर संध्या का घूसर प्रकाश बड़ा भयावना दिखाई दे रहा था। जलती चिताओं के पास थोड़ा प्रकाश दिखाई दे जाता था, परंतु उनके आगे अंधकार और भी ठोस हो जाता था। रह-रहकर उलूकों के घूत्कार और शिवाओं के चीत्कार से शमशान का वातावरण प्रकंपित हो उठता था। इसी विकट दृश्य के बीच करालादेवी का मंदिर था। मंदिर वह नाम मात्र का ही था। एक चत्वर, एक हवन कुंड और धूपकाष्ठ के अतिरिक्त वहाँ और कुछ नहीं था। करालादेवी की मूर्ति सचमुच ही कराल थी। उनकी लोल जिह्वा एक ही साथ विश्व को ग्रास करती हुई उसका त्राण करती हुई भी जान पड़ती थी। उसके गले में विशाल मुण्डमाला गुल्फों तक लटक रही थी। करालादेवी के सामने वही रहस्यमयी स्त्री जानुपातपूर्वक खड़ी थी और उससे भी अधिक अशिव वेशधारी एक पुरुष ताजी चर्बी से हवन कर रहा था। आहुति पड़ने के साथ ही साथ अग्नि की पिंगल लोल जिह्वा विकराल भाव से लपक पड़ती थी और क्षणभर के लिए वायुमंडल दुर्गंधि से और नभोमंडल पिंगल प्रकाश से व्याप्त हो जाता था। कुंड के चारों ओर नरकपालों में भिन्न-भिन्न आह्वनीय सामग्री रखी हुई थी।"

3. वर्णन-शैली की प्रभावात्मकता–'बाणभट्ट की आत्मकथा' उपन्यास में द्विवेदी जी की वर्णन-शैली बड़ी ही व्यंजक और प्रभावात्मक है। उपर्युक्त उद्धरण उनकी वर्णन-शैली की सूक्ष्मता, प्रभावात्मकता एवं कुशलता का भी बड़ा ही यथार्थ और सुंदर उदाहरण है। अन्यत्र भी उनकी यही प्रभावात्मकता दिखाई देती है।

4. सोद्देश्यता–देशकाल व वातावरण का वर्णन साधन है, साध्य नहीं। इसलिए न तो इतना अधिक हो कि सर्वत्र वातावरण की ही प्रधानता हो जाए और न इतना कम कि वातावरण के संबंध में कुछ ज्ञात ही न होने पाए। वह कथानक तथा वर्णन में पूर्ण रूपेण घुलमिल जाना चाहिए। द्विवेदी जी के इस उपन्यास 'बाणभट्ट की आत्मकथा' में भी यह बात देखी जा सकती है। उनका वातावरण संबंधी चित्रण कलात्मक है और साथ ही सोद्देश्य भी है। जहाँ आवश्यकता है, वहीं उसका वर्णन हुआ है और वह कथा में पूर्णरूपेण घुलमिल गया है। उपन्यास का प्रमुख उद्देश्य विश्रुत कवि बाणभट्ट के माध्यम से मानवकल्याण भावना को प्रस्तुत करता रहा है इसलिए इसमें समाज का भी पर्याप्त चित्रण हुआ है और वातावरण का चित्र इसमें पूरी तरह सहायक सिद्ध हुआ है।

निष्कर्ष

समग्रत: उपर्युक्त विवेचन के आधार पर यह कहा जा सकता है कि द्विवेदी जी के उपन्यास 'बाणभट्ट की आत्मकथा' में वातावरण का बड़ा स्वाभाविक एवं पूर्णत: सफल चित्रण हुआ है। बाणभट्ट कालीन युग, तत्कालीन परिवेश के साथ इसमें मार्मिक रूप में अभिव्यक्ति पा सका है। इस प्रकार इसमें आंतरिक एवं बाह्य दोनों ही प्रकार के वातावरण संबंधी चित्र पूर्णत: सफलता के साथ चित्रित हो गए हैं।

8.4 भाषा-शैली सौष्ठव के आधार पर

भाषा

भाषा, भावों की वाहिका होती है अर्थात् उपन्यासकार के मानसिक भावों को भाषा के माध्यम से ही मूर्तता होती है। उपन्यास की भाषा का रूप देखते समय हमें दो दृष्टियों से विचार करना होता है। उपन्यासकार की अपनी भाषा और उसके पात्रों द्वारा प्रयुक्त भाषा। यद्यपि दूसरे प्रकार की भाषा भी उपन्यासकार के ही गुण कौशल की परिचायिका होती है, फिर भी पात्रों की विभिन्न मन:स्थिति के अनुकूल भाषा में भेद हो सकता है और उसमें शैथिल्य अथवा कसावट भी आ सकती है लेकिन जो भाषा प्रत्यक्ष रूप से लेखक प्रस्तुत करता है, वह उसकी अपनी भाषा होती है। किसी भी साहित्यक रचना का महत्त्व उसके अन्य गुणों के साथ ही भाषा-शैली की दृष्टि से भी आंका जाता है। रचना में यदि भाषा-शैली प्रभावी, मार्मिक एवं सहज-संप्रेषणीय नहीं होगी और उसे शब्दाडंबर में ही अभिव्यक्ति दी गई हो, तो रचना अपनी अर्थवत्ता खो बैठती है।

'बाणभट्ट की आत्मकथा' की भाषा का अध्ययन करते समय उसके निम्नलिखित रूप हमारे सामने आते हैं–

(क) कथा-वर्णन में प्रयुक्त भाषा रूप

1. सरल-स्वाभाविक बोलचाल की भाषा
2. अलंकृत और काव्यात्मक भाषा
3. गंभीर चिंतन-प्रधान भाषा।

(ख) संवादों में प्रयुक्त भाषा-रूप

1. साधारण बोलचाल की भाषा
2. शुद्ध परिनिष्ठित हिंदी खड़ी बोली का रूप
3. गंभीर चिंतन-प्रधान भाषा
4. अलंकृत और काव्यात्मक भाषा।

अब आगे इन पर सोदाहरण 'बाणभट्ट की आत्मकथा' के परिप्रेक्ष्य में विचार किया जाएगा।

1. सरल-स्वाभाविक बोलचाल की भाषा–द्विवेदी जी ने एक विश्व-विश्रुत संस्कृत कवि बाणभट्ट की आत्मकथा की सर्जना की इसलिए उसमें स्वाभाविक और सहज भाषा का प्रयोग बहुत कम परिमाण में हुआ है, तथापि जहाँ भी संभव हो सकता था उन्होंने वर्णनों में ऐसी भाषा रखने का भी प्रयास किया है। इस संदर्भ में एक उदाहरण द्रष्टव्य है–

"आवारा तो मैं था ही। इस नगर से उस नगर में, इस जनपद से उस जनपद में, बरसों मारा-मारा फिरता रहा। इस भटकन में मैंने कौन-सा कर्म नहीं किया? कभी नट बनता, कभी पुतलियों का नाच दिखाता, कभी नाट्य-मंडली स्थापित करता और कभी पुराण-वाचक बनकर जनपदों को धोखा देता रहा, सारांश, कोई कर्म छोड़ा नहीं।"

2. अलंकृत और काव्यात्मक भाषा–द्विवेदी जी हिंदी और संस्कृत के प्रकांड पंडित ही नहीं हैं वरन् सहृदय रसिकता से भी परिपूर्ण हैं। भाषागत अलंकरण मोह तथा काव्यात्मकता के प्रति उन्हें अतिशय अनुराग है। यही कारण है कि उपन्यास में इस प्रकार की भाषा का प्रयोग प्रचुरता से उन्होंने किया है। बस उन्हें अवसर चाहिए, अवसर मिला नहीं कि उनका रसिक हृदय सजी-संवरी भाषा से चित्र बनाने में संग्लन हो जाता है। इस प्रकार की भाषा का एक उदाहरण देखिए–

"निपुणिका ने भक्ति से गदगद होकर उस दिव्य मूर्ति के चरण-तल में तत्काल उद्धत ग्यारह आर्द्र पद्म चढ़ाकर प्रणिपात किया। ऐसा जान पड़ता था कि मदनविरह-विधूरा रतिदेवी ही चित्रनयन का कोप शमन करने के लिए प्रणत हुई है। निपुणिका के रोम-रोम से कृतज्ञता की ज्योति निर्गत हो रही थी। महादेव पर चढ़ाए हुए उन जल-बिंदुस्त्रावी कमलों को देखकर मेरा मन विगलित हो गया। वे ऊर्ध्वविपाटित चंद्रदलों की भाँति, तांडव-बिहारी मत्त धूर्जरि के विकट अट्टहास के छोटे-छोटे अवयवों की भांति, तांडव-विध्वस्त वासुकि नाग के फण कलशों की भाँति, पांचजन्य शंख के सहोदरों की भांति, क्षीरोद सागर के हृदयपद्मों की भांति, ऐरावत समर्पित मुक्तामय मुकुटों की भांति महादेव की मूर्ति की शोभा बढ़ा रहे थे। उनके सामने जानुपातपूर्वक झुकी हुई निपुणिका स्वर्मंदराकिनी धारा की तरह मन से शत-शत पवित्र उर्मियों को संचालित कर रही थी। महादेव को प्रणाम करते समय मेरा मन इस पवित्रता की मूर्ति को, भक्ति की स्रोतस्विनी को, श्रद्धा की निर्झरिणी को, अनुराग की खनि को, सेवा की उत्सधारा को चुपचाप प्रणाम किए बिना न रह सका।"

यह तो था भक्तिमयी निपुणिका का काव्यात्मक वर्णन और अब देखिए उपन्यास में वर्णित किए गए अनेक प्रकृति-वर्णनों में से एक वर्णन। सूर्योदय का यह वर्णन कितना अलंकृत और काव्यात्मक है, पाठक स्वयं देख लें।

"उस समय आकाश वृद्ध कपोत के पक्ष के समान धूम्र हो गया था। चंद्रमा कटी हुई पतंग की भांति अस्तशिखर

नोट

पर ढल चुका था। तरुण अरुण की पीताभ रश्मियाँ स्वर्ण शलाका की बनी झाड़ू के समान पूर्वगमन के नक्षत्रों को झाड़ू लगा रही थी। महारुद्र के पिनाक की भांति धनुराशि आकाश के पश्चिम-मण्डलार्थ में प्रत्यंचित हो चुकी थी और क्षीणभूमिष्ठा रजनी संन्यास लेने के लिए एक-एक करके अपने नक्षत्रालंकारों को खोल रही थी। चंडीमण्डप तुहिनसिक्त हो गया था और सामने के मैदान की दूर्वावलियाँ अलसशिथिल भाव में पड़ी दीख रही थीं।"

टास्क 'बाणभट्ट की आत्मकथा' को 'अदृप्त प्रेम-व्यंजना का महाकाव्य' कहना कितना उचित है? अपने विचार प्रस्तुत कीजिए।

3. **गंभीर चिंतन-प्रधान भाषा**—जहाँ उपन्यासकार विचारों की अभिव्यक्ति करता है, उसका चिंतन-पक्ष प्रबल होता है, वहाँ गंभीर, परिष्कृत और चिंतन-प्रधान भाषा का प्रयोग करता है। इस प्रकार की भाषा में कथा-प्रवाह की अपेक्षा गद्यात्मकता अधिक है, फिर भी कथा-प्रवाह के बीच भी इसके दर्शन किए जा सकते हैं। उदाहरणार्थ—

"राज्य-गठन, सैन्य-संचालन, मठ-स्थापन और निर्जन-वास पुरुष की समताहीन, मर्यादाहीन, श्रृंखलाहीन महत्त्वकांक्षा के परिणाम हैं। इनको नियंत्रित कर सकने की एकमात्र शक्ति नारी है। कालिदास ने इस रहस्य को पहचाना था। इतिहास साक्षी है कि इस महिमामयी शक्ति की उपेक्षा करने वाले साम्राज्य नष्ट हो गए हैं, मठ विध्वस्त हो गए हैं, ज्ञान और वैराग्य के जजाल फेन बुदबुद की भांति क्षण भर में विलुप्त हो गए हैं। कालिदास ने जिस महासत्य का साक्षात्कार किया था, उसे वे ही प्रकाशित कर सकते थे। सरस्वती स्वयं उनके कंठ में वास करती थी। वे वाग्देवता के दुलारे थे। मैं पथभ्रांत, अकर्मा उनकी तुलना में कैसे रखा जा सकता हूँ?"

8.5 उद्देश्य के आधार पर

कोई भी साहित्यिक रचना निरुद्देश्य नहीं होती, उसकी सर्जना के पीछे कोई न कोई उद्देश्य अवश्य होता है। यह उद्देश्य प्रत्यक्ष भी हो सकता है और अप्रत्यक्ष भी, प्रत्यक्ष उद्देश्य 'कला जीवन के लिए' के सिद्धांत का पोषक है और अप्रत्यक्ष उद्देश्य 'कला के लिए' के सिद्धांत का प्रतिपादक है। यद्यपि उद्देश्य की पूर्व योजना से उपन्यास की कला एवं स्वाभाविक भावधारा जड़ित, बंधनबद्ध एवं निजत्वहीन एवं निर्जीव हो जाती है। उसमें पूर्वाग्रह की बोझिलता के कारण निजत्व का सर्वथा लोप हो जाता है। किंतु यदि स्वभावत: कोई उद्देश्य उसमें समाविष्ट हो गया है, तो वह श्लाघ्य ही कहा जाना चाहिए। द्विवेदी जी संस्कृत एवं हिंदी साहित्य के न केवल मूधन्य एवं प्रकांड पंडित हैं वरन् एक विशिष्ट जीवनधारा से भी ओतप्रोत हैं। यही कारण है कि उनके उपन्यासों में व्यक्ति एवं समाज की यथार्थ निर्मल-निष्पाप रूप में अभिव्यक्ति हुई है। यह यथार्थ एक ओर व्यक्ति संदर्भों में ध्वनित हुआ है और दूसरी ओर सामाजिक संदर्भों में भी व्यक्त हुआ है।

द्विवेदी जी के उपन्यास 'बाणभट्ट की आत्मकथा' का बाह्य उद्देश्य, जिसे हम मोटा उद्देश्य भी कह सकते हैं—बाणभट्ट एवं हर्षवर्धनकालीन युग को उसके तमाम संदर्भों-सामाजिक, राजनीतिक, आर्थिक, धार्मिक एवं सांस्कृतिक के साथ चित्रित, वर्णित कर देना है। एक प्रकार से, इस उपन्यास के माध्यम से द्विवेदी जी इतिहास के भीतर के इतिहास से पाठक को परिचित करना चाहते हैं। दूसरी ओर बाणभट्ट जैसे प्रकांड पंडित एवं सहृदय कवि के माध्यम से द्विवेदी जी विश्व मानववाद का प्रत्याख्यान करना चाहते हैं। भट्टिनी बाणभट्ट से, जैसे द्विवेदी जी के ही इस उद्देश्य को व्यक्त करते हुए कहती है—"एक जाति दूसरी को म्लेच्छ समझती है, एक मनुष्य दूसरे को नीच समझता है, इससे बढ़कर अशांति का कारण क्या हो सकता है भट्ट? तुम्हीं ऐसे हो जो नर लोक से किन्नर लोक तक व्याप्त एक ही रागात्मक दृश्य, एक ही करुणायित चित्त को हृदयंगम करा सकते हो।"

अदृप्त प्रेम-व्यंजना का महाकाव्य

व्यक्तिगत स्तर पर देखें, तो द्विवेदी जी निखिल विश्व-मानववाद के उस सोपान को व्यंजित करना चाहते हैं, जहाँ चारों ओर आनंद ही आनंद है, प्रेम ही प्रेम है। नर लोक से लेकर किन्नर लोक तक एक ही रागात्मक हृदय परिव्याप्त है। सबसे प्रेम करो, किंतु सीमाबद्ध रहकर। व्यक्ति को अपनी सीमाओं की परिचिति होनी चाहिए तभी तो अदृप्त प्रेम अपनी सार्थकता पाता है। निपुणिका के शब्दों में कहें तो "अपने को निःशेष भाव से दे देना ही वशीकरण है" और इसी सार्थकता को पाने के लिए निपुणिका ने अपने 'स्व' का बलिदान कर दिया। इतना ही नहीं, उसकी मृत्यु ने जहाँ बाणभट्ट एवं भट्टिनी को हिलाकर रख दिया, वहीं उन्हें ऐसी अनुभूति भी हुई जैसे स्वर्ग में प्रसन्न भाव से विचरण करते हुए वह मुस्कराकर कह रही है–"मैंने कुछ भी नहीं रखा, अपना सब कुछ तुम्हें दे दिया और भट्टिनी को भी दे दिया। दोनों में कोई विरोध नहीं। प्रेम की दो परस्पर विरुद्ध दिशाएँ एकसूत्र हो गई हैं।" प्रारंभ में निपुणिका का बाणभट्ट के प्रति जो प्रेम था, वह मांसल था, उसमें वह विश्वजनीनता नहीं थी और न थी अदृप्त भावना, किंतु कालांतर में उसका मोह भक्ति की ओर अग्रसर हो गया और उसने महावराह को पा लिया और फिर तो क्रमशः अदृप्त प्रेम आत्म-बलिदान के सोपान की ओर बढ़ चला और आर्य वाभ्रव्य के इस कथन ने तो उसका कायाकल्प ही कर दिया–

"देख बिटिया, मनुष्य जितना देता है उतना ही पाता है। प्राण देने से प्राण मिलता है, मन देने से मन मिलता है। आत्मदान ऐसी वस्तु है जो दाता और गृहीता दोनों को सार्थक करती है। लौकिक मानदंड से आनंद नामक वस्तु को नहीं नापा जा सकता। दुःख तो केवल मन का विकल्प ही हैं, मनुष्य तो नीचे से ऊपर तक केवल परमानंदस्वरूप है। अपने को निःशेष भाव में से दे देने से ही दुख जाता रहता है, परमानंद प्राप्त होता है।"

और निपुणिका ने उस भाव-रूप सत्य को पा लिया, अपने को उत्सर्ग करके। प्रेम की दो विरोधी दिशाओं को अपना बलिदान देकर उसने एकसूत्र कर दिया।

व्यक्तिगत स्तर पर यही अदृप्त प्रेम-व्यंजना सुचरिता के प्रसंग में भी व्याख्यायित हुई है। उसके माध्यम से द्विवेदी जी जैसे यही बताना चाहते हैं कि–"यह प्रसाद है आर्य कि यह शरीर नरक का साधन है। यह बैकुण्ठ है। इसी को आश्रय करके नारायण अपनी आनंदलीला प्रकट कर रहे हैं। आनंद से ही यह भुवनमंडल उद्भासित है। आनंद से ही विधाता ने सृष्टि उत्पन्न की है। आनंद ही उसका उद्गम है, आनंद ही उसका लक्ष्य है। लीला के सिवा इस सृष्टि का और क्या प्रयोजन हो सकता है आर्य?" किंतु मनुष्य इस तथ्य से सर्वथा अपरिचित है। वह तो दृप्त प्रेम का साधक है, व्यक्तिहित तक सीमित हैं। इसीलिए संसार से संघर्ष चल रहा है। सुचरिता ग्लानि-मन हो कहती भी है–"मन बड़ा पापी है गुरुदेव, कब वह मनुष्य को नारायण के रूप में देखेगा?" और उसने देख भी लिया, पति के पुनः मिलने पर उसने उसकी तपश्चर्या में कोई बाधा नहीं डाली बल्कि स्वयं भी साधना-निबद्ध हो गई। आहा, कैसा होगा यह साधकसाधिका का ग्राहस्थ्य। अदृप्त प्रेम का यह विश्वव्यापी प्रसार ही द्विवेदी जी का एकमात्र उद्देश्य रहा है।

नोट्स भट्टिनी एवं महामाया के प्रसंगों द्वारा भी द्विवेदी जी ने अदृप्त प्रेम को व्यंजित किया है और इस प्रकार अपने मूल उद्देश्य की दृष्टि से 'बाणभट्ट की आत्मकथा' को उपन्यास के बजाए एक उत्कृष्ट गद्यात्मक महाकाव्य बना दिया है। किसी उपन्यास में महाकाव्योचित भाव-गरिमा भर देना दुष्कर ही तो है और अपने उपन्यास में यही प्रस्तुत करके द्विवेदी जी ने अपने महत् लेखकीय दायित्व को बखूबी निबाहा है।

उपर्युक्त मूलोद्देश्य के अतिरिक्त लेखक ने सामाजिक यथार्थ को भी उपन्यास में प्रस्तुत किया है और इसके लिए विविध संदर्भ प्रस्तुत किए हैं। इन्हें देखते हुए कहा जा सकता है कि इनका चित्रण करना भी द्विवेदी जी का प्रच्छन्न उद्देश्य अवश्य रहा है। इन प्रच्छन्न उद्देश्यों को सामाजिक यथार्थ के परिप्रेक्ष्य में निम्नलिखित रूपों में देखा जा सकता है–

नोट

(क) धार्मिक परिस्थितियों का चित्रण करना

(ख) सामाजिक परिस्थितियों का चित्रण करना

(ग) राजनीतिक परिस्थितियों का चित्रण करना

(घ) आर्थिक परिस्थितियों का चित्रण करना

(ङ) सांस्कृतिक परिस्थितियों का चित्रण करना।

अब आगे इन पर विस्तार से विचार किया जा रहा है–

(क) धार्मिक परिस्थितियों का चित्रण करना–'बाणभट्ट की आत्मकथा' उस युग के परिप्रेक्ष्य में लिखी गई है जब हर्षवर्द्धन इस देश का एक प्रमुख शासक था। यह वह युग था, जब एक ओर तो हिंदू-सनातन धर्म अपनी उखड़ी जड़ों को स्थापित करने में लगा हुआ था और दूसरी ओर बौद्धधर्म अपने व्यापक प्रभाव से न केवल जन-जन को उद्वेलित कर रहा था, वरन् राजसत्ता पर तक छा गया था। इन दो बड़े धर्मों के बीच अनेक उपधर्म और उनकी शाखाएँ-प्रशाखाएँ फल-फूल रही थीं। बौद्धों में भी सुगतभद्र और वसुभूति दो आचार्यों के अलग-अलग खेमे थे। सुगतभद्र के शिष्य 'सौगत' कहलाते थे और वसुभूति तर्क-वाद में विश्वास रखता था। सम्राट हर्षवर्द्धन को दोनों का वरद-हस्त प्राप्त था और इसलिए बौद्ध धर्म ही स्थाण्वीश्वर अथवा कान्यकुब्ज राज्य का राजधर्म था। सुगतभद्र शील एव गुणसंपन्न बौद्धाचार्य थे और उनकी दृष्टि में धर्म में तर्क नहीं होना चाहिए। तर्कवाद के कारण ही सद्धर्म अपना प्रभाव खो सकता है किंतु वसुभूति तर्कशक्ति में प्रवीण था और हर किसी पंडित को तर्क हेतु ललकारता था। इसका यह परिणाम हुआ कि एक दिन सनातनी पंडित और बाण के भाई उडुपति से उसे पराजय का मुँह देखना पड़ा। यह ऐतिहासिक सत्य भी है और इसी के फलस्वरूप कान्यकुब्ज की राजसत्ता सनातन धर्मावलंबी हो गई।

दूसरी ओर शैव मतान्तर्गत 'अघोरवाद' भी जनता के बीच अपना व्यापक प्रभाव जमा चुका था। अघोरभैरव और महामाया आदि उपन्यास में इसी अघोरवाद' का प्रतिनिधित्व करते हैं। इनकी दृष्टि में नारी और पुरुष का भेद व्यर्थ है। नारी और पुरुष के सहयोग से ही शांति संभव है। इसे 'कौल' मत भी कहते थे, जिसके अनुसार सृष्टि का प्रत्येक अणु देव रूप है, त्रिपुरसुंदरी की लीला सारी सृष्टि और साधक को जिस रूप में वह भा ले, उसी रूप की आराधना करनी चाहिए। इनका गुरुमंत्र था कि किसी से भी नहीं डरना गुरु से भी नहीं, मंत्र से भी नहीं, लोभ से भी नहीं, वेद से भी नहीं। चमत्कार प्रदर्शन इन अवधूतों को प्रिय था और इसी कारण इनकी लोकप्रियता भी बढ़ गई थी। ये साधक मदिरा-पान करते थे और नारी को त्रिपुर सुंदरी मानकर उसका भोग लगाने के बाद प्रसाद ग्रहण करते थे और भी कई मुद्राएँ ये साधक करते थे। शव-साधना भी इस तंत्र की एक प्रमुख विशेषता थी।

इस युग में 'वैष्णव तंत्र' नाम से एक नई साधना पद्धति भी विकसित हो रही थी जिसमें विष्णु की आराधना प्रमुख थी। इस तंत्र में जो विचित्रता थी, उसका वर्णन करते हुए बाण कहता है–

"मैंने आश्चर्य के साथ देखा कि माष और तंदुल से एक ऊर्ध्वमुख त्रिकोण को आड़े भाव से बिद्ध करके अधोमुख त्रिकोण चक्र ठीक उसी प्रकार अंकित था, जिस प्रकार शक्ति तांत्रिकों का श्रीचर हुआ करता है। उस चक्र के मध्य में प्रफुल्ल शतदल देखकर तो मैं और भी आश्चर्यचकित रह गया। मैंने अब तक यही समझा था कि ऊर्ध्वमुख त्रिकोण शिवतत्व का प्रतीक है और अधोमुख त्रिकोण शक्ति-तत्व का, भागवत संप्रदाय से तो इनका दूर का संबंध भी नहीं है और यह पद्म तो किसी प्रकार वहाँ नहीं चल सकता, क्योंकि पद्म के साथ वज्र होना, चाहिए। ऐसा होता, तो सौगत तंत्र ही इसे मान लेते, परंतु यह तो अद्भुत मिश्रण है। मगध का साधारण मनुष्य भी इस अनुष्ठान का विरोध किए बिना न रहता, परंतु कान्यकुब्ज विचित्र देश है। यहाँ बाह्य आचारों में तो तिल-मात्र परिवर्तन भी नहीं सहन किया जाता पर धार्मिक अनुष्ठान में प्रतिदिन नए-नए उपादन मिश्रित रहते हैं।"

इतना ही नहीं, जिस विष्णुरूप की साधना ये करते थे, वह भी विचित्र था। विष्णु मूर्ति के साथ काम गायत्री का स्तवन-अद्भुत मिश्रण था इस पद्धति में।

इन विभिन्न मत मतांतरों के साथ ही सनातन धर्मी लोग महावराह की भी पूजा किया करते थे। भट्टिनी और निपुणिका के माध्यम से लेखक ने इस ओर संकेत किया है।

स्व-मूल्यांकन (Self-Assessment)

निम्नलिखित कथनों में सत्य अथवा असत्य की पहचान करें

(State Whether the following statements are True or False) :

7. सुगतभद्र के शिष्य 'सौगत' कहलाते थे।
8. निपुणिका को यौवनकाल में ही वैधव्य का अभिशाप झेलना पड़ा।
9. गणिकायें स्वेच्छा से अपना शरीर नहीं बेचा करती थीं।

(ख) सामाजिक परिस्थितियों का चित्रण करना–इस ओर लेखक ने केवल संकेत दिए हैं और इसका कारण है–समाज एवं शासन दोनों पर धर्म का वर्चस्व। इसीलिए धार्मिक परिप्रेक्ष्य में ही सामाजिक परिस्थितियाँ चित्रित हुई हैं। धर्म द्वारा निर्धारित वर्ण व्यवस्था से पूरा समाज जकड़ा हुआ था, इसलिए स्वभावत: जन्म के आधार पर जाति का निर्धारण निश्चित था। जाति-पांति का प्रबल जोर था किंतु अपने कार्यों से निम्न जाति के लोगों को भी अभिजात्य वर्ग के साथ उठने-बैठने की सुविधा कभी-कभी मिल जाती थी। जैसे–निपुणिका और सुचरिता।

विधवा विवाह निषेध के साथ ही बाल-विवाह की प्रथा समाज में अपनी जड़े जमाए हुए थी। निपुणिका को यौवन काल में ही वैधव्य का अभिशाप झेलना पड़ा और दूसरी ओर सुचरिता का बाल विवाह इसके प्रमाण हैं। उसका विवाह बाल्यावस्था में ही हो गया था और कुछ ही दिन बाद उसका पति विरतिवज्र ने संन्यास धारण कर लिया। धर्म का इतना व्यापक प्रभाव समाज पर था कि गृहस्थी छोड़कर संन्यासी बन जाना गौरव की बात समझी जाती थी।

समाज में वेश्या-प्रथा अपने चरम पर थी किंतु इसके दो रूप थे–एक तो गणिका समाज का, जिसे धर्म एवं समाज द्वारा खुले रूप में मान्यता प्राप्त थी और गणिकाएँ स्वेच्छा से अपना शरीर बेचा करती थीं और दूसरी वे अभागिनें थीं जिन्हें बलात् अपहरण करके उनके शील का व्यापार छिपे स्तर पर किया जाता था। स्थाण्वीश्वर के छोटे राजकुल का अंत:पुर ऐसी ही बलात् अपहृत तरुणियों से अटा पड़ा था। हर्षवर्द्धन यद्यपि स्वयं गुणी और चरित्रवान् था किंतु उसकी छत्रछाया में न जाने कितने ऐसे सामंत पल रहे थे जो स्त्री-भोग में ही लिप्त रहते थे। इस प्रकार तत्कालीन नारी समाज, समाज का सर्वाधिक पीड़ित और लांछित वर्ग था जिसके जीवन की इतिश्री केवल पुरुष द्वारा अपने शरीर का मर्दन करवाना भर था। समाज में नारी की इसी दयनीय स्थिति का निदर्शन भट्टिनी में हुआ है। वह कहती है–

"नगरहार से पुरुषपुर, पुरुषपुर से जालंधर और फिर न जाने कहाँ-कहाँ मुझे दस्युओं के साथ घूमना पड़ा और अंत में स्थाण्वीश्वर के छोटे राजकुल में आश्रय मिला। जिस दिन नगरहार के मार्ग में दस्युओं ने इस अभागे शरीर का स्पर्श किया, उस दिन तक मुझे देवपुत्र की कन्या होने का अभिमान था। मैं एक मास तक अपने पिता का नाम ले-लेकर रोती रही। बाद में मुझमें से वह अभिमान चला गया। आज भगवान् की बनाई और लाखों कन्याओं की भांति, मैं भी एक मनुष्य कन्या हूँ। उन्हीं की भांति सुख-दु:ख की पात्र, मैं भी हूँ। उन्हीं की भांति मेरा जन्म भी अपनी सार्थकता के लिए नहीं है। मेरा अहंकार मर चुका है। अभिमान नष्ट हो गया है, कौलीन्यगर्व विलुप्त हो चुका है। मैं घर्षिता, अपमानिता, कलंकिनी, सौ-सौ मानवियों की भाँति सामान्य नारी हूँ।"

(ग) राजनीतिक परिस्थितियों का चित्रण करना–उपन्यास में तत्कालीन राजनीतिक स्थिति का जो चित्र उभरता है, उसके अनुसार उत्तर में देवपुत्र तुवरमिलिंद यद्यपि दुर्द्धर्ष और प्रतापी सम्राट थे और कान्यकुब्ज का शासक हर्षवर्द्धन भी एक योग्य प्रशासक था किंतु कुल मिलाकर देश की राजनीतिक स्थिति डांवाडोल थी। सीमाओं पर दस्यु दल सक्रिय थे और उनकी सक्रियता का प्रमाण इसी से मिल जाता है कि तुवरमिलिंद जैसे साहसी एवं अज्ञेय शासक की एकमात्र पुत्री चंद्रदीधिति तक का अपहरण कर लिया गया और बेच दिया गया। हर्षवर्धन स्वयं चाहे कितना सदाचारी हो, उसकी छत्रछाया में भोग-विलास जिस प्रकार पनप रहा था, उसे देखते हुए कहा जा सकता है कि देश

की चिंता-आसन्न संकट की चिंता उसे भी नहीं थी। वह केवल राज-सुख भोग रहा था। पूरा राजकीय वर्ग तो उत्सव और राग रंग में ही लिप्त था, देश की चिंता किसी को नहीं थी। तुवरमिलिंद से आशा अवश्य थी किंतु पुत्री वियोग ने उन्हें तोड़कर रख दिया था। इस प्रकार से प्रजा विद्रोह के कगार पर थी और यदि हर्षवर्द्धन कूटनीति चल कर जनता को शांत करने के लिए चारूस्मिता एवं विद्युदपांगा के नृत्य का आयोजनन करता तो संभवत: महामाया द्वारा प्रेरित युग द्रोह एक नया ही गुल खिला देता। राजतंत्र चरमरा उठता और प्रजातंत्र की नींव पड़ जाती किंतु कूटनीति ने सब व्यर्थ कर दिया। महामाया का यह कथन तत्कालीन राजनीति के खोखलेपन को कितने पैने रूप में उजागर करता है, देखिए–

"अमृत के पुत्रों, मृत्यु का भय माया है, राजा से भय दुर्बल चित्त का विकल्प है। प्रजा ने राजा की सृष्टि की है। संगठित होकर म्लेच्छवाहिनी का सामना करो। देवपुत्रों और महाराजाधिराजाओं की आशा छोड़ों समस्त उत्तरापथ की लाज तुम्हारे हाथों में है। अमृत के पुत्रों, आर्य विरतिवज्र और आयुष्मती सुचरिता को बंदी बनाना, लाख-लाख निरीह ब्राह्मणों और श्रमणों की रक्षा के लिए नहीं हुआ है, वह महाराजाधिराज या उनके आश्रित सामंत की नाक बचाने के लिए हुआ है। यह पहला अन्याय नहीं है, अंतिम भी नहीं होगा। यह दुर्वह संपत्ति-मद का चिराचरित रूप है। इसके लिए न्याय की प्रार्थना व्यर्थ है। दुद्धर्ष म्लेच्छवाहिनी का सामना देवपुत्रों की वेतनभोगी सेना नहीं कर सकेगी। क्या ब्राह्मण और क्या चाण्डाल, सबको अपनी बहू-बेटियों की मान-मर्यादा के लिए तैयार होना होगा। मैं भविष्य देख रही हूँ। अमृत के पुत्रों, बड़ा दुर्घट-काल उपस्थित है। राजाओं, राजपुत्रों और देवपुत्रों की आशा पर निश्चेष्ट बने रहने का निश्चित परिणाम पराभव है। प्रजा में मृत्यु का भय छा गया है, यह अशुभ लक्षण है। अगर आर्यावर्त को बचाना चाहते हो, तो प्राण देने के लिए तत्पर हो जाओ। राजा, महाराजा और सामंत स्वार्थ के गुलाम बनते जा रहे हैं। प्रजा भीरु और कायर होती जा रही है।"

(घ) आर्थिक परिस्थितियों का चित्रण करना–उपन्यास में तत्कालीन समाज की आर्थिक अवस्था का कोई स्पष्ट चित्र नहीं मिलता किंतु संकेतों से यदि समझा जाए तो कहा जा सकता है कि प्राय: पूरा समाज खुशहाल था। अमीर-गरीब की खाई अवश्य थी किंतु इतनी निर्धनता कहीं नहीं थी कि भूख से मरने की नौबत आ गई हो। अपनी-अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति सभी प्राय: कर लेते थे। धनदत्त श्रेष्ठि जैसे लोग भी थे जो वसुभूति के भड़काने पर यह मुकदमा दायर कर बैठा कि सुचरिता के ससुर ने उससे एक सहस्र ऋण लेकर चुकता नहीं किया और परिणामस्वरूप सुचरिता एवं विरतिवज्र को बंदी बनना पड़ा किंतु यदि देखा जाए तो अपने गुजारे लायक सभी कमा लेते थे। आर्थिक दुर्व्यवस्था थी अवश्य किंतु केवल कम-अधिक मात्रा की दृष्टि से। इसे निर्धनता की संज्ञा तो कदापि नहीं दी जा सकती।

> *नोट्स* कृष्णवर्द्धन के पुत्र जन्मोत्सव से हमें ज्ञात होता है कि जन्मोत्सव, मदनोत्सव आदि अनेक प्रकार के उत्सवों के प्रति जनता में पर्याप्त उत्साह था।

(ङ) सांस्कृतिक परिस्थितियों का चित्रण करना–तत्कालीन सांस्कृतिक परिवेश का चित्रण करना भी लेखक का उद्देश्य है।

राजसभा में कला को बड़ा महत्त्व मिला हुआ था। कविता, नाटक, संगीत, चित्रकला, मूर्तिकला आदि अपने उत्कर्ष पर थीं। नाट्याभिनय प्राय: सभी वर्गों के लोग देखते थे और इसके लिए रंगमंच बने हुए होते थे। मूर्तिकला पर शक, कुषाण एवं भारतीय तीनों प्रकार की कलाओं का प्रभाव था। चित्रकला कितनी उन्नत अवस्था में थी, इसका एक उदाहरण देखिए–

"उनके ऊपरी हिस्से में बहुत उत्तम अलंकरण चित्र बने थे। उत्फुल्ल कमलों का एक अविरल प्रवाही स्रोत सा अंकित था, जिसके बिंदु-बिंदु पर हंस, मत्स्य, गज और शार्दूल स्रोत की अभिमुख दिशा में लपकते हुए चित्रित थे। सारा

नोट

ऊपरी हिस्सा एक सुलझी हुई कमलिनी-लता की धारा थी, जिसके प्रत्येक पत्ते में कोई न कोई जीवाकृति बन जाती थी। दरवाजे के सामने वेस्संतर जातक का भावपूर्ण चित्र था। जो ब्राह्मण राजकुमार के पुत्र को दान रूप में माँग रहा था, उसकी कातर मुखमुद्रा स्पष्ट ही फूट उठी थी, परंतु राजकुमार और उनके पुत्र में जो सहज दानवीर भाव था, वह देखने ही लायक था। बड़ी देर तक, मैं उस चित्र के लेखक की कला पर मुग्ध बना उसे देखता रहा। आजकल दीवार को चूने से पाटकर, महिषचर्म को घोंट कर लेप लगाने की जो प्रथा है, वह इस चित्र में नहीं दिखाई देती थी क्योंकि ऐसे भित्ति-पट्टों के लिए वज्रलेप के लगाने की प्रथा है, जो हवा में ठंडा होकर सूखता है। ऐसे पट्ट बाँस की नाली में लगे हुए ताम्र-तिन्दुकों के उन तूली-कूर्चकों के योग्य ही होते हैं, जो बछड़ों के कान के रोमों से बनते हैं। इस चित्र में स्पष्ट ऐसी रोम तूलिकाएँ व्यवहृत नहीं हुई थीं, फिर भी भाव प्रकाश की कैसी मनोहर कला थी?"

निष्कर्ष

इस विवेचन में 'बाणभट्ट की आत्मकथा' में निहित द्विवेदी जी का उद्देश्य स्पष्ट हो जाता है। व्यक्ति चरित्र का वर्णन करने के कारण जहाँ एक ओर आदर्शपरक अदृप्त प्रेमाभिव्यंजना का निदर्शन कराना लेखक का उद्देश्य है, वहीं उसके परिप्रेक्ष्य में युगीन सामाजिक, राजनीतिक, धार्मिक, सांस्कृतिक एवं आर्थिक परिस्थितियों का चित्रण करना भी उसका उद्देश्य है और कहना न होगा कि अपने उद्देश्य में लेखक पूर्णतः सफल रहा है।

8.6 शीर्षक के आधार पर

किसी की साहित्यिक रचना का जब प्रकाशन होता है तो उसका नामकरण लेखक के लिए अपरिहार्य हो जाता है क्योंकि अपने नाम के परिप्रेक्ष्य में ही वह साहित्यक रचनाओं की भीड़ में अपनी अस्मिता की पहचान कराती है और अपने स्रष्टा की यश, कीर्ति में सहायक होती है। इसलिए रचना चाहे वह उपन्यास हो अथवा कविता अथवा नाटक-उनका अनाम होना न तो संभव ही है, न तर्कसंगत ही।

उपन्यास के नामकरण करने का कोई निश्चित मानदंड तो नहीं है किंतु साधारण उपन्यास का नामकरण या तो कथावस्तु के आधार पर होता है, अथवा किसी पात्र के नाम पर अथवा उसके उद्देश्य के आधार पर होता है अथवा जहाँ पर वर्णित घटना घटित हुई हो उसके नाम पर भी उपन्यास का नामकरण संभव है। यह उपन्यासकार के ऊपर निर्भर है कि वह उपन्यास का नामकरण किस आधार पर करे? किंतु उपन्यास की सार्थकता इसी में है कि उपन्यासकार उसका जो शीर्षक निर्धारित करे वह औपन्यासिक कथा, उसके उद्देश्य और उसके गुण को अवश्य व्यंजित करे। ऐतिहासिक उपन्यासों में अधिकांश, पात्रों के नाम पर ही नामकरण करने की प्रवृत्ति हिंदी में रही है। 'झाँसी की रानी लक्ष्मीबाई', 'विराटा की पद्‌मिनी, 'माधवराव सिंधिया', 'दिव्या', 'अमिता', 'चित्रलेखा', मृगनयनी, आचार्य विष्णुगुप्त चाणक्य तथा रजिया बेगम आदि के नामकरण इसी प्रवृत्ति के द्योतक हैं। किंतु दुसरी ओर कुछ उपन्यास कृति के मूलोद्देश्य के आधार पर नामकरणित किए गए, यथा–वैशाली की नगरवधू, जय यौधेय, पुनर्नवा तथा जय सोमनाथ आदि।

डॉ. हजारी प्रसाद द्विवेदी जी के आलोच्य उपन्यास का नामकरण कथा के नायक 'बाणभट्ट' के आधार पर किया गया है। उपन्यास में जो कथा लेखक ने प्रस्तुत की है, वह सातवीं शताब्दी के प्रख्यात संस्कृत कवि बाणभट्ट के जीवन के मार्मिक प्रसंगों पर आधृत है। ये प्रसंग कुछ ऐतिहासिक हैं और कुछ लेखक की कल्पना-प्रसूत, किंतु यहाँ पर हमें कथा की ऐतिहासिकता पर चूँकि विचार करना है अपितु उसके नामकरण की विवेचना करनी है अस्तु, 'बाणभट्ट की आत्मकथा' में जो कथावस्तु प्रस्तुत की गई है वह बाणभट्ट से संबंधित है, यहाँ इतना ही पर्याप्त है।

यह उपन्यास आत्मकथात्मक शैली में लिखा गया है। हिंदी में इस प्रकार के कुछ अन्य उपन्यास भी लिखे जा चुके हैं यथा–'शेखर एक जीवनी, 'नदी के दीप', 'त्यागपत्र', 'सन्यासी तथा अजय की डायरी' आदि किंतु जितनी उदारता एवं दीप्ति 'बाणभट्ट की आत्मकथा' में है उतनी अन्यत्र नहीं। यह ठीक है कि 'बाणभट्ट की आत्मकथा' के नाम पर लेखक ने एक भ्रम खड़ा किया है और यह सिद्ध करने का प्रयास किया है कि यह कृति बाणभट्ट के द्वारा ही

नोट

लिखी गई है, जिसकी पांडुलिपी किसी प्रकार मिस कैथराइन (दीदी) को मिल गई और उसका अनुवाद भी दीदी ने ही किया, केवल संपादन का कार्य द्विवेदी जी ने किया है और इस प्रकार यह प्रमाणित करने का प्रयास किया गया है कि यह कृति उपन्यास न होकर बाणभट्ट की स्वयं की लिखी आत्मकथा है। स्वयं लेखक ने उपसंहार में लिखा है–

> *टास्क* 'बाणभट्ट की आत्मकथा' का नामकरण किस आधार पर किया गया है?

'बाणभट्ट की आत्मकथा' का इतना ही अंश मिला था। स्पष्ट ही यह कथा अपूर्ण है। मेरा विचार था कि कथा की जाँच केवल 'बाणभट्ट' की उपलब्ध पुस्तकों से सादृश रखने वाले अंशों के साथ तुलना करने तक ही सीमित न रखी जाए बल्कि उसकी भीतरी साहित्यिक जाँच भी की जाए। कादंबरी शैली के साथ कथा की शैली में ऊपर बहुत साम्य दिखता है, आँखों का प्राधान्य इसमें भी अन्य इंद्रियों की अपेक्षा अधिक है। रूप का, रंग का, शोभा का सौंदर्य का इसमें भी जमकर वर्णन किया गया है पर इतने ही से साहित्यिक जाँच सामाप्त नहीं हो जाती। कथा को ध्यान से पढ़ने वाला प्रत्येक सहृदय अनुभव करेगा कि कथा लेखक जिस समय कथा लिखना शुरू करता है उस समय उसे समूची घटना ज्ञात नहीं है। कथा बहुत कुछ 'आजकल की डायरी' शैली पर लिखी गई है। ऐसा जान पड़ता है कि जैसे-जैसे घटनाएँ अग्रसर होती जाती है, वैसे-वैसे लेखक उन्हें लिपिबद्ध करता जा रहा है। जहाँ उसके भावावेग की गति तीव्र होती है वहाँ वह जमकर लिखता है, परंतु जहाँ दु:ख का आवेग बढ़ता जाता है वहाँ उसकी लेखनी शिथिल होती जाती है। अंतिम उच्छ्वासों में तो वह जैसे अपने ही में धीरे-धीरे डूब रहा है। मुझे यह बात विचित्र लगी। संस्कृत-साहित्य में यह शैली एकदम अपरिचित है। मुझे यह बात संदेहजनक भी मालूम हुई एक बात और है। कादंबरी में प्रेम की अभिव्यक्ति में एक प्रकार की दृप्त भावना है परंतु इस कथा में सर्वत्र प्रेम की व्यंजना गूढ़ और अदृप्त भाव से प्रकट हुई है। ऐसा जान पड़ता है कि एक स्त्री जनोचित लज्जा सर्वत्र उस अभिव्यक्ति में बाधा दे रही है। सारी कथा में स्त्री महिमा का बड़ा तर्कपूर्ण और जोरदार समर्थन है। कथा का जिस ढंग से आरंभ हुआ है। उसकी स्वाभाविक परिणति गूढ़ और अदृप्त प्रेम ही हो सकती है। मुझे कथा के स्वाभाविक विकास की दृष्टि से इसमें कोई विरोध या दोष नहीं दिखता, पर बाणभट्ट की लेखनी से संभवत: अधिक स्पष्ट और अधिक दृप्त अभिव्यक्ति की आशा की जा सकती है। फिर कादंबरी में प्रेम के जिन शारीरिक विकारों का अनुभावों का, हावों का, अयत्नज अलंकारों का प्राचर्य है उनके स्थान में कथा में मानवविकारों का, लज्जा का, अवहित्या का, जड़िमा का अधिक प्राचुर्य है। यह बात भी मुझे खटकने लगी है।

द्विवेदी जी अपने उपर्युक्त कथन के अंत में स्वयं यह स्वीकारोक्ति कर दी है कि बाणभट्ट की कथा के भाव पक्ष का जो वर्णन आलोच्य कृति में है वह बाणभट्ट का स्वयं लिखा नहीं है क्योंकि 'बाणभट्ट' की लेखनी से संभवत: अधिक स्पष्ट और अधिक दृप्त अभिव्यक्ति की आशा की जा सकती है। इससे यह स्वत: सिद्ध है कि आत्मकथा बाणभट्ट की लिखी न होकर द्विवेदी जी द्वारा लिखी गई है। यों कहें कि बाणभट्ट के जीवन के कुछ ऐतिहासिक प्रसंगों में द्विवेदी जी ने कुछ मार्मिक किंतु कल्पना प्रसूत प्रसंग जोड़कर बाणभट्ट की यायावर जिंदगी का एक मनोहरी चित्र प्रस्तुत किया है और पाठक को भ्रम में रखने के लिए उसे आत्मकथा का नाम दे दिया है, यह कहकर कि 'बाणभट्ट की आत्मकथा' स्वयं बाणभट्ट द्वारा विचरित है। जो हो, 'बाणभट्ट की आत्मकथा' डॉ. द्विवेदी जी की एक अप्रतिम औपन्यासिक रचना है जिसके लेखन का प्रमुख उद्देश्य विश्व विश्रुत संस्कृत कवि मनीषी बाणभट्ट के जीवन, उसके चरित्र एवं उसकी प्रतिभा का निदर्शन कराने के साथ ही उसके युग की विशिष्टताओं को रूपायित करना है।

8.7 सारांश (Summary)

- उपन्यास में कथानक की स्थिति और उसके महत्त्व को दर्शाते हुए एक विचारक का कथन है कि प्रत्येक

नोट

उपन्यास में एक कथासूत्र (थीम) आदि से अंत तक प्रवर्धमान रहता है। साहित्यकार साधारण में से असाधारण को चुनकर ही महान बन सकता है।

- उपन्यास में कथावस्तु का विकास एवं उसके स्वरूप का निर्माण पात्रों के माध्यम से होता। विभिन्न प्रकार की घटनाओं को किसी पात्र के द्वारा ही प्रस्तुत किया जाता है, पात्रहीन कोई घटना हो ही नहीं सकती।
- 'बाणभट्ट की आत्मकथा' में यथार्थपरक दृष्टिकोण होने के कारण पुरुष और नारी दोनों प्रकार के अनेक पात्र हैं और कथा-प्रसंगों के अनुकूल इनमें विविधता है। यह विविधता घटना-क्रम के अनुरूप उचित भी है।
- साहित्य में विशेष रूप से कथा साहित्य में देशकाल एवं वातावरण की संयोजना करना आवश्यक होता है। इसी कारण इसे एक पृथक् तत्व के रूप में स्वीकृति मिली है। उपन्यास में वास्तविकता, सजीवता और गरिमा लाने के लिए अनुकूल वातावरण भी अत्यंत महत्त्वपूर्ण उपकरण है।
- डॉ. हजारी प्रसाद द्विवेदी जी का उपन्यास 'बाणभट्ट की आत्मकथा' उस ऐतिहासिक परिवेश की पृष्ठभूमि में लिखा गया है जब भारत में सम्राट हर्षवर्द्धन का साम्राज्य था। यह सातवीं शती की बात है।
- किसी व्यक्ति के कार्य से दूसरे व्यक्ति के मन पर होने वाली प्रतिक्रिया के द्वारा वातावरण की सृष्टि करने में द्विवेदी जी अत्यंत दक्ष हैं।
- उपन्यास में यद्यपि समाज के केवल उसी वर्ग का चित्रण हुआ है जिससे बाणभट्ट का संबंध रहा है अर्थात् सत्ता-समाज किंतु फिर भी पूरे समाज की कुछ-न-कुछ झलक तो मिल ही जाती है और इसका कारण है निपुणिका एवं सुचरिता की सामाजिक पृष्ठभूमि।
- आचार्य वेंकटेश भट्ट एक चंदन-काष्ठ के आसन पर पद्मासन बाँधकर बैठे थे। उनके मुख से एक प्रकार का आनंद गदगद भाव प्रकट हो रहा था। आसन के ठीक सामने एक वेदी पर कलश स्थापित था।
- देशकाल व वातावरण का वर्णन साधन है, साध्य नहीं। इसलिए न तो इतना अधिक हो कि सर्वत्र वातावरण की ही प्रधानता हो जाए और न इतना कम कि वातावरण के संबंध में कुछ ज्ञात ही न होने पाए।
- द्विवेदी जी हिंदी और संस्कृत के प्रकांड पंडित ही नहीं हैं वरन् सहृदय रसिकता से भी परिपूर्ण हैं। भाषागत अलंकरण मोह तथा काव्यात्मकता के प्रति उन्हें अतिशय अनुराग है।
- द्विवेदी जी के उपन्यास 'बाणभट्ट की आत्मकथा' का बाह्य उद्देश्य, जिसे हम मोटा उद्देश्य भी कह सकते हैं–बाणभट्ट एवं हर्षवर्द्धनकालीन युग को उसके तमाम संदर्भों-सामाजिक, राजनीतिक, आर्थिक, धार्मिक एवं सांस्कृतिक के साथ चित्रित, वर्णित कर देना है।
- विधवा-विवाह निषेध के साथ ही बाल-विवाह की प्रथा समाज में अपनी जड़े जमाए हुए थी। निपुणिका को यौवन काल में ही वैधव्य का अभिशाप झेलना पड़ा और दूसरी ओर सुचरिता का बाल-विवाह इसके प्रमाण हैं।
- उपन्यास में तत्कालीन राजनीतिक स्थिति का जो चित्र उभरता है, उसके अनुसार उत्तर में देवपुत्र तुवरमिलिंद यद्यपि दुर्द्धर्ष और प्रतापी सम्राट थे और कान्यकुब्ज का शासक हर्षवर्द्धन भी एक योग्य प्रशासक था।
- किसी भी साहित्यिक रचना का जब प्रकाशन होता है तो उसका नामकरण लेखक के लिए अपरिहार्य हो जाता है क्योंकि अपने नाम के परिप्रेक्ष्य में ही वह साहित्यक रचनाओं की भीड़ में अपनी अस्मिता की पहचान कराती है और अपने स्रष्टा की यश, कीर्ति में सहायक होती है।
- यह उपन्यास आत्मकथात्मक शैली में लिखा गया है। हिंदी में इस प्रकार के कुछ अन्य उपन्यास भी लिखे जा चुके हैं यथा–'शेखर एक जीवनी, 'नदी के दीप', 'त्यागपत्र', 'सन्यासी तथा अजय की डायरी' आदि किंतु जितनी उदारता एवं दीप्ति 'बाणभट्ट की आत्मकथा' में है उतनी अन्यत्र नहीं।

नोट

8.8 शब्दकोश (Keywords)

1. निर्भीकता – निडरता
2. अनुज – छोटा भाई
3. संयमी – धैर्यवान
4. प्रधान – मुख्य
5. विषम – कठिन
6. अश्रु – आँसू
7. कारागार – जेल
8. प्रभात – सुबह
9. मनोहर – सुंदर।

8.9 अभ्यास प्रश्न (Review Questions)

1. 'बाणभट्ट की आत्मकथा' की तात्विक समीक्षा कथानक के आधार पर कीजिए।
2. पात्र-योजना के आधार पर 'बाणभट्ट की आत्मकथा' की विवेचना कीजिए।
3. 'बाणभट्ट की आत्मकथा' में प्रयोग किए गए देशकाल और वातावरण पर एक लेख लिखिए।
4. आत्मकथा में किस प्रकार की भाषा-शैली प्रयोग की गई है?
5. 'बाणभट्ट की आत्मकथा' में द्विवेदी जी का क्या उद्देश्य निहित है?

उत्तर : स्व-मूल्यांकन (Answers : Self-Assessment)

1. विस्फारित
2. प्रतिप्रसव
3. मुंडमाल
4. (ग)
5. (क)
6. (ख)
7. सत्य
8. सत्य
9. असत्य।

8.10 सन्दर्भ पुस्तकें (Further Readings)

पुस्तकें बाणभट्ट की आत्मकथा–हजारी प्रसाद द्विवेदी, राजकमल प्रकाशन (प्रा.) लि., नई दिल्ली।

नोट

इकाई–9: फणीश्वरनाथ रेणु का साहित्यिक योगदान

अनुक्रमणिका (Contents)

उद्देश्य (Objectives)

प्रस्तावना (Introduction)

9.1 फणीश्वरनाथ 'रेणु' की लेखन कुशलता एवं साहित्यिक योगदान

9.1.1 जीवनवृत्त एवं व्यक्तित्व

9.1.2 कृतित्व

9.1.3 मैला आँचल

9.2 'मैला आँचल' : कथासार/कथावस्तु

9.2.1 प्रथम खण्ड

9.2.2 द्वितीय खण्ड

9.3 सारांश (Summary)

9.4 शब्दकोश (Keywords)

9.5 अभ्यास प्रश्न (Review Questions)

9.6 सन्दर्भ पुस्तकें (Further Readings)

उद्देश्य (Objectives)

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् विद्यार्थी योग्य होंगे–

- फणीश्वरनाथ रेणु की लेखन कुशलता एवं साहित्यिक योगदान को जानने में;
- 'मैला आँचल' के कथासार/कथावस्तु को समझने में;
- 'मैला आँचल' कथासार के खंडों एवं परिच्छेदों का विवरण देने में।

प्रस्तावना (Introduction)

एक स्वतंत्रता सेनानी, एक राजनीतिक व्यक्तित्व और एक रचनाकार में जहाँ सतही तौर पर एक द्वंद्व परिलक्षित हो सकता है वहीं गहरे पैठ कर देखने पर तीनों एक चरणबद्ध प्रक्रिया के अंग ही अधिक जान पड़ते हैं। 'रेणु' एक संवेदनशील, कर्मठ और सुलझे हुए व्यक्तित्व के स्वामी रहे। राजनीति में उनकी सक्रिय भागीदारी रही तथा दमन और शोषण के विरुद्ध वे आजीवन संघर्षरत रहे। उन्होंने समसामयिक परिस्थितियों में स्वतंत्रता सेनानी की भूमिका का निर्वाह किया। इसी दौर में 'रेणु' का रचनाकार, जो शोषण के विरुद्ध आवाज उठाए हुए था, जाग उठा और संवेदना को शोषित से जोड़कर जब रचनात्मक स्तर पर आया तो सन् 1945 से 1948 की परिस्थितियों को 'मैला आँचल' (1954) उपन्यास के रूप में कलमबद्ध कर दिया।

नोट

9.1 फणीश्वरनाथ 'रेणु' की लेखन कुशलता एवं साहित्यिक योगदान

9.1.1 जीवनवृत्त एवं व्यक्तित्व

हिंदी कथा साहित्य के प्रतिष्ठित रचनाकार, साहित्याकाश के उज्ज्वल नक्षत्र, फणीश्वरनाथ 'रेणु' का जन्म औराही हिंगना, जिला पूर्णिया (बिहार) में 4 मई, 1921 को हुआ। वे एक साधारण मध्यवर्गीय किसान परिवार के संस्कारों में पले-पुसे। उन्होंने फर्बिसगंज, विराटनगर, नेपाल तथा हिंदू विश्वविद्यालय, वाराणसी में शिक्षा प्राप्त की। 'रेणु' के जीवन को यदि ध्यानपूर्वक देखा जाए तो उसमें एक विशिष्टता उभरती परिलक्षित होती है, वह है—द्वंद्वात्मक संघर्ष और नैसर्गिक प्रवाह, परंतु कभी-कभी उसमें उद्दाम तरंगें भी अवसरानुकूल प्रकट होने लगती हैं।

सन् 1942 में 'रेणु' ने भारतीय स्वाधीनता-संग्राम में एक प्रमुख सेनानी की भूमिका निभाई और तीन वर्ष तक नजरबंद रहे, जेल से छूटने पर 'किसान आंदोलन' का नेतृत्व किया। सन् 1950 में उन्होंने नेपाल में राणाशाही और जनता के शोषण के खिलाफ सशस्त्र संघर्ष में राजनीति में जीवंत योगदान दिया। उन्होंने नेपाल के मजदूरों को, जो सामंती शिकंजे में जकड़े हुए थे, एकजुट कर, उनको अपने अधिकारों के प्रति जागरूक किया। इस संघर्षमय जीवन में उनका स्वास्थ्य बिगड़ गया और उन्होंने एक वर्ष पटना अस्पताल की शरण ली। सन् 1952-53 की दीर्घकालीन बीमारी ने उनके जीवन में बदलाव लाकर उनका झुकाव राजनीति से साहित्य सर्जन की ओर कर दिया। उन्होंने अपने बचपन की कथा और जीवन अनुभवों पर स्केच व कथा आदि द्वारा मानव को बल प्रदान करने का प्रण लिया। वे देहात की पगडंडी पर चलते हुए पात्र, कथानक और वातावरण ढूँढने में सफल रहे। आम मानव का चेहरा, उसका अक्खड़ व्यक्तित्व, उसका उज्ज्वल चरित्र, जीवन के प्रति उसकी आस्था और उसकी भावनाओं को रेणु ने इतनी सजीवता और समर्थता से अभिव्यक्त किया कि पाठकों को मोह लिया। फलतः प्रथम लेकिन बहुचर्चित उपन्यास 'मैला आँचल' प्रकाशित हुआ। एक ही रचना में अनेक धाराएँ एक साथ प्रखर तौर पर उभरी हुई दिखाई दीं, यथा-आँचलिक पृष्ठभूमि में राष्ट्रीय चेतना, सामाजिक चेतना, राजनीतिक उथल-पुथल, प्रभुतासंपन्न वर्ग का बोलबाला, न्यायिक शिथिलता तथा आदर्शों का उत्थान और पतन। इसमें कहीं न कहीं एक सामाजिक क्रांति का सूत्रपात भी राजनीतिक आंदोलन से पुनः गहरा जुड़ाव, पुलिस और प्रशासन का दमन सहते हुए जेल यात्रा और समानांतर साहित्य सृजन रेणु जी के जीवन के आकस्मिक अंत (11 अप्रैल, 1977) तक जारी रहा। उनके स्वर्गवास से भारतीय संस्कृत का एक उज्ज्वल नक्षत्र डूब गया। सत्ता के दमन चक्र के विरोध में उन्होंने पद्मश्री की उपाधि का भी त्याग किया।

नोट्स प्रसिद्ध कथा आलोचक रमाप्रसाद घिल्डियाल 'पहाड़ी' ने रेणु जी की जन्मतिथि और स्वर्गवास तिथि क्रमशः 21 फरवरी, 1921 तथा 29 अप्रैल, 1977 दी है।

9.1.2 कृतित्व

रेणु ने कथा साहित्य (उपन्यास एवं कहानियों) के अतिरिक्त अन्य विधाओं में लिखा यथा—संस्मरण, रेखाचित्र और रिपोर्ताज आदि। 'मैला आँचल' (1954) के अतिरिक्त 'परती-परिकथा' (1957), 'दीर्घतपा' (1963), 'जुलूस' (1965), 'कितने चौराहे' (1966) एवं 'पल्टू बाबू रोड' (मरणोपरांत, सन् 1979 में प्रकाशित) नामक उपन्यासों के साथ-साथ 'ठुमरी' (1957), 'आदिम रात्रि की महक' व 'तीसरी कसम' (कहानी-संग्रह), 'ऋणजल-धनजल' (संस्मरण) तथा 'पटना की बाढ़' व 'नेपाली क्रांति कथा' (रिपोर्ताज़) आदि उनकी प्रमुख प्रकाशित रचनाएँ हैं।

'ठुमरी' व 'मैला आँचल' आदि रचनाओं में इलाके की बोली, मुहावरे, आचार-विचार, धरती की कंपन तथा प्रकृति के अद्भुत सौंदर्य आदि से ओतप्रोत देहाती जीवन के प्रति उनकी सबल आस्था दृष्टिगोचर होती है। वह 'आदिम रात्रि की महक' तथा 'तीसरी कसम' आदि रचनाओं के साथ कथा साहित्य में नए प्रतिमान स्थापित करने में सफल

हुए। 'पटना की बाढ़' (रिपोर्ताज़) में आदिम मानव की प्रकृति से संघर्ष पर संसार को सुंदर बनाने वाली भावना है। वह अपनी रचनाओं में मानवीय गुणों के प्रति सजग थे। वह पीड़ित और हारे मानव के प्रति सहानुभूति ही नहीं बरतते थे, बल्कि उसे आगे बढ़ने की प्रेरणा भी देते थे। 'रेणु' की कृतियों का प्रिय क्षेत्र कोसी नदी के आर पार का देहात है। उस नदी की बाढ़ के समय उनकी करुणा उभरती है और बाढ़ के उतर जाने पर उनकी भावना सलिला जीवन की ओर मुड़ जाती है। उनकी 'लाल पान की बेगम', 'रस पिरिया', 'पंचलाइट', 'तीसरी कसम', 'विकट संकट' तथा 'तीन बिंदियाँ' आदि कहानियाँ सशक्त क्षेत्रीय साहित्य की रचनाएँ हैं।

टास्क फणीश्वरनाथ 'रेणु' के साहित्यिक योगदान पर अपने विचार व्यक्त कीजिए।

9.1.3 मैला आँचल

फणीश्वरनाथ 'रेणु' अपने प्रथम उपन्यास 'मैला आँचल' से ही व्यापक चर्चा का विषय बन गए थे। हिंदी उपन्यास साहित्य में जिन चंद कथा कृतियों ने युगांतर उपस्थित किया, 'मैला आँचल' उन्हीं में से एक है। सन् 1954-55 में इस उपन्यास का प्रकाशन एक 'घटना' की तरह था। इसकी कथाभूमि उत्तरी बिहार का पूर्णिया अंचल है और कथाकाल आजादी के कुछ बरस बाद का। एक सामाजिक और राजनीतिक चेतना संपन्न लेखक की हैसियत से 'रेणु' यहाँ उस परिवर्तन को बड़ी बारीकी से चित्रित करते हैं, जो आजादी के फलस्वरूप गाँवों में आया है और जो सिर्फ परिवेशगत ही नहीं बल्कि भीतरी व्यक्ति के मनोजगत् में भी घट रहा है। इसके लिए लेखक ने लोक संस्कृति, लोक विश्वासों और लोगों के जीवनक्रम पर पड़ने वाले प्रभावों को गहरी आत्मीयता से उकेरा है। इसका समूचा कथावृत्त अपनी रोचकता और मार्मिकता में व्यापक लोकरूपों को आत्मसात् किए हुए है। वस्तुत: 'रेणु' की आंचलिक संलग्नता, उनकी रागात्मक कथादृष्टि और रचनात्मक भाषा-शैली इस उपन्यास के पात्रों और परिवेश को पाठकीय अनुभव का जीवंत और अविस्मरणीय अंग बना देती है।

'रेणु' ने 'मैला आँचल' में आंचलिक उपन्यासों की सभी विशेषताओं के साथ-साथ व्यापक सामाजिक राजनीतिक परिदृश्य को भी छुआ और अपने से पूर्व की परिपाटी, जिसके तहत नायकत्व को महत्त्वपूर्ण स्थान हासिल था, को तोड़ा और उसके स्थान पर अंचल विशेष (मेरीगंज गाँव) को ही नायकत्व प्रदान कर दिया। फलत: चर्चा होना स्वाभाविक था। इस प्रकार की उनकी विशेषताओं के कारण समीक्षकों, आलोचकों, विद्वानों और साहित्य प्रेमियों ने 'रेणु' को हाथों-हाथ लिया। 'मैला आँचल' की एक विशेषता, जो अपना अलग महत्त्व रखती है, यह है कि 'रेणु' उपन्यास की भूमिका में स्पष्ट घोषणा कर देते हैं, "यह है मैला आँचल, एक आंचलिक उपन्यास। इसमें फूल भी हैं शूल भी, धूल भी है गुलाब भी, कीचड़ भी है चंदन भी, सुंदरता भी है कुरूपता भी–मैं किसी से दामन बचाकर निकल नहीं पाया।" यहाँ स्वयं रचनाकार ने पहली बार एक आलोचक का भी कर्त्तव्य वहन किया है।

'मैला आँचल' के प्रकाशन के बाद इसकी प्रथम समीक्षा आचार्य नलिनविलोचन शर्मा ने की जो 'आलोचना' (अप्रैल, 1955) में 'मैला आँचल की समीक्षा' शीर्षक से प्रकाशित हुई। यदि 'मैला आँचल' एक अमर उपन्यास है तो यह समीक्षा भी एक अमर समीक्षा है, जो अद्यावधि प्रासंगिक है।

ऐसी कृति से लेखक को यह कठिनता भी होती है कि वह अपने लिए ऐसा प्रतिमान स्थिर कर देता है जिसकी पुनरावृत्ति कठिन होती है। गरचे हमें विश्वास है, 'रेणु' मैला आँचल से भी उत्कृष्टतर कृतियाँ प्रस्तुत कर सकेंगे।

आचार्य शर्मा ने 'मैला आँचल' को 'गोदान' के बाद हिंदी का दूसरा श्रेष्ठ उपन्यास मानते हुए लिखा है, "समष्टिमूलक उपन्यास के अनुरूप जैसा महाकाव्योचित स्थापत्य 'गोदान' में है उसके विपरीत 'मैला आँचल' एक सुसंबद्ध स्थापत्य का उपन्यास है। यही कारण है कि दूसरे उपन्यास का पात्र बिहार का छोटा सा अंचल है, पर पहले का पात्र समग्र भारतीय जीवन है। 'मैला आँचल' की यह सीमा है पर दुर्बलता नहीं, क्योंकि उसके लेखक को भी

नोट

चित्रणीय जीवन का आत्मीयता पूर्ण ज्ञान है, व्यापक दृष्टि है, परकीया प्रवेश वाली उपन्यास का रोचित सामर्थ्य है और सर्वोपरि चित्रांकन के समय एकांतिक तटस्थता और निर्लिप्तता बनाए रखने वाली कलाकारोचित प्रतिभा है।"

इस बात और जो इस उपन्यास की विशिष्टता बनकर उभरती है, वह है–'रेणु' के इस उपन्यास का प्रेरणा स्रोत किसी व्यक्ति चरित्र की अपेक्षा स्वयं ग्रामवासिनी भारतमाता का होना। उपन्यास के प्रमुख चरित्र डॉ० प्रशांत कुमार की भावनाओं में भी यही ग्रामवासिनी माँ रची-बसी है। कविवर पंत की कविता 'ग्राम्या' की निम्नांकित पंक्तियाँ इस भाव को स्पष्टतया प्रकट करती हैं–

भारत माता ग्रामवासिनी!
खेतों में फैला है श्यामल
धूल-भरा मैला सा आँचल........

अत: स्पष्ट है कि 'रेणु' का 'मैला आँचल' उनके साहित्यिक जीवन और हिंदी कथा साहित्य का अनमोल रत्न और उनके उज्ज्वल व्यक्तित्व का संघर्षजन्य दस्तावेज़ है।

9.2 'मैला आँचल' : कथासार/कथावस्तु

'मैला आँचल' आंचलिक उपन्यासों की विधा में एक महत्त्वपूर्ण उपन्यास है, जिसकी कथावस्तु बिहार राज्य के पूर्णिया जिले में घटित घटनाओं से संबंधित है। इस संबंध में 'मैला आँचल' के लेखक फणीश्वरनाथ 'रेणु' के निम्नांकित उद्गार अवलोकनीय हैं–

"पूर्णिया बिहार राज्य का एक जिला है, इसके एक ओर है नेपाल, दूसरी ओर (पूर्वी) पाकिस्तान (आजकल का बंगलादेश) और पश्चिमी बंगाल। विभिन्न सीमा-रेखाओं से इसकी बनावट मुकम्मल हो जाती है, जब हम दक्खिन में संथाल परगना और पश्चिम में मिथिला की सीमा-रेखाएँ खींच देते हैं। मैंने इसके एक हिस्से के एक ही गाँव को पिछड़े गाँवों का प्रतीक मानकर इस उपन्यास-कथा का क्षेत्र बनाया है।"

> *नोट्स* 'मैला आँचल' एक ऐसा सौभाग्यशाली उपन्यास है जो लेखक की प्रथम कृति होने पर भी उसे ऐसी प्रतिष्ठा प्राप्त करा दे कि वह चाहे तो फिर कुछ और न भी लिखे।

आलोच्य उपन्यास 'प्रथम खंड' तथा 'दूसरा खंड' नामक दो खंडों में विभक्त है। इसकी कथावस्तु पर संक्षेप में आगे प्रकाश डाला जा रहा है।

9.2.1 प्रथम खण्ड

आलोच्य उपन्यास के प्रथम खंड में चवालीस परिच्छेद हैं। इन परिच्छेदों में कृतिकार ने उपन्यास की कथावस्तु के विभिन्न प्रसंगों को नियोजित किया है। इन परिच्छेदों में वर्णित घटनाओं का सार क्रमश: प्रस्तुत है–

पहला परिच्छेद–इस परिच्छेद तथा उपन्यास की कथावस्तु का आरंभ सन् 1942 के स्वतंत्रता संग्राम की पृष्ठभूमि से संबंधित इस घटना की सूचना देते हुए नाटकीय ढंग से किया गया है–

"गाँव में यह खबर तुरंत बिजली की तरह फैल गई कि मलेटरी ने बहरा चेथरू को गिरफ्तार कर लिया है और लोबिन लाल के कुएँ से बाल्टी खोलकर ले गये हैं।"

प्रस्तुत घटना का स्पष्टीकरण करते हुए 'रेणु' ने दिखाया है कि सन् 1942 के जन-आंदोलन के समय इस गाँव में यद्यपि फौजियों का कोई उत्पात नहीं हुआ था और न आंदोलन की लहर ही इस गाँव तक पहुँच पाई थी, तो भी जिले भर की घटनाओं की सूचनाएँ अफवाहों के रूप में यहाँ पहुँचती रहती थीं। पहुँचने वाली अफवाहें प्राय: इस

प्रकार की होती थीं–गोरे सिपाही किसी मोदी की लड़की को उठा ले गये, अतः सिख और गोरे सिपाहियों में इस बात को लेकर गोली चल गई है।.... अब इस गाँव की बारी आई है। दुहाई माँ काली! दुहाई बाबा लरसिंह! मालिकटोला के तहसीलदार विश्वनाथप्रसाद पूर्वोक्त बाल्टी संबंधी घटना को सुनकर सोचने लगे कि वह बाल्टी चोरी की होगी। इसके सर्वथा विपरीत राजपूतटोली में इस घटना ने यह रूप धारण कर लिया था।

कायस्थटोली के विश्वनाथप्रसाद और ततमाटोली के बिरंची को मलेटरी के सिपाही पकड़कर ले गये हैं। ठाकुर रामकिरपालसिंह बोले, "इस बार तहसीलदारी का मजा निकलेगा। जरूर जमींदार का लगान वसूल कर खा गया है। अब बड़े घर की हवा खाएँगे बच्चू।"

यही खबर जब गाँव की यादव टोली में पहुँची तो उन्होंने उसका सारा दोष बलिया उर्फ बालदेव के सिर मढ़ते हुए उसे गिरफ़्तार कर लिया और कहने लगे, "हमने पहले ही कहा था कि यह एक दिन सारे गाँव को बँधवाएगा।"

जब यह घटना गाँव के विभिन्न वर्गों के लोगों में नाना रूपों में फैल रही थी, तभी तहसीलदार विश्नाथ प्रसाद एक सेर घी, पाँच सेर बासमती चावल और एक खस्सी (बकरा) लेकर मिलिटरी वालों को डाली पहुँचाने जाते हैं और बिरंची को यह ताकीद करते हैं कि डाली में खर्च हुए पचास रुपयों को वह अपने टोले और लोबिन के टोले से एकत्र करके उनके पास पहुँचा दे।

उपन्यासकार ने आगे दिखाया है कि जब तहसीलदार विश्वनाथप्रसाद डाली का सामान लेकर बाग में पहुँचे तो उन्हें बाग में ठहरे लोगों से ज्ञात हुआ कि वह मिलिटरी से संबंधित नहीं हैं, अपितु डिस्ट्रिक्ट बोर्ड के आदमी हैं और पूर्णिया में एक मलेरिया सेंटर बनाने के संदर्भ में वहाँ आए हैं। वे बताते हैं कि इस बाग की जमीन बहुत पहले मार्टिन साहब द्वारा डिस्ट्रिक्ट बोर्ड को दी जा चुकी है। इसी समय राजपूतटोली और यादवटोली के लोग भी बाग में आ पहुँचे। यादवटोली के लोग तो बालदेव के हाथ और कमर में रस्सियाँ बाँधकर हो-हल्ला मचाते हुए आए थे। उन्हें आशा थी कि बालदेव फरार सुराजी (कांग्रेसी) है, अतः उसको पकड़वा देने पर गोरे साहब लोग प्रसन्न होकर दो चार हजार रुपए इनाम देंगे। लेकिन उन्हें इनाम मिलने के स्थान पर फटकार सहन करनी पड़ी। डिस्ट्रिक्ट बोर्ड के साहब ने जब यह पूछा कि इसे यहाँ बाँधकर क्यों लाया गया है, तो उन लोगों का उत्तर था–

"हुजूर, यह सुराजी बालदेव गोप है। दो साल जेहल खटकर आया है, इस गाँव का नहीं, चन्नपट्टी का है। यहाँ मौसी के यहाँ आया है। खध्धड़ (खद्दर) पहनता है। जैहिन्न (जयहिंद) बोलता है।"

साहब के किरानी ने जो बालदेव से परिचित था, बताया कि "यह रामकृष्ण कांग्रेस आश्रम का कार्यकर्ता है बड़ा बहादुर है।" अभी तक ठाकुर रामकिरपालसिंघ को इस तथ्य से बड़ी कुढ़न हो रही थी कि तहसीलदार विश्वनाथप्रसाद, साहब लोगों की जमीन की पैमाइश करने में सहायता करते हुए उनसे घनिष्ठता बढ़ा रहे थे जबकि वह उपेक्षित से खड़े थे। इसीलिए उन्होंने एक बार अवसर पाकर साहब को सलाम ठोकते हुए अपना परिचय दिया और यह आग्रह किया कि उन्हें भी किसी सेवा का मौका दिया जाए। साहब ने हँसते हुए कहा कि उन्हें तो सेवा की आवश्यकता नहीं है, हाँ, गाँव में जो मलेरिया सेंटर खुल रहा है, वह उसमें सहयोग दें। जाते हुए साहब ने बताया कि सात दिन के अंदर डिस्ट्रिक्ट बोर्ड का मिस्त्री आ जाएगा। वे सभी लोग बाँस, खड़, सुतली और अन्य आवश्यक चीजों का इंतजाम कर दें। तहसीलदार साहब, बालदेव और रामकिरपालसिंघ ने हाथ जोड़कर इस तथ्य से सहमति व्यक्त की। बालदेव कुछ दूर तक साहब की गाड़ी के साथ उन्हें छोड़ने के लिए गया और उसने लौटकर बताया कि ये डिस्ट्रिक्ट बोर्ड के बंगाली ओवरसियर प्रफुल्ल बेनर्जी थे और उनका किरानी जीत्तनबाबू पहले कांगेस के ऑफिस में किरानी था।

दूसरा परिच्छेद–इस परिच्छेद का आरंभ पूर्णिया जिले में स्थान-स्थान पर बनी नील की कोठियों के वर्णन से किया गया है। मेरीगंज भी एक ऐसा ही गाँव है जहाँ रौतहट स्टेशन से सात कोस पूर्व की ओर बूढ़ी कोसी नदी को पार करके जाना पड़ता है। उपन्यासकार ने लिखा है कि लगभग पैंतीस वर्ष पूर्व जब डब्ल्यू. जी. मार्टिन ने उस गाँव में नील की कोठी की नींव जमाई थी, तभी आसपास के गाँवों में ढोल पिटवा कर इस तथ्य की घोषणा करा दी थी कि आज से इस गाँव का नाम मेरीगंज हो गया है। यदि कोई व्यक्ति उस गाँव के पुराने नाम का भूल से भी नाम

नोट

लेता था, तो साहब उसे कोड़ों से पिटवाता था। हाँ, मार्टिन साहब जब अपनी परी जैसी सुंदर पत्नी को कलकत्ता से मेरीगंज लाए तो एक सप्ताह बाद ही वह 'जड़ैया' बुखार से पीड़ित हो गई। मेरीगंज में उचित इलाज न होने के कारण तीन दिन बाद जब पूर्णिया से सिविल सर्जन को लाया गया तो उसके आने से पहले ही मेरी चल बसी थी। इस घटना के फलस्वरूप मार्टिन ने मेरीगंज में पोस्ट ऑफिस के पूर्व डिस्पेंसरी खुलवाने पर जोर देना आवश्यक समझा। वह इलाके के संबंधित अफसरों से इस मामले में मिला और डिस्पेंसरी के लिए अपनी जमीन की रजिस्ट्री करा दी। उन्हीं दिनों जर्मनी में कोयले से नील बनाने की पद्धति का आविष्कार हो गया, जिससे गोरे साहबों की नील की कोठियाँ बंद हो गईं। मार्टिन तो इस दुहरे आघात के कारण विक्षिप्त हो गया और अंततः राँची स्थित पागलखाने में उसकी मृत्यु हो गई। मेरीगंज के लोग मार्टिन की नील की कोठी को भुतहा कोठी कहने लगे और उनमें यह विश्वास घर कर गया कि जो कोई भी उस कोठी की ओर जाता है, वह जीवित नहीं लौटता।

मेरीगंज में सभी जातियों के लोग रहते थे। वहाँ के राजपूतों और कायस्थों के मध्य पुश्तैनी मन मुटाव चला आ रहा था। मेरीगंज में ब्राह्मणों की संख्या कम थी। हाँ, वे तृतीय शक्ति का काम करते थे। बाद में कुछ दिनों से गाँव का यादव दल भी जोर पकड़ने लगा था। यदुवंशी क्षत्रियों द्वारा जनेऊ लेने के बाद भी गाँव के राजपूतों ने उन्हें मान्यता नहीं दी थी। तहसीलदार विश्वनाथप्रसाद एक हजार बीघा जमीन के मालिक थे। गाँव की अन्य बस्तियों के लोग उनके मुहल्ले को मालिकटोला कहा करते थे, जबकि राजपूतटोली के लोग उसे कैथटोली कहते थे। राजपूतटोली के मुखिया रामकिरपालसिंघ थे। उनके परदादा महारानी चंपावती की स्टेट के सिपाही थे। महारानी काशी जाने से पूर्व उनके नाम तीन सौ बीघा जमीन कर गई थी। कायस्थटोली के लोग राजपूतटोली को सिपहियाटोली कहते थे। यादवटोली के मुखिया का नाम था खेलावन–आरंभ में ग्वाला किंतु बाद में डेढ़ सौ बीघा जमीन का मालिक बन गया था।

> *क्या आप जानते हैं* पूरे मेरीगंज गाँव में पढ़े-लिखे लोगों की संख्या केवल दस थी, जबकि नये पढ़ने वालों की संख्या पंद्रह थी।

तीसरा परिच्छेद–डिस्ट्रिक्ट बोर्ड के मिस्त्री मेरीगंज में डिस्पेंसरी बनाने के लिए आए, तो बालदेव के उत्साह का ठिकाना नहीं रहा। इस उत्साह के मूल में यह कारण विद्यमान था कि ओवरसियर साहब ने तहसीलदार विश्वनाथप्रसाद और ठाकुर रामकिरपालसिंघ की उपेक्षा करते हुए उसी को देश का सेवक बताया था। यादव टोली के खेलावन सिंह ने बालदेव से क्षमा याचना करके (बालदेव को रस्सियों से बाँधकर ले जाने के व्यवहार के लिए), उसे यादव टोली में रहने का आग्रह किया। जिसे उसने स्वीकार कर लिया। बालदेव ने गाँव के विभिन्न भागों में मिस्त्रियों के काम में उनका हाथ बँटाने की ऐसी जोरदार वकालत की कि मजदूरी द्वारा जीविकोपार्जन करने वाली जातियों के लोगों ने सात दिन तक मुफ्त मजदूरी करने का वचन दे दिया। हाँ, वे लोग यह अवश्य चाहते थे कि गाँव के मालिक लोग उनको इन दिनों की आधी मजदूरी दे दिया करें।

बालदेव ने डिस्पेंसरी के संबंध में मालिकटोली के लोगों को मनाने की चेष्टा की तो उनका विभिन्न टोलियों ने भिन्न-भिन्न प्रकार से विरोध किया। रामकिरपालसिंघ डिस्पेंसरी के निर्माण में इसलिए सहायता नहीं करना चाहते थे क्योंकि वे समझते थे कि डिस्पेंसरी के मुख्तियार विश्वनाथ और बालदेव थे। ब्राह्मणटोली अस्पताल बनाने का यह तर्क विरोध कर रही थी कि डाक्टर लोग इलाज करने के स्थान पर बीमारियाँ फैलाते हैं और सुईं लगाकर शरीर में जहर फैला देते हैं। उनका कहना था कि काला बुखार इन डाक्टरों द्वारा ही फैलाया गया है तथा विलायती दवाओं में गाय का खून मिला रहता है। जब बालदेव शिवशंकर के यहाँ पहुँचा तो वे कहीं जाने के लिए घोड़े पर सवार हो चुके थे। हाँ, उनके लड़के हरगौरी ने व्यंगपूर्वक कहा–"कहिए बालदेव लीडर, क्या समाचार है? सुना है कि आपकी लीडरी खूब चल रही है।" बालदेव ने विनम्रतापूर्वक उत्तर दिया–"बाबूसाहेब, गरीब आदमी भी भला लीडर होता है? हम तो आप लोगों का सेवक है।"

इस पर भी हरगौरी ने उसे आड़े हाथों लेते हुए कहा कि आप तो लीडर हो गए, अब कांग्रेस ऑफिस का चौका बर्तन कौन करता है? उसने घृणापूर्वक आगे कहा, "कांग्रेस ऑफिस में भोलटियरी करते थे, अब अंधों में काना बनकर यहाँ लीडरी छाँटने आया है। स्वयंसेवक न घोड़ा का दुम!"

बालदेव ने उससे इस नाराज़गी का कारण जानने की चेष्टा की तो हरगौरी उबल पड़ा–"उठ जाओ दरवाजे पर से। बेईमान कहीं के! डिस्ट्रिक्ट बोर्ड से अस्पताल की मंजूरी हुई है, रुपया मिला है। सब चुपचाप मारकर अब बेगार खोज रहे हैं चोर सब! ....उठ जाओ दरवाजे पर से!"

यह कहते हुए हरगौरी बालदेव को धक्का मारकर उठाने ही जा रहा था कि लोगों ने उसे पकड़ लिया। उसके पिता ने भी दुखित स्वर में कहा–"लीडरी करे या भोलटियरी, तुमको किस बात की चिढ़ लगी? तुम्हारा क्या बिगाड़ा था?" उसने बालदेव से भी कहा कि वह हरगौरी को अपना छोटा भाई मानकर क्षमा कर दे। हरगौरी चकित था कि थोड़ी देर पहले तो सभी लोग बालदेव की निंदा कर रहे थे, अब उनको क्या हो गया है?

इतने में ही यह समाचार फैल गया कि गुअरटोली का कलिया पगला गया है और उसकी टोली के लोग बलवा करने वाला दल लेकर आ रहे हैं। इसका कारण यह बताया गया कि ग्वालाटोली में यह समाचार पहुँचा है कि हरगौरी ने बालदेव को जूतों से पीटा है। उसकी प्रतिक्रिया में कलिया अर्थात् कालीचरन ने यह शपथ ली है कि हरगौरी का खून पीऐंगे। इस बलवाई दल को शांत करने के लिए बालदेव दौड़ पड़ा और उसने उन लोगों से महात्मा गाँधी की जय बुलवाकर उन्हें समझाया कि यदि लोगों ने हिंसा का मार्ग अपनाया तो उसको अनशन करना पड़ेगा। उसने कालीचरण की बहादुरी की तो प्रशंसा की, किंतु उसे जोश में होश न खोने की भी सलाह दी।

चौथा परिच्छेद–इस परिच्छेद में महंत साहब और उनके सेवक रामदास व उनकी दासी लक्ष्मी से संबंधित घटनाओं का वर्णन किया गया है। महंत साहब (सेवादास) अपनी दासी एवं कोठारिन लछमी को जगाकर बताते हैं कि उन्हें साहब (ईश्वर) ने स्वप्न दिया है। लछमी उनकी बंदगी करके कुएँ की ओर चली जाती है। रामदास महंत साहब के साथ बचपन से ही रहा है। उसमें भक्ति भाव तो नहीं है, हाँ, वह सेवा अच्छी तरह से करता है और खंजड़ी बजाने में बेजोड़ है। बूढ़े महंत साहब प्रभाती को ठीक ढंग से नहीं गा पाते किंतु लछमी साथ में गाकर सँभाल लेती है।

स्व-मूल्यांकन (Self-Assessment)

रिक्त स्थानों की पूर्ति करें (Fill in the blanks) :

1. फणीश्वरनाथ रेणु का प्रथम उपन्यास ·············· था।
2. तहसीलदार ·············· एक हजार बीघा जमीन के मालिक थे।
3. मजदूरी द्वारा जीविकोपार्जन करने वाली जाति के लोगों ने सात दिन तक मुफ्त ·············· करने का वचन दे दिया।

पाँच साल पहले प्रातकी गाने के समय उसकी आँखों की पलकें नींद से लदी रहती थीं। महंत साहब गीत की जब दूसरी पंक्ति 'भोर भयो अब भरम' गाते थे तो वह बहुत मुश्किल से अपनी हँसी रोक पाती थी–भोर भयो भव भरम ....! लेकिन अब नहीं।

अपने स्वप्न का विवरण सुनाते हुए महंतजी बताते हैं कि उन्हें स्वप्न में साहेब ने दर्शन देते हुए कहा था–"सेवादास, तुम नेत्रहीन हो, लेकिन तुम्हारे अंतर के नैनों का जोत बड़ा विलच्छन्न है। हम भेख बदल कर के आए और तू पहचान लिया? तुम्हारे ज्ञान-नेत्र में दिब्बजोत है। सो, तुम्हारे गाँव में परमारथ का कारज हो रहा है और तुमको मालूम नहीं? गाँधी तो मेरा ही भगत है। गाँधी इस गाँव में इसपिताल खोलकर परमारथ का कारज कर रहा है। तुम सारे गाँव को एक भंडारा दे दो।"

नोट

महंत जी को स्वप्न में गाँव का भंडारा करने का तथ्य पूरे गाँव में फैल गया और उसके बारे में लोगों की प्रतिक्रियाएँ भी भिन्न-भिन्न रहीं। यादवटोली के किसनू ने कहा–"अंधा महंत अपने पापों का प्राच्छित कर रहा है। बाबाजी होकर जो रखेलिन रखता है, वह बाबाजी नहीं। ऊपर बाबाजी भीतर दगाबाजी! क्या कहते हो? रखेलिन नहीं, दासिन है? किसी और को सिखाना।" वह आगे कहता है–"कहाँ वह बच्ची और कहाँ पचास बरस का बूढ़ा गिद्ध! रोज रात में लछमी रोती थी–ऐसा रोना कि जिसे सुनकर पत्थर भी पिघल जाय। हम तो सो नहीं सकते थे। उठकर भैंसों को खोलकर चराने चले जाते थे। वैसा ही चांडाल है यह रामदसवा। वह साला भी अंधा होगा, देख लेना। पाप भला छिपे? रामदास को मिरगी आने लगी और महंथ सेवादास सूरदास हो गये। एकदम चौपट! .... हमारा तीन साल का दरमाहा (मासिक वेतन) बाकी रखा है। भंडारा करता है! हम उन लोगों को साधु नहीं समझते हैं।"

लछमी को लेकर महंत सेवादास की इतनी बदनामी हो जाती है कि किसनू के अनुसार बहुत से लोग उसे प्रणाम बंदगी भी नहीं करते और कहते हैं, "धर्म भ्रष्ट हो गया है। बगुला भगत है। ब्रह्मचारी नहीं, व्यभिचारी है।"

महंत सेवादास द्वारा भंडारा किया जाना इस दृष्टि से असंभव ही लग रहा था कि गाँव के ब्राह्मण अन्य जातियों के साथ बैठकर खाने को तैयार नहीं थे, जबकि यादवटोली का आग्रह था कि भंडारे का प्रबंध बालदेव को नहीं करना चाहिए। बालदेव ने भंडारे के प्रबंध से हटना चाहा तो लक्ष्मी ने इस तथ्य का यह कहकर विरोध किया कि "यदि बालदेव जी को छोड़कर और किसी को प्रबंध करने का भार दिया तो समझ लीजिए की भंडारा चौपट हुआ। मैं इस गाँव के एक-एक आदमी को पहचानती हूँ।"

यह सुनकर बालदेव ने लछमी की ओर देखा तो वह लछमी की बड़ी-बड़ी आँखों में खो गया–आँखों में समा गया बालदेव शायद।

पाँचवाँ परिच्छेद–पाँचवें परिच्छेद का आरंभ गाँव के लोगों की मठ पर हुई सभा के वर्णन से किया गया है। तहसीलदार विश्वनाथप्रसाद कहते हैं कि मैं तो अस्पताल के कार्य में ओवरसियर साहब के कहने से सहायता कर रहा हूँ–"हम अपने मन से तो अगुआ नहीं बने हैं। तुम्हीं बताओ खिलावन भाई!"

ब्राह्मण वर्ग के प्रतिनिधि बूढ़े ज्योतिषी जी भविष्यवाणी करते हैं–"कोई माने या नहीं माने, हम कहते हैं कि एक दिन इस गाँव में गिद्ध-कौआ उड़ेगा और यह इसपिताल? अभी तो नहीं मालूम होगा जब कुएँ में दवा डालकर गाँव में हैजा फैलाएगा तो समझना।"

इसी अवसर पर लछमी पंच-परमेश्वरों को संबोधित करते हुए कहती है–"परमारथ में जो 'विघिन' डालते हैं वे मानुस नहीं। आप लोग तो सास्तर-पुरान पढ़े हैं, जग्ग भंग करने वालों को पुरान में क्या कहा गया है, सो तो जानते ही हैं। बस हाथ जोड़कर पंच परमेश्वर से बिनै है, झगड़ा त्याग कर मेल बढ़ाइए। सतगुरु साहेब गाँव का मंगल करेंगे। आगे आप लोगों की मरजी।"

इस अवसर पर बालदेव को भी भाषण झाड़कर ग्रामवासियों पर अपना सिक्का जमाने का मौका मिल गया। अत: उसने बताया कि आंदोलन में भाग लेते समय किस तरह अन्य लोगों के साथ-साथ उसको भी बुरी तरह पीटा जाता था और पानी माँगने पर मुँह में पेशाब कर दिया जाता था। जब उसने अपनी कमीज हटाकर शरीर पर पड़े दाग दिखाए तो लोग कह उठे–"अरे बाप! चीता-बाघ की तरह देह हो गया है...... धन्न हैं!" अपनी प्रशंसा से प्रफुल्लित होकर बालदेव ग्रामवासियों को धमकी-सी देते हुए कहने लगा।

"आप लोग अपने गाँव में सेवा करने दीजिएगा, हम चन्नपट्टी चले जायेंगे। वहाँ आश्रम है, घर-घर चरखा-करघा चलता है। घर-घर में औरत मर्द पढ़ते हैं। हम मेरीगंज को चन्नपट्टी की तरह बनाना चाहते हैं हम अपने से गाँव में झाड़ू देंगे, मैला साफ करेंगे।"

इस अवसर पर बालदेव ने 'कस्तूरबा स्मारक निधि' की मीटिंग से संबंधित एक अंग्रेजी में टाइप की हुई चिट्ठी भी दिखाई। इससे गाँव वालों में खुसर-फुसर होने लगी कि–"चौधरी जी भी बालदेव जी से राय लिए बिना कुछ नहीं करते हैं। यह अपने गाँव का भाग है कि बालदेव जी जैसा हीरा आदमी यहाँ आकर रहते हैं। अपना गाँव भी अब

सुधर जाएगा जरूर......।" इस तथ्य के प्रकाश में रामकिरपालसिंघ ने बालदेव से गाँव न छोड़ने का आग्रह किया। उन्होंने तहसीलदार साहब का आह्वान किया कि आओ हम लोग पहले की तरह फिर से मिल जाएँ गाँव के लोग प्रसन्न होकर सिंध साहब की 'बम भोलानाथ' कहकर प्रशंसा करने लगे। सिंघ जी ने तहसीलदार साहब को हाथ पकड़कर उठा लिया और दोनों गले मिलने लगे।

इस मेल-मिलाप का खेलावनसिंह यादव पर उलटा ही असर हुआ। उसे बालदेव पर भी क्रोध आया कि दुनियाभर का ज्ञान बघारते रहने पर भी वह यह क्यों नहीं समझ पाया है कि सिंघ साहब तहसीलदार से मेल क्यों बढ़ा रहे हैं? यादव साहब की खिन्नता को ज्योतिषी जी भाँप गए, जो स्वयं भी खिन्न थे। महंत सेवादास ने बालदेव को बीजक पढ़ने के लिए रोक लिया। जब लछमी उसके समीप लालटेन रखने आई तो बालदेव को ऐसी अनुभूति होने लगी कि लछमी के शरीर से दुर्गा मंदिर की तरह की गंध आती है–"मनोहर सुगंध! पवित्र गंध!....... औरतों की देह से तो हल्दी, लहसुन, प्याज और घाम की गंध निकलती है!"

टास्क प्रथम खंड के चौथे परिच्छेद में दर्शाई गई घटना का अपने शब्दों में वर्णन कीजिए।

छठा परिच्छेद–छठे परिच्छेद का आरंभ बालदेव के हृदय में लक्ष्मी के इन उद्गारों को लेकर मचने वाली उथल-पुथल से किया गया है, "आज यहीं परसाद पा लीजिए बालदेव जी!....... परसाद! लछमी के शरीर की सुगंध!" एक-एक करके बालदेव के नेत्रों के समक्ष अपने बचपन के चित्र उभरने लगे। बालदेव को स्मरण हो आया कि उसके पिता की उसके बाल्यकाल में ही मृत्यु हो गई थी। फिर भी उसकी माता उसको अनाथ नहीं कहने देती थी। माँ की मृत्यु के पश्चात् वह अजोधी भगत और उनकी बुढ़िया पत्नी के यहाँ रहता हुआ उनकी भैंस चराया करता था। दोनों ही प्राणी बड़े क्रूर थे और उसकी थप्पड़ों, छड़ी और लाठी से पिटाई करते थे। हाँ, उनकी बेटी रूपमती दयालु थी और वह अपने माँ-बाप से छिपकर बालदेव को अच्छा भोजन दिया करती थी।

तदनंतर उसको वकील रामकिसूनबाबू और उनकी पत्नी माये जी की याद आती है। उनकी वकालत बड़ी अच्छी चलती थी, किंतु महत्मा गाँधी के प्रभाव में आकर उन्होंने वकालत छोड़ दी थी और गाँवों में घूमकर काँग्रेस का प्रचार कार्य करते थे। बालदेव ने उनके प्रभाव के कारण ही सुरनियों में नाम लिखाया था। माये जी इतनी दयावान थीं कि एक बार जब बालदेव को बुखार आया तो वे उस पर रात के बारह बजे तक पंखा झलती रही थीं। दुर्भाग्यवश वे उसके दो तीन वर्ष के उपरांत ही विधवा हो गई थीं और उन्होंने काशीवास के लिए जाते समय बालदेव को समझाया था–"महात्मा जी पर भरोसा रखो। वह सब भला करेंगे। महात्मा जी का रास्ता कभी मत छोड़ना!"

प्रातःकाल हुआ तो खेलावन बाबू ने अपने कल के गुस्से को बालदेव पर प्रकट कर ही दिया–"कायस्थ राजपूत की जोड़ी मिल गई, अब क्या है, सुराज हो गया! लेकिन भाई बालदेव, हम ठहरे सीधे-सादे आदमी। कलिया पर नजर रखना।"

कालीचरन के नेतृत्व में गाँव में जुलूस निकाला जाता है। इससे चिढ़कर ज्योतिषी काका भी कहते हैं–"खेलावनबाबू, गाँव में तो सुराज हो गया, देखते हैं। अच्छा अच्छा! देखिएगा गाँव के लौंडे सब आज फुच्च-फच्च कर रहे हैं।"

सातवाँ परिच्छेद–गाँव की नवनिर्मित डिसपेंसरी में नियुक्त डाक्टर प्रशांत कुमार का नौकर प्यारू आता है, तो सभी गाँव वाले उसको घेर लेते हैं। वह डाक्टर साहब की मेज कुर्सी सजाने के बाद गमछा साबुन का प्रबंध करता है। गमकौआ (सुगंधित) साबुन के लिए तहसीलदार साहब की बेटी कमली की शरण लेनी पड़ती है, क्योंकि पूरे गाँव में मात्र वही गमकौआ साबुन से नहाया करती है। सारा गाँव महक रहा है। तहसीलदार साहब के अहाते में हलवाई सुबह से ही पूड़ी जलेबी बना रहे हैं। सिंघ साहब, अपनी हास्य वृत्ति का परिचय देते हुए, खेलावन को पकड़ लाते हैं और कहते हैं–

नोट

"तहसीलदार देखो, इसके पेट में बाय उखड़ गया है। भोज खाने के पहले ही अन्नसर्जी हो गई है। अरे भाई, औरतों की तरह रूठने से क्या फायदा! तुम्हीं कहो तहसीलदार, हम ठीक कहते हैं या नहीं? लड़ो-झगड़ों और फिर गले मिलो। यह रूठने का क्या माने? हमको तो बालदेव से मालूम हुआ। जाकर देखा तो कागभुसुंडी इसके कान में मंतर पढ़ रहा है। .... ऐ बालदेव, सुनो, डागडर साहेब आएँ तो पहले इसी का इलाज कराओ कहना कि आठवाँ महीना है.......!"

गाँव के लोगों में हँसी मजाक लगातार चल रहा था। डाक्टर साहब के आने की खबर आते ही सभी अपना-अपना कामकाज छोड़कर जमा हो गए। जैसे ही डाक्टर प्रशांत आए, सब हाथ जोड़कर खड़े हो गए। डाक्टर साहब ने भी हँसते हुए हाथ जोड़कर उनका अभिवादन स्वीकार किया। वे अपने साथ रेडियो भी लाए हैं। बालदेव उनका गाँव के लोगों से परिचय कराता है। लछमी के पूछने पर प्रशांत द्वारा बताया जाता है कि उसके माता-पिता बचपन में ही गुजर गये थे। सेवादास द्वारा प्रशांत से मठ पर आने का आग्रह किया जाता है।

आठवाँ परिच्छेद—इस परिच्छेद का आरंभ लछमी के इस स्वगत चिंतन के साथ हुआ है कि डाक्टर प्रशांत की तरह इस संसार में उसका भी कोई नहीं है। वह यह भी विचार करती है कि डाक्टर को देखकर वह पिघल क्यों गई थी? वह मन ही मन कहती है—'यह अच्छी बात नहीं।......... सतगुरु मुझे बल दो!' उसको अपने बचपन की याद आती है, तो वह स्मरण करती है कि किस प्रकार महंत साहब की पुकार सुनकर वह कुनमुनाती हुई जगा करती थी—'उस दिन बीजक छूकर कसम खाये थे और आज फिर पुकारने लगे। सतगुरु हो, तुम्हारी बुलाहट कब होगी? बुला लो सतगुरु अपने पास दासी को!' लछमी अंधे महंत की पकड़ से छूटने का विफल प्रयास करती है, किंतु यह देखकर भौचक्की रह जाती है कि उनके प्राण पखेरु उड़ गए हैं।

महंत सेवादास की मृत्यु से लछमी को मठ सूना-सूना प्रतीत होता है और वह अब उनके महत्त्व को समझ पाई है। वह स्वयं को कोसती है कि उसी के कारण महंत सेवादास संमार्ग से च्युत हो गए थे—"एक ब्रह्मचारी का धर्म भ्रष्ट करने का पाप उसके माथे है।" उसे सांत्वना देने के लिए जब बालदेव आता है तो वह उसके संबंध में कहे गये महंत जी के इन शब्दों को याद करती है—"शुद्ध विचार का आदमी है। संस्कार बहुत अच्छा है। असल त्यागी यही लोग हैं लछमी!"

लछमी बालदेव से जब यह आग्रह करती है कि वह कंठी ग्रहण कर ले तो बालदेव उसके इस प्रस्ताव को यह कहकर टाल देता है, "कोठारिन जी, असल चीज है मन। कंठी तो बाहर की चीज है।" हाँ, अंततः वह कंठी लेना स्वीकार कर लेता है और लछमी उसको अपना बीजक दे देती है। बालदेव को लछमी के बीजक से भी उसके शरीर की नशीली गंध की अनुभूति होती रहती है। उसका मन लछमी को देखते ही पवित्र हो जाता है।

नौवाँ परिच्छेद—उपन्यास का नौवाँ परिच्छेद डाक्टर प्रशांत कुमार के जीवन-वृत्तांत से संबंधित है। वह अपनी जाति डॉक्टर बताता है तथा स्वयं को बंगाली या बिहारी आदि बताने के स्थान पर हिंदुस्तानी बताता है। प्रशांत को अपना कुल, शील ज्ञात भी नहीं था, क्योंकि उसकी माँ ने नवजात प्रशांत को बाढ़मग्ना कोशी नदी में बहा दिया था। हाँ, उस शिशु को नेपाल से भागे उपाध्याय जी ने बचा लिया था और उसका एक बंगाली डॉक्टरनी द्वारा पालन-पोषण किया गया था। उसने पटना के मेडिकल कॉलेज से डॉक्टर की उपाधि प्राप्त की थी, किंतु उसके डॉक्टर बनने से पूर्व ही उसकी पोषक माता स्वर्ग सिधार गई थी।

सन् 1946 में जब काँग्रेसी मंत्रीमंडल का गठन हुआ तो प्रशांत ने आग्रह करके अपनी नियुक्ति मेरीगंज के नवनिर्मित मलेरिया सेंटर में करा ली। प्रशांत के इस आग्रह के संबंध में उसके साथी डाक्टरों की प्रतिक्रिया थी कि वह बेवकूफ है, किंतु उसके प्रिंसिपल ने कहा था—"तुमसे यही उम्मीद थी। मैं तुम्हारी सफलता की कामना करता हूँ! जब कभी तुम्हें किसी सहायता की आवश्यकता हो, हमें लिखना।"

प्रशांत का स्टीमर चलने ही वाला था कि उसकी सहपाठिन ममता ने उसको प्रेमपूर्वक झिड़कते हुए कहा था—"आखिर तुम्हारा भी माथा खराब हो गया। तुमने तो कभी बताया नहीं। बलिहारी है तुम्हारा!......... ओह, प्रशांत,

नोट

तुम कितने बड़े हो, कितने महान! मैं तो अभी आ रही हूँ बनारस सें आते ही चुन्नी ने तुम्हारी चिट्ठी दी।" उसने अपने रुमाल से फूल और बेलपत्र निकाल कर उसके सिर से छुवाते हुए कहा था–"बाबा विश्वनाथ जी का प्रसाद है। बाबा विश्वनाथ तुम्हारा मंगल करें। पहुँचते ही पत्र देना।"

दसवाँ परिच्छेद–प्यारू के संबंध में ममता को लिखे पत्र में प्रशांत ने लिखा कि "तुम्हारे बाबा विश्वनाथ ने मेरे आने से पहले ही अपने एक दूत को भेज दिया है। प्यारू सचमुच देवदूत है। इसलिए तुमको चिंता करने की आवश्यकता नहीं।" गाँव के लोगों के बारे में उसने लिखा कि कहने को तो ये लोग अनपढ़, अज्ञानी और अंधविश्वासी हैं, किंतु जहाँ तक सांसारिक बुद्धि का सवाल है, ये हम तुम जैसे लोगों को दिन में पाँच बार ठग लेंगे।

प्रशांत पत्र लिख ही रहा था कि उसको तहसीलदार विश्वनाथप्रसाद अपनी बेहोश लड़की के इलाज के लिए बुलाने आए। प्रशांत उसको सुई लगाने के लिए अपनी सिरिंज ठीक कर ही रहा था कि कमली ने आँखें खोल दी और सुई लगवाने से इंकार कर दिया। उसको दवा भेजी गई तो उसने दवा पीने से भी इंकार कर दिया। तहसीलदार के नौकर से ज्ञात हुआ कि कमली की सगाई तीन स्थानों से छूट चुकी है और अब कोई लड़के वाला उससे विवाह करने को तैयार नही है। विश्वनाथ प्रसाद चाहते हैं कि किसी पछवरिया कायस्थ को अपना घर जमाई बना लिया जाए। तभी कमली के बेहोश होने की सूचना मिलती है और होश में आने पर वह प्रशांत के कहने से दवा पी लेती है।

कमली के बारे में प्रशांत ममता को पत्र में लिखता है–"केस अजीब है! हिस्ट्री और भी दिलचस्प है। तुम्हारी शीला रहती तो आज खुशी से नाचने लगती; हिस्टीरिया, फ़ोबिया, काम-विकृति और हठ-प्रवृत्ति जैसे शब्दों की झड़ी लगा देती।"

उदाहरण–अपने साथी डॉक्टरों द्वारा बेवकूफ कहे जाने पर भी प्रशांत ने मेरीगंज के मलेरिया सेंटर में अपनी नियुक्ति कराने का निर्णय नहीं बदला।

ग्यारहवाँ परिच्छेद–इसका आरंभ तंत्रिमाटोली में होने वाली सुरंगा सदाब्रिज की संगीतात्मक कथा के वर्णन से किया गया है। कथा को पुरैनिया स्टेशन से आया खलासी सुना रहा है, जो जादू टोना भी जानता है। यह खलासी एक साल से मँहगूदास की बेवा बेटी फुलिया से सगाई करने के लिए चक्कर लगा रहा है, किंतु अभी तक उसकी बात नहीं बन पाई है।

रमजूदास की पत्नी तंत्रिमाटोली की स्त्रियों की सरदार है। उससे ऊँची जाति के लोग भी डरते हैं, क्योंकि उसने एक बार सिंघ जी का मुँह बिगाड़ दिया था। टोले की जवान लड़कियाँ चूंकि उसकी मुट्ठी में रहती हैं, अत: उसको खुश करने के लिए खलासी उसके लिए गिलट के कंगन लाया है। फुलिया उससे विवाह के लिए इच्छुक होते हुए भी माँ-बाप के भय के कारण अपना मुँह नहीं खोल पाती। कंगन पाकर रमजूदास की स्त्री खलासी का पक्ष लेते हुए फुलिया की माँ को भड़काती है।

"अरे फुलिया की माये! तुम लोगों को न तो लाज है और न धर्म। कब तक बेटी की कमाई पर लाल कनारी वाली साड़ी चमकाओगी? आखिर एक हद होती है किसी बात की! मानती हूँ कि जवान बेवा बेटी दुधार गाय की बराबर है। मगर इतना मत दूहो कि देह का खून भी सूख जाए।"

फुलिया की माँ भी कम नहीं थी। उसने भी उसको आड़े हाथों लेते हुए और उसका अनुचित संबंध खलासी से जोड़ते हुए कहा–"हाथ में कंगना तो चमका रही हो, खलासी को एक पुड़िया सिंदूर नहीं जुटता है?" फुलिया खलासी से कहती है कि यदि उसके माता-पिता उसका चुमौना (विवाह) उसके (खलासी के) साथ नहीं करेंगे तो वह उसके साथ भाग चलेगी।

बारहवाँ परिच्छेद–महंत सेवादास की मृत्यु हो जाने के कारण रामदास को महंती की चादर देने के लिए आचार्य गुरु आने वाले थे। इस महंती के अवसर पर महंत बनने वाले व्यक्ति के लिए यह शर्तें लिखी जाती थीं कि वह लँगोटाबंद रहकर सत्गुरु के स्थल की रक्षा करेगा, मादक द्रव्य का सेवन नहीं करेगा और कोई दासी-रखैल नहीं

नोट

रखेगा। नये महंत को नौ सौ बीघा की जमींदारी का मालिक बन जाना था, यही कारण था कि आचार्य गुरु का संदेश लेकर आने वाले लरसिंघदास के मुँह में स्वयं महंत बनने की इच्छा से पानी भर आया। इसका अन्य कारण लछमी का शॉप भ्रष्ट अप्सरा जैसा सौंदर्य भी था। उसने लछमी पर डोरे डालने का प्रयास भी किया किंतु लछमी ने उसे अच्छी तरह लताड़ दिया।

लरसिंघदास साधू होने से पूर्व एक भ्रष्ट चरित्र का व्यक्ति था और वह सोनमतिया कहारिन की बेटी रधिया को भ्रष्ट कर चुका था। उसने नौटंकी में नौकरी करने के साथ ही गाँजे की तस्करी भी की थी। उसको जब लक्ष्मी ने फटकारा तो वह कुटिल चाल का आश्रय लेकर कहने लगा कि वह आचार्य गुरु को गाली दे रही है। यह सुनकर लछमी और भी बिगड़ उठी और गरज कर बोली–"रामदास! गरदनियाँ देकर निकाल दो इसको। यह साधु नहीं, राक्षस है। इसके सिर पर माया सवार है। इससे पूछो, कि आज सवेरे जब मैं स्नान कर रही थी तो बाँस की पट्टी में छेद करके यह क्या देखता था? शैतान!" रामदास उसे धक्का मारकर भगा देता है।

तेरहवाँ परिच्छेद–ज्योतिषी जी को ही नहीं गाँव के सभी लोगों को लगता है कि गाँव के ग्रह अच्छे नहीं हैं। एक कारण यह था कि स्टेट का सर्किल मैनेजर तहसीलदार विश्वनाथ को उन लोगों पर नालिश करने के लिए कहता है जिन पर एक साल का भी लगान बकाया है। उधर रामकिरपालसिंघ और ज्योतिषी काका यादवटोली के लोगों द्वारा सीना तानकर चलने और परनाम-पाती भी न करने से चिढ़े हुए थे। सिंघ साहब तो कभी-कभी यह भी सोचते थे कि कि हरगौरी द्वारा बताए हुए काली कुर्ती वालों को गाँव में क्यों न बुला लिया जाए जो लाठी चलाना सिखाएँगे।

लरसिंघदास मेरीगंज के घर-घर जाकर यह प्रचार करने लगा कि मठ की महंती आचार्य गुरु को मिलनी चाहिए–"महंथ की रखेलिन या दासी को मठ के मामले में बोलने का कोई अधिकार नहीं। रामदास तो भैंसवार है। इतने बड़े मठ को चलाना मूर्ख आदमी के बूते की बात नहीं।"

उधर तंत्रिमाटोले में पंचायत कर यह निर्णय लिया गया कि टोले की कोई भी औरत बाबूटोले के किसी आँगन में काम करने नहीं जाएगी। उनकी देखा देखी गहलौत छत्री, कुर्म छत्री, पोलियाटोले, धनुखधारी और कुशवाह छत्रीटोले के पंचों ने भी ऐसी ही व्यवस्था कर दी थी कि उनकी स्त्रियाँ बाबूटोले में काम करने नहीं जाएँगी।

कालीचरण का अखाड़ा भी जोरों पर है और कीर्तन-मंडली भी। बालदेव को अखाड़ा पसंद नहीं, क्योंकि उसे लगता है कि शरीर में अधिक ताकत होने पर हिंसावाद का भय रहता है।

चौदहवाँ परिच्छेद–चौदहवें परिच्छेद का आरंभ गाड़ीवानों के निम्न गीत के परिप्रेक्ष्य में होता है–

चढ़ली जवानी मोरा अंग अंग फड़के से

कब होइहैं गवना हमार रे भउजियाऽऽऽ!

कमली की अंतर्व्यथा से ज्ञात हुआ है कि उसकी तो कोई भौजी ही नहीं है अत: वह अपनी पीड़ा किससे व्यक्त करे? अपने इलाज के संबंध में वह डाक्टर प्रशांत की ओर आकृष्ट हो चुकी है और उसकी मुस्कान को बड़ी जानलेवा स्वीकार करती है। वह उसके प्रति इस दृष्टि से रुष्ट-सी है कि प्रशांत उसके दिल की बीमारी को क्यों नहीं समझता। वह उसको 'मिट्टी का माधव' कहने लगती है।

डाक्टर प्रशांत रोज शाम को तहसीलदार के यहाँ चाय पीने आता है। एक दिन कमली उससे भोजन करने का आग्रह करती है और कहती है, "मिर्च-मसाला नहीं खाते, उबली हुई चीजें खाएँगे। यही न?" प्रशांत सोचता है कि कमली का रोग दिन-प्रतिदिन बढ़ता जा रहा है, यदि शीला यहाँ होती तो इसको 'भावात्मक संक्रमण' अथवा 'प्रत्यावर्तन' के मोड़ पर पहुँचा हुआ रोग बताती।

पन्द्रहवाँ परिच्छेद–सुमरितदास को लोग लबड़ा आदमी समझते हैं यद्यपि वह कभी-कभी बड़े पते की बातें बताता है! उसकी सूचना है कि लरसिंघदास को कलक्टर ने महंत स्वीकार कर लिया है। वह यह सूचना भी देता है कि बालदेव को कपड़ा, मिट्टी का तेल या चीनी की पुर्जियाँ (पर्चियाँ) देने का काम मिला है। इससे पूर्व लोग पर्चियाँ

नोट

लेने के लिए दस कोस दूर कमलदाहा में मुस्लिम लीगी नेता कमरुद्दीबाबू के पास जाते थे। हर किसी को पर्चियाँ फिर भी नहीं मिल पाती थीं, क्योंकि कमरूद्दी इन चीजों को ब्लैक में बेच देता था।

खलिहान खुलने के अवसर पर 'बिदापत' नाच का आयोजन किया जाता है, जिसका म्यूजिक डायरेक्टर लिबडू पासवान है। गाँवभर के लोग तहसीलदार साहब के खलिहान में जमा होकर इस नाच गाने का आनंद ले रहे हैं। ज्योतिषी जी इस नाच को देखने नहीं आते क्योंकि उनका पुत्र बिदापत नाच का समाजी है और वे यह सहन नहीं कर सकते कि 'बामन नाचे, तेली तमाशा देखे!' वे सोचते हैं कि उनका पुत्र रामनारायण कुपुत्र है।

सोलहवाँ परिच्छेद–खेलावन यादव के दरवाजे पर काफी भीड़भाड़ रहती है, क्योंकि वहाँ बालदेव चीनी, तेल और कपड़े की पर्चियाँ बाँटता है। जिला सेक्रेटरी का आदेश आता है कि चूँकि मिनिस्टर साहब आने वाले हैं, अत: बालदेव को उनकी सभा के लिए झंडा-पत्तखा और जत्था ले जाना होगा। बालदेव द्वारा लाए गए बच्चों, औरतों और मर्दों के जत्थे से प्रसन्न होकर उसे जिला कमेटी का मेंबर बना दिया जाता है।

कालीचरन और वासुदेव को कोई कम्युनिस्ट कार्यकर्ता अलग ले जाकर कामरेड कहकर संबोधित करता है और पूछता है कि गाँव में किस जाति के लोगों की अधिक संख्या है? बालदेव से कटा सा रहने के कारण कालीचरन सोशलिस्ट पार्टी का सदस्य बन जाता है। पार्टी के जिला मंत्री कालीचरन को लाल पताका की एक कॉपी और एक झंडा देते हुए कहते हैं कि वह गाँव में जाकर मेंबर बनाए। कालीचरन वासुदेव को समझाता है–"यही पार्टी असल पार्टी है। गरम पार्टी है। 'किरांतीदल' का नाम नहीं सुना था? .... 'बम फोड़ दिया फटाक से मस्ताना भगतसिंह', यह गाना नहीं सुने हो? वही पार्टी है। इसमें कोई लीडर नहीं। सभी साथी हैं, सभी लीडर हैं। बालदेव जी तो बुरजुआ है, पूँजीवाद है।"

सत्रहवाँ परिच्छेद–इस परिच्छेद का आरंभ काशी के तीस चेलों के साथ आने वाले आचार्य गुरु के वर्णन से किया गया है। उनके साथ आया एक नागा साधु बड़ा ही क्रोधी दिखाया गया है और चूँकि लरसिंघदास ने उसके कान भर रखे हैं, अत: वह लछमी को फटकाराते हुए कहता है–"हरामजादी! रंडी! तैं समझती क्या है री? ऐं, दुनिया को तैं अंधा समझती है? बोल! छिनाल! तैं आचारजगुरु को गाली देती है? तेरे मुँह में कुल्हाड़े का डंडा डाल दूँ, बोल! साली, कुत्ती! साधू का रगत बहाती है और बाबू लोगों से मुँह चटवाती है!"

इसी प्रकार वह रामदास को भी फटकारते हुए कहता है–"सूअर के बच्चे, कुत्ते के पिल्ले! तैं महंथ बनेगा रे! आ इधर तुझको खड़ाऊँ से टीका दे दूँ महंथी का! तेरी बहान को! (खटाक्) तेरी माँ को! (खटाक्) घसियारे का बच्चा! जा लक्कड़ लाकर धूनी में डाल!"

लछमी फरियाद लेकर बालदेव, खेलावन और सिंघ आदि सभी लोगों के पास जाती है, किंतु कोई भी उसकी सहायता करने का आश्वासन नहीं देता। हाँ, जब वह रो-रोकर कालीचरन को नागा बाबा की करतूतें सुनाती है, तो वह उसे चिंता न करने का आश्वासन देता है।

आचार्य गुरु द्वारा लरसिंघदास को महंत नियुक्त करने के कागज पर गाँव के सभी प्रमुख व्यक्ति तो हस्ताक्षर कर देते हैं, किंतु इसका विरोध करते हुए कालीचरन कहता है कि जिस मठ के लिए हमारे बाप-दादों ने जमीन दी थी, उसका महंत हम एक नंबरी बदमाश को नहीं बना सकते। नागा साधु कालीचरन को माँ-बहन की गालियाँ देते हुए कुल्हाड़े से काट डालने की धमकी देता है। इस पर कामरेड वासुदेव अपने साथियों के साथ उस नागा साधु पर पिल पड़ता है, जिससे वह भाग जाता है। लरसिंघ चार चपत खाकर ही महंती से तौबा कर लेता है और रामदास को महंती की चादर प्रदान कर दी जाती है। टीके के पश्चात् कृतज्ञ लछमी कालीचरन को अंदर बुलाती है, तो वह अपने उस्ताद की सीख याद करके उससे भी पाँच हाथ से अधिक दूर खड़ा होता है।

नोट

स्व-मूल्यांकन (Self-Assessment)

बहुविकल्पीय प्रश्न (Multiple Choice Questions) :

4. मैला आँचल के प्रथम खंड को कितने परिच्छेदों में बाँटा गया है?

(क) ब्यालीस	(ख) छियालीस
(ग) चवालीस	(घ) अड़तालीस।

5. सेवक रामदास एवं उनकी दासी लक्ष्मी से संबंधित घटनाओं का वर्णन कौन-से परिच्छेद में किया गया है?

(क) दूसरा परिच्छेद	(ख) चौथा परिच्छेद
(ग) आठवाँ परिच्छेद	(घ) बारहवां परिच्छेद।

6. नवजात प्रशांत का पालन-पोषण किस डॉक्टरनी द्वारा किया गया?

(क) बंगाली	(ख) नेपाली
(ग) बिहारी	(घ) मराठी।

अठारहवाँ परिच्छेद–इस परिच्छेद में पारबती की माँ को गाँव की स्त्रियों द्वारा डायन समझने के तथ्य का वर्णन किया गया है। सुमरितदास उसको गाँव का ऐसा लेडी डाक्टर बताता है, जो पाँच महीने के गर्भ को भी बड़ी सफाई से गिरा देता है। गीताष्टमी की रात को लोगों ने उसको एक बच्चा गोद में लेकर नग्न नृत्य करते देखा है। डाक्टर प्रशांत उससे मौसी का संबंध स्थापित करके उससे हलवा बनवाकर खाता है, तो गाँव की स्त्रियाँ प्रशांत का अमंगल होने की भविष्यवाणी कर देती हैं। कालीचरन प्रशांत को लाल सलाम करते हुए यह सूचना देता है कि मेरीगंज कोठी के बगीचे में पूर्णिया की सोशलिस्ट पार्टी की मीटिंग होगी।

उन्नीसवाँ परिच्छेद–सोशलिस्ट पार्टी की सभा में संभ्रात लोग बड़ी मात्रा में भाग लेते है, क्योंकि वे उस पार्टी को जमीन जोतने वालों की पार्टी समझते हैं। कालीचरन उनको समझाता भी है–"जमीन किसकी?.........जोतने वालों की! जो जोतेगा वह बोयेगा, जो बोयेगा वह काटेगा। कमाने वाला खायेगा, इसके चलते जो कुछ हो!" उसी सभा में कामरेड सैनिक जी भाषण देते हुए कहते हैं–

"........ यह जो लाल झंडा है, आपका झंडा है, जनता का झंडा है, अवाम का झंडा है, इंकलाब का झंडा है। इसकी लाली उगते हुए आफताब की लाली है, यह खुद आफताब है। इसकी लाली, इसका लाल रंग क्या है? .... रंग नहीं! यह गरीबों, महरूमों, मजलूमों, मजबूरों के खून में रंगा हुआ झंडा है।"

देखते ही देखते सोशलिस्ट पार्टी के तीन सौ मेंबर बन जाते हैं क्योंकि सैनिक जी ने अपने भाषण में यह भी कहा था–"मिलों की चिमनियाँ आग उगलेंगी और उन पर मजदूरों का कब्जा होगा। जमीनों पर किसानों का कब्जा होगा। चारों ओर लाल धुआँ मंडरा रहा है। उठो, किसानों के सच्चे सपूतो! धरती के सच्चे मालिको, उठो! क्रांति का मशाल लेकर आगे बढ़ो!"

इस सभा में बालदेव भी भाषण देना चाहता है किंतु कामरेड वासुदेव उसे रोकते हुए कहता है–"बालदेव जी, आपका बिख्यान हम लोग बहुत सुन चुके हैं। आप पूँजीवाद हैं। इस सभा में आप नहीं बोल सकते।"

सोशलिस्ट पार्टी की मीटिंग में सिपैहियाटोली के किसी बच्चे तक ने भाग नहीं लिया था, क्योंकि उनके टोले में कटिहार से काली टोपी वाले दल के संयोजक जी आ गये हैं, जो उनको लाठी-भाला चलाने की ट्रेनिंग देते हैं।

बीसवाँ परिच्छेद–इस परिच्छेद का आरंभ कमली की प्रशांत संबंधी प्रेमासक्ति से किया गया है। वह प्रशांत को 'प्राणनाथ' संबोधित करते हुए प्रतिदिन पत्र लिखती है और उन्हें फाड़ती रहती है। डाक्टर प्रशांत घोड़ा करैत नामक एक बड़े ही जहरीले साँप से बाल-बाल बच जाता है। ढाई हाथ लंबे साँप के आगमन को गाँव की स्त्रियाँ पारबती की डाइन माँ का कुप्रभाव बताती हैं, क्योंकि डाइन का मंत्र भी ढाई अक्षर का ही हुआ करता है। डाक्टर प्रशांत इस

अंधविश्वास को नकारते हुए मौसी के घर नित्य जाता रहता है। उसे लगता है कि कमली की दशा भी सुधरती जा रही है। उधर कमली ने अपनी नल-दमयंती की किताब में स्थल-स्थल पर नल को काटकर प्रशांत और दमयंती को काटकर अपना नाम लिखा हुआ है।

कटिहार से लौटकर आए तहसीलदार विश्वनाथप्रसाद, डाक्टर प्रशांत को बताते हैं कि वे तहसीलदारी रूपी पाप की गठरी को अपने सिर से उतार कर फेंक आए हैं, क्योंकि यह तथ्य उन्हें स्वीकार नहीं था कि उन किसानों पर भी नालिश कर देते जिन पर मात्र एक वर्ष का ही लगान बकाया था।

इक्कीसवाँ परिच्छेद–इक्कीसवें परिच्छेद में सहदेव मिसर को फुलिया के घर में घुसते ही पकड़ लिए जाने और उसको रात भर बाँधकर रखने का वर्णन किया गया है। दूसरे दिन इस संबंध में पंचायत होने की घोषणा होती है तो ब्राह्मण यह धमकी देते हैं कि यदि राजपूतों ने इस पंचायत में ब्राह्मणों का पक्ष नहीं लिया तो वे ग्वालों को राजपूत मान लेंगे।

पंचायत आरंभ हुई तो फुलिया ने बताया कि उनकी आँख तो तब खुली थी, जब लोग सहदेव मिसर को पकड़कर हल्ला मचा रहे थे। सहदेव ने मँहगूदास के घर आने का कारण यह बताया कि वह खेत की रखवाली के लिए उसे जगाने आ रहा था। रास्ते में मैंने रबिया और सोनमा को चोरी से शकरकंदी उखाड़ते पकड़ा था, जिससे इन लोगों ने तेतरा और नकछेदिया के साथ मिलकर झूठा हल्ला मचा दिया है। मँहगू भी यह स्वीकार कर लेता है कि उसको सहदेव ने आकर जगाया था। इस प्रकार सारा मामला सुलझा हुआ मानकर सिंघ जी कहते हैं कि अब पंच लोग ही फैसला करें कि असल बात क्या है?

कालीचरन इसको अन्याय मानता है कि एक ही ओर के लोगों से बातें पूछी गई हैं। वह कुछ पूछना चाहता है तो ज्योतिषी जी कह देते हैं कि वे कालीचरन को पंच ही नहीं मानते। हाँ, वोटिंग कराने पर कालीचरन को पंच मान लिया जाता है और उसके धमका फुसला कर पूछने पर फुलिया सच-सच सब बता देती है। ज्योतिषी जी ताव में आकर कालीचरन से कहते हैं कि वह अपनी माँ से जाकर पूछे कि वह किसका बेटा है? इस पर बासुदेव चिल्लाकर कहता है कि ज्योतिषी जी अपनी स्त्री से जाकर पूछें कि उसके गर्भ में किसका बच्चा है?

इसी समय काली टोपी वाले संयोजक जी सीटी बजाते हैं। जिसे सुनकर पंद्रह-बीस लठैत राजपूत नौजवान सभी को घेर लेते हैं और सिंघ साहब पंचायत की बैठक को स्थगित करके चले जाते हैं। कालीचरन फैसला सुनाता है कि मँहगू अपनी बेटी का चुमौना (विवाह) खलासी के साथ कर दे, और आज से सभी टोले के लोग बाबू लोगों पर नजर रखें।

बाईसवाँ परिच्छेद–इस परिच्छेद में नव-नियुक्त महंत रामदास की लछमी की ओर आसक्ति बढ़ती जाने का वर्णन किया गया है। लछमी उसको समझाती है, "आप अपने चित्त को मत विचलित कीजिए। आप मेरे गुरुबेटा हैं, मैं आपकी गुरुमाई।"

क्या आप जानते हैं	कालीचरन अपनी पार्टी का चंदा लेने मठ पर आता रहता है, किंतु लछमी से सदैव चार हाथ दूर खड़ा होता है। उसके बारे में रामदास की राय है कि कालीचरन को लाल झंडा और सोशलिस्ट पार्टी औरत की तरह प्रिय है। वह यह भी सोचता है कि वह कालीचरन के भय से ही प्यासा मर रहा है, नहीं तो लछमी के साथ अपनी काम पिपासा शांत कर लेता। वह लछमी से जोर-जबरदस्ती करना चाहता है, तो वह उसको कुत्ता कहते हुए जोर से थप्पड़ मारती है और पैरों से धक्का देकर दूर गिरा देती है।

बालदेव लक्ष्मी से गाँव में चर्खा सेंटर खोलने के लिए सहायता माँगता है। रामदास को बालदेव फूटी आँख भी नहीं सुहाता, क्योंकि उसकी दृष्टि में बालदेव की दृष्टि बड़ी मैली है। हाँ, लक्ष्मी का हृदय बालदेव को देखकर चंचल

नोट

हो उठता है। वह उसको एकदम सरल और सच्चा साधु समझती है, जिसके दिल में जरा भी मैल नहीं है।

तेईसवाँ परिच्छेद–इस परिच्छेद का आरंभ महँगाई के कारण लोगों के परेशान रहने के तथ्य से किया गया है। काँग्रेस का प्रचार कार्य करने के लिए मेरीगंज में बौनदास नामक कार्यकर्ता आ जाता है। उसके बारे में प्रसिद्ध है कि उसने सन् 1942 में गोरी मिलिट्री को बहुत छकाया था। संयोजक जी अपने बौद्धिक भाषणों में इस तथ्य पर जोर देते हैं कि आर्यावर्त्त में शुद्ध हिंदू ही रह सकते हैं। कामरेड बासुदेव लाल झंडे और कम्युनिस्ट पार्टी के सिद्धांतों का प्रचार करता रहता है।

सोशलिस्ट पार्टी के प्रचार कार्य में सहायता के लिए कालीचरन से जब चलित्तर कर्मकार आकर मिलता है, तो गाँव में आतंक छा जाता है क्योंकि चलित्तर कर्मकार बम, पिस्तौल चलाने में इतना माहिर है कि उसके नाम से गोरी मिलिट्री भी पेशाब करने लगती है। गाँव वाले सोचते हैं–"बम, पिस्तौल के सामने काली टोपी वालों की लाठी क्या करेगी? हाथी के आगे पिद्दी!"

चौबीसवाँ परिच्छेद–इस परिच्छेद में होली का त्योहार आने पर गाँव के लोगों द्वारा कर्ज़ ले-लेकर त्योहार मनाने की तैयारी का वर्णन किया गया है। कमली भी प्रशांत पर रंग डालती है तो प्रशांत भी उसके सिर पर अबीर उड़ेल देता है।

पच्चीसवाँ परिच्छेद–प्रस्तुत परिच्छेद का आरंभ बावनदास (बौनदास) की इस दुश्चिंता के साथ किया गया है कि भारतमाता अब भी रो रही है। काँग्रेस पार्टी में तरह-तरह के भ्रष्ट लोग उच्च पदों पर आसीन हैं। इस तथ्य का स्पष्टीकरण करते हुए वह बताता है कि पिकेटिंग के समय काँग्रेस के वालेंटियरों को पीटने वाला चानमल मारवाड़ी का बेटा सागरमल नरपत नगर थाना काँग्रेस का सभापति है। जबकि नेपाल से लड़कियाँ भगाकर लाने वाला दुलारचंद कापरा, कटहा थाने का सेक्रेटरी है।

बावनदास अपने नाम के अनुरूप ही डेढ़ हाथ की ऊँचाई, साँवले रंग, मोटे होंठ तथा मोटी और भोंडी आवाज का धनी व्यक्ति है। उसने जब एक बार चंदे के रुपयों में से दो आने की जलेबियाँ खा ली थीं तो वह फूट-फूटकर रोया था और दो दिन उपवास करके आत्म शुद्धि की थी। इसी प्रकार तारावती देवी के प्रति कामातुर हो जाने के पाप का प्रायश्चित उसने सात दिन का उपवास करके किया था।

छब्बीसवाँ परिच्छेद–विश्वनाथप्रसाद द्वारा तहसीलदारी से त्यागपत्र दे दिए जाने पर शिवशंकरसिंह के पुत्र हरगौरी को नया तहसीलदार बनाया जाता है। यहाँ यह तथ्य भी बताया गया है कि विश्वनाथ के पिता पाँच रुपये मासिक पर तहसीलदार नियुक्त हुए थे और तीन साल के अंदर ही अस्सी बीघा उपजाऊ जमीन के मालिक बन गए थे। वे बड़े ही क्रूर थे और लगान देने में देर हो जाने पर किसानों को जोंको से भरे गड्ढे में खड़ा कर देते थे।

सत्ताईसवाँ परिच्छेद–डाक्टर प्रशांत को इस परिच्छेद में यह तथ्य स्वीकार करते चित्रित किया गया है कि आदमी के शरीर में अगम अगोचर जैसी कोई चीज 'दिल' है, जिसकी दवा एड्रिलिन नहीं है, जबकि इससे पूर्व वह कहा करता था–"दिल नाम की कोई चीज आदमी के शरीर में है, हमें नहीं मालूम। पता नहीं आदमी 'लंग्स' को दिल कहता है या 'हार्ट' को। जो भी हो, 'हार्ट', 'लंग्स' या 'लीवर' का प्रेम से कोई संबंध नहीं है।"

इसी परिच्छेद में प्रशांत के मुख से वह गीत निकलता है जो प्रस्तुत उपन्यास के नामकरण का मूलाधार है–

भारतमाता ग्रामवासिनी!
खेतों में फैला है श्यामल,
धूल भरा मैला-सा आँचल!

गाँव में हैजा फैलने की आशंका हुई तो कुँओं में लाल दवाई मुश्किल से ही डाली जा सकी। हैजे के टीके लगाने के लिए तो प्रशांत को कालीचरन के स्वयंसेवकों की सहायता लेनी पड़ी, जो लोगों को बलात् पकड़ लाते थे। प्रशांत कमली को अस्पताल दिखाने ले जाता है, तो गाँव की स्त्रियाँ उन्हें आँखें फाड़-फाड़कर देखती हैं।

अट्ठाईसवाँ परिच्छेद–डॉ० प्रशांत द्वारा हैजे के रोग से आसपास के गाँव वालों को बचा लिया जाता है, तो लोग उसकी देवता कहकर प्रशंसा करने लगते हैं। कमली प्रशांत से रूठ जाती है क्योंकि वह पंद्रह दिन तक उसके घर नहीं जा पाता। हाँ, जब प्रशांत के मुरझाए हुए मुख को देखती है, तो उसका गुस्सा शांत हो जाता है। अब वह प्रशांत को 'तुम' कहने लगती है।

उनतीसवाँ परिच्छेद–इस परिच्छेद में बिहार के 'सिरवा' और 'सतुआनी' पर्व का वर्णन किया गया है। प्रथम पर्व पर मछलियाँ पकड़ने का रिवाज़ है जबकि दूसरे पर्व के दिन लोग सत्तू खाकर रहते हैं। हाँ, मछली पकड़ने के अवसर पर झगड़े की आशंका है, क्योंकि जमींदार ने पड़मान नदी पर मिलिट्री बुलाकर तैनात करा दी है, दूसरी तरफ कालीचरन का ऐलान है कि हम प्रतिवर्ष की भाँति इस बार भी मछलियाँ पकड़ेंगे।

कपड़े, चीनी की पर्चियाँ बाँटने का काम विश्वनाथप्रसाद को मिल जाता है। लोगों का कहना है कि ऐसा परिवर्तन बालदेव के द्वारा ब्लैक करने के कारण हुआ है। लछमी बालदेव की सूखी काठी देखकर बड़ी चिंतित हो उठती है और भंडारी से कहकर उनको घी, दूध और मलाई खिलाती है। बालदेव का आना रामदास को अच्छा नहीं लगता जबकि उसके न आने पर लछमी का दिल धड़कने लगता है।

तीसवाँ परिच्छेद–डाक्टर प्रशांत की 'अखिल भारतीय मेडिकल गजट' में प्रकाशित रिसर्च रिपोर्ट की भारत के पाँच प्रख्यात डाक्टरों द्वारा सराहना की जाती है। उसे ममता की प्रशंसा भरी यह चिट्ठी मिलती है कि वह पटना मेडिकल कॉलेज की देन है। वह प्रशांत को प्रेरणास्पद पत्र लिखती रहती है। ममता दरभंगा के प्रसिद्ध डाक्टर कालीप्रसाद की पुत्री है और उसकी पहुँच मिनिस्टरों से लेकर झोंपड़ियों तक है।

इकतीसवाँ परिच्छेद–चर्खा सेंटर की मास्टरनी मंगलादेवी को टायफाइड हो जाता है। हैजे के दिनों में मंगला ने सारे गाँव की सेवा की थी, किंतु उसकी बीमारी के दिनों में चिचाए की माँ को छोड़कर कोई भी उसके पास नहीं बैठता। हारकर कालीचरन उसको अपने पार्टी ऑफिस में ले आता है और उसकी पंद्रह दिन तक सेवा-सुश्रुषा करता है। मंगला और कालीचरन एक दूसरे के निकट आने लगते हैं।

बत्तीसवाँ परिच्छेद–बैशाख और जेठ के महीनों में 'तड़बन्ना' में जिंदगी का आनंद सिर्फ तीन आने लबनी बिकता है। बसंती (लबनी) पीकर विरले व्यक्ति ही अपने होश दुरुस्त रख पाते हैं। जेल से छूटा सोमा जट नामक डाकू भी कालीचरन की पार्टी का मेंबर बनने की इच्छा व्यक्त करता है, तो कालीचरन बड़ा प्रसन्न होता है। ताड़ी पीते हुए सोमा जट कहता है कि यदि कालीचरन कहे तो वह नये तहसीलदार हरगौरी और बालदेव की तबियत साफ कर दे।

तैंतीसवाँ परिच्छेद–नवनियुक्त तहसीलदार हरगौरी दुर्गा के वाहन शेर की तरह गुर्राकर कहता है–"साले सब! चुपचाप दफा 40 का दर्खास देकर समझते थे कि जमीन नकदी हो गई। अब समझो। बौना और बलदेवा से जमीन लो। सब सालों से जमीन छुड़ा लेने के लिए कहा है मैनेजर साहब ने। लो जमीन! राम नाम की लूट है! .... अरे, काँग्रेसी राज है तो क्या जमींदारों को घोलकर पी जाएगा?"

कालीचरन सुमरितदास को धमकी देता है कि वह उसकी पार्टी के विरुद्ध प्रचार करना बंद कर दे। वह उसे यह धमकी भी देता है कि अपने नये जमींदार और मैनेजर से जाकर कह दे कि रैयतों से जमीन छुड़ाना हँसी ठट्ठा नहीं है।

नोट्स खेलावनसिंह यादवटोले की जमीन को गुप्त रीति से लेने की योजना बनाते हैं तो संथालों की जमीन को राजपूतटोले के लोग लेना चाहते हैं। खेलावनसिंह यादव यह कहकर बालदेव को अपने घर से निकाल देता है कि उसके बेटे सकलदीप का गौना होने वाला है और उसकी नई दुल्हन ससुराल में रहने आ रही है।

नोट

चौंतीसवाँ परिच्छेद—कुछ समय के पश्चात् जब फुलिया पुरैनिया स्टेशन से गाँव आती है तो उसके रंग-ढंग बदल चुके होते हैं। उससे पता चलता है कि अब वह खलासी को छोड़कर स्टेशन के पैटमान के साथ रहती है। गाँव लोटी फुलिया अपने पुराने प्रेमी सहदेव मिसर को बुलाना नहीं भूलती। सहदेव भी सोचता है कि जब कमली डाक्टर से, हरगौरी अपनी मौसेरी बहन से, बालदेव कोठारिन (लछमी) से, कालीचरन चर्खा स्कूल की मास्टरनी से फँसे हुए हैं तो पंचों के फैसले से क्या होता है? कालीचरन ने चमारों के यहाँ रोटी खाकर यह सिद्ध कर दिया है कि जातियाँ दो ही हैं—एक गरीब और दूसरी अमीर।

पैंतीसवाँ परिच्छेद—विश्वनाथप्रसाद के सम्मुख विकट समस्या है। उनसे एक ओर तो नयी बंदोबस्ती वाले किसान अपनी गवाही देने की प्रार्थना करते रहते हैं, जबकि दूसरी ओर नया तहसीलदार हरगौरी उनसे खुशामद करते हुए कहता है—"काका! इस बार इज्जत बचा लीजिए! क्या आप यही चाहते हैं कि नाई, धोबी और चमार के सामने हम हाथ जोड़कर गिड़गिड़ावें?" कारण यह था कि नीची जाति के लोगों ने ऊँची जाति के लोगों के मरे मवेशी उठाना, उनकी हजामत बनाना आदि बंद कर दिए थे।

विश्वनाथप्रसाद को कालीचरन भी यह धमकी देता है कि मामा आप काँग्रेस के लीडर हैं और इस बार हमको यह देखना है कि काँग्रेस गरीबों की पार्टी है या अमीरों की। बावनदास इस तथ्य को लेकर दुखी हैं कि काँग्रेस के सभापति का चुनाव जाति के आधार पर हो रहा है। वह सोचता है, "अब लोगों को चाहिए कि अपनी-अपनी टोपी पर लिखवा लें—भूमिहार, राजपूत, कायस्थ, यादव, हरिजन! .... कौन काजकर्ता किस पार्टी का है, समझ में नहीं आता।" वह यह भी सोचता है कि जब जमींदारी समाप्त हो जाएगी, तो ये काँग्रेसी जमींदार शायद मिलें खोलेंगे। यही कारण है कि नेताओं के साथ कोई न कोई मारवाड़ी व्यापारी लगा घूमता है।

विश्वनाथ और हरगौरी की मित्रता की सूचना मिलती है। कहा जाता है कि विश्वनाथ राजा दरभंगा का साथ देंगे, क्योंकि कायस्थ बच्चा नमकहरामी नहीं करता। जमींदारी प्रथा समाप्त होने की सूचना पाकर संथाल लोग इस प्रकार नाच-गाने में मस्त हो जाते हैं मानो सारी जमीन पर इन्हीं का अधिकार हो गया हो।

छत्तीसवाँ परिच्छेद—छत्तीसवें परिच्छेद में डाक्टर प्रशांत का ग्रामवासियों की गरीबी से दुखी होकर यह सोचना है—

"क्या करेगा वह संजीवनी बूटी खोजकर? उसे नहीं चाहिए संजीवनी। भूख और बेबसी से छटपटाकर मरने से अच्छा है मैलेग्नेंट मैलेरिया से बेहोश होकर मर जाना। तिल-तिलकर, घुल-घुलकर मरने के लिए उन्हें जिलाना बहुत बड़ी क्रूरता होगी।"

सैंतीसवाँ परिच्छेद—इस परिच्छेद में विश्वनाथप्रसाद, बालदेव और कालीचरन आदि लोगों की पंचायत में यह फैसला होते हुए दिखाया गया है कि क्या गरीब क्या अमीर, सभी भाई मिलकर एकता से रहें। न कोई जमीन छुड़ावे, न कोई गलत दावा करे। जैसे पहले जोतते-आबादते थे, आबाद करें, बाँट दें। न रसीद माँगें और न नकदी के लिए दर्खास्त दें.........।

अड़तीसवाँ परिच्छेद—लछमी को रह-रहकर बालदेव की याद सताती है और उसको वर्षा की हल्की फुहारों में नींद नहीं आ पाती। वह सोचती है।

"बालदेव जी तो इतने नाजुक हैं कि कभी एकांत में बात करना चाहो तो थरथर काँपने लगें, चेहरा लाल हो जाए। लाज से या डर से.........? लेकिन बिरहबाण से घायल लछमी का मन सिसक-सिसक कर रह जाता है।"

रामदास इन दिनों लछमी से कम ही बोलते हैं, क्योंकि वे उसे रुष्ट करके मलाई भोग नहीं पा सकते। कालीचरन भी इस बरसाती रात में अपने घर में रहने वाली मंगला की कोठरी में जा पहुँचता है। कमला को प्रशांत की चिंता सताती है कि कहीं वह वर्षा में भीग न रहा हो।

उनतालीसवाँ परिच्छेद—इस परिच्छेद के आरंभ में विश्वनाथप्रसाद संथालों को बाहरी आदमी घोषित करते वर्णित किए गए हैं। वे गाँव के लगभग डेढ़ सौ लोगों को बोने के लिए धान देते हैं। उनकी चालों के सामने नये तहसीलदार हरगौरी की एक नहीं चल पाती।

नोट

संथाल समझ गए हैं कि उनके बुजुर्ग ठीक ही कहते थे–"दिक्कू (गैर-संथाल) आदमी, भट्ठी का दारू, इसका विश्वास नहीं। .... अरे, तीर तो है! यही सबसे बड़ा साथी है। साथी छोड़ सकता है, तीर कभी चूकता नहीं ....।"

विश्वनाथ की बहन के खेत से धान लूटते संथालों और ग्रामवासियों में जमकर संघर्ष होता है। दो दर्जन संथाल और डेढ़ दर्जन संथालिनें पूरे ग्रामवासियों का सामना नहीं कर पाते और भाग खड़े होते हैं। खेत में छिपी संथालिनों की ओर इशारा करते हुए कोई ग्रामीण कहता है–"एकदम 'फिरी'! आजादी है, जो जी में आवे करो! बूढ़ी, जवान, बच्ची जो मिले। आजादी है। पाट का खेत है। कोई परवाह नहीं है।........फाँसी हो या कालापानी, छोड़ो मत!" इस संघर्ष में हरगौरी बुरी तरह घायल हो जाता है और उसके बचने की आशा नहीं रहती।

चालीसवाँ परिच्छेद–इस परिच्छेद में घायल हरगौरी की मृत्यु हो जाने की सूचना दी गई है। गाँव में पुलिस आकर पूछताछ करती है तो लोग घरों में जा छिपते हैं। बालदेव घटना के समय स्वयं को मठ में बताते हैं, तो कालीचरन स्वयं को पुरैनिया गया बताता है।

इकतालीसवाँ परिच्छेद–खेलावन भाई पुलिस को रिश्वत देकर गाँव के लोगों को तो गिरफ़्तारी से बचा लेते हैं, लेकिन अनेक संथाल गिरफ़्तार कर लिए जाते हैं। उनकी लाशों के घावों के बारे में डाक्टर रिपोर्ट देता है कि घावों के मुँह देखकर मालूम होता है कि किसी ने अपनी जान बचाने के लिए ही उन पर हमला किया है।

बयालीसवाँ परिच्छेद–इस परिच्छेद का आरंभ हरगौरी की बिना गौने के आई पत्नी और माँ के विलाप से हुआ है। उसके पिता शिवशंकर की तो शक्ल भी देखकर डर लगता है। रामकिरपाल सिंघ की गिरफ़्तारी से गाँव में आतंक छा जाता है। मुकदमे का खर्च विश्वनाथप्रसाद दें अथवा हरगौरी के पिता इस बात को लेकर चक-चक होती रहती है। अंतत: यह बात खुल जाती है कि मुकदमे का दारोमदार बालदेव और कालीचरन की गवाही पर है तो ज्योतिषी काका यह सोचकर घबड़ा जाते हैं कि न जाने वे किसका नाम ले दें।

तेंतालीसवाँ परिच्छेद–रामदास लछमी से एक दासी रखने की अनुमति माँगता है। वह इससे पूर्व ही ततमाटोली में जाना आरंभ कर चुका है। यह जानकर कि रामदास को उसका मठ पर आना अच्छा नहीं लगता, बालदेव लछमी से चन्ननपट्टी जाने की अनुमति माँगता है। लछमी अनुभवी आँखों से पूछती है कि फिर उसका क्या होगा? वह पगली की तरह बालदेव से लिपट जाती है और कहती है, "रच्छा करो बालदेव जी! तुम कह दो एक बार–तुम्हें रामदास की दासी नहीं बनने दूँगा! तुम बोलो चन्नपट्टी नहीं जाऊँगा। मुझे छोड़कर मत जाओ बालदेव! दुहाई!"

प्रवचन के समय लछमी उपदेश देती है तो बालदेव को ऐसा लगता है मानो भारतमाता बोल रही है। वह उसके चरण पकड़कर नारा लगाता है–"भारतमाता की जै!" रामदास शोर मचाता है कि बालदेव पगला गया है। किसी की यह आवाज सुनकर कि बालदेव ने गाँजा पिया होगा, बालदेव कहता है–"कौन कहता है हम गाँजा पीते हैं? दारु, गाँजा, भाँग की दुकान में पिकेटिन किया है हम, और हम गाँजा पीएँगे? छि: छि:! हम महात्मा जी के पंथ को कभी नहीं छोड़ सकते!" बाद में पता चलता है कि बालदेव द्वारा सात दिन की बुखार की दवा एक ही दिन में खा लेने के कारण उसका सिर चकरा गया था।

चवालीसवाँ परिच्छेद–डाक्टर प्रशांत का अधिकांश समय मौसी के पास बैठने में व्यतीत होता है क्योंकि गाँव के नारकीय जीवन में उसे वहीं शांति मिलती है। जब गवाही देकर कालीचरन खुशी-खुशी गाँव लौटता है तो प्रशांत की यह बात सुनकर वह हक्का-बक्का रह जाता है कि उसने बिना पढ़े ही दारोगा के लिखी बातों पर अपने हस्ताक्षर कर दिये हैं, जिससे संस्थालों और किसानों की जमीनें छूट जायेंगी। कमला प्रशांत को इस बात के लिए आड़े हाथों लेती हैं कि वह उसे देखने नहीं आता है और उसने उसके पिता से यह कह दिया है कि उसे इलाज के लिए पटना ले जाया जाए।

9.2.2 द्वितीय खण्ड

आलोच्य उपन्यास के दूसरे खंड में तेईस परिच्छेद हैं, जिनका क्रमश: कथासार आगे प्रस्तुत है–

पहला परिच्छेद—बावनदास यह सूचना लाते हैं कि इस सप्ताह भारत को स्वराज्य मिल जायेगा। सुमरितदास बताता है कि इस अवसर पर विश्वनाथप्रसाद पूड़ी, जलेबी, हलुआ और दही का भोज देंगे। कालीचरन बालदेव को कामरेड कहकर नमस्कार करता है तो वे तुनक उठते हैं, "तुम तो आज आए हो, हम सन् तीस से जानते हैं। टीक-मोंछ काटकर, मुर्गी का अंडा खिलाकर कामरेड बनाया जाता है।"

स्वतंत्रता दिवस पर निकाले जाने वाले जुलूस के लिए सारा गाँव उल्लासित रहता है।

दूसरा परिच्छेद—मुकद्मे में सभी संथालों को आजीवन कारावास की सजा मिलती है। मुकद्मा जीतने की कृतज्ञतास्वरूप रामकिरपालसिंघ संथालटोली की नई बंदोबस्ती जमीन में से दस एकड़ जमीन विश्वनाथप्रसाद के नाम कर देते हैं।

तीसरा परिच्छेद—सुमरितदास गाँव भर में बताता फिरता है कि फुलिया को गरमी की बीमारी हो गई है तथा महंत रामदास रमपियरिया को दासिन रखेंगे। कालीचरन का प्रस्ताव है कि भारतमाता पर चँवर डुलाने का कार्य मंगला को करना चाहिए। इसके विपरीत बालदेव की राय है—"तब कोठारिनी जी से कहा जाय। अब तो खद्धड़ पहनती हैं। खूब नेमटेम भी करती हैं। रोज नहाने के बाद महतमा जी की छापी पर फूल चढ़ाती हैं।"

चौथा परिच्छेद—जुलूस के समय नारे लगाते लगाते कालीचरन का गला बैठ जाता है। भारत माता पर चँवर डुलाने का भार लछमी सँभालती है। कालीचरन का मित्र हिंगना औराही जब यह नारा लगा देता है कि 'यह आजादी झूठी है' तो जनता में उत्तेजना फैल जाती है। इस अवसर पर 'मस्ताना भगतसिंह' नाटक खेला जाता है और लखनऊ से आई बाईजी का नृत्य भी होता है।

स्व-मूल्यांकन (Self-Assessment)

निम्नलिखित कथनों में सत्य अथवा असत्य की पहचान करें

(State Whether the following statements are True or False) :

7. अठारहवें परिच्छेद में पारबती की माँ को गाँव की स्त्रियों द्वारा डायन समझने के तथ्य का वर्णन किया गया है।
8. कालीचरण को लाल झंडा और सोशलिस्ट पार्टी औरत की तरह प्रिय है।
9. डॉ. प्रशांत हैजे के रोग से आसपास के गाँव वालों को नहीं बचा पाते हैं।

पाँचवाँ परिच्छेद—बावनदास को अब अपने ऊपर भी विश्वास नहीं रहा है। उसे बापू का जो पत्र मिलता है, उसमें लिखा है—'भगवान बावनदास जी! आप ही धीरज छोड़ दोगे तो भक्तजनों का क्या होगा?...... बापू को प्रणाम!"

सुमरितदास द्वारा यह सूचना लाई जाती है कि स्वराज्य वाली रात को चलित्तर कर्मकार या किसी अन्य ने हरखू तेली के यहाँ डकैती डाली है। वह हिंदू-मुसलमानों के मध्य विभिन्न स्थानों पर होने वाली मारकाट की भी सूचना देता है।

सुमरितदास जुमेराती मियाँ से पाँच रुपए छीन लेता है, तो कालीचरन उसको बुलाने के लिए बासुदेव को सुमरितदास के समीप भेजता है। हाँ, कायस्थ बच्चा सुमरितदास ऐसी चाल चलता है कि कालीचरन और बासुदेव के मध्य फूट पड़ जाती है। वह बासुदेव को यह सूचना भी देता है कि कालीचरन द्वारा मंगला के साथ रास रचाने की सूचना पार्टी ऑफिस में पहुँच जाने के कारण उसको फटकारा गया है। सुमरितदास की चिकनी-चुपड़ी बातों में आकर बासुदेव उसको यह कहकर छोड़ जाता है कि कालीचरन से कह दूँगा कि तुम घर पर नहीं हो।

छठा परिच्छेद—इस परिच्छेद का आरंभ इस तथ्य से किया गया है कि तंत्रिमाटोली द्वारा इस बात का विरोध किया जाता है कि रामपियरिया महंत रामदास की दासी बने। गरभू का तर्क है—"खेल बात है? जात है कि ठट्ठा? जब जिसका मन हुआ किसी की रखेलिन बन गई, दासिन बन गई, रंडी बन गई।"

नोट

इस तथ्य को लेकर तंत्रिमाटोली में दो दल बन जाते हैं और अंततः रामपियारिया की माँ से जाति का भोज लेकर उसकी बेटी को दासिन बनने की अनुमति दे दी जाती है। वह अपनी पुत्री को समझाती है कि तुझे कोठारिन के विषदंत उखाड़कर स्वयं को कोठारिन बनाना है। वह जाति को भोज देने के लिए रामदास से रुपए माँगती है और रामदास द्वारा यह कहने पर कि कोठारिन से पूछेंगे, उसको बुरी तरह झिड़क देती है।

"महंथ साहेब! बुरा मत मानिएगा, आप हिजड़ा हैं। रामपियरिया को लछमिनियाँ की लौंडी बनावेंगे महंथ साहेब, हम सब समझ गए।"

रामपियरिया मठ में आकर रहने लगती है तो शीघ्र ही चारों ओर गंदगी फैला देती है जिससे जल-भुनकर लछमी कहती है–"दस दिन भी नहीं हुए हैं, गद्दीघर की दीवाल पर थूक-खखार की ढेरी लग गई। अधजली बीड़ी के टुकड़ों से घर भरा हुआ है। वह भी मैं ही साफ करूँगी! .... अब यह मठ नहीं, सूअर का खुहार है खुहार!"

रामपियरिया भी लछमी को ऐसी जली-भुनी सुनाती रहती है कि वह भंडार की चाबी फेंक देती है। लछमी सोचती है कि वह सेवादास द्वारा उसके नाम किए गए तीस बीघा जमीन और कलमी आमों के बाग उन पर निर्वाह करते हुए मठ से अलग हो जाएगी।

सातवाँ परिच्छेद–इस परिच्छेद का आरंभ इस रहस्योद्घाटन के साथ किया गया है कि कमली दिन-प्रतिदिन सुंदर होती जा रही है और उसकी आँखों में चंचलता का स्थान मद ले लेता है। वह अपनी माँ से कहती है कि तुम्हारा डाक्टर बेहोश होने लगा है। उसकी माँ उसको डाँटती है कि डाक्टर से इतना हेल मेल बढ़ाना ठीक नहीं है। वह उनकी आँखों में झाँककर यह सोचकर काँप जाती है कि कहीं उसने अपने आँचल को तो मैला नहीं कर लिया है।

कमला अब प्रतिदिन डाक्टर के यहाँ जाने लगती है और देर से घर लौटती है। गाँव के लोगों की जुबान पर यह बात चढ़ जाती है कि उसकी डाक्टर प्रशांत के साथ शादी क्यों नहीं कर दी जाती?

जिला कांग्रेस के सेक्रेटरी की इस सूचना पर कि प्रशांत कम्युनिस्ट है, दारोगा उसकी तलाशी लेने आता है और उसकी पुस्तकों में 'लाल रूस' और 'लाल चीन' नामक पुस्तकें मिलने पर उसको गिरफ़्तार कर ले जाता है।

आठवाँ परिच्छेद–हीरू का बच्चा मर जाता है तो जोतखी काका द्वारा इसे डायन की करतूत बताया जाता है। उससे कहा जाता है कि अमावस्या की रात को वह डायन उसके बच्चे को लेकर नाचेगी, यदि तुम उस समय बच्चे को छीन लाओ तो फिर इंद्र का वज्र भी बच्चे का कुछ नहीं बिगाड़ सकता। इसका परिणाम यह निकलता है कि अमावस्या की रात्रि को पारबती की माँ अपने धेवते गणेश को पेशाब कराने घर से बाहर निकलती है तो हीरू उस पर लाठी से तीन-चार वार कर देता है, जिससे वह मृतप्राय: होकर गिर जाती है। उसकी मृत्यु हो जाने के कारण हीरू को गिरफ़्तार कर लिया जाता है। इस पाप कृत्य के सूत्रधार ज्योतिषी जी को लकवा मार जाता है और वे अपंग हो जाते हैं।

नौवाँ परिच्छेद–लछमी बालदेव के साथ मठ से अलग हो जाती है। कलमी बाग में बाँस-फूस के तीन सुंदर बँगले बनाए जाते हैं। वह चार सौ रुपये में बछड़ों की एक जोड़ी खरीदकर मँगवाती है तथा उनकी एक हल्की सी गाड़ी भी बनवाती है। बालदेव भी साफ-सुथरे रहने लगते हैं।

उधर मठ पर रामदास की बुरी हालत हो जाती है। अपने छोटे-छोटे तीन-चार बच्चों के साथ रामपियरिया की माँ भी मठ पर पड़ी रहती है। जिससे मठ पर अब कौआ-मैना के 'गू' के साथ आदमी के बच्चों के भी पैखाने भिनकते रहते हैं। रामपियरिया जब तब महंत रामदास पर ऐसी गालियों की वर्षा भी करती रहती है–"अरे! तोऽऽरा हाथ में कोढ़ फूटे रे कोढ़िया!"

लछमी की दशा ऐसी है कि वह कंत के घर में रहते हुए भी स्वयं को विरहिणी समझती है। उसको रोता देखकर बालदेव उसको अपनी भुजाओं में भर लेते हैं।

दसवाँ परिच्छेद–इस परिच्छेद का आरंभ कामरेड बासुदेव और सुंदरलाल के डकैती के अभियोग में पकड़े जाने

नोट

की घटना से हुआ है। वे कालीचरन का नाम ले लेते हैं, जिससे उसकी भी गिरफ़्तारी का वारंट निकल जाता है। कालीचरन, मंगला को कटिहार छोड़ आता है और स्वयं छिपकर रहने लगता है। स्वयं को कोसता है कि उसने चलित्तर कर्मकार से क्यों संपर्क बढ़ाया था?

फुलिया के सारे शरीर में आतिशी गरमी के घाव हो जाते हैं, फलत: उसको यह पाइंटमैन छोड़कर चला जाता है जिसके साथ वह रहने लगी थी। खलासी, फुलिया का इलाज करता है और मेरीगंज गाँव से बंदर-भूत को उतारने के लिए टोना-टोटका भी करता है।

ग्यारहवाँ परिच्छेद—कमली की माँ द्वारा जब तहसीलदार विश्वनाथप्रसाद को इस तथ्य की सूचना दी जाती है कि कमली को चार माह का गर्भ है तो वे बुरी तरह घबड़ा जाते हैं और प्रशांत को गालियाँ देते हुए फाँसी लगाकर आत्महत्या करने का निश्चय व्यक्त करते हैं। कमली अपने पिता से यह सजा माँगती है कि मुझे गोदामघर में बंद कर दीजिए और यह तथ्य भी बताती है कि प्रशांत ने मुझसे कहा है कि हमें कोई भी अलग नहीं कर सकता। वह प्रशांत को एक 'जिन' बताते हुए अपने पिता से कहती है कि जबसे आपका उससे परिचय हुआ है आपको प्रत्येक कार्य में लाभ होता रहा है, क्योंकि जिन जिससे प्रसन्न होता है उसे कुछ से कुछ बना देता है। उसके पास धन-दौलत और जगह-जमीन का ढेर लगा देता है।

बारहवाँ परिच्छेद—प्रस्तुत परिच्छेद के आरंभ में चंपापुर के कुमार साहब द्वारा आयोजित दंगल का वर्णन किया गया है, जिसमें पंजाबी पहलवान मुश्ताक अली के चेला 'चाँद' की बड़ी धूम है। उसके आतंक के कारण कोई पहलवान उससे कुश्ती लड़ने को तैयार नहीं होता। कालीचरन उन दिनों पुलिस से छिपते हुए अपने रिश्तेदारों के यहाँ तंबाकू के दलाल के रूप में रुस्तम खाँ के नाम से रह रहा था। वह दंगल में जाता है और चाँद से कुश्ती लड़ने का ऐलान करता है। वह अपना परिचय जोगबनी के रुस्तम अली के रूप में देता है और कुछ ही क्षणों में चाँद को पछाड़ देता है। लोगों में यह चर्चा घर कर लेती है कि चलित्तर कर्मकार ही वेश बदल कर रुस्तम अली के रूप में उतरा था।

कालीचरन फारबिसगंज जाकर अपने पार्टी ऑफिस में यह सूचना देना चाहता है कि डकैती वाले दिन वह पार्टी ऑफिस में था। मार्ग में वह मंगला से मिलता है, जो उसके लिए शिकंजी बना रही होती है कि तभी घर को पुलिस घेर लेती है। कालीचरन की बुरी तरह पिटाई की जाती है, किंतु वह मुँह नहीं खोलता।

नोट्स बालदेव रामकृष्ण आश्रम में आते हैं तो यह देखकर चकित रह जाते हैं कि नये सेक्रेटरी छोटनबाबू ने आश्रम का बेड़ा गरक कर रखा है और लोग मछली और अंडा चौके में बैठकर ही खाते हैं।

तेरहवाँ परिच्छेद

बालदेव समझ जाता है कि छोटन नामक यह लुच्चा लौंडा हर बात में फुच-फुच करता है और झूठा तो एक नंबर का है। उनके जाने के बाद छोटन कहता है—"अमीनबाबू से कहना होगा। मेरीगंज में अब बालदेव से काम नहीं चलेगा। चरखा सेंटर को चौपट कर दिया। घर-घर में सोशलिस्ट घरघराने लगे। अभी तो सब डकैती केस में ऐरेस्ट हैं। उस गाँव का डाक्टर कौमनिस्ट था, वह भी ऐरेस्ट है।...... उसको तो हम्हीं ने ऐरेस्ट कराया है। कटरहा का नया दारोगा हमारा क्लास फ्रेंड है।"

चौदहवाँ परिच्छेद—कमली को गोदामघर में बंद कर दिया जाता है और वह अपना समय डॉ० प्रशांत के पत्रों के साथ-साथ रोते-हँसते हुए व्यतीत करती है। विश्वनाथप्रसाद प्रशांत से जेल में भेंट करने जाते हैं किंतु वे प्रशांत के कोई नजदीकी रिश्तेदार न होने के कारण उससे भेंट नहीं कर पाते। प्यारू से ज्ञात होता है कि उसने प्रशांत को बता दिया है कि कमला उनका फोटो उठाकर अपने घर ले गई है और रोज सुबह उठकर उसे देखती है।

पंद्रहवाँ परिच्छेद—बालदेव शीघ्रताशीघ्र मेरीगंज लौटना चाहते हैं, क्योंकि दौरिक सरमा (शर्मा) के इस कथन ने उनके हृदय में हलचल मचा दी है–"हम बेकूफ जो तुमको रोकेंगे? तुमको यहाँ रोक लें और उधर तुम्हारी कोठारिन किसी से 'सतसंग' करने लगे तो हुआ! ......हा-हा-हा! माफ करना, अच्छा तो जैहिंद!"

मार्ग में बालदेव को खलासी से जब यह सूचना मिलती है कि आश्रम में कोई नवतुरिया। साधू बीजक पढ़ रहा था, तो उसका हृदय संदेह से भर उठता है–"लेकिन लछमी तो अब मठ की कोठारिन नहीं! एक भले घर की 'इसतिरी' है.....जब मैं घर में नहीं था तो वह क्यों गया? आखिर लोग क्या सोचते होंगे?"

आश्रम में पहुँचकर बालदेव लछमी के प्रति बात-बात में क्रोध व्यक्त करते हैं और अंततः कह ही देते हैं कि यदि नये बिदियारथी जी के साथ "सतसंग ही करना है तो उनकी आसनी यहीं लगा दो। दिन-रात खूब सतसंग करती रहना।"

लछमी यह आक्षेप सुनकर बिगड़ उठती है और कहती है कि क्या वह उसे रंडी समझता है? बालदेव गुस्से में चन्नपट्टी जाने को तैयार होता है, तो लछमी रोने लगती है और अंततः दोनों में सुलह हो जाती है।

सोलहवाँ परिच्छेद—पुलिस डाक्टर प्रशांत से चलित्तर कर्मकार के विषय में अनेक प्रश्न पूछती है किंतु वह उसके बारे में कुछ भी जानने से इंकार करता है। उधर विधान सभा में प्रश्न उठाया जाता है कि प्रशांत को नजरबंद क्यों किया गया है?

प्रशांत को विश्वनाथप्रसाद, कमला और ममता की बातें याद आती रहती हैं। उसे विश्वनाथप्रसाद की यह बात भूली नहीं है–"जिस दिन धनी, जमींदार, सेठ और मिलवालों को लोग राह चलते कोढ़ी और पागल समझने लगेंगे उसी दिन असल सुराज हो जाएगा।"

उसे यह भी स्मरण हो आता है कि ममता ने राजनीति की तुलना डायन से की थी अतः वह राजनीति में कभी भाग न लेने का निश्चय करता है।

सत्रहवाँ परिच्छेद—जेल से कचहरी जाते हुए मार्ग में कालीचरन अपनी पार्टी के सेक्रेटरी को नमस्कार करता है। वह इस तथ्य को जानकर भी परेशान है कि उसकी पार्टी के बासुदेव, सुनरा और सनिचरा नामक व्यक्ति जेल मे डकैतों से हिल-मिलकर रहते हैं। वह अपनी निर्दोषता सिद्ध करने के लिए जेल से भाग जाने का निश्चय करता है तथा सोमा और बासुदेव की सहायता से निकल भागता है। पुलिस उसका पीछा करती है और उसकी जाँघ में गोली लग जाती है। जब वह इसी हालत में पार्टी ऑफिस जा पहुँचता है तो उसे देखकर सेक्रेटरी कहता है, "तुम्हारे कलेजे पर गोली दागी जानी चाहिए। डकैत! बदमाश!" कालीचरन कसम खाकर स्वयं को निर्दोष बताता है, किंतु सेक्रेटरी द्वारा शरण न देने पर चलित्तर कर्मकार के इस वायदे को याद करते हुए कि 'गाड़े बिपद में खबर करना, याद करना' बगल के जंगल में चला जाता है।

अट्ठारहवाँ परिच्छेद—इस परिच्छेद में जेल से भागे कालीचरन की खोज में पुलिस द्वारा मेरीगंज आने और उसकी माँ को परेशान करने का वर्णन किया गया है। गाँव के लोगों को घरों से निकाल कर उनसे पूछताछ की जा रही होती है कि तभी गाँधी जी की हत्या किए जाने का समाचार मिलने से सभी स्तब्ध रह जाते हैं।

उन्नीसवाँ परिच्छेद—इस परिच्छेद में गाँधी जी के अंतिम संस्कार का वर्णन करते हुए दिखाया गया है कि उस अवसर पर अनेक नर-नारी रो-रोकर बेहोश हो गये थे।

बीसवाँ परिच्छेद—बावनदास रामकृष्ण आश्रम से बड़ी ही खिन्न दशा में मेरीगंज लौटते हैं और कहते हैं, "अब सुनना सुनाना क्या है! प्रांतीय ससांक जी परांती (प्रांतीय) सभापति हो गए हैं। छोटन बाबू का राज है। एक कोरी बेमान, बिलेक मारकेटी के साथ कचेहरी में घूमते रहते हैं। हाकिमों के यहाँ दाँत खिटकाते फिरते हैं। सब चौपट हो गया ....। यह पटनियाँ रोग है। ....अब तो धूमधाम से फैलेगा। भूमिहार, राजपूत, कैथ (कायस्थ), जादव, हरिजन, सब लड़ रहे हैं।"

नोट

बालदेव इन बातों पर विश्वास न करके बावनदास से जब यह कहते हैं कि कदाचित् आपको किसी सोशलिस्ट ने बहका दिया है, तो वह सोशलिस्टों को भी स्वार्थी बताते हुए मात्र जयप्रकाश नारायण की प्रशंसा करते हैं और यह आशंका व्यक्त करते हैं कि शायद उनको भी कोई गोली मार देगा।

बावनदास बालदेव को उन पत्रों को सौंप जाते हैं, जो उन्हें महात्मा गाँधी द्वारा लिखे गए थे और हिंदुस्तान तथा पाकिस्तान की सीमा पर स्थित कलीमुद्दींपुर गाँव की ओर चल पड़ते हैं। इस गाँव से जोरदार तस्करी होती रहती है। बावनदास गाँधी जी का स्मरण करते हुए कपड़ा, चीनी और सीमेंट की तस्करी को रोकने की परीक्षा में सफल होने की प्रार्थना करते हैं। वे इस दृष्टि से बड़े ही चिंतित हैं कि कटहा थाना कांग्रेस का सेक्रेटरी दुलारचंद कापरा ऐसा व्यक्ति है, जो जुआरी होने के साथ ही दारू, गाँजे और लड़कियों की बिक्री के अवैध धंधों में लिप्त है। वहाँ के सप्लाई इंस्पेक्टर तथा थानेदार उससे मिले हुए हैं।

सीमेंट, चीनी और कपड़े से लदी तस्करी की गाड़ियों को बावनदास उनके आगे खड़े होकर रोक लेते हैं। उनके साथ जा रहे सिपाही को बावनदास पहचान लेते हैं, जो कलीमुद्दींपुर के हाल्टिंग बँगले पर जाकर शराब पीते कापरा, सप्लाई इंस्पेक्टर और वहाँ के हवलदार को इस तथ्य की सूचना देता है।

दुलारचंद कापरा बावनदास को रास्ते से हटने के लिए कहता है, किंतु बावनदास का प्रत्युत्तर था कि वह गाँधी जी के श्राद्ध की पवित्र तिथि को इस तस्कर व्यापार द्वारा कलंकित न होने देगा। कापरा गाड़ियों को बलात् आगे बढ़ाता है और उनके सम्मुख लेटे बावनदास के शरीर के चिथड़े-चिथड़े उड़ जाते हैं। चित्थी-चित्थी लाश को पाकिस्तानी सीमा में डाल दिया जाता है और पाकिस्तानी सैनिक उस लाश को नदी में बहा देते हैं। बावनदास की झोली एक पेड़ पर लटका दी जाती है।

इक्कीसवाँ परिच्छेद—तहसीलदार विश्वनाथप्रसाद मेरीगंज में एकछत्र मालिक बन जाते हैं क्योंकि रामकिरपालसिंघ अपनी शेष बची जमीन को फसल सहित रेहन रखकर तीर्थाटन के लिए निकल जाते हैं। खेलावनसिंह यादव के पाँच हल मात्र एक हल में परिणत हो जाते हैं। विश्वनाथप्रसाद एक ट्रैक्टर खरीद लेते हैं और भूखे-नंगे लोगों से गाँधी जी के श्राद्ध के नाम पर धान भी वसूलते हैं।

बालदेव उन चिट्ठियों को, जिन्हें बावनदास उन्हें सौप गये थे, पंडित नेहरू तक पहुँचाना नहीं चाहता क्योंकि उसका विचार है कि उन्हें पढ़कर पंडित नेहरू बावनदास को मंत्री बना लेंगे। इन पर्चों को वह गांगुली जी को भी नहीं दिखाता और लछमी से भी उन चिट्ठियों को लेकर उसकी अनबन हो जाती है।

नोट्स छत पर खड़े विश्वनाथप्रसाद को कमली द्वारा पुत्र को जन्म दिए जाने की सूचना दी जाती है। वह आदेश देते हैं कि बच्चे की आवाज ड्योढ़ी से बाहर नहीं जाने पाए और यदि बच्चा जोर से रोए तो उसका गला दबा दिया जाए।

बाईसवाँ परिच्छेद

एक महीने पश्चात् कलीमुद्दींपुर गया दुलारचंद कापरा देखता है कि बावनदास की झोली एक डाल पर लटकी हुई है। इस आशंका के कारण कि झोली से बावनदास की मृत्यु का रहस्य अनावृत हो सकता है, वह झोली को डाली से हटा देता है लेकिन उसका फीता डाली में लटका रह जाता है और फीते को किसी दुखियारी द्वारा चोथरिया पीर की मानता समझकर कोई आम स्त्री भी वहाँ चिथड़ा बाँध जाती है।

इस परिच्छेद का समापन इस सूचना के साथ किया जाता है कि ममता कलेक्टर का आदेश लेकर प्रशांत को छुड़ाने जेल में जा पहुँचती है। जेल से छूटा हुआ प्रशांत, ममता और प्यारू मेरीगंज की ओर चल पड़ते हैं।

तेईसवाँ परिच्छेद—मेरीगंज की ओर स्टेशन वैगन में बैठकर जाते हुए प्यारू प्रशांत को, ममता की नजर बचाकर, कमला का एक पत्र देता है जिसमें उसको प्राणनाथ कहकर संबोधित किया गया है। उस पत्र में लिखा हुआ था कि

नोट

यदि तुम किसी तरह बाबा को यह सूचना दे दो कि मेरी होने वाली संतान के तुम पिता हो तो मैं जी जाऊँ, वरना बाबा तुम्हारे बच्चे को मार डालेंगे। पत्र पढ़कर प्रशांत के मुख से 'नहीं-नहीं' निकल पड़ता है। ममता चौंककर उससे यह प्रश्न करती है कि 'क्या हुआ', तो वह उस पत्र को ममता को सौंप देता है। पत्र पढ़कर वस्तु स्थिति से अवगत हुई ममता की प्रतिक्रिया होती है, "डाक्टर! तुमने कम से कम मिट्टी को तो पहचाना है........मिट्टी और मनुष्य से मुहब्बत, छोटी बात नहीं।"

डाक्टर प्रशांत जब तहसीलदार के घर पहुँचता है तो कुछ समय तक तो वे प्रशांत से खिंचे रहते हैं। हाँ, जब प्रशांत जमाता के रूप में उनके चरणस्पर्श करता है तो वे 'मेरा बेटा! मेरा बेटा!' कहते हुए उसको गले से लगा लेते हैं। कमली और प्रशांत के गंधर्व विवाह की बात फैलाकर गाँव को न्यौता भेज दिया जाता है। इस प्रसन्नता भरे उपलक्ष्य में वे गाँव वालों की सात सौ बीघा जमीन भी लौटा देते हैं।

"अरे, यह जमीन तो उन्हीं किसानों की है, नीलाम की हुई, जब्त की हुई, उन्हें वापस दे रहा हूँ। मैं कहता हूँ, ऐलान कर दो, मालिक का हुकुम है!"

ममता की प्रेरणा और कमली के प्यार को पाकर प्रशांत पुन: अनुसंधान कार्य में जुटने का संकल्प व्यक्त करते हुए कहता है–"ममता! मैं फिर काम शुरू करूँगा, यहीं इसी गाँव में। मैं प्यार की खेती करना चाहता हूँ। मैं साधना करूँगा, ग्रामवासिनी भारतमाता के मैले आँचल तले!"

उपन्यास का अंतिम वाक्य है–"कलीमुद्दीपुर घाट पर चेथरिया पीर में किसी ने मानता करके एक चीथड़ा और लटका दिया।"

आलोच्य उपन्यास के कथानक के उपर्युक्त संक्षिप्त विवरण से स्पष्ट है कि यह एक वृहद्काय उपन्यास है, जिसमें कुल मिलाकर सड़सठ परिच्छेद हैं। उपन्यास का प्रथम खंड अपेक्षाकृत अधिक लंबा है जिसके अंतर्गत चवालीस परिच्छेद हैं, जबकि दूसरे खंड में मात्र तेईस परिच्छेद हैं। सड़सठ परिच्छेदों में विभक्त 'मैला आँचल' की कथावस्तु के सूत्रों को जोड़ना अपेक्षाकृत कठिन ही है क्योंकि 'रेणु' ने प्रत्येक परिच्छेद के अंतर्गत प्राय: नवीन कथा तंतु को उठाया है।

9.3 सारांश (Summary)

- 'रेणु' ने भारतीय स्वाधीनता-संग्राम में एक प्रमुख सेनानी की भूमिका निभाई और तीन वर्ष तक नजरबंद रहे, जेल से छूटने पर 'किसान आंदोलन' का नेतृत्व किया।
- फणीश्वरनाथ 'रेणु' अपने प्रथम उपन्यास 'मैला आँचल' से ही व्यापक चर्चा का विषय बन गए थे। हिंदी उपन्यास साहित्य में जिन चंद कथा कृतियों ने युगांतर उपस्थित किया, 'मैला आँचल' उन्हीं में से एक है।
- आचार्य शर्मा ने 'मैला आँचल' को 'गोदान' के बाद हिंदी का दूसरा श्रेष्ठ उपन्यास मानते हुए लिखा है, "समष्टिमूलक उपन्यास के अनुरूप जैसा महाकाव्योचित स्थापत्य 'गोदान' में है उसके विपरीत 'मैला आँचल' एक सुसंबद्ध स्थापत्य का उपन्यास है।"
- मेरीगंज में सभी जातियों के लोग रहते थे। वहाँ के राजपूतों और कायस्थों के मध्य पुश्तैनी मन मुटाव चला आ रहा था। मेरीगंज में ब्राह्मणों की संख्या कम थी। हाँ, वे तृतीय शक्ति का काम करते थे।
- बालदेव ने डिस्पेंसरी के संबंध में मालिकटोली के लोगों को मनाने की चेष्टा की तो उनका विभिन्न टोलियों ने भिन्न-भिन्न प्रकार से विरोध किया। रामकिरपालसिंघ डिस्पेंसरी के निर्माण में इसलिए सहायता नहीं करना चाहते थे क्योंकि वे समझते थे कि डिस्पेंसरी के मुख्तियार विश्वनाथ और बालदेव थे।
- महंत सेवादास द्वारा भंडारा किया जाना इस दृष्टि से असंभव ही लग रहा था कि गाँव के ब्राह्मण अन्य जातियों के साथ बैठकर खाने को तैयार नहीं थे, जबकि यादवटोली का आग्रह था कि भंडारे का प्रबंध बालदेव को नहीं करना चाहिए।

नोट

- गाँव की नवनिर्मित डिस्पेंसरी में नियुक्त डाक्टर प्रशांत कुमार का नौकर प्यारू आता है, तो सभी गाँव वाले उसको घेर लेते हैं। वह डाक्टर साहब की मेज-कुर्सी सजाने के बाद गमछा साबुन का प्रबंध करता है।
- सन् 1946 में जब काँग्रेसी मंत्रीमंडल का गठन हुआ तो प्रशांत ने आग्रह करके अपनी नियुक्ति मेरीगंज के नवनिर्मित मलेरिया सेंटर में करा ली। प्रशांत के इस आग्रह के संबंध में उसके साथी डाक्टरों की प्रतिक्रिया थी कि वह बेवकूफ है।
- सुमरितदास को लोग लबड़ा आदमी समझते हैं यद्यपि वह कभी-कभी बड़े पते की बातें बताता है! उसकी सूचना है कि लरसिंघदास को क्लैक्टर ने महंत स्वीकार कर लिया है।
- आचार्य गुरु द्वारा लरसिंघदास को महंत नियुक्त करने के कागज पर गाँव के सभी प्रमुख व्यक्ति तो हस्ताक्षर कर देते हैं, किंतु इसका विरोध करते हुए कालीचरन कहता है कि जिस मठ के लिए हमारे बाप-दादों ने जमीन दी थी, उसका महंत हम एक नंबरी बदमाश को नहीं बना सकते।
- पंचायत आरंभ हुई तो फुलिया ने बताया कि उनकी आँख तो तब खुली थी, जब लोग सहदेव मिसर को पकड़कर हल्ला मचा रहे थे। सहदेव ने मँहगूदास के घर आने का कारण यह बताया कि वह खेत की रखवाली के लिए उसे जगाने आ रहा था।
- बावनदास अपने नाम के अनुरूप ही डेढ़ हाथ की ऊँचाई, साँवले रंग, मोटे होंठ तथा मोटी और भोंडी आवाज का धनी व्यक्ति है। उसने जब एक बार चंदे के रुपयों में से दो आने की जलेबियाँ खा ली थीं तो वह फूट-फूटकर रोया था और दो दिन उपवास करके आत्म शुद्धि की थी।
- कुछ समय के पश्चात् जब फुलिया पुरैनिया स्टेशन से गाँव आती है तो उसके रंग-ढंग बदल चुके होते हैं। उससे पता चलता है कि अब वह खलासी को छोड़कर स्टेशन के पैटमान के साथ रहती है।
- विश्वनाथ की बहन के खेत से धान लूटते संथालों और ग्रामवासियों में जमकर संघर्ष होता है। दो दर्जन संथाल और डेढ़ दर्जन संथालिनें पूरे ग्रामवासियों का सामना नहीं कर पाते और भाग खड़े होते हैं।
- हीरू का बच्चा मर जाता है तो जोतखी काका द्वारा इसे डायन की करतूत बताया जाता है। उससे कहा जाता है कि अमावस्या की रात को वह डायन उसके बच्चे को लेकर नाचेगी, यदि तुम उस समय बच्चे को छीन लाओ तो फिर इंद्र का वज्र भी बच्चे का कुछ नहीं बिगाड़ सकता।
- ममता की प्रेरणा और कमली के प्यार को पाकर प्रशांत पुनः अनुसंधान कार्य में जुटने का संकल्प व्यक्त करते हुए कहता है–"ममता! मैं फिर काम शुरू करूँगा, यहीं इसी गाँव में। मैं प्यार की खेती करना चाहता हूँ। मैं साधना करूँगा, ग्रामवासिनी भारतमाता के मैले आँचल तले!"

9.4 शब्दकोश (Keywords)

1. दीर्घकालीन – अधिक समय तक
2. नक्षत्र – तारा
3. पूर्व – पहले
4. शूल – कांटा
5. मुकम्मल – पूरा
6. आघात – हमला
7. आग्रह – जिद
8. विनम्रतापूर्वक – नरमी से।

9.5 अभ्यास प्रश्न (Review Questions)

1. फणीश्वरनाथ रेणु की लेखन कुशलता पर टिप्पणी कीजिए।
2. मैला आँचल की कथावस्तु संक्षेप में लिखिए।
3. मैला आँचल की कथावस्तु को कितने खंडों एवं परिच्छेदों में बाँटा गया है?

नोट

4. प्रथम खंड के अठारहवें परिच्छेद में किस घटना का वर्णन किया गया है?
5. कमली द्वारा पुत्र को जन्म दिए जाने की घटना पर अपने विचार व्यक्त कीजिए।

उत्तर : स्व-मूल्यांकन (Answers : Self-Assessment)

1. मैला आँचल	2. विश्वनाथप्रसाद	3. मजदूरी	4. (ग)
5. (ख)	6. (क)	7. सत्य	8. सत्य
9. असत्य।			

9.6 सन्दर्भ पुस्तकें (Further Readings)

पुस्तकें मैला आँचल–फणीश्वरनाथ रेणु, नेशनल बुक ट्रस्ट।

नोट

इकाई—10: 'मैला आँचल' की आँचलिकता

अनुक्रमणिका (Contents)

उद्देश्य (Objectives)
प्रस्तावना (Introduction)
10.1 आँचलिकता
10.2 राजनीति की दारुण निरर्थकता और मानवतावाद
10.3 परिवेश का रेखांकन
10.4 निष्कर्ष
10.5 सारांश (Summary)
10.6 शब्दकोश (Keywords)
10.7 अभ्यास प्रश्न (Review Questions)
10.8 सन्दर्भ पुस्तकें (Further Readings)

उद्देश्य (Objectives)

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् विद्यार्थी योग्य होंगे—

- 'मैला आँचल' की आँचलिकता को समझने में;
- राजनीति की दारूण निरर्थकता और मानवतावाद की जानकारी प्राप्त करने में;
- 'मैला आँचल' के परिवेश के रेखांकन की जानकारी में;
- 'मैला आँचल' उपन्यास के निष्कर्ष की विवेचना करने में।

प्रस्तावना (Introduction)

प्रस्तुत उपन्यास केवल कोई कहानी-किस्सा नहीं है यह पात्रों के चरित्र के माध्यम से जीवन के किसी विशद पक्ष की कथा किंचित् गहराई से कहता है। जीवन के संदर्भ विशेष के अनुसार उसकी कथा और कथा कहने की शैली दोनों ही विशिष्ट रूप धारण करती हैं इसीलिए अनेक नए ढंग के उपन्यास पाठक में भी अपने ढंग की रुचि जाग्रत होने की अपेक्षा रखते हैं। इसलिए 'मैला आँचल' को पढ़ने के लिए पाठक में लोक जीवन के प्रति उत्सुकता और आग्रह का भाव होना चाहिए तभी ऐसे उपन्यास में रस लिया जा सकता है।

10.1 आँचलिकता

अब हम 'मैला आँचल' की, आंचलिक उपन्यास के उक्त स्वरूप के आलोक में समीक्षा करेंगे। पहले इस उपन्यास की कथा को लेते हैं। यह बिहार के पूर्णिया जिले के गाँव मेरीगंज की कथा कहता है। मेरीगंज पिछड़ा हुआ गाँव है। यहाँ गरीबी और अज्ञानता का साम्राज्य है। इसके समाज और उसमें निहित व्यक्तियों की कथा बिखरी हुई है।

नोट

चार सौ से ऊपर पृष्ठों का उपन्यास कथा को दो भागों में कहता है। एक भाग है भारतीय स्वतंत्रता प्राप्ति से पूर्व का जीवन और दूसरा है स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद का। समस्त कालखंड मोटे तौर से सन् 1942 से 1948 तक का है। दोनों भाग क्रमश: 44 और 23 परिच्छेदों में विभाजित हैं। इस प्रकार एक परिच्छेद की औसत संख्या 6 पृष्ठों की है। बताने का आशय है कि उपन्यासकार कथा को बहुत छोटे-छोटे अंशों में विभाजित करता चलता है। परिच्छेदों की भाँति कथा के प्रकरण भी संक्षिप्त और ऊपरी तौर पर परस्पर विच्छिन्न दिखाई पड़ते हैं। इस बिखराव में साधारण पाठक पहली दृष्टि से उपन्यास को पढ़ने, समझने में यदि अड़चन और रुचि की कमी का अनुभव करे तो आश्चर्य नहीं। यह उपन्यास मूलत: अंचल विशेष या मेरीगंज गाँव में फैले जीवन की अनेकविध दृष्टियों से कथा कहता है और घटना-पात्रों में बिखरा-बिखरा दीखता है। फिर भी, कुछ ऐसे सूत्र उसमें उभरते हैं जो कथा का आभास कराते हैं। हम कथानक के आधार स्वरूप उन सूत्रों को यहाँ गिनाएँगे और उनकी उपयुक्तता पर विचार करेंगे।

उपन्यास मेरीगंज में जिला बोर्ड की ओर से आए हुए लोगों के प्रसंग से आरंभ होता है। वे लोग यहाँ एक मलेरिया निरोधक केंद्र की स्थापना करना चाहते हैं। नगर की दिशा से ऐसा होने वाला नया कार्य इस गाँव के जीवन में तरंगे उठाने वाली नई घटना है। डॉ० प्रशांत कुमार केंद्र में आता है और गाँव के जीवन में रमकर यहाँ के रोगियों का इलाज और मलेरिया तथा काला आजार रोगों के कारणों पर शोध करता है। उसका वैज्ञानिक शोध धीरे-धीरे वहाँ के जीवन को देखते हुए समाजवैज्ञानिक शोध का रूप धारण कर लेता है। वह इस निष्कर्ष पर पहुँचता है कि गाँव में फैले रोगों और कष्टों का कारण प्रकृति की देन कोई कीटाणु नहीं, वरन् यहाँ की सामाजिक स्थिति ही है। डॉ० प्रशांत के अनुसार, "गरीबी और जहालत इस रोग के दो कीटाणु हैं।" वह गाँव के सबसे बड़े शोषक तहसीलदार विश्वनाथप्रसाद की एकमात्र पुत्री कमला के हिस्टीरिया रोग का इलाज करते-करते, उससे प्रेम करने लगता है। वह शहरी नेताओं के षड्यन्त्रवश जेल जाता है और छूटने पर पत्नी, पुत्र और परिवार को सँभालता है। इसी खुशी में तहसीलदार अन्याय और ज़ोर-जुल्म से कमाई जमीन किसानों में बाँट देता है। डॉ० प्रशांत निश्चय करता है–"मैं साधना करूँगा, ग्रामवासिनी भारत माता के मैले आँचल तले। कम से कम एक ही गाँव के कुछ प्राणियों के मुर्झाए ओठों पर मुस्कुराहट लौटा सकूँ।" यह सूत्र अंचल की कथा को रंगीन धागे की भाँति हल्के से लपेटता है।

इसी प्रकार, आंचलिक जीवन में डूबता-उतराता निर्गुणिया मठ है। उसकी परंपरा अस्त-व्यस्त हो चली है। वहाँ अंधे महंत सेवादास के निधन पर बाहर के लोलुप व्यक्ति अधिकार पाना चाहते हैं किंतु गाँव के न्यायप्रिय युवक उन्हें मार भगाते हैं। नया निरक्षर महंत है–सेवक रामदास। उसके समय में मठ आचार-विचार में पूर्ण अधोगति को प्राप्त होता है। मठ की दासिन लछमी परिस्थितिवश यहाँ आश्रय पाती रही है। उसका नारी-रूप में निरंतर शोषण हुआ है; किंतु ऐसा अब वह नहीं होने देगी। गाँव के गाँधीवादी नेता बालदेव के प्रति वह आकृष्ट होती है। अंतत: दोनों अलग आश्रम बनाकर गृहस्थ रूप में रहते हैं।

बालदेव पास के गाँव का है। वह निरक्षर है, लेकिन निष्ठावान है, उसने जेल में समय काटा है और अब वह कांग्रेसी है। किंतु युवा राजनीति के आगे पिछड़ कर वह हतबुद्धि हो जाता है। युवा कालीचरण प्रारंभ में बालदेव का शिष्य रहा है। वह सोशलिस्ट पार्टी के शहरी नेताओं के संकेत पर अलग दल गठित कर गाँव को नया नारा और गति देता है। उसमें नेतृत्व की क्षमता है पर अज्ञानवश उसका भी पतन होता है। शोषक तहसीलदार उसे भरमाकर संथालों के प्रति उसका प्रयोग कर लेता है। कालीचरण अपने समाजवादी दल की शक्ति बढ़ाने के फेर में उसमें अपराधी तत्वों को अनायास प्रवेश दे बैठता है। उसकी अपराधियों में गिनती होती है और कोई राह बची नहीं रहती। गाँव की राजनीतिक हलचल में एक दल और है–जातीय पुनरुत्थान का नारा देने वाला।

बालदेव के साथियों में बौना बावनदास है। उसका अधिकांश जीवन गाँधीवादी साधना की भेंट चढ़ा है। सदाचरण से विच्छिन्न अवसरवादी राजनीति के पैंतरे उसकी समझ में नहीं आते। गाँधीजी की हत्या के बाद वह स्वयं को सर्वथा अकेला पाता है। इसी दुराशा में वह तस्करों के गिरोह से टकराता हुआ प्राण खो बैठता है। उसकी मृत्यु बड़ी करुणा है। उस पर कोई दो आँसू गिराने वाला भी नहीं।

इन क्षीण सूत्रों के बीच उपन्यास की कथा विशद नद की भाँति मंथर गति से विविध आंतरिक प्रकरणों में रमती

नोट

चलती है। इसमें अगणित पात्र अपनी गतिविधि तथा मनोविज्ञान का परिचय देते हुए डूबते-उतराते हैं। इससे चित्र उभरता है एक पिछड़े हुए समाज का, जिसमें कुछ शोषक हैं और शेष सब शोषित, पूर्णत: आत्मविस्मृत। ये तरह-तरह की जातियों में बँटे हैं तथा अपने-अपने अहं में लिप्त हैं। इनमें भाँति-भाँति के अवैध यौन संबंध हैं, जिनकी चर्चा-कुचर्चा होती रहती है। इस जड़ता को भंग करने वाले दो तत्व हैं—एक है नई राजनीतिक चेतना, जो धीरे-धीरे अपने ही भार से दबकर चुक जाती है और दूसरा तत्व है लोकगीत और लोकोत्सव, जो हारे थके जन को नए उत्साह से भर जाता है।

टास्क 'मैला आँचल' की आँचलिकता पर अपने मत प्रस्तुत कीजिए।

10.2 राजनीति की दारुण निरर्थकता और मानवतावाद

उक्त वर्णित बिखरे हुए कथा सूत्र एवं प्रकरण परस्पर जुड़कर 'मेरीगंज' अंचल की कथा कहते हैं। ऊपर के बिखराव में अंतर्निहित जीवन सूत्र को पहचाना जा सकता है। उपन्यासकार ने गाँव के यथार्थ को प्रस्तुत करने के लिए ही इस कथा-शैली का आश्रय लिया है। यथार्थ जीवन में जैसा अनुभव होता है, वह उसे यथासाध्य वैसा ही प्रस्तुत करने का प्रयत्न करता है। उसमें विवरण की प्रधानता होती है, वह भदेस होता है और उसमें आशा का तत्व प्राय: नहीं रहता। दूर तक यह उपन्यास यथार्थ की इस कसौटी पर खरा उतरता है। गाँव की इस दशा को परिवर्तित करने के लिए व्यक्ति रूप में एक ओर डॉ० प्रशांत कुमार आता है और दूसरी ओर राजनीतिक धाराओं का प्रवेश होता है। यहाँ की राजनीति के विषय में सुप्रसिद्ध आलोचक डॉ० लक्ष्मीसागर वार्ष्णेय ने अपने निबंध 'आंचलिक यथार्थ की अभिनव अभिव्यक्ति: मैला आँचल' में अन्य राजनीतिक उपन्यासों से इसकी तुलना इन शब्दों में की है।

"राजनीतिक उपन्यासों की सबसे बड़ी त्रासदी, विशेषत: हिंदी या अन्य भारतीय भाषाओं में, यह है कि लेखक अपने को तटस्थ नहीं रख पाता। वह किसी न किसी मतवाद का शिकार बन जाता है और किसी राजनीतिक विचारधारा का पक्षधर। यह प्रवृत्ति लेखक की कला एवं दृष्टि पर इतनी हावी हो जाती है कि मानवीयता की बात तो दूर, संवेदनशीलता तक जाती रहती है। जहाँ इससे बचने की कोशिश की गयी है, वहाँ उपन्यास केवल रोचक किस्से बनकर रह गए हैं (जैसे गुरुदत्त के उपन्यास) या अखबार की दिलचस्प रिपोर्टिंग (जैसे यशपाल के उपन्यास) या केवल चटखारे ले-लेकर विवरण मात्र दे देना (जैसे भगवतीचरण वर्मा के उपन्यास)। जब यह भी नहीं होता, तब वह मत-वादों की संकीर्ण तंग गलियों से गुजरने लगता है (जैसे यशपाल, अमृतराय या राहुल सांकृत्यायन के उपन्यास)।" आगे वे लिखते हैं कि "रेणु ने जिस घुटनभरी जिंदगी की कशमकश चित्रित की है उसमें यह राजनीतिक चित्रण इतना घुलमिल गया है कि वे अलग से देखा ही नहीं जा सकता। रेणु की निर्वैयक्तिकता एवं तटस्थता ने उसे और भी गहरा रंग दिया है। वे कहीं भी मताग्रही नहीं प्रतीत होते। उन्होंने वास्तव में एक व्यापक मानवतावाद की स्थापना करने की चेष्टा की है।"

स्व-मूल्यांकन (Self-Assessment)

रिक्त स्थानों की पूर्ति करें (Fill in the blanks) :

1. 'मैला आँचल' के एक परिच्छेद की औसत संख्या .... पृष्ठों की है।
2. जिला बोर्ड के लोग मेरीगंज में .... निरोधक केन्द्र की स्थापना करना चाहते हैं।
3. बालदेव पत्र को धूनी में जलाने के .... में लछमी द्वारा पकड़ा जाता है।

हमारी राय में डॉ० वार्ष्णेय का उपरोक्त मत अक्षरश: सही है। 'रेणु' जब व्यापक मानवतावाद की बात उपन्यास में उभारते हैं तो साधन रूप में तत्कालीन प्रचलित राजनीतिक विचारधाराओं की अपर्याप्तता को भली-भाँति रेखांकित

नोट

कर पाते हैं। कांग्रेस में एक ओर बालदेव जैसे आत्मकेंद्रित व्यक्ति हैं तो दूसरी ओर बावनदास जैसे दुराशाग्रस्त आत्महंता। इसी प्रकार काली टोपी वाले संयोजक जी बताते हैं कि आर्यावर्त्त में केवल आर्य अर्थात् शुद्ध हिंदू ही रह सकते हैं, किंतु बिडंबना यह है कि ये 'शुद्ध हिंदू' जाति-उपजातियों में बुरी तरह बँटकर नाक से आगे नहीं देख पाते। हाँ, समाजवादी युवकों में चेतना है, उनका नारा है–"जो जोतेगा सो बोयेगा। जो बोयेगा सो काटेगा। जो काटेगा सो बाँटेगा।" वह श्रम, उसके फल तथा सहकारिता पर बल देते हैं। उपन्यास को ध्यान से पढ़ने पर यह तथ्य अनदेखा नहीं किया जा सकता कि उपन्यासकार राजनीतिक धाराओं में विश्वास खो चुका है। बालदेव अपने ही आस्थानिष्ठ साथी बावनदास से अंत में ईर्ष्या-द्वेष करने लगता है। यहाँ तक बालदेव साधारण मनुष्य रहा है। गाँव की राजनीति में पिछड़ जाने पर किनारे हो गया है। लछमी के साथ मठ की दुनिया में रमकर, चुका-सा जान पड़ता है। पर भावुक बावनदास का कोई भी स्वर उसे तनिक नहीं छूता। बावनदास विरक्त होकर विदा होता है। उस विरक्ति में उसकी भावी नियति के आशंकापूर्ण संकेत भी हैं। फिर भी यह सब बालदेव के मन को कहीं नहीं छूते। बालदेव की उस पर टिप्पणी है–"थोड़ा ढंग (पोज़) भी करता है।" यही नहीं बालदेव निष्ठापूर्वक, गाँधी जी से प्राप्त पत्रों का जो बस्ता उसे शहर के गाँधीवादी नेता गांगुली जी को सौंपने के लिए दे गया है, उसे लेकर वह निराली ईर्ष्या से ग्रस्त हो जाता है। सोचता है, इन चिट्ठियों को देखते ही जवाहरलाल नेहरू बावनदास को मिनिस्टर बना देंगे इसलिए उन पत्रों को गांगुली बाबू तक न पहुँचाकर वह लछमी से झूठ बोलता है। पत्रों को धूनी में जलाने के दुष्प्रयत्न में लछमी द्वारा पकड़ा जाता है। रात्रि में लछमी से विरक्त होकर सोचता है कि वह अपने गाँव में रहेगा, अपने समाज में, अपनी जाति में। 'जाति बहुत बड़ी चीज है।' स्पष्ट रूप से यहाँ लेखक ने बालदेव के चरित्र के साथ मनमानी ज्यादती की है। बालदेव इससे पूर्व निःस्पृह सा व्यक्ति है। वह गतिशून्य हो गया है, किंतु जाति या संकीर्ण मनोवृत्ति का परिचय नहीं देता। उपन्यासकार ने उसे निपटा देने के लिए जो अंतिम स्पर्श दिया है, वह उसके साथ न्याय नहीं करता। उससे यह स्पष्ट है कि बावनदास विरक्त होकर चला है, उसे मिनिस्टरी से क्या लेना। सीधा तर्क है कि यदि बावनदास मंत्री बनता भी है तो वह बालदेव के मार्ग में कहाँ आता है। बालदेव संतुष्ट गृहस्थ है, उसे पैसे और सम्मान की कमी नहीं।

नोट्स बावनदास की नियति उपन्यासकार के इशारे पर हुई है। बावनदास गाँधीजी की मृत्यु और कांग्रेस के पतन के बाद निराश और एकाकी अनुभव करता है किंतु ऐसे निष्ठावान व्यक्ति के लिए केवल आत्महनन का मार्ग नहीं बचा रहता। वह अन्य आस्थापरक गाँधीवादियों की भाँति एकांत साधना का मार्ग भी अपना सकता था। उसकी निर्मम मृत्यु का प्रसंग पाठकों के मन में करुणा जगाने में समर्थ है किंतु वह करुणा हताशा में समा जाती है।

कालीचरण स्वस्थ और बलिष्ठ है, ईमानदार है, उत्साही है और समाज के लिए कुछ कर गुजरना चाहता है। उसकी परिणति भी पार्टी में अपराधी वृत्ति के लोगों के प्रवेश के कारण दुराशामय होती है। पुलिस उसे डाकुओं में गिनती है। पार्टी के वरिष्ठ कार्यकर्ता उसकी सफाई की बात नहीं सुनते। अंततः उसके आगे एक ही मार्ग बचा रहता है–डाकुओं में जा मिलने का। कहा जा सकता है कि पार्टियों के सच्चे कार्यकर्ताओं की ऐसी नियति देखी जा सकती है तो प्रश्न उठ सकता है कि क्या आवश्यक है कि परिणति यही हो। यहाँ उपन्यासकार कालीचरण को भी यही अंतिम स्पर्श देकर उसे यों ही निपटा देना चाहता है। दूसरी ओर, उपन्यासकार अभिजात तत्वों के प्रति आकर्षण और ममत्व का परिचय देता है। डॉ० प्रशांत कुमार आदर्शवादी हैं। वह कमला से विवाह कर गाँव में बस कर वहाँ के जीवन को सुधारने का व्रत लेता है। एक सामान्य मानवतावादी व्यक्ति तथाकथित राजनीतिज्ञों से बेहतर साबित होता है। यहाँ लेखक उसका साथ देता है। डॉ० प्रशांत बाधाओं पर विजयी होता है और पुरस्कारस्वरूप सब पा जाता है। यही नहीं, प्रशांत का होने वाला श्वसुर तहसीलदार, जो पीढ़ियों से समाजद्रोही और शोषक है, दामाद के लौट आने पर अविलंब हृदय परिवर्तन कर लेता है और छल-बल से अर्जित जमीन को भूमिहीन किसानों में बाँटता है। जान

नोट

पड़ता है कि उपन्यासकार का अचेतन सभी संभावित राजनीतिक चेतनाओं को रद्द करके अभिजात्य और उसके कृपा भाव पर अपनी सही लगाने में संतुष्ट है। यहाँ वह तटस्थ नहीं रह पाया है। यह चिंता का विषय है। कारण समाज में अच्छे व्यक्ति हो सकते हैं, उन्हीं का सहारा है, फिर भी राजनीति को सर्वथा नकारा नहीं जा सकता। जनतंत्र में उसकी महत्त्वपूर्ण भूमिका है। राजनीति का अर्थ है—एक ऐसी दृष्टि जो समाज को बेहतर बनाने के लिए लोगों को आकर्षित एवं संगठित करती है।

10.3 परिवेश का रेखांकन

'मैला आँचल' में उपन्यास की कथा कहने की विधि नई है और शिल्प भी नया है। इसे समझने के लिए हमें हिंदी उपन्यास लेखन-परंपरा को एक क्रम में देखना होगा। प्रेमचंद पूर्व काल के उपन्यासों में लेखक मानो पाठक को उँगली पकड़ कर चलना सिखाता था। वह अपनी रुचि के स्थलों पर पाठक को सीधे संबोधित करने लगता था, जैसे—"प्रिय पाठकों! सामने वह सूना मकान आप देख रहे हैं। भीतर चलकर देखते हैं कि इसका रहस्य क्या है? डरिए नहीं, हम आपके साथ हैं।" प्रेमचंद के हाथों इस कला का परिष्कार हुआ। उन्होंने घटनाओं के घटाटोप को छाँटा और पात्रों के चरित्र-तत्व को उभारा। फिर भी उनके युग में लेखक रचना में सदैव अपनी उपस्थिति का बोध कराता रहा। जिस प्रकार पुराने नाटकों में प्रत्येक दृश्य में नायक कहीं न कहीं उपस्थित रहता था। उसी प्रकार उस युग के उपन्यासों में लेखक हर परिस्थिति और विवरण में स्वयं सभी का बोध कराता चलता था। इस विधि को 'आसन्न-लेखकतत्व' की संज्ञा दी गई है। पर उपन्यास लेखन की नई शैली में लेखक लुप्त हो चला है। इस तथ्य को प्रेमचंद से लेकर अब तक के उपन्यास साहित्य में इस प्रकार व्याख्यायित किया जा सकता है। मुंशी प्रेमचंद ने उपन्यास की परिभाषा की कि यह 'मानव चरित्र का चित्र मात्र' है। उनका आशय संक्षेप में था कि मनुष्य का स्वभाव जो भीतर मन में रहता है, वह परिस्थितियों के संपर्क में आने के उपरांत पात्रों के कार्य अथवा घटनाओं के रूप में बाहर व्यक्त होता है। मनुष्य के स्वभाव की आचरण रूप में अभिव्यक्ति होती है, उसे उन्होंने 'मानव-चरित्र' कहा और मानव-चरित्र के चुने हुए श्रृंखलाबद्ध उदाहरणों को चित्र का नाम दिया। इस प्रकार विशिष्ट लक्ष्य को दृष्टि में रखते हुए आदि, मध्य और अंत के सूत्र में बँधे हुए पात्रों के आचरण के प्रकरण उपन्यास के मुख्य विषय थे। आगे चलकर पात्रों के चरित्र को अधिक गहराई से उपन्यास में लिया गया।

मनुष्य की संपूर्ण गतिविधि के प्रमुख तीन बिंदु ठहरते हैं—पहले बिंदु पर उसके मन में रहने वाले विचार हैं, दूसरे पर उसके कथन और तीसरे पर उसके कर्म हैं। उसके कर्म स्थूल रूप में हम सभी को दृष्टव्य हैं। यदि इन स्थूल कर्मों से सूक्ष्म की ओर यात्रा करें तो आगे क्रमश: वचन और मन हैं। यदि व्यक्ति के मन, वचन और कर्म के बीच किसी प्रकार की बनावट या अंतराल नहीं है तो कर्म, वचन और मन की ही अभिव्यक्ति करता है। किंतु आज के संघर्षमय संकुल जीवन में इतनी सरलता नहीं रह गई है। मनुष्य सोचता कुछ है, कहता कुछ है और करता कुछ है। इसीलिए उसके कर्म और वचन, मन के प्रामाणिक सूचक नहीं रह जाते। अत: यथार्थ की खोज में धीरे-धीरे उपन्यासकार ने पात्रों के मन की गहराइयों को सीधे अपनी पकड़ में लाने का प्रयत्न किया है।

जीवन की असलियत की खोज में उपन्यास ने अपना रूप और भी बदला है। अब ऐसा माना जाने लगा है कि सुनिश्चित एक या एकाधिक पात्रों के आचरण या उनकी मनोभूमि की क्रमबद्ध कथा कहना वास्तविक जीवन से पलायन करने के समान है। जीवन इतना सुनिश्चित और क्रमबद्ध नहीं, यह वस्तुत: अनेकविध और खासा बिखरा हुआ है। इस बिखराव को पकड़कर ठीक ठीक पाठकों तक पहुँचाने के लिए अब किसी समाज के परिवेश को रेखांकित करने पर बल दिया जाता है। परिवेश का आशय है, विशिष्ट समाज की परिस्थितियाँ और उनके प्रभाववश बनने वाली वहाँ के लोगों की मानसिकता। दूसरे शब्दों में समाज की व्यापक मानसिकता ही वहाँ का परिवेश है। इसीलिए नए ढंग से कुछ उपन्यास अपने समाज के सुनिश्चित पात्रों की क्रमबद्ध कथा न कहकर वहाँ के 'लोगों' का चित्रण भर करते चलते हैं। ऐसे उपन्यासों को पढ़कर लगता है कि इनमें कथा-पात्रों की कोई विशेषता नहीं। उपन्यासकार जैसा जहाँ चाहता है कहता और चित्रित करता चलता है। पात्र वृत्तचित्र (Documentary) की भाँति

अलग-अलग कुछ देर के लिए आते हैं और अपनी झलक दिखाकर लुप्त हो जाते हैं। ऐसे उपन्यासों की संरचना को गहराई से परखने पर मालूम होगा कि यह बिखराव ऊपर-ऊपर का है। मूलत: उपन्यासकार की दृष्टि समूचे परिवेश को उभारने पर लगी रहती है और उसके तहत जो भी प्रकरण और पात्र आते हैं, वे चित्रित होते चलते हैं। यहाँ पात्रों की नहीं, परिवेश की निरंतरता रहती है। इस दृष्टि से 'मैला आँचल' तथा 'आधा गाँव' आदि उल्लेखनीय उपन्यास हैं।

पात्रों के चेतन-प्रवाह का चित्रण करते समय उपन्यासकार पाठक के साथ मिल कर पात्रों को देखता है। वह स्वयं दोनों के बीच नहीं आता, अपनी ओर से अधिक टीका-टिप्पणी भी नहीं करता। वह पात्र की मन:स्थिति का वर्णन नहीं करता है। वह यह नहीं बताता कि पात्र के अंतर में क्या घट रहा है, वरन् वहाँ जो कुछ है उसे घटने देता है। ऐसी स्थिति में उपन्यासकार उपन्यास में निरंतर उपस्थित रहकर भी अदृश्य बना रहता है।

स्व-मूल्यांकन (Self-Assessment)

बहुविकल्पीय प्रश्न (Multiple Choice Questions) :

4. डॉ. प्रशांत किसके साथ विवाह करके गाँव के जीवन को सुधारने का व्रत लेता है?
   (क) कमला (ख) निर्मला
   (ग) विमला (घ) शीतला।
5. समाज की व्यापक मानसिकता ही वहाँ का .... है?
   (क) परिवार (ख) परिहास
   (ग) परिवेश (घ) इनमें से कोई नहीं।
6. गाँव वालों के अनुसार बालदेव कितने साल की जेल काटकर आया है?
   (क) तीन (ख) दो
   (ग) पाँच (घ) इनमें से कोई नहीं।

इस अध्याय के आरंभ में आंचलिक का स्वरूप-विवेचन करते हुए उसकी जो विशेषताएँ बताई गई हैं, वे तथा ऊपर परिवेश-प्रधान उपन्यास लेखन-शैली के जो लक्षण विश्लेषित किए गए हैं, वे सब 'मैला आँचल' में उपलब्ध हैं। 'मैला आँचल' के शिल्प की उल्लेखनीय पहचान है कि इसमें लेखक अलग से कहीं दिखाई नहीं पड़ता। उसका लोप हो गया है। उसने उपन्यास में मानों एक स्वचालित सशक्त कैमरा रख दिया है, जो निरंतर चारों ओर घूमकर दूर-पास के अनेकानेक दृश्य खींचता चलता है। कथा एक पात्र से दूसरे पात्र, या एक प्रकरण से दूसरे प्रकरण तक स्वत: पहुँचती है। सब कुछ अनायास घटता दीखता है। उसका नियामक तत्व अदृश्य रहता है। शेष, पाठक की कल्पना पर निर्भर है। पाठक धीरे-धीरे स्वयं चलने और प्रकरण को पकड़ने-समझने का अभ्यस्त हो जाता है। इस उपन्यास की कथा कहने की दूसरी विशेषता है कि कहने वाला अदृश्य है। पात्र अपनी मन:स्थिति लेकर स्वयं प्रस्तुत होते हैं। उनमे निपट भोलापन है और नवीन तत्व के प्रति कौतूहल और शंका है। फिर इस सबको जानकर इसके बयान करने की चुस्ती भी है। इस प्रक्रिया में लोक की भाषा नया संस्कार लेकर आई है, जिसमें विनोद-व्यंग्य का सहज स्पर्श है। भाषा की ध्वनि-विशेष वक्ता और उसके व्यक्तित्व को मूर्त रूप प्रदान करती है। इस विषय में 'नया प्रतीक' पत्रिका (जून, 1970) में रेणु ने अपना स्पष्टीकरण भी दिया है। उनका कहना है कि पात्र अपने गाँव की बोली में बोलते हैं। उनके कथन को शुद्ध हिंदी में नहीं लिखा जा सकता। दूसरी ओर बोली का कथन ज्यों का ज्यों हिंदी में नहीं खप सकता। उन्होंने भोजपुरी बोली की प्रकृति को हिंदी से अपने ढंग से ढाला है–"फिर (उनकी बोली की) जो भाव की गति है, लय है बोलने की, उसको मैंने नहीं तोड़ा।.......है वह खड़ी बोली, लेकिन लय उसकी अपनी है।" रेणु ने खड़ी बोली हिंदी में अंचल की बोली का ध्वनि-विकार की दृष्टि से जो स्पर्श दिया है, वह वहाँ के समाज के यथार्थ का आभास देते हुए रोचक प्रभाव भी रखती है। हाँ, इसका निरंतर प्रयोग अतिरेक का रूप धारण कर लेता है और साधारण पाठक को चौंकाने या ऊबाने वाला सिद्ध हो सकता है।

नोट

> *टास्क* 'मैला आँचल' की भाषा और पात्र-चित्रण का अपने शब्दों में वर्णन कीजिए।

अब हम 'मैला आँचल' की भाषा और चित्रण के कुछ उल्लेखनीय उदाहरण प्रस्तुत करेंगे। गाँव वालों को आशंका है कि 'मलेटरी' गाँव में स्थित गाँधीवादी बालदेव को पकड़ने आई है। वे बालदेव को बाँधकर आगत अधिकारियों के सामने प्रस्तुत करते हुए उसका परिचय इन शब्दों में देते हैं–"हुजूर, यह सुराजी बालदेव गोप है। दो साल जेहल खटकर आया है। इस गाँव का नहीं, चन्नपट्टी का है। यहाँ मौसी के यहाँ आया है। खध्धड़ पहनता है, जैहिन्न बोलता है।" उनका शब्द-प्रयोग तो रोचक है ही, कथन में उनकी मनोवृत्ति भी खूबी से बँधकर आती है।

गाँव के एक टोले में खबर फैली है कि दूसरे टोले से बलवा करने वाला दल आ रहा है। उस पर जो प्रतिक्रिया हुई, वह देखिए–

"गुअरटोली वाले हँसेरी (बलवा करने वाला दल) लेकर आ रहे हैं," एक लड़का दौड़ता-हाँफता आकर खबर दे गया। ऐं!.....गाँव के उत्तर में शोरगुल हो रहा है। खूँटे में बँधे हुए बेलों ने चौकन्ने होकर कान खड़े किए। गाँव के बाहर चरती हुई बकरियाँ दौड़ती-मिमियाती हुई गाँव में भागी आ रही हैं। कुत्ते भौंकने लगे।....... बात क्या हुई?

"अरे बेटा रे! गौरी बेटा रे! .....आँगन में आ जा बेटा रे! गुअरटोली का कलिया पगला गया है!" हरगौरी की माँ छाती पीटती और रोती हुई आई और हरगौरी को घसीटकर आँगन में ले गई। बच्चे रोने लगे।

"अरे, बात क्या हुई?"

"भाला निकालो छत्तर!"

"हमारी गंगाजी वाली लाठी कहाँ है?"

"तीर निकाल रे!"

"अरे बात क्या है? हँसेरी (धावा) क्यों ....?"

कौन किसका जवाब देता है! किसे फुरसत है! सारे गाँव में कुहराम मचा हुआ है।

'रेणु' ध्वनियों की पहचान और उनसे प्रभाव उत्पन्न करने में असाधारण पटु हैं। गाँव में अखाड़ा खुलता है और वहाँ के जवान पहलवानी करते हैं। ढोल बजता है–

ढिन्ना ढिन्ना, ढिन्ना ढिन्ना......!

अर्थात्–आ जा, आ जा, आ जा, आ जा!

पहलवान नारा लगाकर मैदान में उतरते हैं। तब ताल बदलती है–

चटधा गिड़धा, चटधा गिड़धा!

अर्थात–आ जा भिड़ जा, आ जा भिड़ जा!

पहलवान एक-दूसरे को पकड़ने की ताक में हैं। वह पकड़ा........

धागिड़ागि, धागिड़ागि, धागिड़ागि,

...... कसकर पकड़ो, कसकर पकड़ो!

चटाक चटधा, चटाक चटधा!

...... उठा पटक दे, उठा पटक दे!

गिड़ गिड़ गिड़ धा, गिड़ धा, गिड़ धा!

नोट

...... वाह वा, वाह वा, वाह बहादुर!

पटक तो दिया, अब चित्त करना खेल नहीं। मिट्टी पकड़ लिया है। सभी दाँव के पेंच और काट उसको मालूम हैं!

ढाक ढिन्ना, तिरकिट ढिन्ना!

...... दाव काट, बाहर हो जा!

पूजा के दिन इसी ढोल की ताल एकदम बदल जाती है–

धागिड धिन्ना, धागिड़ धिन्ना!

...... जै जगदंबा! जै जगदंबा!

गाँव की रक्षा करो माँ जगदंबा।

'मैला आँचल' में सामूहिक चेतन प्रवाह के दृश्य बड़े स्वाभाविक और सजीव बन पड़े हैं। वहाँ उपन्यासकार अदृश्य है, वह केवल अंचल के विविध पात्रों की विचार तरंगों को प्रस्तुत करता चलता है। उदाहरणार्थ, उपन्यास के अड़तीसवें परिच्छेद में वर्षा की रात्रि में रिमझिम लगी हुई है। मेढ़कों की टरटराहट और असंख्य कीट-पतंगों की अटूट रागिनी बज रही है। उस रात्रि में कोठारिन लछमी दासिन, रामदास 'महंथ', किसानो, कालीचरन, कालीचरन की माँ, मंगला, कमली और तहसीलदार के सिपाही की विभिन्न विचार तरंगें मिलकर अंचल के सामूहिक चेतन-प्रवाह का रूप धारण कर लेती हैं।

'रेणु' दृश्यांकन में पात्रों का चेतन प्रवाह विशेष रूप से प्रयुक्त करते हैं। उनकी मँजी हुई चित्रण कला अभिनव है, फिर भी किन्हीं एक-दो पात्रों पर वे जम नहीं पाए हैं, वरन अंचल की पात्रावली प्रस्तुत कर वहाँ का समग्र प्रभाव पाठक पर डालने की उन्हें अधिक चिंता है। आलोचकों की यह शिकायत उचित है कि 'मैला आँचल' कोई 'क्लासिक' पात्र नहीं दे सका है। 'क्लासिक' यानी दीर्घव्यापी, उदात्त अथवा अविस्मरणीय पात्र।

नोट्स रेणु की पात्र-चित्रण कला में सांकेतिकता, विविधता तथा प्रभावी रेखांकन है। संक्षिप्त पात्र भी इतने चीन्हें जाने योग्य हैं और उनके प्रकरण भी इतने मार्मिक हैं कि भुलाए नहीं जा सकते। ये अपनी पहचान के लिए पाठक से विशेष कल्पना और धारणा की अपेक्षा करते हैं।

पात्र और प्रकरण की समंवित लकीरें एक ही झलक में अपनी छाप छोड़ती हैं। इस प्रसंग में हम यहाँ कुछ उदाहरण देंगे–

–नील की खेती कराने वाला शोषक अंग्रेज मार्टिन, पत्नी मेरी के नाम पर गाँव का नाम मेरीगंज रखता है। मेरी मलेरिया के प्रकोप से चल बसती है। उस सुनसान गाँव में चिकित्सा का कोई प्रबंध नहीं है। मेरी के विरह और गाँव में अस्पताल खुलवाने के प्रयत्न में विफलता से मार्टिन का दिमाग गड़बड़ा जाता है। एक दिन वह मेरी की कब्र पर लेटकर सारा दिन रोता रहा–"डार्लिंग! डॉक्टर नहीं आएगा।"

–बालदेव के सूने जीवन में लछमी का मोहक स्पर्श आया है। आज रात बालदेव की स्मृति अतीत में चक्कर काटने लगी है। विधवा माँ की याद आती है। गाँव के लोग बालदेव को 'टुरवा' (अनाथ) कहते थे। सुनकर माँ बहुत गुस्सा होती थी। कहती थी, बाप मरे तो कुमर, माँ मरे तब टूअर! माँ भी नहीं रही। अनाथ बालदेव किसी अत्याचारी की भैंस चराता रहा। इस स्मरण से उसका जी भर उठता है, फिर एक क्रम से जीवन में आई कृपालु गरिमामय नारियों का ध्यान करता है।

–लछमी न जाने कब से मातृविहीन थी। उसके बचपन में ही हैजे के प्रकोप से बाबू जी ने काया बदल दी। उसे बूढ़े महँत के मठ में आश्रय मिलता है। कहाँ वह बच्ची और कहाँ पचास वर्ष का बूढ़ा गिद्ध। रोज रात में लछमी

नोट

रोती थी। ऐसा रोना कि जिसे सुन कर पत्थर भी पिघल जाए। रोज सुबह उसकी आँखे कदम के फूल की तरह फूली रहती थीं। रात में रोने का कारण पूछने पर चुपचाप टुकुर-टुकुर मुँह देखने लगती थी, ठीक गाय की बाछी की तरह, जिसकी माँ मर गई हो।

स्व-मूल्यांकन (Self-Assessment)

निम्नलिखित कथनों में सत्य अथवा असत्य की पहचान करें

(State Whether the following statements are True or False) :

7. 'मैला आँचल' के शिल्प की यह उल्लेखनीय पहचान है कि इसमें लेखक अलग से कहीं दिखाई नहीं पड़ता।
8. वर्षा के अभाव में सूर्यदेव को मनाने के लिए गाँव की स्त्रियाँ, बिछड़े पति-पत्नी का नाटक रचाती हैं।
9. डॉ. प्रशांत का पालन-पोषण उसकी माँ ने किया।

उपरोक्त उदारहणों से स्पष्ट है कि रेणु व्यंग्य-विनोद में ही निपुण नहीं, करुण प्रसंगों को अवतरित करने में भी पटु हैं। यहाँ उनकी मर्मस्पर्शी कला दीख पड़ती है। सजीला नवयुवक प्रशांत डॉक्टर होकर गाँव में आया है। सभी उसकी जाति पूछते हैं। वह क्या बताए? अज्ञात कुल शील है!..... बाढ़ पीड़ितों की सहायता के लिए नाव निकली। नाव के पास झाड़ी के निकट हाँड़ी हिली और उसमें से एक साँप गर्दन निकालकर फौं-फौं करने लगा। साँप धीरे-धीरे पानी में उतर गया और हाँडी से नवजात शिशु के रोने की आवाज आई, मानो माँ ने थपकी देना बंद कर दिया हो। बस, यही उसके जन्म की कथा है। फिर एक परित्यक्ता ने उसे पाला। माँ की इच्छा उसे डॉक्टर के रूप में देखनी की थी। पर, काशी वास करते-करते, काशी की किसी गली में वह हमेशा के लिए खो गई! एक बार लाहौर से प्रशांत के नाम एक मनीआर्डर आया था, विजया का आशीर्वाद लेकर। भेजने वाली वही थी किंतु नाम नया था। अब वह स्नेहमयी नहीं स्नेहमयी चोपड़ा थी।

अपने इतिहास पर गौरव करने के लिए प्रशांत के पास कुछ नहीं, उसके वंश-इतिहास पर काली रोशनाई पुती हुई है, जेल की सेंसर की हुई चिट्ठियों की तरह। जन्म देने वाली माँ ने भी जिसे दूर कर दिया, वह गला टीप कर मार भी तो सकती थी। पर वह ऐसा नहीं कर सकी। शायद उसने चेष्टा की होगी। गले पर एक-दो बार उँगलियाँ गई होंगी। सोया हुआ शिशु मुस्करा पड़ा होगा और उसे सहलाने लगी होगी।...."अँधेरे में एक अभागिन माँ दिल का दर्द दबाए आँचल में अपने नवजात शिशु को छिपाये खड़ी है। एक काली और भयावनी छाया आकर हाथ बढ़ाती है। माँ अंतिम बार अपने कलेजे के टुकड़े को, रक्त के पिंड को एक पलक निहारती है, चूमती है। भयावनी छाया उसके हाथ से शिशु को छीन लेती है। माँ दाँतों से होंठ दबाए खड़ी रह जाती है।"....पतिता, निर्वासिता और समाज की दृष्टि में सबसे नीच माँ की गोद में प्रशांत क्षणभर के लिए अपना सिर रखने को व्याकुल हो जाता है।

अंत में, अंचल के मानस को समुचित कलात्मक अभिव्यक्ति देने वाले उपन्यास में लोकोत्सव और लोकोक्ति का उल्लेख आवश्यक है। 'बिदापत' (लोकनृत्य-गान) में व्यंग्य-विनोद की प्रधानता है। गीत विद्यापति के हैं किंतु प्रयुक्त रूप 'विकटै' है। इन्हें बनाया है श्रमिकों ने, पैरॅडि (Parody) में ढालकर। होली पर 'जोगीड़ा' गाया जाता है। वर्षा के अभाव में इंद्रदेव को मनाने के लिए गाँव की स्त्रियाँ रात्रि के एकांत में बिछड़े पति-पत्नी का नाटक रचाती हैं। उनमें आधुनिक जीवन के प्रसंग, प्रहसन-रूप में जुड़ते जाते हैं। यह आयोजन कहीं जीवन की परोक्ष रूप से समीक्षा करते हैं और कहीं मार्मिकता तथा विनोद तत्व के संयोग से ताजगी दे जाते हैं।

10.4 निष्कर्ष

उपरोक्त विवेचन से स्पष्ट है कि एक विशुद्ध आंचलिक उपन्यास के रूप में 'मैला आँचल' हिन्दी साहित्य में प्रथम स्थान प्राप्त करने का अधिकारी है। इसमें 'रेणु' ने एक पिछड़े हुए गाँव मेरीगंज के जीवन, बोलचाल, गीत-संगीत, रहन-सहन, तीज-त्योहार, हास-विलास, शोषण-प्रपीड़न, रूढ़िवादिता-प्रतिगामिता तथा प्रगति-विद्रोह आदि तत्वों को

बहुत ही कलात्मक रूप में चित्रित किया है। इसका नायक कोई व्यक्ति-विशेष न होकर एक अंचल-विशेष है तथा उपन्यासकार ने 'भूमिका' में उचित ही लिखा है–"यह है मैला आँचल, एक आंचलिक उपन्यास।"

10.5 सारांश (Summary)

- यह उपन्यास मूलत: अंचल विशेष या मेरीगंज गाँव में फैले जीवन की अनेकविध दृष्टियों से कथा कहता है और घटना-पात्रों में बिखरा-बिखरा दीखता है। फिर भी, कुछ ऐसे सूत्र उसमें उभरते हैं जो कथा का आभास कराते हैं।
- बालदेव पास के गाँव का है। वह निरक्षर है, लेकिन निष्ठावान है, उसने जेल में समय काटा है और अब वह कांग्रेसी है। किंतु युवा राजनीति के आगे पिछड़ कर वह हतबुद्धि हो जाता है। युवा कालीचरण प्रारंभ में बालदेव का शिष्य रहा है।
- राजनीतिक उपन्यासों की सबसे बड़ी त्रासदी, विशेषत: हिंदी या अन्य भारतीय भाषाओं में यह है कि लेखक अपने को तटस्थ नहीं रख पाता। वह किसी न किसी मतवाद का शिकार बन जाता है और किसी राजनीतिक विचारधारा का पक्षधर।
- कालीचरण स्वस्थ और बलिष्ठ है, ईमानदार है, उत्साही है और समाज के लिए कुछ कर गुजरना चाहता है। उसकी परिणति भी पार्टी में अपराधी वृत्ति के लोगों के प्रवेश के कारण दुराशामय होती है।
- 'मैला आँचल' में उपन्यास की कथा कहने की विधि नई है और शिल्प भी नया है। इसे समझने के लिए हमें हिंदी उपन्यास लेखन-परंपरा को एक क्रम में देखना होगा।
- मनुष्य की संपूर्ण गतिविधि के प्रमुख तीन बिंदु ठहरते हैं–पहले बिंदु पर उसके मन में रहने वाले विचार हैं, दूसरे पर उसके कथन और तीसरे पर उसके कर्म हैं। उसके कर्म स्थूल रूप में हम सभी को दृष्टव्य हैं।
- जीवन की असलियत की खोज में उपन्यास ने अपना रूप और भी बदला है। अब ऐसा माना जाने लगा है कि सुनिश्चित एक या एकाधिक पात्रों के आचरण या उनकी मनोभूमि की क्रमबद्ध कथा कहना वास्तविक जीवन से पलायन करने के समान है।
- पात्रों के चेतन-प्रवाह का चित्रण करते समय उपन्यासकार पाठक के साथ मिल कर पात्रों को देखता है। वह स्वयं दोनों के बीच नहीं आता, अपनी ओर से अधिक टीका-टिप्पणी भी नहीं करता। वह पात्र की मन:स्थिति का वर्णन नहीं करता है।
- 'मैला आँचल' में सामूहिक चेतन प्रवाह के दृश्य बड़े स्वाभाविक और सजीव बन पड़े हैं। वहाँ उपन्यासकार अदृश्य है, वह केवल अंचल के विविध पात्रों की विचार तरंगों को प्रस्तुत करता चलता है।
- लछमी न जाने कब से मातृविहीन थी। उसके बचपन में ही हैजे के प्रकोप से बाबू जी ने काया बदल दी। उसे बूढ़े महँत के मठ में आश्रय मिलता है। कहाँ वह बच्ची और कहाँ पचास वर्ष का बूढ़ा गिद्ध।

10.6 शब्दकोश (Keywords)

1. कथा – कहानी
2. अड़चन – रुकावट
3. शोध – खोज
4. तत्कालीन – उस समय की
5. करूणा – दया
6. स्थल – स्थान
7. आचरण – व्यवहार।

नोट

10.7 अभ्यास प्रश्न (Review Questions)

1. राजनीति की दारूण निरर्थकता और मानवतावाद से आप क्या समझते हैं?
2. 'मैला आँचल' में 'रेणु' जी ने परिवेश का रेखांकन किस प्रकार किया है?
3. गाँव का नाम 'मेरीगंज' किस प्रकार पड़ा?
4. लछमी के जीवन-चरित्र पर एक संक्षिप्त टिप्पणी लिखिए।
5. 'मैला आँचल' के निष्कर्ष को अपने शब्दों में व्यक्त कीजिए।

उत्तर : स्व-मूल्यांकन (Answers : Self-Assessment)

1. 6	2. मलेरिया	3. दुष्प्रयत्न	4. (क)
5. (ग)	6. (ख)	7. सत्य	8. असत्य
9. असत्य।			

10.8 सन्दर्भ पुस्तकें (Further Readings)

पुस्तकें मैला आँचल—फणीश्वरनाथ रेणु, नेशनल बुक ट्रस्ट।

नोट

इकाई–11: 'मैला आँचल' का उद्देश्य

अनुक्रमणिका (Contents)

उद्देश्य (Objectives)
प्रस्तावना (Introduction)
11.1 मैला आँचल : उद्देश्य, कथ्य अथवा संदेश
11.1.1 आँचलिक उपन्यासों की एक नवीन शिल्प-विधा का सूत्रपात
11.1.2 प्रशांत जैसे कर्मठ एवं देशप्रेमी नवयुवकों का निर्माण
11.1.3 ग्रामीण जीवन की विसंगतियों का चित्रण
11.1.4 भारतीय ग्रामीण समाज में वर्ग और वर्ण की राजनीति का चित्रण
11.1.5 धार्मिक जीवन में परिव्याप्त भ्रष्टाचार का पर्दाफाश
11.1.6 राजनीतिक जीवन की गतिविधियों तथा आर्थिक स्थिति का चित्रण
11.2 सारांश (Summary)
11.3 शब्दकोश (Keywords)
11.4 अभ्यास प्रश्न (Review Questions)
11.5 सन्दर्भ पुस्तकें (Further Readings)

उद्देश्य (Objectives)

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् विद्यार्थी योग्य होंगे–

- 'मैला आँचल' में निहित मुख्य उद्देश्य को समझने में;
- उपन्यास के पात्रों के मुख्य कथनों की जानकारी प्राप्त करने में;
- 'मैला आँचल' द्वारा पाठकों को दिए गए संदेशों की व्याख्या करने में;
- 'मैला आँचल' के कथानक को समझने में।

प्रस्तावना (Introduction)

प्रत्येक साहित्यिक कृति की रचना के मूल में कृतिकार का कोई न कोई उद्देश्य या संदेश निहित रहता है। कभी-कभी यह संदेश स्पष्टतया परिलक्षित हो जाता है और कभी-कभी वह प्रच्छन्न रहता है। 'मैला आँचल' द्वितीय कोटि की कृति है जिसकी रचना के मूल में कोई विशिष्ट उद्देश्य स्पष्टतया परिलक्षित नहीं होता।

11.1 मैला आँचल : उद्देश्य, कथ्य अथवा संदेश

इस साहित्यिक रचना के मूल में निम्नांकित उद्देश्य क्रियाशील रहे हैं–

1. आंचलिक उपन्यासों की एक नवीन शिल्प-विधा का सूत्रपात करना,

2. प्रशांत जैसे कर्मठ एवं देश-प्रेमी नवयुवकों का निर्माण करना,
3. ग्रामीण जीवन की विसंगतियों का चित्रण,
4. भारतीय ग्रामीण समाज में वर्ग और वर्ण की राजनीति का चित्रण करना,
5. धार्मिक जीवन में परिव्याप्त भ्रष्टाचार का पर्दाफाश करना तथा
6. राजनीतिक जीवन की गतिविधियों तथा आर्थिक स्थिति का चित्रण करना।

11.1.1 आँचलिक उपन्यासों की एक नवीन शिल्प-विधा का सूत्रपात

'मैला आँचल' की रचना के मूल में 'रेणु' का मुख्य उद्देश्य यह रहा है कि वे उपन्यासों के क्षेत्र में एक नवीन शिल्प विधा का प्रयोग करें। कहना न होगा कि इस क्षेत्र में उन्हें प्रशंसनीय सफलता उपलब्ध हुई है और 'मैला आँचल' हिंदी के प्रारंभिक आंचलिक उपन्यासों में से ही एक नहीं है अपितु उसके सर्वकालीन सर्वोत्कृष्ट उपन्यासों में से भी एक है। बिहार प्रांत के पूर्णिया जिले के मेरीगंज नामक गाँव को आधार बनाकर 'रेणु' ने इस गाँव के रहन-सहन, खान-पान, पर्व-त्योहार, राजनीतिक गतिविधियाँ तथा स्त्रियों के पारस्परिक झगड़े आदि तथ्यों का बड़ी सूक्ष्मता से अंकन किया है। शिल्प की दृष्टि से आलोच्य उपन्यास की एक विशेषता यह भी है कि इसमें भोजपुरी मिश्रित भाषा की शब्दावली का इतनी प्रचुर मात्रा में प्रयोग किया गया है कि सामान्य पाठकों के लिए इसकी भाषा दुर्बोध तक हो गयी है। हाँ, कुल मिलाकर यह कहा जा सकता है कि 'मैला आँचल' उपन्यास की रचना द्वारा फणीश्वरनाथ 'रेणु' को आंचलिक उपन्यासों के जन्मदाताओं की श्रेणी में स्थान प्राप्त हो गया है।

'मैला आँचल' में आंचलिक पहलू उभारने के लिए लेखक ने अंचल की भौगोलिक परिस्थितियों के चित्रण से लेकर सामाजिक-सांस्कृतिक पर्यावरण के चित्रण तक को बड़ी गहराई व लगाव से प्रस्तुत किया है। यहाँ यह स्पष्ट कर देना आवश्यक है कि आंचलिकता और स्थानीय रंगत में अंतर होता है। स्थानीय रंगत वाले उपन्यासों में उसका वातावरण, कथा और चरित्र से अविछिन्न नहीं होता। आंचलिक उपन्यास में उसका वातावरण उपन्यास के कथ्य और चरित्रों से अनिवार्यतः जुड़ा होता है। 'मैला आँचल' में प्रस्तुत मेरीगंज गाँव भौगोलिक, सामाजिक और सांस्कृतिक दृष्टि से अन्य किसी गाँव से भिन्न है। इसकी भिन्नता को अंचल की विशेषताओं के द्वारा समझा जा सकता है। बोली-बानी की भिन्नता तथा गीतों, रीति-रिवाजों आदि के सूक्ष्म ब्योरों द्वारा मिथिला अंचल की लोक सांस्कृतिक व्याख्या के साथ-साथ बदलते हुए यथार्थ के परिप्रेक्ष्य का भी 'मैला आँचल' में समावेश हुआ है। मेरीगंज में मनाए जाने वाले तीज-त्योहारों, गाँव में मनाए जाने वाले ऋतु-पर्वों, लोक-व्यवहार के विविध रूपों व मानवीय संबंधों के विशिष्ट रूपों के वर्णन के माध्यम से 'रेणु' ने 'मैला आँचल' में अपने प्रिय अंचल का इतना गहरा व व्यापक चित्र खींचा है कि सचमुच यह उपन्यास हिंदी में आंचलिक औपन्यासिक परंपरा की सर्वश्रेष्ठ कृति बन गया है।

टास्क 'मैला आँचल' में निहित कृतिकार के उद्देश्य पर अपने विचार प्रस्तुत कीजिए।

11.1.2 प्रशांत जैसे कर्मठ एवं देशप्रेमी नवयुवकों का निर्माण

आलोच्य उपन्यास का एक प्रमुख संदेश यह भी स्वीकार किया जा सकता है कि डॉक्टर प्रशांत के चरित्र-चित्रण के माध्यम से उपन्यासकार ने नवयुवकों को उस जैसा ही ग्रामीणों का सेवक तथा देश-प्रेमी होने की प्रेरणा प्रदान की है। एक विद्वान आलोचक ने ठीक ही लिखा है–

"किसी देश के नवयुवकों में देश-प्रेम और राष्ट्रोत्थान की भावना जागृत करने का एक माध्यम यह हो सकता है कि उनके समक्ष ऐसे युवकों का आदर्श प्रस्तुत किया जाए जिन्होंने देशोत्थान और राष्ट्र-सेवा का व्रत लिया हो। इस दृष्टि से जब हम प्रशांत के चरित्र पर विचार करते हैं तो स्पष्ट होता है कि उसको उपन्यासकार ने पूर्ण मनोयोग से

नि:स्वार्थ, कर्मठ तथा देशोद्धार के लिए प्रयत्नशील चित्रित किया है। आजकल ब्रेन-ड्रेन की चर्चा जोरों से चल रही है। देश के अधिसंख्य होनहार वैज्ञानिक और डॉक्टर, जिनकी पढ़ाई लिखाई पर देश के करोड़ों रुपये व्यय होते हैं, इंग्लैड और अमेरिका आदि पाश्चात्य देशों में जा बसते हैं। वहाँ पर उनको ऊँचा वेतन मिलता है और भोग-विलास के नाना उपकरण भी उपलब्ध रहते हैं। दूसरी श्रेणी उन डॉक्टरों की है जो विदेश तो नहीं जाते, किंतु वे नागरिक सुविधाओं से युक्त शहरी अस्पतालों को छोड़कर ग्रामों में स्थित डिस्पेंसरियों और अस्पतालों में जाने का नाम नहीं लेते। इनके सर्वथा विपरीत डॉ. प्रशांत सरकार द्वारा प्रस्तावित उस स्कॉलरशिप को ठुकरा देता है, जिसे सरकार उसको विदेश में उच्च शिक्षा प्राप्त करने के लिए प्रदान करना चाहती हैं।" इस संबंध से उसका स्वास्थ्य मंत्री के साथ वार्तालाप द्रष्टव्य है–

"जी, मैं विदेश नहीं जाऊँगा," पूर्णिया और सहरसा के नक्शे को फैलाते हुए उसने कहा था, "मैं इसी नक्शे के किसी हिस्से में रहना चाहता हूँ। यह देखिए, यह है सहरसा का वह हिस्सा, जहाँ हर साल कोशी का तांडव नृत्य होता है और यह पूर्णिया का पूर्वी अंचल जहाँ मलेरिया और काला-आज़ार हर साल मृत्यु की बाढ़ ले आते हैं।"

उसको मंत्री महोदय द्वारा उचित ही समझाया जाता है कि मलेरिया डिस्पेंसरियों में तो एल.एम.पी. की छोटी डिग्री वाले डॉक्टरों की नियुक्ति की जाती है जबकि वह एम.बी.बी.एस. है। किंतु प्रशांत का उदात्त भावना से ओतप्रोत प्रत्युत्तर है–"जब तक मैं यह रिसर्च पूरा नहीं कर लेता, मैं कुछ भी नहीं हूँ। मेरी डिग्री किस काम की?"

डॉ. प्रशांत के इस उत्तर के माध्यम से उपन्यासकार देश के नवयुवकों को यह संदेश देना चाहता है कि उनके हृदय में भी देशप्रेम की ऐसी ही भावना होनी चाहिए। प्रशांत के साथियों की प्रतिक्रियाओं के माध्यम से उसने इस तथ्य को उभारा है कि सामान्यत: डॉक्टर लोग ग्रामीण क्षेत्र में सेवा करने के संबंध में विपरीत धारणाएँ रखते हैं–

मशहूर सर्जन डॉ. पटवर्धन ने कहा, "बेवकूफ है!"

ई.एन.टी. के प्रधान डॉक्टर नायक बोले, "पीछे आँखें खुलेंगी।"

मेडिसन के डॉक्टर तरफदार की राय थी, "भावुकता का दौरा भी एक खतरनाक रोग है। मालूम?"

> *नोट्स* जिस प्रशांत को उसके साथी बेवकूफ समझते थे, उसकी लगन द्वारा ग्रामीणों की सेवा किए जाने का यह परिणाम निकलता है कि लोग उसे देवता मानकर उसकी पूजा करने लगते हैं।

उपन्यासकार ने प्रशांत को यह कामना भी व्यक्त करते दिखाया है कि सभी भारतवासी स्वस्थ और निरोग रहने चाहिएँ। वह इस तथ्य के विषय में उचित राय व्यक्त करते चित्रित किया गया है कि भारतवासियों को औषधि की उतनी अधिक आवश्यकता नहीं है जितनी कि भूखे-नंगे लोगों को भोजन और वस्त्र प्रदान करने की। वह निम्नांकित पंक्तियों को गुनगुनाते हुए, ग्रामवासिनी भारतमाता की सेवा करने का निश्चय करता है–

भारतमाता ग्रामवासिनी!

खेतों में फैला है श्यामल,

धूल भरा मैला-सा आँचल!

उपन्यास के अंतिम अंश में भी उसका यह संकल्प व्यक्त किया गया है–

"ममता! मैं फिर काम शुरू करूँगा, यहीं इसी गाँव में! मैं प्यार की खेती करना चाहता हूँ। आँसू से भीगी हुई धरती पर प्यार के पौधे लहलहाएँगे। मैं साधना करुँगा, ग्रामवासिनी भारतमाता के मैले आँचल तले। कम से कम एक ही गाँव के कुछ प्राणियों के मुरझाए होंठों पर मुस्कराहट लौटा सकूँ, उनके हृदय में आशा और विश्वास को प्रतिष्ठित कर सकूँ..."

कहना न होगा कि उपन्यास के अंत में प्रशांत के मुख से उपर्युक्त उद्गार व्यक्त कराकर उपन्यासकार ने देश के

नोट

हजारों डॉक्टरों को यह संदेश प्रदान करने का प्रयास किया है कि उनको भी देश के एक-एक गाँव का उद्धार करने का बीड़ा उठाना चाहिए। आलोच्य उपन्यास का यह कथ्य ही मुख्य उद्देश्य कहा जा सकता है।

स्व-मूल्यांकन (Self-Assessment)

रिक्त स्थानों की पूर्ति करें (Fill in the blanks) :

1. डॉ. प्रशांत के माध्यम से उपन्यासकार ने नवयुवकों को .... होने की प्रेरणा दी है।
2. गाँव के लोग नाना प्रकार की .... पर शीघ्र की विश्वास कर लेते हैं।
3. भावुकता का दौरा भी एक .... रोग है।

11.1.3 ग्रामीण जीवन की विसंगतियों का चित्रण

'मैला आँचल' ग्रामीण जीवन की महागाथा है। इसके अंतर्गत 'रेणु' ने ग्रामीण जीवन का उसी प्रकार सूक्ष्म चित्रण किया है जैसा कि मुंशी प्रेमचंद के उपन्यासों में उपलब्ध होता है। गाँवों के लोग नाना प्रकार की अफवाहों पर शीघ्र ही विश्वास कर लेते हैं। आलोच्य उपन्यास का आरंभ ही इस अफवाह के साथ किया गया है कि गाँव में फौज आ पहुँची है और उसने बहरा चेथरू को बाल्टी चुराने के आरोप में गिरफ्तार कर लिया है। गाँव के सभी लोग घबरा जाते हैं और तहसीलदार विश्वनाथप्रसाद तो अफसरों को खुश करने के लिए डाली ही सजाकर ले जाते हैं। यादवटोली के लोग इस आशा से कि फौजी अफसरों द्वारा उनको इनाम दिया जाएगा, स्वराजी बालदेव को रस्सियों से बाँधकर ले जाते हैं और म्यूनिसिपालिटी के कर्मचारियों से इस व्यवहार के लिए डांट खाते हैं। इसी प्रकार कालीचरन को गिरफ्तार करने के लिए आए गोरखा सैनिकों के संबंध में ग्रामीण लोग यह विश्वास कर लेते हैं कि उन्होंने कालीचरन की माँ को ज़िबह कर दिया है—आदि, आदि।

ग्रामीण जीवन में ओझा और पंडितगण मिलकर लोगों को नाना प्रकार के अंधविश्वासों में घेरे रखते हैं। जब ज्योतिषी काका को यह ज्ञात होता है कि गाँव में मलेरिया सेंटर की स्थापना की जाने वाली है, तो वे उसका यह कहकर विरोध करते हैं कि डॉक्टरों का कार्य बीमारियों का इलाज करना नहीं अपितु बीमारियाँ फैलाना होता है। वे इंजेक्शन लगाकर लोगों के शरीर में विष पहुँचा देते हैं तथा कुँओं में लाल दवा डालकर हैजा फैला देते हैं। उनकी पत्नी प्रसव-पीड़ा में मर जाती है, किंतु कूपमंडूकता के कारण वे इस तथ्य को स्वीकार नहीं कर पाते कि किसी पुरुष डॉक्टर द्वारा उनकी पत्नी के पेट का ऑपरेशन करके बच्चे को बाहर निकाला जाए।

गाँवों में अनेक जातियों के लोगों के पृथक्-पृथक् मुहल्ले या टोले-टोलियाँ होते हैं। मेरीगंज में भी राजपूतटोली, कायस्थटोली, यादवटोली तथा निम्न जातियों के अनेक टोले-टोलियों की स्थिति दिखाई गई है। विभिन्न दलों के लोग अपना महत्व बढ़ाकर दिखाने तथा अन्य दलों के लोगों का महत्व घटाने के लिए तत्पर दिखाए गए हैं, पूर्णतः स्वाभाविक है। राजपूतटोली को कायस्थटोली के लोग 'सिपैहियाटोली' कहकर पुकारते हैं क्योंकि उस टोली के प्रमुख पुरुष रामकिरपालसिंघ के दादा महारानी चंपावती की स्टेट के सिपाही थे। राजपूतटोली के लोग कायस्थटोली को 'कैथटोली' कहकर अपमानित करते हैं जबकि उस टोली के प्रमुख पुरुष तहसीलदार विश्वनाथप्रसाद की धनाढ्यता के कारण गाँव की अन्य जातियों के लोगों द्वारा उसे 'मालिकटोला' कहकर पुकारा जाता है।

ग्रामीण जीवन में विभिन्न जातियों के लोगों द्वारा तरह-तरह के हथकंडे अपनाकर अपना महत्त्व बढ़ाया जाता है और रेणु ने मेरीगंज की भी ऐसी ही स्थिति चित्रित की है। उन्होंने गाँव के ब्राह्मणों को, जिनकी संख्या अपेक्षाकृत कम थी, गाँव की ऐसी तृतीय शक्ति दिखाया है जो कभी एक ओर के तो कभी दूसरी ओर के लोगों से मिलकर अपना महत्त्व बढ़ाती रहती है। उदाहरण के लिए जब सहदेव मिश्र फुलिया के घर में रंगे हाथों पकड़ा जाता है और इस संबंध में पंचायत होती है, तो ब्राह्मणों की ओर से यह घोषणा कर दी जाती है कि यदि राजपूतों ने हमारा साथ नहीं दिया तो हम यादवों को राजपूत स्वीकार कर लेंगे। इसी प्रकार कालीचरन के कहने में आकर निम्न जातियों के लोग राजपूतों के घरों में काम करना बंद कर देते हैं। इसका परिणाम यह निकलता है कि राजपूतों की दाढ़ियाँ बढ़ने लगती हैं तथा उनके मृत जानवर सड़कों पर पड़े रहते हैं क्योंकि उन्हें उठाने से चमार जाति के लोग इंकार कर देते हैं।

पारबती मौसी को डायन समझकर हत्या कर देने का प्रसंग इस तथ्य की अभिव्यंजना करता है कि ग्रामीण लोग किस सीमा तक अंधविश्वासी होते हैं। इन सभी तथ्यों के प्रकाश में कहा जा सकता है कि फणीश्वरनाथ 'रेणु' ने ग्रामीण जीवन का बड़ा ही सूक्ष्मतापूर्ण एवं सजीव अंकन किया है जो इस उपन्यास के उद्देश्यों में से एक स्वीकार किया जा सकता है।

टास्क 'मैला आँचल' के द्वारा 'रेणु' जी ने धार्मिक जीवन में व्याप्त भ्रष्टाचार का किस प्रकार पर्दाफाश किया है?

11.1.4 भारतीय ग्रामीण समाज में वर्ग और वर्ण की राजनीति का चित्रण

'रेणु' ने 'मैला आँचल' में मेरीगंज गाँव के समाज का बहुत ही सटीक विश्लेषण प्रस्तुत किया है। गाँव में उन्होंने बारह वर्ण होने की स्थिति बताई है तथा तीन प्रभुताशाली समुदाय चित्रित किए हैं–(क) कायस्थ या मालिकटोला–बड़े काश्तकार, (ख) राजपूतटोली–बड़े/मध्यम काश्तकार *तथा* (ग) यादवटोली–छोटे/मध्यम काश्तकार। आज जो बिहार की जातिवादी राजनीति है और इसे जातिवाद ने जिस प्रकार जाति व वर्ग के अंतर्विरोधों के भ्रम में डाल दिया है, लगभग ऐसी ही स्थिति 'रेणु' ने पाँच दशक पहले ही चित्रित कर दी थी। आदिवासी संथालों के विरूद्ध संघर्ष में गाँव के ये तीनों प्रमुख टोले एक ही वर्ग अर्थात् शोषक वर्ग की भूमिका निभाते हैं, जबकि संथाल शोषित वर्ग की स्थिति में हैं। 'रेणु' ने 'मैला आँचल' में सन् 1946 से 1948 तक के अत्यंत निर्णायक दो वर्षों का चित्रण भारतीय ग्रामीण समाज के चित्रण के संदर्भ में किया है। सबसे महत्त्वपूर्ण घटना इस बीच सन् 1948 के सत्ता परिवर्तन के रूप में घटती है। 'रेणु' ने स्वतंत्रता पूर्व की स्थिति का चित्रण उपन्यास के पहले खंड में किया है और स्वातंत्र्योत्तर स्थितियाँ उपन्यास के दूसरे खंड में हैं। इन दोनों स्थितियों में कोई विशेष अंतर नज़र नहीं आता। यह एक महत्त्वपूर्ण और विचारणीय तथ्य है।

इन दोनों स्थितियों के बीच की कड़ी है–गाँव में आदिवासी संथाल बनाम जमींदार टोली में वर्ग संघर्ष, जिसमें दोनों पक्षों के कई लोग मारे जाते हैं और स्वदेशी पुलिस का दमन संथालों को झेलना पड़ता है। उनका गाँव भी लूटा जाता है और उन्हीं के लोग गिरफ़्तार भी किए जाते हैं। अगर सचमुच भारत स्वाधीन हो गया है तो इन संथालों को सबसे पहले न्याय मिलना चाहिए था, लेकिन उनको सुराज (स्वराज्य) मिलता है 'दामुल हौज' अर्थात् आजीवन कारावास के रूप में। यहाँ सांकेतिक रूप में ही 'रेणु' बहुत गहरी बात कह गए हैं। भारत के मेहनतकशों और शोषितों के लिए तो भारतीय स्वाधीनता का अर्थ है 'दामुल हौज' तथा भारतीय शोषकों के लिए स्वाधीनता का अर्थ है सत्ता का नशा और सुख। कई स्तरों पर तो ऐसा भी लगता है कि स्थितियाँ पहले से भी बदतर हुईं और वह भी चार-छ: महीनों की आजादी के भीतर ही। गाँधी जी के शिष्य बावनदास को भारत-पाकिस्तान सीमा पर कांग्रेसी कालाबाजारी कापरा द्वारा जीवित ही कुचलवा दिया जाना तथा डॉ. प्रशांत की गिरफ़्तारी आदि की स्थितियाँ तो ब्रिटिश उपनिवेशवादी व्यवस्था से भी बदतर व्यवस्था बनने के संकेत देती हैं।

उपरोक्त स्थितियों के गहरे विश्लेषण के बाद 'रेणु' और 'मैला आँचल' के संबंध में हम कह सकते हैं कि 'रेणु' ने 'मैला आँचल' उपन्यास के माध्यम से भारतीय ग्रामीण समाज के राजनीतिक रूपांतरण के दो बहुत ही महत्त्वपूर्ण व निर्णायक वर्षों का अत्यंत सूक्ष्मता और संवेदनशीलता से चित्रण किया है।

11.1.5 धार्मिक जीवन में परिव्याप्त भ्रष्टाचार का पर्दाफाश

आलोच्य उपन्यास का एक गौण उद्देश्य मठों में परिव्याप्त भ्रष्टाचार का पर्दाफाश करना भी स्वीकार किया जा सकता है। इसके लिए उपन्यासकार ने महंत सेवादास और महंत रामदास के प्रसंगों का विस्तारपूर्वक चित्रण किया है और दोनों ही महंतों को चारित्रिक दृष्टि से पतित प्रदर्शित किया है। महंत सेवादास अबोध लछमी को इस आश्वासन के साथ अपने मठ में लाता है कि वह उसको पढ़ा लिखाकर उसका विवाह कर देगा, किंतु वह उसको अपनी दासी

नोट

बना लेता है। बात दासी बनाने तक ही सीमित नहीं रहती, वह उस अबोध बालिका के साथ अपनी वासना तृप्ति भी करने लगता है और उसके दो-चार दिन के लिए पूर्णिया चले जाने पर उसका शिष्य रामदास भी लछमी के साथ मुँह काला करता है। महंत सेवादास का प्राणांत भी उसकी लछमी के साथ हुई खींचातानी में होता है, क्योंकि समझदार या वयस्क होने पर लछमी उसको बीजक छूकर यह शपथ दिला देती है कि अब वह उसको अपनी वासना तृप्ति का माध्यम नहीं बनाएगा।

नये महंत रामदास का चरित्र भी कम पतित नहीं है। जैसा कि कहा जा चुका है वह अपने गुरु के जीवनकाल में ही लछमी की असहायावस्था का अनुचित लाभ उठा चुका था। सेवादास की मृत्यु हो जाने पर मठ की दशा देखने आया लरसिंघदास नामक साधू भी ठीक व्यक्ति नहीं है, क्योंकि वह एक ओर तो मेरीगंज के मठ की संपन्न स्थिति को देखकर तथा दूसरी ओर उसमें अप्सरा जैसी सुन्दर लछमी नामक कोठरिन को हथियाने के लिए स्वयं ही महंत बन जाने का षड्यंत्र रचता है। उसका षड्यंत्र तो विफल हो जाता है, किंतु नये महंत रामदास के चंगुल से लछमी एक रात को तभी बच पाती है जब वह उसको कुत्ता कहकर दुतकारती है और उसकी छाती में लातें मारकर उसे अर्द्ध घायल कर देती है।

लछमी की ओर से हताश होकर रामदास, रामपियरिया नामक लड़की को दासी बनाकर मठ पर ले आता है, जिसकी अस्वच्छता के कारण मठ एक प्रकार से सूअरों की खुड्डी जैसा गंदा हो जाता है। रामदास और रामपियरिया के मध्य आये दिन कलह होती रहती है और रामपियरिया रामदास को ऐसी गंदी-गंदी गालियाँ देती है कि उसको अपना जीवन नारकीय प्रतीत होने लगता है। इस प्रकार मठों में परिव्याप्त भ्रष्टाचार का चित्रण करना भी आलोच्य उपन्यास का एक गौण उद्देश्य स्वीकार किया जा सकता है।

स्व-मूल्यांकन (Self-Assessment)

निम्नलिखित कथनों में सत्य अथवा असत्य की पहचान करें

(State Whether the following statements are True or False) :

4. तहसीलदार विश्वनाथप्रसाद अफसरों को खुश करने के लिए डाली सजाकर ले जाते हैं।
5. नऐ महंत रामदास का चरित्र कतई भी पतित नहीं है।
6. रामपियरिया की सुंदरता के कारण मठ एक सुंदर वृंदावन में परिवर्तित हो जाता है।

11.1.6 राजनीतिक जीवन की गतिविधियों तथा आर्थिक स्थिति का चित्रण

आलोच्य उपन्यास में सन् 1942 से 1948 के मध्यवर्ती जीवन की राजनीतिक गतिविधियों एवं आर्थिक स्थिति को चित्रित करना भी उपन्यासकार का एक उद्देश्य माना जा सकता है। बालदेव और बावनदास के माध्यम से कांग्रेस पार्टी तथा कालीचरन के माध्यम से सोशलिस्ट पार्टी की गतिविधियों का 'रेणु' ने अच्छा चित्रण किया है। चलित्तर कर्मकार के माध्यम से उपन्यासकार ने क्रांतिकारियों के संबंध में आँग्ल-शासन के उस दृष्टिकोण का उद्घाटन किया है कि वह किस प्रकार क्रांतिकारियों को डकैतों की संज्ञा देकर उनको जन-सामान्य की उपेक्षा का पात्र बना देता था।

आर्थिक क्षेत्र में उपन्यासकार ने इस तथ्य का उद्घाटन किया है कि गाँवों में जमींदार वर्ग के प्रतिनिधि तहसीलदार विश्वनाथप्रसाद जैसे लोग शनैःशनै ग्रामवासियों की संपूर्ण भूमि के स्वामी बनते जा रहे थे। निर्धन ग्रामवासियों को अपनी जीवनलीला चलाने के लिए अनेक अवसरों पर ऋण लेना पड़ता था। इस ऋण के लिए उन्हें भूमि तक गिरवी रखनी पड़ती थी, जिसे वे वापिस नहीं छुड़ा पाते थे और अंततः अपनी जमीन से हाथ धो बैठते थे। तहसीलदार विश्वनाथप्रसाद को 'रेणु' ने मेरीगंज की प्रायः पूरी भूमि का मालिक बनते चित्रित किया है। हाँ, उसने अंत में उनका हृदय-परिवर्तन दिखाते हुए प्रत्येक किसान को उसकी कुछ भूमि लौटा देने की इच्छा व्यक्त करते दिखाया है।

संक्षेप में कहा जा सकता है कि उपर्युक्त विभिन्न उद्देश्यों की सिद्धि के लिए ही 'रेणु' द्वारा 'मैला आँचल' की रचना की गई है।

नोट

11.2 सारांश (Summary)

- प्रत्येक साहित्यिक कृति की रचना के मूल में कृतिकार का कोई न कोई उद्देश्य या संदेश निहित रहता है। कभी-कभी यह संदेश स्पष्टतया परिलक्षित हो जाता है और कभी-कभी वह प्रच्छन्न रहता है।
- 'मैला आँचल' में आंचलिक पहलू उभारने के लिए लेखक ने अंचल की भौगोलिक परिस्थितियों के चित्रण से लेकर सामाजिक-सांस्कृतिक पर्यावरण के चित्रण तक को बड़ी गहराई व लगाव से प्रस्तुत किया है।
- किसी देश के नवयुवकों में देश-प्रेम और राष्ट्रोत्थान की भावना जागृत करने का एक माध्यम यह हो सकता है कि उनके समक्ष ऐसे युवकों का आदर्श प्रस्तुत किया जाए जिन्होंने देशोत्थान और राष्ट्र-सेवा का व्रत लिया हो।
- प्रशांत के मुख से उपर्युक्त उद्गार व्यक्त कराकर उपन्यासकार ने देश के हजारों डॉक्टरों को यह संदेश प्रदान करने का प्रयास किया है कि उनको भी देश के एक-एक गाँव का उद्धार करने का बीड़ा उठाना चाहिए।
- पारबती मौसी को डायन समझकर हत्या कर देने का प्रसंग इस तथ्य की अभिव्यंजना करता है कि ग्रामीण लोग किस सीमा तक अंधविश्वासी होते हैं। फणीश्वरनाथ 'रेणु' ने ग्रामीण जीवन का बड़ा ही सूक्ष्मतापूर्ण एवं सजीव अंकन किया है।
- लछमी की ओर से हताश होकर रामदास, रामपियरिया नामक लड़की को दासी बनाकर मठ पर ले आता है, जिसकी अस्वच्छता के कारण मठ एक प्रकार से सूअरों की खुड्डी जैसा गंदा हो जाता है।
- आर्थिक क्षेत्र में उपन्यासकार ने इस तथ्य का उद्घाटन किया है कि गाँवों में जमींदार वर्ग के प्रतिनिधि तहसीलदार विश्वनाथप्रसाद जैसे लोग शनैःशनै ग्रामवासियों की संपूर्ण भूमि के स्वामी बनते जा रहे थे। अंत में उनका हृदय-परिवर्तन दिखाते हुए प्रत्येक किसान को उसकी कुछ भूमि लौटा देने की इच्छा व्यक्त करते दिखाया गया है।

11.3 शब्दकोश (Keywords)

1. क्रियाशील – कार्यरत
2. प्रांत – राज्य
3. सूक्ष्मता – बारीकी
4. पर्यावरण – वातावरण
5. सर्वश्रेष्ठ – सबसे अच्छा
6. व्यय – खर्च
7. पाश्चात्य – पश्चिमी
8. भोग-विलास – सुख-सुविधा
9. स्कालरशिप – छात्रवृत्ति
10. रिसर्च – खोज
11. औषधि – दवाई।

11.4 अभ्यास प्रश्न (Review Questions)

1. 'मैला आँचल' में प्रशांत के द्वारा उपन्यासकार ने किस प्रकार नवयुवकों को ग्रामीणों का सेवक एवं देशप्रेमी बनने की प्रेरणा दी है?
2. गाँव में फैली अंधविश्वास की भावनाओं का अपने शब्दों में उल्लेख कीजिए।
3. तहसीलदार विश्वनाथप्रसाद का हृदय-परिवर्तन किस प्रकार हुआ?

नोट

उत्तर : स्व-मूल्यांकन (Answers : Self-Assessment)

1. देशप्रेमी 2. अफवाहों 3. खतरनाक 4. सत्य
5. असत्य 6. असत्य।

11.5 सन्दर्भ पुस्तकें (Further Readings)

पुस्तकें मैला आँचल–फणीश्वरनाथ रेणु, नेशनल बुक ट्रस्ट।

नोट

इकाई–12: 'मैला आँचल' की पात्र-योजना एवं चरित्र-चित्रण

अनुक्रमणिका (Contents)

उद्देश्य (Objectives)

प्रस्तावना (Introduction)

12.1 'मैला आँचल' की पात्र-योजना

12.1.1 प्रमुख पुरुष पात्रों के नाम तथा उनका संक्षिप्त परिचय

12.1.2 प्रमुख नारी पात्रों के नाम तथा उनका संक्षिप्त परिचय

12.1.3 गौण पुरुष पात्रों के नाम तथा संक्षिप्त परिचय

12.1.4 गौण नारी पात्रों के नाम तथा संक्षिप्त परिचय

12.2 'मैला आँचल' के चरित्रों का वर्गीकरण

12.3 महत्त्वपूर्ण पात्रों का चरित्र-चित्रण

12.3.1 बावनदास का चरित्र-चित्रण

12.3.2 विश्वनाथप्रसाद का चरित्र-चित्रण

12.3.3 कमली का चरित्र-चित्रण

12.3.4 लछमी का चरित्र-चित्रण

12.3.5 बालदेव का चरित्र-चित्रण

12.3.6 कालीचरण का चरित्र-चित्रण

12.3.7 चलित्तर कर्मकार का चरित्र-चित्रण

12.3.8 डॉ. प्रशांत का चरित्र-चित्रण

12.4 चरित्र-चित्रण अथवा चरित्रांकन-कौशल

12.5 सारांश (Summary)

12.6 शब्दकोश (Keywords)

12.7 अभ्यास प्रश्न (Review Questions)

12.8 सन्दर्भ पुस्तकें (Further Readings)

उद्देश्य (Objectives)

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् विद्यार्थी योग्य होंगे–

- 'मैला आँचल' के पात्रों के नाम एवं उनके संक्षिप्त परिचय को समझने में;
- 'मैला आँचल' के पात्र-चरित्रों का वर्गीकरण करने में;

नोट

- 'मैला आँचल' के महत्त्वपूर्ण पात्रों का चरित्र-चित्रण करने में;
- पात्रों के चरित्रांकन-कौशल के उत्कृष्ट प्रदर्शन की जानकारी प्राप्त करने में।

प्रस्तावना (Introduction)

उपन्यास कला की दृष्टि से वर्ण्यवस्तु या उद्देश्य के अनुकूल पात्रों की योजना करते हुए उनका कुशलतापूर्वक चरित्रांकन करने का तत्व अत्यधिक महत्त्वपूर्ण है। उपन्यासकार द्वारा अपनी कथावस्तु के अनुरूप पात्रों का चयन करते हुए उनकी रूपाकृति, उनके स्वभाव उनकी मनोदशा और विचारों आदि का इस प्रकार प्रस्तुतीकरण किया जाता है कि उपन्यास की कथावस्तु सजीव हो उठती है। उपन्यासकार की सफलता इस तथ्य पर निर्भर रहती है कि उसके पात्रों के क्रिया-कलाप, आचरण और विचार आदि तथ्य ऐसे सजीव स्वाभाविक होने चाहिएँ कि वे पाठकों की सहानुभूति अर्जित कर सकें और उन्हें ऐसी अनुभूति होती रहे कि वे पात्र बहुत कुछ अंशों में उनका प्रतिनिधित्व कर रहे हैं।

12.1 'मैला आँचल' की पात्र-योजना

'मैला आँचल' की कथावस्तु के विकास में जिन पात्रों ने योगदान दिया है, उन्हें चार वर्गों में विभक्त किया जा सकता है—प्रमुख पुरुष पात्र, प्रमुख नारी पात्र, गौण पुरुष पात्र तथा गौण नारी पात्र।

12.1.1 प्रमुख पुरुष पात्रों के नाम तथा उनका संक्षिप्त परिचय

1. **तहसीलदार विश्वनाथप्रसाद**—मेरीगंज का सर्वाधिक प्रतिष्ठित तथा कानूनी दाँव-पेंच में माहिर व्यक्ति।
2. **डाक्टर प्रशांत कुमार**—कुशल एवं कर्मठ डाक्टर, दीनों का हितैषी युवक तथा विश्वनाथप्रसाद की पुत्री कमली का प्रेमी पति।
3. **ठाकुर रामकिरपालसिंघ**—राजपूतटोले का प्रमुख व्यक्ति, अनपढ़ किंतु चतुर पुरुष।
4. **महंत सेवादास**—मेरीगंज के मठ का विलासी एवं अंधा महंत, जिसके कोठारिन दासी लछमी के साथ अवैध संबंध हैं।
5. **महंत रामदास**—महंत सेवादास का शिष्य, बाद में मेरीगंज के मठ का महंत, दुर्बल चरित्र वाला व्यक्ति।
6. **कालीचरण**—उपन्यास का सर्वाधिक साहसी तथा कर्मठ व्यक्ति, दुर्बलों का सहायक।
7. **बालदेव**—कांग्रेस का कर्मठ कार्यकर्ता, जो लछमी के प्रति अनुराग भाव रखता है।
8. **सुमरितदास**—मेरीगंज में बेतार के तार की भूमिका निभाने वाला प्रमुख व्यक्ति।
9. **चलित्तर कर्मकार**—अपने जीवनकाल में ही कहानी बना साहसी डकैत।
10. **जोतखी (ज्योतिषी) काका**—कूपमंडूक पंडित ओझा।
11. **खेलावनसिंह यादव**—यादवटोली का प्रमुख व्यक्ति।
12. **बावनदास**—गाँधी जी का अनन्य भक्त, कांग्रेसी कार्यकर्ता।

12.1.2 प्रमुख नारी पात्रों के नाम तथा उनका संक्षिप्त परिचय

1. **कमली (कमला)**—विश्वनाथप्रसाद की पुत्री, डाक्टर प्रशांत की प्रेयसी पत्नी।
2. **लछमी**—कीचड़ में फँसा कमल।
3. **फुलिया**—अनेक प्रेम-प्रसंगों की नायिका बनी शिथिल चरित्रा युवती।

नोट

4. **रामपियरिया**–महंत रामदास की दासी पत्नी बनी कुटिल युवती।

12.1.3 गौण पुरुष पात्रों के नाम तथा संक्षिप्त परिचय

1. **तहसीलदार हरगौरी**–अपनी धूर्तता का शिकार हुआ भ्रष्ट तहसीलदार।
2. **वासुदेव**–कालीचरण का दाहिना हाथ, समाजवादी कार्यकर्ता।
3. **डब्लयू.जी. मार्टिन**–मेरीगंज गाँव के नये नामकरण का सूत्रधार अँग्रेज, जिसकी प्रेरणा से गाँव में मलेरिया सेंटर खुला है।
4. **प्यारू**–डॉ. प्रशांत का कर्मठ सेवक।
5. **सोमा जट**–खूंखार व्यक्ति, कालीचरन का साथी।
6. **लरसिंघदास**–कामुक एवं धूर्त साधू।
7. **रामकिसुन बाबू**–कांग्रेसी कार्यकर्ता।

12.1.4 गौण नारी पात्रों के नाम तथा संक्षिप्त परिचय

1. **पारबती मौसी**–ग्रामवासियों के अंधविश्वास की शिकार विधवा नारी।
2. **मंगला**–चर्खा सेंटर की सहृदय मास्टरनी।
3. **आभारानी**–सहृदय कांग्रेस कार्यकर्त्री।

'मैला आँचल' में अनेक अन्य पात्र भी यथाप्रसंग कथावस्तु को गति प्रदान करते हैं, किंतु उनकी चारित्रिक रेखाएँ सुस्पष्ट नहीं हैं।

टास्क 'मैला आँचल' की पात्र-योजना पर अपने विचार प्रस्तुत कीजिए।

12.2 'मैला आँचल' के चरित्रों का वर्गीकरण

रेणु ने 'मैला आँचल' में जिस प्रकार निरायास ढंग से कथावस्तु को निर्मित किया है, वैसे ही आयासहीन ढंग से उनके चरित्र भी अपना रूप ग्रहण करते गए हैं।

प्रसिद्ध अंग्रेज उपन्यासकार ई.एम. फार्स्टर ने उपन्यास के चरित्रों के दो प्रकार बताए हैं–गोल (Circular) और चपटे *(Flat)*। गोल यानि उपन्यास की कथा के विकास के साथ-साथ विकसित होने वाले चरित्र और चपटे यानि कथा के आरंभ में प्रस्तुत विशेषताओं को कथा के अंत तक बिना परिवर्तन के बनाए रखने वाले चरित्र। इस दृष्टि से 'मैला आँचल' के अधिकांश चरित्र गोल हैं, लेकिन कुछ चरित्र चपटे भी हैं।

चरित्रों को एक अन्य स्तर पर भी परिभाषित किया जाता है–प्रतीकारात्मक अथवा प्रतिनिधिक (टाईप) चरित्र तथा व्यक्तिपरक चरित्र। प्रतिनिधिक या टाईप चरित्र किसी सामाजिक समूह, समुदाय या वर्ग के प्रतिनिधि चरित्र हैं, जबकि व्यक्तिपरक चरित्र अपनी व्यक्तिगत विशेषताओं के कारण जाने जाते हैं। यद्यपि प्रतिनिधिक चरित्रों में भी व्यक्तिपरक विशेषताएँ रहती हैं, लेकिन उनके व्यक्तित्व की मुख्य पहचान उनके टाईप चरित्र के रूप में रहती है। इस दृष्टि से भी 'मैला आँचल' के अधिकांश चरित्र प्रतिनिधिक चरित्र हैं, जबकि कुछेक चरित्र व्यक्तिपरक हैं।

नोट

12.3 महत्त्वपूर्ण पात्रों का चरित्र-चित्रण

'मैला आँचल' में कई समीक्षकों को चरित्रों की इतनी भरमार लगती है कि उनमें उन्हें चरित्रों का विशिष्ट व्यक्तित्व उभरता नजर नहीं आता। दूसरी ओर कई चरित्र ऐसे हैं, जिन्हें लेखक ने महत्त्व तो बहुत दिया है, लेकिन जिनका उपन्यास में घटनागत या चरित्रगत उद्घाटन विस्तार से नहीं हुआ है। 'मैला आँचल' के प्रमुख पात्रों का चरित्र-चित्रण निम्नलिखित है–

12.3.1 बावनदास का चरित्र-चित्रण

कई आलोचकों के विचार में 'मैला आँचल' में **बावनदास** न सिर्फ केंद्रीय चरित्र हैं, वरन् उपन्यास की पूरी आत्मा इस चरित्र के साथ जुड़ी हुई है, यद्यपि उपन्यास में बावनदास बहुत कम समय के लिए अवतरित होता है और कथा के विकास में बहुत कम योगदान करता है। बावनदास के चरित्रांकन में यह अंतर्विरोध जरूर है, लेकिन यह भी सच है कि इस चरित्र में उपन्यास की आत्मा भी बसी हुई है। वास्तव में उपन्यास की धुरी भारतीय जन की स्वतंत्रता व उसके जीवन स्तर पर स्वतंत्रता के वास्तविक प्रभाव से जुड़ी है। इस अर्थ में बावनदास अत्यंत महत्त्वपूर्ण चरित्र है। वह गाँधीवादी जीवन-मूल्यों का जीवंत प्रतीक है। भारतीय समाज को आजादी मिलने के छः महीने के भीतर ही गाँधी जी की भी हत्या होती है और गाँधीवादी जीवन दर्शन व जीवन मूल्यों की भी। गाँधीवादी जीवन दर्शन सामान्य भारतीय जन की कल्याण कामना करता था, लेकिन स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद इस सामान्य भारतीय जन की कहीं सुनवाई नहीं हुई, वरन् इसकी 'अपने' शासकों के हाथों और भी दुर्गति हुई। बावनदास की जघन्य हत्या, सामान्यजन की दुर्दशा को प्रतीक रूप से उद्घाटित करती है।

उपन्यास के प्रभुताशाली वर्गों के प्रतिनिधि चरित्र हैं–तहसीलदासर विश्वनाथप्रसाद मल्लिक, ठाकुर रामकिरपालसिंघ, हरगौरी सिंह, खेलावनसिंह यादव तथा दुलारचंद कापरा इत्यादि। लेखक ने इन चरित्रों में स्वार्थ प्रियता, पाखंड व शोषित वर्गों पर बिना संकोच अत्याचार करने तथा अन्तरात्माहीन होने की स्थितियाँ उद्घाटित की हैं, यद्यपि व्यक्तिगत स्तर पर इन चरित्रों में कुछ अंतर भी दृष्टिगोचर होते हैं।

12.3.2 विश्वनाथप्रसाद का चरित्र-चित्रण

विश्वनाथप्रसाद एक हजार बीघा जमीन के मालिक होकर भी अपनी एकमात्र संतान कमली की शादी नहीं कर पाते, जिससे कमली मानसिक रूप से रोगी हो जाती है और डॉ. प्रशांतकुमार का प्रेम ही उसका वास्तविक उपचार कर पाता है। यहाँ लेखक ने तहसीलदार के चरित्र के दो अंतर्विरोधी रूप अंकित किए हैं। एक पिता के रूप में वह अत्यंत स्नेहिल, कोमल हृदय तथा चिंतातुर है जबकि एक जमींदार के रूप में वह क्रूर, स्वार्थी व अत्याचारी है। डॉ. प्रशांत उसके दोनों रूपों को देखता व विश्लेषित करता है। डॉ. प्रशांत स्वयं कमली से प्यार करता है, अतः शोषित वर्गों से सहानुभूति रखकर भी वह विश्वनाथप्रसाद को कई बातों में नापसंद तो करता है, लेकिन उससे नफरत नहीं कर पाता। यही विश्वनाथप्रसाद सिंह अपनी बेटी कमली और प्रशांतकुमार के विवाह की खुशी में अपने असामियों को पाँच-पाँच बीघा जमीन लौटाने की घोषणा भी करता है।

'रेणु' ने दुलारचंद कापरा आदि एकाध शोषक को छोड़कर, जिसका चरित्रांकन वैसे भी सांकेतिक मात्र हुआ है, अपने अन्य शोषक चरित्रों को भी अपनी संवेदना और सहानुभूति दी है। संथालों के हाथों ठाकुर हरगौरी के मारे जाने पर, हालाँकि वह बहुत उद्दंड व अत्याचारी था, लेखक ने उसके परिवार के दुख के अंकन में संवेदना से काम लिया है जबकि आदिवासी संथालों के प्रति अपनी घोषित सहानुभूति के बावजूद उन परिवारों की भीतरी व्यथा-कथा से 'रेणु' आने पाठकों को परिचित नहीं करवाते।

12.3.3 कमली का चरित्र-चित्रण

'मैला आंचल' के प्रमुख स्त्री चरित्रों में से एक **कमली** तहसीलदार की बेटी है। वह युवा और प्रेम की प्यासी है। डॉ. प्रशांत के प्रेम बंधन में बँधकर उसका उपचार होता है, लेकिन इसी प्रेम बंधन में उसके चरित्र के कुछ पहलु

भी उभरते हैं। कमली अत्यंत संवेदनशील है, साथ ही वह प्रबुद्ध भी है। डाक्टर की प्रतीक्षा में वह काफी साहित्य पढ़ती है। शरतचंद्र और बंकिमचंद्र जैसे तमाम बंगाली लेखक उसे अच्छे लगते हैं, जिनकी रचनाएँ पढ़-पढ़ कर वह रोती भी है और उनके चरित्रों से अपनी अस्मिता भी जुड़ी देखती है। कमली उन भारतीय स्त्रियों की प्रतिनिधि चरित्र है जो प्रेम के लिए अपना सर्वस्व होम कर सकती है। वह डाक्टर को जी-जान से प्यार करती है और उसके प्रेम में कुँआरी माँ बनने में भी उसे लाज, संकोच या भय नहीं है।

स्व-मूल्यांकन (Self-Assessment)

रिक्त स्थानों की पूर्ति करें (Fill in the blanks) :

1. महंत सेवादास के कोठारिन दासी .... के साथ अवैध संबंध हैं।
2. उपन्यास का सर्वाधिक साहसी एवं कर्मठ व्यक्ति .... है।
3. विश्वनाथप्रसाद की पुत्री का नाम .... है।

12.3.4 लछमी का चरित्र-चित्रण

कमली को 'रेणु' ने जितनी संवेदना दी है, उतनी ही संवेदना दुखों की मारी **लछमी** को भी दी है। एक अबोध बालिका, जो मठ पर पालने-पोसने, पढ़ाने-लिखाने के लिए महंत सेवादास द्वारा लाई गई, लेकिन जिसने उसके किशोरावस्था में पहुँचते ही उसका दैहिक शोषण आरंभ कर दिया और बेचारी लछमी, वह इस शोषक महंत से घृणा भी नहीं कर सकती, क्योंकि वह उसका अन्य भक्षकों से रक्षक है और उसके जीवन का आधार व सहारा भी। लेकिन स्त्री का दैहिक शोषण कितना भी क्यों न हो, वह सच्चा प्रेम उसी से करती है, जिससे उसके मन का मेल हो और लछमी के मन का मेल है—स्वतंत्रता सेनानी बालदेव जी से। बालदेव जी को भी लछमी आकर्षित करती है और वे भी सामजिक रूढ़ियों या मूल्यों की परवाह न कर उसके प्रेम बंधन में बँध कर उसके साथ रहने लगते हैं।

लछमी के शोषण द्वारा 'रेणु' ने भारतीय समाज में स्त्री की वास्तविक स्थिति को अंकित किया है, विशेषत: निर्धन स्त्री की। कमली संपत्तिशाली वर्ग की स्त्री है, इसलिए उसे कुछ सामाजिक दर्जा व सुविधा प्राप्त हैं लेकिन लछमी दासी है, जिसे कोई भी महंत अपनी रखेलिन बना सकता है। लछमी के व्यक्तित्व में भी संवेदनशीलता, समझदारी व दबंगता के गुण हैं। लरहिसंघदास जैसे लार टपकाते साधुओं से निपटने की क्षमता भी उसमें विकसित हो गई है।

कमली व लछमी के अतिरिक्त गणेश की नानी, मंगला आदि स्त्री चरित्रों को भी रेणु ने संवदेनशीलता से चित्रित किया है। स्त्री चरित्रों के प्रति रेणु के सृजन में विशेष सौंदर्य बोध है, स्त्री-पुरुष संबंधों में वे उनमुक्तता को भी कोई नकारात्मक मूल्य के रूप में नहीं देखते।

'मैला आँचल' के राजनीतिक व सामाजिक रूप से सक्रिय व महत्त्वपूर्ण चरित्र हैं—बालदेव, कालीचरन, डॉक्टर प्रशांत कुमार, चलित्तर कर्मकार आदि। बावनदास की चर्चा हो चुकी है। ये सभी चरित्र अपने-अपने ढंग से महत्त्वपूर्ण हैं, लेकिन इनमें प्रतिनिधिक समानता मिलती है। ये सभी चरित्र, चाहे किसी भी राजनीतिक विचारधारा के क्यों न हों, मध्यम वर्ग के समान आधार वाले चरित्र हैं, चलित्तर कर्मकार को छोड़कर जो प्रत्यक्ष रूप में कभी सामने नहीं आता, जिसकी सिर्फ चर्चा ही होती है।

12.3.5 बालदेव का चरित्र-चित्रण

बालदेव कांग्रेस कार्यकर्ता व स्वतंत्रता सेनानी हैं। देशभक्ति में उसने यातनाएँ भी सही हैं और कारावास भी भोगा है। स्वभाव से वह कुछ सीधा व भोला जीव है तथा कुछ पिछड़ापन भी उसमें है, क्योंकि उसे लगता है कि "कॉमरेड मुर्गी का अण्डा खिला कर बनाया जाता है।" लेकिन वह ईमानदार व मानवता से प्रेम करने वाला है। गाँव का हित चाहता है। गाँव के राशन डिपो की जिम्मेवारी मिलती है तो भ्रष्टाचार बंद करता है। अस्पताल बनाने में आगे बढ़कर योगदान करता है। लछमी के प्रति आकर्षित होता है तो उसके साथ जीवन साझा करने को भी प्रस्तुत हो जाता है। वह जाति बंधनों से सर्वथा मुक्त है।

नोट

12.3.6 कालीचरण का चरित्र-चित्रण

कालीचरन युवा शक्ति का प्रतीक है। उसे कांग्रेस पार्टी से ज्यादा क्रांतिकारी सोशलिस्ट पार्टी आकर्षित करती है, जो 'ज़मीन हलवाहकों को' का नारा देती है तथा संघर्ष का मार्ग दिखाती है। वह 'बम फोड़ने वाले मस्ताने भगत सिंह' से भी प्रभावित है। वह भी संवेदनशील प्रेमी है। मंगला उसे अच्छी लगती है, लेकिन उससे चार हाथ की दूरी वह बनाए रखता है।

12.3.7 चलित्तर कर्मकार का चरित्र-चित्रण

चलित्तर कर्मकार भूमिगत क्रांतिकारी है, जो वर्ग संघर्ष में यकीन रखता है। उसके साथ कोई भी अपने को नहीं जोड़ना चाहता। केवल कम्युनिस्ट पार्टी ने उसके वारंट वापस लेने की मांग कर रखी है।

12.3.8 डॉ. प्रशांत का चरित्र-चित्रण

डॉ. प्रशांत कुमार वास्तव में उपन्यास का केंद्रीय चरित्र है, जो स्वयं लेखक के विचारों का प्रतिनिधि है। डॉ. प्रशांत के चरित्र के विकसित होने का पर्याप्त अवकाश भी उपन्यास में मिलता है व लेखक की संवेदना भी उसे पर्याप्त मात्रा में मिली है।

नोट्स डॉ. प्रशांत सही मायनों में जनहित से जुड़ा बुद्धिजीवी 'कॉमरेड' है, जिसने विदेश का वजीफा छोड़ कर भारतीय देहात का दुख-दर्द महसूस करना, उसे दूर करना तथा पीड़ित जन से जुड़ना अधिक श्रेयस्कर माना।

डॉ. प्रशांत हर स्तर पर मेरीगंज की पीड़ित मानवता से जुड़ता है। वह मलेरिया पर शोध भी करता है, गाँव वासियों को चिकित्सा प्रदान कर जीवनदान भी करता है व उनके दुख-सुख और सामाजिक-सांस्कृतिक जीवन का अभिन्न अंग भी बनता है। कमली को अपनी सहचरी बनाकर वह शहर का रहा-सहा आकर्षण भी मन में नहीं रहने देता और जेल से रिहा होकर गाँव को ही अपनी कर्मभूमि बनाने का निर्णय लेता है। हालाँकि शहर में उसे ऊँचा पद, मान-सम्मान, सुख-सुविधा सब कुछ मिल सकता था। आदिवासी संथालों के विद्राह को यदि किसी चरित्र की सहानुभूति मिली तो वह प्रशांत कुमार ही था। वह कम्युनिस्ट समर्थक समझा जाता था।

लेकिन बालदेव, कालीचरन व प्रशांत में वर्ग चरित्र एक समान है। तीनों ही अपनी मध्यवर्गीय चारित्रिक सीमाओं को पार कर संघर्षशील वर्ग से नहीं जुड़ते। उनकी सहानुभूति वहीं तक हैं, जहाँ तक उनका जीवन व जीवन शैली सुरक्षित है। आदिवासी संथालों के विरूद्ध बालदेव और कालीचरन दोनों गवाही देते हैं और उन्हें आजीवन कारावास दिलवाने में शामिल होते हैं। डॉ. प्रशांत को संथालों से सहानुभूति है, लेकिन इस सहानुभूति को वह सक्रिय रूप नहीं देता। कुल मिलाकर 'मैला आँचल' में लेखक की अपनी वर्ग-सीमाएँ भी मध्यवर्ग तक ही सीमित हैं, इसलिए उनके सर्वश्रेष्ठ चरित्र भी मध्यवर्गों से ही आते हैं, विशेषत: मेहनतकश या संघर्षशील वर्गों से। 'रेणु' स्वयं सोशलिस्ट विचारों से प्रभावित रहे हैं व जयप्रकाश नारायण के आंदोलन के समर्थक भी, लेकिन बिहार में जन क्रांति वर्ग-संघर्ष के जरिए ही किसी निष्कर्ष तक पहुँचेगी, इस निष्कर्ष तक 'रेणु' नहीं पहुँच पाते।

12.4 चरित्र-चित्रण अथवा चरित्रांकन-कौशल

अब हम आलोच्य उपन्यास के चरित्रांकन-कौशल पर निम्नांकित शीर्षकों के अंतर्गत विचार करेंगे–

1. अंतरंग-बहिरंग व्यक्तित्व का चरित्रांकन
2. चरित्र-चित्रण की पद्धतियाँ
3. चरित्रांकन-कौशल की दृष्टि से समीक्षा।

नोट

1. अंतरंग-बहिरंग व्यक्तित्व का चरित्रांकन

पात्रों के सर्वांगीण चरित्र-चित्रण के लिए उनके अंतरंग और बहिरंग व्यक्तित्व का चरित्रांकन आवश्यक रहता है अर्थात् एक ओर तो उपन्यासकार पात्रों की बाह्य वेशभूषा और रूपाकृति आदि का चित्रण करता है जबकि दूसरी ओर उनके आंतरिक मनोभावों के उद्घाटन का भी प्रयास करता है। 'मैला आँचल' के नागा साधु संबंधी निम्नांकित अवतरण में उसका बहिरंग चित्रण समाविष्ट है–

साधुओं के दल में एक नागा साधु भी है यद्यपि वह दूसरे मत को मानने वाला मुरती है, फिर भी आचारज जी उसको साथ में रखते हैं। बड़ा करोधी मुरती है। हाथ में छोटा-सा कुल्हाड़ा रखता है। लंबी दाढ़ी, जटा, सारे देह में भभूत और कमर में सिर्फ चाँदी की सिकड़ी! नंगा रहता है। महंथ साहेब के साथ वह जिस मठ पर जाता है, वहाँ के महंथ और अधिकारी को छट्टी का दूध याद करा देता है।

उपन्यासकार ने नागा साधु के अंतरंग का भी चित्रण किया है, हालाँकि, यह चित्रण वर्णनात्मक शैली में होने के कारण इसमें उसके बहिरंग और अंतरंग चित्रण का सम्मिश्रण हो गया है–

नागा बाबा जब गुस्सा होते हैं तो मुँह से अश्लील से अश्लील गालियों की झड़ी लग जाती है।... आते ही लछमी दासिन पर बरस पड़े–"तैरी जात को मच्छड़ काटे! हरामजादी! रंडी! तैं समझती क्या है री? ऐं, दुनियाँ को तैं अंधा समझती है? बोल!... लाल मिर्च की बुकनी डाल दूँ। छिनाल। तैं आचारजगुरु को गाली देती है? तेरे मुँह में कुल्हाड़े का डंडा डाल दूँ, बोल! साली, कुत्ती! साधू का रगत बहाती है और बाबू लोग से मुँह चटवाती है! दूँ अभी तेरे गाल पर चाँटा? हट जा यहाँ से, कातिक की कुतिया!"

(पृष्ठ–90, 91)

अंतरंग चित्रण की दृष्टि से निम्नांकित अवतरण भी अवलोकनीय है, जिसमें कमली की मनोभावनाओं का उत्कृष्ट चित्रण किया गया है–

...डाक्टर की मुस्कराहट बड़ी जानलेवा है। जब आवेगा तो मुस्कराते हुए आवेगा, डर लगता है?..हाँ, हाँ, डर लगता है तो तुमको क्या? तुमकों तो मजा मिलता है न! मुस्कराए जाओ। ....गले में आला लटकाए फिरते हैं बाबू साहब! छाती और पीठ में लगाकर लोगों के दिल की बीमारी का पता लगाते हैं। झूठ! इतने दिन हो गए, मेरे दिल की बात, मेरी बीमारी को कहाँ जान सके! या जान-बूझकर अनजान बनते हो डाक्टर! सच-सच बताना, तुम क्यों मुस्कराते हो? तुम मुझे जलाने के लिए इस गाँव में क्यों आए? नहीं, नहीं, तुम नहीं आते तो पागल हो जाती। तुम डाँटते हो, बड़ा अच्छा लगता है! तुम मुझे सुई से डराते हो, चिढ़ाते हो। कितना अच्छा लगता है मुझे! फिर मीठी दवा भेज दूँगा?....हाँ जी, भेज देना, पूछते क्या हो? तुम्हारी बोली क्या कम मीठी है? लेकिन तुम एक बार जरूर आया करो, नहीं आओगे तो मुझे डर लगेगा! ..... सिपैहियाटोली की कुसमी कहती थी, डाक्टर मुझसे भी पूछता था–मीठी दवा चाहिए क्या?....मैं नहीं विश्वास करती, डाक्टर ऐसा नहीं है। कुसमी झूठ बोलती है। मीठी दवा और किसी को मिल ही नहीं सकती है। (पृष्ठ–70)

स्व-मूल्यांकन (Self-Assessment)

बहुविकल्पीय प्रश्न (Multiple Choice Questions) :

4. ई.एम.फार्स्टर ने उपन्यास के चरित्रों के कितने प्रकार बताए हैं?

   (क) चार (ख) दो

   (ग) पाँच (घ) इनमें से कोई नहीं।

5. विश्वनाथप्रसाद के पास कितने बीघा जमीन थी?

   (क) एक हजार (ख) पाँच सौ

   (ग) दो हजार (घ) इनमें से कोई नहीं।

नोट

6. कांग्रेस कार्यकर्ता एवं स्वतंत्रता-सेनानी इनमें से कौन है?

(क) कालीचरण (ख) चलित्तर कर्मकार

(ग) बालदेव (घ) इनमें से कोई नहीं।

2. चरित्र-चित्रण की पद्धतियाँ

आलोच्य उपन्यास में चरित्र-चित्रण की जिन पद्धतियों का आश्रय लिया गया है उनका सोदाहरण विवरण प्रस्तुत है–

(क) वर्णनात्मक पद्धति–वर्णनात्मक पद्धति का आश्रय लेते हुए उपन्यासकार पात्रों के संबंध में अपनी ओर से वर्णन विश्लेषण करता चलता है। आलोच्य उपन्यास में इस पद्धति का अनेक अवसरों पर उपयोग किया गया है। एक उदाहरण अवलोकनीय है, जिसमें उपन्यासकार ने लछमी, महंत सेवादास और उसके शिष्य रामदास के संबंध में आवश्यक सूचनाएँ अपनी ओर से प्रदान कर दी हैं–

सतगुरु हो! सतगुरु हो!

महंथ साहेब सदा ब्रह्म बेला में उठते हैं। "हो रामदास! आसन त्यागो जी! लछमी को जगाओ! ... समगुरु हो! ये कभी भी बिना जगाए जागें। रामदास! हो जी रामदास!"

X X X X

"रात बहुत बाकी है तो क्या हुआ? एक दिन जरा सवेरे ही सही। सोओ मत। धूनी में लकड़ी डाल दो। कोठारिन को जगा दो। ..... सतगुरु साहेब ने सपना दिया है।"

....लछमी के रग-रग में अब साधु-सुझाव, आचार-विचार और नियम-धरम रम गया है। साहेब की दया है। और यह रामदास? गुरु जाने, इसकी मति-गति कब बदलेगी! बचपन से ही साधु की संगति में रहकर भी जो नहीं सुधरा, वह अब कब सुधरेगा?.... भक्ति-भाव ना जाने भोंटू पेट भरे से काम! बस, दो ही गुण हैं–सेवा अच्छी तरह करता है और खंजड़ी बजाने में बेजोड़ है।

X X X X

बूढ़े महंथ साहब पहला पद कहते हैं। दंतहीन मुँह से प्रातकी के शब्द स्पष्ट नहीं निकलते। गले की थरथराहट सुर में बाधा डालती है, बेसुरा राग निकलता है। दमे से जर्जर शरीर में दम कहाँ!....लेकिन लछमी सब सँभाल लेती है। (पृष्ठ–21, 22)

उपर्युक्त उद्धरण में उपन्यासकार ने कोठारिन लछमी, महंत सेवादास और भावी महंत रामदास के चरित्र की संक्षिप्त रूपरेखा वर्णनात्मक पद्धति द्वारा प्रस्तुत कर दी है।

(ख) संवादात्मक या नाटकीय पद्धति–इसमें या तो दो पात्रों के वार्तालाप द्वारा उनके अपने ही चारित्रिक गुणों का उद्घाटन होता है या फिर उनके संवादों से किसी अन्य पात्र या पात्रों के चारित्रिक गुण-अवगुणों पर प्रकाश पड़ता है। उदाहरणार्थ निम्नांकित कथोपकथन अवलोकनीय हैं, जिनके माध्यम से उपन्यासकार ने अनेक पात्रों के चारित्रिक गुण-दोषों का उद्घाटन किया है–

.....खँखारकर गले को साफ करते हुए बालदेव जी के मुँह से बस वही पुराना जवाब निकलता है, जो उसने हरगौरी को दिया था जिस दिन कलिया पगला गया था।

"नहीं हुजूर! हम तो मूर्ख और गरीब ठहरे। मूर्ख आदमी, चाहे गरीब आदमी, कभी लीडर हुआ है हुजूर?"

दारोगा साहब बालदेव जी को पास की कुर्सी पर बैठने को कहते हैं, "अरे, हम आपको जानते हैं बालदेव जी, बैठिए?"

बासुदेव और सुंदर एक-दूसरे का मुँह देखते हैं।....कालीचरन जी को कुछ पूछा भी नहीं?...लो, तहसीलदार साहब सँभाल लेते हैं।

"दारोगा साहब यही हैं, कालीचरनबाबू, यहाँ के सोशलिस्टों के लीडर! बहादुर हैं! लेकिन सिर्फ बहादुर ही नहीं, मगज़ भी है!"

"ओ हो! कालीचरन जी हैं? आइए साहब, आप लोग तो साहब, क्या कहते हैं, जो न करवाइए।" दारोगा साहब मुँह में पान-जर्दा डालते हुए कहते हैं, "लेकिन यहाँ तो सुना कि आप लोगों ने बड़े दिमाग से काम लिया है। हमको तो सुबह आते ही सारी बातों का पता चल गया। तारीफ करने के काबिल! वाह! ....बैठिए।"

कालीचरन बैठते हुए कहता है, "देखिए दारोगा साहब यदि आपस की पंचायत से सारी बात का फैसला हो जाए तो हम लोगों को पागल कुत्ते ने नहीं काटा है जो......"

"आपस की पंचायत से? यह खूनी केस.....?" दारोगा साहब का पानभरा मुँह एकदम गोल हो जाता है।

"नहीं, यह नहीं, यही आधी बट्टेदारी का सवाल!"

"ओ!" दारोगा साहब ने पीक की कुल्ली फेंकते हुए कहा, "ओ! सो तो ठीक है! अरे आप ही हैं, सोशलिस्ट पार्टीवाले हैं। कहिए तो, जो काम पंचायत से चार आदमी की राय से नहीं होगा, वह क्या कहते हैं, तूल-फजूल से हो सकता है?"

"हिंसा के रास्ते पर तो हरगिज जाना ही नहीं चाहिए।" बालदेव जी बहुत गंभीर होकर कहते हैं।

"क्या कहते हैं!" दारोगा साहब बालदेव जी की बात में टीप का बंद लगा देते हैं, "क्या कहते हैं!" दारोगा साहब बात करते समय हाथ खूब चमकाते हैं और कनखी भी मारते हैं। (पृष्ठ–194, 95)

उपर्युक्त उद्धरण के कथोपकथनों के माध्यम से उपन्यासकार ने बालदेव की अहिंसा-प्रियता, कालीचरन का सोशलिस्ट पार्टी से संबंधित होने के कारण उसका पंचायती राज में विश्वास व उसकी हिंसाप्रियता तथा दारोगा की वाक्पटुता और काईयापन आदि विशेषताओं पर प्रकाश डाला है।

> *टास्क* 'मैला आँचल' में मनोवैज्ञानिक पद्धति का आश्रय किस प्रकार लिया गया है? टिप्पणी कीजिए।

(ग) मनोवैज्ञानिक पद्धति–इसका आश्रय उपन्यासकार द्वारा पात्रों की मनोभावनाओं के उद्घाटन के लिए लिया जाता है। मनोवैज्ञानिक पद्धति का उपयोग करते हुए उपन्यासकार पात्रों के अंतर्द्वन्द्व का उद्घाटन करता है, जैसे निम्नांकित उद्धरण में मेरीगंज के मठ का महंत बन जाने का स्वप्न देखने वाला लरसिंहदास, लछमी द्वारा "बिलटा साधु' कहकर फटकारे जाने पर, इस द्वंद्व से ग्रस्त हो जाता है कि इसको मेरे पिछले जीवन की जानकारी कहाँ से हो गई है? उद्धरण प्रस्तुत है–

बिलटा साधू?....रंडी की यह हिम्मत! उसे बिलटा साधू कहती है? अच्छा! अच्छा!

.....लछमी पहले से ही तो उसे नहीं जानती। कैसे जान सकती है? वह कभी पहले यहाँ आया नहीं। पुपड़ी मठ से भी तो कभी कोई मुरती यहाँ नहीं आया। सोनमतिया कहारिन भी तो आई है यहाँ। संभव है उस बार अपनी बेटी रधिया को खोजने के लिए यहाँ भी पहुँची हो। ठीक है.....। रधिया। रधिया को पहली बार जब देखा था तो उसके मन की ऐसी ही हालत हुई थी। कनपट्टी के पास हमेशा गर्म रहता था। लेकिन रधिया अल्हड़ थी। एक ही चक्कर में जाल में आ गई थी। लछमी तो पुरानी है, खेली-खिलाई है। सत्तर चूहे खाई हुई है।.... (पृष्ठ–62, 63)

मनोवैज्ञानिक पद्धति का आश्रय लेकर पात्रों का मनोविश्लेषण भी किया जाता है, जैसे निम्नांकित उद्धरण में बावनदास द्वारा हुई नवयौवना तारावती के शारीरिक सौंदर्य को देखकर उसके अंतर्मन में उठे द्वंद्व का विश्लेषण किया गया है–

नोट

तारावती जी की आँख लग गई। बावन ने हिलते-डुलते पर्दे के फाँक से यों ही जरा झाँककर देखा था। उसका कलेजा धक् कर उठा था, मानो किसी ने उसे जोर से पीछे की ओर धकेल दिया हो।.....धीरे-धीरे पर्दे को हिलाने वाली फागुन की आवारा हवा ने बावन के दिल को भी हिलाना शुरू कर दिया। बावन ने एक बार चारों ओर झाँककर देखा, फिर पर्दे के पास खिसक गया! झाँका। चारों ओर देखा और तब देखता ही रह गया मंत्र-मुग्ध सा!.....पलँग पर अलसाई सोई जवान औरत! बिखरे हुए घुँघराले बाल, छाती पर से सरकी हुई साड़ी, खद्दर हुई अँगिया!....कोकटी खादी के बटन! बावन के पैर थरथराते हैं। वह आगे बढ़ना चाहता है।....वह जानता है! वह इस औरत के कपड़े को फाड़कर चित्थी-चित्थी कर देना चाहता है। वह अपने तेज़ नाखूनों से उसके देह को चीर फाड़ डालेगा। वह एक चीख सुनना चाहता है। वह अपने जबड़ों से पकड़कर उसको झकझोरेगा। वह मार डालेगा इस जवान गौरी औरत को। वह खून करेगा।....ऐं! सामने की खिड़की से कौन झाँकता है? गाँधी जी की तस्वीर? दीवार पर गाँधी जी की तस्वीर! हाथ जोड़कर हँस रहे हैं बापू!....बाबा! धधकती हुई आग पर एक घड़ा पानी! बाबा, छिमा! छिमा! दो घड़े पानी! दुहाई बापू!. ....बाबा! पानी, पानी, पानी! शीतल जल! ठंडक.....। (पृष्ठ–133)

उपरोक्त अवतरण में उपन्यासकार ने सुषुप्त नवयौवना तारावती के अनावृत सौंदर्य को देखकर बावनदास के अंतर्मन में जगे पशु-भाव का विश्लेषण करने के साथ ही गाँधी जी की तस्वीर को देखकर उसके पशु-भाव के विलीन हो जाने का भी सुष्ठु चित्रण किया है।

स्व-मूल्यांकन (Self-Assessment)

निम्नलिखित कथनों में सत्य अथवा असत्य की पहचान करें

(State Whether the following statements are True or False) :

7. बूढ़े महंत साहब के दंतहीन मुँह से प्रातकी के शब्द स्पष्ट नहीं निकलते।
8. वासुदेव गाँधी जी का अनन्य भक्त एवं कांग्रेसी कार्यकर्ता है।
9. डॉ. प्रशांत लछमी से बहुत प्रेम करते हैं।

3. चरित्रांकन-कौशल की दृष्टि से समीक्षा–आलोच्य उपन्यास में चरित्रांकन-कौशल के संबंध में अंततः यह तथ्य भी उल्लेखनीय है कि इसके रचनाकार फणीश्वरनाथ 'रेणु' की मानव-मनोविज्ञान में गहरी पैठ रही है, जिससे वे अपने पात्रों के मनोभावों के उद्घाटन में अपेक्षित सफलता प्राप्त कर सके हैं। उनका चरित्रांकन-कौशल, स्वाभाविकता एवं सजीवता की दृष्टि से इतना अधिक सप्राण रहा है कि उपन्यास के विभिन्न पात्रों के प्रतिरूपों को हम अपने सामान्य जीवन में सरलता से पहचान सकते हैं। उपन्यासकार ने अपने पात्रों के प्रति अपेक्षित सहृदयता का भी परिचय दिया है। विभिन्न पात्रों के चारित्रिक उत्थान-पतन को देखकर ऐसा आभास नहीं होता कि वह उनके साथ पक्षपात या अन्याय कर रहा है।

नोट्स ग्रामीण परिवेश की सहज पहचान तथा चित्रविधायिनी वर्णन शैली, 'रेणु' के दो ऐसे अमोघ अस्त्र रहे हैं जिनके फलस्वरूप उनके पात्रों की बोलियाँ और उनके क्रिया-कलाप दैनिक जीवन के स्त्री-पुरुषों का सम्यक् प्रतिनिधित्व करते हैं।

ग्रामीण औरतों की बातचीत की सजीव झाँकी के उदाहरणार्थ उनका निम्नांकित वार्तालाप अवलोकनीय है–

लेकिन रमजूदास की स्त्री का मुँह कौन बंद कर सकता है?.... "अरे फुलिया की माये! तुम लोगों को न तो लाज है और न धरम। कब तक बेटी की कमाई पर लाल किनारीवाली साड़ी चमकाओगी? आखिर एक हद होती है किसी बात की! मानती हूँ कि जवान बेवा बेटी दुधार गाय के बराबर है मगर इतना मत दूहो कि देह का खून भी सूख जाए।"

नोट

"अरे हाँ-हाँ, बेटा-बेटी केकरो, घीढारी करे मंगरो। चालनी कहे सूई से कि तेरी पेंदी में छेद! हाथ में कंगना तो चमका रही हो, खलासी को एक पुड़िया सिंदूर नहीं जुटता है?"

"मुँह सँभालकर बात कर नेंगड़ी! बात बिगड़ जाएगी। खलासी हमारा बहन-बेटा है। बहन-बेटा लगाकर गाली देती है? गाली हमारे देह में नहीं लगेगी। तेरे देह में तो लगी हुई है। अपने खास भतीजा तेतरा के साथ भागी तू और गाली देती है हमको? सरम नहीं आती है तुझको! बेसरमी, बेलज्जी! भरी पंचायत में जो पीठ पर झाड़ू की मार लगी थी सो भूल गई? गुअरटोली के कलरू के साथ रातभर भैंस पर रसलील्ला करती थी सो कौन नहीं जानता है। तूँ बात करेगी हमसे?" (पृष्ठ–59)

संक्षेप में कहा जा सकता है कि 'रेणु' ने आलोच्य उपन्यास में चरित्रांकन-कला का उत्कृष्ट प्रदर्शन किया है। पात्रों के चरित्र-चित्रण अथवा चित्रांकन के लिए उन्होंने वर्णनात्मक, नाटकीय और मनोविश्लेषणात्मक तीनों पद्धतियों का आश्रय लिया है तथा अपनी सजीव वर्णन शैली, पात्रों के अंतर्मन में गहरी पैठ तथा ग्रामीण जीवन की सूक्ष्म जानकारियों के आधार पर वे अपने पात्रों का जीवंत चरित्रांकन करने में सफल हुए हैं।

12.5 सारांश (Summary)

- उपन्यास कला की दृष्टि से वर्ण्यवस्तु या उद्देश्य के अनुकूल पात्रों की योजना करते हुए उनका कुशलतापूर्वक चरित्रांकन करने का तत्व अत्यधिक महत्त्वपूर्ण है।
- रेणु ने 'मैला आँचल' में जिस प्रकार निरायास ढंग से कथावस्तु को निर्मित किया है, वैसे ही आयासहीन ढंग से उनके चरित्र भी अपना रूप ग्रहण करते गए हैं।
- कई आलोचकों के विचार में 'मैला आँचल' में बावनदास न सिर्फ केंद्रीय चरित्र हैं, वरन् उपन्यास की पूरी आत्मा इस चरित्र के साथ जुड़ी हुई है, यद्यपि उपन्यास में बावनदास बहुत कम समय के लिए अवतरित होता है और कथा के विकास में बहुत कम योगदान करता है।
- 'मैला आंचल' के प्रमुख स्त्री चरित्रों में से एक कमली तहसीलदार की बेटी है। वह युवा और प्रेम की प्यासी है। डॉ. प्रशांत के प्रेम बंधन में बँधकर उसका उपचार होता है, लेकिन इसी प्रेम बंधन में उसके चरित्र के कुछ पहलू भी उभरते हैं।
- कालीचरन युवा शक्ति का प्रतीक है। उसे कांग्रेस पार्टी से ज्यादा क्रांतिकारी सोशलिस्ट पार्टी आकर्षित करती है, जो 'ज़मीन हलवाहकों को' का नारा देती है तथा संघर्ष का मार्ग दिखाती है। वह 'बम फोड़ने वाले मस्ताने भगत सिंह' से भी प्रभावित है।
- डॉ. प्रशांत कुमार वास्तव में उपन्यास का केंद्रीय चरित्र है, जो स्वयं लेखक के विचारों का प्रतिनिधि है। डॉ. प्रशांत के चरित्र के विकसित होने का पर्याप्त अवकाश भी उपन्यास में मिलता है व लेखक की संवेदना भी उसे पर्याप्त मात्रा में मिली है।
- वर्णनात्मक पद्धति का आश्रय लेते हुए उपन्यासकार पात्रों के संबंध में अपनी ओर से वर्णन विश्लेषण करता चलता है। आलोच्य उपन्यास में इस पद्धति का अनेक अवसरों पर उपयोग किया गया है।
- उपन्यासकार ने सुषुप्त नवयौवना तारावती के अनावृत सौंदर्य को देखकर बावनदास के अंतर्मन में जगे पशु–भाव का विश्लेषण करने के साथ ही गाँधी जी की तस्वीर को देखकर उसके पशु–भाव के विलीन हो जाने का भी सुष्ठु चित्रण किया है।
- आलोच्य उपन्यास में चरित्रांकन–कौशल के संबंध में अंततः यह तथ्य भी उल्लेखनीय है कि इसके रचनाकार फणीश्वरनाथ 'रेणु' की मानव–मनोविज्ञान में गहरी पैठ रही है, जिससे वे अपने पात्रों के मनोभावों के उद्घाटन में अपेक्षित सफलता प्राप्त कर सके हैं।

नोट

- 'रेणु' ने आलोच्य उपन्यास में चरित्रांकन-कला का उत्कृष्ट प्रदर्शन किया है। पात्रों के चरित्र-चित्रण अथवा चित्रांकन के लिए उन्होंने वर्णनात्मक, नाटकीय और मनोविश्लेषणात्मक तीनों पद्धतियों का आश्रय लिया है।

12.6 शब्दकोश (Keywords)

1. विभक्त करना – बाँटना
2. प्रतिष्ठित – इज्जतदार
3. माहिर – निपुण
4. चतुर – चालाक
5. अनुराग – प्रेम
6. प्रेयसी – प्रेमिका
7. धूर्त – कपटी
8. निर्मित – निर्माण
9. तमाम – समस्त।

12.7 अभ्यास प्रश्न (Review Questions)

1. 'मैला आँचल' के पात्रों को कितने वर्गों में विभाजित किया गया है?
2. 'चरित्रों के वर्गीकरण' से आप क्या समझते हैं?
3. 'मैला आँचल' के प्रमुख पात्रों के चरित्र-चित्रण पर एक लेख लिखिए।
4. 'मैला आँचल' में चरित्र-चित्रण की किन पद्धतियों का प्रयोग किया गया है?
5. नाटकीय पद्धति से क्या अभिप्राय है?

उत्तर : स्व-मूल्यांकन (Answers : Self-Assessment)

1. लछमी
2. कालीचरण
3. कमली
4. (ख)
5. (क)
6. (ग)
7. सत्य
8. असत्य
9. असत्य।

12.8 सन्दर्भ पुस्तकें (Further Readings)

पुस्तकें मैला आँचल–फणीश्वरनाथ रेणु, नेशनल बुक ट्रस्ट।

नोट

इकाई–13: 'मैला आँचल' की संवाद-योजना

अनुक्रमणिका (Contents)

उद्देश्य (Objectives)

प्रस्तावना (Introduction)

13.1 मैला आँचल : कथोपकथन अथवा संवाद-योजना

13.1.1 कथावस्तु के विकास में सहायक संवाद-योजना

13.1.2 टूटी कड़ियों को जोड़ने तथा विगत घटनाओं की सूचना देने वाली संवाद-योजना

13.1.3 पात्रों के चरित्रोद्घाटन में सहायक संवाद-योजना

13.2 संवाद-योजना पर विचार के अन्य दृष्टिकोण

13.2.1 कथोपकथनों की संक्षिप्ति

13.2.2 स्वगत कथनों की न्यूनता

13.2.3 पात्रों की मनोनुकूलता

13.2.4 कथोपकथनों की स्वाभाविकता

13.3 सारांश (Summary)

13.4 शब्दकोश (Keywords)

13.5 अभ्यास प्रश्न (Review Questions)

13.6 सन्दर्भ पुस्तकें (Further Readings)

उद्देश्य (Objectives)

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् विद्यार्थी योग्य होंगे–

- 'मैला आँचल' के कथोपकथन एवं संवाद-योजना को समझने में;
- उपन्यास में प्रयुक्त संवाद-योजना के प्रकारों को जानने में;
- संवाद-योजना में उपयुक्त विचारणीय दृष्टिकोण पर प्रकाश डालने में।

प्रस्तावना (Introduction)

वर्ण्य वस्तु के अनुकूल संवाद-योजना का होना एक श्रेष्ठ उपन्यास के लिए अत्यंत महत्त्वपूर्ण है क्योंकि संवादों के माध्यम से ही उपन्यासकार कथावस्तु का विकास, टूटी कड़ियों को जोड़ना, विगत घटनाओं की सूचना देना तथा पात्रों का चरित्रोद्घाटन जैसे तथ्यों की प्रयोजन सिद्धि करता है। आलोच्य उपन्यास में 'रेणु' ने कथोपकथनों के माध्यम से प्रायः इन सभी प्रयोजनों की सिद्धि की है।

नोट

13.1 मैला आँचल : कथोपकथन अथवा संवाद-योजना

मैला आँचल की संवाद-योजना में उपन्यासकार ने कथोपकथनों के द्वारा कई प्रकार के प्रयोजनों की सिद्धि की है जिन पर आगे क्रमशः सोदाहरण प्रकाश डाला जा रहा है–

13.1.1 कथावस्तु के विकास में सहायक संवाद-योजना

इस प्रकार की संवाद-योजना के अंतर्गत उपन्यासकार दो या अधिक पात्रों के संवादों के माध्यम से कथावस्तु का विकास करता है। आलोच्य उपन्यास में इस प्रकार की संवाद-योजना कई स्थलों पर की गई है। एक उदाहरण अवलोकनीय है–

"मौसी!"

"कौन?"

"मैं हूँ डाक्टर! गनेश कहाँ है?"

"डागडरबाबू! आप? आइए, बैठिए। गनेश सो रहा है।.... मैं तो अचकचा गई, किसने मौसी कहकर पुकारा!" बूढ़ी की आँखें छलछला आती हैं।

"मौसी! सुना है तुम एक खास किस्म का हलवा बनाती हो?"

मौसी हँस पड़ती है, "अरे दुर! किसने कहा तुमसे? पगली कमला ने कहा होगा जरूर। ....कमला कैसी है अब? इधर तो बहुत दिन से आई ही नहीं है। पहले तो रोज आती थी।"

"अच्छी है।....अच्छी हो जाएगी। मौसी! एक बात पूछूँ।....तुम्हारी कोई बहन, माँ बेटी या और कोई....सहरसा इलाके में, हनुमानगंज के पास कभी रहती थी?" डाक्टर अपने बेतुके सवाल पर खुद हँसता है।

"सहरसा इलाके में हनुमानगंज के पास?...रहो, याद करने दो।.....नहीं तो? क्यों? क्या बात है?"

"यों ही पूछता हूँ। ठीक तुम्हारे ही जैसी एक मौसी वहाँ भी है।" बात को बदलते हुए डाक्टर कहता है, "मुझे एक फूल की डाली दो न, मौसी!"

उफ! ....सचमुच डायन है यह बुढ़िया। इसकी मुस्कराहट में जादू है। स्नेह की बरसा करती है। ऐसी आकर्षक मुस्कराहट?

गनेश बड़ा भोला-भाला लड़का है! मौसी कहती है, "किसके साथ खेले? गाँव के बच्चे अपने साथ खेलने नहीं देते। ...मेरे ही साथ खेलता है।"

"गनेश जी, जरा पेट दिखाइए तो!....मौसी!.....कल इसे सुबह ले आना तो! खून लूँगा। होंठ मुरझाए रहते हैं।"

गनेश को अब एक मामा मिल गया।

"सचमुच ऐसा हलवा कभी नहीं खाया मौसी!....विश्वास करो।....गनेश को भी दो! कोई हरज नहीं।"

"मामा देखो!" गनेश गले में स्टेथोस्कोप लटकाकर हँसता है।

"वाह! मेरा भानजा डाक्टर बनेगा।" (पृष्ठ–98, 99)

उपर्युक्त संवाद-योजना के माध्यम से उपन्यासकार ने मौसी पारबती संबंधी प्रकरण को गति प्रदान करते हुए दिखाया है कि डॉ. प्रशांत ने उस मौसी से संपर्क बढ़ाना आरंभ कर दिया है जिसे गाँव के लोग डायन कहकर लांछित करते रहते थे।

नोट्स गाँव में 'डायन' के रूप में प्रसिद्ध होते हुए भी डॉ. प्रशांत द्वारा पारबती मौसी से संपर्क बढ़ाना एक अच्छाई का प्रतीक है।

13.1.2 टूटी कड़ियों को जोड़ने तथा विगत घटनाओं की सूचना देने वाली संवाद-योजना

उपन्यासकारों के समक्ष कथानक की प्रत्येक घटना को ज्यों-का-त्यों रूप में प्रस्तुत करने में पर्याप्त कठिनाई रहती है, जिससे बचने के लिए वे अनेक बातों की सूचना पात्रों के वार्तालाप के माध्यम से दे देते हैं। ऐसा करने से एक ओर तो उपन्यासकार को प्रत्येक घटना का अपनी ओर से विवरण देने की विवशता से छूट मिल जाती है, दूसरी ओर कथोपकथन के माध्यम से कथानक की किसी टूटी कड़ी की सूचना का मिल जाना भी स्वाभाविक प्रतीत होता है। आलोच्य उपन्यास में भी यत्र-तंत्र इस प्रकार की संवाद-योजना की गई है। एक उदाहरण दृष्टव्य है–

"डाक्टर साहब!"

"कौन?"

"विश्वनाथप्रसाद"

"आइए। कहिए क्या है?"

"डाक्टर साहब, जरा एक बार मेरे यहाँ चलिए। मेरी लड़की बेहोश हो गई है।"

"बेहोश! क्या उम्र है? इससे पहले भी कभी बेहोश हुई थी?"

"जी! दो-तीन बार और ऐसा ही हुआ था। उम्र? यही सोलह-सत्रह साल धर लीजिए। जरा जल्दी.....।"

"चलिए।" (पृष्ठ–53)

X X X X

बाहर आकर डाक्टर तहसीलदार से कहता है, "घबराने की बात नहीं, दवा भेज देता हूँ। इसके पहले कितनी देर बेहोश रहती थी?"

"करीब एक घंटा। जोतखी जी से एक बार जंतर बनवा के दिया। झाड़-फूँक भी करवा कर देखा। डाक्टर साहब, बस यही मेरा बेटा, यही मेरी बेटी....सबकुछ यही है।"

"ठीक हो जाएँगी।"

सेंटर में आकर डॉक्टर सोचता है, क्या दिया जाय! मीठी दवा! कार्मिनेटिव मिक्श्चर या ब्रोमाइड! .... "अजी, तुम्हारा क्या नाम है?"

"मेरा नाम, जी, नाम रनजीत।"

"तहसीलदार साहब के यहाँ कितने दिनों से नौकरी करते हो?"

"बहुत दिन से। लड़कैयाँ से।.... एक ठो बीड़ी है तो दीजिए दागदरबाबू।"

"प्यारू, रनजीत को बीड़ी पिलाओ।"

प्यारू बीड़ी दियासलाई दे जाता है। बीड़ी सुलगाकर रनजीत अपने आप कहता है, "दागदरबाबू! तहसीलदार को दीन-दुनियाँ में बस यही एक बेटी है। कितना मानत-मनौती के बाद कमला मैया ने निहारा भी तो बेटी ही हुई। मगर...!"

रनजीत बीड़ी की राख झाड़कर चुप हो जाता है। डाक्टर ने लक्ष्य किया है, रनजीत ने 'मगर' पर आकर विराम दे दिया है।

नोट

"मगर क्या?"

"यही देखिए न! तीन जगह बातचीत चली मगर....पहली जगह से तो पान देने की बात भी पक्की हो गई थी। ठीक तिलक-पान के दिन लड़के की माँ मर गई। दूसरी जगह बातचीत ठीक हुई तो उसके घर में आग लग गई। तीसरे लड़के को 'मैया' हो गया, इंतकाल हो गया। अब कोई लड़का वाला तैयार ही नहीं होता है। हजार, दो हजार, पाँच हजार रुपैया भी कबूलते हैं, मगर...। आखिर में एक 'पछवरिया कैथ' को घर-जमैया रखने के लिये लाए, बस उसी दिन से कमली को मिरगी आने लगी।" (पृष्ठ–54, 55)

संदर्भगत संवाद-योजना के अंतर्गत उपन्यासकार ने डॉ. प्रशांत, तहसीलदार विश्वनाथप्रसाद और नौकर रनजीत के कथनों-उपकथनों के माध्यम से कमला के संदर्भ में इन तथ्यों का परिचय दिया है कि वह तहसीलदार विश्वनाथप्रसाद की इकलौती संतान हैं इसके साथ ही उसने इस तथ्य की भी सूचना प्रदान कर दी है कि कमला को लोग मनहूस मानकर उससे विवाह नहीं करना चाहते, क्योंकि जहाँ कहीं भी उसके विवाह की चर्चा चलाई गई थी, वहीं कुछ न कुछ अनहोनी घटनाएँ घटित हो गई थी।

टास्क क्या 'मैला आँचल' की संवाद-योजना उपन्यास कला की दृष्टि से पूर्णत: सफल है? अपने विचार रखिए।

13.1.3 पात्रों के चरित्रोद्घाटन में सहायक संवाद-योजना

कथोपकथन अथवा संवाद योजना के माध्यम से उपन्यासकार पात्रों के चरित्र-चित्रण के विभिन्न पहलुओं का उद्घाटन करके उनका चारित्रिक विकास भी करता है। आलोच्य उपन्यास में ऐसी संवाद योजना भी अनेक स्थलों पर उपलब्ध होती है। एक उदाहरण अवलोकनीय है–

बालदेव जी जगे ही हुए हैं। उठते ही दूर पेड़ की छाया में किसी को जाते देखते हैं।.....ओ। बिदियारथी जी अभी जा रहे हैं। इसीलिये बैल भड़के थे!

"साहेब बंदगी!" लछमी पैर छूकर साहेब बंदगी करती है।

बालदेव जी मिनमिनाकर कुछ कहते हैं और सीधे अपनी आसनी पर चले जाते हैं।

"मेरा कंबल कौन ओढ़ा था?" बालदेव जी बिछावन पर पड़े हुए कंबल को नाक सिकोड़ कर देखते हुए पूछते हैं, "मेरा कंबल क्यों ओढ़ा था वह?"

"कौन?"

"और कौन? मालूम होता है सपना देखती हो!" बालदेव जी का माथा गर्म है।

"रामफल! तुम लोग खा लो! हमको भूख नहीं! हम नहीं खाएँगे।" बालदेव जी जोर-जोर से कंबल झाड़ते हुए कहते हैं, "दुनियाँ भर का आदमी आकर आसन पर सोएगा।"

लछमी कई दिनों से देखती हैं, बालदेव जी बात-बात पर बिगड़ जाते हैं। वह आकर दरवाजे के पास खड़ी हो जाती हैं, "आसन झाड़ा हुआ है।....बिदियारथी जी तो ओसारे पर बैठे थे।"

"क्यों? ओसारे पर क्यों थे?... घर में क्यों नहीं बैठते हैं बिदियारथी जी? सूने घर में जैसा घर, वैसा ओसारा।" बालदेव जी के ओंठ फड़क उठते हैं।

"बिदियारथी जी आते हैं सतसंग करने के लिये...!"

"हाँ, हाँ! खूब समझते हैं। सतसंग...! हुँ...सतसंग।" बालदेव जी घृणा से मुँह सिकोड़ लेते हैं।

(पृष्ठ–272)

नोट

X X X X

"सतसंग ही करना है तो उनकी आसनी यहीं लगा दो। दिन-रात खूब सतसंग करती रहना।" बालदेव जी होंठ टेढ़ा करके एक अजीब मुद्रा बनाकर, हाथ चमकाकर कहते हैं, "सतसंग!"

"गुसाईं साहब!" लछमी के नथुने फड़क उठते हैं, "ऐसा क्यों बकते हैं!"

"तुम हमकों टिरिकबाजी दिखाती हो?....हम सब समझते हैं।"

"क्या समझते हैं?"

"बाँहे क्यों मरोड़ती है लछमी?....मारपीट करेगी क्या!"

गुस्सा से थरथर काँपती है, "बोलिए! क्या समझते हैं.... रंडी समझ लिया है क्या? ठीक ही कहा है जानवर की मूँड़ी को पोसने से गले की फाँसी छुड़ाता है मगर आदमी की मूँड़ी...."

"हम तुम्हारे पालतू कुत्ता नहीं। हम अभी चन्नपट्टी चले जाएँगे, अभी!" बालदेव जी उठकर खड़े होते हैं।

"गुस्सा मत होइए गोसाई साहेब! करोध पाप को मूल! जाते-जाते देह में अकलंग लगाकर मत जाइए।"

X X X X

लछमी चुपचाप किवाड़ के सहारे खड़ी आँसू पोंछते हुए सिसकती है, "मेरी तकदीर ही खराब है।"

लछमी रो रही है!....बालदेव जी का गुस्सा धीरे-धीरे उतर जाता है। वह उठते हैं, लछमी के सर पर हाथ फेरते हुए कहते हैं, "रोओ मत! तुम पर भला संदेह करेंगे? रोओ मत! लेकिन तुमको अब खुद समझना चाहिए कि तुम अब मठ की कोठारिन नहीं, मेरी इसतरी हो। लोग क्या कहेंगे.....।"

लछमी बालदेव जी के पाँव पर गिर पड़ती है, "छमा प्रभु! दासी का अपराध....।"

"छि:छि! लछमी, उठो! चलो भूख लगी है।" (पृष्ठ–273)

उपर्युक्त संवाद-योजना के माध्यम से उपन्यासकार ने लछमी और बालदेव के चरित्र में कई पहलुओं का उद्घाटन किया है, जैसे बालदेव की शंकालु प्रवृत्ति, लछमी की तेजस्विता और क्षमाशीलता आदि।

स्व-मूल्यांकन (Self-Assessment)

रिक्त स्थानों की पूर्ति करें (Fill in the blanks) :

1. उपन्यास के कथोपकथनों के द्वारा कई प्रकार के प्रयोजनों की .... की गई है।
2. .... विश्वनाथप्रसाद की इकलौती संतान है।
3. 'मैला आँचल' के कथोपकथनों में स्वाभाविकता की विशेषता .... पाई जाती है।

13.2 संवाद-योजना पर विचार के अन्य दृष्टिकोण

उद्देश्यपरकता की दृष्टि से संवाद-योजना पर उपर्युक्त तीन शीर्षकों के अंतर्गत विचार करने के अतिरिक्त संवाद-योजना पर इन दृष्टिकोण से भी विचार किया जाता है–

1. कथोपकथनों की संक्षिप्ति,
2. स्वगत-कथनों की न्यूनता,
3. पात्रों की मनोनुकूलता एवं
4. कथोपकथनों की स्वाभाविकता।

इन तथ्यों की दृष्टि से 'मैला आँचल' की कथोपकथन योजना पर आगे सोदाहरण प्रकाश डाला जा रहा है–

नोट

13.2.1 कथोपकथनों की संक्षिप्ति

कथोपकथनों की संक्षिप्ति से अभिप्राय यह है कि पात्रों द्वारा एक-दूसरे के प्रति कहे गये कथन संक्षिप्त होने चाहिएँ। आलोच्य उपन्यास में इस प्रकार के कथोपकथनों की अनेक अवसरों पर योजना की गई है। एक उदाहरण अवलोकनीय है–

बावनदास हँसकर कहता है, "मुँह क्यों छिपाते हैं? रामबुझावनसिंह जी! आज खुलकर खेला होना चाहिये। मुँह मत छिपाइए।"

"दास जी, हमारा क्या कसूर? आप तो जानते ही हैं..."

"सिंह जी, बातचीत कुछ नहीं। गाड़ियाँ जाएँगी खगड़ा!...लौटाइए।"

"गाड़ी त ना लौटी।"

"लौटी ना त ठाढ़ रही।" अढ़ाई हजार रूपए हिस्से में मिल चुके हैं रामबुझावनसिंह को। क्या किया जाए?

"दास जी ठहरिए! ....हम तुरंत आते हैं।"

"अच्छी बात! ले आइए आज जो लोग पर्दे में है। जाइए।" (पृष्ठ–295)

X X X X

दुलारचंद कापरा कहता है, "ऊँह! ऐसा जानता तो कटहा से ही दो रेफ्यूजिनी को उठा लाते। सब मजा किरकिरा कर दिया।"

कड़कड़-कड़क्! सप्लाई इंसपेक्टर चतुरानंदसिंह जी मुर्गी की टाँग चबाते हैं। कड़कड़-कड़कू! बाहर साइकिल की आवाज होती है।

"कौन?"

"सलाम! हम रामबुझावनसिंह।"

"क्या हाल है?"

"सब चौपट! बावनदास....."

"आँयें! बावनदास? कहाँ?"

....सभी गुम हो गए। बेरसपतिया बावर्ची इशारे से कहता है हवलदार साहब को, "मिल सकती है मुर्गी...., मगर,,,," रुककर दोनों हाथों की उँगलियाँ दिखलाता है।

"हवलदार साहब कहते हैं," सभी एक साथ लंबी साँस लेते हैं।

"क्या हो अब?" सभी एक साथ लंबी साँस लेते हैं।

"अकेला है या...?"

"एकदम अकेला!"

"मगर इसका मतलब जानते हैं?"

"दुलारचंद जी!... कापरा जी!" (पृष्ठ–296)

उपर्युक्त संवाद योजना के अंतर्गत सभी पात्रों के कथन-उपकथन संक्षिप्त है। यह उत्कृष्ट संवाद-योजना का उत्तम नमूना है।

13.2.2 स्वगत कथनों की न्यूनता

स्वगत-कथनों की योजना उन स्थलों पर की जाती है, जहाँ कोई पात्र अपने विषय में अथवा किसी दूसरे पात्र के

नोट

संबंध में अकेला बैठा-बैठा सोचता रहता है। यद्यपि यह भी संवाद योजना का ही एक अंग होता है, तो भी स्वगत-कथनों की अधिक मात्रा में योजना करना उत्तम नहीं माना जाता। आलोच्य उपन्यास में स्वगत-कथनों की योजना सीमित मात्रा में ही की गई है। एक उदाहरण द्रष्टव्य है–

बालदेव जी अपनी मसहरी में आकर छिप जाते हैं। लेटकर सोचते हैं–"नहीं, अब यहाँ रहना अच्छा नहीं। वह किस मुँह से यहाँ रहेगा?....लछमी की ओर अब यह निगाह उठा; अपने समाज में, अपनी जाति में रहेगा।...जाति बहुत बड़ी चीज है।....जाति की बात ऐसी है कि सभी बड़े-बड़े लीडर अपनी-अपनी जाति का पाटी में हैं। यह तो राजनीति है! लछमी क्या समझेगी?" (पृष्ठ–302, 03)

टास्क 'मैला आँचल' के संवाद, उपन्यास की आत्मा को रूपायित करने में कहाँ तक सफल हुए हैं? तर्कपूर्ण उत्तर दीजिए।

13.2.3 पात्रों की मनोनुकूलता

संवाद-योजना की दृष्टि से यह तथ्य भी महत्त्वपूर्ण होता है कि विभिन्न पात्रों द्वारा कही गई बातें उनकी मन:स्थिति तथा सामाजिक स्थिति के अनुकूल होनी चाहिएँ। कहना न होगा कि 'रेणु' की कथोपकथन-योजना इस कसौटी पर खरी उतरती है। एक उदाहरण अवलोकनीय है, जिसमें गाँव में पुलिस और मिलिट्री के आगमन से भयभीत गाँव वालों की मनोदशा तथा सामाजिक स्थिति के अनुकूल ही उनकी संवाद-योजना का प्रस्तुतीकरण किया गया है–

"अरे, क्या बात है?....कौन झूठमूठ खबर लाया?"

"झूठ नहीं! ततमाटोली का बबुअन अभी दौड़ता-हाँफता आया है। उसको इमान-धरम सौर माय का किरिया खिलाकर पूछिए तो!"

"ऐ!...सुनो! मोटरगाड़ी की आवाज हुई न?"

"हाँ....पछियारीटोला के पास आ रही है मोटरगाड़ी।"

"....भागो! एकदम लाल इड़हुल रंग की मोटरगाड़ी आ रही है।"

"....भागो किधर? मोटरगाड़ी तो आ गई!" (पृष्ठ–280)

"एह! अरे बाप! मालूम होता है बुढ़िया को कीरिच से ज़िबाह कर रहा है।...हे भगवान!"

कालीचरन की माँ की डकराहट में कुछ ऐसी बात थी कि एस.पी. साहब का दिल पसीज गया। उन्होंने कहा, "छोड़ दो!...छोड़ दो बुढ़िया को!"

बुढ़िया अचानक चुप हो गई।

गाँव-घर, बगीचा-बाड़ी और अगवारे-पिछवारे में दम साधकर छिपे लोगों ने समझा, बुढ़िया को सचमुच ज़िबाह कर दिया।

"किसकी बोली है, पहले पहचान लो।...टट्टी में कान लगाकर सुनो।"

"अगमू चौकीदार है।...सुमरितदास भी है।"

"जै भगमान! जै भगमान!"

"ए भगमान भगत् भगमान भगत...दरवाजा खोलो जी!" सुमरितदास खँखारते हैं, "अह-ख्-ख्!...भगमान भगत! डरने की बात नहीं।.....सिकरेट है, सिकरेट? मलेटरी साहेब हैं.... पैसा देते है।"

नोट

पछियारी घर में संदूक के पीछे भगमान भगत दम साधकर घुसके हुए हैं। "आहि रे दादा रे दादा! ई हमरे नाम लेके....।" भगताइन फिसफिसाकर कहती है, "अरे जा न!...कौनो बाघ थोड़ो बा!"

भगत डाँटता है–"अरे, चुप!"

"अहूँख!....के? दास जी?" भगताइन खँखारकर अंदर से पूछती है, "का लेंब हो?"

"अरे खोलो भगताइन!....भगत जी कहाँ हैं?"

भगताइन टीन की टट्टी खोलते हुए देखती है, "बाप रे बाप!....ई कौन देस के आदमी बा रे देबा? हुँड़ार जैसन मुँह बा।...."

"दास जी! अंदर आके जे लेब से ले जा।....बुढ़वा के बुखार बा, हमरो सिर बथता.....।" (पृष्ठ–282)

उपर्युक्त कथोपकथनों पर दृष्टिपात किया जाए तो स्पष्ट हो जाता है कि गाँव में कालीचरन की तलाश में आए हुए गोरखा बटैलियन के सैनिकों को देखकर संपूर्ण गाँव में ऐसा आतंक परिव्याप्त हो जाता है कि सभी लोग छिप जाते हैं। कालीचरन की माँ जब गिरफ्तारी के भय से, जोर-जोर-से डकारने लगती है तो भोले ग्रामीण यह कल्पना करने लगते हैं कि शायद उसका गला काटा जा रहा है। भगत और भगताइन के कथोपकथन भी उनकी मनोदशा के सर्वथा अनुकूल हैं।

स्व-मूल्यांकन (Self-Assessment)

निम्नलिखित कथनों में सत्य अथवा असत्य की पहचान करें

(State Whether the following statements are True or False) :

4. गाँव के लोग पारबती मौसी को डायन कहकर लांछित करते रहते थे।
5. कमला को दिल का दौरा पड़ने की बीमारी थी।
6. बालदेव शंकालू प्रवृत्ति का व्यक्ति था।

13.2.4 कथोपकथनों की स्वाभाविकता

कथोपकथनों का स्वाभाविक होना उनकी एक अन्य विशेषता स्वीकार की जाती है, जिसका अभिप्राय यह है कि विभिन्न पात्रों के संवाद ऐसे होने चाहिए जैसे कि वे साधारण जीवन में बातें कर रहें हों अर्थात् उनमें कृत्रिमता नहीं होनी चाहिए। 'मैला आँचल' के कथोपकथनों में यह विशेषता सर्वत्र पाई जाती है। एक उदाहरण प्रस्तुत है–

"देखो रनजीत, तीन खुराक दवा है। मीठी दवा है। तुम्हारी कमली दैया आराम हो जाएँगी। कल सुबह फिर एक बार खबर देना। समझे!"

"तीन खोराक! खाएगी क्या?"

"अभी? अभी रोटी-दूध।"

"रनजीत!" एक आदमी दौड़ता हुआ आता है।

"कौन रामदेल, क्या है?"

"कमली दैया फिर बेहोश हो गईं। तहसीलदार साहेब कहिन हैं कि दागदरबाबू फिर एक बार ज़रा तकलीफ करें।"

डाक्टर घड़ी देखता है।....नौ बजकर दस मिनट। कुछ ही देर में समाचार होंगे। डाक्टर कुछ सोचकर कहता है, "रनजीत! वह बक्सा उठाओ!...ले चलो।"

"बेतार का खबर?"

"हाँ, तुम्हारी कमली दैया का इलाज बेतार से ही होगा।"

कमला फिर पहले की तरह बेहोश पड़ी हुई है। उसकी आँखें बंद हैं। बाल बिखरे हुए हैं। डाक्टर को रोग का निदान

मिल गया है। वह अपने बैग से शीशी, सिरिंज वगैरह निकालता है।

"सुई? सुई नहीं।" कमला फिर होश में आती है।

"बगैर सुई के आपका रोग आराम नहीं होगा।" डाक्टर सिरिंज ठीक करता है।

"दवा दीजिए डाक्टर साहब! मैं सुई नहीं लूँगी।"

"फिर डर लगा था?"

"हाँ।"

"रनजीत, दवा की शीशी कहाँ है? लाओ, बक्सा यहाँ लाकर रखो।....हाँ, पी लीजिए।.....ठीक है। कैसी है दवा? मीठी है न?" (पृष्ठ–55, 56)

उपर्युक्त उद्धरण में स्वाभाविकता का पूर्णतः निर्वाह किया गया है। भले डाक्टर दवा के बारे में उसी प्रकार निर्देश दिया करते हैं, जैसे डाक्टर प्रशांत को चित्रित किया गया है। दवा न पीने की जिद करने वाले रोगी भी इंजेक्शन लगाए जाने के भय से उसी प्रकार दवा पी लिया करते हैं, जैसे कमली को चित्रित किया गया है।

उपरोक्त विवेचन से स्पष्ट है कि 'मैला आँचल' की संवाद-योजना उपन्यास कला की दृष्टि से पूर्णतः सफल है।

13.3 सारांश (Summary)

- संवाद-योजना के माध्यम से उपन्यासकार ने मौसी पारबती संबंधी प्रकरण को गति प्रदान करते हुए दिखाया है कि डॉ. प्रशांत ने उस मौसी से संपर्क बढ़ाना आरंभ कर दिया है जिसे गाँव के लोग डायन कहकर लांछित करते रहते थे।
- उपन्यासकारों के समक्ष कथानक की प्रत्येक घटना को ज्यों-का-त्यों रूप में प्रस्तुत करने में पर्याप्त कठिनाई रहती है, जिससे बचने के लिए वे अनेक बातों की सूचना पात्रों के वार्तालाप के माध्यम से दे देते हैं।
- उपन्यासकार ने डॉ. प्रशांत, तहसीलदार विश्वनाथप्रसाद और नौकर रनजीत के कथनों-उपकथनों के माध्यम से कमला के संदर्भ में इन तथ्यों का परिचय दिया है कि वह तहसीलदार विश्वनाथप्रसाद की इकलौती संतान है।
- कथोपकथन अथवा संवाद-योजना के माध्यम से उपन्यासकार पात्रों के चरित्र-चित्रण के विभिन्न पहलुओं का उद्घाटन करके उनका चारित्रिक विकास भी करता है।
- कथोपकथनों की संक्षिप्ति से अभिप्राय यह है कि पात्रों द्वारा एक-दूसरे के प्रति कहे गये कथन संक्षिप्त होने चाहिएँ। आलोच्य उपन्यास में इस प्रकार के कथोपकथनों की अनेक अवसरों पर योजना की गई है।
- स्वगत-कथनों की योजना उन स्थलों पर की जाती है, जहाँ कोई पात्र अपने विषय में अथवा किसी दूसरे पात्र के संबंध में अकेला बैठा-बैठा सोचता रहता है।
- संवाद-योजना की दृष्टि से यह तथ्य भी महत्त्वपूर्ण होता है कि विभिन्न पात्रों द्वारा कही गई बातें उनकी मन:स्थिति तथा सामाजिक स्थिति के अनुकूल होनी चाहिएँ। कहना न होगा कि 'रेणु' की कथोपकथन-योजना इस कसौटी पर खरी उतरती है।
- कथोपकथनों का स्वाभाविक होना उनकी एक अन्य विशेषता स्वीकार की जाती है, जिसका अभिप्राय यह है कि विभिन्न पात्रों के संवाद ऐसे होने चाहिए जैसे कि वे साधारण जीवन में बातें कर रहें हों अर्थात् उनमें कृत्रिमता नहीं होनी चाहिए।

13.4 शब्दकोश (Keywords)

1. श्रेष्ठ – बढ़िया
2. सोदाहरण – उदहारण सहित

नोट

3. प्रकाश – रोशनी
4. अवलोकनीय – देखने योग्य
5. समक्ष – सामने
6. विवशता – मजबूरी
7. दियासलाई – माचिस
8. इंतकाल – मृत्यु
9. कबूलना – स्वीकार करना
10. शंकालु – शक करने वाला।

13.5 अभ्यास प्रश्न (Review Questions)

1. संवाद-योजना की दृष्टि से 'मैला आँचल' एक सफल रचना है। इस कथन पर अपने विचार प्रस्तुत कीजिए।
2. 'रेणु' ने कथोपकथनों के माध्यम से प्रयोजनों की सिद्धि किस प्रकार की है?
3. पात्रों की मनोनुकूलता से क्या अभिप्राय है?
4. कथोपकथनों की स्वाभाविकता से आप क्या समझते हैं?

उत्तर : स्व-मूल्यांकन (Answers : Self-Assessment)

1. सिद्धि
2. कमला
3. सर्वत्र
4. सत्य
5. असत्य
6. सत्य।

13.6 सन्दर्भ पुस्तकें (Further Readings)

पुस्तकें मैला आँचल–फणीश्वरनाथ रेणु, नेशनल बुक ट्रस्ट।

नोट

इकाई–14: 'मैला आँचल' की तात्विक समीक्षा

अनुक्रमणिका (Contents)

उद्देश्य (Objectives)

प्रस्तावना (Introduction)

14.1 कथावस्तु के आधार पर

14.2 पात्र-योजना एवं चरित्र-चित्रण के आधार पर

14.2.1 पुरुष पात्र

14.2.2 नारी पात्र

14.3 देशकाल और वातावरण के आधार पर

14.4 कथोपकथन या संवाद-योजना के आधार पर

14.5 भाषा-शैली के आधार पर

14.6 उद्देश्य के आधार पर

14.7 सारांश (Summary)

14.8 शब्दकोश (Keywords)

14.9 अभ्यास प्रश्न (Review Questions)

14.10 सन्दर्भ पुस्तकें (Further Readings)

उद्देश्य (Objectives)

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् विद्यार्थी योग्य होंगे–

- 'मैला आँचल' की कथावस्तु का सार समझने में;
- पात्र-योजना एवं चरित्र-चित्रण का संक्षिप्त विवरण जानने में;
- 'मैला आँचल' के वातावरण एवं संवाद-योजना पर प्रकाश डालने में;
- उपन्यास की भाषा-शैली और उद्देश्य को समझने में।

प्रस्तावना (Introduction)

यदि किसी उपन्यास में तत्वों की अपेक्षित विशेषताओं के अनुसार योजना की जाती है तो उस उपन्यास को औपन्यासिक दृष्टि से सफल रचना स्वीकार किया जाता है। किसी तत्व विशेष की न्यूनता होने पर उस उपन्यास को दोषपूर्ण रचना माना जाता है। अत: हम तत्वों के आधार पर ही आलोच्य उपन्यास की सफलता-असफलता पर विचार करेंगे।

आलोचकों द्वारा उपन्यास की तात्विक समीक्षा हेतु निम्नांकित छह तत्व स्वीकार किये गए हैं–

1. कथावस्तु
2. पात्र-योजना एवं चरित्र-चित्रण

नोट

3. देशकाल और वातावरण
4. कथोपकथन या संवाद-योजना
5. भाषा-शैली
6. उद्देश्य।

14.1 कथावस्तु के आधार पर

उपन्यास की कथावस्तु की दृष्टि से यह तथ्य आवश्यक समझा जाता है कि वह अत्यधिक लंबी अथवा पेचीदा न हो और उसमें स्वाभाविकता, रोचकता, एकान्विति और प्रवाहमयता के गुण विद्यमान हों। जहाँ तक आलोच्य उपन्यास की कथावस्तु का संबंध है, वह न तो लघु है और न अत्यधिक लंबी अर्थात् आकार की दृष्टि से उसकी स्थिति मध्यवर्ती है। 'मैला आँचल' की कथावस्तु दो खंडों में विभक्त है। इसके प्रथम खंड में चवालीस परिच्छेद हैं जबकि द्वितीय खंड तेईस परिच्छेदों में विभक्त है। जहाँ तक कथावस्तु की एकान्विति या परस्पर एकसूत्रता का प्रश्न है, यह कहा जा सकता है कि आलोच्य उपन्यास की कथावस्तु में मूल कथासूत्र की वह अंतर्धारा नहीं मिलती, जो मुंशी प्रेमचंद के उपन्यासों की जान है। हाँ, इस विशृंखलता का मूल कारण यह है कि 'मैला आँचल' किसी व्यक्ति विशेष या कहिए नायक अथवा नायिका की कहानी पर आधारित उपन्यास नहीं है। इस उपन्यास का नायक एक प्रकार से मेरीगंज नामक गाँव है, जिससे संबंधित आठ-दस पात्रों की कहानी इसमें दी गई है। ये पात्र हैं–

1. तहसीलदार विश्वनाथप्रसाद और उनकी पुत्री कमला
2. ठाकुर रामकिरपालसिंघ और उनका भतीजा हरगौरी
3. कालीचरन और लछमी
4. बालदेव और लछमी
5. सेवादास, रामदास और लछमी
6. डॉ. प्रशांत और कमला।

इन मुख्य पात्रों संबंधी उपकथाओं के साथ-साथ आलोच्य उपन्यास में सत्तर-अस्सी अन्य छोटे-छोटे प्रसंग भी हैं। इतनी अधिक उपकथाओं व प्रसंगों के होते हुए भी 'मैला आँचल' की कथावस्तु सर्वथा विशृंखलित नहीं है। अपितु ये सभी कथाएँ और प्रसंग मेरीगंज गाँव की मुख्य कथा से जुड़े हुए हैं।

संभावना की दृष्टि से 'मैला आँचल' की कथावस्तु इतनी अधिक विश्वसनीय है कि वह उत्तर भारत के किसी भी गाँव के निवासियों की जीती-जागती तस्वीर प्रतीत होती है। जहाँ तक रोचकता का संबंध है, 'मैला आँचल' में अनेक रोचक प्रसंगों की योजना की गई है। प्रवाहमयता की दृष्टि से कहा जा सकता है कि कथावस्तु में अनेक उपकथाओं की योजना होने के फलस्वरूप उसका विकास मंथर गति से तो अवश्य हुआ है, लेकिन वह कहीं भी नीरस नहीं हुई है। संक्षेप में कहा जा सकता है कि कथावस्तु की दृष्टि से आलोच्य उपन्यास की गणना सफल उपन्यासों के वर्ग में ही की जाएगी।

टास्क 'मैला आँचल' की तात्विक समीक्षा पर अपने विचार व्यक्त कीजिए।

14.2 पात्र-योजना एवं चरित्र-चित्रण के आधार पर

14.2.1 पुरुष पात्र

'मैला आँचल' में बहुत-से पुरुष पात्र हैं, किंतु उसके प्रमुख पुरुष पात्रों में तहसीलदार विश्वनाथप्रसाद, ठाकुर रामकिरपालसिंघ, बालदेव, खेलावनसिंह यादव, कालीचरन और डॉ. प्रशांत की ही गणना की जा सकती है। इनके

अतिरिक्त सुमरितदास, सेवादास, रामदास, हरगौरी, बावनदास, जोतखी (ज्योतिषी) काका तथा चलित्तर कर्मकार आदि पात्र गौण पात्रों के अंतर्गत आते हैं। अन्य गौण पात्रों को भी उपन्यासकार ने आलोच्य कृति में अनावश्यक रूप से भरती नहीं किया है, अपितु वे कथावस्तु के किसी अंश विशेष से संबद्ध हैं। सहदेव मिश्र, खलासी जी, पाइंट मैन, बाबू रामकिशन, विद्यार्थी रामलाल आदि ऐसे ही पुरुष पात्र हैं।

इन पुरुष पात्रों में से 'डॉक्टर प्रशांत' उपन्यास का मुख्य पात्र रहा है और यदि किसी पात्र को आलोच्य उपन्यास का नायक स्वीकार करना हो तो उसका सर्वाधिक सबल दावेदार वह ही है। कदाचित् अवैध संतान के रूप में जन्मा डॉ. प्रशांत एक बंगाली परित्यक्ता युवती द्वारा पाला-पोसा जाता है। पढ़ने में कुशाग्रबुद्धि होने के कारण वह डाक्टरी की पढ़ाई में इतने उच्च अंक प्राप्त करता है कि सरकार उसको छात्रवृत्ति देकर विदेश भेजना चाहती है। किंतु डॉ. प्रशांत को भारत की धरती से ही ऐसा असीम प्यार है कि वह बिहार प्रांत के किसी गाँव के अस्पताल में नियुक्त होकर मलेरिया और काला-आज़ार के संबंध में अनुसंधान करना चाहता है और इसीलिए स्वास्थ्य मंत्री से कहकर अपनी नियुक्ति मेरीगंज में करा लेता है। यहाँ पर वह ऐसी लगन से कार्य करता है कि ग्रामवासी उसे देवता समझने लगते हैं। कमला के इलाज के संदर्भ में वह कामवश उसके साथ अवैध संबंध स्थापित कर लेता है, जो उसके चरित्र की एकमात्र दुर्बलता है। हाँ, कमला को अपनी पत्नी के रूप में स्वीकार करके वह इस त्रुटि का भी सुधार कर लेता है।

अन्य पात्रों में से 'बालदेव' अहिंसा के सिद्धांत में आस्था रखने वाले कांग्रेसी कार्यकर्ता के रूप में चित्रित किया गया है। माँ-बाप विहीन बालदेव यद्यपि चन्नपट्टी का रहने वाला है तथापि मेरीगंज में कांग्रेस पार्टी की जड़ जमाने तथा दशा सुधारने के लिए वह मेरीगंज में ही रहने लगता है। तदनंतर चाहे मेरीगंज में अस्पताल का निर्माण-कार्य हो या मठ पर भोज हो, या महंती का टीका मिलने वाला हो, सभी कार्यों में बालदेव के भी मत का आदर किया जाता है। फुलिया ने तो खलासी जी से यहाँ तक कहा था कि बालदेव की बातें सभी लोग मानते हैं। अत: उसको इस तथ्य की चर्चा बालदेव से करनी चाहिए कि वे खलासी के साथ फुलिया का चमौना (विवाह) करा दें। बालदेव को कई प्रसंगों में हिंसावाद के विरुद्ध अनशन करते चित्रित किया गया है। महंत सेवादास की मृत्यु के उपरांत लछमी नहीं चाहती कि वह नये महंत रामदास के चँगुल में फँसे। अत: वह बालदेव से अनुनय करती है, तो बालदेव उसके साथ उसके पति संरक्षक के रूप में रहने लगता है। बालदेव में एक चारित्रिक दुर्बलता यह दिखाई गई है कि वह बावनदास के पत्रों को जला देना चाहता है, जिससे जवाहरलाल नेहरू उन पत्रों को पढ़कर बावनदास को मंत्री न बना दें।

तहसीलदार विश्वनाथप्रसाद और रामकिरपालसिंघ मेरीगंज के ही निवासी हैं और उनके मध्य गाँव का मुख्य व्यक्ति कहलाने के लिए पुश्तैनी प्रतिस्पर्धा चलती रहती है। आलोच्य कृति में बाजी तहसीलदार विश्वनाथप्रसाद के हाथ में रहती है, क्योंकि रामकिरपालसिंह को, उनके भतीजे हरगौरी की संथालों से हुए संघर्ष में हत्या हो जाने पर, पुलिस मुकदमें में फँसा लेती है। उन्हें अपनी जमीन विश्वनाथप्रसाद के यहाँ गिरवी रखकर ऋण लेना पड़ता है। विश्वनाथप्रसाद इस दृष्टि से दुखी थे कि उनकी एकमात्र पुत्री कमला (कमली) का विवाह नहीं हो पा रहा था। हाँ, उपन्यास के अंत तक वह मेरीगंजवासियों की अधिकांश जमीन के मालिक बन चुके हैं, जबकि उनकी पुत्री को डॉ. प्रशांत अपनी पत्नी के रूप में स्वीकार कर लेता है। सेवादास और रामदास को उपन्यासकार ने भ्रष्ट महंतों के रूप में चित्रित किया है।

स्व-मूल्यांकन (Self-Assessment)

रिक्त स्थानों की पूर्ति करें (Fill in the blanks) :

1. 'मैला आँचल' का नायक एक प्रकार से .... गाँव है।
2. माँ-बाप विहीन बालदेव .... का रहने वाला है।
3. लछमी नहीं चाहती कि वह .... के चँगुल में फँसे।

नोट

14.2.2 नारी पात्र

'मैला आँचल' के नारी पात्रों में विशेषत: दो पात्र अधिक उल्लेखनीय हैं–मठ की कोठारिन दासी लछमी तथा तहसीलदार विश्वनाथप्रसाद की पुत्री कमला (कमली)। इनके अतिरिक्त फुलिया, ममता, रामपियरिया, मंगला, पारबती मौसी आदि अनेक गौण स्त्री पात्रों की भी योजना की गई है, जिनका महत्त्व प्रसंग विशेष को गति देने की दृष्टि से है।

कमला और लछमी में से उपन्यास की घटनाओं के विकास में 'लछमी' का योगदान अधिक रहा है। अभागी लछमी के माता पिता का देहांत उसके बाल्यकाल में ही हो जाने के कारण यह अनाथ बालिका महंत सेवादास के हाथ लग जाती है। सेवादास उसको मठ की दासी ही नहीं बना लेता बल्कि अबोध लछमी के साथ कुकर्म भी करता हैं हाँ, वह ज्यों-ज्यों सयानी होती है इस पापकर्म का प्रतिरोध करती है। महंत सेवादास की मृत्यु भी एक ऐसी ही घटना में होती है, जब वह लछमी से बलात्कार करने की चेष्टा कर रहे थे। इसके बाद भी लछमी के दु:खों का अंत नहीं होता, क्योंकि उन्हीं दिनों मठ की स्थिति देखने आए लरसिंघदास नामक साधू की भी लछमी की ओर गिद्ध दृष्टि लग जाती है और वह मठ की महंती के साथ-साथ लछमी को भी हथियाने का प्रयास करता है। कालीचरन के हस्तक्षेप से लरसिंघदास तो मठ का महंत नहीं बन पाता, किंतु नवीन महंत रामदास भी अपने गुरु सेवादास के चरण चिह्नों पर चलते हुए उसको अपनी रखैल बनाना चाहता है। लछमी इस बार ऐसा तीव्र प्रतिरोध करती है कि रामदास को चोटें ही लग जाती हैं। हाँ, यह निराश्रिता नारी किसी सज्जन पुरुष का आश्रय चाहती है और अंतत: बालदेव से उसको संरक्षता मिल ही जाती है।

'कमला' भी हतभागिनी किशोरी के रूप में चित्रित की गई है क्योंकि जहाँ कहीं भी उसके विवाह की बात चलाई जाती है, वर पक्ष में कुछ-न-कुछ ऐसा अनिष्ट हो जाता है कि उसकी सगाई टूट जाती है। हार कर लोग उसको मनहूस समझकर उसके साथ संबंध करने से बचने लगते हैं, जिसके फलस्वरूप उसको मिरगी के दौरे पड़ने लगते हैं। इन दौरों के इलाज के संदर्भ में वह डॉ. प्रशांत के संपर्क में आती है और उसी को अपना दिल दे बैठती है। परिस्थितियोंवश प्रशांत का तहसीलदार साहब के यहाँ आना जाना कुछ अधिक ही मात्रा में होता रहता है, जिससे इस प्रेमलता को प्रल्लवित होने का संयोग भी मिल जाता है। कमला अपनी 'नल-दमयंती' शीर्षक पुस्तक में दमयंती का नाम काटकर अपना तथा नल का नाम काटकर डॉ. प्रशांत का नाम लिख देती है। डॉ. प्रशांत इस स्थिति को देखकर पसीने-पसीने तो हो जाता है किंतु मातृ दुलार से वंचित प्रशांत को स्त्री के प्यार की भूख का कुछ अधिक ही होना स्वाभाविक था, अत: वह भी कमला के प्रेमपाश में निबद्ध हो जाता है। ये दोनों गुप्त रीति से भी मिलते रहते हैं, फलत: कमला को गर्भ ठहर जाता है। उधर, जब तक कि प्रशांत को इस तथ्य का पता चले, उसे कम्युनिस्ट समझकर पुलिस पकड़ ले जाती है और जेल में बंद कर देती है। कमला को माता-पिता के हाथों अपमानित होना पड़ता है और वह स्वयं ही एक तहखाने में बंद रहने की सजा भोगने लगती है। हाँ, उपन्यास के अंतिम अंश में डॉ. प्रशांत, कमला और उसके पुत्र को अपना लेता है, जिससे कमला के जीवन में फिर से बसंत आ जाता है।

फुलिया व रामपियरिया आदि स्त्री पात्रों की योजना, निम्न श्रेणी की स्त्रियों की शिथिल यौन नैतिकता को दिखाने के उद्देश्य से की गई है। दूसरी तरफ 'ममता' आलोच्य उपन्यास की सर्वाधिक उदात्त चरित्रा युवति है, जो प्रशांत को निश्छल प्रेम करती है और उसको निर्धन ग्रामवासियों की सेवा करने के लिए प्रोत्साहित करती रहती है।

इस प्रकार पात्र-योजना और उनके चरित्र-चित्रण के संबंध में कहा जा सकता है कि आलोच्य उपन्यास में यद्यपि पात्रों की संख्या कुछ अधिक ही है, तथापि उपन्यासकार मुख्य पात्रों की पृथक्-पृथक् चारित्रिक रूपरेखा प्रस्तुत करने में सफल रहा है।

टास्क 'मैला आँचल' में निहित उद्देश्य पर अपने मत प्रकट कीजिए।

14.3 देशकाल और वातावरण के आधार पर

देशकाल और वातावरण योजना पर विचार करने पर स्पष्ट होता है कि इस दृष्टि से उपन्यासकार को अद्भुत सफलता प्राप्त हुई। 'रेणु' ने आलोच्य उपन्यास की रचना एक आंचलिक उपन्यास के रूप में की है। आँचलिक उपन्यासों में वर्ण्य प्रदेश या अंचल का अधिकाधिक पूर्ण एवं सजीव चित्रण करने का प्रयास किया जाता है और फणीश्वरनाथ 'रेणु' भी इस दृष्टि से सफल रहे हैं। उन्होंने बिहार प्रांत के पूर्णिया जिले के मेरीगंज नामक गाँव को रंगस्थली के रूप में चुना है और उस जनपद में प्रचलित तरह तरह के लोकगीत, पर्व त्यौहार मनाने की रीति तथा ग्रामीण जातियों की पारस्परिक प्रतिस्पर्द्धा आदि तथ्यों का सम्यक् चित्रण किया है। ग्रामीण तथा ग्रामीण जातियों की पारस्परिक प्रतिस्पर्द्धा आदि तथ्यों का सम्यक् चित्रण किया है। ग्रामीण बोली के शब्दों के बहुल प्रयोग द्वारा इस वातावरण योजना की और भी अधिक श्रीवृद्धि हुई है। अभिप्राय यह है कि देशकाल और वातावरण योजना की दृष्टि से आलोच्य उपन्यास एक सफल उपन्यास है।

14.4 कथोपकथन या संवाद-योजना के आधार पर

उपन्यास की कथावस्तु के विकास, पात्रों के चारित्रिक विकास, विगत घटनाओं की सूचना देने तथा कथानक की विलुप्त कड़ियों को जोड़ने के लिए कथोपकथन या संवाद-योजना का औपन्यासिक शिल्प में पर्याप्त महत्त्वपूर्ण स्थान होता है। फणीश्वरनाथ 'रेणु' ने भी आलोच्य उपन्यास में कथोपकथनों का इन सभी उद्देश्यों की सिद्धि के लिए उपयुक्त प्रयोग किया है। एक आलोचक के अनुसार–'मैला आँचल' एक आंचलिक उपन्यास हैं यही कारण है कि इसमें न तो लंबे-लंबे भाषण हैं, न गहन मनोविश्लेषण-जनित शुष्कता और न क्लिष्ट शब्द-प्रयोग, अपितु ग्रामीण बोलचाल में प्रयुक्त होने वाले तद्भव तथा देशराज शब्दों के माध्यम से ही सरल ढंग के कथोपकथनों का संयोजन किया गया है। 'मैला आँचल' की संवाद-योजना में संवाद छोटे, सरल, सजीव, पात्रानुकूल तथा सोद्देश्य हैं। यद्यपि अनेक आंचलिक शब्द इसमें ऐसे हैं जो पाठकों की पठन गति में अवरोध उत्पन्न करते हैं, पर अंचल विशेष की बोलचाल को मूर्तिमान् करने के लिए उनका प्रयोग अनुपयुक्त नहीं लगता, यथा–

"अनसन क्या करेंगे?"

"अंट-संट?"

कलिया कहता था–"उपास करेंगे बालदेव जी।" कलिया को बुलाकर बालदेव जी कहते थे–"कालीचरन, तुम बहुत लौजमान हो। लेकिन जोस में होस भी रखना चाहिए। हम खुस हैं, लेकिन उपास करेंगे।"

"सचमुच यदि उस दिन बालदेव जी ठीक समय पर नहीं आ जाते तो कालीचरन इस पार चाहे उस पार कर देता। ... अरे, हरगौरिया! कल का छौड़ा इस्कूल में चार अच्छर पढ़ क्या लिया है लाटसाहेब हो गया है।"

"अरे, पढ़ता क्या है, दाढ़ी-मोच हो गया है और अपना सकलदीप से दो गिलास (क्लास) नीचे पढ़ता है। एकदम फेलियर है। इस साल भी फैल हो गया है। उसका बाप मास्टर को घूस देने गया था। मास्टर गुस्साकार बोला–भागो, नहीं तो तुमको भी फैल कर देंगे।"

"अरे पढ़ेगा क्या! सुनते हैं कि लालबाग मेला में लाल पढ़ना में पास हो गया है।"

बात बनाने में दुलरिया से कोई जीत नहीं सकता! "लाल पढ़ना नहीं समझे?...हा-हा......हा-हा...खी-खी! लाल पढ़ना!"

–ढाक-ढिन्ना! ढाक-ढिन्ना!

"चलो रे, अखाड़े का ढोल बोल रहा है।"

कथोपकथनों की संक्षिप्तता एवं प्रसंगानुकूलता आदि विशेषताएँ भी आलोच्य उपन्यास के कथोपकथनों में सर्वथा विद्यमान हैं, जिनके बारे में 'मैला आँचल की संवाद-योजना' शीर्षक अध्याय में विस्तार से चर्चा की गई है।

नोट

स्व-मूल्यांकन (Self-Assessment)

निम्नलिखित कथनों में सत्य अथवा असत्य की पहचान करें

(State Whether the following statements are True or False) :

4. कमला अपनी पुस्तक में नल का नाम काटकर डॉ. प्रशांत का नाम लिख देती है।
5. डॉ. प्रशांत, कमला और उसके पुत्र को परिस्थितिवश अपना नहीं पाता है।
6. रामकिरणपालसिंघ को, उनके भतीजे की हत्या हो जाने पर पुलिस मुकदमें में फँसा लेती है।

14.5 भाषा-शैली के आधार पर

कथा की संवाहिका होने के कारण भाषा शैली की भी उपन्यास के मुख्य तत्वों में परिगणना की जाती है। 'मैला आँचल' की भाषा में एक आंचलिक उपन्यास की भाषा शैली के अनुरूप तत्सम, तद्भव, देशराज तथा विदेशी शब्दों के अपभ्रष्ट रूपों की बहुलता है।

14.6 उद्देश्य के आधार पर

प्रत्येक कृति की रचना के मूल में कृतिकार का कुछ न कुछ उद्देश्य या संदेश निहित रहता है। आलोच्य उपन्यास का उद्देश्य तो भारत के पिछड़े हुए गाँवों की स्थिति का निदर्शन स्वीकार किया जा सकता है, जबकि उसका संदेश यह माना जा सकता है कि देश के नवयुवकों को डॉ. प्रशांत की तरह निर्धन व पिछड़े हुए ग्रामवासियों की सेवा का व्रत लेना चाहिए।

उपरोक्त विवेचन से स्पष्ट है कि उपन्यास के सभी तत्वों की दृष्टि से 'मैला आँचल' एक सफल औपन्यासिक कृति है।

14.7 सारांश (Summary)

- उपन्यास की कथावस्तु की दृष्टि से यह तथ्य आवश्यक समझा जाता है कि वह अत्यधिक लंबी अथवा पेचीदा न हो और उसमें स्वाभाविकता, रोचकता, एकान्विति और प्रवाहमयता के गुण विद्यमान हों।
- मुख्य पात्रों संबंधी उपकथाओं के साथ-साथ आलोच्य उपन्यास में सत्तर-अस्सी अन्य छोटे-छोटे प्रसंग भी हैं। इतनी अधिक उपकथाओं व प्रसंगों के होते हुए भी 'मैला आँचल' की कथावस्तु सर्वथा विशृंखलित नहीं है।
- 'मैला आँचल' की कथावस्तु इतनी अधिक विश्वसनीय है कि वह उत्तर भारत के किसी भी गाँव के निवासियों की जीती-जागती तस्वीर प्रतीत होती है।
- 'बालदेव' को अहिंसा के सिद्धांत में आस्था रखने वाले कांग्रेसी कार्यकर्ता के रूप में चित्रित किया गया है। माँ-बाप विहीन बालदेव यद्यपि चन्नपट्टी का रहने वाला है तथापि मेरीगंज में कांग्रेस पार्टी की जड़ जमाने तथा दशा सुधारने के लिए वह मेरीगंज में ही रहने लगता है।
- तहसीलदार विश्वनाथप्रसाद और रामकिरपालसिंघ मेरीगंज के ही निवासी हैं और उनके मध्य गाँव का मुख्य व्यक्ति कहलाने के लिए पुश्तैनी प्रतिस्पर्धा चलती रहती है।
- कमला और लछमी में से उपन्यास की घटनाओं के विकास में 'लछमी' का योगदान अधिक रहा है। अभागी लछमी के माता पिता का देहांत उसके बाल्यकाल में ही हो जाने के कारण यह अनाथ बालिका महंत सेवादास के हाथ लग जाती है।
- पात्र-योजना और उनके चरित्र-चित्रण के संबंध में कहा जा सकता है कि आलोच्य उपन्यास में यद्यपि पात्रों

की संख्या कुछ अधिक ही है, तथापि उपन्यासकार मुख्य पात्रों की पृथक्-पृथक् चारित्रिक रूपरेखा प्रस्तुत करने में सफल रहा है।

- उपन्यास की कथावस्तु के विकास, पात्रों के चारित्रिक विकास, विगत घटनाओं की सूचना देने तथा कथानक की विलुप्त कड़ियों को जोड़ने के लिए कथोपकथन या संवाद-योजना का औपन्यासिक शिल्प में पर्याप्त महत्त्वपूर्ण स्थान होता है।
- प्रत्येक कृति की रचना के मूल में कृतिकार का कुछ न कुछ उद्देश्य या संदेश निहित रहता है। आलोच्य उपन्यास का उद्देश्य तो भारत के पिछड़े हुए गाँवों की स्थिति का निदर्शन स्वीकार किया जा सकता है।

14.8 शब्दकोश (Keywords)

1. दोषपूर्ण – कमियों वाला
2. पेचीदा – उलझी हुई
3. सर्वथा – सब जगह
4. फलस्वरूप – परिणामस्वरूप
5. अवैध – गैरकानूनी
6. अनुसंधान – खोज
7. त्रुटि – कमी, गलती
8. अनशन – धरना
9. ऋण – उधार
10. निराश्रित – बेसहारा।

14.9 अभ्यास प्रश्न (Review Questions)

1. उपन्यास की तात्विक समीक्षा किन आधारों पर की जा सकती है?
2. 'मैला आँचल' के पुरुष एवं नारी पात्रों का संक्षेप में वर्णन कीजिए।
3. उपन्यास में प्रयुक्त देशकाल एवं वातावरण पर अपने मत प्रकट कीजिए।
4. 'मैला आँचल' में किस प्रकार की भाषा-शैली प्रयोग की गई है?

उत्तर : स्व-मूल्यांकन (Answers : Self-Assessment)

1. मेरीगंज
2. चन्नपट्टी
3. रामदास
4. सत्य
5. असत्य
6. सत्य।

14.10 सन्दर्भ पुस्तकें (Further Readings)

पुस्तकें मैला आँचल–फणीश्वरनाथ रेणु, नेशनल बुक ट्रस्ट।

नोट

इकाई–15: भीष्म साहनी का साहित्यिक योगदान

अनुक्रमणिका (Contents)

उद्देश्य (Objectives)

प्रस्तावना (Introduction)

15.1 भीष्म साहनी की लेखन कुशलता एवं साहित्यिक योगदान

15.2 'तमस': विचार एवं उद्देश्य

15.2.1 यथार्थवाद का चित्रण करना

15.2.2 साम्प्रदायिक तनाव का चित्रण करना

15.3 गौण उद्देश्य

15.3.1 राजनीतिक भ्रष्टाचार का चित्रण करना

15.3.2 देश की आर्थिक दुर्व्यवस्था का चित्रण करना

15.3.3 सामाजिक अंधविश्वासों का चित्रण करना

15.4 'तमस' का नामकरण

15.5 सारांश (Summary)

15.6 शब्दकोश (Keywords)

15.7 अभ्यास प्रश्न (Review Questions)

15.8 सन्दर्भ पुस्तकें (Further Readings)

उद्देश्य (Objectives)

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् विद्यार्थी योग्य होंगे–

- भीष्म साहनी की लेखन कुशलता एवं साहित्यिक योगदान को जानने में;
- 'तमस' में निहित मुख्य एवं गौण उद्देश्यों को समझने में;
- उपन्यास के नामकरण पर प्रकाश डालने में।

प्रस्तावना (Introduction)

भीष्म साहनी हिंदी फिल्म जगत के सुप्रसिद्ध चरित्र अभिनेता बलराज साहनी के भाई थे। राष्ट्रीय आंदोलन और देश-विभाजन की घटनाओं का भीष्म साहनी के मन पर अत्यधिक गहरा प्रभाव पड़ा। हिंदुस्तान-पाकिस्तान विभाजन के समय साहनी जी अपना सबकुछ छोड़-छाड़ कर हिंदुस्तान आ गए थे।

नोट

15.1 भीष्म साहनी की लेखन कुशलता एवं साहित्यिक योगदान

साहनी जी के तीन कथा संकलन प्रकाशित हो चुके हैं–भाग्यरेखा, पहला पाठ और भटकती राख तथा माता-विमाता। बीबर, सिर का सदका, प्रोफेसर, कटघरे, अपने अपने बच्चे, कुछ और साल, खून का रिश्ता, सिफारिशी चिट्ठी, चीफ की दावत, अहं ब्रहास्मि आदि प्रसिद्ध कहानियाँ हैं। झरोखे, कडियाँ, तमस, मैय्यादास की माडी, बसंती, नीलू नीलिमा नीलोफर आदि इनके द्वारा लिखित उपन्यास हैं। सन 1975 में 'तमस' उपन्यास पर इन्हें साहित्य अकादमी का पुरस्कार मिल चुका है।

कबीरा खड़ा बाजार में, हानुस आदि इनके प्रसिद्ध नाटक हैं। साहनी जी मानवीय संवेदनाओं के कथाकार हैं। आपकी विचार-दृष्टि राष्ट्रीय और समाजपरक है।

क्या आप जानते हैं सन् 1957 से 1963 तक साहनी जी ने मास्को के विदेशी भाषा-प्रकाशन ग्रह में अनुवादक के रूप में कार्य किया और टालस्टाय आदि रचनाओं के अनुवाद किए।

15.2 'तमस' : विचार एवं उद्देश्य

कोई भी रचना निरुद्देश्य नहीं होती, उसकी सर्जना के पीछे कोई न कोई उद्देश्य अवश्य होता है। यह उद्देश्य प्रत्यक्ष भी हो सकता है और अप्रत्यक्ष भी। प्रत्यक्ष उद्देश्य 'कला जीवन के लिए' के सिद्धांत का पोषक है और अप्रत्यक्ष उद्देश्य 'कला कला के लिए' के लिए सिद्धांत का प्रतिपादक है। यद्यपि लेखक किसी भी रचना के पीछे स्व-भावनाओं एवं आत्माभिव्यक्ति का प्रकाशन ही मुख्य उद्देश्य होता है। वह अपने मन की सर्जनेच्छा का शमन करने के लिए ही साहित्य सृजन करता अथवा अपने मन की वासना को ही परिष्कृत रूप में साहित्य जगत में प्रस्तुत कर देता है, किंतु ये तो किसी रचना के सृजन के अप्रत्यक्ष उद्देश्य हैं। इसके साथ ही वातावरण, समाज और परिस्थितियों के आधार पर अपनी भावनाओं को अभिव्यक्ति देने के लिए वह कोई न कोई आधार ग्रहण करता है, जिस पर कथावस्तु का ढाँचा तैयार करता है और अपनी कला के द्वारा उसे संवारता है।

परिस्थितियाँ अनेक हो सकती हैं, किंतु उसकी भावनाओं की प्रेरणा देने वाली उपन्यास की रचना में सहायक केवल एक परिस्थिति अथवा विचार होता है। यद्यपि उससे संलग्न अनेक विचार हो सकते हैं। अत: 'तमस' के उद्देश्य का विवेचन करने के लिए हमें लेखक की इसी प्रेरणादायी परिस्थिति को खोजना होगा।

साहनी जी की इस प्रेरणा का निदर्शन करने से पूर्व हमें यह समझ लेना चाहिए कि साहनी जी किसी कला अथवा रचना को उसके सर्जक की स्वानुभूति मानते हैं। इसीलिए इन्होंने आत्मविश्लेषणात्मक पद्धति से कथानक की सृष्टि की है। इसमें साहनीजी का सर्वत्र यथार्थवादी दृष्टिकोण रहा है और कई स्थानों पर तीव्र घोर यथार्थवादी बन गए हैं।

15.2.1 यथार्थवाद का चित्रण करना

इस दृष्टि से साहनी जी के उपन्यास 'तमस' का पहला और सर्वप्रथम उद्देश्य यही है कि ऐसे यथार्थ का चित्रण किया जाए जो हमारे समाज में व्याप्त तो है किंतु हम उधर ध्यान नहीं देते। इसी को मूर्तता प्रदान करने के लिए उन्होंने सांप्रदायिक तनाव की घटना और उससे सम्बन्धित पात्रों का यथार्थ चित्र प्रस्तुत किया है। पर अपने यथार्थ का चित्रण करने के लिए साहनी जी ने आदर्श का गला नहीं घोंटा है। घटनाओं की गति में यदि पात्र आदर्शवादी बन गये है तो उन्होंने उन्हें जबरन यथार्थपति नहीं बनाया है इसका प्रत्यक्ष प्रमाण राजो है जो एक शुद्ध आदर्शवादिनी नारी है किंतु इसके लिए उसे कठिनाइयाँ भी कम नहीं उठानी पड़ती अथवा नत्थू का चरित्र है जो यथार्थवादी होते हुए भी

नोट

अंततः हृदय से एक आदर्शवादी व्यक्ति ही है। यथार्थ के परिप्रेक्ष्य में नत्थू का आदर्शवाद इन पंक्तियों में उसके निष्कलंक चरित्र को कितना स्पष्ट कर देता है देखिए–

"उसने फिर चिलम उठा ली। भाड़ में जाए मुराद अली और उसका सूअर! जो हो गया सो हो गया। मैंने जान-बूझकर कुछ नहीं किया है। मैंने तो जो कुछ किया अनजाने में किया, ये लोग जो आग लगा रहे हैं और राह जाते लोगों को मार रहे हैं, ये तो आँखें खोलकर सब काम कर रहे हैं, ये क्यों बुरा कर्म कर रहे हैं? मेरे एक सूअर को मार देने से क्या होता है? एक सूअर को मार देने में रखा ही क्या है? मैं मुजरिम हूँ तो क्या ये लोग मुजरिम नहीं? वे लोग जिन्होंने मंडी में आग लगाई है? मैंने जानबूझकर कुछ नहीं किया, हो गया जो होना था। मुझे इससे कुछ लेना देना नहीं है..."

नत्थू को अपने बाप की याद आई। भगवान से डरने वाला आदमी था वह। सदा यही सीख दिया करता था: "बेटा, हाथ साफ रखना, जिसका हाथ साफ है, वह कोई बुरा काम नहीं करता....इज्जत की रोटी खाना...नत्थू को याद करके रुलाई आ गई। उसकी छाती पर फिर से बोझ बढ़ने लगा, असह्य होने लगा।"

इस प्रकार साहनी जी ने न तो आदर्शवाद को थोपा है और न ही यथार्थवाद से मुख मोड़ा है, वरन यथार्थता को उपयोगी बनाने के लिए उसका समाहार किया है। इसलिए हम कह सकते हैं कि यथार्थवाद की नींव पर उनके उपन्यास की मूल भित्ति आधृत है यद्यपि उसमें स्वभावतः कहीं-कहीं आदर्श का भी पुट आ गया है।

15.2.2 सांप्रदायिक तनाव का चित्रण करना

समग्रता के आधार पर विचारों पर आधारित इसे अप्रत्यक्ष उद्देश्य के अंतर्गत रखा जा सकता है। उपन्यास में कुछ उद्देश्य प्रत्यक्ष भी होते हैं और उसके लिए भी लेखक किसी विचार को अपने सामने रखता है। यह उद्देश्य जैसा कि नाम से स्पष्ट है–'तमस' अर्थात् एक ऐसा गहन अंधकार जिसमें समाज की सारी प्रकाशवान सत्ताएँ तिरोहित हो गई हैं, का अर्थ स्पष्ट करता है। अस्तु, स्पष्टः इसमें समाज में व्याप्त उस अंधकार का ध्वनन होता है जो हमारे धार्मिक अंधविश्वासों, रुढ़ियाँ और संस्कारगत संकीर्णताओं के कारण हमारे बाह्यंतर को कालिमायुक्त करता रहता है। एक राष्ट्र के नागरिक होते हुए भी हम विभिन्न धर्मों में बंटे होने के कारण सांप्रदायिकता के प्रश्रय देते हैं। हमारी यही सांप्रदायिक भावना न जाने कितने प्राणों को मृत्यु के मुख में धकेल देती है। हिंदू-मुस्लिम सांप्रदायिक तनाव ही इस उपन्यास की कथा का मूलाधार है और उपन्यास में प्रारंभ से लेकर अंत तक उसके प्रसार एवं उसके वीभत्स परिणामों का सिलसिलेवार वर्णन साहनी जी ने किया है। यहाँ पर साहनी जी का यह उद्देश्य स्पष्ट हो जाता है कि किस प्रकार कुछ असामाजिक तत्व केवल अपने निहित स्वार्थों के लिए हिंदू-मुसलमानों में धार्मिक विद्वेष फैलाकर दंगा भड़काते हैं और फिर जब सांप्रदायिक दंगा हो जाता है तो लोग एक दम अंधे होकर किस प्रकार फिरकापरस्ती के शिकार होकर उसे फैलाते जाते हैं। एक उदाहरण देखिए–

"....उसी वक्त एक आदमी कमेटी के मैदान की तरफ से भागता हुआ आया और शेरखान के घर की गली लाँघकर एक ओर खड़े मुहल्ले के पास जा पहुँचा और उनके साथ खुस-फुस करने लगा। उसने काले रंग की बास्कट पहन रखी थी और बड़ा उत्तेजित सा लग रहा था। यों तो इस तरह भागकर आना मामूली सी बात थी, मगर वह जिस ढंग से भागता हुआ आया वह आसपास खड़े लोगों को अनूठा-सा लगा। देखते ही देखते इधर-उधर खड़े लोग वहाँ से हटने लगे, केवल छोटे-छोटे वहाँ खड़े रह गए। फिर पलक मारते ही टाट के पर्दों के पीछे से स्त्रियाँ हट गईं। एक स्त्री लपक कर बाहर आई और शौच करने वाले दो बच्चों में एक की बाँह पकड़कर उसे घसीटती हुई घर के अंदर ले गई।"

टास्क 'तमस' में निहित उद्देश्य के पक्ष और विपक्ष में अपने विचार प्रस्तुत कीजिए।

नोट

और फिर जैसा कि साहनी जी का उद्देश्य है, यह सांप्रदायिक तनाव शहर में तबाही मचाते हुए गाँवों की ओर भी बढ़ चला। हरनामसिंह के प्रसंग में तो यह उद्देश्य स्पष्ट हुआ ही है, सैयदपुर के सिक्खों के प्रसंग में भी उजागर हुआ है। उदाहरणार्थ–

"कुछ लाशें कस्बे के बाहर भी जगह-जगह पड़ी थीं। एक लाश कुएँ के पास औंधी पड़ी थी। यह आदमी मुगालते में मारा गया था। यह कस्बे का भिश्ती अल्लाहरक्खा था जो फसाद के बावजूद अपनी मश्क लेकर चाँदनी रात में कुएँ पर चला आया था। शेख के घर में पानी का तोड़ा हो गया था और बच्चे पानी माँग रहे थे और तभी भिश्ती मश्क उठाकर पानी लेने आ गया था और शेख के घर की छत पर से ही सीधा अचूक निशाना उसकी पीठ पर लगा था। एक लाश किसी सरदार की थी जो शहर से आने वाली सड़क पर पड़ी थी। फतहदीन नानबाई, जिसकी दुकान गुरुद्वारे को जाने वाली गली के बाएं सिरे पर पड़ती थी, स्वयं तो बच गया था लेकिन उसकी दुकान पर काम करने वाले दोनों छोटे-छोटे लड़के मारे गए थे। फसादों के बावजूद ये बच्चे भाग-भागकर दुकान में से बाहर आ जाते थे। कभी एक-दूसरे के पीछे भागने लगते, कभी गली में खेलने लगते थे। इसके अलावा खालसा स्कूल में से आग के शोले अभी भी निकल रहे थे। बायीं गली के सिरे पर नदी के ऐन ऊपर वाले हिस्से में सिक्खों के सभी मकान आग की नजर कर दिए गए थे। दूसरी ओर कसाइयों की तीनों दुकानें और तेली मुहल्ले के तीन-चार मुसलमानों के घर जल रहे थे।"

स्पष्ट है कि हिंदू-मुस्लिम धर्मावलंबियों के मध्य इसी सांप्रदायिक तनाव का चित्रण करना साहनी जी का प्रमुख उद्देश्य है।

15.3 गौण उद्देश्य

मुख्य उद्देश्य से लगे-लिपटे कुछ अन्य गौण उद्देश्य भी आ गए हैं, उनका भी संक्षेप में वर्णन कर देना आवश्यक है। ये उद्देश्य निम्नलिखित हैं–

(1) राजनीतिक भ्रष्टाचार का चित्रण करना

(2) देश की आर्थिक दुर्व्यवस्था का चित्रण करना

(3) सामाजिक अंधविश्वासों का चित्रण करना।

इन उद्देश्यों पर अब संक्षेप में विचार किया जाएगा, क्योंकि ये सभी उद्देश्य उनके उपयुक्त उद्देश्य से संश्लिष्ट है और इन्हीं के द्वारा मानव मन की विकृतियों एवं आस्थाओं का चित्रण किया गया है। अत: यह उप-उद्देश्य उनके मुख्य उद्देश्य के पूरक उद्देश्य हैं।

स्व-मूल्यांकन (Self-Assessment)

रिक्त स्थानों की पूर्ति करें (Fill in the blanks) :

1. तमस का अर्थ गहन .... से है।
2. यह लेखक की इच्छा पर निर्भर है कि उपन्यास का .... किस आधार पर करे।
3. भारत में रहने वाले हिंदु, मुस्लिम या सिख एक ही .... जाति के वंशज हैं।

15.3.1 राजनीतिक भ्रष्टाचार का चित्रण करना

साहनी जी का एक उद्देश्य राजनीतिक भ्रष्टाचार का भी चित्रण करना इस उपन्यास में रहा है। देश को पराधीनता की बेड़ियों से मुक्त कराने वाले कांग्रेसी नेता किस प्रकार अपने-अपने स्वार्थों में व्यस्त थे, इसका सुंदर निदर्शन आलोच्य उपन्यास है। बख्शी जी के भ्रष्ट चरित्र को उजागर करने वाला यह संवाद द्रष्टव्य है–

नोट

"क्यों हम पहुँचे हैं? बख्शी जी आपने तो बत्ती ही गुल कर दी?" शंकर मनादी वाले ने कहा।

"क्यों, तूने मेरा चेहरा देखना है या मेहता जी का देखना है" बख्शी जी बोले? "तेल जाया होता है। यह कांग्रेस कमेटी का लैंप नहीं है, मेरा अपना लैंप है। कांग्रेस कमेटी से तेल की मंजूरी ले दो, मैं इसे दिन-रात जलाए रखूँगा।"

इस पर दबी आवाज में कश्मीरी लाल की पीठ पीछे खड़े-खड़े शंकर बोला, "सिगरेटों के लिए आपको मंजूरी की जरूरत नहीं तो मिट्टी के तेल के लिए क्यों होगी?"

वाक्य बख्शी जी ने सुन लिया पर जहर का घूँट पीकर चुप बने रहे। ऐसे लोफरों को मुँह लगाना अपना अपमान करवाना था।

"आप तो मालिक हैं, बख्शी जी, आपको मंजूरी की क्या जरूरत है? आपके हुक्म के बिना तो चिड़ी भी नहीं फड़क सकती।" शंकर बोला, फिर मेहता जी की ओर मुखाबित होकर बोला, "जयहिंद, मेहता जी।"

15.3.2 देश की आर्थिक दुर्व्यवस्था का चित्रण करना

चूँकि प्रस्तुत उपन्यास बीसवीं शती के मध्यकाल की पृष्ठभूमि पर लिखा गया है इसलिए इसमें तत्कालीन विदेशी प्रशासकों के ठाटबाट पूर्ण जीवन का चित्रण करने के साथ ही तत्कालीन सामाजिक, आर्थिक दुर्व्यवस्था का चित्रण करना भी लेखक का उद्देश्य रहा है। एक ओर लाला लक्ष्मीनारायण अथवा रघुनाथ जैसे लोग हैं जिनके घरों में नौकर लगे हैं, जो संपन्नतापूर्ण जीवन-यापन करते हैं, दूसरी ओर ऐसे लोग भी हैं जिनके घरों में पानी के नल या दरवाज़े पर कपड़ों के पर्दे तक नहीं हैं। हमारे नगरों में निम्नवर्गीय लोगों के मुहल्लों की जो दशा है उससे इस आर्थिक दुर्व्यवस्था का स्पष्ट परिचय मिल जाता है। उदाहरणार्थ–

"अधिकांश घर इकहरे एक-मंजिला थे। बहुत से घरों के दरवाज़ों पर टाट के पर्दे लटक रहे थे। सामने खुला मैदान था और मैदान के पार, एक दूसरे के समानांतर दो कच्ची गलियाँ थीं। एक गली में नालियाँ थीं, पर कच्ची थीं। दूसरी गली में नालियाँ खोदी ही नहीं गई थीं। गली में ही माल-मवेशी बंधे थे। घरों में से स्त्रियाँ, सिर पर एक-एक, दो-दो घड़े रखे पानी भरने जा रही थीं। एक जगह एक बालक भैंस के नीचे से गोबर उठा रहा था। नजदीक ही चरनी के पास बच्चे मैदान में, एक-दूसरे के सामने बैठे शौच कर रहे थे और बतिया रहे थे।"

समग्रत: इस उपन्यास में आर्थिक दुर्व्यवस्था का चित्रण करना साहनी जी का एक गौण उद्देश्य रहा है।

15.3.3 सामाजिक अंधविश्वासों का चित्रण करना

साहनी जी ने प्रसंगवश हमारे समाज में व्यापक अनेक अंधविश्वासों का चित्रण भी किया गया है। हमारे समाज में अनपढ़ और धर्मभीरू लोग संतान के लिए कितने ही प्रकार के टोने-टोटके करते थे। नत्थू के प्रसंग में इस प्रकार के सामाजिक अंधविश्वासों का चित्रण किया गया है। अत: स्पष्टत: कहा जा सकता है कि इस प्रकार के अंधविश्वासों का चित्रण करना भी साहनी जी का उद्देश्य रहा है।

निष्कर्ष

उपर्युक्त विवेचन से 'तमस' उपन्यास में निहित साहनी जी का उद्देश्य स्पष्ट हो जाता है। हिंदू-मुस्लिम सांप्रदायिक संकीर्णताओं एवं तज्जन्य तनाव का यथार्थपरक चित्रण करने के लिए ही उन्होंने इन परिस्थितियों एवं समस्याओं को चित्रित किया है। अत: धार्मिक अंधता के कारण होने वाले सांप्रदायिक दंगों के परिणामों को हमारे सामने रखना ही उनका प्रमुख उद्देश्य है।

15.4 'तमस' का नामकरण

उपन्यास का नामकरण किस आधार पर किया जाए? इस विषय में एक मत नहीं हुआ जा सकता क्योंकि इसके मूल

में अनेक स्मृतियाँ कार्यरत रहती हैं। अक्सर यह देखा गया है कि उपन्यास का नामकरण या तो उपन्यास में चित्रित किसी विशेष पात्र के आधार पर किया जाता है या स्थान अथवा घटना विशेष के आधार पर, किंतु कई बार उपन्यास के मूल अथवा केंद्रीय भाव को आधार मानकर या उसके उद्देश्य को ध्यान में रखकर उपन्यास का नामकरण किया जाता है। हिंदी के ऐतिहासिक उपन्यासों में पात्र अथवा स्थान के आधार पर नामकरण की परंपरा प्रवृत्ति अधिक देखी जाती है किंतु सामाजिक उपन्यासों में अधिकांशत: उपन्यास के मूल उद्देश्य के आधार पर नामकरण की परंपरा प्रवृत्ति दिखाई देती है। यथा–'आतंक,' 'गबन', 'कब तक पुकारूँ', 'एक टुकड़ा इतिहास' और 'मैला आँचल' आदि। वास्तविकता यह है कि यह लेखक की अपनी इच्छा पर निर्भर है कि उपन्यास का नामकरण किस आधार पर करे? लेकिन उपन्यास के शीर्षक की सार्थकता यही है कि वह उपन्यास के प्रतिपाद्य और लेखक के उद्देश्य व दृष्टिकोण को स्पष्ट रूप से व्यंजित कर दे।

'तमस' उपन्यास के लेखक श्री भीष्म साहनी का एक वृहदाकार उपन्यास है। इसमें विषय-वस्तु की विविधता, वर्णन-वैचित्र्य, देशकाल और वातावरण की बाहुलता तथा पात्रों की रुचि विभिन्नता के दर्शन होते हैं। इसलिए कथावस्तु अथवा पात्रों में से किसी विशेष पात्र के नाम पर यदि उपन्यास का नामकरण किया जाता तो वह अपूर्ण होता क्योंकि इसमें किसी एक पात्र की प्रमुखता नहीं है। आश्चर्यजनक बात तो यह है कि इसमें किसी पात्र को नायक भी नहीं कहा जा सकता, क्योंकि कोई भी पात्र इतने विशिष्ट स्तर पर उभर कर सामने नहीं आया है जिसमें नायकत्व की अस्मिता को पहचाना जा सके। इसी तरह कथावस्तु में भी विविधता है और देशकाल व वातावरण में भी भिन्नता है। एतदर्थ इसके नामकरण के लिए उद्देश्य अथवा दृष्टिकोण का ही आधार आवश्यक था और इसी आधार पर 'तमस' उपन्यास का नामकरण किया गया है।

टास्क उपन्यास का नामकरण 'तमस' के रूप में करना कितना सटीक है? अपने विचार रखिए।

अब हमें लेखा के दृष्टिकोण से विवेचन करना होगा कि उन्होंने इस उपन्यास का नाम 'तमस' क्यों रखा? इस संबंध में विचार करने पर उपन्यास की कथावस्तु में निहित भावों को देखना होगा। उपन्यासकार ने उपन्यास के प्रारंभ में नत्थू द्वारा सूअर मारने की प्रक्रिया का चित्रण करते हुए कमरे में व्याप्त जिस अंधकार और घुटन का चित्रण किया है, उससे उपन्यास के नामकरण की दिशा में बहुत कुछ प्रकाश पड़ता है। वह अंश इस प्रकार है–

"आले में रखे दीऐ ने फिर से झपकी ली। ऊपर दीवार में छत के पास से दो ईंटें निकली हुई थीं। जब जब वहाँ से हवा का झोंका आता, दीऐ की बत्ती झपक जाती और कोठरी की दीवारों पर साए-से डोल जाते। थोड़ी देर बाद बत्ती अपने-आप सीधी हो जाती और उसमें से उठने वाली धुएँ की लकीर आले को चाटती हुई फिर से ऊपर की ओर सीधे रुख जाने लगती। नत्थू की सांस धौंकनी की तरह चल रही थी और उसे लगा जैसे उसकी सांस के ही कारण दीए की बत्ती झपकने लगी है।"

उपर्युक्त पंक्तियों पर यदि ध्यानपूर्वक विचार किया जाए तो एक बहुत बड़ी समस्या सुलझ जाती है। वास्तव में लेखक हिंदू-मुस्लिम सम्प्रदायों के मन के उस अंधकार, उस अज्ञान को निरूपित करना चाहता है, जिसके रहते हुए ही मनुष्य अपनी मनुष्यता को भूल जाता है। मन का यह अंधकार ही उसे धार्मिक संकीर्णताओं में फँसकर सांप्रदायिक दंगे करवाने और जघन्य नर-संहार करवाने की प्रेरणा देता है। नत्थू यद्यपि एक सूअर को मार रहा है किंतु दीये के झपकने से जो अंधकार कमरे में व्याप्त हो जाता है और दीवारों पर जो साये-से डोलने लगते हैं उनका अर्थ प्रतीकात्मक है। नत्थू का यह सोचना कि उसकी सांस से ही दीये की बत्ती झपक रही है, इस तथ्य की ओर संकेत कर रहा है कि जिस सूअर को नत्थू केवल पाँच रुपयों की प्राप्ति के कारण मार रहा है, वही सूअर कालांतर में एक भीषण हिंदू-मुस्लिम सांप्रदायिक दंगे का रूप ले लेता है और जिन सायों को यहाँ दीवारों पर हिलते-डुलते दिखाया गया है, वे भी उन सांप्रदायिकों की छायाओं का व्यंजन करती हैं जो कालांतर में भीड़ के रूप में गली-गली,

मुहल्लों-मुहल्लों में एक-दूसरे को मारने को तत्पर दिखाई देते हैं। नत्थू की कोठरी में व्याप्त अंधकार ही उपन्यास में घटित समस्त घटनाओं के अंधकारमय स्वरूप को अभिव्यंजित करता है। लेखक ने इसी कारण उपन्यास का नामकरण 'तमस' नाम से किया है। तमस का स्पष्ट अर्थ है अंधकार। उपन्यास में यह अंधकार उस अंचल विशेष में घटी घटनाओं को ही ध्वन्न नहीं करता जहाँ सांप्रदायिक दंगों की घटनाएँ घटीं बल्कि उस संपूर्ण प्रक्रिया को भी ध्वन्न करता है जिसके कारण हमारे देश में सांप्रदायिक दंगों की घटनाएँ दुहरायी-तिहरायी गयी हैं, जिसके कारण आज जाती रहती है। धार्मिक संकीर्णता एक अज्ञान रूपी अंधकार ही तो है जिसकी गहनता में आम व्यक्ति इतना खो जाता है कि वह यह भी भूल जाता है कि भारत में रहने वाले ये सभी हिंदू-मुस्लिम या सिख एक ही जाति–आर्य जाति के वंशज हैं। केवल धर्मों ने इन सबकी आत्माओं तक को एक-दूसरे के विपरीत कर डाला है। हमारे इस अज्ञानाधंकार का विवरण रिचर्ड और लीजा के निम्नलिखित संवाद में देखा जा सकता है–

स्व-मूल्यांकन (Self-Assessment)

निम्नलिखित कथनों में सत्य अथवा असत्य की पहचान करें

(State Whether the following statements are True or False) :

4. साहनी जी के तीन कथा संकलन प्रकाशित हो चुके हैं।
5. 'तमस' उपन्यास का नामकरण पात्र एवं कथावस्तु के आधार पर किया गया है।
6. रिचर्ड और लीजा में परस्पर बहन-भाई का संबंध था।

"नहीं-नहीं, लीजा, यही बात तो लोग भूल जाते हैं।" रिचर्ड की आवाज में उत्तेजना आ गई थी, मानों वह अपनी किसी खोज को प्रमाणित करने जा रहा हो। "जो लोग मध्य एशिया से सबसे पहले यहाँ आए, शताब्दियों के बाद उन्हीं के नाती-पोते अन्य देशों से इधर आए। नस्ल सबकी एक ही थी। वे लोग जो यहाँ के आर्य कहलाते थे और हजारों वर्ष पहले यहाँ पर आए और वे भी जो मुसलमान कहलाते थे। लगभग एक हजार वर्ष पहले यहाँ पर आए एक ही नस्ल के लोग थे। सभी एक ही मूल जाति के लोग थे।"

"इन बातों को ये लोग भी तो जानते होंगे?"

"यहाँ के लोग कुछ नहीं जानते हैं जो हम इन्हें बताते हैं।" फिर थोड़ी देर तक मौन रहकर बोला, "ये लोग अपने इतिहास को जानते नहीं हैं, ये उसे केवल जीते-भर हैं।"

रिचर्ड के इस कथन में स्पष्टत: हमारे अज्ञानाधंकार पर आक्षेप किया गया है कि धर्म के नाम पर हम कितने अंधे और संकीर्ण विचारों से युक्त हैं।

इस प्रकार यह स्वत: स्पष्ट है कि साहनी जी ने अपने उपन्यास के प्रतिपाद्य को ध्यान में रखते हुए ही किसी पात्र अथवा कथावस्तु पर उपन्यास का नामकरण न करके अपने दृष्टिकोण एवं विचार के आधार पर इस उपन्यास का नामकरण 'तसम' किया है।

निष्कर्ष

समग्रत: 'तसम' उपन्यास का नाम 'तमस' पूर्णत: सार्थक है और उपन्यास में निहित विचारों को यह पूरी तरह मूर्तता प्रदान कर विषय-वस्तु की प्रतिपाद्यता को घोषित करता है।

15.5 सारांश (Summary)

- कोई भी रचना निरुद्देश्य नहीं होती, उसकी सर्जना के पीछे कोई न कोई उद्देश्य अवश्य होता है। यह उद्देश्य प्रत्यक्ष भी हो सकता है और अप्रत्यक्ष भी।

- 'तमस' का पहला और सर्वप्रथम उद्देश्य यही है कि ऐसे यथार्थ का चित्रण किया जाए जो हमारे समाज में व्याप्त तो है किंतु हम उधर ध्यान नहीं देते।
- एक राष्ट्र के नागरिक होते हुए भी हम विभिन्न धर्मों में बंटे होने के कारण सांप्रदायिकता के प्रश्रय देते हैं। हमारी यही सांप्रदायिक भावना न जाने कितने प्राणों को मृत्यु के मुख में धकेल देती है।
- साहनी जी ने प्रसंगवश हमारे समाज में व्यापक अनेक अंधविश्वासों का चित्रण भी किया गया है। हमारे समाज में अनपढ़ और धर्मभीरू लोग संतान के लिए कितने ही प्रकार के टोने-टोटके करते थे।
- उपन्यास का नामकरण किस आधार पर किया जाए? इस विषय में एक मत नहीं हुआ जा सकता क्योंकि इसके मूल में अनेक स्मृतियाँ कार्यरत रहती हैं।
- कथावस्तु अथवा पात्रों में से किसी विशेष पात्र के नाम पर यदि उपन्यास का नामकरण किया जाता तो वह अपूर्ण होता क्योंकि इसमें किसी एक पात्र की प्रमुखता नहीं है।
- लेखक हिंदू-मुस्लिम सम्प्रदायों के मन के उस अंधकार, उस अज्ञान को निरूपित करना चाहता है, जिसके रहते हुए ही मनुष्य अपनी मनुष्यता को भूल जाता है। मन का यह अंधकार ही उसे धार्मिक संकीर्णताओं में फँसकर सांप्रदायिक दंगे करवाने और जघन्य नर-संहार करवाने की प्रेरणा देता है।

15.6 शब्दकोश (Keywords)

1. जगत – संसार	2. विभाजन – बँटवारा
3. तमस – अँधकार	4. सृजन – निर्माण
5. बोझ – वज़न	6. पद्धति – तरीका
7. व्याप्त – फैला हुआ	8. स्पष्ट – साफ
9. मुजरिम – अपराधी	10. वीभत्स – भद्दा।

15.7 अभ्यास प्रश्न (Review Questions)

1. भीष्म साहनी के साहित्यिक योगदान पर एक लेख लिखिए।
2. 'तमस' के मुख्य एवं गौण उद्देश्यों पर संक्षिप्त टिप्पणी लिखिए।
3. रिचर्ड और लीजा ने हमारे अज्ञानांधकार पर किस प्रकार आक्षेप किया है?
4. 'तमस' के नामकरण का क्या आधार है?

उत्तर : स्व-मूल्यांकन (Answers : Self-Assessment)

1. अंधकार	2. नामकरण	3. आर्य	4. सत्य
5. असत्य	6. असत्य।		

15.8 सन्दर्भ पुस्तकें (Further Readings)

पुस्तकें तमस–भीष्म साहनी, राजकमल प्रकाशन (प्रा.) लि., नई दिल्ली।

नोट

इकाई–16: 'तमस' की कथावस्तु का सारांश

अनुक्रमणिका (Contents)

उद्देश्य (Objectives)
प्रस्तावना (Introduction)
16.1 'तमस': कथासार/कथावस्तु
16.2 सारांश (Summary)
16.3 शब्दकोश (Keywords)
16.4 अभ्यास प्रश्न (Review Questions)
16.5 सन्दर्भ पुस्तकें (Further Readings)

उद्देश्य (Objectives)

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् विद्यार्थी योग्य होंगे–

- 'तमस' की कथावस्तु को समझने में।

प्रस्तावना (Introduction)

'तमस' भीष्म साहनी जी की एक सफल एवं उत्कृष्ट रचना है। 'तमस' के द्वारा उपन्यासकार ने समाज में व्याप्त अनेक प्रकार की बुराइयों को दर्शाया है। साहनी जी ने इस उपन्यास के द्वारा हमारे देश में होने वाले साम्प्रदायिक दंगो के परिणामों का उल्लेख किया है।

16.1 'तमस' : कथासार/कथावस्तु

उपन्यास का आरंभ नत्थू के साथ होता है। मुराद अली ने नत्थू को सलोतरी साहब के लिए एक सूअर मारकर उपलब्ध कराने के लिए कहा है और इसके लिए नत्थू को पाँच रुपए का नोट पारिश्रमिक के रूप में दिया गया है। नत्थू ने किसी तरह एक सूअर को अपनी कोठरी में धकेल लिया और वह सारी रात उसे मृत्यु के घाट उतारने के लिए प्रयत्न करता रहा। उसने अनेक बार उस सूअर के पेट में छुरा घोंपा किंतु सूअर का डीलडौल इतना बड़ा था कि उस पर नत्थू के छुरे का कोई प्रभाव नहीं पड़ रहा था। दूसरी ओर सूअर भी पूरे साहस के साथ नत्थू के प्रहार का मुकाबला कर रहा था। वह भी अवसर मिलते ही अपनी थूथनी से नत्थू के पैरों को घायल किए जा रहा था। नत्थू और पिगरी के इस सूअर के मध्य यह संघर्ष सारी रात चलता रहा। नत्थू के मन में कई बार यह आया कि वह सूअर को मारने का संकल्प त्याग दे किंतु मुराद अली का भय और पाँच रुपऐ का लोभ उसे वहाँ से हटने नहीं दे रहा था। जब उसने देखा की भारी-भरकम सूअर के पेट में छुरों के घावों का कोई प्रभाव नहीं होता है तो अंततः उसने एक बड़ी सिल उठाकर सूअर पर निशाना मारा। सूअर ने पहले तो कुछ साहस दिखाया किंतु अंततः वहीं ढेर हो गया और उसके साथ ही नत्थू वहाँ के घुटन-भरे वातावरण से निकल पड़ा। लेखक ने नत्थू के मन की दुविधात्मक स्थिति का अत्यंत सजीव वर्णन किया है। यद्यपि मुराद अली के आदेश के अनुसार नत्थू को उसी कोठरी में रहना चाहिए था, किंतु वह इस उमस-भरे वातावरण से मुक्त होना चाहता था।

नोट

इधर नत्थू उन्मुक्त होने के लिए प्रयत्नशील था, उधर नगर के कांग्रेसी प्रभातफेरी के आयोजन में लगे हुए थे। प्रभातफेरी के लिए अधिकतर बड़ी उम्र के लोग आते थे। इस प्रकार के राजनीतिक कार्यक्रमों में भाग लेने वालों में बख्शी जी, मेहता जी, कंम्मीरीलाल, जरनैल, शंकर आदि के नाम विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं। ये सारे नेता दिखावटी नेता थे। उपन्यासकार ने इनके भीतर के व्यक्तित्व की कलई खोलने में कोई कसर नहीं उठा रही है। ऊपर से उजली खादी पहनने वाले इन कथित नेताओं का खोखलापन देखते ही बनता है। सारे नेता वस्तुत: अपने अपने स्वार्थों से घिरे हुए हैं और हर नेता एक दूसरे की टाँग खींचने में कोई कसर नहीं उठा रखता।

अपनी कोठरी से निकलकर नत्थू ने स्वतंत्र वातावरण में सांस ली। रात के अंधेरे में उसे कुछ भी नहीं सूझ रहा था वह बार-बार किसी न किसी वस्तु से टकरा रहा था। रास्ते में उसे एक फकीर मिला जो तैनूँ गाफ्ला जाग न आई चिड़िया बोल रहियाँ.....(ऐ गाफिल तू अभी तक सोया पड़ा है जबकि पक्षी चहचहाने लगे हैं) गीत गा रहा था। नत्थू ने उसे एक पैसा दे दिया। फकीर ने मुक्त कंठ से नत्थू को आशीर्वाद दिया। नत्थू चल तो रहा था किंतु उसकी कल्पना में अभी भी यह था कि प्रात:काल छकड़ा आया होगा और उसके मारे हुए सूअर को सलोतरी के यहाँ पहुँचाया जा रहा होगा। नत्थू को अपनी पत्नी की भी याद बहुत सता रही थी। वह किसी भी तरह अपने घर पहुँचना चाहता था। सवेरा हो गया था नत्थू ने देखा सारा गाँव अंगड़ाइयाँ ले रहा है। लोग अपने अपने कार्यों में जुट रहे हैं। कहीं मस्जिद में अज़ान पढ़ने की आवाज आ रही है तो कहीं कांग्रेसी नेता देशभक्ति के नारे लगा रहे हैं। सांप्रदायिकता की आग सर्वत्र भड़की हुई थी। मुसलमान भी पीछे नहीं थे। वे भी पाकिस्तान जिंदाबाद के नारे लगा रहे थे। इसी जमघट में नत्थू की दृष्टि मुराद अली पर जा पड़ी और उसे देखती ही नत्थू का सारा शरीर काँप गया। नत्थू ने वहाँ से चुपचाप खिसक जाने में ही अपना हित समझा।

सांप्रदायिकता की इस आग को बुझाने का दायित्व वहाँ के डिप्टी कमिश्नर रिचर्ड पर था। यह रिचर्ड का दुर्भाग्य था कि मूलत: एक इतिहास का विद्यार्थी और पुरातत्व-प्रेमी होते हुए भी उस पर एक प्रशासक का दायित्व सौंपा गया था। कदाचित उसके इसी इतिहास प्रेम के कारण उसके और उसकी पत्नी लीजा के मध्य बराबर कटुता बनी रहती थी। लीजा जीवन का आनंद लेना चाहती थी जबकि रिचर्ड बुद्ध की प्रतिमाओं में खोया रहना चाहता था। लीजा अपने आपको बीयर की शीतलता में खोए रहती थी जबकि रिचर्ड निरंतर तक्षिला की कल्पना में खोया रहता था। स्वभावत: रिचर्ड उसके क्षेत्र में भड़की हुई सांप्रदायिकता की आग से नितांत बेखबर था। लीजा यह जानती थी कि वहाँ के हिंदू-मुसलमान देश के नाम पर अंग्रेजों के विरुद्ध संघर्ष कर रहे थे जबकि कुशल अंग्रेज प्रशासक उन्हें धर्म के नाम पर लड़वा रहे थे।

रिचर्ड के पास पुलिस तथा अन्य एजेंसियों के माध्यम से निरंतर नगर के भीतर की तनावपूर्ण स्थिति के समाचार मिलते रहते हैं। नगर में कांग्रेसियों ने प्रभातफेरी के साथ-साथ तामीरी काम की योजना भी शुरू कर दी। कांग्रेस के स्थानीय नेताओं ने झाड़ू, बेलके और कड़ाहियाँ संभाल ली और मुसलमानों के एक मुहल्ले में नालियाँ साफ करनी शुरू कर दीं। उनका यह कार्यक्रम महात्मा गाँधी की नीतियों के अनुसरण में आयोजित किया गया था। कांग्रेसियों के इस सेवा-भाव को देखकर मुसलमान गदगद हो रहे थे और मुक्त कंठ से बख्शी जी, मेहता जी, कश्मीरीलाल और शंकर आदि की प्रशंसा कर रहे थे। इसी बीच इन कांग्रेसी सेवादारों पर पत्थर पड़ने लगे और इनका मन किसी अनहोनी घटना के प्रति शंकित हो उठा। तभी उन्हें यह मालूम पड़ा कि 'केलों' की मस्जिद की सीढ़ियों पर कोई आदमी सूअर मारकर फेंक गया है। इस अप्रिय घटना को लेकर ये लोग विचार-विमर्श करने लगे। बख्शी जी के मतानुसार यह निश्चय ही अंग्रेजों की शरारत थी ताकि हिंदू-मूस्लमानों के मध्य तनाव उत्पन्न हो जाए। बख्शी जी चुप बैठने वाले नहीं थे, उन्होंने अपने साथ जरनैल को लिया और उस सूअर को मस्जिद के द्वार पर से उठाकर सड़क के किनारें ईंटों के ढेर के पीछे छिपा दिया। लेकिन तब तक सांप्रदायिकता की आग भड़क चुकी थी। धर्मार्थ मुसलमान बदला लेने पर उतारु थे। कोई सिरफिरा मुंडासा बाँधे गाय को मौत के घाट उतारने का संकल्प उठाए हुए था।

नोट

नोट्स 'तमस' में साहनी जी ने छोटी-छोटी अनेक कथाओं का चित्रण किया है।

हिंदू और मुसलमान दोनों एक दूसरे के शत्रु हो चुके थे। हिंदुओं के धार्मिक स्थलों में सांप्रदायिकता की गंध घुस आई थी। साप्ताहिक सत्संग में जहाँ सत्संग और नियमित मंत्रपाठ आदि का आयोजन हुआ, वहाँ नगर की बिगड़ती हुई स्थिति पर भी विचार विमर्श हुआ। वानप्रस्थी जी ने स्थिति की भयानकता का परिचय देते हुए आत्मरक्षा के उपाय जैसे-कड़वे तेल के कनस्तर रखना कच्चा या पक्का कोयला रखना आदि-आदि। युवक समाज को सैनिक प्रशिक्षण देने के प्रश्न पर भी विचार किया गया। इसी बीच एक वयोवृद्ध सज्जन ने डिप्टी कमिश्नर से मिलने और नगर की बिगड़ती हुई स्थिति से उसे अवगत कराने का सुझाव भी दिया। आत्मरक्षा के लिए शिवालय में लगे हुए घड़ियाल को भी ठीक-ठाक कराने की बात स्वीकार की गई ताकि खतरे के समय घड़ियाल बजा कर लोगों को सतर्क किया जा सके। अंततः कुछ प्रतिष्ठित लोग डिप्टी कमिश्नर से मिलने के लिए रवाना हो गए।

नगर के हिंदू युवकों को सैनिक प्रशिक्षण देने का काम मास्टर देवव्रत की देखरेख में चल रहा था। प्रधान जी लाला लक्ष्मीनारायण इस पुण्य कार्य के लिए खुले मन से आर्थिक सहायता दे रहे थे। किंतु उन्हें यह ज्ञात नहीं था कि उनका अपना लड़का रणवीर अपने किशोर मन में आवश्यकता से अधिक उत्साह लिए हुए था। रणवीर आयु में छोटे होते हुए भी अदम्य उत्साह का प्रतीक था। उसने अपने बालपन में महाभारत के वीरों की साहसपूर्ण कहानियाँ सुन रखी थी। राणा प्रताप की त्याग की कथा ने उसके रोम-रोम को प्रभावित किया था। आज वह मास्टर देवव्रत से दीक्षा लेने आया था। मास्टर जी ने उसके हाथों में एक मुर्गी थमा दी और छुरा देकर मुर्गी की गर्दन काटने का आदेश दिया। रणवीर के लिए यह कठिन परीक्षा थी किंतु उसके संस्कार आड़े आ रहे थे। संकल्पशक्ति के अभाव में वह अपनी परीक्षा में पूरी तरह सफल तो नहीं हो पाया किंतु फिर भी मास्टर जी ने उसका उत्साह बढ़ाया और मुर्गी के रक्त से रणवीर के माथे पर टीका लगा कर उसे दीक्षा दी।

युवकों ने मास्टर जी के मार्गदर्शन में एक अच्छा खासा शस्त्रागार जुटा लिया था। किसी प्रकार उन्हें कड़वा तेल तो मिल गया था किंतु ऐसी कड़ाही नहीं मिल पाई थी जिसमें पूरा एक कनस्तर तेल उबाला जा सके। तभी बोधराज को इस समस्या का हल सूझ गया। निर्णय किया गया कि रणवीर और धर्मवीर जाकर हलवाई की दुकान से एक बड़ी कड़ाही ले आयें। रणवीर का उत्साह पागलपन की सीमा का स्पर्श कर चुका था। जब वे दोनों हलवाई की दुकान पर पहुँचे तो संयोग से हलवाई वहीं मिल गया। हलवाई ने सहज भाव से पूछा कि भाई, यह कड़ाही क्यों ले जा रहे हो, किधर ले जा रहे हो। रणवीर ने इन प्रश्नों का उत्तर देने के स्थान पर छुरे से हलवाई पर प्रहार ही कर दिया। ऐसा प्रतीत होता था मानों रणवीर किसी को मार डालने की अपनी क्षमता की परीक्षा दे रहा था।

इधर बख्शी जी, हयात बख्शी आदि का एक शिष्टमंडल नगर के डिप्टी कमिश्नर रिचर्ड से मिलने के लिए उसके घर पर ही आ गया। बख्शी जी सबसे अधिक चिंतित दीख रहे थे। कहने लगे कि "सरकार की तरफ से फौरन ऐसी कार्यवाही की जानी चाहिए जिससे स्थिति काबू में आ जाए। वरना इस शहर में चीलें मंडराएंगी।" रिचर्ड ने शांति बनाए रखने के लिए अनेक सुझाव दिए। फौज की चौकियाँ बिठाने के लिए कहा, कर्फ्यू लगाने का आग्रह किया किंतु रिचर्ड की दृष्टि में ये उपाय इस समस्या का समाधान नहीं थे। उसके मतानुसार कांग्रेस, मुस्लिमलीग और सिक्खों के नेताओं को मिलजुल कर स्थिति संभालनी चाहिए। रिचर्ड ने सुझाव दिया कि सभी को मिलकर अमन कमेटी बनानी चाहिए जो कि नगर में जा-जाकर शांति की स्थापना कर प्रयत्न करे।

शिष्टमंडल रिचर्ड के यहाँ से निराश होकर लौटा था। सभी यह समझते थे कि रिचर्ड नगर की समस्या के प्रति उदासीन है। नगर में गड़बड़ी शुरू हो चुकी थी। शिष्टमंडल के सारे सदस्य भीतर से डरे हुए थे। मुसलमानों के मन में यह विश्वास जमा हुआ था कि कांग्रेस सिर्फ हिंदुओं की ही संस्था है। अतः वे लोग बख्शी, मेहता आदि के सद्भाव के प्रति भी सशंकित रहते थे। दूसरी ओर कांग्रेस के मेहता जी कांग्रेस के मुसलमान सदस्यों पर पूरा विश्वास

नहीं करते थे। मुसलमानों में भी ऐसे लोग थे जो कांग्रेसी मुसलमानों को हिंदुओं का पिट्ठू अथवा दुम हिलाने वाले कुत्तों की तरह समझते थे और उनसे घृणा करते थे। इन कट्टरपंथियों में मौला दादा का नाम विशेष रूप से उल्लेखनीय है।

कुछ समय के लिए नगर की स्थिति में कुछ सुधार हो गया था। नगर के शिवालय के बाजार में पुनः चहल पहल दीखने लगी थी। कुबड़े हलवाई के यहाँ भी भीड़ जुट गई थी। इब्राहिम इत्रफरोश कंधे पर तरह-तरह की बोतलें लटकाए हुए जा रहा था, बच्चे स्कूलों को जा रहे थे। खुदाबख्श कपड़ों की सिलाई में जुटा हुआ था। तथापि यह सारी चहल-पहल ऊपरी थी, हिंदू-मुसलमानों के बीच शत्रुता की आग गहरी जमी हुई थी। शिवालय का घड़ियाल दुरुस्त कराया जा रहा था, उसमें नई रस्सी बाँधी जा रही थी। गोरखा चौकीदार रामबलि बड़ी मुस्तैदी से घड़ियाल की सफाई में लगा हुआ था।

फज़लदीन नानबाई की दुकान पर मुसलमान लोग बैठे बतिया रहे थे। बूढ़ा करीमखान हाकिमों को दूरअंदेशी की बात कह रहा था। उसके अनुसार अंग्रेज हाकिम बहुत आगे की बात सोच सकते थे और कदाचित इसी कारण अपने वतन से सात समुद्र पार करके भारत पर शासन कर रहे थे। इसी संदर्भ में करीमखान ने भूसा और खिजर का एक रुचिपूर्ण प्रसंग भी सुनाया। सभी श्रोता करीमखान की बातें सुनकर मंत्रमुग्ध हो रहे थे। नत्थू भी इन्हीं श्रोताओ में था किंतु जब से उसने मस्जिद पर मरे हुए सूअर के पाए जाने का समाचार सुना था, वह बहुत घबराया हुआ था। उसे बार-बार ऐसी शंका हो रही थी कि कहीं मस्जिद की सीढ़ियों पर पाया गया सूअर वही तो नहीं जिसे वह रात को अपनी कोठरी में मारकर आया था। उसे यह भी संदेह था कि शायद मुराद अली ने सलोतरी साहब का नाम लेकर यह शरारत कराई हो। जो भी हो, वह इस सारे प्रसंग के कारण बहुत चिंतित था और किसी तरह अपनी पत्नी तक पहुँच जाने को लालायित था।

स्व-मूल्यांकन (Self-Assessment)

रिक्त स्थानों की पूर्ति करें (Fill in the blanks) :

1. मुराद अली ने .... को एक सूअर मारकर लाने को कहा।
2. साम्प्रदायिकता की आग बुझाने का दायित्व डिप्टी कमिशनर .... पर था।
3. युवकों ने मास्टर जी के मार्गदर्शन में एक अच्छा-खासा .... जुटा लिया था।

फज़लदीन नानबाई के कहवेखाने में भीड़ बराबर लगी थी। निकट ही वह मस्जिद भी थी। तभी पता चला कि गोलडा शरीफ के पीर उस मस्जिद में आने वाले हैं। जब पीर साहब तशरीफ लाए तो सभी लोगों ने उनका अभिवादन किया और पीर साहब भी ने सबको आशीर्वाद दिया। नानबाई पीर साहब का बहुत बड़ा प्रशंसक था। वह सभी को पीर साहब की महानता से परिचित करा रहा था। उधर मस्जिद में हजारों मुसलमान जमा हो गए थे। नत्थू पुनः सशंकित हो उठा और वह वहाँ से भी खिसक गया। बड़े बाजार में अच्छी चहल-पहल थी। उसे भूख लगी थी अतः उसने एक सीख-कबाब वाले के यहाँ से कबाब खरीदे और देसी शराब के ठेके से शराब लेकर पीने लगा। शाम घिर आई और तब नत्थू ने देखा कि वेश्याओं के बाजार में होकर गुजर रहा था। तभी सामने से उसे मुराद अली आता दिखाई दिया। नत्थू ने इस बात का बहुत प्रयत्न किया कि वह मुराद अली को वह सूचना दे दे कि उसने उसके द्वारा सौंपा गया कार्य (सूअर मारने का) पूरा कर दिया है किंतु मुराद अली इस समय नत्थू को टालना चाहता था।

उसी रात नत्थू अपने घर पहुँच गया जहाँ उसकी पत्नी बड़ी उत्सुकता से उसकी प्रतीक्षा कर रही थी। घर पहुँचकर भी नत्थू का पापी मन मुक्त नहीं हो पा रहा था। सूअर मार कर उसने अपने लिए एक बहुत बड़ी समस्या पैदा कर ली थी, उसके मन की शांति लुट चुकी थी। उसका सशंकित मन उसे बैचेन किए हुए था। अपनी पत्नी के प्रति भी उसका व्यवहार बहुत अटपटा था। नत्थू की पत्नी ने भी सहज भाव से सूअर का प्रसंग छेड़ दिया जिसे सुनकर नत्थू फिर घबरा गया। फिर भी नत्थू ने अपने आप को संभाला। अपने मन की अशांति पर विजय पाने के लिए वह

नोट

पागलों की तरह अपनी पत्नी से चिपट गया। निश्चय ही पत्नी को बाँहों में लेने के बाद नत्थू अपनी चिंता को भुला बैठा था। तभी इन पति-पत्नी को कुत्तों के भौंकने की आवाज सुनाई पड़ी। इन्होंने देखा कि निकट ही कहीं आग की लपटें उठ रही हैं, उधर शिवालय का घड़ियाल भी बज उठा। पता चला कि नगर में सांप्रदायिकता की आग भड़क गई है। एक ओर से अल्ला हो अकबर की आवाज आ रही थी तो दूसरी से हर-हर महादेव का शोर आ रहा था।

> *टास्क* 'तमस' की कथावस्तु पर अपने विचार प्रकट कीजिए।

लीजा ने भी घड़ियाल की टनटन सुनी और उत्सुकतावश उसने अपने पति रिचर्ड को जगाया। रिचर्ड वास्तविकता से परिचित था किंतु वह एक प्रशासक था। उसे मालूम था कि अल्ला हो अकबर और हर-हर महादेव के नारे हिंदू-मुसलमानों की शत्रुता के परिचायक थे। नगर में सांप्रदायिक दंगे भड़क उठे थे। लीजा चाहती थी रिचर्ड इन दंगों को रुकवाने का प्रयत्न करे किंतु रिचर्ड लीजा की बात को अनसुनी किए जा रहा था। उस समय लीजा की मन:स्थिति का वर्णन करते हुए उपन्यासकार कहता है कि उसे लगा जैसे मानवीय मूल्यों का कोई महत्त्व नहीं होता, वास्तव में महत्त्व केवल शासकीय मूल्यों का होता है।

नगर में सर्वत्र अशांति फैली हुई थी। भोले-भाले नागरिक अत्यंत भय से त्रस्त थे। सभी अपनी-अपनी सुरक्षा के लिए चिंतित थे। अबकी बार सांप्रदायिकता की आग की लपटें बहुत ऊँची उठ रही थीं।

सामान्य गृहस्थी भी आत्मरक्षा के लिए छोटा मोटा हथियार संभाले हुए थे। लाला लक्ष्मीनारायण के घर में एक छोटी सी कुल्हाड़ी थी जो कि आज उन्हें मिल नहीं रही थी। सच्चाई यह है कि दातुन तोड़ने की उस छोटी सी कुल्हाड़ी को लेकर लालाजी ने घर में कुहराम मचा रखा था। उधर उनका पुत्र रणवीर युवक संघ का प्रमुख कार्यकर्ता था, उसे दिन-रात एक ही धुन थी—शस्त्रागार को सुसज्जित करना। आज भी वह तैयारियों में लगा हुआ था, अत: घर पर कैसे रह सकता था। लालाजी पुत्र की अनुपस्थिति से बहुत चिंतित थे क्योंकि नगर में चारों ओर आगजनी, मारकाट की घटनाएँ हो रही थीं। यद्यपि लालाजी के पड़ोसी फतहदीन ने यह विश्वास दिला रखा था कि उनके रहते लालाजी पर कोई आँच नहीं आएगी फिर भी लालाजी का मन डरा हुआ था। रणवीर के लिए लालाजी अभी भी अत्यंत चिंतित थे। मनुष्य दुख के समय प्रभु का स्मरण करता है। लालाजी का परिवार भी इस खतरे की घड़ी में गायत्री मंत्र के जाप में लग गया। लालाजी रणवीर को ढूँढने के लिए बाहर जाना चाहते थे किंतु उनकी पत्नी ने उन्हें जाने नहीं दिया। अंतत: उन्होंने अपने नौकर नानकू के हाथों अपने समधी को एक संदेश भिजवाने का निश्चय किया जिससे कि समधी अपने मित्र शाहनवाज़ से कहकर उन्हें किसी सुरक्षित स्थान तक पहुँचा दें। घर में जवान बेटी थी। तभी उन्हें अपने घर के पीछे बचाओ बचाओ का स्वर सुनाई पड़ा। उन्हें लगा कि संभवत: रणवीर का स्वर है किंतु यह उनका भ्रम था। वस्तुत: कुछ मुसलमान किसी सिक्ख के पीछे लाठी लिए भागे जा रहे थे और सिक्ख किसी तरह बच निकला था।

नगर में तनाव बहुत अधिक बढ़ गया था। सारा कारोबार बंद हो गया था। लाला लक्ष्मीनारायण के समधी ने शाहनवाज़ को भेजकर लाला जी के परिवार को सुरक्षित स्थान पर पहुँचाने की व्यवस्था कर दी थी। शाहनबाज़ एक मुसलमान होते हुए भी दोस्तों का दोस्त था। दोस्ती ही उसका सबसे बड़ा धर्म था। आर्थिक दृष्टि से संपन्न होने के कारण वह नगर के हाकिमों के साथ भी उठता-बैठता था। अनेक हिंदू परिवारों में उस पर बहुत विश्वास किया जाता था। एक बार उसका एक मित्र रघुनाथ दंगों के कारण अपना मूल स्थान छोड़कर यहाँ बस गया था। मूल निवास की सुरक्षा का भार घर के नौकर मिलखी पर ही था। सभी जेवर आदि मूल निवास पर ही रखे हुए थे। रघुनाथ की पत्नी ने शाहनवाज के हाथों ही वह जेवर आदि मंगाने का निश्चय किया, शाहनवाज ही इस विश्वास के योग्य था।

रघुनाथ के घर पहुँचकर शाहनवाज ने जेवरों का डिब्बा ढूँढ़ लिया। इस काम में मिलखी ने शाहनवाज की पूरी

सहायता की। मिलखी ने सिर पर चोटी रखी हुई थी। यद्यपि शाहनवाज हिंदू परिवारों में बहुत घुला-मिला था और दोस्तों का दोस्त माना जाता था। फिर भी जब उसकी दृष्टि मिलखी के सिर की चोटी पर पड़ी तो उसके भीतर का 'इस्लाम' जाग उठा था और उसने अकारण ही मिलखी को जोर का धक्का दिया। शाहनवाज ने लौट कर जेवरों का वह डिब्बा रघुनाथ की पत्नी को थमा दिया। मिलखी के संबंध में उसने बात बदल दी और यह कहा कि वह सीढ़ियों पर से खुद गिर गया और गंभीर रूप से घायल हो गया।

हिंदू लोग पूरी तैयारी कर रहे थे। मजदूर नेता देवदत्त कांग्रेसियों और मुस्लिम लीगियों के मध्य मेल कराने का प्रयत्न कर रहा था। सारे नगर में गड़बड़ी थी किंतु अमन के इस दीवाने को रोकना कठिन था। उसके पिता ने बहुत रोका किंतु वह माना नहीं, उसे पार्टी कार्यालय में एक आवश्यक बैठक में भाग लेना था। रास्ते में उसे कई जगह फसाद होने से समाचार पता लगे किंतु वह तनिक भी विचलित नहीं हुआ। उसे यथासमय बैठक में भाग लेने जाना था। मजदूर नेताओं में ऐसा ही अदम्य उत्साह होता है। बैठक में निर्णय लिया गया कि सभी समुदायों के लीडरों की बैठक बुलाई जाए। फलतः हयातबख्श के घर पर एक बैठक बुलाई गई जिसमें बख्शी ने भी भाग लिया तथापि ऐसे सारे प्रयत्न कट्टरपंथी हिंदुओं और धर्मार्थ मुसलमानों के कारण असफल हो रहे थे। जरनैल भी ऐसा प्रयत्न करते-करते अपने प्राणों की बलि दे चुका था।

> *नोट्स* सांप्रदायिक दंगों के पीछे अंग्रेज शासकों की ही शरारत थी और उन्हीं के द्वारा इस आग को शांत भी किया गया।

रणवीर आदि युवक पूरे उत्साह से शस्त्रादि जुटाने में लगे थे। अल्पायु होने के कारण उन लोगों के भीतर केवल उत्साह था, विवेक-शक्ति नहीं थी। वे कुछ कर गुजरने के लिए आतुर थे। यह दल किसी भी आते-जाते मुसलमान को अपने छुरे का शिकार बनाना चाहता था। जैसे ही कोई मुसलमान गली के निकट से गुजरता, ये सब मिलकर घात लगाते किंतु सफलता नहीं मिल पा रही थी। अंततः इत्रफुलेल बेचने वाला उनके हमले का शिकार हुआ। युवक-संगठन का सदस्य इंद्र उसके पीछे हो लिया। फुलेल वाला उस इंद्र को बालक ही समझता रहा, रास्ते भर उससे बतियाता रहा। गली के मोड़ से पहले ही इंद्र ने फुलेल वाले पर छुरे से भरपूर घाव कर दिया। फुलेल वाला चीख उठा तब तक इंद्र गायब हो चुका था।

नत्थू अलग परेशान था। उसके मन में तरह-तरह की शंकाएँ उत्पन्न हो रही थीं। कोई भी व्यक्ति उसके घर की ओर आता, उसका मन किसी अनिष्ट से काँप उठता। उसने अभी तक सूअर मारने का रहस्य किसी से नहीं खोला था, यहाँ तक कि उसने अपनी पत्नी से भी यह रहस्य छिपाया हुआ था। स्वभावतः उसका मन बोझिल हो गया था। अंततः उसने अपनी पत्नी को उस रात की सारी घटना सुना दी। उसने अपनी पत्नी के समक्ष यह स्वीकार किया कि जो सूअर मस्जिद पर मरा हुआ देखा गया था, वह उसी ने मारा था। मुरादअली द्वारा दिए गए पाँच रुपयों में से चार रुपया अब भी उसके पास बचा था। अपनी पत्नी के आगे रहस्य प्रकट करने के बाद नत्थू को राहत की अनुभूति हुई। दोनों ने परस्पर इस रहस्य को अपने-अपने भीतर छिपाए रखने की शपथ उठाई।

झगड़ा फसाद चारों ओर फैला हुआ था। खानपुर के निकट एक गाँव में हरनामसिंह चाय की दुकान करता था। दुकान पर आज ग्राहक नहीं था, खानपुर से कोई भी बस नहीं आई थी। हरनामसिंह की पत्नी बंतो जानती थी कि उस गाँव में एक-दो सिक्ख परिवारों को छोड़कर सारे मुसलमान ही रहते थे जो किसी भी समय उनकी दुकान लूट सकते थे, उन्हें मृत्यु के घाट उतार सकते थे। हरनामसिंह बहुत धर्मपरायण सिक्ख था, उसे वाहे गुरु पर बहुत विश्वास था। उसी दिन वयोवृद्ध करीमखान, उसकी दुकान पर आया और कहने लगा "हरनामसिंह, अब तुम देर मत करो, अब बाहर के बलवाई आने वाले हैं, हम तुम्हारी रक्षा नहीं कर सकेंगे, अतः तुम गाँव छोड़कर चले जाओ।" हरनामसिंह गंभीरता पहचान गया। दोनों पति-पत्नी ने तत्काल गाँव छोड़ने का निश्चय किया क्योंकि अब और कोई चारा नहीं था। बंतों ने अपने जेवर दुकान के पीछे गाड़ दिए। हरनामसिंह ने जमा पूँजी समेटी और बंदूक लेकर दोनों पति-पत्नी

नोट

चल पड़े। दोनों सारी रात छुपते-छुपते चलते रहे। उनके जाने के कुछ देर बाद ही बलवाई आ गए, उन्हें लगा कि उनकी दुकान लूटी जा रही है, आग लगाई जा रही है किंतु वे कर ही क्या सकते थे? इसी प्रकार सारी रात बीत गई। सवेरे के छुटपुटे में वे एक गाँव के निकट पहुँच गए।

दूसरी ओर एक गुरुद्वारे में सिक्खों का जमघट लगा हुआ था। गुरुद्वारे में जहाँ गुरुग्रंथ साहब का पाठ हो रहा था, वहीं शत्रुओं से निपटने के लिए असलाह भी इक्ट्ठा किया जा रहा था। छत पर दो निहंग भाले लिए हुए पहरा दे रहे थे। गुरुद्वारे में स्त्रियों का भी एक विशाल समूह विद्यमान था जिनके मुखों पर एक अजीब चमक और आवश्यकता पड़ने पर प्राणों को न्योछावर करने का दृढ़ संकल्प सुस्पष्ट था। दो निहंग गुरुद्वारे के प्रवेश द्वार पर तैनात थे। सारी संगत में बलिदान की भावना उमड़ रही थी। 'जो बोले सो निहाल, सत श्री अकाल' की धुन गूंज रही थी। दूसरी ओर से 'अल्ला हो अकबर' के नारे गूँज उठे। तभी गुरुद्वारे में सरदार तेजसिंह ने सारी संगत को आने वाले खतरे से अवगत कराया और कमर कसने का उपदेश दिया। सारी संगत में सोहनसिंह नाम का एक दुबला-पतला युवक तेजसिंह की बात से सहमत नहीं था। उसके मतानुसार मुसलमानों के साथ मेलजोल करने की संभावनाओं पर विचार किया जाना चाहिए। संगत भड़की हुई थी। सोहनसिंह की बात सुनने को कोई भी तैयार नहीं था। निहंगसिंह तो आपे से बाहर हो गया और उसने सोहनसिंह की गर्दन पर कसकर प्रहार किया। किसी तरह लोगों ने बीचबचाव किया। उधर मुसलमानों में भी सोहनसिंह जैसी ही प्रकृति का मीरदाद था जोकि मुसलमानों को हिंदुओं और सिक्खों से मेलजोल रखने का पाठ पढ़ा रहा था। वास्तविकता यह थी कि शांति की बात करने वाला हर व्यक्ति, भले ही वह किसी भी संप्रदाय का हो, अपने आपको बुरी तरह कटा हुआ अनुभव कर रहा था। तभी बलवाइयों ने धावा बोल दिया। गुरुद्वारे में बैठा हर व्यक्ति चौकन्ना हो गया। 'अल्ला हो अकबर' और 'सत श्री अकाल' आवाजों से सारा वातावरण गूँज उठा।

हरनामसिंह और बंतों ने गाँव में घुसते ही पहले मकान की साँकल खटखटाई। घर में कोई पुरुष नहीं था, घर की मालिकनी राजो और उसकी बहू अकरा ही घर पर थी। उन्होंने आगुंतकों को शरण तो दे दी किंतु साथ ही यह भी कह दिया कि घर के पुरुषों के आने पर वे उनकी रक्षा नहीं कर सकेगी। थोड़ी देर में घर के पुरुष आ गए। इस बीच घर की मालकिनी राजो ने हरनामसिंह और बंतों को ऊपर एक मियानी में छिपा दिया। मालकिन का पति एहसान अली तो धर्मभीरु था किंतु उसका लड़का रमजान पक्का लोभी था। वे लोग संयोग से हरनामसिंह की दुकान का माल ही लूटकर लाए थे। हरनामसिंह ने ताकी से देखा कि घर के लोग उसी के संदूक का ताला तोड़ रहे हैं। हरनामसिंह ने साहस किया और संदूक की चाबी दे दी। अहसान अली ने नजर उठाकर देखा और वह हरनामसिंह को पहचान गया और उसने दोनों पति-पत्नी को नीचे उतरने को कहा। एहसान अली को ही इस बात की पूरी आशंका थी कि उसका लड़का रमजान हरनामसिंह और बंतों को संरक्षण देना सहन नहीं करेगा। इसी भय से उसने हरनामसिंह और बंतों को एक भूसे वाली कोठरी में छिपा दिया और बाहर से ताला लगा दिया। जब रमजान लौटा तो उसे किसी तरह यह पता लग गया कि उसके माता-पिता ने किसी सिक्ख दंपति को संरक्षण दे रखा है। उसने भुस वाली कोठरी का दरवाजा तोड़ दिया किंतु जैसे ही वह हरनामसिंह कि गर्दन मरोड़ने लगा, वह उसे पहचान गया और किसी कारण उसके मन में दया आ गई और उसने उन्हें जीवित छोड़ दिया। आधी रात को ही राजो उन दोनों को अपने घर से बाहर ले गई। वे दोनों फिर से नदी पार कर रहे थे और राजो के प्रति हार्दिक आभार प्रकट कर रहे थे। हरनामसिंह तो बहुत भावुक हो उठा था।

स्व-मूल्यांकन (Self-Assessment)

निम्नलिखित कथनों में सत्य अथवा असत्य की पहचान करें

(State Whether the following statements are True or False) :

4. सूअर मारकर नत्थू ने अपने लिए एक बड़ी समस्या खड़ी कर ली थी।
5. सामान्य लोगों के पास अपनी आत्मरक्षा के लिए छोटे-मोटे हथियार भी नहीं थे।
6. धर्म मनुष्य की सबसे बड़ी शक्ति होती है।

नोट

मुसलमान लोगों ने पूरी लूटपाट मचा रखी थी। मुरादपुर की ओर से लौटते हुए उन्हें एक सिक्ख युवक दिखाई दिया और सबने मिलकर उसका पीछा किया। कुछ देर तो वह युवक खाइयों में लुकता छिपता रहा किंतु अंततः उसे घेर ही लिया, उस पर पत्थरों की बौछार कर दी, वह बुरी तरह से घायल हो गया। यह सिक्ख युवक और कोई नहीं हरनामसिंह का ही लड़का इकबालसिंह था। वह अकेला और निहत्था था जबकि रमजान आदि बहुत से मुसलमान उस पर टूट पड़े। जब वह पत्थरों की मार से बुरी तरह घायल हो गया तो उसे इस शर्त पर जीवनदान दिया गया कि वह कलमा पढ़ेगा अर्थात् मुसलमान बनना स्वीकार करेगा। इकबालसिंह के पास और कोई उपाय नहीं था। सब लोग उसे अपने साथ ले गए और तब लीग की रस्म अदा की गई। मुल्ला और नाई को बुलाकर इकबालसिंह का धर्म परिवर्तन करा दिया गया और अब वह सिक्ख युवक इकबाल अहमद बन गया। उसके धर्मपरिवर्तन की प्रक्रिया घोर अपमानजनक और मुसलमानों की धार्मिक कट्टरता की परिचायक थी।

सिक्खों और मुसलमानों में दो दिन तक युद्ध चलता रहा। गुरुद्वारे में अनेक लाशें बिछ गईं। कस्बे में भी इधर-उधर बहुत लाशें बिखरी हुई पड़ी थीं जोकि सांप्रदायिकता के नाम पर मनुष्य के द्वारा मनुष्य पर किए गए अत्याचारों की क्रूर-कथा कह रही थी। युद्धविराम के लिए मुसलमान दो लाख रुपऐ माँगते थे और इसी प्रश्न पर गुरुद्वारे में विचार-विमर्श हो रहा था। अंततः तेजसिंह ने छोटे ग्रंथी को जाकर मुसलमानों से एक लाख रुपऐ तक फैसला करने का अधिकार दे दिया। जिस रास्ते से छोटा ग्रंथी जा रहा था, उधर से ही बलवाइयों ने धावा बोल दिया। बड़े ग्रंथी ने छोटे ग्रंथी मेहरसिंह को वापिस बुलाया किंतु मुसलमानों ने उसे क्षमा नहीं किया और मेहरसिंह भी सांप्रदायिकता की बलिवेदी पर चढ़ा दिया गया। बलवाइयों ने फिर से धावा बोल दिया। गुरुद्वारे में भगदड़ मच गई। सिक्खों का एक बड़ा झुंड नंगी तलवारें लेकर चल पड़ा किंतु मुसलमानों के आगे वे टिक नहीं सके। गुरुद्वारे में बैठी हुई स्त्रियों ने मुसलमानों के हाथों अपमानित होने के स्थान पर अपने प्राण देना श्रेयस्कर समझा। यह दृश्य अपने आप में अत्यंत करुणापूर्ण था। कुछ स्त्रियाँ अकेली और कुछ नन्हें मुन्नों के साथ प्राणोत्सर्ग करने के लिए जा रही थी। स्त्रियों के दल का नेतृत्व जसबीर कौर कर रही थी जोकि हरनामसिंह की विवाहित पुत्री थी। स्त्रियों का दल पक्के कुएँ की ओर बढ़ रहा था। प्राणोत्सर्ग की भावना से प्रेरित इन स्त्रियों के मुखमंडल पर एक दिव्य आभा चमक रही थी। जसबीर कौर ने सबसे पहले कुएँ में छलाँग लगाई और उसके बाद एक-एक करके गाँव की दसियों स्त्रियाँ कुएँ में कूद पड़ी। कुएँ में से नन्हें बच्चों की चीखें साफ सुनाई पड़ रही थी। इसके साथ ही एक दर्दीली और अंधेरी रात का अंत हुआ। सर्वत्र लूट-खसोट, आगजनी और मारकाट के दृश्य दीख रहे थे। गुरुद्वारे में तेजसिंह अभी युद्धनीति पर मंत्रणा में लगे हुए थे। तभी आकाश में एक हवाई जहाज उड़ता हुआ दिखाई दिया और उसके साथ ही युद्ध की लपटे शान्त हो गई। हवाई जहाज ने कस्बे के तीन चक्कर लगाए। लड़ाई बंद हो गई, नारे लगने बंद हो गए, लाशों को ठिकाने लगाने का कार्य आरंभ हो गया। नगर में चप्पे-चप्पे पर फौजियों की चौकियाँ बैठी दी गई, पुलिस के घुड़सवार सिपाहियों की गश्त आरंभ हो गई। एक बार फिर सामान्य जीवन आरंभ होने लगा। डिप्टी कमिश्नर स्वयं शहर का दौरा करने लगे।

शरणार्थियों के पुनर्वास का काम आरंभ हो गया। डिप्टी कमिश्नर रिचर्ड ने हेल्थ आफीसर आदि के सहयोग से शहर की सफाई, जल आदि की व्यवस्था करनी शुरू कर दी। जहाँ अभी भी फसाद का डर था वहाँ कर्फ्यू लगा दिया गया था। समाजसेवी संस्थाओं से सहयोग देने की अपील की गई। रिलीफ कमेटी की स्थापना की गई। बख्शी जी का अभी भी पूरा विश्वास था कि इन फसादों के पीछे अंग्रेज शासकों का हाथ था। यदि डिप्टी कमिश्नर समय रहते ही कर्फ्यू आदि लगा देता और अन्य पूर्वापाय करता तो यह लूट-खसोट, आगजनी और मारकाट की घटनाएँ बिल्कुल नहीं होती।

टास्क 'तमस' उपन्यास का सबसे दुखद पक्ष कौन-सा था? टिप्पणी कीजिए।

नोट

रिलीफ कमेटी के कार्यकर्ताओं को शरणार्थियों के नुकसान के आँकड़े तैयार करने का काम सौंपा गया। लोग बहुत दुखी थे। जब उनसे आँकड़े प्रस्तुत करने को कहा जाता तो वे अपनी दुखभरी कथा सुनाने लग जाते। उपन्यासकार के शब्दों में "वह आँकड़े माँगता था, लोग उसे अपने जख्म दिखा रहे थे।" किसी की पत्नी बिछुड़ गई थी तो किसी की कुमारी कन्या बलवाइयों के पास छूट गई थी। सभी अपना-अपना रोना रो रहे थे। कार्यकर्ताओं का हृदय इन करुण कथाओं को सुनकर द्रवित हो उठा था किंतु उनकी अपनी सीमाएँ थी। दुखी व्यक्ति इन सीमाओं को कैसे समझ सकता है? सभी लोगों की आँखों के सामने अंधेरा छाया हुआ था, किसी को कुछ नहीं सूझता था। उपन्यासकार के शब्दों में "लगता जैसे कोई अनिवार्य घटना-चक्र चल रहा है जिस पर किसी का कोई बस नहीं, न किसी के हाथ में निर्णय है, न संचालन, न संचालन की क्षमता, कठपुतलियों की तरह सभी घूम रहे थे, भूख लगती तो उठकर इधर-उधर से कुछ खा लेते, याद आती तो रो देते और कान लगाकर सुबह से शाम तक लोगों की बातें सुनते रहते।"

कतिपय स्वार्थी लोग इस दंगे-फसाद में भी अपने स्वार्थ साधन में लगे हुए थे। अमन कमेटी की बैठकों में जहाँ शरणार्थियों को राहत पहुँचाने के उपायों पर विचार होता था, वहीं मकानों, जमीनों के सौदे भी तय होते थे। ठेकेदार शेखनूर इलाही अपने मित्र शेख से किसी सस्ते सौदे की बात कर रहे थे। इसी प्रकार हिंदुओं में भी कतिपय लोग इसी प्रकार की सौदेबाजी में लगे हुए थे। हिंदुओं के मोहल्ले में मुसलमान नहीं रहे थे और मुसलमानों के मोहल्ले में हिंदुओं के घर ढूँढ़े नहीं मिलते थे। कुछ समझदार लोग अवश्य यह समझते थे कि सबको यहीं रहना है। अतः दंगों की कड़वाहट मन में से निकाल दी जानी चाहिए। ऐसे लोग सभी संप्रदायों में थे और वे पूरी निष्ठा के साथ अमन लाने का प्रयत्न कर रहे थे।

सांप्रदायिकता की आग की राख में अब भी कहीं-कहीं गर्मी थी। फिर भी कुल मिलाकर सारे नगर में जीवन सामान्य हो चला था। अमन कमेटी की विधिवत स्थापना की गई। उसके कार्यकर्ताओं के चुनाव के प्रश्न पर पुनः कुछ कट्टरपंथी लोग सामने आए। इतने बड़े फसाद के बाद न तो हिंदू यह भूल सके थे कि वे हिंदू हैं न मुसलमान ही यह भूल सके थे कि वे मुसलमान हैं। भाव यह है सब संप्रदायों में शांतिप्रिय लोग भी होते हैं और कट्टरपंथी भी।

अमन कमेटी ने एक बस में यात्रा आरंभ की। बस में मुराद अली विद्यमान थे। कुछ लोगों ने पहचान लिया और यदि नत्थू होता तो वह तो अवश्य ही पहचान लेता। नत्थू मर चुका था। बस में माइक्रोफोन पर मुराद अली ही हिंदू-मुस्लिम एकता का नारा लगा रहा था। वास्तविकता यह है जिस मुराद अली के कहने पर नत्थू ने सूअर मारा और जिस सूअर को शरारती तत्वों ने मस्जिद के आगे डालकर सांप्रदायिक दंगे भड़का दिए वही मुराद अली आज हिंदू-मुस्लिम एकता के नारे लगा रहा था, अमन कमेटी का मुखिया बना हुआ था।

अनेक बुद्धिमान लोग इस सत्य को पहचान गए थे कि सांप्रदायिक दंगों के पीछे न तो हिंदू थे न मुसलमान बल्कि यह अंग्रेज शासकों की शरारत थी। अंग्रेज शासक हिंदू और मुसलमानों की एकता में दरार डालकर दोनों को परस्पर भिड़वाना चाहते थे। धर्म मनुष्य की सबसे बड़ी दुर्बलता होती है। वह सब कुछ सहन कर सकता है किंतु अपने धार्मिक विश्वासों, मान्यताओं को खंडित होते नहीं देख सकता। अंग्रेज शासक ने हिंदू-मुसलमानों की इस दुर्बलताओं को पहचाना और उसका भरपूर लाभ उठाया अर्थात दोनों के मध्य तीव्र घृणा उत्पन्न कर दी। दोनों संप्रदाय सभी प्रकार के नैतिक और मानवीय मूल्यों को ताक पर रखकर एक दूसरे से जूझ पड़े। अंत में विजय भी अंग्रेज शासक को ही मिली क्योंकि उसी के प्रयासों से सांप्रदायिकता की यह आग शान्त हो सकी थी।

इस प्रसंग का सबसे अधिक दुखद पक्ष यह था हिंदू और मुसलमान अंग्रेज शासकों की इस चाल को नहीं समझ पाए और एक दूसरे से भिड़ गए। युद्ध के नाम पर असामाजिक तत्वों को भी अपने स्वार्थ सिद्ध करने का अवसर मिल जाता है। अनेक लोग आधारहीन अफवाहें, फैलाकर भोले-भाले नागरिकों को युद्ध की आग में धकेल देते हैं। मंदिर और मस्जिद ईश्वर की स्तुति के स्थल नहीं रह जाते अपितु वे शस्त्रागार बन जाते हैं। धर्मार्थ लोग धर्म की रक्षा के लिए बड़ा से बड़ा कुकृत्य करने पर उतारू हो जाते हैं। जो गिने चुने लोग शांति की बात करते हैं वे कट्टरपंथियों का कोप भाजन बन जाते हैं। धर्म के दीवाने रमजान और देवव्रत जैसे लोग सांप्रदायिकता की आग को

नोट

और अधिक उत्तेजित कर देते हैं और ऐसा करते समय वे यह भूल जाते हैं कि उनकी लगाई हुई आग में हजारों लाखों ऐसे भोले-भाले नागरिक जलकर भस्म हो जाएँगे जिनका धर्म से कोई भी वास्ता नहीं है। सांप्रदायिक दंगों के मूल में इसी प्रकार के तत्व विशेष रूप से सक्रिय रहते हैं।

16.2 सारांश (Summary)

- मुराद अली ने नत्थू को सलोतरी साहब के लिए एक सूअर मारकर उपलब्ध कराने के लिए कहा है और इसके लिए नत्थू को पाँच रुपए का नोट पारिश्रमिक के रूप में दिया गया है।
- अपनी कोठरी से निकलकर नत्थू ने स्वतंत्र वातावरण में सांस ली। रात के अंधेरे में उसे कुछ भी नहीं सूझ रहा था वह बार-बार किसी न किसी वस्तु से टकरा रहा था।
- सांप्रदायिकता की इस आग को बुझाने का दायित्व वहाँ के डिप्टी कमिश्नर रिचर्ड पर था। यह रिचर्ड का दुर्भाग्य था कि मूलत: एक इतिहास का विद्यार्थी और पुरातत्व-प्रेमी होते हुए भी उस पर एक प्रशासक का दायित्व सौंपा गया था।
- हिंदू और मुसलमान दोनों एक दूसरे के शत्रु हो चुके थे। हिंदुओं के धार्मिक स्थलों में सांप्रदायिकता की गंध घुस आई थी।
- युवकों ने मास्टर जी के मार्गदर्शन में एक अच्छा खासा शस्त्रागार जुटा लिया था। किसी प्रकार उन्हें कड़वा तेल तो मिल गया था किंतु ऐसी कड़ाही नहीं मिल पाई थी जिसमें पूरा एक कनस्तर तेल उबाला जा सके।
- कुछ समय के लिए नगर की स्थिति में कुछ सुधार हो गया था। नगर के शिवालय के बाजार में पुन: चहल पहल दीखने लगी थी। कुबड़े हलवाई के यहाँ भी भीड़ जुट गई थी।
- नगर में सर्वत्र अशांति फैली हुई थी। भोले-भाले नागरिक अत्यंत भय से त्रस्त थे। सभी अपनी-अपनी सुरक्षा के लिए चिंतित थे। अबकी बार सांप्रदायिकता की आग की लपटें बहुत ऊँची उठ रही थीं।
- नत्थू अलग परेशान था। उसके मन में तरह-तरह की शंकाएँ उत्पन्न हो रही थीं। कोई भी व्यक्ति उसके घर की ओर आता, उसका मन किसी अनिष्ट से काँप उठता। उसने अभी तक सूअर मारने का रहस्य किसी से नहीं खोला था।
- गुरुद्वारे में सिक्खों का जमघट लगा हुआ था। गुरुद्वारे में जहाँ गुरुग्रंथ साहब का पाठ हो रहा था, वहीं शत्रुओं से निपटने के लिए असलाह भी इक्ट्ठा किया जा रहा था। छत पर दो निहंग भाले लिए हुए पहरा दे रहे थे।
- सिक्खों और मुसलमानों में दो दिन तक युद्ध चलता रहा। गुरुद्वारे में अनेक लाशें बिछ गई। कस्बे में भी इधर उधर बहुत लाशें बिखरी हुई पड़ी थीं जोकि सांप्रदायिकता के नाम पर मनुष्य के द्वारा मनुष्य पर किए गए अत्याचारों की क्रूर-कथा कह रही थी।
- स्वार्थी लोग इस दंगे-फसाद में भी अपने स्वार्थ साधन में लगे हुए थे। अमन कमेटी की बैठकों में जहाँ शरणार्थियों को राहत पहुँचाने के उपायों पर विचार होता था, वहीं मकानों, जमीनों के सौदे भी तय होते थे।
- अनेक बुद्धिमान लोग इस सत्य को पहचान गए थे कि सांप्रदायिक दंगों के पीछे न तो हिंदू थे न मुसलमान बल्कि यह अंग्रेज शासकों की शरारत थी। अंग्रेज शासक हिंदू और मुसलमानों की एकता में दरार डालकर दोनों को परस्पर भिड़वाना चाहते थे।

16.3 शब्दकोश (Keywords)

1. आरंभ – शुरुआत
2. पारिश्रमिक – मेहनताना, मजदूरी
3. प्रहार – वार
4. संकल्प – इरादा
5. घाव – जख्म
6. सतर्क – सावधान

नोट

7. सर्वत्र – सब जगह
8. हित – भला
9. दुर्भाग्य – बदकिस्मती
10. कटुता – कड़वाहट
11. कल्पना – सोच।

16.4 अभ्यास प्रश्न (Review Questions)

1. रिचर्ड और उसकी पत्नी लीजा के मध्य कटुता का क्या कारण था?
2. नत्थू की दुविधात्मक स्थिति का वर्णन अपने शब्दों में कीजिए।
3. नगर में साम्प्रदायिकता की आग किस प्रकार फैली?
4. राजो ने हरनामसिंह और बंतो की मदद किस प्रकार की?
5. साम्प्रदायिकता की आग किस प्रकार शांत हुई?

उत्तर : स्व-मूल्यांकन (Answers : Self-Assessment)

1. नत्थू
2. रिचर्ड
3. शस्त्रागार
4. सत्य
5. असत्य
6. असत्य।

16.5 सन्दर्भ पुस्तकें (Further Readings)

पुस्तकें तमस–भीष्म साहनी, राजकमल प्रकाशन (प्रा.) लि., नई दिल्ली।

नोट

इकाई–17: 'तमस' की साम्प्रदायिकता एवं संवाद-योजना

अनुक्रमणिका (Contents)

उद्देश्य (Objectives)

प्रस्तावना (Introduction)

17.1 'तमस' उपन्यास की साम्प्रदायिकता

17.2 'तमस' की संवाद-योजना

17.2.1 संवादों का विस्तार

17.2.2 संवादों के प्रकार

17.2.3 संवादों के गुण

17.2.4 संवादों का उद्देश्य

17.3 सारांश (Summary)

17.4 शब्दकोश (Keywords)

17.5 अभ्यास प्रश्न (Review Questions)

17.6 सन्दर्भ पुस्तकें (Further Readings)

उद्देश्य (Objectives)

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् विद्यार्थी योग्य होंगे–

- उपन्यास की साम्प्रदायिकता को समझने में;
- 'तमस' के संवादों के विस्तार एवं प्रकारों को जानने में;
- संवादों के गुणों की व्याख्या करने में;
- उपन्यास के संवादों के मुख्य उद्देश्य को समझने में।

प्रस्तावना (Introduction)

उपन्यास में जितना महत्त्व कथानक और पात्रों का है, उतना ही संवादों का अथवा यों कहिए कि इनके बाद तीसरे स्थान पर संवाद है। संवादों के माध्यम से जहाँ पात्रों का चरित्रांकन प्रत्यक्ष रीति से होता है, वहीं लेखक भी प्रत्यक्ष रूप से सामने आने से बच जाता है। वह किसी पात्र की कोई विशेषता स्वयं न कहकर उसके कार्यकलापों, दूसरे के साथ बातचीत अथवा अन्य पात्रों द्वारा उसके संबंध में की गयी टिप्पणी के द्वारा देता है और ये सब क्रियाएँ संवादों के माध्यम से ही संभव हैं। अत: उपन्यास में संवादों का महत्त्वपूर्ण स्थान होता है। संवादों का नाता पात्रों के चरित्र-चित्रण एवं कथावस्तु के विकास से है। इन दोनों बातों का ध्यान रखकर जो कथोपकथन लिखे जाते हैं वे ही सफल होते हैं।

17.1 'तमस' उपन्यास की सांप्रदायिकता

'तमस' उपन्यास में सांप्रदायिकता नत्थू चमार के माध्यम से होती है। इस उपन्यास का एक पात्र जिसका नाम मुराद अली है वह नत्थू को एक सूअर को मारकर उसे मस्जिद पर डालने के लिए कहता है। यहीं से सांप्रदायिकता प्रारंभ होती है। नत्थू को यह पता भी नहीं था कि यह घटना इतना बड़ा मोड़ ले लेगी। मुस्लिमों की मस्जिद पर जब सूअर को मरा हुआ देखा जाता है तो वह भड़क उठते हैं और एक गाय को मारकर उसे मंदिर के सामने डाल देते हैं। लेखक बताना चाहता है कि व्यक्ति अपने धर्म का अपमान बिल्कुल सहन नहीं कर सकता। बस उसी दिन से शहर में दंगे फसाद शुरू हो जाते हैं। न जाने कितने हिंदू लोग मारे जाते हैं और न जाने कितने मुस्लिम लोग मारे जाते हैं। यह घटना लगातार चार-पाँच दिन तक चलती रहती है। यही घटना इस उपन्यास की सांप्रदायिकता का मुख्य भाग है। एक राष्ट्र के नागरिक होते हुए भी विभिन्न धर्मों में बँटे होने के कारण सांप्रदायिकता को प्रश्रय देते हैं। हमारी यही सांप्रदायिकता न जाने कितने प्राणों को मृत्यु के मुख में धकेल देती है। उपन्यास में आरंभ से लेकर अंत तक उसके प्रसार एवं उसके वीभत्स परिणामों का सिलसिलेवार वर्णन साहनी जी ने किया है कि कुछ सामाजिक तत्व केवल अपने निहित स्वार्थों के लिए हिंदू मुसलमानों में धार्मिक विद्वेष फैलाकर दंगा भड़काते हैं और फिर जब सांप्रदायिक दंगा हो जाता है तो लोग एकदम अंधे होकर किसी प्रकार फिरकापरस्ती के शिकार होकर उसे फैलाते जाते हैं।

टास्क 'तमस' की साम्प्रदायिकता पर अपने विचार प्रस्तुत कीजिए।

17.2 'तमस' की संवाद-योजना

एक विचारक के मतानुसार कथोपकथन अथवा संवादों का इतना अधिक महत्त्व है कि उनके बिना कथा और पात्रों में सजीवता नहीं आ सकती है। उनका कहना है कि "कथोपकथन जितने अधिक पात्रानुकुल, स्वाभाविक, अभिनयात्मक, संक्षिप्त एवं प्रभावक होंगे, घटना और चरित्रों में उतनी ही सजीवता आएगी। उपन्यासकार में चुस्त, चुटीले, एवं प्रसंगानुकूल कथोपकथन प्रस्तुत करने की अदभुत क्षमता होनी चाहित। गठे हुए कथोपकथनों से कृति में एक विशिष्ट वातावरण की गरिमा के साथ स्पंदनपूर्ण जीवन भी परिप्लावित होने लगता है। कथोपकथन उपन्यास में दृश्यकाव्य की सजीवता और वास्तविकता का अत्यंत मोहक संचार कर उसे एक भव्य कलापूर्ण एवं प्रेष्यत्वमुक्त कृति की महत्ता प्रदान करते हैं। लेखक का कौशल अन्य बातों में तो परखा ही जाता है परंतु कथोपकथन में विशेष रूप से उसके संवादों का एक-एक शब्द शब्दभेदी बाण की तरह मर्मच्छेदी होता है।"

'तमस' भीष्म साहनी जी का वृहदाकार उपन्यास है। इसमें उन्होंने संवादों को भी प्रचुरता से प्रयुक्त किया है क्योंकि इससे घटनाक्रम में स्वाभाविकता आ जाती है और पाठकों के मन अनायास ही उस घटनाक्रम अथवा भावक्रम को समझ लेते हैं। साहनी जी संवाद-योजना द्वारा अनेक उद्देश्य की पूर्ति करते हैं।

'तमस' उपन्यास की संवाद-योजना या कथोपकथनों पर निम्नलिखित दृष्टियों से विचार किया जा सकता है–

(क) संवादों का विस्तार

(ख) संवादों के प्रकार

(ग) संवादों के गुण

(घ) संवादों का उद्देश्य

(ङ) संवादों की भाषा

(च) संवाद-योजना का मूल्यांकन।

नोट

अब इन पर 'तमस' के संदर्भ में साहनी जी द्वारा लिखित संवाद-योजना की समीक्षा की जाएगी।

17.2.1 संवादों का विस्तार

संवादों अथवा कथोपकथनों के दो रूप दिखाई देते हैं–

(1) संक्षिप्त संवाद-योजना

(2) दीर्घ संवाद-योजना।

(1) संक्षिप्त संवाद-योजना–'तमस' उपन्यास में कथा के विकास, पात्रों के क्रियाकलाप, वातावरण के चित्रण और लेखकीय उद्देश्य की पूर्ति के लिए साहनी जी ने सानुकूल संवाद दिए हैं। उनके कुछ संवाद तो मात्र एक-एक शब्द के ही हैं और कुछ संवाद एक-दो कथनों-उपकथनों तक चलते हैं। लेकिन इनसे भी चरित्र-चित्रण बड़ी कुशलता के साथ हुआ है और इनमें लेखक की कलात्मकता सुनियोजित है। अपने अभिव्यंजना-कौशल से लेखक ने एक-एक, दो-दो शब्दों में संपूर्ण अर्थ को स्पष्ट कर दिया है और बातचीत भी संक्षिप्त रहती है। उदाहरण के रूप में आंकड़ा बाबू और हरनामसिंह के बीच हुए निम्नलिखित संवाद को प्रस्तुत किया जा सकता है–

"नाम?"

"हरनामसिंह।"

"वल्दियत?"

"सरदार गुरदयाल सिंह।"

"मौजा?"

"ढोक इलाहीबख्श।"

"तहसील"

"नूरपुर।"

"कितने घर हिंदुओं-सिक्खों के थे?"

"केवल एक घर, मेरा घर जी।"

बाबू ने सिर ऊपर उठाया। बड़ी उम्र का एक सरदार सवालों के जवाब दिए जा रहा था।

"तुम बचकर कैसे आ गए?"

"करीमखान के साथ हमारे बड़े अच्छे ताल्लुकात थे। शाम को जब..."

बाबू ने उंगली का इशारा करके उसे बोलने से बंद कर दिया।

इस संवादों में एक-एक शब्द के ही संवाद तो हैं किंतु इनमें अर्थवत्ता है। एक तो कथन के प्रति जिज्ञासा लक्षित होती है और दूसरी ओर किसी प्रकार अपनी बात समाप्त करो और मेरा पिंड छोड़ों जैसा हार्दिक भाव भी परिलक्षित होता है।

> *नोट्स* 'तमस' उपन्यास में संवाद-योजना कहीं तो अत्यंत विस्तृत है और कहीं अति संक्षिप्त है। कुछ संवाद लंबे-लंबे और दुरूह तथा कई पृष्ठों तक चलते हैं। एक-एक संवाद कई-कई पंक्तियों का है और कोई संवाद पूर्वा-संबंधित तथा अति संक्षिप्त है।

नोट

(2) **दीर्घ संवाद-योजना–**इस प्रकार के संवाद विस्तृत, लंबे तथा कहीं-कहीं भाषण जैसे भी लगते हैं, परंतु रोचकता तथा सजीवता यहाँ भी पूर्ववत् है। अनापेक्षित विस्तार कहीं भी नहीं है। जो भी विस्तार इस प्रकार के संवादों में दिखाई देता है, वह पात्रों की स्थिति अथवा कथानक को गति देने के लिए एक आवश्यकता के रूप में ही दिया है। नत्थू एवं उसकी पत्नी का संवाद, रिचर्ड एवं लीजा का संवाद, गुरुद्वारे के सिखों या आंकड़ा बाबू और एक सरदार जी का संवाद इसी प्रकार के दीर्घ संवादों की श्रेणी में आते हैं। इस प्रकार का एक उदाहरण देखिए–

"क्यों बाबू जी, क्या मालूम मेरी सुखवंत ने कुएँ में छलांग नहीं लगाई हो? क्या मालूम जी, बेटे को लेकर गाँव में ही कहीं छिपी बैठी हो? मैं गली में भागता हुआ अपने घर गया था जी। खाट लेने के लिए क्योंकि आसासिंह जख्मी हो गया था तभी मैंने बहुत सी औरतों को गुरुद्वारे में से निकलते देखा। सुखवंत भी उनके साथ थी। मुझे क्या मालूम जी, कहाँ जा रही हैं? उसके हाथ ऊपर को उठे हुए थे और गले में पल्ला डाल रखा था। जब मैं खाट लेकर आया तो सुखवंत गली में खड़ी थी, पहले वह भी औरतों के पीछे जा रही थी, फिर वह पीछे खड़ी हो गई थी। हमारा बेटा गुरमीत गुरुद्वारे के चबूतरे पर खड़ा था। फिर कभी बैठ भी जाती तो गली में धूप-छाँह जैसी होने लगती। इसी धूप-छांह में मैंने देखा, सुखवंत घबराई हुई थी। वह कभी घबराती नहीं थी जी, आज घबराई हुई थी। वह लौट आई। बेटे के पास लौट आई। फिर गली में खड़ी हो गई। जब आग भड़की तो मैंने देखा वह गली के बीचोबीच काँपती-सी खड़ी थी। 'सुखो, क्या कर रही है?' मैंने कहा, पर उस वक्त सोचने-कहने का वक्त कहाँ था? अगर उस वक्त सुखवंत की नजर मुझ पर पड़ जाती तो वह गुरमीत को तो नहीं ले जाती जी। फिर एक बार वह बेटे के पास गई और फिर चलते-चलते रूक गई। मुझे क्या मालूम था जी, वह क्या करने जा रही है, क्या सोच रही है? तभी गांव के बाहर शोर होने लगा था। 'या अली' की आवाजें आने लगी थीं। तभी मैंने घूमकर देखा तो सुखवंत लपककर गुरमीत के पास आई और गुरमीत को बाहों में उठाकर भागती हुई औरतों के पीछे-पीछे जाने लगी। आखिरी बार जब मैंने उसे देखा तो सुखवंत भागी जा रही थी और उसका हरे रंग का पल्ला उड़ रहा था। उसके बाद गली का मोड़ आ गया जी और वह आँखों से ओझल हो गई।....मैं यही पूछता हूँ न जी, क्या मालूम गुरमीत नहीं डूबा हो, वहीं कहीं कुँए के पास घूम रहा हो। क्यों जी? क्यों बाबू जी? इसका पता नहीं लगाया जा सकता...?" पर ये आँकड़े नहीं थे बरामद का काम उसका नहीं है, वह देवराज जी करते हैं, बरामद का सारा काम, गड़ा हुआ सोना निकालने, कपड़े लत्ते निकालने, ऐसे सभी काम वह संभाले हुए हैं। सरदार जी, बेटे का पता लगाने के लिए आप उनके पास जाइए। मेरे पास आने की जरूरत नहीं है। आप तीसरी बार मेरे पास आ चुके हैं, बार-बार यही किस्सा दोहराते हैं, यह सुनना मेरा काम नहीं है...

पर सरदार फिर भी सामने बैठा हुआ बाबू की ओर देखे जा रहा है। यह किस उम्मीद पर मेरे पास आता है, मैं इसे कैसे समझाऊँ कि मैं कुछ नहीं कर सकता पर अंत में बाबू धीमी आवाज में कहता है।

"मंगलवार को शायद एक बस आपके गांव जाएगी। मैं देवराज जी से कहूँगा कि उसमें आपको भी भेज दें। मगर आप किसी को बताइएगा नहीं, वरना सारा गाँव मेरे पास दौड़ा चला आवेगा।...."

पर इस वाक्य का सरदार पर कोई असर नहीं होता। फिर अपने ही तर्क द्वारा अपने को समझाते हुए वह कहता है, "पर अपनी आँखों से देख लेना अच्छा होता है सब बात ठोक-बजा कर देख लेनी चाहिए। बेटा कहीं छिपा बैठा होगा तो मुझे देखकर अपने आप बाहर आ आएगा। भागता हुआ बाहर आ जाएगा या वहीं से बैठा-बैठा चिल्लाने लगेगा। 'मुझे ढूँढ लो।' घर में भी रोज छिपता फिरता था, कभी एक दरवाजे के पीछे, कभी दूसरे दरवाजे के पीछे....।"

बाबू धीमे से कुर्सी से उठा और दफ्तर से बाहर निकल आया। उपर्युक्त संवाद से यह स्वत: स्पष्ट है कि वस्तुस्थिति को सम्पूर्णता के साथ स्पष्ट करने के लिए इतनी लंबी संवाद-योजना यहाँ प्रस्तुत की गई है।

स्व-मूल्यांकन (Self-Assessment)

रिक्त स्थानों की पूर्ति करें (Fill in the blanks) :

1. व्यक्ति अपने धर्म का ·············· बिल्कुल सहन नहीं कर सकता।

2. संवाद के प्रकारों का अनेक रूपों में .... किया जा सकता है।
3. नत्थू का मानसिक ऊहापोह स्पष्ट एवं यथार्थ .... पर चित्रित हुआ है।

17.2.2 संवादों के प्रकार

संवादों के रूपों पर दृष्टिपात किए जाए तो संवादों के अनेक प्रकार दिखाई देते हैं। इन प्रकारों का अनेक रूपों से वर्गीकरण किया जा सकता है। आकार की दृष्टि से यदि संवादों का वर्गीकरण किया जाए तो कुछ लंबे संवाद होते हैं और कुछ संक्षिप्त। इनका विवेचन पहले ही किया जा चुका है। इसके अतिरिक्त भी संवादों के अन्य अनेक प्रकार हो सकते हैं। संवादों के इन विविध प्रकारों को निम्नलिखित रूपों में देखा जा सकता है–

(1) नाटकीय संवाद,

(2) विश्लेषणात्मक पद्धति पर लिखे गए संवाद,

(3) मानसिक ऊहापोह को प्रकट करने वाले संवाद,

(4) स्वगत कथन,

(5) भावात्मक संवाद।

संवादों के उपर्युक्त प्रकारों का आगे 'तमस' उपन्यासकार के आधार पर सोदाहरण विवेचन प्रस्तुत किया जा रहा है–

(1) नाटकीय संवाद–इस प्रकार के संवादों में नाटकीय पद्धति पर बातचीत को लेखक प्रस्तुत करता है। इन संवादों से उपन्यास में नाटकीयता उत्पन्न होती है। इनकी विशेषता यह होती है कि इस प्रकार के संवादों में उपन्यासकार अपने संकेत पात्रों की भाव-भंगिमा, मन:स्थिति अथवा चरित्र संबंधी विश्लेषण नहीं देता। इस प्रकार के संवादों का 'तमस' उपन्यास में प्रचुरता से प्रयोग किया गया है। उदाहरणार्थ, निम्नलिखित संवाद प्रस्तुत किया जा रहा है–

"अबकी बार तुम्हें जरूर किसी न किसी काम में दिलचस्पी लेते रहना चाहिए लीजा।"

"किस काम में?"

"कितने ही काम हैं। डिप्टी कमिश्नर की पत्नी तो जिले की प्रथम महिला गिनी जाती है, तुम जो भी काम हाथ में लोगी, उसी में अन्य अफसरों की बीवियाँ तुम्हारी मदद करेंगी।"

"मैं जानती हूँ, जानती हूँ। रेड-क्रास से चंदा इकट्ठा करो, फ्लावर शो का आयोजन करो, बच्चों का कोट तैयार करो, सैनिकों की मदद के लिए कपड़े और जूते इकट्ठे करो, यही ना?"

"एक और संस्था भी है जो यहाँ खोलने का इरादा है, जानवरों की देखभाल और रक्षा के लिए। यहाँ पर अभी तक इस किस्म की कोई संस्था नहीं है। कैनटोनमेंट की सड़कों पर आवारा कुत्ते घूमते रहते हैं, उन्हें हटाना, घोड़ा-गाड़ियों में बूढ़े लंगड़े घोड़े जुते रहते हैं.....।"

"इनका क्या करोगे?"

"इन्हें मरवा देना चाहिए। इनसे काम लेते रहना तो जुल्म है। आवारा कुत्ते बीमारी फैलाते हैं, हड़क जाते हैं तो काट खाते हैं। तुम कोई सा काम चुन लो, जिसमें तुम्हारी रुचि हो।"

(2) विश्लेषणात्मक पद्धति पर लिखे गए संवाद– इस प्रकार के संवादों में पात्रों के कथोपकथनों के अतिरिक्त उनकी मन:स्थिति, भाव-भंगिमा और क्रिया-कलापों का बीच-बीच में संकेत होता रहता है। इस प्रकार के प्रयोग उपन्यास में बड़े ही कलात्मक बन पड़ते हैं और इनसे पात्रों के चरित्रों को समझाने में बड़ी सहायता मिलती है। 'तमस' उपन्यास में साहनी जी ने इनका काफी प्रयोग किया है। इस प्रकार का एक उदाहरण यहाँ प्रस्तुत किया जा रहा है–

नोट

"इस इलाके के लोग भी बहुत पुराने जमाने से, सैकड़ों बरसों से यहाँ बसे हुए हैं।" फिर लीजा की ओर घूमकर बोला, "क्या यहाँ के लोगों को तुमने ध्यान से देखा है? एक ही नस्ल के लोग हैं। नाक-नक्श सबके एक जैसे हैं, एक तरह के नाक, होंठ, चौड़ा ऊँचा माथा, ब्राउन रंग की आँखें। यहाँ के लोगों की आँखें ब्राउन रंग की हैं, तुमने ध्यान दिया, लीजा?"

"एक ही नस्ल के कैसे हो सकते हैं रिचर्ड? जबकि तुम कहते हो कि इस रास्ते से तरह-तरह के लोग आते रहे हैं।"

"नहीं-नहीं लीजा, यही बात तो लोग भूल जाते हैं।" रिचर्ड की आवाज में उत्तेजना आ गई थी, मानो वह अपनी किसी खोज को प्रमाणित करने जा रहा हो। "जो लोग मध्य एशिया से सबसे पहले यहाँ आए, शताब्दियों के बाद उन्हीं के नाती-पोते अन्य देशों से इधर आए। नस्ल सबकी एक ही थी। वे लोग जो आर्य कहलाते थे और हजारों वर्ष पहले यहाँ पर आए, और वे भी जो मुसलमान कहलाते थे और लगभग एक हजार वर्ष पहले यहाँ पर आए, एक ही नस्ल के लोग थे। सभी एक ही जाति के लोग थे।"

"इन बातों को ये लोग भी तो जानते होंगे?"

"यहाँ के लोग कुछ नहीं जानते। ये वही कुछ जानते हैं जो हम इन्हें बताते हैं।" फिर थोड़ी देर तक मौन रहकर बोला। "ये लोग अपने इतिहास को जानते नहीं है, ये केवल उसे जीते-भर हैं।"

टास्क 'तमस' को सफल कृति बनाने में इसकी संवाद-योजना ने क्या भूमिका निभाई है?

(3) मानसिक ऊहापोह को प्रकट करने वाले संवाद—इस प्रकार के संवादों का संबंध मन:स्थिति से होता है। 'तमस' उपन्यास में इस प्रकार के संवाद पर्याप्त परिमाण में उपलब्ध होते हैं। इन संवादों की एक विशेषता यह होती है कि इनमें अन्य संवादों की तरह अनेक व्यक्ति भाग नहीं लेते, अपितु ये केवल एक ही व्यक्ति के संवाद होते हैं। आलोच्य उपन्यास में नत्थू के एकालाप में इस प्रकार के संवाद प्रयुक्त हुए हैं। इसी कारण नत्थू का मानसिक ऊहापोह स्पष्ट एवं यथार्थ धरातल पर चित्रित हुआ है। एक उदाहरण यहाँ पर प्रस्तुत है—

"किस मुसीबत में जान फँस गई है?" यह बुदबुदाया और आँगन में आकर मुंडेर के पास खड़ा हो गया। बाहर पहुँचकर स्वच्छ बहती हवा में राहत मिली। कोठरी की घुटन और बदबू में वह परेशान हो उठा था। पसीने से तर उसके शरीर को हवा के हल्के से स्पर्श से असीम आनंद का अनुभव हुआ। क्षण भर के लिए उसे लगा जैसे वह फिर से जी उठा है, उसकी शिथिल, मरी हुई देह में फिर से जान आ गई है मुझे क्या लेना इस काम से। सलोतरी को सूअर नहीं मिलता तो न मिले, मेरी बला से, मैं कल मुराद अली के सामने पाँच का नोट पटक दूँगा और हाथ जोड़ दूँगा। यह मेरे बस का नहीं है हजूर, मैं यह काम नहीं कर सकता। मेरा क्या बिगाड़ लेगा? दो दिन मुँह बनाए रखेगा, मैं घुटनों पर हाथ रखकर उसे मना लूँगा।

इस प्रकार के अन्य अनेक उदाहरण उपन्यास में हैं जिनमें नत्थू के एकालाप संवादों से उसका अंतर्द्वन्द्व स्पष्ट हुआ है।

(4) स्वगत कथन—मानसिक ऊहापोह के संवादों की तरह स्वगत कथन भी एक ही पात्र के होते हैं। इनमें और मानसिक ऊहापोह वाले संवादों में अंतर यह है कि मानसिक ऊहापोह वाले संवादों का संबंध सिर्फ अंतर्द्वन्द्व अथवा उलझन में होता है, जबकि स्वगत कथन पात्र के मन की भावनाओं तथा व्यावहारिक वार्तालाप का अंतर प्रदर्शित करते हैं। अत: ये स्वगत कथन किसी भी विषय पर हो सकते हैं। अपने मन में किसी बात पर विचार करना स्वगत कथन कहलाते हैं। इनका अधिकतर प्रयोग नाटकों में होता है, पर उपन्यासों में भी आजकल इनका चलन हो गया है। 'तमस' उपन्यास में कुछ ही संवाद इस प्रकार के दिखाई देते हैं। इनका क्षेत्र सीमित होने के कारण ये संख्या

में कम हैं, किंतु जो भी हैं, उनमें साहनी जी की कुशल कला के सहज ही दर्शन हो जाते हैं। एक उदाहरण इस प्रकार के स्वगत कथन का द्रष्टव्य है–

"पास से गुजरते हुए शाहनवाज ने ध्यान से उनकी ओर देखा, बच्चे घेरा बनाए खड़े थे और घेरे के अंदर एक छोटी-सी लड़की कुर्ता ऊपर खींचकर जमीन पर लेटी थी और उसकी जाँघों पर एक नन्हा-सा लड़का बैठा था। उसने भी अपना कुर्ता ऊपर को चढ़ा रखा था। आस-पास खड़े सभी बच्चे हंसी से लोटपोट हो रहे थे।"

"कमजात! इन्हें और कोई खेल नहीं सूझता।" शाहनवाज बुदबुदाया और हँसकर आगे बढ़ गया।

(5) भावात्मक संवाद–इस प्रकार के संवाद पात्रों की भावाकुलता को ध्वनित करते हैं। उनमें प्रगाढ़ता, निश्चलता तथा हार्दिकता होती है। रिचर्ड एवं लीजा के संवादों में इस रूप को देखा जा सकता है। एक उदाहरण प्रस्तुत है–

वे बुद्ध की एक मूर्ति के सामने आकर रूक गए थे।

"बुद्ध की मूर्तियों की सबसे बड़ी खूबी वह धीमी-सी मुस्कान है जो उसके होंठों के आस-पास खेलती रहती है। बुद्ध के चेहरे को ऐसी रोशनी में देखना चाहिए जिसमें यह मुस्कान उघड़ आए। ठहरों, मैं तुम्हें दिखाता हूँ।" रिचर्ड ने कहा और सामने रखी बुद्ध की मूर्ति को थोड़ा दायीं और घुमा दिया और बटन दबा दिया जिससे बुद्ध के ऐन ऊपर टंगी रोशनी जग गई।

"देखा लीजा, देखा?" रिचर्ड ने चहककर कहा। लीजा को भी लगा कि बुद्ध के चेहरे पर मुस्कान सहसा खिल उठी है–शांत, स्निगध्, तनिक व्यंग्यपूर्ण मुस्कान।

"मुस्कान होंठों के कोनों में छिपी रहती है। पैंतालीस डिग्री के कोण पर से हल्की-सी रोशनी डालो तो जैसे फूटकर बाहर जा जाती है। अब उसी का कोण मोड़ दूँ तो बहुत कुछ ओझल हो जाएगी...।"

स्व-मूल्यांकन (Self-Assessment)

बहुविकल्पीय प्रश्न (Multiple Choice Questions) :

4. डिप्टी कमिश्नर की पत्नी जिले की कौन-सी महिला गिनी जाती है?

   (क) प्रथम (ख) द्वितीय

   (ग) तृतीय (घ) इनमें से कोई नहीं।

5. रिचर्ड के अनुसार लोगों की आँखों का रंग कौन-सा था?

   (क) ब्लू (ख) ग्रीन

   (ग) ब्राउन (घ) ब्लैक।

6. उपन्यास में कालू नामक पात्र किस धर्म से संबंध रखता है?

   (क) हिंदू (ख) ईसाई

   (ग) मुस्लिम (घ) इनमें से कोई नहीं।

17.2.3 संवादों के गुण

उपन्यास में प्रयुक्त संवाद विशेष मार्मिक और स्वाभाविक हैं। उनके इन गुणों को 'तमस' उपन्यास के आधार पर निम्नलिखित रूपों में देखा और परखा जा सकता है–

(1) अनुकूलता–अनुकूलता से आशय अवसर एवं पात्रानुकूलता से है। कथानक को जिस आधार पर विकसित किया जाए, उसके पात्र भी तदनुकूल होने चाहिए और स्वाभाविकता लाने के लिए उनकी संवाद योजना भी ऐसी होनी चाहिए कि वह पात्रों के बौद्धिक, सामाजिक और सांस्कृतिक स्तर के अनुकूल हो। वह अनुकूलता भाषा,

नोट

विचार, रहन-सहन एवं ध्वनि सभी संदर्भों में कही जा सकती है। 'तमस' उपन्यास में निहित संवादों में पात्रानुकूलता का गुण पर्याप्त है और इसकी अनुकूलता के लिए साहनी जी ने भाषा और भाव दोनों का ही समावेश किया है। यदि पात्र अनपढ़ और निम्न स्तर के हों तो उनके संवादों की भाषा भी उसी प्रकार की साधारण भाषा है। इसके विपरीत पढ़े-लिखे और सुसंस्कृत व्यक्तियों की भाषा प्रवाहमान और परिमार्जित है। इसी प्रकार उनके विचारों में भी विभिन्नता है। इन संवादों के माध्यम से ही पात्रों के बौद्धिक स्तर का ज्ञान होता है। इसमें प्रेम की भावनाओं को प्रकट करने वाले संवाद और घृणा को प्रकट करने वाले संवादों में भी अंतर है। दूसरी ओर मुस्लिम पात्रों की भाषा में एक विशेष लज्जत देखने को मिलती है। पंजाबी क्षेत्र की कथावस्तु होने के कारण वहां के अनपढ़ पात्रों के वार्तालाप में शुद्ध पंजाबीपन होना स्वाभाविक है, उदाहरणार्थ–

दर्जी खुदाबख्श की दुकान पर सरदार हाकिमसिंह को पत्नी उलाहना दे रही थी "वे बख्शिया, तू कपड़े की देसें-मरसें या फेरे ही पवांदा रहसें?" (कभी हमारे कपड़े भी सीकर देगा या रोज तेरी दुकान के चक्कर ही मारती रहूँ) "जह मैं कहंदा रिहा बीबी भेजो कपड़े, तुझां कुझ न कोता, सारियां सरदियां नधा दित्तियां। हुण वक्त तो लगदै। सोहल हत्था तां नहीं मेरे।" (जब मैं कहता था, बीबी लाओ कपड़े, लाओ कपड़े, आपने कोई परवाह न की, सारा जाड़ा बीत गया। अब वक्त तो लगेगा ही, मेरे सोलह हाथ तो नहीं हैं।)

(2) उपयुक्तता–उपयुक्तता से आशय संवादों के घटना, अवसर और वातावरण के उपयुक्त होने से है। इससे संवादों में सजीवता आती हैं। पात्रों की बातचीत प्रसंगानुकूल लगती है, अस्वाभाविकता और अन्य दोषों का परिहार होता है। यदि संवादों में घटना, भाव और अवसर के उपयुक्त दृष्टिकोण नहीं हैं तो वह संवाद दोषमय हैं। किंतु 'तमस' उपन्यास में प्रयुक्त संवादों में उपयुक्तता का गुण सर्वत्र विद्यमान है। नत्थू एवं उसकी पत्नी का यह संवाद इस संदर्भ में द्रष्टव्य है–

"पहले तो कभी तुम इस वक्त चाय नहीं माँगते थे। आज छुट्टी मना रहे हो, इसलिए?"

इस पर वह तुनक उठा, "छुट्टी नजर आ रही है? तू नहीं बना सकती तो मैं खुद बना लूँगा। लंबी बात क्यों करती है।" और नत्थू उठकर कोठरी के अंदर चला गया।

"अभी बना देती हूँ, चाय बनाने में कौन-सी देर लगती है। तू बिगड़ता क्यों है?"

"नहीं तू हट जा, मैं अपने आप बना लूँगा।" नत्थू ने गुस्से से कहा।

"मेरे रहते तू चूल्हा जलाएगा, मैं मर जाऊँ?" वह बोली और आगे बढ़कर उसकी बाँह पकड़कर उसे उठाने लगी, "उठ जा तुझे मेरे सिर की कसम।"

नत्थू उठ खड़ा हुआ, गहरी टीस-सी उनके मन में उठी। क्षण-भर के लिए वह खड़ा रहा, फिर आगे बढ़कर अपनी पत्नी से लिपट गया।

(3) सरलता–विशालकाय होते हुए भी इस उपन्यास के संवादों में सरलता का गुण सर्वत्र दिखाई देता हैं। वास्तव में संवादों की भाषा होनी ही ऐसी चाहिए जो पाठकों की समझ में पूर्णरूपेण आ जाए। एक संवाद उदाहरणार्थ द्रष्टव्य है–

"आगे मत जाओ, एक आदमी मरा पड़ा है।"

हाथ में लाठी उठाए, ठिगने कद का एक आदमी सड़क पर आ गया।

"कहाँ पर?"

"चौक के पार, ढलान पर।"

"कौन है?"

"मुसलमान है और कौन है? तुम इस वक्त कहाँ जा रहे हो?"

"मैं अपने काम से पार्टी ऑफिस जा रहा हूँ।"

"एक हिंदू उस तरफ कब्रिस्तान में मरा पड़ा है।" कहते हुए ठिगने कद के आदमी ने झुँझलाकर कहा, "तुम बड़ा मुसलमानों के हक में बोलते थे, अब उनसे जाकर कहो हमारी लाश दे जाएं, अपनी उठा ले जाएं।"

दायें हाथ के ऊपर छज्जे पर से आवाज आई, "मत जाओ, वे लोग मार डालेंगे।"

"यह मुसलमानों की बगल में घुसा रहता है, उसे कोई नहीं मारेगा।"

(4) स्वाभाविकता–स्वाभाविकता से यह आशय है कि पात्रों द्वारा कहे गए संवाद स्वाभाविक हों और कृत्रिम न लगें। अस्वाभाविक संवाद कथा की गति को तो अवरूद्ध करते ही हैं, पाठक का मन भी उनसे उचट जाता है। 'तमस' उपन्यास के संवादों में यह गुण सर्वत्र देखा जा सकता है। उदाहरणार्थ यह संवाद देखिए–

कुछेक और पहलुओं पर विचार किया गया। कहाँ पर मीटिंग बुलाई जाए? फैसला हुआ हयातबख्श के घर पर। "मैं बख्शी जी को लाऊँगा। मुसलमानों के मुहल्ले में पहुँचने पर साथी अजीज मुहल्ले के दो-तीन मुसलमान शहरियों को लेकर मिलेगा और हम सब हयातबख्श के घर जाकर बैठेंगे।"

"हयातबख्श के साथ बात कर ली है?"

"अभी जाकर बात करूँगा।"

"कामरेड, तुम किस दुनिया में रह रहे हो? हयातबख्श के घर पर तुम जाओगे? वहाँ तक तुम्हें पहुँचने कौन देगा?"

"तुम मेरे साथ चलोगे।" देवदत्त ने मुस्कराकर अजीज से कहा।

"ये पानी के छींटे हैं कामरेड, इनसे यह आग नहीं बुझेगी।"

(5) संबंधता–पात्रों के संवाद स्वतंत्र न होकर कथानक और पात्रों से सम्बद्ध होने चाहिए। उपन्यास में कथा-गति और संवाद प्राय: साथ-साथ चलते हैं। अत: उनकी परस्पर संबंधता अत्यावश्यक है। 'तमस' उपन्यास के संवादों में यह गुण भी मिलता है। साहनी जी के पात्रों के संवादों का प्रयोग कथानक से मेल खाता हुआ और कथा-गति के अनुकूल है। इनका एक-दूसरे से संबंध है। कुछ संवाद कथा के पीछे की ओर संकेत करते हैं, तो कुछ से आगामी कथा के संकेत मिलते हैं। कुछ में वातावरण का प्रभाव है। निम्नलिखित संवाद में यह तथ्य द्रष्टव्य है–

"हमारा काम हो जाएगा!...." फिर अपना मुँह बाबू के कान के और नजदीक ले जाकर बोला, "मैं तुम्हारा मुँह मीठा करवा दूँगा।"

इस पर बाबू ने तनिक खीझकर कहा, "ओ सरदार जी, कोई अकल की बात किया करो। कुएँ में कुछ नहीं तो 26 औरतें डूब मरी हैं। इनमें से तुम कैसे पहचानोगे कि तुम्हारी घरवाली कौनसी है?"

"यह तुम मुझ पर छोड़ो वीर जी, मैं कड़े देखकर पहचान लूँगा। पाँच-पाँच तोले का एक कड़ा है। गले में सोने की जंजीरी है। अब घरवाली डूब मरी, जो सबके साथ हुआ है, वह मेरे साथ भी हुआ है, पर ये कड़े जंजीरी मैं कैसे छोड़ दूँ। क्यों वीर जी?"

फिर मुँह कान के पास ले जाकर बोला, "जो उतरवा दो तो बीच में से तुम्हें भी दूँगा। ऐसी बात नहीं...। उस नेकबख्त ने यह भी नहीं सोचा कि भाई, मैं डूबने लगी हूँ, मैं अपने कड़े तो उतारकर देती जाऊँ? क्यों वीरजी? पर हम तुम्हारा मुँह मीठा कर देंगे, आप हमारा यह काम करवा दो।" फिर हट कर बाबू के मुँह की ओर देखता रहा, "और किसी को पता नहीं चले, मैं और आप। बस में और किसी को ले जाने की जरूरत नहीं है।"

"और सरदारजी, लाशें फूलकर ऊपर तक आ गई हैं। फूली हुई लाश की कलाई पर से कड़े उतार सकते हैं? कोई अकल की बात किया करो। क्या सरकार आपको उतारने देगी?"

इस संवाद का पूर्वा पर संबंध इतना सुंदर है कि पूर्व की घटना के साथ ही वर्तमान भी सामने आ जाता है।

नोट

टास्क उपन्यास में प्रयुक्त संवादों के उद्देश्य पर प्रकाश डालिए।

(6) **संक्षिप्तता**—इस लेख के प्रारंभ में संक्षिप्त संवाद योजना के अंतर्गत इसका वर्णन किया ही जा चुका है, यह भी संवादों का एक गुण है कि छोटे और प्रवाहपूर्ण हों। 'तमस' उपन्यास के संवादों में यह गुण पर्याप्त है। एक उदाहरण इस संदर्भ में यहाँ प्रस्तुत किया जा रहा है—

"क्या हुआ है?"

"कुछ नहीं।"

"कुछ तो हुआ है। तू मुझसे छिपा रहा है।"

"कुछ नहीं।" उसने फिर कहा।

पत्नी नत्थू के पास आ गई, और उसके सिर पर हाथे फेरते हुए बोली, "तू बोलता क्यों नहीं?"

"कुछ कहने को हो तो बोलूँ।" उसने धीरे से कहा।

(7) **मार्मिकता**—संवादों की योजना ऐसी होनी चाहिए कि उसमें पाठकों का हृदय छूने की क्षमता हो, उन पर प्रभाव डालने की शक्ति हो और पाठकों का मन उनमें रम जाए। यह मार्मिकता का गुण ही संवादों को प्रभविष्णु बनाता है। 'तमस' उपन्यास में सर्वत्र संवादगत मार्मिकता का गुण विद्यमान है। यथा—

"आओ हुण रब्ब राषा। सीधे किनारे-किनारे चले जाओ। आगे जो तुम्हारी किस्मत।"

और उसकी आवाज आर्द्र हो उठी।

"तुमने हम पर बड़ा एहसान किया है राजो बहन, हम इसे कभी नहीं भूल सकते।" बंतो ने कहा।

"जे जिंदगी रही ता तेरा एहसान..." हरनामसिंह की आवाज लड़खड़ा गई।

"मैं के जाणा। मैंण, अपणा-अपणा नसीबा। चहवा नसीवा पासे अग जगी है।" (मैं क्या जानू हे बहन? मैं नहीं जानती मैं तुम्हारी जान बचा रही हूँ या तुम्हें मौत के मुँह में झोंक रही हूँ। चारों तरफ आग लगी है) यह कहते हुए राजो ने अपना हाथ कुर्ते की जेब में डाला और सफेद कपड़े में लिपटी एक छोटी-सी पोटली निकाल लायी। "यह लो तुम्हारी चीज है।"

"क्या है राजो बहन?"

"एह तुसांडे संदूक विचों मिले हन। मैं कड्ढ़ लियाई हाँ। तुसाडे ऊपर औखा वेला आया है, जेवर कोल होए तां सहारा होवेगा।" (ये तुम्हारे टंक में से मिले हैं, तुम्हारे दो गहने हैं। मैं निकाल लाई हूँ। तुम्हारे आगे कठिन समय है, पास में दो गहने होंगे तो सहारा होगा।)

"वाहे गुरू तुम्हें सलामत रखे बहन, अच्छे कार्य किए थे, जो तुमसे मिलना हुआ।" कहते हुए बंतो रो पड़ी।

(8) **व्यंग्यात्मकता**—व्यंग्यात्मकता जहाँ मनोरंजन करने में समर्थ है, वहीं पर लेखकीय उद्देश्य को पूर्ण करती है। 'तमस' उपन्यास में संवादगत व्यंग्यात्मकता अनेक स्थलों पर दर्शनीय हो उठी है। यह व्यंग्यात्मकता शंकरलाल, जरनैल, कश्मीरीलाल, रिचर्ड, नत्थू एवं अन्य अनेक पात्रों के संवादों में मुखर हुई है। एक उदाहरण यहाँ पर द्रष्टव्य है—

"क्यों? हम पहुँचे हैं बख्शीजी तो आपने बत्ती गुल कर दी।" शंकर मनादी वाले ने कहा।

"क्यों? तूने मेरा चेहरा देखना है या मेहताजी का देखना है?" बख्शीजी बोले। "तेल जाया होता है। यह कांग्रेस कमेटी का लैंप नहीं है मेरा अपना लैंप है। कांग्रेस कमेटी से तेल की मंजूरी ले दो, मैं इसे दिन-रात जलाए रखूँगा।"

इस पर दबी आवाज में कश्मीरीलाल की पीठ पीछे खड़े-खड़े शंकर बोला "सिगरेट के लिए आपको मंजूरी की जरूरत नहीं तो मिट्टी के तेल की क्यों होगी?"

वाक्य बख्शी जी ने सुन लिया पर जहर का घूँट पीकर चुप बने रहे। ऐसे लोफरों को मुँह लगाना अपना अपमान करवाना था।

"आप तो मालिक हैं बख्शी जी, आपको मंजूरी की क्या जरूरत है? आपके हुक्म के बिना तो चिड़ी भी नहीं फड़क सकती।" शंकर बोला, फिर महताजी की ओर मुखातिब होकर बोला—"जयहिंद, मेहताजी।"

(9) चरित्र प्रकाशन की क्षमता—उपन्यास के संवाद ऐसे होने चाहिए जो पात्रों के चरित्रों का उद्घाटन करने की क्षमता रखते हों। पात्रों की मनोदशा, उनके आंतरिक ऊहापोह और उनकी मनोदशा इसी प्रकार के संवादों से जानी जा सकती है। 'तमस' उपन्यास में ऐसे संवादों की भी कमी नहीं है। नत्थू एवं उसकी पत्नी का संवाद इन दोनों पात्रों के चरित्रों को पूर्णतः उजागर करने में सक्षम हैं। देखिए—

"वह सूअर मैंने मारा था।"

नत्थू की पत्नी को काटो तो खून नहीं। "तूने? तूने यह बुरा काम क्यों किया?" और उसके चेहरे पर सारा खून उतर आया और वह नत्थू की ओर फटी आँखों से देखती रह गई।

नत्थू ने धीरे-धीरे सारा किस्सा कह सुनाया।

"सूअर को फेंकने भी तू गया था?" पत्नी ने पूछा।

"नहीं, कालू उसे छक्ड़े पर लादकर ले गया था।"

"कालू तो मुसलमान है, वह कैसे ले गया?"

"कालू मुसलमान नहीं है, ईसाई है, गिरजे में जाता है।"

उसकी पत्नी देर तक उसके चेहरे की ओर देखती रही, "तूने बहुत बुरा किया है, इसमें तेरा क्या दोष है? तुझसे लोगों ने धोखे से काम करवाया है। तूने धोखे में आकर वह काम किया है।" वह मानो अपने से बात करती हुई बुदबुदायी। पर नत्थू की बात सुनकर वह सिर से पाँव तक काँप गई थी। उसकी पत्नी को लगा जैसे किसी भयानक ग्रह की छाया उनके घर पर पड़ गई है, जो उपवास करने से भी नहीं टलेगी, प्रायश्चित करने पर भी नहीं टलेगी। पर फिर भी उसके मन पर बराबर बोझ बना रहा।

नत्थू के दिल में गहरी हूक-सी उठी। पत्नी ने आँख उठाकर नत्थू की ओर देखा। उसे विचलित देखकर उसकी पत्नी के दिल में फिर ममता का सोता फूट पड़ा। वह उठकर नत्थू के पास जा बैठी और उसका हाथ पकड़कर बोली, "तभी तो मैं कहूँ यह इतना परेशान क्यों है? मुझे क्या मालूम? तूने मुझे बताया क्यों नहीं? अपना दुख मन के अंदर नहीं रखते।"

"मुझे मालूम होता तो मैं यह काम क्यों करता?" नत्थू बुदबुदाया, "मुझसे तो कहा सलोतरी साहब ने सूअर माँगा है।"

स्व-मूल्यांकन (Self-Assessment)

निम्नलिखित कथनों में सत्य अथवा असत्य की पहचान करें

(State Whether the following statements are True or False) :

7. नत्थू ब्राह्मण जाति से संबंध रखता है।
8. हरनामसिंह के पिता का नाम गुरदयाल सिंह है।
9. सरदार अपनी पत्नी की पहचान कड़े और जंजीर देखकर करना चाहता है।

(10) प्रभाव क्षमता—पात्रों के संवाद जितने अधिक प्रभावशाली होंगे, उपन्यास की रमणीयता में उतनी ही वृद्धि

नोट

होगी। जिस उपन्यास के संवाद प्रभावी नहीं होते, उसके पात्र अथवा कथा चाहे जितनी भी प्रभावशाली क्यों न हों, वह पाठक को प्रभावित नहीं कर सकते। दूसरी ओर प्रभावक संवाद कथा में जान डाल देते हैं। 'तमस' उपन्यास के संवादों में पर्याप्त प्रभाव क्षमता है। संभवत: किसी भी पात्र के संवाद ऐसे नहीं हैं जो निष्प्रभावी और धरती के हों। उदाहरणार्थ–

"आपको किसी ने गलत खबर दी है।" सोहनसिंह फिर बोल पड़ा। "खालसा स्कूल पर हमला जरूर हुआ था, लेकिन गाँव के मुसलमानों ने हमला नहीं किया। ढोक इलाहीबख्श से कुछ गुंडे आए थे। पर मीरदाद, हमारा साथी जो शहर से आया है, वक्त पर पहुँच गया, इसने और गाँव के दो और लड़कों ने बीच-बिचाव करके हालत को बिगड़ने से बचा लिया। चपरासी को केवल चोटें आई हैं, वह मरा नहीं है और उसकी बीवी को भी भगवा करके कोई नहीं ले गया। वह भी स्कूल में मौजूद है।"

"यह मीरदाद कौन है?" एक सरदार बोला।

"मैंने इसे मीरदाद के साथ कहवाखाने में बैठा देखा है। न जाने आपस में ये क्या बातें करते रहते हैं। मुसलमान हमारी औरतों की असमत लूट रहे हैं और हमारे लड़के मुसलमान से गठ-जोड़ कर रहे हैं।" फिर उसी दुबले-पतले सरदार की ओर मुखातिब होकर बोला, "हमें क्या समझाते हो? मुसलमानें को जाकर समझाओ। क्या सिक्खों ने किसी को अभी तक मारा है, किसी का घर लूटा हैं? बड़ा आया हमें उपदेश देने वाला!"

(11) **उद्देश्यपूर्णता**–सोद्देश्य संवाद कथा के विस्तार, पात्रों की मन:स्थिति और वातावरण का चित्रण करने में सक्षम होते हैं। इनसे लेखक का प्रतिपादय भी स्पष्ट होता है। निरुद्देश्य संवाद-योजना व्यर्थ का शब्दजाल मात्र होती है। 'तमस' उपन्यास के संवाद सोद्देश्य हैं, वे लेखक के उद्देश्य को सर्वत्र पूर्ण करते हैं। सांप्रदायिक तनाव का यथार्थ चित्र प्रस्तुत करना लेखक का मूल उद्देश्य है और उपर्युक्त संवाद में लेखक की यह उद्देश्यपूर्णता स्पष्ट दृष्टिगोचर होती है। इसी प्रकार का एक अन्य उदाहरण द्रष्टव्य है जो लेखकीय उद्देश्य की पूर्ति करता है–

"ओ चुप ओए, अंग्रेज को देखा है? शहर में कितने ही मुसलमान हलाक हुए हैं, उनकी लाशें भी अभी गलियों में पड़ी हैं। उन्हें अंग्रेजों ने मारा ओए? मस्जिद के सामने खंजीर फेंका है, वह भी अंग्रेज फेंक गया है ओए?"

"जो कुछ समझो," मीरदाद ने हाथ झटककर कहा, "अगर हिंदू-मुसलमान-सिक्ख मिल जाते हैं, उनमें इत्ताहाद हो जाता, तो अंग्रेजों की हालत कमजोर पड़ जाती है अगर हम आपस में लड़ते रहते हैं तो उनकी हालत मजबूत बनी रहती है।"

वही घिसा-पिटा तर्क था जिसे ये लोग रोज सुनते थे, पर जब पानी सिर से ऊपर जा चुका था, इस तर्क का कहीं असर नहीं होता था।

"जा-जा सिर पर बादाम रोगन की मालिश कर।" मोटे कसाई ने कहा, "हमारा अंग्रेज ने क्या बिगाड़ा ओए? हिंदू-मुसलमान की अदावत पुराने जमाने से चली आ रही है। काफिर, काफिर है और जब तक दीन पर ईमान नहीं लाएगा वह दुश्मन है। काफिर को मारना सवाब है।"

17.2.4 संवादों का उद्देश्य

उपन्यास में संवादों का कुछ न कुछ उद्देश्य अवश्य होता है, प्रत्येक संवाद की कुछ न कुछ विशेषता होती है। यही विशेषता उसकी सोद्देश्यता को प्रकट करती है। संवादों को देने में लेखक के निम्नांकित उद्देश्य होते हैं–

(1) **कथा विकास को गति देने वाले संवाद**–संवादों के माध्यम से उपन्यासकार कथा को गति देता है। स्वयं किसी घटना का विवरण देना उपन्यास की स्वाभाविकता तथा रोचकता को कम करता है जबकि पात्रों के वार्तालाप द्वारा ऐसा करने से उसकी रोचकता और स्वाभाविकता में अभिवृद्धि होती है। इससे पाठकों की रुचि भी बढ़ती है और लेखक का कार्य भी हल्का हो जाता है, साथ ही कथा शीघ्रता से आगे बढ़ती है। 'तमस' उपन्यास के अनेक संवाद कथा के विकास को गति देते हैं। एक उदाहरण यहाँ प्रस्तुत किया जा रहा है–

नोट

"डिप्टी कमिश्नर के पास जाना आवश्यक है, जरूर लेकिन लालीजी, अपनी रक्षा तो अपने हाथों होगी।" वानप्रस्थी जी ने कहा।

"ओ महाराज, बच्चों को लाठी चलाना जरूर सिखाओ, नेजा और तलवार चलाना भी सिखाओ, सूरमा बन जाएँगे हमारे बेटे, पर सबसे पहले डिप्टी कमिश्नर से मिलो, उससे कहो कि शहर में फसाद नहीं होने दे। डिप्टी कमिश्नर का बड़ा दबदबा है। वह चाहे तो चिड़ी नहीं फड़क सकती।"

"आज इतवार है, डिप्टी कमिश्नर नहीं मिलेगा।" मंत्री जी ने कहा।

"मैं कहता हूँ घर पर जाकर मिलो। यही वक्त है। यहीं से कुछ लोग उठकर सीधे डिप्टी कमिश्नर के घर चले जाओ।"

"कौन लोग हैं उसमें?"

"उसमें कुछ कांग्रेसी है, कुछ लीगी हैं और कुछ शहर के लोग हैं।"

(2) चरित्र प्रकाशक संवाद–कुछ संवाद ऐसे होते हैं जिनमें पात्रों के चरित्रों पर प्रकाश पड़ता है। चरित्रों पर लेखक दो प्रकार से प्रकाश डालता है, ये इस प्रकार हैं–

(क) प्रत्यक्ष रूप से–दो या दो से अधिक पात्रों के संवाद में उनकी गतिविधि, भाषा, व्यवहार और क्रियाकलापों के माध्यम से उनके चरित्रों पर प्रकाश पड़ता है। इस प्रकार के संवाद प्रत्यक्ष चरित्र प्रकाशक संवाद कहलाते हैं। उदाहरणार्थ–

"आप यहाँ से निकल जाएँ बख्शी जी, यहाँ आप लोगों के रहने से इश्तआल बढ़ेगा।" बख्शी जी के मोहयाल मित्र ने समझाते हुए कहा।

बख्शी जी ने उस आदमी की ओर देखा, फिर कश्मीरीलाल से बोले, "झंडा बाँस में से निकालकर तह कर लो।" फिर मोहयाल सज्जन से बोले, "इस सूअर की लाश को तो यहाँ से हटा दे। जितनी देर लाश वहाँ पड़ी रहेगी, तनाव बढ़ता जाएगा।"

"आप सूअर की लाश को उठाएंगे?" मोहयाल ने हैरान होकर कहा। "आपको तो, मैं समझता हूँ उस तरफ जाना भी नहीं चाहिए।"

"मैं इनसे इत्तफाक रखता हूँ, मेहता जी बोले, हमें इसमें नहीं पड़ना चाहिए, इससे मामला बिगड़ सकता है।"

"पर यहाँ से निकल जाएँगे तो मामला नहीं बढ़ेगा? क्या मुसलमान लोग इस लाश को यहाँ से हटाएँगे?"

"वे नहीं हटाएंगे तो किसी भंगी जमादार का इंतजाम करेंगे। हर सूरत में हमें इसमें नहीं पड़ना चाहिए।"

बख्शी ने अपने हाथ का लालटेन एक घर के चबूतरे पर रखा और मेहता की ओर देखकर बोला–

"मेहता जी, आप क्या कर रहे हैं? हम चुपचाप यहाँ से निकल जाएँ और तनाव को बढ़ने दें? अपनी आँखों से न देखा होता तो दूसरी बात थी," फिर कश्मीरीलाल और जरनैल को संबोधन करके बोले–

"तुम आ जाओ मेरे साथ।" और वे गली में से निकलकर मस्जिद की ओर जाने लगे।

(ख) अप्रत्यक्ष रूप से–जहाँ पर कुछ पात्र मिलकर आपस में बातचीत द्वारा वहाँ पर अनुपस्थित किसी अन्य पात्र के बारे में अपनी टीका-टिप्पणी करते हैं, वहाँ अप्रत्यक्ष रूप से चरित्र का प्रकाशन होता है। इस प्रकार के संवाद अप्रत्यक्ष चरित्र प्रकाशक संवाद कहलाते हैं। इनके द्वारा किसी पात्र के विषय में जनसाधारण की प्रतिक्रिया ध्वनित होती है। पुत्र रणवीर के विषय में उसके माता-पिता का यह वार्तालाप देखिए–

"सुनती हो? मुझे लगता है, होनहार कुल्हाड़ी को युवक समाज में दे आया है।"

नोट

"तुम जानो और तुम्हारा बेटा जाने। मुझे तो तुम लोग बेवकूफ समझते हो। मैं तुम्हारी बातों में पड़ूँ ही क्यों?"

"तुम्हें कुछ कहकर गया है?"

"कौन?"

"कौन क्या? रणवीर और कौन?"

"मुझे कुछ नहीं कह गया। तुम्हारे ही उपदेश दिन-भर सुनता रहता है, अब मैं क्या जानूँ कहाँ गया है? इस परलय की रात में बेटा घर पर नहीं है।"

"बड़ा बेवाका लड़का है। किसी की नहीं सुनता, समाज सेवा, समाज सेवा रट लगाए रहता है जिसे अपने माँ-बाप की चिंता नहीं, वह समाज सेवा क्या करेगा?"

(3) वातावरण की सृष्टि करने वाले संवाद–संवादों के माध्यम से घटना अथवा पात्रों की मानसिक स्थिति का वातावरण प्रस्तुत करना भी लेखक का उद्देश्य है, जिनसे वातावरण मूर्त हो उठा है, यथा–

"क्या कर आए हो?" उसने हयातबख्श से पूछा, "डिप्टी कमिश्नर से मिलने गए थे न?"

"मिल आए हैं। वहाँ पर उसके पास बैठे ही थे कि बाहर शोर हुआ। सभी ने सोचा गड़बड़ हो गई है और मीटिंग बर्खास्त हो गई। सभी वहाँ से निकल आए। शहर की क्या खबर है?"

"तनाव है, तनाव बढ़ रहा है। रत्ते के पास सुनते हैं कोई गड़बड़ हुई है। इधर पीछे क्या हाल है?"

"पीछे ठीक है।"

इस संवाद में सांप्रदायिकता तनाव बढ़ने की घटना का कितना सुंदर वातावरण निर्मित हुआ है।

(4) यथार्थपरक दृष्टिकोण का प्रस्तुतीकरण–जब तक उपन्यास में स्वाभाविकता तथा यथार्थपरकता नहीं होती, उसमें रोचकता एवं सजीवता नहीं आती। उपन्यास में यथार्थपरकता लाने के लिए उपन्यासकार पात्रों का वार्तालाप प्रस्तुत करता है क्योंकि वार्तालाप से ही पात्रों की मानसिक स्थिति, बोलचाल और दूसरों में मिक्स होने की प्रवृत्ति मालूम होती है। अत: यथार्थ का पुट देने के लिए संवादों की योजना आवश्यक होती है। साहनी जी के 'तमस' उपन्यास के संवाद यथार्थ का पुट लिए हुए हैं। उपर्युक्त किसी भी उदाहरण में इस तथ्य को भलीभाँति देखा जा सकता है।

(5) उपन्यासकार के उद्देश्य को प्रकट करने वाले संवाद–इस प्रकार के संवादों का प्रयोग सर्वत्र न होकर यथास्थान ही होता है। इनसे लेखक की मान्यताएँ तथा दृष्टिकोण का ज्ञान होता है। उपर्युक्त संवाद में लेखकीय उद्देश्य की कितनी पूर्ति हो रही है यह स्वत: स्पष्ट है।

निष्कर्ष

निष्कर्षत: 'तमस' उपन्यास में संवाद योजना प्राय: संक्षिप्त, कलात्मक, सहज स्वाभाविक, मार्मिक, प्रसंगानुकूल, यथार्थपरक और पात्रानुकूल बन पड़ी है। संवादों की भाषा बोलचाल की ही भाषा है जिससे औपन्यासिक कथा का सहज ही में सरलीकरण हो गया है। अत: यह कहा जा सकता है कि आलोच्य उपन्यास संवाद-योजना की दृष्टि से पूर्णत: सफल बन पड़ा है।

17.3 सारांश (Summary)

- तमस उपन्यास में सांप्रदायिकता नत्थू चमार के माध्यम से होती है। इस उपन्यास का एक पात्र जिसका नाम मुराद अली है वह नत्थू को एक सूअर को मारकर उसे मस्जिद पर डालने के लिए कहता है।
- कुछ सामाजिक तत्व केवल अपने निहित स्वार्थों के लिए हिंदू मुसलमानों में धार्मिक विद्वेष फैलाकर दंगा

नोट

भड़काते हैं और फिर जब सांप्रदायिक दंगा हो जाता है तो लोग एकदम अंधे होकर किसी प्रकार फिरकापरस्ती के शिकार होकर उसे फैलाते जाते हैं।

- स्वगत कथन पात्र के मन की भावनाओं तथा व्यावहारिक वार्तालाप का अंतर प्रदर्शित करते हैं। अपने मन में किसी बात पर विचार करना स्वगत कथन कहलाते हैं।
- कथानक को जिस आधार पर विकसित किया जाए, उसके पात्र भी तद्नुकूल होने चाहिए और स्वाभाविकता लाने के लिए उनकी संवाद-योजना भी ऐसी होनी चाहिए कि वह पात्रों के बौद्धिक, सामाजिक और सांस्कृतिक स्तर के अनुकूल हो।
- उपयुक्तता से आशय संवादों के घटना, अवसर और वातावरण के उपयुक्त होने से है। इससे संवादों में सजीवता आती हैं। पात्रों की बातचीत प्रसंगानुकूल लगती है, अस्वाभाविकता और अन्य दोषों का परिहार होता है।
- विशालकाय होते हुए भी इस उपन्यास के संवादों में सरलता का गुण सर्वत्र दिखाई देता हैं। वास्तव में संवादों की भाषा होनी ही ऐसी चाहिए जो पाठकों की समझ में पूर्णरूपेण आ जाए।
- पात्रों द्वारा कहे गए संवाद स्वाभाविक हों और कृत्रिम न लगें। अस्वाभाविक संवाद कथा की गति को तो अवरूद्ध करते ही हैं, पाठक का मन भी उनसे उचट जाता है।
- पात्रों के संवाद स्वतंत्र न होकर कथानक और पात्रों से सम्बद्ध होने चाहिए। उपन्यास में कथा-गति और संवाद प्राय: साथ-साथ चलते हैं। अत: उनकी परस्पर संबंधता अत्यावश्यक है। 'तमस' उपन्यास के संवादों में यह गुण भी मिलता है।
- संवादों की योजना ऐसी होनी चाहिए कि उसमें पाठकों का हृदय छूने की क्षमता हो, उन पर प्रभाव डालने की शक्ति हो और पाठकों का मन उनमें रम जाए। यह मार्मिकता का गुण ही संवादों को प्रभविष्णु बनाता है।
- व्यंग्यात्मकता जहाँ मनोरंजन करने में समर्थ है, वहीं पर लेखकीय उद्देश्य को पूर्ण करती है। 'तमस' उपन्यास में संवादगत व्यंग्यात्मकता अनेक स्थलों पर दर्शनीय हो उठी है।
- पात्रों के संवाद जितने अधिक प्रभावशाली होंगे, उपन्यास की रमणीयता में उतनी ही वृद्धि होगी। जिस उपन्यास के संवाद प्रभावी नहीं होते, उसके पात्र अथवा कथा चाहे जितनी भी प्रभावशाली क्यों न हों, वह पाठक को प्रभावित नहीं कर सकते।
- जहाँ पर कुछ पात्र मिलकर आपस में बातचीत द्वारा वहाँ पर अनुपस्थित किसी अन्य पात्र के बारे में अपनी टीका-टिप्पणी करते हैं, वहाँ अप्रत्यक्ष रूप से चरित्र का प्रकाशन होता है। इस प्रकार के संवाद अप्रत्यक्ष चरित्र प्रकाशक संवाद कहलाते हैं।
- 'तमस' उपन्यास में संवाद-योजना प्राय: संक्षिप्त, कलात्मक, सहज स्वाभाविक, मार्मिक, प्रसंगानुकूल, यथार्थपरक और पात्रानुकूल बन पड़ी है। संवादों की भाषा बोलचाल की ही भाषा है जिससे औपन्यासिक कथा का सहज ही में सरलीकरण हो गया है।

17.4 शब्दकोश (Keywords)

1. दंगा-फसाद – लड़ाई-झगड़े	2. मुख – मुँह
3. अद्भुत – अजीब	4. अनायास – अचानक
5. मौन – शांत	6. काफिर – गैर मुस्लिम
7. विस्तृत – बड़ा	8. संक्षिप्त – छोटा
9. खाट – चारपाई	10. किस्म – प्रकार
11. नस्ल – प्रजाति	12. अदावत – दुश्मनी।

नोट

17.5 अभ्यास प्रश्न (Review Questions)

1. 'तमस' उपन्यास की संवाद-योजना पर किन दृष्टियों से विचार किया जा सकता है?
2. संवादों के विस्तार से आप क्या समझते हैं?
3. उपन्यास में कितने प्रकार के संवादों का प्रयोग किया गया है?
4. किसी भी रचना को सफल बनाने के लिए उसके संवादों में कौन-से गुण विद्यमान होने चाहिए?
5. 'तमस' का अध्ययन करने के पश्चात् क्या निष्कर्ष निकलता है?

उत्तर : स्व-मूल्यांकन (Answers : Self-Assessment)

1. अपमान	2. वर्गीकरण	3. धरातल	4. (क)
5. (ग)	6. (ख)	7. असत्य	8. सत्य
9. सत्य।			

17.6 सन्दर्भ पुस्तकें (Further Readings)

पुस्तकें तमस—भीष्म साहनी, राजकमल प्रकाशन (प्रा.) लि., नई दिल्ली।

नोट

इकाई–18: 'तमस' की भाषा-शैली

अनुक्रमणिका (Contents)

उद्देश्य (Objectives)

प्रस्तावना (Introduction)

18.1 'तमस' की भाषा

18.1.1 कथा वर्णन में प्रयुक्त भाषा रूप

18.1.2 संवादों में प्रयुक्त भाषा रूप

18.2 साहनी जी के उपन्यास 'तमस' की भाषा सम्बंधी विशेषताएँ

18.2.1 काव्य सम्बंधी विशेषताएँ

18.2.2 वाक्य सम्बंधी विशेषताएँ

18.3 शब्द शिल्प सौन्दर्य

18.4 'तमस' की शैली

18.5 सारांश (Summary)

18.6 शब्दकोश (Keywords)

18.7 अभ्यास प्रश्न (Review Questions)

18.8 सन्दर्भ पुस्तकें (Further Readings)

उद्देश्य (Objectives)

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् विद्यार्थी योग्य होंगे–

- उपन्यास की भाषा एवं उसके रूप को जानने में;
- 'तमस' की भाषा संबंधी विशेषताओं को समझने में;
- भाषा के शब्द शिल्प सौंदर्य की जानकारी प्राप्त करने में;
- 'तमस' में प्रयुक्त शैली की व्याख्या करने में।

प्रस्तावना (Introduction)

किसी साहित्यिक रचना का महत्त्व उसके अन्य गुणों के साथ ही भाषा-शैली की दृष्टि से भी आंका जाता है। रचना में यदि भाषा-शैली प्रभावी, मार्मिक एवं सहज संप्रेषणीय नहीं होगी और उसे शब्दाडंबर में ही अभिव्यक्ति दी गई हो तो रचना अपनी अर्थवत्ता खो बैठती है।

नोट

18.1 'तमस' की भाषा

भाषा भावों की वाहिका होती है अर्थात उपन्यासकार के मानसिक भावों को भाषा के माध्यम से ही मूर्तता प्राप्त होती है। उपन्यास की भाषा का रूप देखते समय हमें दो दृष्टियों से विचार करना होता है। उपन्यासकार की अपनी भाषा और उसके पात्रों द्वारा प्रयुक्त भाषा। यद्यपि दूसरे प्रकार की भाषा भी उपन्यासकार के गुण-कौशल की परिचायिका होती है। फिर भी, पात्रों की विभिन्न मन:स्थितियों के अनुकूल भाषा में भेद हो सकता है और उसमें शौथिल्य अथवा कसावट भी आ सकती है। लेकिन जो भाषा प्रत्यक्ष रूप से लेखक प्रयुक्त करता है, वह उसकी भाषा होती है।

'तसम' उपन्यास की भाषा का अध्ययन करते समय उसके निम्नलिखित रूप हमारे सामने आते हैं–

(क) कथा वर्णन में प्रयुक्त भाषा-रूप

(1) सरल स्वाभाविक बोलचाल की भाषा

(2) अलंकृत और काव्यात्मक भाषा

(3) गंभीर चिंतन प्रधान भाषा।

(ख) संवादों में प्रयुक्त भाषा-रूप

(1) साधारण बोलचाल की भाषा

(2) ग्रामीण आँचलिक भाषा का मिश्रित रूप

(3) शुद्ध परिनिष्ठित हिंदी खड़ी बोली का रूप

(4) अरबी-फारसी युक्त उर्दू भाषा का रूप

(5) अंग्रेजी भाषा का देवनागरी में प्रयुक्त रूप।

अब आगे इन समस्त रूपों-उपरूपों की दृष्टि से 'तमस' उपन्यास की भाषा पर विचार किया जाएगा–

18.1.1 कथा वर्णन में प्रयुक्त भाषा रूप

(1) सरल स्वाभाविक बोलचाल की भाषा–साहनी जी ने जहाँ कथा का वर्णन किया है, अथवा पात्रों का परिचय दिया है, इसी प्रकार की सरल व स्वाभाविक भाषा का प्रयोग किया है। उन्होंने नित्य-प्रति के व्यवहार की भाषा को ही अपनी लेखिनी द्वारा उठाया है। उपन्यास की भाषा सरल है, सीधी है, बोलचाल की है और स्वाभाविक है। एक उदाहरण इस संदर्भ में दृष्टव्य है–

"तभी कुएँ की ओर से किसी के भागते कदमों की आवाज आई। तीनों ने घूमकर देखा एक गाय भागती आ रही थी। उसके पीछे एक आदमी सिर पर मुंडासा बाँधे और हाथ में डंडा लिए गाय के पीछे-पीछे भागता हुआ, उसे हाँके लिए जा रहा था। उसकी छाती खुली थी और गले में ताबीज झूल रहा था। चिकनी खाल वाली, बादामी रंग की गाय थी।, मोटी-मोटी चकित-सी आँखें। डर के मारे उसकी पूँछ उठी हुई थी। लगता जैसे रास्ता भटक गई है। तीनों ठिठक गए। मुंडासे वाले आदमी ने मुंह लपेट रखा था। गाय को हाँकता हुआ वह सड़क पर से गुजरा और फिर उसे दाएँ हाथ की एक गली की ओर ले गया।"

टास्क 'तमस' उपन्यास को सफल बनाने में भाषा का कितना योगदान है? व्याख्या कीजिए।

(2) अलंकृत और काव्यात्मक भाषा–नई पीढ़ी का कथाकार होने के कारण भाषा में अलंकरणप्रियता एवं

काव्यात्मकता के प्रति साहनी जी में कतई व्यामोह नहीं दिखाई पड़ता। उन्हें जो भी भाव व्यक्त करने होते हैं, उन्हें सीधी सादी भाषा में ही कह देना उन्हें प्रिय है, तथापि अवसरानुकूल यथास्थान उन्होंने अलंकृत और काव्यात्मक भाषा का भी प्रयोग किया है। उदाहरणार्थ–

"जब इब्राहीम इत्रफरोश कंधों और पीठ पर तरह तरह की बोतलें लटकाये एक गली से दूसरी में इत्र-फुलेल की आवाज लगाता अपनी स्थिर चाल से गुजरता जाता तो लगता नगर की जिस धुन पर उसके पांव उठ रहे हैं, उसी धुन पर औरतें अपने घड़े लेकर गली के नल पर जाती, उसी धुन की लय पर सड़कों पर ताँगे चलते, उसी धुन पर बच्चे स्कूल जाते, लगता शहर का सारा व्यापार किसी मीठी सहज धुन पर चल रहा है। लगता इसकी एक कड़ी टूटेगी तो साज के सारे तार टूट जाएंगे या यों कहो कि शहर की सभी क्रियाएँ मिलकर किसी सतत् संगीत का निर्माण करती जो शहर के दिल की धड़कन के साथ-साथ बजता था। शहर में लोग जवान होते हैं तो इसी लय पर, बूढ़े होते हैं। तो इसी लय पर, इसी पर पीढ़ियाँ अपना जीवन व्यतीत करती हुई चली जाती है। आप इसे संगीत कह लीजिए या नाजुक-सा संतुलन जिसमें व्यक्तियों के आपसी रिश्ते, जन-समूहों के आपसी रिश्ते विशेष धारा पर स्थिर हो चुके होते हैं....।"

(3) गंभीर चिंतन प्रधान भाषा–जहाँ उपन्यासकार विचारों की अभिव्यक्ति करता है, उसका चिंतन पक्ष प्रबल होता है, वहाँ गंभीर, परिष्कृत और चिंतन-प्रधान भाषा का प्रयोग करता है। इस प्रकार की भाषा में कथा प्रवाह की अपेक्षा गद्यात्मकता अधिक है, फिर भी कथा-प्रवाह के बीच भी इसके दर्शन किए जा सकते हैं। उदाहरणार्थ–

"वह बड़े कमरे में आ गई। जगह-जगह रखी प्रतिमाओं और बुतों को देख कर उसे जड़ता का सा भास हुआ, जैसे वहाँ पर प्रतिमाएँ नहीं, मृत बुद्धों के सिर रखे हों जिन्हें अकेले देखकर कभी-कभी उसे झुरझुरी होने लगती थी। किताबों और मूर्तियों से भरे इस घर में उसे घुटन महसूस होने लगी थी। कमरे में घूमती तो उसे लगता जैसे बुद्ध के बुत कनखियों से उसकी ओर देख रहे हैं। रिचर्ड के चले जाने पर, चाहते हुए भी वह इन चीजों में रुचि नहीं ले सकती थी। उसके चले जाने पर इन चीजों में जड़ता आ जाती थी। शायद इसका कारण यही था कि वह अकेली रह जाती थी और दिनभर उसे इन्हीं बुतों और किताबों के ढेरों के साथ बिताना पड़ता था। दिनभर अकेले इन्हीं को देख-देखकर वह एक कमरे से दूसरे कमरे में चक्कर काटती रहती थी।"

18.1.2 संवादों में प्रयुक्त भाषा रूप

(1) साधारण बोलचाल की भाषा–सामान्य लोगों की बोलचाल में जिस प्रकार की भाषा का प्रयोग होता है, साहनी जी ने अधिकाँश पात्रों के संवादों में इसी प्रकार की भाषा प्रयुक्त की है। उनके प्राय: सभी पात्र हिंदी उर्दू मिश्रित खड़ी बोली का रूप उच्चारित करते हैं। इससे पात्रों की स्वाभाविकता बनी रहती है और रोचकता तो रहती ही है। एक उदाहरण इस संदर्भ में दृष्टव्य है–

"किसी एक का एतबार नहीं किया जा सकता।" मेहता बोला।

"मुसलमान का नहीं तो हिंदू का किया जा सकता है?" बख्शी ने तुनककर कहा।

"देखो बख्शी जी, बात छोटी है मगर दानिशमंद को उसी से पता चल जाता है। मुबारक अली जिला काँग्रेस कमेटी का मेंबर है। खादी कुर्ता और खादी की सलवार पहनता है। पर सिर पर पेशावरी टोपी पहनाता है, गाँधी टोपी नहीं पहनता। मुजफ्फर को छोड़कर कोई भी कांग्रेसी मुसलमान गांधी टोपी नहीं पहनता।"

बख्शी ने जेब में से रूमाल निकालकर पसीना पोंछा और पगड़ी को बगल के नीचे से निकालकर गोद में रख लिया।

"हिंदू सभा वालों ने मुहल्ला कमेटियाँ बनाई है, हमसे तो वह भी नहीं हो सकता। मुहल्ले-मुहल्ले में अमन कमेटियाँ ही बना लेते।" मेहता ने गर्दन पोंछते हुए कहा।

"डूब मरो मेहताजी, चुल्लू-भर पानी में डूब मरो," बख्शीजी बिफरकर बोले।

"क्यों? डूब क्यों मरूँ? मैंने क्या किया है?"

नोट

"दो बेड़ियों में टाँग रखना अच्छा नहीं होता। तुम हमेशा यही करते रहे कि एक टाँग काँग्रेस में, दूसरी हिंदू सभा में। तुम समझते हो किसी को मालूम नहीं, सभी को मालूम है।"

"अगर फसाद हो गया तो तुम मुझे बचाने आओगे? नाले के पार का सारा इलाका मुसलमानी है और मेरा घर नाले के सिरे पर है। फसाद हो गया तो उस वक्त तुम मुझे बचाने आओगे या बापू जी आकर बचाएंगे? उस वक्त तो मुझे मुहल्ले वाले हिंदुओं का ही आसरा है। छुरा मारने वाला मुझसे यह तो नहीं पूछेगा कि तुम काँग्रेस में थे या हिंदू सभा में थे.... अब चुप क्यों हो गए हो?"

"डूब मरो मेहता जी, डूब मरो, यही वक्त होता है, जब आदमी के विश्वास परखे जाते हैं। तुमने बहुत माया इकट्ठी कर ली है। तुम्हारी अक्ल पर चर्बी चढ़ गई है। तुम्हारा घर मुसलमानों के मुहल्ले के पास है तो क्या मेरा हिंदुओं के मुहल्ले में है?"

(2) ग्रामीण आँचलिक भाषा का मिश्रित रूप–चूँकि यह उपन्यास पंजाब के एक अंचल विशेष को केंद्र बनाकर लिखा गया है इसलिए इसमें नुरपुर तहसील के अंतर्गत आने वाले हिंदू-मुसलमानों एवं सिखों के संबंध संवादों में ग्रामीण आँचलिक पंजाबी भाषा का मिश्रित रूप अत्यंत सशक्त रूप में देखने को मिलता है। इस प्रकार की भाषा के दर्शन अनेक स्थानों पर होते हैं। उदाहरणार्थ–

"जओ गुण, रब्ब राखा। सीधे किनारे-किनारे जाओ। आगे जो तुम्हारी किस्मत।" और उसकी आवाज आर्द्र हो उठी।

"तुमने हम पर बड़ा एहसान किया है राजो बहन, हम इसे कभी नहीं भूल सकते" बंतो ने कहा।

"जे जिंदगी रही तां तेरा एहसान......हरनामसिंह की आवाज लड़खड़ा गई।"

"मैं के जाणा भैण, अपणा-अपणा नसीबा। चहवां पासे अग लगी है।"

यह कहते हुए राजो ने अपना हाथ अपने कुर्ते की जेब में डाला और सफेद कपड़े में लिपटी एक छोटी-सी पोटली निकाल लाई।

"यह लो, यह तुम्हारी चीज है।"

"क्या है राजो बहन?"

"एह तुसांदे संदूक विचों मिलेहन। मैं कड्ढ लियायी हों। तुसांदे ऊपर औखा वेला आया है, जेवर कोल होये ताँ सहारा होवेगा।"

(3) शुद्ध परिनिष्ठित हिंदी खड़ी बोली का रूप–इस प्रकार की भाषा उन्हीं संवादों में प्रयुक्त हुई है जहाँ पर किसी समस्या पर गंभीर वार्तालाप होता है। स्पष्टतः इस प्रकार की भाषा का प्रयोग बहुत कम पात्रों द्वारा और बहुत कम परिमाण में हुआ है। उदाहरणार्थ–

इस पर मंत्री जी छूटते ही बोले–"इस विषय पर चर्चा करने की आवश्यकता नहीं है, युवक समाज पूरी तरह से सक्रिय है और इस ओर पूरा-पूरा ध्यान दिया जा रहा है। स्वयं वानप्रस्थी जी तन-मन के साथ इस काम में रुचि ले रहे हैं। पठन-पाठन और हवन-यज्ञ के अतिरिक्त वानप्रस्थी जी हिंदू-संगठन के पुण्य कार्य में बड़ी लगन के साथ काम कर रहे हैं। लेकिन प्रधान जी के सुझाव का मैं स्वागत करता हूँ, उनकी उदारता के बल पर ही हमारे अनेक काम संपन्न हो रहे हैं। हमें अपनी तैयारी में कोई कमी नहीं आने देनी चाहिए।"

स्व-मूल्यांकन (Self-Assessment)

रिक्त स्थानों की पूर्ति करें (Fill in the blanks) :

1. उपन्यासकार के मानसिक भावों को भाषा के माध्यम से ही .... प्राप्त होती है।
2. साहनी जी के सभी पात्र हिंदी-उर्दू मिश्रित खड़ी बोली का रूप .... करते हैं।

3. 'तमस' उपन्यास .... के एक अँचल विशेष को केन्द्र बनाकर लिखा गया है।

(4) अरबी फारसी युक्त उर्दू भाषा का रूप–नया कथाकार होने के कारण साहनी जी ने संवादों में जहाँ एक ओर नागर हिंदू-उर्दू और अंग्रेजी मिश्रित भाषा का रूप रखा है, वहीं मुसलमान पात्रों के संवादों में अरबी फारसी युक्त उर्दू भाषा का रूप भी रखा है। इस प्रकार की भाषा का एक उदाहरण द्रष्टव्य है–

मूसा ने एक दिन खिजर से कहा, "करीमखान कह रहा था, कि तुम मुझे अपना शागिर्द बना लो। सुन, जिलानी सुन, बड़ा सबक आमीज़ किस्सा है।"

"मूसा छोटा था और मूसा खुद पैगंबर बनना चाहता था। अभी वह पैगंबर बना नहीं था मगर चाहता बहुत था। खिजर तो पहले ही पैगंबर था समझे। और उम्र में भी बड़ा था, सभी लोग उसकी बड़ी इज्जत करते थे।" करीमखान कहे जा रहा था। उसकी छोटी-छोटी आँखें सारा वक्त मुस्कराती रहतीं और जब हँसता तो अपने जानू पर चपत मारता, जिस पर आस-पास बैठे सभी लोग मुस्कराने लगते।

तो एक दिन मूसा ने खिजर से कहा कि "तुम मुझे अपना शागिर्द बना लो।" खिजर ने कहा, "शागिर्द अच्छी बात है, बना लेंगे, मगर एक शर्त पर।" वह क्या? मूसा ने पूछा। "शर्त यह कि तुम बोलोगे नहीं, मैं कुछ भी करूँ तुम अपना मुँह बंद रखोगे।" मूसा ने कहा मंजूर है तो खिजर ने उसे अपना शागिर्द बना लिया।

"अब खिजर उसे सिखाना चाहता था? सिखाना चाहता था कि देखता तो खुदावंद तआला है, हम इनसान तो कुछ भी नहीं देख सकते, हम तो अपने दिमाग घिसा-घिसाकर सबब और शयस खोजते रहते हैं, मगर हमारे हाथ कुछ भी नहीं लगता क्योंकि देखता तो खुदावंद करीम है। तो खिजर ने कहा कि तुम बोलोगे नहीं, मैं कुछ भी करूं कुछ भी बोलूँ, तुम अपना मुँह बंद रखोगे।"

(5) अंग्रेजी भाषा का देवनागरी में प्रयुक्त रूप–चूँकि उपन्यास में कुछ पात्र अंग्रेज भी हैं इसलिए हिंदी अंग्रेजी मिश्रित भाषा तो अनेक संवादों में मिलती ही है किंतु कहीं-कहीं वे शुद्ध अंग्रेजी वाक्य भी बोलते हैं। ऐसे संवादों की विशेषता यह है कि यद्यपि इनमें भाषा तो अंग्रेजी है किंतु उन्हें देवनागरी लिपि में प्रयुक्त किया गया है। बाबू रोशनलाल और लीजा के इस संवाद में भाषा का यह रूप दृष्टव्य है–

"आई हैव नो टफ्ट मैडम।"

"दैन यू आर नो हिन्दू।"

लीजा ने अपनी तर्जनी उसकी ओर हिलाते हुए हंसकर कहा, "यू टोल्ड ऐ लाई।"

"नौ मेडम, आई एम ऐ हिन्दू।"

"टेक आफ युअर कोट, बाबू!" लीजा ने कहा।

"ओह, मैडम।" बाबू फिर झेंप गया।

"टेक आफ, टेक आफ हर्री।"

बाबू ने मुस्कराते हुए कोट उतार दिया।

"वेरी गुड, नाउ अंबटन युअर शर्ट।"

"वाट मैडम?"

"डोंट से वाट मैडम, से आई बेग युअर पार्डन मैंडम। आल राइट, अंबटन युअर शर्ट।"

18.2 साहनी जी के उपन्यास 'तमस' की भाषा संबंधी विशेषताएँ

साहनी जी की भाषा की विशेषताओं का पर्यवेक्षण करने पर हमें उसमें मुख्यतया: ये विशेषताएँ दिखाई देती हैं–

(क) काव्य सम्बंधी विशेषताएँ

(1) सरलता, रोचकता एवं प्रवाहपूर्णता

(2) प्रसंगानुकूलता

(3) व्यंग्य का समावेश

(4) पात्रानुकूलता

(5) चित्रात्मकता

(6) वर्णन विचित्रता।

(ख) वाक्य संबंधी विशेषताएँ

(1) संक्षिप्त तथा चुस्त वाक्य रचना

(2) प्रभावात्मक लंबे-लंबे वाक्य

(3) कलात्मकता और सुधड़ता।

अब आगे संक्षेप में इनका विवेचन 'तमस' उपन्यास के परिप्रेक्ष्य में किया जाएगा।

18.2.1 काव्य सम्बंधी विशेषताएँ

(1) सरलता, रोचकता एवं प्रवाहपूर्णता–साहनी जी की भाषा का यह गुण उनके 'तमस' उपन्यास में सर्वत्र मिलता है। उनकी भाषा सरल, रोचक तथा प्रवाहपूर्ण है और प्रत्येक प्रसंग को भली प्रकार समझने में सहायक है। भाषा की ये विशेषताएँ संवादों में और कथा वर्णन, दोनों में ही स्पष्ट दिखाई देती है। एक उदाहरण प्रस्तुत है–

"सन छब्बीस के फसाद के बाद वह घड़ियाल लगवाया गया था। तब से अब तक उसकी चमक बहुत कुछ जाती रही थी। धूप और बारिश के कारण उसकी आस-पास की दीवार पर से भी पलस्तर उखड़ गया था, पहले फसादों के कारण, खुदाबख्श बीस-बाईस बरस का युवक था, जब उसे दंड पेलने और कसरत करने का शौक था। उन्हीं दिनों वह अपने बाप की दर्जी की दुकान पर बैठा था। उन्हीं दिनों घड़ियाल यहाँ लगाया गया था। अब खुदाबख्श अधेड़ उम्र का हो चला था और शहर में विरले ही कोई ऐसा ब्याह होता होगा जिसके कपड़े सिलने के लिए इसके पास न आते हों। दीवार पर चढ़ा हुआ गोरखा रामबलि वही पुराना चौकीदार था, जिसके हाथों घड़ियाल लगाया गया था। पिछले फसादों के बाद अपनी मुस्तैदी, सेवा-भाव और ईमानदारी के कारण अपने काम पर बना रहा था। दसियों बरस के अर्से में उसका शरीर गदरा गया था, चेहरे पर लकीरें पड़ गई थीं, कनपटियों पर के बाल सफेद पड़ गए थे, पर शिवाला की चौकीदारी अभी भी वह पहले की मुस्तैदी से ही करता था।"

(2) प्रसंगानुकूलता–साहनी जी की भाषा की एक और विशेषता भाषागत प्रसंगानुकूलता है। लेखक चिंतन-प्रधान प्रसंगों की भाषा गंभीर और तत्सम शब्द प्रधान रखता है, जबकि हल्के-फुल्के प्रसंगों की भाषा भी यथावसर हल्की-फुलकी है। ग्रामीण नर-नारियों की भाषा का रूप अलग है, नागर पात्रों की भाषा का रूप अलग है। अंग्रेज, मुसलमान या पंजाबी पात्रों की भाषा का रूप अलग है। पंजाबी-हिंदी भाषा का यह रूप देखिए–

"भरावो, यह सब ठीक है, पर मैं कहूँगा, डिप्टी कमिश्नर के पास जाओ। डिप्टी कमिश्नर से मिलो। पानी भी न पियो और डिप्टी कमिश्नर से मिलो। यह बखेड़ा यहाँ खत्म होने वाला नहीं है। उससे मिलो और उसे समझाओ कि हिंदुओं के जान-माल को बहुत खतरा है।"

"डिप्टी कमिश्नर के पास जाना आवश्यक है जरूर, लेकिन लालाजी, अपनी रक्षा तो अपने हाथों होगी।" वानप्रस्थी जी ने कहा।

नोट

"ओ महाराज, बच्चों को लाठी चलाना जरूर सिखाओ, नेजा और तलवार चलाना भी सिखाओ, सूरमा बन जाएँगे हमारे बेटे, पर सबसे पहले डिप्टी कमिश्नर से मिलो, उससे कहो कि शहर में फसाद नहीं होने दे। डिप्टी कमिश्नर का बड़ा दबदबा है। वह चाहे तो चिड़ी नहीं फड़क सकती।"

उपर्युक्त उदाहरण में वानप्रस्थी जी की हिंदी और लाला जी की पंजाबी मिश्रित हिंदी में पर्याप्त अंतर इसी प्रसंगानुकूलता का द्योतक है।

टास्क 'उपन्यास की भाषा में सर्वत्र व्यंग्य के दर्शन होते हैं।' इसके पक्ष में अपने मत प्रस्तुत कीजिए।

(3) **व्यंग्य का समावेश**–'तमस' उपन्यास का शिल्पी एक यथार्थवादी उपन्यासकार है इसलिए आलोच्य उपन्यास में यथार्थ को अभिव्यक्ति देने के लिए भाषागत व्यंग्यात्मकता को अपनाया गया है। उपन्यास की भाषा में सर्वत्र व्यंग्य के दर्शन होते हैं। संभवत: कोई भी पात्र ऐसा नहीं है जिनके संवादों में भाषागत व्यंग्य की झलक न हो। इसके अतिरिक्त लेखनीय भाषा में भी व्यंग्य सुस्पष्ट रूप में दर्शनीय है। इससे जहाँ भाषा में वैचित्रष्य आ गया है वहीं चमत्कार भी उत्पन्न हो गया है। उपन्यास में कांग्रेसी पात्रों के यथार्थ चरित्र को उनके संवादों में निहित व्यंग्यों से बड़ी सशक्त अभिव्यक्ति मिली है। उदाहरणार्थ निम्नांकित पंक्तियाँ द्रष्टव्य हैं–

"क्यों हम पहुँचे हैं बख्शी जी। तो आपने बत्ती ही गुल कर दी?" शंकर मनादी वाले ने कहा।

"क्यों तेनू मेरा चेहरा देखना है या मेहताजी का देखना है?" बख्शीजी बोले, "तेल ज़ाया होता है। यह कांग्रेस कमेटी का लैंप नहीं है मेरा लैंप है। कांग्रेस कमेटी से तेल की मंजूरी ले दो, मैं इसे दिन-रात जलाए रखूँगा?"

इस पर दबी आवाज में कश्मीरीलाल की पीठ पीछे खड़े-खड़े शंकर बोला–"सिगरेटों के लिए आपको मंजूरी की जरुरत नहीं तो मिट्टी के तेल के लिए क्यों होगी?"

वाक्य बख्शीजी ने सुन लिया पर जहर का घूँट पीकर चुप बने रहे। ऐसे लोफरों को मुँह लगाना अपना अपमान करवाना था।

"आप तो मालिक हैं बख्शीजी, आपको मंजूरी की क्या जरूरत है? आपके हुक्म के बिना तो चिड़ी नहीं फड़क सकती।" शंकर बोला, फिर मेहताजी की ओर मुखातिब होकर बोला– "जयहिंद, मेहताजी।"

"जयहिंद।"

"मैंने आपको देखा ही नहीं।"

"तुम अब हमें कहाँ देखते हो शंकर, तुम्हारे पौ-बारह हैं।"

"आज आप अपना बेग नहीं लाए?"

"बेग की प्रभातफेरी में क्या जरूरत है?"

"वाह जी, बेग की सभी जगह जरूरत हो सकती है। बीमा का ग्राहक कहीं भी फंस सकता है।"

मेहताजी चुप रहे। कांग्रेस का काम करने के साथ-साथ बीमा का काम भी करते थे।

"कभी जबान भी बंद किया कर, शंकर। मेहताजी तेरे से तिगुनी उम्र के हैं। बड़ों को बड़ा समझते हैं।" बख्शी ने कहा।

"मैंने क्या कहा है? मैंने यही पूछा है कि बेग नहीं लाए। मैंने यह तो नहीं पूछा कि सेठी से पचास हजार का बीमा मिला है या नहीं मिला।"

नोट

और दूसरी ओर गृहस्थों का यह व्यंग्यपरक वार्तालाप भी दर्शनीय है–

"सुनती हो, मुझे लगता है, होनहार कुल्हाड़ी को युवक समाज में दे आया है।"

"तुम जानो और तुम्हारा बेटा जाने। मुझे तो तुम लोग बेवकूफ समझते हो। मैं तुम्हारी बातों में पड़ूं ही क्यों?"

"तुम्हें कुछ कहकर गया है?"

"कौन?"

"कौन क्या? रणवीर और कौन?"

"मुझे कुछ नहीं कह गया। तुम्हारे ही उपदेश दिनभर सुनता रहता है, अब मैं क्या जानूँ कहाँ गया? इस परलय को रात में बेटा घर पर नहीं है।"

स्व-मूल्यांकन (Self-Assessment)

बहुविकल्पीय प्रश्न (Multiple Choice Questions) :

4. उपन्यास की भाषा का रूप देखते समय हमें कितनी दृष्टियों से विचार करना होता है?

   (क) तीन (ख) चार

   (ग) दो (घ) इनमें से कोई नहीं।

5. कौन-से फसाद के बाद घड़ियाल लगवाया गया था?

   (क) सन् 26 (ख) सन् 36

   (ग) सन् 24 (घ) इनमें से कोई नहीं।

6. 'तमस' में लेखक ने कितने प्रकार की शैली का प्रयोग किया है?

   (क) 3 (ख) 4

   (ग) 5 (घ) इनमें से कोई नहीं।

(4) पात्रानुकूलता–'तमस' उपन्यास के उपन्यासों की भाषा पात्रानुकूल है। नागर पात्र प्राय: हिंदी-उर्दू का मिश्रित रूप व्यवहृत करते हैं, अंग्रेज पात्रों की भाषा में अंग्रेजी शब्द व्यवहृत हुए हैं और कुछ ग्रामीण या अनपढ़ पात्र विशुद्ध पंजाबी भाषा का प्रयोग करते हैं। इस प्रकार का एक उदाहरण द्रष्टव्य है–

"तुमने हम पर बड़ा एहसान किया है राजो बहन, हम इसे कभी नहीं भूल सकते।" बंतों ने कहा।

"जे जिंदगी रही तो तेरा एहसान..." हरनाम सिंह की आवाज लड़खड़ा गई।

"मैं के जाणा भैंण, अपणा-अपणा नसीबा। चहवां पासे अब लगी है।"

"मैं क्या जानूँ बहन। मैं नहीं जानती मैं तुम्हारी जान बचा रही हूँ या तुम्हें मौत के मुँह में झोंक रही हूँ। चारों तरफ आग लगी है।"

यह कहते हुए राजो ने अपना हाथ अपने कुर्ते की जेब में डाला और सफेद कपड़े में लिपटी एक छोटी-सी पोटली निकाल लाई। "यह लो, यह तुम्हारी चीज है।"

"क्या है राजो बहन?"

"एह तुसांडे संदूक बिचों मिले हन। मैं कड्ढ लियायी हाँ। तुषाडे ऊपर औखा वेला आया है, जेवर होए ता सहारा होवेगा।" (ये तुम्हारे ट्रंक में मिले हैं, तुम्हारे दो गहने हैं। मैं निकाल लाई हूँ। तुम्हारे आगे कठिन समय है, पास में दो गहने हुए तो सहारा होगा।)

"वाहे गुरू तुम्हें सलामत रखे बहन, अच्छे कर्म किए थे जो तुमसे मिलना हुआ।" कहते हुए बंतों रो पड़ी।

(5) चित्रात्मकता—कहीं-कहीं किसी पात्र के चरित्र का अंकन करते हुए साहनी जी उसका पूर्ण शब्द चित्र ही प्रस्तुत कर देते हैं। पात्रों की भाव-भंगिमा के ये चित्र उनकी भाषा की अनुपम विशेषता है। एक उदाहरण देखिए जिसमें मुराद अली का बाह्य व्यक्तित्व चित्रात्मक भाषा से साकार हो उठा है—

"यों तो मुराद अली शहर भर में घूमता था, अपनी पतली-सी छड़ी उठाए सड़कों के बीचोबीच चलता कभी किसी मुहल्ले में तो कभी किसी मुहल्ले में नजर आया करता था। उसकी घनी काली मूछों के बीच कभी भी उसके दाँत नजर नहीं आते थे, हँसता भी, तब भी नजर नहीं आते थे। केवल बाँछे खिल जाती थीं और उसके गोल मटोल चेहरे पर आँखें, छोटी-छोटी पैनी आँखें चमकती रहती थीं।"

(6) वर्णन विचित्रता—साहनी जी की भाषा कई स्थलों पर विस्तार को समेटने के लिए घटनाओं को इतनी तीव्रता से आगे सरका देती हैं कि उससे एक दो पाठकीय श्रम बचता है, दूसरे इससे भाषा में वर्णन-वैचित्र्य भी आ गया है। सांप्रदायिक दंगों के दौरान एक व्यक्ति की बेटी के लापता होने की घटना के विस्तार को यहाँ पर कितने संक्षेप में प्रस्तुत कर दिया गया है, देखिए—

"बरामदे के पार आंगन के एक ओर स्कूल के चपरासी का कमरा पड़ता था। रोज की तरह आज भी चपरासी का संबंधी अपनी ब्राह्मणी के साथ चुपचाप सिर झुकाए बैठा था। पहले दिन इसे चपरासी अपने साथ लेकर उसके पास आया था। इसकी बेटी लापता हो गई थी वह और उसकी ब्राह्मणी बहुत रोऐ थे और उसका पता लगवाने का हाथ जोड़-जोड़कर आग्रह करते रहे थे। उसने यह भी कहा था कि गाँव के एक गाड़ीवान ने उसे घर में बैठा लिया है। पर इसके बाद वे उसके पास नहीं आए।"

18.2.2 वाक्य संबंधी विशेषताएँ

(1) संक्षिप्त तथा चुस्त वाक्य रचना—'तमस' उपन्यास में वाक्य रचना का रूप प्राय: संक्षिप्त और चुस्त ही है। न तो उसमें शौथिल्य है और न विस्तार भाव ही है। इससे अर्थ-गंभीरता और कसाव काफी आ गया है। साहनी जी की वाक्य रचना संबंधी यह विशेषता संवादों में भी है और वर्णन में भी। सुविधा के लिए दोनों ही प्रकार के वाक्यों में संबंधित विशेषता से युक्त उदाहरण द्रष्टव्य हैं—

"नाम?"

"हरनामसिंह?"

"सरदार गुरदयालसिंह।"

"मौजा?"

"ढोक इलाहीबख्श।"

"तहसील?"

"नूरपुर।"

"कितने घर हिंदुओं-सिक्खों के थे?"

"केवल एक घर, मेरा घर जी।"

"तुम बचकर कैसे आ गये?"

"करीमखान के साथ हमारे बड़े अच्छे ताल्लुकात थे। शाम को जब ......"

बाबू ने उँगली का इशारा करके उसे बोलने से बंद कर दिया। "जानी नुकसान।"

नोट

"नहीं जी। मैं और मेरी घरवाली बचकर आ गये है। बेटा इकबाल सिंह नूरपुर में था जी, उसका कुछ मालूम नहीं। बेटी जसबीर कौर सैयदपुर में थी कुएँ में डूब मरी है ……।"

वर्णन में संक्षिप्त वाक्य रचना

इस प्रकार का एक उदाहरण द्रष्टव्य है–

"अधिकांश घर इकहरे, एक मंजिला थे। बहुत से घरों के दरवाजों पर टाट के पर्दे लटक रहे थे। सामने खुला मैदान था और मैदान के पार, एक-दूसरी के समानांतर दो कच्ची गलियाँ थीं। एक गली में नालियाँ थीं, पर कच्ची थीं। दूसरी गली में नालियाँ खोदी ही नहीं गयी थीं। गली में ही माल-मवेशी बँधे थे। घरों में से स्त्रियाँ सिर पर एक-एक दो-दो घड़े रखे पानी भरने जा रही थीं। एक जगह एक बालक भैंस के नीचे से गोबर उठा रहा था। नजदीक ही चरनी के पास दो बच्चे मैदान में, एक दूसरे के सामने बैठे शौच कर रहे थे और बतिया रहे थे।"

(2) प्रभावात्मक लंबे लंबे वाक्य–प्रभाव की सृष्टि करने के लिए साहनी जी ने यदा-कदा लंबे-लंबे वाक्यों की भी संयोजना की है। इन लंबे-लंबे वाक्यों के द्वारा पात्रों की मानसिक स्थिति भी स्पष्ट होती है और पाठक भी सहज ही में उनके मनोजगत में प्रवेश कर जाता है। इस प्रकार का एक उदाहरण यहाँ प्रस्तुत है–

"जरनैल ही एक ऐसा आदमी था जो आंदोलन हो या न हो, जेल जाता रहता था, जलसे हों या न हों, शहर में स्वयं तकरीरें करता फिरता था, हर आये दिन शहर में कहीं न कहीं उसकी पिटाई हो जाया करती थी। बगल में छोटा-सा बेंत दबाये वह सदा कभी एक मुहल्ले में घूमता नजर आता था। मनादी करने के लिए तांगा निकलता तो तांगे में बैठने वाले तीन आदमियों में से एक आदमी जरूर जरनैल हुआ करता था। जलसा शुरू होने पर सबसे पहले जरनैल की तकरीर होती थी जिसमें उसकी खोखली-फुसफुसाती अवाज केवल आगे बैठे चंद आदमियों तक ही पहुँच पाती थी।"

और दूसरी ओर बाह्य परिस्थितियों को भी सशक्त रूप में व्यंजित करने के लिए लंबे-लंबे प्रभावात्मक वाक्यों को प्रस्तुत किया गया है। इसका एक सुंदर उदाहरण द्रष्टव्य है–

"चाँद फिर निकल आया था, जिससे मोर्चे वालों को रात का दृश्य भयावह लगने लगा था। आज रात फिर गोलाबारी हुई तो कुछ भी हो सकता है, आगजनी हो सकती है, लूटपाट हो सकती है। अब सभी निर्णय गलत जान पड़ने लगे थे, गुरुद्वारे में इकट्ठा होना भूल थी, शेख गुलाम रसूल और उसके साथियों से बातचीत तोड़ देना भूल थी, इन भूलों का कोई अंत नहीं था। अगर दुश्मन पर गालिब आ जाते तो यही भूल रणनीति की बढ़िया चालें मानी जातीं। शेखगुलाम रसूल के घर के बाहर चबूतरे पर कुछ लोग बैठे बतिया रहे थे। अपनी लाशें ठिकाने लगाने का इन्हें भी मौका नहीं मिला था, मगर जहाँ गुरुद्वारे की स्थिति एक घिरे हुए स्थान की सी थी वहाँ शेखों का मकान खुली जगह पर था, उसका संपर्क आस-पास के सभी गाँवों से था।"

टास्क 'नत्थू के द्वारा सूअर को मारने की प्रक्रिया' का चित्रण अपने शब्दों में कीजिए।

(3) कलात्मकता और सुघड़ता–साहनी जी की वाक्य रचना बड़ी कलात्मक और सुघड़ दृष्टिगत होती है। कहीं-कहीं तो काफी छोटे-छोटे वाक्यों में लेखक ने प्रभाव की सृष्टि की है और इस प्रकार कलात्मकता उत्पन्न की है तथा कहीं-कहीं लंबे-लंबे वाक्यों द्वारा कलात्मकता को उत्पन्न किया है। निम्नांकित उदाहरण में इस तथ्य को देखा जा सकता है–

"नत्थू के अंदर आ जाने पर सूअर ने अपना नथुना उठाया। नत्थू को लगा जैसे सूअर का नथुना ज्यादा लाल हो रहा है और सूअर की आँखें सिकुड़ी हुई हैं। उस पर फेंकी हुई पत्थर की सिल सूअर के पीछे कुछ दूरी पर पड़ी थी।

नोट

दिये की टिमटिमाती लौ ने फिर झपकी ली और अस्थिर रोशनी मे नत्थू को लगा जैसे सूअर फिर से हिला है और चलने लगा है। वह आँखें फाड़-फाड़कर उसकी ओर देखने लगा। सूअर सचमुच में हिला था। दो-एक कदम दायें बायें झूलकर चलने के बाद एक अजीब-सी आवाज सूअर के मुँह में से निकली। नत्थू फिर से छुरा ऊँचा उठाकर फर्श पर पैरों के बल बैठ गया। सूअर ने दो-तीन कदम और आगे की ओर बढ़ाये। उसका नथुना अपने पैरों की ओर और अधिक झुक गया और नत्थू के पास पहुँचते न पहुँचते वह एक ओर को लुढ़ककर गिर गया। उसकी टांगों में एक बार जोर का कंपन हुआ मगर कुछ क्षणों में ही वे हवा में उठी की उठी रह गयीं। सूअर ढेर हो चुका था।"

18.3 शब्द शिल्प सौंदर्य

साहनी जी की भाषा के शब्द सौंदर्य का वर्णन करने के लिए हमें उपन्यास में प्रयुक्त शब्दों के रूप और मुहावरों आदि को देखना होगा। इस दृष्टि से हमें साहनी जी की भाषा में प्रयुक्त शब्द प्रसंगानुकूल, अनेक रूपों तथा भाषाओं के मिलते हैं। उनका संक्षिप्त आंकलन नीचे किया जा रहा है–

(1) हिंदी के तत्सम शब्दों का प्रयोग–साहनी जी ने प्राय: हिंदी के संस्कृतनिष्ठ एवं परिष्कृत शब्दों का बहुतायत से प्रयोग किया है किंतु ध्यातव्य है कि इनमें प्रचलित शब्दों का ही प्रयोग है और कहीं भी क्लिष्टता बोधक शब्द व्यवहृत नहीं हुए हैं। उदाहरणार्थ–दु:स्वप्न, अस्थिर, पुण्यात्मा, विशिष्ट, मंत्रोच्चारण, सभासद, कंठ, कंठस्थ, आहुति, आग्रह, सत्संग, विसर्जन, अंतरंग, प्रवचन, विचलित, भावोद्वेलित, विसर्जित, उत्तेजित, सक्रिय, संपन्न वयोवृद्ध आदि।

(2) हिंदी के तद्भव शब्दों का प्रयोग–प्रभावोत्पादकता उत्पन्न करने एवं स्वाभाविकता (परिवेशगत स्वाभाविकता) लाने के लिए साहनी जी ने हिंदी के तद्भव शब्दों का भी प्रचुर परिमाण में प्रयोग किया है। इससे भाषा में स्वाभाविकता और विकास का गुण आ जाता है। उदाहरणार्थ–धुएँ (धूम्र), सांस (श्वास), दीया (दीपक), मुँह (मुख), तीखा (तीक्ष्ण), बायीं (वाम), सूअर (सूकर), काम (कर्म), मसान (शमशान), घोड़ा (घोटक) तथा मिट्टी (मृतिका) आदि।

(3) देशज शब्दों का प्रयोग–कुछ शब्द ऐसे होते हैं जो तत्सम या तद्भव न होकर जन सामान्य के बीच चल पड़ते हैं। इन्हें देशज शब्द कहा जाता है। 'तमस' उपन्यास की भाषा में देशज शब्द भी पर्याप्त मात्रा में व्यवहृत हुए हैं। उदाहरणार्थ–थूथनी, किकियाकर, कचरा, तोंद, झींकता, छकड़ा तथा चरमराया आदि।

(4) बिंदु चिह्नों का प्रयोग–साहनी जी ने वाक्य के अर्थ को अश्लीलता के चरम से बचाने या एक विशिष्ट अर्थ की गूँज ध्वनित करने या पात्र के मानसिक तनाव को अभिव्यक्त करने के लिए आलोच्य उपन्यास में बिंदु चिह्नों या रिक्त चिह्नों का प्रयोग किया है। यह प्रयोग उपन्यास में सर्वत्र हुआ है और इससे भाषा की भाव-सबलता में पूर्ण अभिवृद्धि हुई है। यथा–

उनकी नींद तब टूटी जब उनके दरवाजे पर कुल्हाड़े पड़ रहे थे और कोई चिल्ला-चिल्लाकर कह रहा था "निकलो बाहर, कहाँ घुसे बैठे हो, तुम्हारी माँ की....निकलो बाहर, तुम्हारी....।"

"निकाल चाभी, काफिरों को पनाह दी है। तुम्हारी काफिरों की मैं ...." और फिर एक और प्रहार दरवाजे पर पड़ा।

(5) पंजाबी शब्दों का प्रयोग–चूँकि आलोच्य उपन्यास पश्चिमी पंजाब की पृष्ठभूमि में लिखा गया है इसलिए इसमें आंचलिक पंजाबी भाषा के पर्याप्त शब्द मिल जाते हैं बल्कि कई स्थानों पर तो वाक्य पंजाबी भाषा के हैं। पंजाबी भाषा के ये शब्द प्रसंग एवं अवसरानुकूल प्रयुक्त हुए हैं इसलिए स्वाभाविक प्रतीत होते हैं। उदाहरणार्थ–तैनूं, भरावो, वाहेगुरू, सरबद्ध दा रब्ब राखा, सत सिरी अकाल, करमावालियो, असी, बहु माड़ा, मड़द तुदां पुछसन, जाणा, भैण, अपणा, चहवाँ, पासे, अग, ताँ, एहँ तुसांडे, विचों, कड्ढ, औखा वेला, कोल तथा हुण आदि।

(6) हिंदी काव्य का प्रयोग–साहनी जी ने वार्तालाप में तथा वर्णन में प्रसंगवश हिंदी काव्य की पंक्तियाँ भी प्रयुक्त की हैं, यथा–

नोट

"सब पर दया करो भगवान
सब पर कृपा करो भगवान......"

स्व-मूल्यांकन (Self-Assessment)

निम्नलिखित कथनों में सत्य अथवा असत्य की पहचान करें

(State Whether the following statements are True or False) :

7. जनरैल ही एक ऐसा आदमी था जो आंदोलन हो ना हो, जेल जाता रहता था।
8. नत्थू ने सूअर को चाकू के द्वारा मौत के घाट उतार दिया।
9. साहनी जी ने उपन्यास में उर्दू शायरी का भी प्रयोग किया है।

(7) पंजाबी काव्य का प्रयोग–इस प्रकार के प्रयोग तो अनेक स्थानों पर बड़े सुंदर और मार्मिक बन पड़े हैं। उदाहरणार्थ–

"जरा वी लगन आजादी दी
जग गयी जिन्हों दे मन दे विच।"

"ओह मजूणं बण फिरदे ने
हर सेहरा हर बिन दे विच।"

(8) संस्कृत श्लोकों का प्रयोग

"सर्वे भवन्तु सुखिनः सर्वे सन्तु निरामयः
सर्वे भद्राणि पश्यन्तु मा कश्चित् दुःख भाग भवेत्।
ऊँ द्यौ शान्ति पृथ्वी, शान्तिरापः
शान्तिरौषधयः शान्ति वनस्पतिः"

(9) उर्दू शायरी का प्रयोग–साहनी ने हिंदी-पंजाबी और संस्कृत काव्यांशों की भाँति भाव, तारतम्यता एवं स्वाभाविकता लाने हेतु कतिपय स्थलों पर उर्दू शायरी के अंश भी उद्धृत किए हैं। उदाहरणार्थ–

"वतन की फिक्र कर ज्यादा मुसीबत आने वाली है।
तेरी बरबादियों के तज़करे हैं आसमानों में।"

(10) उर्दू शब्दों का प्रयोग–साहनी जी ने उर्दू शब्दों का प्रयोग खूब दिल खोलकर किया है। प्रत्येक पृष्ठ पंक्ति में दो-चार उर्दू शब्द मिल ही जाएँगे, जो मुसलमान पात्रों के संवादों में तो हैं ही हिंदू पात्रों की भाषा में भी मिलते है। उदाहरणार्थ–आवाज, जवाब, दरवाजे, जरूर, मुसीबत, साहिबान, वक्त, ज्यादा, शुक्रिया, मकसद, कामयाब, इंकलाब-जिंदाबाद, नफरत, जमात, आजाद, फरमान, खिलाफत, मज़हब, अलहमदुलिल्लाह, मुसलमीन, हुकूमत तथा खानसामा आदि।

(11) अंग्रेजी शब्दों का प्रयोग–साहनी जी के औपन्यासिक पात्र अधिकांशतः नागरिक हैं बल्कि कुछ पात्र तो अंग्रेज ही हैं इसलिए औपान्यासिक भाषा में भी स्वभावतः हिंदी उर्दू के साथ ही अंग्रेजी शब्दों का प्रचुर परिमाण में उपयोग हुआ है। यथा-स्कुर्टिनी, यूनीवर्सिटी, टैक्सिला (तक्षशिला), डार्लिंग, टर्बन, रिपोर्ट, पुलिस सुपरिंटेंडेंट, आई गेस्ड राइट, मैडम तथा लाई आदि।

(12) मुहावरों आदि का प्रयोग–साहनी जी ने यत्र-तत्र मुहावरों का प्रयोग भी खूब किया है और इनके माध्यम से शब्द-चमत्कार उत्पन्न किया है तथा भाव गरिमा में अभिवृद्धि की है। कपितय मुहावरे द्रष्टव्य है–साँस फूलना,

नोट

पसीने से तर होना, बस का रोग न होना, हाथ-पैर फूलना, तन-बदन में आग लगना, मुँह बनाना, ढेर होना, आपके हुक्म के बिना तो चिड़ी नहीं फड़क सकती, पौ-बारह, जली-कटी, मुँहफट, भूखे भेड़िये की तरह खाना, टूट पड़ना, नाटक करना आदि।

18.4 'तमस' की शैली

साहनी जी के उपन्यास 'तमस' में साहनी जी ने औपन्यासिक दृष्टि से वर्णनात्मक शैली को अपनाया है। इसमें प्रायः 4 शैलियाँ प्रयुक्त हुई हैं–

(1) नाटकीय शैली

(2) वर्णनात्मक शैली

(3) विश्लेषणात्मक शैली

(4) फोटोग्राफिक शैली।

अब आगे इन शैलियों पर सोदाहरण विचार किया जायेगा।

(1) नाटकीय शैली–औपन्यासिक संवादों में साहनी जी की नाटकीय शैली द्रष्टव्य है। संवादों मे जहाँ भी कथा का पूर्वासंबंध होता है, नाटकीयता आ जाती है और वहाँ नाटकीय शैली का प्रयोग हुआ है। नत्थू और उसकी पत्नी की संवाद-योजना को देखिए–

"तुझे मालूम है मंडी में आग क्यों लगी है?"

"मालूम है, मस्जिद के सामने किसी ने सूअर मारकर फेंका था। इस पर मुसलमानों ने मंडी को आग लगा दी।"

"यह सूअर मैंने मारा था।"

नत्थू की पत्नी को काटो तो खून नहीं। "तूने?" "तूने यह बुरा काम क्यों किया?" और उसके चेहरे पर से सारा खून उतर गया और वह नत्थू की ओर फटी आँखों से देखती रह गयी। नत्थू ने धीरे-धीरे सारा किस्सा कह सुनाया।

"सूअर को फेंकने भी तू गया था?" पत्नी ने पूछा।

"नहीं कालू उसे छकड़े पर लादकर ले गया।"

"कालू तो मुसलमान है, वह कैसे ले गया?"

"कालू मुसलमान नहीं है ईसाई है, गिरजे में जाता है।"

उसकी पत्नी देर तक उसके चेहरे की ओर देखती रही, "तूने बहुत बुरा काम किया है, पर इसमें तेरा क्या दोष? तुझसे लोगों ने धोखे से काम करवाया है। तूने धोखे में आकर यह काम किया है।" वह मानो अपने से बात करती हुई बुदबुदायी। पर नत्थू की बात सुनकर वह सिर से पाँव तक काँप गयी थी। उसकी पत्नी को लगा जैसे किसी भयानक ग्रह की छाया उसके घर पर पड़ गयी है, जो उपवास करने से भी नहीं टलेगी, प्रायश्चित करने से भी नहीं टलेगी।

पर फिर भी उसके मन पर बराबर बोझ बना रहा।

नत्थू के दिल में गहरी हूक-सी उठी। पत्नी ने आँख उठाकर नत्थू की ओर देखा। उसे विचलित देखकर उसकी पत्नी के दिल में फिर ममता का सोता फूट पड़ा। वह उठकर नत्थू के पास जा बैठी और उसका हाथ पकड़कर बोली, "तभी तो मैं कहूँ यह इतना परेशान क्यों है? मुझे क्या मालूम, तूने मुझे बताया क्यों नहीं? अपना दुख मन के अंदर नहीं रखते।"

"मुझे मालूम होता तो मैं यह काम क्यों करता?" नत्थू बुदबुदाया, "मुझसे तो कहा सलोतरी साहब ने सूअर माँगा है।"

नोट

फिर नत्थू अपनी उधेड़ बुन में और भी गहरा डूबते हुए बोला, "कल रात मुराद अली को मैंने देखा था, पर वह मेरे साथ बोला ही नहीं। मैं उसके पीछे भागता था और वह आगे ही आगे बढ़ता गया। उसने मेरे साथ बात तक नहीं की ....।"

नत्थू की आवाज अनिश्चय में खो-सी गयी, मानो उसके मन में संदेह उठने लगा हो कि क्या सचमुच उसने मुराद अली को भी देखा था या नहीं।

टास्क साहनी जी की शैली किस प्रकार 'तमस' को एक उत्कृष्ट रचना बनाने में सफल साबित हुई है?

(2) वर्णनात्मक शैली–साहनी जी ने अधिकतर उपन्यास में वर्णनात्मक शैली को व्यक्त किया है, पर इसमें पुरानापन नहीं है। मानसिक ग्रंथियों की विवेचना होने के कारण इसमें नवीनता का गुण विद्यमान है। एक उदाहरण इस प्रकार की शैली का द्रष्टव्य है–

"घरों के दरवाजे बंद थे, शहर का कारोबार, स्कूल, कॉलिज, दफ्तर सभी ठप्प हो गये थे। सड़क पर चलते आदमी को सारा वक्त इस बात का भास बना रहता कि खिड़कियों के पीछे, मकानों की अँधेरी ड्योढ़ियों, दरारों, छिद्रों में से उस पर आँखें लगी हैं, उसका पीछा किए जा रही है। लोग अपने अपने मोहल्लों में बंद हो गये थे, केवल उड़ती अफवाहों के बल पर एक दूसरे से संपर्क रखे हुए थे। खाते-पीते घरों के लोग अपने-अपने बचाव में उलझ गये थे। सार्वजनिक काम ठप्प हो गये थे। काँग्रेस की प्रभातफेरी और तामीरी काम और सभी काम एक दिन में खत्म हो गये थे। फिर भी सुबह सवेरे हस्बे मामूल जरनैल जैसे–तैसे सड़कें लाँघता काँग्रेस के दफ्तर के सामने पहुँच गया था। वहाँ पर ताला चढ़ा देखकर वह पौ फटने तक साथियों का इंतजार करता रहा और जब वे नहीं आये तो नाली के ऊपर बने चबूतरे पर खड़ा होकर उसने छोटी-सी तकरीर की और वहाँ से रवाना हो गया।"

(3) विश्लेषणात्मक शैली–चूँकि उपन्यास की समस्त घटनाओं का केंद्र बिंदु सांप्रदायिक तनाव है इसलिए इस उपन्यास में जहाँ एक ओर तनाव के मूल कारण सूअर की हत्या के प्रसंग में नत्थू की मानसिक उलझनों का चित्रण हुआ है, वहीं दंगाग्रस्त हरनामसिंह के मानसिक उद्वेलन को भी इसी विश्लेषणात्मक शैली द्वारा सशक्त अभिव्यक्ति मिली है। नत्थू के मानसिक द्वंद्व का रेखांकन करने वाली निम्नलिखित पंक्तियाँ देखिए–

"वह अंदर ही अंदर बड़ा परेशान था। तरह-तरह के विचार उसके मन में घूम रहे थे। जितनी अधिक घबराहट बढ़ती जाती उतना ही अधिक उसके विचारों में बिखराव आता जाता। बात करे तो किससे? और पूछे तो क्या? उसके साथ बहुत बड़ा धोखा हुआ था। मुराद अली ने सलोतरी का नाम लेकर सूअर मरवा लिया था और मस्जिद के सामने फिंकवा दिया था। पर क्या मालूम यह कोई दूसरा सूअर रहा हो? उसने मस्जिद वाले सूअर को देखा, तो वह नहीं था। उसका मन बार बार बेचैन हो उठता। अगर वह वही सूअर है तो क्या होगा? अगर लोगों को पता चल जाये कि उसी ने सूअर मारा था, क्या होगा? इसी बचैनी में कभी उसका मन करता कि भागकर घर चला जाये और अंदर से सांकल चढ़ाकर पड़ा रहे, कभी उसका मन करता गलियों में घूमता-भटकता रहे, कभी कुछ, कभी कुछ। मैं घर नहीं जाऊँगा। वह एक रुपया माँगेगी तो मैं पाँच रुपये दूँगा। रातभर उसके पास रहूँगा।

पर सड़कों की खाक दिनभर छानते रहने के बाद उसे अपनी पत्नी की याद ज्यादा सताने लगी। इस वक्त अपने घर में होता तो अपने साथी चमारों के साथ बैठकर उससे बातें करुँगा। जाते ही उसे बाँहों में भर लूँगा, मुराद अली का नाम लेने की जरूरत नहीं, उसे कुछ भी बताने की जरूरत नहीं, इस सारे घिनोंने किस्से को सुनाने की जरूरत नहीं उसकी छाती पर सिर रखूँगा तो चैन मिलेगा। रंडी के पास जाऊँगा तो कड़वा बोलेगी, बुरा-भला कहेगी। घरवाली चुप रहने वाली औरत है, ढांढस बँधाने वाली, सुख पहुँचाने वाली। नत्थू ने मन ही मन कहा, दो रुपये मोतिया रंडी को देने की बजाय, घरवाली के लिए कुछ ले जाऊँगा। वह खुश हो जायेगी, कहेगी तुम क्यों लाये? मेरे पास सब

कुछ है। वह कभी कुछ नहीं माँगती। उसे लगा जैसे दूर बैठे हुए भी उसे अपनी बाँहों में लिए हुए है, और उसके मन का सारा क्षोभ दूर होता जा रहा है। दुख से छुटकारा पाने के लिए आदमी सबसे पहले औरत की तरफ ही मुड़ता है। औरत को बाँहों में लेने पर उसके सभी क्लेश मिट जायेंगे, उसे इस बात का विश्वास बना रहता है। वह बड़े सब्र वाली औरत है। उसकी छातियों में प्यार भरा है।"

(4) **फोटोग्राफिक शैली**–यद्यपि इस प्रकार की शैली को वर्णनात्मक शैली के अंतर्गत ही मानना चाहिए किंतु ऐसे कई स्थल हैं जहाँ पर लेखक ने इस प्रकार के वर्णन किए हैं जैसे चलचित्र पर कोई रील चल रही हो। एक-एक करके चित्र उभरते जाते हैं। इसलिए इस प्रकार के वर्णनों में हम फोटोग्राफिक शैली स्वीकार करके चलते हैं। उपन्यास का प्रथम प्रकरण इस प्रकार की शैली में ही लिखा गया है।

निष्कर्ष

समग्रत: कहा जा सकता है कि साहनी जी की भाषा-शैली अत्यंत उत्कृष्ट, सुघड़, कलात्मक और प्रवाहपूर्ण है। वृहदाकार उपन्यास होने के कारण इसमें भाषा और शैली की विविधता परिलक्षित होती है। जिस प्रकार उपन्यास वृहद और दो खंडों में विभक्त होते हुए भी एक है, उसी प्रकार भाषा-शैली की विविधता में भी एकता है।

18.5 सारांश (Summary)

- भाषा भावों की वाहिका होती है अर्थात उपन्यासकार के मानसिक भावों को भाषा के माध्यम से ही मूर्तता प्राप्त होती है। उपन्यास की भाषा का रूप देखते समय हमें दो दृष्टियों से विचार करना होता है।
- नई पीढ़ी का कथाकार होने के कारण भाषा में अलंकरणप्रियता एवं काव्यात्मकता के प्रति साहनी जी में कतई व्यामोह नहीं दिखाई पड़ता।
- सामान्य लोगों की बोलचाल में जिस प्रकार की भाषा का प्रयोग होता है, साहनी जी ने अधिकाँश पात्रों के संवादों में इसी प्रकार की भाषा प्रयुक्त की है। उनके प्राय: सभी पात्र हिंदी उर्दू मिश्रित खड़ी बोली का रूप उच्चारित करते हैं।
- साहनी जी ने संवादों में जहाँ एक ओर नागर हिंदू-उर्दू और अंग्रेजी मिश्रित भाषा का रूप रखा है, वहीं मुसलमान पात्रों के संवादों में अरबी फारसी युक्त उर्दू भाषा का रूप भी रखा है।
- उपन्यास का शिल्पी एक यथार्थवादी उपन्यासकार है इसलिए आलोच्य उपन्यास में यथार्थ को अभिव्यक्ति देने के लिए भाषागत व्यंग्यात्मकता को अपनाया गया है। उपन्यास की भाषा में सर्वत्र व्यंग्य के दर्शन होते हैं।
- साहनी जी की भाषा कई स्थलों पर विस्तार को समेटने के लिए घटनाओं को इतनी तीव्रता से आगे सरका देती हैं कि उससे एक दो पाठकीय श्रम बचता है, दूसरे इससे भाषा में वर्णन-वैचित्र्य भी आ गया है।
- साहनी जी ने वाक्य के अर्थ को अश्लीलता के चरम से बचाने या एक विशिष्ट अर्थ की गूँज ध्वनित करने या पात्र के मानसिक तनाव को अभिव्यक्त करने के लिए आलोच्य उपन्यास में बिंदु चिह्नों या रिक्त चिह्नों का प्रयोग किया है।
- उपन्यास पश्चिमी पंजाब की पृष्ठभूमि में लिखा गया है इसलिए इसमें आंचलिक पंजाबी भाषा के पर्याप्त शब्द मिल जाते हैं बल्कि कई स्थानों पर तो वाक्य पंजाबी भाषा के हैं।
- चूँकि उपन्यास की समस्त घटनाओं का केंद्र-बिंदु सांप्रदायिक तनाव है इसलिए इस उपन्यास में जहाँ एक ओर तनाव के मूल कारण सूअर की हत्या के प्रसंग में नत्थू की मानसिक उलझनों का चित्रण हुआ है, वहीं दंगाग्रस्त हरनामसिंह के मानसिक उद्वेलन को भी इसी विश्लेषणात्मक शैली द्वारा सशक्त अभिव्यक्ति मिली है।
- साहनी जी की भाषा-शैली अत्यंत उत्कृष्ट, सुघड़, कलात्मक और प्रवाहपूर्ण है। वृहदाकार उपन्यास होने के कारण इसमें भाषा और शैली की विविधता परिलक्षित होती है।

नोट

18.6 शब्दकोश (Keywords)

1. प्रयुक्त – प्रयोग की गई
2. शैथिल्य – ढीलापन
3. एतबार – विश्वास
4. चर्बी – वसा
5. आर्द्र – गीली
6. सलामत – सुरक्षित
7. शागिर्द – शिष्य, चेला
8. सबब – कारण
9. मुस्तैदी – तन्मयता
10. बखेड़ा – झगड़ा
11. ज़ाया – खर्च
12. परलय – क़यामत
13. ताल्लुकात – मैलजोल।

18.7 अभ्यास प्रश्न (Review Questions)

1. 'तमस' में किस प्रकार की भाषा प्रयुक्त की गई है?
2. साहनी जी के उपन्यास की भाषा की क्या विशेषताएँ हैं?
3. भाषा के शब्द सौंदर्य से क्या तात्पर्य है?
4. उपन्यास में साहनी जी ने कौन-सी शैली का प्रयोग किया है?

उत्तर : स्व-मूल्यांकन (Answers : Self-Assessment)

1. मूर्तता
2. उच्चारित
3. पंजाब
4. (ग)
5. (क)
6. (ख)
7. सत्य
8. असत्य
9. सत्य।

18.8 सन्दर्भ पुस्तकें (Further Readings)

पुस्तकें तमस–भीष्म साहनी, राजकमल प्रकाशन (प्रा.) लि., नई दिल्ली।

इकाई–19: 'तमस' की तात्विक समीक्षा

अनुक्रमणिका (Contents)

उद्देश्य (Objectives)
प्रस्तावना (Introduction)
19.1 कथानक के आधार पर
19.2 पात्र-योजना एवं चरित्र-चित्रण के आधार पर
19.3 देशकाल और वातावरण के आधार पर
19.3.1 आन्तरिक वातावरण के आधार पर
19.3.2 बाह्य वातावरण के आधार पर
19.4 वातावरण सम्बंधी चित्रण का मूल्यांकन
19.5 संवाद-योजना, भाषा-शैली, उद्देश्य एवं शीर्षक के आधार पर
19.6 सारांश (Summary)
19.7 शब्दकोश (Keywords)
19.8 अभ्यास प्रश्न (Review Questions)
19.9 सन्दर्भ पुस्तकें (Further Readings)

उद्देश्य (Objectives)

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् विद्यार्थी योग्य होंगे–

- कथानक के आधार पर 'तमस' की समीक्षा करने में;
- 'तमस' के पात्रों की संक्षिप्त जानकारी प्राप्त करने में;
- उपन्यास में प्रयुक्त देशकाल और वातावरण की व्याख्या करने में;
- 'तमस' के वातावरण संबंधी चित्रण का मूल्यांकन करने में।

प्रस्तावना (Introduction)

साहनी जी द्वारा रचित 'तमस' उपन्यास एक घटना प्रधान उपन्यास है। इसकी मुख्य घटना कई छोटी-छोटी घटनाओं से मिलकर बनी है। उपन्यास में प्रयोग किये गये तत्वों के आधार पर ही 'तमस' एक सफल कृति बन सका है। 'तमस' की तात्विक समीक्षा निम्नलिखित आधारों पर की जा रही है–

19.1 कथानक के आधार पर

'तमस' उपन्यास की सबसे बड़ी विशेषता यह है कि यह घटना प्रधान है और इसमें स्पष्टत: किसी व्यक्ति को मुख्य

नोट

पात्र नहीं कहा जा सकता, मुख्य कथा भाग हिंदू-मुस्लिम संदर्भ में सांप्रदायिक तनाव से संबद्ध है और उपन्यास के लगभग सभी पात्र इसी सांप्रदायिक तनाव से किसी न किसी रूप में, कम या अधिक जुड़े हुए हैं। किंतु इस तनाव का सूत्रपात जिस व्यक्ति के माध्यम से हुआ है, उसका विश्लेषण अत्यंत सशक्तता के साथ हुआ है इसलिए यह कहा जा सकता है कि नत्थू मुख्यत: इस कथा से जुड़ा हुआ है। एक अंग्रेज व्यक्ति शहर में हिंदू-मुस्लिम तनाव को बढ़ाना चाहता है और उसके इस घृणित कार्य को संभालने का काम एक मुसलमान मुराद अली, नत्थू चमार को सौंपता है। नत्थू मुराद अली के कहने पर एक सूअर को मार देता है और फिर मुराद अली एक आदमी के माध्यम से वह मरा सूअर नगर की एक मस्जिद के दरवाजे पर फेंक देता है। मुसलमान इसे किसी हिंदू द्वारा किया गया कार्य समझकर दंगा करने को उतावले हो उठते हैं और एक गाय को मार डालते हैं। बस यहीं से नूरपुर तहसील में हिंदू-मुस्लिम दंगा प्रारंभ हो जाता है। नगर के काँग्रेस कार्यकर्ता, जो अब तक तामीरी काम कर रहे थे, दंगा रुकवाने का प्रयास करते हैं किंतु मुस्लिमलीगी उसे बढ़ाते हैं। इस प्रकार काँग्रेसी, लीगी और कम्युनिस्ट व्यक्तियों के अथक प्रयासों के बावजूद दंगा प्रारंभ हो जाता है। नत्थू को जब तथ्य का पता चलता है कि जिस सूअर को उससे मरवाया गया था, वही इस सांप्रदायिक तनाव की जड़ है तो घोर प्रायश्चित में डूब जाता है और अंतत: उसका पश्चाताप ही उसकी मृत्यु का कारण बनता है। इस बीच घटना-क्रम तेजी से बढ़ता है और अनेक गाँवों तक सांप्रदायिकता की आग फैलती चली जाती है। ग्राम ढोक इलाहीबख्श में मुसलमान आबादी के मध्य मात्र एक घर एक सरदार हरनाम सिंह का था। उसे घर छोड़कर भागना पड़ा और किसी प्रकार बचते-बचाते वह अपनी बूढ़ी पत्नी के साथ नगर के शरणार्थी शिविर तक पहुँचता है। उसका घर लूट लिया जाता है और मकान को आग लगा दी जाती है। उसका लड़का इकबाल सिंह विवशत: मुसलमान बन जाता है। दूसरे गाँव सैयदपुर में तो सिक्खों एवं मुसलमानों में इतना भीषण संघर्ष होता है कि असंख्य व्यक्ति मारे जाते हैं और सत्ताईस महिलाएँ बच्चों सहित कुएँ में डूबकर जान दे देती हैं। चार दिन तक पूरे जिले में मारकाट मची रहती है और तब जाकर डिप्टी कमिश्नर रिचर्ड कर्फ्यू लगाकर और अन्य तरीकों से दंगा-फसाद रुकवाता है। रिचर्ड का यह कार्य जैसे एक क्रूर व्यंग्य है हमारे समाज पर। स्पष्टतया यही मूल कथा भाग है और इसका किसी व्यक्ति-विशेष से कोई महत्त्वपूर्ण संबंध नहीं है। चूँकि 'तमस' एक घटना-प्रधान उपन्यास है इसलिए उसमें एक के साथ एक घटनाएँ जुड़ती चली जाती हैं। यही घटनाएँ अलग-अलग से आकर मुख्य घटना से इस प्रकार जुड़ती हैं जैसे किसी बड़ी नदी से अनेक सहायक नदियाँ आकर मिलती रहती हैं। मुख्य घटना कई व्यक्तियों के समुच्चय से निर्मित हैं किंतु जो अनेक घटनाएँ इससे मिलती हैं उनमें अलग-अलग व्यक्तियों का योगदान है। इन्हीं व्यक्तियों और उससे संबद्ध घटनाओं को अन्य मुख्य कथा-प्रसंगों के अंतर्गत समझना चाहिए।

टास्क कथानक के आधार पर 'तमस' की तात्विक समीक्षा कीजिए।

19.2 पात्र-योजना एवं चरित्र-चित्रण के आधार पर

उपन्यास में कथावस्तु का विकास एवं उसके स्वरूप का निर्माण पात्रों के माध्यम से होता है। विभिन्न प्रकार की घटनाओं को किसी पात्र के द्वारा ही प्रस्तुत किया जाता है, पात्रहीन कोई घटना हो ही नहीं सकती। अत: उपन्यास में जितना महत्व कहानी का है, उतना ही महत्व पात्रों का है। एतदर्थ, उपन्यासकार अपने उपन्यास की कहानी के अनुकूल पात्रों की संयोजना करके उनकी आकृति, अनुकृति, विचार, मनोभाव, कार्यकलाप एवं अनुभव आदि का चित्रण करता है और इस प्रकार कथा को संजीव, रोचक एवं आकर्षक बनाता है। उपन्यासकार की सफलता इसी में है कि उसके पात्र संजीव एवं स्वाभाविक हों। पात्रों की अनुकूलता में ही कथानक की अनुकूलता और चरित्रांकन की सफलता पर ही कथानक की सफलता निर्भर है।

उपन्यास में पात्रों की उपस्थिति और उनके चरित्रांकन की नियोजना के विषय में अपना मत प्रतिपादित करते हुए

नोट

आलोचक लिखते हैं कि पात्रों की सजीवता, स्वतंत्रता और क्रियाशीलता उपन्यास का प्राण है। इस प्राण को प्रभावक एवं ज्योतिर्मय बनाने के लिए उपन्यासकार में मानव मन के गहन संवेदन एवं विश्लेषण की अपूर्व क्षमता अपेक्षित है। कोरा निरपेक्ष एवं वस्तुवादी अध्ययन कार्यकर नहीं हो सकता। अत: उसमें पूर्णता लाने के लिए लेखक की कल्पना शक्ति और कलात्मक योजना भी अपेक्षित है। चरित्र चित्रण की प्रभावमयी पूर्णता पर ही महान उद्देश्यों की अवतारणा संभव है। देशीय के साथ अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर भी महान एवं आत्मीय सिद्ध होने वाले चरित्रों की सृष्टि केवल वही साहित्यकार कर सकता है जो स्वयं महती संवेदनशीलता, अंतर्दृष्टि, ईमानदारी से युक्त निर्भीकता, अकुंठता एवं कलापूर्ण अभिव्यक्ति से परिव्याप्त हो, जिसने चरित्रों की प्रभावात्मक स्वाभाविकता को अधिकाधिक उद्घाटित किया हो। पात्रों में जो जीवन है, कार्य-व्यापार है, भावनाएँ हैं, लालसाएँ हैं, वे सब यदि ऐसी हैं जिन पर सहज ही विश्वास होता चले, उनके साथ हम हँसने रोने लगें, जीने-मरने लगें तो समझना चाहिए कि हम वस्तुत: किन्हीं महान चरित्रों के साथ हैं। महत्ता स्वाभाविकता से उद्भूत कलात्मकता में ही है। 'इसी प्रकार पाश्चात्य विद्यमान जे० डब्ल्यू बीच का यह कथन भी इस संदर्भ में अत्यधिक महत्त्वपूर्ण है'–उपन्यासकार वस्तुत: अधिकाधिक मनोरंजन देने के लिए दृढ़ प्रतिज्ञ है। इसके लिए वह पाठक के निमित्त विविधता, वैचित्रय, उत्सुकता एवं भावनात्मक परितुष्टि की व्यापक योजना करता है। महत्त्व चरित्र की सृष्टि के द्वारा ही उसका कर्तव्य अपनी सार्थकता ग्रहण कर सकता है। चरित्रों की महत्ता उनके अलौकिक अथवा आधिभौतिक चमत्कारों और शक्तियों से संपन्न होने में नहीं है। असंभव और दुर्लभ ही जिसके उपजीव्य हों, ऐसे अस्वाभाविक एवं अटपटे रोमाँस में भी वह नहीं है। वह है संभव और सुलभ में, सहज और सुंदर में। पात्र कैसे भी हों, किसी भी वर्ग अथवा जाति के हों, सामाजिक, राष्ट्रीय एवं वैयक्तिक जीवन के प्रति उनकी आचार-विचार की पद्धति कुछ भी हो, यह सब उनकी औपन्यासिक महत्ता के लिए अपेक्षित नहीं है।

श्री भीष्म साहनी के उपन्यास 'तमस' में भी पात्र-योजना और चरित्र-चित्रण अपने ढंग का है और बड़ा ही महत्त्वपूर्ण है। चूँकि यह एक वृहदाकार उपन्यास है, इसलिए जिस प्रकार इसमें कथा-प्रसंगों की विविधता है, उसी प्रकार पात्र-योजना में भी विविधता है। अत: इसमें पात्रों का वर्गीकरण दो प्रकार से किया जा सकता है–

(1) मुख्य और गौण पात्र

(2) पुरुष और नारी पात्र।

पुरुष पात्र मुख्य भी हैं और गौण भी। इसी प्रकार नारी पात्र भी प्रमुख तथा गौण-दोनों ही प्रकार के हैं। अत: इन दोनों वर्गों पर संक्षेप में विचार कर लेना अपेक्षित है।

1. मुख्य और गौण पात्र–मुख्य और गौण पात्रों की दृष्टि से देखा जाय तो उपन्यास में कुछ स्त्री पात्र मुख्य हैं और कुछ पुरुष पात्र। पुरुष पात्रों में मुख्य पात्र नत्थू, रिचर्ड, हयातबख्श, बख्शी, जरनैल, लक्ष्मीनारायण और रणवीर आदि हैं।

2. पुरुष और नारी पात्र–'तमस' में यथार्थपरक दृष्टिकोण होने के कारण पुरुष और नारी–दोनों प्रकार के अनेक पात्र हैं और कथा प्रसंगों के अनुकूल इनमें विविधता है। यह विविधता घटनाक्रम के अनुरूप उचित भी है। कुछ प्रमुख पात्र निम्नलिखित हैं–

पुरुष पात्र–

नत्थू–उपन्यास का नायक, निर्धन और मेहनतकश चर्मकार, हीन भावनाओं का शिकार, पत्नी-प्रेमी, धर्मभीरू।

मुराद अली–सांप्रदायिक तनाव बढ़ाने वाला, स्वार्थी एवं कुटिल चरित्र संपन्न व्यक्ति।

रिचर्ड–अंग्रेजी शासन का नुमाइंदा, इतिहास का अध्येता किंतु चुस्त, स्वार्थी और आंग्ल नीतियों का पोषक, प्रशासक, पत्नी प्रेमी किंतु प्रेस के प्रति रूखा व्यक्ति, व्यवहार-कुशल।

लाला लक्ष्मीनारायण–हिंदू महासभा का कार्यकर्ता, सांप्रदायिक भावनाओं से युक्त, स्वार्थी एवं कुटिल व्यक्ति।

नोट

रणवीर–लक्ष्मीनारायण का पुत्र, सांप्रदायिक तनाव बढ़ाने वाले युवक संघ का प्रमुख कार्यकर्ता, मन से कोमल, सच्चरित्र किंतु दृढ़व्रती, परिस्थितिवश हिंसा पर उतारू।

हरनामसिंह–ग्रामीण सिक्ख, उदार, सच्चरित्र किंतु परिस्थितियों एवं सांप्रदायिकता का शिकार।

हयातबख्श–सांप्रदायिक व्यक्ति और मुस्लिम लीग का कार्यकर्ता, पाकिस्तान का पक्षधर।

शाहनवाज–सच्चा मित्र, उदारमना किंतु हार्दिक रूप से मुस्लिम सम्प्रदाय के प्रति सहानुभूतिशील।

देवदत्त–सच्चा साम्यवादी, सभी सम्प्रदायों में सौहार्द्र बनाने को प्रयत्नशील और निःस्वार्थ व्यक्ति।

रघुनाथ–हिंदू-मुस्लिम संप्रदायों में एकता का पक्षधर, शाहनवाज का मित्र किंतु सांप्रदायिकता का शिकार, एक अध्ययनशील बुद्धिजीवी।

जरनैल–बाह्य रूप से सनकी कांग्रेसी किंतु सच्ची और यथार्थ बात कहने वाला।

मेहता–भ्रष्ट और स्वार्थी कांग्रेसी कार्यकर्ता।

बख्शी–राजनीति को, अपने व्यक्तित्व को संवारने में अपनाने वाला, स्वार्थी और महत्त्वाकाँक्षी, काँग्रेसी कार्यकर्ता, सांप्रदायिक सौहार्द्रभाव का पोषक और एकता का पक्षधर।

शंकरलाल–युवा काँग्रेसी, बेलाग बात कहने वाला मुँहफट कार्यकर्ता।

किशनसिंह–सिक्ख साम्प्रदायवादियों का नेता, उत्तेजक एवं हिंसा में विश्वास रखने वाला व्यक्ति।

इनके अतिरिक्त फ़जलदीन नानबाई, रोशनलाल, कश्मीरीलाल, अजीज, मास्टर रामदास पुण्यात्मका, वानप्रस्थी, देवव्रत, बोधराज, धर्मदेव, हरबर्ट, मौलादाद, मीरदाद, हकीम अब्दुलगनी, सरदार बिशनसिंह, खुदाबख्श, करीमखान, एहसान अली एवं रमजान तथा इकबालसिंह आदि अनेक पात्र घटनाओं के साथ प्रस्तुत उपन्यास में चित्रित हुए हैं।

स्व-मूल्यांकन (Self-Assessment)

रिक्त स्थानों की पूर्ति करें (Fill in the blanks) :

1. नत्थू का पश्चाताप ही उसकी .... का कारण बनता है।
2. 'तमस' एक .... उपन्यास है।
3. सरदार हरनामसिंह की पत्नी का नाम .... है।

स्त्री पात्र–

लीजा–अंग्रेजी अधिकारी रिचर्ड की पत्नी, हीन भावनाओं एवं अकेलेपन की शिकार तरुणी।

नत्थू की पत्नी–पति से अत्यंत प्रेम करने वाली सुशीला नारी, उदार एवं कर्तव्य-परायणा।

बन्तो–सरदार हरनामसिंह की पत्नी, सांप्रदायिक तनाव की शिकार ग्रामीण महिला।

जसबीर कौर–हरनामसिंह की अभागिन पुत्री, सांप्रदायिक दंगे की शिकार और साहसी युवती।

लक्ष्मीनारायण की पत्नी–पतिपरायण, पुत्र-स्नेह और धर्मभीरू महिला, सांप्रदायिक दंगे से भयत्रस्त, उदारमना एवं ममतामयी नारी।

रघुनाथ की पत्नी–उदारहृदया, पतिपरायणा एवं सीधी सादी नारी।

अकराँ–रमजान की बहू, सांप्रदायिक भावना से ग्रस्त तरुणी।

राजो–अकराँ की सास और रमजान की माँ, उदार सहृदया एवं दयाशील मुस्लिम नारी।

इनके अतिरिक्त अन्य अनेक नारीपात्र 'तमस' के कथनाक के मध्य आते हैं।

19.3 देशकाल और वातावरण के आधार पर

उपन्यास में वास्तविकता, सजीवता और गरिमा लाने के लिए अनुकूल वातावरण का होना नितांत आवश्यक है। देशकाल की परिस्थितियों, परंपराओं और जीवन पद्धतियों की दिग्दर्शिका वेशभूषा आदि का जितना अच्छा चित्रण उपन्यास में होगा, उतनी ही सजीवता एवं प्रभावोत्पादकता उसमें आ सकेगी। भौगोलिक सीमाओं की भी वातावरण के लिए पर्याप्त उपयोगिता है। स्थानीय भाषा तो विशेष रूप से उपन्यास में इसके लिए अनिवार्य सी है। वातावरण के विषय में यह अत्यंत स्मरणीय है कि यह कथानक एवं चरित्र के प्रकाशन एवं स्पष्टीकरण का साधन मात्र है। अत: साधन कहीं साध्य न बन जाये, या साध्य के व्यक्तित्व को आद्यंत आच्छादित करके हीन एवं उपेक्ष्य न बना दे, इस मूल पकड़ का ध्यान स्रष्टा को आरंभ से ही होना चाहिए। वातावरण में देशकाल बाह्य है और साथ ही आंतरिक मनोदशा का भी चित्रण उसमें हो। अस्तु, इन दोनों के द्वारा ही सच्चा एवं पूर्ण वातावरण तैयार होता है। प्राकृतिक चित्रणों और पात्रों की मानसिक स्थिति का सामंजस्य उपन्यास को पर्याप्त मात्रा में स्पंदनयुक्त, सरस, प्रभावक एवं उष्ण प्राण बनाता है।

श्री भीष्म साहनी का उपन्यास 'तमस' एक सामाजिक राजनीतिक उपन्यास है। पंजाब का एक अंचल विशेष, यद्यपि इस उपन्यास के सृजन की पृष्ठभूमि में आता है, तथापि इसमें उस युग सत्य को रूपायित किया गया है, जिसने भारत की आत्मा को घुन की तरह बार-बार खाकर इतना खोखला और अशक्त बना दिया है कि उसे विभाजन का मुँह देखना पड़ा। इतना होने पर भी आज तक हमारा देश हिंदू-मुस्लिम सांप्रदायिकता से ग्रस्त और पीड़ित है। लेखक ने एक क्षेत्र विशेष की पृष्ठभूमि में इस युग सत्य को अभिव्यक्त करने के लिए तद्नुकूल नागरिक, ग्रामीण एवं क्षेत्रीय भाषा को सशक्त माध्यम के रूप में व्यवहृत किया है। यही कारण है कि इसमें पंजाब का नूरपुर क्षेत्र अपने संपूर्ण वातावरण के साथ रूपायित हो उठा है। वहाँ के लोगों की भाषा को भी उसी रूप में प्रयुक्त करके लेखक ने इसे और भी सुंदर बना दिया है।

'तमस' उपन्यास में देशकाल अथवा वातावरण का चित्रण पूर्णत: स्वाभाविक, सुंदर, वास्तविक और कलात्मक बन पड़ा है, इसका विचार करते समय हमें उसके वातावरण के रूप को देखना पड़ता है। वातावरण का चित्रण उपन्यास में प्राय: दो प्रकार से हो सकता है–

(1) आंतरिक वातावरण,

(2) बाह्य वातावरण।

आंतरिक वातावरण में घटनाओं और परिस्थितियों का चित्रण आता है तथा पात्रों की मानसिक स्थिति, उनके हाव-भाव तथा अंतर्द्वंद्व का चित्रण आता है और बाह्य वातावरण में तत्कालीन सभी बाह्य परिस्थितियाँ आ जाती हैं। इस दृष्टि से हम दोनों प्रकार के वातावरण को निम्न उपवर्गों में विभक्त कर सकते हैं–

1. आंतरिक वातावरण

(क) घटनाओं और परिस्थितियों का चित्रण

(ख) पात्रों की मानसिक स्थिति का चित्रण

(ग) पात्रों के हाव-भावों और अन्तर्द्वन्द्व का चित्रण।

2. बाह्य वातावरण

(क) स्थानीय वातावरण

(ख) प्रकृति चित्रण

(ग) सामाजिक परिस्थितियाँ

(घ) धार्मिक और सांस्कृतिक परिस्थितियाँ

(ङ) राजनीतिक परिस्थितियाँ

(च) आर्थिक परिस्थितियाँ।

अब हम 'तमस' उपन्यास के वातावरण का सम्यक् विवेचन करने के लिए इन पर संक्षेप में विचार करेंगे।

19.3.1 आंतरिक वातावरण के आधार पर

(क) घटनाओं और परिस्थितियों का चित्रण–घटनाओं एवं परिस्थितियों के चित्रण द्वारा उपन्यासकार उपन्यास की पृष्ठभूमि का वातावरण तैयार करता है। इसके साथ ही इससे परिस्थितियाँ स्वाभाविक बनती हैं। घटना विशेष अथवा परिस्थिति विशेष से आंतरिक वातावरण मूर्त रूप में सामने आता है। 'तमस' उपन्यास में साहनी जी ने नत्थू की स्थिति, लाला लक्ष्मीनारायण की पारिवारिक स्थिति, हरनाम सिंह एवं बन्तो के दुखद जीवन के कई दृश्य आदि का चित्रण करते समय पृष्ठभूमि का विशेष ध्यान रखा है। नत्थू को मुराद अली द्वारा सूअर मारने का आदेश मिला और वह एक सूअर को पकड़ कर कोठरी में ले गया किंतु उसे मार पाना उसके लिए दुष्कर कार्य हो गया। इस दृश्य में वातावरण बहुत ही सजीव हो उठा है। उदाहरणार्थ–

"नत्थू दीवार से लगकर बैठ गया। उसकी नजर फिर सूअर की ओर उठ गयी। सूअर फिर से किकियाया था और अब कोठरी के बीचों-बीच कचरे के किसी लसलसे छिलके को मुँह मार रहा था। अपनी छोटी-छोटी आँखें फर्श पर गाड़े गुलाबी-सी थूथनी छिलके पर जमाये हुए था। पिछले दो घंटे से नत्थू इस बदरंग, कंटीले सूअर के साथ जूझ रहा था। तीन बार सूअर की गुलाबी थूथनी उसकी टांगों को 'चाट' चुकी थी और उनमें से तीखा दर्द उठ रहा था। आँखें फर्श पर गाड़े सूअर किसी वक्त दीवार के साथ चलने लगता, मानो किसी चीज को ढूँढ रहा हो, फिर सहसा किकियाकर भागने लगता। उसकी छोटी-सी पूँछ, जहरीले डंक की तरह, उसकी पीठ पर हिलती रहती, कभी उसका छल्ला-सा बन जाता, लगता उसमें गांठ पड़ जायेगी, मगर फिर वह अपने-आप ही खुल कर सीधी हो जाती थी। बायीं आँख में से मवाद बह कर सूअर के थूथने तक चला आया था। जब चलता तो अपनी बोझिल तोंद के कारण दायें-बायें झूलने-सा लगता था। बार-बार भागने से कचरा सारी कोठरी में बिखर गया था। कोठरी में उमस थी। कचरे, जहरीली बास, सूअर की चलती सांस और कड़वे तेल के धुएँ से कोठरी अटकी हुई थी। फर्श पर जगह-जगह खून के चित्ते पड़ गये थे लेकिन जरक के नाम पर सूअर के शरीर में एक भी जख्म नहीं हो पाया था। पिछले दो घंटे से नत्थू जैसे पानी में या बालू के ढेर में छुरा घोंपता रहा था। कितनी ही बार वह सूअर के पेट और कंधों पर छुरा घोंप चुका था। छुरा निकालता तो कुछ बूँदें खून की फर्श पर गिरतीं, पर जख्म की जगह एक छोटी सी लीक या छोटा-सा धब्बा भर रह जाता जो सूअर की चमड़ी में नजर तक नहीं आता था। और सूअर गुर्राता हुआ या तो नत्थू की टांगों को अपनी थूथनी का निशाना बनाता या फिर से कमरे की दीवार के साथ-साथ चलने अथवा भागने लगता। छुरे की नोंक चर्बी की तहों को काट कर लौट आती थी, अंतड़ियों तक पहुँच ही नहीं पाती थी।"

इसी प्रकार लीजा की परिस्थिति के अंतर्गत वातावरण का यह चित्र कितना सजीव है, देखिए–

"यही शोर, एक अस्पुट सी स्वर लहरी बनकर, शहर के बाहर, दूर रिचर्ड के बंगले की दीवारों के साथ भी टकराने लगा था। इन गहराती गूँज में कुछ देर बाद घड़ियाल की टुन-टुन भी तैरती हुई आने लगी थी। रिचर्ड उस समय गहरी नींद में सो रहा था लेकिन लीजा उसे सुनकर जाग गयी थी। आवाज को सुन कर पहले तो लीजा को लगा जैसे उसी के कमरे में लगी घंटी धीमे-धीमे टुनटुनाने लगी है, जैसे दिन के वक्त हवा का झोंका आने पर टुनटुनाती थी। पर जब उसकी नींद पूरी तरह से टूटी तो उसे लगा जैसे यह आवाज भिन्न है। किसी-किसी वक्त यह आवाज बिल्कुल हवा में खो जाती, लगता जैसे हवा उड़ा कर ले गयी है, फिर सहसा बज उठती। अंधकार की बीहड़ दूरियों में से तैरती हुई-सी आ जाती, लीजा की आँखों में नींद भरी थी। उसे किसी-किसी वक्त लगता जैसे तूफान में, सागर की लहरों से जूझते अपना रास्ता खोजते किसी जहाज की घंटी बज रही हो ....।"

टास्क उपन्यास के 'बाह्य वातावरण' का अपने शब्दों में उल्लेख कीजिए।

(ख) पात्रों की मानसिक स्थिति का चित्रण–'तमस' उपन्यास में पात्रों की मानसिक स्थिति का चित्रण बड़े विस्तार से एवं सूक्ष्म विश्लेषण के साथ हुआ है। इस चित्रण के द्वारा पात्रों की संपूर्ण मानसिक अवस्था और तज्जनित वातावरण को मूर्त कर दिया गया है। नत्थू, लाला लक्ष्मीनारायण एवं हरनामसिंह आदि सभी प्रमुख पात्रों की मानसिक स्थिति का इस उपन्यास में बड़े विस्तार के साथ वर्णन हुआ है। नत्थू की मानसिक स्थिति का तो सुंदर चित्रण इस उपन्यास में हुआ ही है, हरनामसिंह की मानसिक स्थिति का भी अत्यंत हृदयस्पर्शी चित्रण इसमें द्रष्टव्य है। उदाहरणार्थ–

"बन्तो का मुँह सूख रहा था और हरनामसिंह की टांगें बार-बार लड़खड़ा जाती थीं। पर इस समय केवल वे दो ही नहीं, अनगिनत लोग दर्जनों गाँवों में से इसी भाँति जान बचाते घूम रहे थे। अनेक लोगों के कानों में टूटते किवाड़ों की आवाजें पड़ रही थीं। पर उनके पास न सोचने के लिए वक्त था, न भविष्य के मनसूबे बाँधने के लिए। वक्त था जैसे-तैसे जान बचा पाने के लिए। उस वक्त तक चलते जाओ जब तक रात के साये तुम्हें अपनी ओट में लिए हुए हैं। शीघ्र ही दिन चढ़ आयेगा और जिंदगी के खतरे चारों ओर से भूखे भालुओं की तरह हमला कर देंगे। कुछ ही देर में वे थक कर चूर हो गये थे ···।"

(ग) पात्रों के हाव-भावों और अंतर्द्वंद्व का चित्रण–पात्रों के हाव-भावों का साहनी जी ने दो रूपों में वर्णन किया है–

(अ) संवादों के बीच पात्रों के हाव-भावों का वर्णन

(ब) वर्णन विश्लेषण द्वारा पात्रों के हाव-भावों का वर्णन।

इन दोनों पर ही संक्षेप में विचार कर लेना समीचीन होगा।

(अ) संवादों के बीच पात्रों के हाव-भावों का वर्णन–वार्तालाप में साहनी जी ने मात्र कथन ही नहीं दिये हैं अपितु प्रत्येक कथन का दूसरे पात्र पर क्या प्रभाव होता है और कथन कहने से पूर्व अपनी बात का दूसरे पात्र की उस पर क्या प्रतिक्रिया होती है, इसका अच्छा निदर्शन किया है। इससे पात्रों की गूढ़तम आंतरिक स्थिति का सम्यक् परिचय मिल जाता है। लीजा एवं रिचर्ड के इस संवाद में उनके हाव-भाव उनकी मानसिक स्थिति को ध्वनित कर रहे हैं। देखिए–

लीजा ने उनींदी आँखों से रिचर्ड के चेहरे की ओर देखा, "मुझे कहाँ घुमाने ले चलोगे, रिचर्ड? मुझे जलते गाँवों की सैर कराओगे?.. मैं कुछ भी देखना नहीं चाहती, कहीं भी जाना नहीं चाहती।"

"नहीं-नहीं, घर में बैठे रहने में क्या तुक है? अब स्थिति बदल गयी है। अब तुम घूम-फिर सकती हो।" रिचर्ड ने उत्साह का स्वांग बराबर बनाये रखा, "अब हम एक साथ घूम-फिर सकते हैं। यहाँ का देहाती इलाका सचमुच बड़ा सुंदर है।"

"उस दिन, इस सैयदपुर में ही, फलों के बाग के पास से गुजरते हुए मैंने लार्क पक्षी की आवाज सुनी। इस मौसम में वहाँ लार्क पक्षी मिलता है। मुझे नहीं मालूम था कि इस गर्म देश में भी यह पक्षी रहता होगा। मैं हैरान रह गया। और भी तरह-तरह के पक्षी मिलते हैं जिन्हें तुमने पहले कभी नहीं देखा होगा।"

"क्या यह वही जगह है जहाँ औरतें डूब मरी हैं?"

"हाँ, वही कुएँ के साथ ही नदी बहती है और नदी के पार ही फलों के बाग है···।"

एक हल्की-सी मुस्कान लीजा के होंठों पर आयी और वह रिचर्ड की ओर देखती रही, "तुम कैसे जीव हो रिचर्ड, ऐसे स्थानों पर भी तुम नये-नये पक्षी देख सकते हो, लार्क पक्षी की आवाज सुन सकते हो?"

"इसमें कोई विशेष बात नहीं है लीजा, सिविल सर्विस हमें तटस्थ बना देती हैं। यदि हम हर घटना के प्रति भावुक होने लगें तो प्रशासन एक दिन भी नहीं चल पायेगा।"

"यदि 103 गाँव जल जायें तो भी नहीं?"

"तो भी नहीं," रिचर्ड ने तनिक रुक कर कहा, "यह मेरा देश नहीं है। न ही मेरे देश के लोग हैं।"

लीजा रिचर्ड के चेहरे की ओर देखती रह गयी। "मगर तुम तो इन लोगों के बारे में किताब लिखने जा रहे थे रिचर्ड! इनकी नस्ल के बारे में। वही न?"

इस वार्तालाप में लीजा की उच्च मानवीयता और रिचर्ड के प्रति उलाहना भाव अत्यंत सशक्त रूप में व्यक्त हुआ है।

स्व-मूल्यांकन (Self-Assessment)

बहुविकल्पीय प्रश्न (Multiple Choice Questions) :

4. सैयदपुर गाँव में कितनी महिलाऐं कुएँ में डूबकर जाने दे देती हैं?

   (क) 24 (ख) 27

   (ग) 32 (घ) इनमें से कोई नहीं।

5. अंग्रेजी शासन का नुमाइंदा इनमें से कौन है?

   (क) रिचर्ड (ख) जनरैल

   (ग) मुराद अली (घ) इनमें से कोई नहीं।

6. सूअर को मारकर किसके दरवाजे पर फेंक दिया जाता है?

   (क) मंदिर (ख) गिरजाघर

   (ग) मस्जिद (घ) इनमें से कोई नहीं।

(ब) वर्णन विश्लेषण द्वारा पात्रों के हाव-भावों का वर्णन–किसी व्यक्ति के मन पर होने वाली प्रतिक्रिया के द्वारा वातावरण की सृष्टि करने में साहनी जी निश्णात हैं। निम्न उद्धरण में सूअर मारे जाने की घटना से जन-जन में जो रोषपूर्ण प्रतिक्रियाएँ होती हैं, नत्थू पर उनका कैसा प्रभाव पड़ता है, यह दर्शनीय है। देखिए–

"इसी दुकान में एक ओर नत्थू भी बैठा था। कहवे की प्याली सामने रखे हाथ में रस्क का लंबा सा टुकड़ा उठाये, वह डुबो-डुबो कर खा रहा था और ध्यान से करीमखान का किस्सा सुन रहा था। किस्सा सुन कर उसे इत्मिनान हुआ जब से उस सूअर के दड़बे में से निकला था, वह कभी शहर के एक हिस्से में तो कभी दूसरे हिस्से में चक्कर काट रहा था। जहाँ बैठता लोग सूअर की चर्चा करते सुनाई देते थे। राह जाते लोगों की बातें सुनते हुए उसके कान खड़े हो जाते। किसी-किसी वक्त उसे लगता जैसे लोग किसी दूसरे ही सूअर की बात कर रहे हैं, वह उस सूअर की बात नहीं कर रहे जिसे उसने जिबह किया था, पर फिर किसी-किसी वक्त लोगों की बातें सुनते हुए उसका दिल बैठ जाता। यहाँ, इस नानवाई की दुकान पर भी बात सूअर से ही शुरू हुई थी लेकिन इस बुजुर्ग की बातों से उसे इत्मिनान हुआ था। अगर झगड़ा-फसाद नहीं हो तो यह बड़ी मामूली-सी घटना बन कर रह जाएगी, सरकार की आँखें सबकुछ देखती हैं तो कोई अनहोनी बात नहीं होगी।"

अन्तर्द्वन्द्व का चित्रण कर वातावरण की सृष्टि–साहनी जी के इस उपन्यास से पात्रों का, विशेषतया नत्थू एवं हरनामसिंह का अन्तर्द्वन्द्व विशेष रूप से उभरा है और उसके द्वारा मानसिक वातावरण की सृष्टि की गई है। हरनाम सिंह को जब ज्ञात होता है कि उसके गाँव में बलवाई आने वाले हैं तो वह किकर्त्तव्यविमूढ़ हो जाता है। एक ओर वह सोचता है कि जो कुछ भी हो उसे घर छोड़कर नहीं जाना चाहिए, किंतु दूसरा मन उसे भाग जाने को प्रेरित कर रहा था। हरनामसिंह के इस गहन अन्तर्द्वन्द्व को निम्नलिखित उद्धरण में स्पष्ट किया गया है–

"हरनामसिंह कहाँ जाये? मीलों दूर तक रास्ते, मैदान और घाटियाँ फैली थीं। करीमखान ने तो कह दिया कि चले जाओ मगर कहाँ जाये? उन्हें कहाँ आश्रय मिल सकता था? साठ की उम्र और साथ में औरत जात, वह कितनी दूर तक भागकर जा सकता है? फिर भाग कर जायेगा भी तो कहाँ जायेगा?"

मन के अंदर से फिर एक बार आवाज आयी। कहीं नहीं जाओ, यहीं बने रहो, जब बलवाई आयें तो दुकान भी हाजिर कर देना और जान भी हाजिर कर देना। यहाँ मर जाना अच्छा है, परदेसों की खाक छानने से कौन आयेगा हमला करने? बार-बार वह सोचता पर यकीन नहीं होता था कि गाँव का कोई आदमी उस पर हमला करने आयेगा या गाँव वाले बाहर वाले को हमला करने देंगे। हरनामसिंह उठ कर पीछे कोठरी में आ गया, जहाँ बन्तो बैठी थी।

"करीमखान आकर कह गया है कि यहाँ से निकल जाओ। बाहर से बलवाई आ रहे हैं।"

क्षणभर में बन्तो के सारे शरीर में खून की जगह पानी भर गया। बैठी की बैठी रह गयी। रात सिर पर आने वाली थी और कहीं पर ठौर-ठिकाना नहीं था। उधर अंधेरी कोठरी में खड़ा उसका पति अवसाद की मूर्ति लग रहा था। पर अब न सोचने का वक्त था न ज्यादा देर ठहरने का वक्त था, जितनी जल्दी हो सके, अंधेरा पड़ते ही यहाँ से निकल चलो।

"मैं तो अब भी कहता हूँ यहीं बैठे रहो। कहीं न जाओ।" फिर उसने एक ओर दीवार के साथ टँगी अपनी दोनाली बंदूक की ओर इशारा करके कहा, "मरने मारने पर नौबत आ गयी तो मैं पहले तुम्हें मार दूँगा, फिर अपने को मार डालूँगा।"

बन्तो चुप सुनती रही। क्या कहे, क्या मशवरा दे? सामने चारा ही क्या था? हरनामसिंह दुकान के चबूतरे पर लौट गया, टाट के नीचे से कमाई के पैसे निकाले फिर अंदर आया, बक्से में से पूँजी के पैसे निकाले, फिर नोटों को अलग से छाँट लिया और रेजगारी वहीं छोड़ दी। नोटों का पुलिंदा अंदर की बंडी की जेब में रख लिया। फिर कोठरी के अंदर दीवार पर टँगी बन्दूक उतार ली और उसे कंधे से लटका लिया। उसकी समझ में नहीं आ रहा था कि क्या माल ले जाये और क्या नहीं ले जाये? दुकान की रजिस्ट्री के कागज ले लूँ? पर उन्हें ढूँढ निकालने का वक्त नहीं था। बन्तो की भी यही हालत थी। अपना जेवर उठा लूँ? खाने के लिए थोड़ा बहुत बना लूँ? दो रोटियाँ सेंक लूँ? रास्ते में कहाँ कुछ खाने को मिलेगा? अपने कपड़े बदल लूँ? बाहर जाओ तो कपड़े उजले पहन कर जाना चाहिए। पर बन्तो की समझ में कुछ नहीं आ रहा था। क्या उठाये क्या छोड़ दे?

उपर्युक्त उद्धरण में हरनामसिंह के अंतर्द्वंद्व में विचारों का संघर्ष है और उसके द्वारा उसके आंतरिक वातावरण की सृष्टि की गयी है। यहाँ यह ध्यातव्य है कि हरनामसिंह का यह आंतरिक संघर्ष क्रिया-कलापों द्वारा भी व्यक्त हुआ है जैसा कि इस उद्धरण से स्वत: स्पष्ट है।

19.3.2 बाह्य वातावरण के आधार पर

बाह्य वातावरण में स्थान विशेष अथवा परिस्थिति विशेष का ध्यान रखा जाता है। 'तमस' में इसका अत्यंत सशक्त और सुंदर निदर्शन हुआ है।

(क) स्थानीय वातावरण–स्थान विशेष का बाहरी वातावरण जन जीवन प्रकृति, स्थान सबका मिला-जुला रूप 'तमस' उपन्यास में चित्रित हुआ है। इस प्रकार का चित्रण यद्यपि कम ही हुआ है, किंतु जितना भी हुआ है वह सुंदर ही कहा जाएगा। इसमें मात्र घटनाओं या प्रसंगों की पृष्ठभूमि नहीं है, संपूर्ण सामाजिक जीवन के चित्रण का अंग है। यह चित्र को पूर्णता प्रदान करता है। अंग्रेज पराधीनता से देश को मुक्त कराने वाले काँग्रेसियों की प्रभातफेरियों का यह वातावरण इस संदर्भ में द्रष्टव्य है–

"प्रभातफेरी में भाग लेने के लिए आरंभ में दो गिने-चुने लोग ही पहुँचते थे। बाद में बाजार और गलियाँ लाँघते हुए जिस किसी का घर रास्ते में पड़ता वह तोंद खुजलाता, जम्हाइयाँ लेता साथ में शामिल हो जाता था।

नोट

हवा में अभी खुश्की थी। रात को कमरे के अंदर सोते थे, फिर भी सुबह-सुबह कम्बल ओढ़ने की जरूरत रहती थी। प्रभातफेरी में शामिल होने वाले बड़ी उम्र के लोग कनटोपे चढ़ा कर आते थे।

शेखों वाले बाग की घड़ी ने चार बजाये। काँग्रेस कमेटी के दफ्तर के सामने सड़क पर केवल दो-तीन व्यक्ति खड़े अन्य सदस्यों की राह देख रहे थे। खुफिया पुलिस के दो सिपाही साधारण कपड़े पहने थोड़ी दूरी पर अभी से खड़े थे।"

इसी प्रकार शिवाला बाजार का यह दृश्य देखिए जिसमें उसका संपूर्ण वातावरण साकार हो उठा है, यथा–

"शिवाले का बाजार किसी दुल्हन के चेहरे की तरह खिला हुआ था। वहाँ रोज जैसी ही रौनक थी, कोई नहीं कह सकता था कि कहीं कोई तनाव पाया जाता है। सुनारों की दुकानों पर अनेक बुर्के वाली गाँव की औरतें चाँदी के जेवर खरीदने-बनवाने के लिए जगह-जगह बैठी थीं। हकीम लाभराम की दुकान के सामने दवाइयाँ कूटने वाले दो कश्मीरी मुसलमान नाक-मुँह लपेटे ड्योढी में दवाइयाँ कूट रहे थे। कुबड़े हलवाई की दुकान पर लगभग रोज जैसी ही भीड़ थी। खोमचे वाला संतराम आज भी ठीक एक बजे अपनी हथगाड़ी धीरे-धीरे चलाता हुआ, सर्राफों का बाजार लाँघकर शिवाले के बाजार में आ गया था और रोज के ही मुताबिक दर्जी खुदाबख्श और उसके दो भाइयों के लिए आधी-आधी छटाँक हलवे के तीन पत्ते बना कर भेज रहा था। वातावरण में स्थिरता थी। सुबह की घटना से पैदा होने वाला तनाव कुछ दब गया था, कुछ बिखर गया था। सड़कों पर चहल-पहल थी। खुदाबख्श की दुकान के सामने, गली के सिरे पर कमेटी का कारिन्दा सीढ़ी लगा कर, दीवार में लगे लैंप की चिमनी साफ कर रहा था और लैंप में तेल डाल रहा था। नगर का कार्यकलाप फिर से जैसे किसी संगीत की लय पर चलने लगा हो।"

टास्क उपन्यास के 'चित्रण की सूक्ष्मता और गहनता' द्वारा हम इसके वातावरण का मूल्यांकन किस प्रकार कर सकते हैं?

(ख) प्रकृति चित्रण–यद्यपि 'तमस' उपन्यास में प्रकृति का चित्रण स्वल्प मात्रा में हुआ है लेकिन जितना भी है वह अपने अत्यन्त मनोहारी रूप में है। उदाहरणार्थ यह रम्य रूप देखिए–

"सामने दूर तक चौड़ी घाटी फैली थी जो पहाड़ों के दामन तक चली गई थी। लगता, दूर क्षितिज पर सतरंगी धूल उड़ रही है। विशाल मैदान, कहीं-कहीं छोटी-छोटी पहाड़ियाँ और उन पर स्वच्छ नीला आकाश जिसकी पारदर्शी ऊँचाईयों में चीलें तैर रही थी। बायीं ओर ऊँचा पहाड़ था जिसे नीली आभा ढके हुए थी। पहाड़ की ऊँचाई पश्चिम की ओर ढलते-ढलते इतनी कम हो गयी थी कि मैदानों को छूने लगी थीं। दायीं ओर दूरियों के धुँधलके में लाली-मायल की पहाड़ियों की धूमिल-सी आकृतियाँ नजर आ रही थीं।"

(ग) सामाजिक परिस्थितियाँ–इस उपन्यास में सामाजिक परिस्थितियों का चित्रण पर्याप्त विस्तार से हुआ है। इस उपन्यास के माध्यम से साहनी जी ने यद्यपि एक अंचल-विशेष की सामाजिक परिस्थितियों का ही चित्रांकन किया है। किंतु फिर भी उसमें सार्वजनितता आ गयी है। अस्तु, उसमें समाज के दुख-सुख, विवशता-परवशता, घुटन-कुंठा, हीनत्वबोध, अनास्था, एवं अत्याचार को तद्रूप ही व्याख्यायित किया गया है। समाज के विविध पक्षों का अत्यंत करुण, मार्मिक एवं तलस्पर्शी चित्रण करते हुए लेखक ने तत्कालीन सामाजिक यथार्थ को भी बड़ी कुशलता से रूपायित कर दिया है। सामाजिक चित्रण को निम्नलिखित रूपों में यहाँ पर देखा जा सकता है–

"अँधेरा छीनने लगा था जब प्रभातफेरी की मंडली गलियाँ लाँघती हुई इमामदीन के मोहल्ले में पहुँची। रास्ते में शेरखान के घर से झाडू, बेलचे, कड़ाहियाँ और सफाई का अन्य सामान लेकर वे आगे बढ़ने लगे थे। सुबह की रोशनी में उनके थके-थके पीले चेहरे साफ नजर आने लगे। मेहता जी को छोड़ कर लगभग सभी के कपड़े मुचड़े हुए और मैले थे। बख्शी के सिर पर गाँधी टोपी एक ओर से चिपकी हुई थी मानो सिर पर लादा हुआ कोई बोझ

अभी-अभी फेंक कर आया हो। शंकर मास्टर मदास और अजीज ने कंधों पर झाडू उठा रखे थे। देशराज और शेरखान के हाथ में कड़ाहियाँ थीं। जरनैल लंबा-सा बाँस उठाये था। दिन की रोशनी में मास्टर रामदास अपने हाथ में झाडू देख कर सकुचाने लगा था।"

(घ) धार्मिक और सांस्कृतिक परिस्थितियाँ–'तमस' उपन्यास में धार्मिक और सांस्कृतिक परिस्थितियों का चित्रण मुख्यतः समाज में धर्म के नाम पर सांप्रदायिक तनावों को फैलाने के व्यापक संदर्भ में हुआ है। वास्तव में देखा जाय तो यही सांप्रदायिक तनाव इस उपन्यास की रीढ़ और मुख्य कथा है। कथा का प्रारंभ ही सूअर मारे जाने और उससे उत्पन्न सांप्रदायिक तनाव से होता है और फिर तो जहाँ-तहाँ यह सांप्रदायिक तनाव दंगे का रूप ले लेता है, जिससे नगर में ही नहीं वरन गाँव-गाँव में भीषण रक्तपात होता है। इस संदर्भ में यह उदाहरण देखिए–

"दिन के उजाले में शहर अधमरा-सा पड़ा था, मानो उसे साँप सूंघ गया हो। मंडी अभी भी जल रही थी, म्युनिसिपैलिटी के फायर ब्रिगेड ने उसके साथ जूझना कब का छोड़ दिया था। उसमें से उठने वाले धुएँ से आसमान में कालिमा पुत रही थी, जबकि रात के वक्त आसमान लाल हो रहा था। सत्रह दुकानें जल कर राख हो चुकी थीं।

दुकानें बंद थीं। दूध-दही की दुकानें कहीं-कहीं खुली थीं और उनके निकट दो-दो, चार-चार आदमी खड़े रात की घटनाओं के बारे में कयास लगा रहे थे। मार-काट के बारे में अफवाहें ज्यादा थीं, गवालमंडी वाले कहते, रत्ता में दंगा हुआ है, रत्तावाले कहते कमेटी मोहल्ले में दंगा हुआ है।

नया मोहल्ला के चौक में एक घोड़ा मरा हुआ पाया गया था। शहर के बाहर गाँव को जाने वाली सड़क पर एक अधेड़ उम्र के आदमी की लाश मिली थी। कॉलिज रोड पर जूतों की एक दुकान और साथ में बैठने वाले दर्जी की दुकान लूट ली गयी थी। एक ओर लाश शहर के सिरे पर एक कब्रिस्तान में मिली थी। लाश किसी अधेड़ उम्र के हिंदू की थी और उसकी जेब में से कुछ रेजगारी और दहेज के कपड़ों की एक फेहरिस्त मिली थी।

मोहल्लों के बीच लकीरें खिंच गयी थीं, हिंदुओं के मोहल्ले में मुसलमान को जाने की अब हिम्मत नहीं थी, और मुसलमानों के मोहल्ले में हिंदू-सिक्ख अब नहीं आ जा सकते थे। आँखों में संशय और भय उतर आये थे। गलियों के सिरों पर और सड़कों के नाकों पर जगह-जगह कुछ लोग हाथों में लाठियाँ और भाले लिये और मुश्कें बाँध छिपे बैठे थे। जहाँ कहीं हिंदू और मुसलमान पड़ोसी एक-दूसरे के पास खड़े थे, बार-बार एक ही वाक्य दोहरा रहे थे, 'बहुत बुरा हुआ है, बहुत बुरा हुआ है।' इससे आगे वार्तालाप बढ़ ही नहीं पाता था। वातावरण में जड़ता-सी आ गयी थी। सभी लोग मन ही मन जानते थे कि यह कांड यहीं पर खत्म होने वाला नहीं है, लेकिन आगे क्या होगा किसी को मालूम नहीं था।"

दूसरी ओर यही धार्मिक संकीर्णता ग्रामीण क्षेत्र में इतना उग्र सांप्रदायिक रूप ले लेती है कि गाँव के गाँव उजड़ जाते हैं। हमारे देश में यह सांप्रदायिकता अपनी इतनी गहरी जड़ें जमा चुकी है कि एक ही संस्कृति में पलने के बावजूद केवल धर्म के नाम पर लाशें बिछ जाती हैं, ग्रामीण जीवन अस्त-व्यस्त हो जाता है। इस परिस्थिति को 'तमस' उपन्यास में ग्रामीण परिवेश में अत्यंत विस्तार से चित्रित किया गया है। उदाहरणार्थ–

"कुछ लाशें कस्बे के बाहर भी जगह-जगह पड़ी थीं। एक लाश कुएँ के पास औंधी पड़ी थी। एक आदमी मुगालते में मारा गया था। यह कस्बे का भिश्ती अल्लाहरक्खा था जो फसाद के बावजूद अपनी मश्क लेकर चाँदनी रात में कुएँ पर चला आया था। शेख के घर में पानी का तोड़ा हो गया था और बच्चे पानी माँग रहे थे और तभी भिश्ती मश्क उठा कर पानी लेने आ गया था और शेख के घर की छत पर से ही सीधा अचूक निशाना उसकी पीठ पर लगा था। एक लाश किसी सरदार की थी जो शहर से आने वाले सड़क पर पड़ी थी। फतहदीन नानवाई, जिसकी दुकान गुरुद्वारे को जाने वाली गली के बायें सिरे पर पड़ती थी, स्वयं तो बच गया था लेकिन उसकी दुकान पर काम करने वाले दोनों छोटे-छोटे लड़के मारे गये थे। फसादों के बावजूद ये बच्चे भाग-भाग कर दुकान में से बाहर आ जाते थे। कभी एक-दूसरे के पीछे भागने लगते, कभी गली में खेलने लगते थे। इसके अलावा खालसा स्कूल में से आग के शोले अभी भी निकल रहे थे। बायीं गली के सिरे पर नदी के ऐन ऊपर वाले हिस्से में सिक्खों के सभी

नोट

मकान आग की नजर कर दिये गये थे। दूसरी ओर कसाइयों की तीनों दुकानें और तेली मोहल्ले के तीन-चार मुसलमानों के घर अभी भी जल रहे थे।"

स्व-मूल्यांकन (Self-Assessment)

निम्नलिखित कथनों में सत्य अथवा असत्य की पहचान करें

(State Whether the following statements are True or False) :

7. इकबाल सिंह को विवश होकर मुसलमान बनना पड़ता है।
8. सरदार हरनामसिंह की पत्नी का नाम जसबीर कौर है।
9. फलों के बाग से गुजरते हुए रिचर्ड ने लार्क पक्षी की आवाज़ सुनी।

(ड़) राजनीतिक परिस्थितियाँ–इस उपन्यास में यद्यपि मुख्यत: आँग्ल शासन काल में होने वाले हिंदू-मुस्लिम सांप्रदायिक तनावों एवं दंगों का ही चित्रण हुआ है तथापि उसकी पृष्ठभूमि राजनीतिक भी है। उपन्यास के प्रारंभ में ही उन राजनीतिक परिस्थितियों के दर्शन उपन्यास में हो जाते हैं जब सत्याग्रही काँग्रेस स्वातंत्र्य हेतु जन-चेतना जाग्रत करते दिखाई देते हैं और दूसरी ओर मुसलमानों का एक वर्ग मुस्लिम लोग के नेतृत्व में पृथक् राष्ट्र पाकिस्तान की माँग करने लगा था। इसका एक उदाहरण द्रष्टव्य है–

"कौमी नारा।"

"वंदे मातरम्।"

"बोल भारतमाता की–जय।"

"महात्मा गाँधी जी की–जय।"

इसके बाद सहसा केवल क्षणभर की चुप्पी के बाद कुछ ही दूरी पर, जहाँ एक और गली इस गली को काट गयी थी, एक और नारा उठा:

"पाकिस्तान–जिंदाबाद।"

"पाकिस्तान–जिंदाबाद।"

"कायदे आजम–जिंदाबाद।"

"काँग्रेस हिन्दुओं की जमात है। इसके साथ मुसलमानों का कोई वास्ता नहीं है।"

इसका जवाब मंडली की ओर से एक बड़ी उम्र के आदमी ने दिया–"काँग्रेस सबकी जमात है। हिंदुओं की, सिक्खों की, मुसलमानों की। आप अच्छी तरह जानते हैं महमूद साहिब, आप भी पहले हमारे साथ थे।"

और उस वयोवृद्ध ने आगे बढ़कर रूमी टोपी वाले आदमी को बाँहों में भर लिया। मंडली में से कुछ लोग हँसने लगे। रूमी टोपी वाले ने अपने को बाँहों में से अलग करते हुए कहा–"यह सब हिंदुओं की चालाकी है, बख्शी जी, हम सब जानते हैं। आप चाहे जो कहें, काँग्रेस हिंदुओं की जमात है और मुस्लिम लीग मुसलमानों की। काँग्रेस मुसलमानों की रहनुमाई नहीं कर सकती।"

(च) आर्थिक परिस्थितियाँ–'तमस' उपन्यास में यद्यपि देश की आर्थिक स्थिति का चित्रण प्राय: नहीं के बराबर हुआ है किंतु अनेक स्थल अवश्य ऐसे हैं जिससे तत्कालीन आर्थिक परिस्थितियों का, विशेष रूप से क्षेत्रीय लोगों की आर्थिक दशा का थोड़ा बहुत अनुमान हो जाता है। उदाहरणार्थ फेरीवाले का यह कथन देखिए, जिसमें उसकी आर्थिक विपन्नता स्वत: प्रकट हो रही है–

"मुझे भी आज फेरी पर नहीं निकलना चाहिए था", उसने इंद्र से कहा, "आज भी कोई दिन है फेरी करने का? सारे शहर में सूखा पड़ा है। पर मैंने सोचा घर पर बैठ कर क्या करूँगा? दो-चार आने की जुगाड़ हो जाये तो क्या बुरा है? दुकानदार घर बैठा रहे तो खायेगा कहाँ से?" और इत्रफरोश हँस दिया।

19.4 वातावरण संबंधी चित्रण का मूल्यांकन

किसी उपन्यास में लेखक का वातावरण-चित्रण किस प्रकार है, यह उसके वर्णन-कौशल को ध्यान में रखकर देखा जाता है। इस दृष्टि से हम निम्न रूपों में विचार कर सकते हैं–

(1) चित्रण की सूक्ष्मता और गहनता

(2) चित्रण की यथार्थता और स्वाभाविकता

(3) वर्णन शैली की प्रभावात्मकता

(4) सोद्देश्यता।

'तमस' उपन्यास को इन कसौटियों पर देशकाल और वातावरण के संदर्भ में कसकर देखने पर ज्ञात होता है कि यह एक सफल उपन्यास है, जो देशकाल और वातावरण का सुंदर निदर्शन करता है। अत: अब हम इसके वातावरण का मूल्यांकन करेंगे।

1. चित्रण की सूक्ष्मता और गहनता–साहनी जी का देशकाल संबंधी वर्णन अत्यंत सूक्ष्म और गहन है। मानव-चरित्रों में उनकी गहरी पैठ है। इसके द्वारा आंतरिक और बाह्य दोनों प्रकार के वातावरण की सृष्टि हुई है। मुराद अली के कहने पर नत्थू एक सूअर की हत्या कर देता है किंतु जब उसे ज्ञात होता है कि उसी मृत सूअर के कारण नगर में सांप्रदायिक दंगा होने की पूरी संभावना है तो वह विचलित हो उठता है। उसकी इस आंतरिक मन: स्थिति का साहनी जी ने निम्नलिखित पंक्तियों में अत्यंत सूक्ष्म और गहन चित्रण किया है तथा इससे नत्थू का आंतरिक वातावरण सहज ही में रूपायित हो उठा। उदाहरण के लिए देखिए–

"नत्थू परेशान था। अपनी कोठरी के बाहर बैठा वह चिलम पर चिलम फूँके जा रहा था। जितना अधिक वह मारकाट की अफवाहों को सुनता उतना ही अधिक उसका दिल बैठा जाता। बार-बार अपने मन को समझाता मैं अन्तर्यामी तो नहीं हूँ, मुझे क्या मालूम किस काम के लिए मुझसे सूअर मरवाया जा रहा है? कुछ देर के लिए उसका मन ठिकाने भी आ जाता, लेकिन फिर जब किसी घटना की बात सुनता तो फिर बेचैन होने लगता। यह सब मेरे किये का फल है। सभी चमार सुबह से एक-दूसरे की कोठरियों के बाहर बीड़ियां फूँकते बतियाँ रहे थे। नत्थू बार-बार उनके बीच जा खड़ा होता। वह स्वयं भी बतियाने की कोशिश करता, लेकिन बार-बार उसका हलक सूखने लगता और टाँगे काँपने लगती और वह अपनी कोठरी में लौट आता। क्या मैं अपनी पत्नी से सारी बात कह दूँ? वह समझदार औरत है, मेरी बात समझ जायेगी, मेरा दिल हल्का होगा। कभी उसका मन चाहता शराब का पौवा कहीं से मिल जाता तो कुछ देर लिए बेसुध पड़ा रहता। पर इस वक्त शराब कहाँ मिलने वाली थी? औरत को बताना भी जोखिम मोल लेना था। बातों-बातों में उसने किसी से कह दिया तो फिर क्या होगा? मुझे कोई छोड़ेगा नहीं। क्या मालूम पुलिस ही मुझे पकड़ कर ले जाये? फिर क्या होगा? मेरी बात कौन मानेगा कि मुरादअली के कहने पर मैंने ऐसा काम किया है? मुरादअली मुसलमान है। क्या वह मस्जिद के सामने सूअर फिंकवाने का काम करेगा?.....नत्थू बेचैन हो उठता तो उसका दिमाग त्राण पाने के लिए दूसरी दिशा में सोचने लगता। वह सूअर जरूर कोई दूसरा रहा होगा। यह वह सूअर था ही नहीं जिसे मस्जिद के सामने फेंका गया था। मैंने इसे देखा ही नहीं यह काला सूअर था तो दूसरा भी तो काले रंग का सूअर हो सकता है। क्या दो सूअर काले रंग के नहीं हो सकते? यह मेरा भ्रम है, मैं खामख्वाह इस तरह सोचे जा रहा हूँ।"

टास्क निम्न पर अपने विचार व्यक्त कीजिए–

(क) चित्रण की यथार्थता, (ख) सोद्देश्यता।

2. चित्रण की यथार्थता और स्वाभाविकता—साहनी जी का देशकाल व वातावरण संबंधी चित्रण यथार्थ और स्वाभाविक है। लेखक ने पंजाब क्षेत्र के नूरपुर, सैयदपुर, ढोक इलाहीबख्श एवं खानपुर आदि स्थानों के नागर एवं ग्रामीण वातावरण को सजीव और यथार्थ बना दिया है। पंजाब में काँग्रेस कार्यकर्ताओं के तामीरी काम के समय गलियों और दुकानों का यथार्थ वर्णन, गाँवों की गलियों-कुओं एवं खेतों-खोहों का सजीव चित्र तथा वहाँ के सांप्रदायिक वातावरण को अत्यंत सुंदर, स्वाभाविक एवं यथार्थ रूप में इस उपन्यास में चित्रित किया गया है। सैयदपुर में सांप्रदायिक दंगे के बाद गलियों-मकानों में किस प्रकार लाशें लावारिस रूप में पड़ी थीं। उदाहरणार्थ यह दृश्य देखिए जिसमें वातावरण की यथार्थता और स्वाभाविकता दर्शनीय है—

"घमासान युद्ध हुआ। दो दिन और दो रात तक चलता रहा। फिर असलाह चुक गया और लड़ना नामुमकिन हो गया। अब गुरु-ग्रंथ साहिब की चौकी के पीछे, सफेद चादरों से ढकी सात लाशें पड़ी थी। पाँच लाशों के सिर अपनी-अपनी गोद में रखे पाँच औरतें बैठी थी। बहुत आग्रह करने पर कुछ देर के लिए वे उठ जातीं, पर तेजसिंह के पीठ मोड़ने की देर होती कि वे फिर आ बैठती थी। दो लाशों का वली वारिस कोई नहीं था। इनमें से एक लाश निहंगसिंह की थी जो उस समय भी जब गोलियों की बौछार पड़ने लगी थी, मूँछों को ताव देता फसाद रोकने के लिए आया था। यह आदमी गली के सिरे पर मारा गया था जहाँ वह लड़ाई के दूसरे दिन युद्ध रोकने का एक सुझाव पेश करने शेख गुलाम रसूल से मिलने जा रहा था। उसकी लाश वही पड़ी रहती पर कुछ मुसलमान रात गये उसे गुरुद्वारे के नजदीक फेंक गये, सिक्खों को यह बताने के लिए कि यह है जवाब उस प्रस्ताव का जो तुमने सोहनसिंह के हाथ भेजा था। उसकी लाश एक ओर पड़ी थी और उसे किसी ने गोद में नहीं ले रखा था। यों भी सोहनसिंह के मरने के कुछ देर पहले सोहनसिंह और मीरदाद दोनों ही की स्थिति अमन कराने वालों की जगह मात्र हरकारों की स्थिति बनकर रह गयी थी।"

इसी प्रकार के अन्य अनेक चित्र इस उपन्यास में हैं जिनमें तत्कालीन सांप्रदायिक दंगों का वातावरण अत्यंत सशक्त, सजीव, यथार्थ और स्वाभाविक रूप में उभरा है।

3. वर्णन शैली की प्रभावात्मकता—'तमस' उपन्यास में साहनी जी की वर्णन शैली बड़ी ही व्यंजक और प्रभावात्मक है। उपर्युक्त उद्धरण उनकी वर्णन शैली की सूक्ष्मता, प्रभावात्मकता तथा कुशलता का बड़ा ही सुंदर उदाहरण है। अन्यत्र भी उनकी यही प्रभावात्मकता दिखायी देती है।

4. सोद्देश्यता—देशकाल व वातावरण का चित्रण साधन है, साध्य नहीं। इसलिए यह न तो बहुत अधिक हो कि सर्वत्र वातावरण की प्रधानता हो जाय और न इतना कम कि वातावरण के संबंध में कुछ ज्ञात ही न होने पायें। उसकी उपयुक्तता इसी में है कि वह कथानक तथा वर्णन में पूर्णरूपेण घुलमिल जाना चाहिए। साहनी जी के इस उपन्यास 'तमस' में भी यह बात देखी जा सकती है। उनका वातावरण संबंधी चित्रण कलात्मक है और साथ ही सोद्देश्य भी है। जहाँ आवश्यकता है, वहीं उसका निदर्शन है और वह कथा में पूर्णरूपेण घुलमिल गया है। उपन्यास का प्रमुख उद्देश्य हिंदू-मुस्लिम सांप्रदायिक तनाव एवं दंगों का यथार्थ चित्र प्रस्तुत करना रहा है इसलिए इसमें समाज का सर्वांगीण चित्रण संभव हो सका है और वातावरण का वर्णन इसमें पूरी तरह सहायक हुआ है।

निष्कर्ष

समग्रत: इस विवेचन के आधार पर यह कहा जा सकता है कि साहनी जी के उपन्यास 'तमस' में देशकाल एवं वातावरण का यथार्थपरक एवं पूर्णत: सफल चित्रण हुआ है। आँचलिकता को अपनाते हुए लेखक ने वातावरण को मूर्त रूप देने में पर्याप्त सफलता पायी है। इसमें आंतरिक और बाह्य दोनों ही प्रकार के वातावरण संबंधी चित्र पूर्ण सफल बन पड़े हैं।

वस्तुत: साहनी जी ने अपने यथार्थ वर्णन कौशल, समृद्ध अनुभवों, एक सजीव चित्रण से वर्णन शैली को विशेष गरिमा प्रदान की है। आँचलिक वातावरण चित्रण की दृष्टि से यह पूर्णत: सफल है।

19.5 संवाद-योजना, भाषा-शैली, उद्देश्य एवं शीर्षक के आधार पर

इन सभी का विस्तृत वर्णन हम 'तमस' की पिछली इकाइयों में कर चुके हैं।

19.6 सारांश (Summary)

- 'तमस' उपन्यास की सबसे बड़ी विशेषता यह है कि यह घटना प्रधान है और इसमें स्पष्टत: किसी व्यक्ति को मुख्य पात्र नहीं कहा जा सकता, मुख्य कथा भाग हिंदू-मुस्लिम संदर्भ में सांप्रदायिक तनाव से संबद्ध है।
- उपन्यास में कथावस्तु का विकास एवं उसके स्वरूप का निर्माण पात्रों के माध्यम से होता है। विभिन्न प्रकार की घटनाओं को किसी पात्र के द्वारा ही प्रस्तुत किया जाता है, पात्रहीन कोई घटना हो ही नहीं सकती। अत: उपन्यास में जितना महत्त्व कहानी का है, उतना ही महत्त्व पात्रों का है।
- श्री भीष्म साहनी के उपन्यास 'तमस' में भी पात्र-योजना और चरित्र-चित्रण अपने ढंग का है और बड़ा ही महत्त्वपूर्ण है। चूँकि यह एक वृहदाकार उपन्यास है, इसलिए जिस प्रकार इसमें कथा-प्रसंगों की विविधता है, उसी प्रकार पात्र-योजना में भी विविधता है।
- उपन्यास में वास्तविकता, सजीवता और गरिमा लाने के लिए अनुकूल वातावरण का होना नितांत आवश्यक है। देशकाल की परिस्थितियों, परंपराओं और जीवन पद्धतियों की दिग्दर्शिका वेशभूषा आदि का जितना अच्छा चित्रण उपन्यास में होगा, उतनी ही सजीवता एवं प्रभावोत्पादकता उसमें आ सकेगी।
- घटनाओं एवं परिस्थितियों के चित्रण द्वारा उपन्यासकार उपन्यास की पृष्ठभूमि का वातावरण तैयार करता है। इसके साथ ही इससे परिस्थितियाँ स्वाभाविक बनती हैं। घटना विशेष अथवा परिस्थिति विशेष से आंतरिक वातावरण मूर्त रूप में सामने आता है।
- साहनी जी ने मात्र कथन ही नहीं दिये हैं अपितु प्रत्येक कथन का दूसरे पात्र पर क्या प्रभाव होता है और कथन कहने से पूर्व अपनी बात का दूसरे पात्र की उस पर क्या प्रतिक्रिया होती है, इसका अच्छा निदर्शन किया है।
- साहनी जी के इस उपन्यास से पात्रों का, विशेषतया नत्थू एवं हरनामसिंह का अंतर्द्वंद्व विशेष रूप से उभरा है और उसके द्वारा मानसिक वातावरण की सृष्टि की गई है।
- सामने दूर तक चौड़ी घाटी फैली थी जो पहाड़ों के दामन तक चली गई थी। लगता, दूर क्षितिज पर सतरंगी धूल उड़ रही है। विशाल मैदान, कहीं-कहीं छोटी-छोटी पहाड़ियाँ और उन पर स्वच्छ नीला आकाश जिसकी पारदर्शी ऊँचाईयों में चीलें तैर रही थी।
- धार्मिक संकीर्णता ग्रामीण क्षेत्र में इतना उग्र सांप्रदायिक रूप ले लेती है कि गाँव के गाँव उजड़ जाते हैं। हमारे देश में यह सांप्रदायिकता अपनी इतनी गहरी जड़ें जमा चुकी है कि एक ही संस्कृति में पलने के बावजूद केवल धर्म के नाम पर लाशें बिछ जाती हैं।

19.7 शब्दकोश (Keywords)

1. घृणा – नफरत	2. वेशभूषा – पहनावा
3. परिस्थितियाँ – हालात	4. स्मरणीय – यादगार
5. बालू – रेत	6. सहसा – अचानक
7. हृदयस्पर्शी – दिल को छूने वाली	8. तनिक – ज़रा
9. इत्मिनान – संतोष	10. अवसाद – दुख
11. मशवरा – सलाह	12. ध्यातव्य – ध्यान देने योग्य।

नोट

19.8 अभ्यास प्रश्न (Review Questions)

1. 'तमस' में प्रयोग की गई पात्र-योजना पर एक लेख लिखिए।
2. उपन्यास की देशकाल और वातावरण के आधार पर समीक्षा कीजिए।
3. आंतरिक वातावरण से क्या अभिप्राय है? इसको कितने उपवर्गों में बाँटा गया है?
4. उद्देश्य एवं शीर्षक के आधार पर 'तमस' की विवेचना कीजिए।

उत्तर : स्व-मूल्यांकन (Answers : Self-Assessment)

1. मृत्यु	2. वृहदाकार	3. बंतो	4. (ख)
5. (क)	6. (ग)	7. सत्य	8. असत्य
9. सत्य।			

19.9 सन्दर्भ पुस्तकें (Further Readings)

पुस्तकें तमस–भीष्म साहनी, राजकमल प्रकाशन (प्रा.) लि., नई दिल्ली।

इकाई–20: 'मन्नू भण्डारी' का साहित्यिक योगदान

अनुक्रमणिका (Contents)

उद्देश्य (Objectives)
प्रस्तावना (Introduction)
20.1 मन्नू भण्डारी की लेखन कुशलता
20.2 'आपका बंटी' : कथासार/कथावस्तु का सारांश
20.3 सारांश (Summary)
20.4 शब्दकोश (Keywords)
20.5 अभ्यास प्रश्न (Review Questions)
20.6 सन्दर्भ पुस्तकें (Further Readings)

उद्देश्य (Objectives)

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् विद्यार्थी योग्य होंगे–

- मन्नू भंडारी की लेखन कुशलता को जानने में;
- उपन्यास के सोलह अध्यायों के द्वारा सभी पात्रों को समझने में;
- 'आपका बंटी' की कथावस्तु पर प्रकाश डालने में।

प्रस्तावना (Introduction)

श्रीमति मन्नू भंडारी ने अपनी सृजन-प्रतिभा के बल पर हिंदी के आधुनिक कथाकारों के बीच अपनी गहरी पहचान बना ली है। उनकी रचनाएँ अपनी कथ्यात्मक पैठ के कारण काफी समादृत हुई हैं। उनकी रचनाओं की लोकप्रियता का एक प्रमाण इस बात से भी मिलता है कि उनकी कहानियाँ कई देशी-विदेशी भाषाओं में अनूदित हुईं। जैसे–पंजाबी, गुजराती, मराठी, कन्नड़, मलयालम, तेलुगू, सिंधी तथा बंगला आदि बहुत सारी भाषाओं में। उनकी कुछ रचनाओं का अनुवाद डच तथा अंग्रेजी में भी हो चुका है।

20.1 मन्नू भंडारी की लेखन कुशलता

मन्नू भंडारी सृजन चेतना की धनी हैं। उन्होंने अनेक मौलिक रचनाओं का सृजन किया। उनकी रचनाओं पर उनके व्यक्तित्व की छाप स्पष्ट रूप से दिखाई पड़ती है क्योंकि वे रचनाऐं सधी हुई कलाकार की अमूल्य निधि हैं।

मन्नू जी ने कहानी, उपन्यास और नाटक विधा को अपनी रचनाओं के माध्यम से विकसित करने का प्रयास किया हैं, उनकी रचनाएँ इस प्रकार हैं–

नोट

कहानी-संग्रह

1. मैं हार गई	सन् 1957 ई.
2. तीन निगाहों की एक तस्वीर	सन् 1959 ई.
3. यही सच है	सन् 1966 ई.
4. एक प्लेट सैलाब	सन् 1968 ई.
5. त्रिशंकु	सन् 1978 ई.
6. आँखों देखा झूठ (बाल कहानियाँ)	सन् 1976 ई.

उपन्यास

1. एक इंच मुस्कान (सहयोगी उपन्यास)	सन् 1961 ई.
2. आपका बंटी	सन् 1971 ई.
3. स्वामी	सन् 1982 ई.
4. महाभोज	सन् 1976 ई.
5. कलावा (बाल-उपन्यास)	सन् 1971 ई.

नाटक

1. बिना दीवारों का घर	सन् 1966 ई.
2. महाभोज (नाट्य रूपान्तर)	सन् 1983 ई.

मन्नू भंडारी की कहानियों के तीन संग्रह भी प्रकाशित हुए–

1. श्रेष्ठ कहानियाँ	सन् 1969 ई.
2. मेरी प्रिय कहानियाँ	सन् 1979 ई.
3. सप्तपर्णा	सन् 1982 ई.

मन्नू भंडारी का उपन्यास 'महाभोज' का अभिमंचन भी कई स्थानों पर हो चुका है। इनका नाटक 'बिना दीवारों का घर' भी कई नाट्य मंचों से अभिमंचित किया गया है। इनके अलावा इनकी कई कहानियाँ जैसे 'अकेली', 'चश्मे' तथा 'त्रिशंकु' आदि का भी सफल अभिमंचन हुआ। बाद में 'त्रिशंकु' कहानी पर आधारित टी.वी. फिल्म भी निर्मित की गई। 'एखा ने आकाश नाई' नामक कहानी पर बासु चटर्जी ने शबाना आजमी तथा अमोल पालेकर को लेकर 'जीना यहाँ' नाम से एक फिल्म भी बनाई।

इस प्रकार यह स्पष्ट हो जाता है कि मन्नू भंडारी प्रतिभा की धनी कथा लेखिका हैं। उनमें यथार्थ का आग्रह है, मनोविश्लेषण की गहराई है और सबसे बढ़कर जीवन की सापेक्ष दृष्टि तथा नई संवेदनाएँ तीव्र रूप में उजागर होती हुई दृष्टिगोचर होती हैं।

20.2 'आपका बंटी' : कथासार/कथावस्तु का सारांश

पहला अध्याय

उपन्यास में सबसे पहले बंटी और उसकी माँ (मम्मी-शकुन) का परिचय प्राप्त होता है। बंटी की मम्मी-शकुन कॉलेज में प्रिंसिपल है। घर के ठीक सामने ही उनका कॉलेज है। ड्रेसिंग टेबल के सामने बैठी हुई उसकी मम्मी जब तैयार होती है, तब बंटी आश्चर्यचकित हो जाता है कि सभी श्रृंगार करने के बाद वह पूर्ण रूप से बदल जाती है। उन शीशियों और डिबियों के प्रति यह जानने की जिज्ञासा बढ़ जाती कि उनमें क्या है? बंटी समझ गया है कि मम्मी जब कॉलेज के कमरे में प्रवेश करेंगी, तब उनकी मेज पर ढेर सारी चिट्ठियाँ और फाइलें रखी होंगी। कॉलेज जाने से पूर्व मम्मी उसे समझाती है कि 'देखो बेटे, धूप में बाहर नहीं निकलना' और वह एक राजा-बेटे की तरह मम्मी के आदेश का पालन करता।

बंटी के मन-मस्तिष्क में उसकी अपनी माँ के दो रूप काम करते हैं—एक, मम्मी का और दूसरा, प्रिंसिपल का। मम्मी-रूप में वह (शकुन) ममतामयी है, लेकिन जब वही मम्मी कुर्सी पर बैठती है तो "उसका चेहरा अजीब तरह से सख्त हो जाया करता है। लगता है, मानो अपने असली चेहरे पर कोई दूसरा चेहरा लगा लिया हो। मम्मी के पास जरूर एक और चेहरा है। चेहरा ही नहीं, आवाज भी कैसी सख्त हो जाती है! बोलती है तो लगता है, जैसे डाँट रही हो।"

बंटी को मम्मी का प्रिंसिपल रूप तनिक भी अच्छा नहीं लगता। इस रूप में उनका व्यवहार अत्यंत रूखा और कटु प्रतीत होता है। इसीलिए अब वह मम्मी के साथ कॉलेज नहीं जाता, क्योंकि वहाँ वह मम्मी नहीं, केवल प्रिंसिपल होती हैं। बंटी स्कूल में पढ़ता है। स्कूल की छुट्टी के दिन समय व्यतीत करना उसके लिए कठिन हो जाता है। बगीचे में 'लगे फूलों' का वह बहुत ध्यान रखता है। बंटी की मम्मी के घर में काम करने वाली 'आया' का नाम फूफी है, जिसके हृदय में बंटी के प्रति असीम स्नेह और ममता है। उसके प्रति वह पूरा ध्यान रखती है। बंटी के पापा ने उसके लिए बंदूक भिजवाई थी, जिससे वह अक्सर खेलता रहता है। अपने खेल में वह अपने पड़ोस में रहने वाले साथी टीटू को भी शामिल रखता। टीटू के माध्यम से बंटी को यह जानकारी होती है कि उसके मम्मी-पापा में तलाक हो गया है। इसीलिए पापा अलग रहते हैं। अगर कभी उसके पापा आते भी हैं तो सर्किट हाउस में ही ठहरते हैं—घर में नहीं। बंटी इस बात से भी आश्चर्यचकित है कि कैसे वह इन सारी बातों से अवगत नहीं हो पाया और टीटू सब कुछ जानता है।

बंटी के मन में टीटू की बात से एक सहज जिज्ञासा उत्पन्न होती है और फलस्वरूप एक दिन वह मम्मी से पूछ ही बैठता है कि पापा हम लोगों के साथ क्यों नहीं रहते? इसके साथ ही, उसने यह भी कहा कि टीटू ने उसे यह बताया है कि मम्मी-पापा की लड़ाई को तलाक कहते हैं। इस बात से मम्मी का मन अंदर से दुख से भर उठता है। वह कहती है कि पापाजी नहीं हैं तो क्या? वह तो आखिर तेरे साथ ही रहती है।

बंटी एक संवेदनशील बालक है। वह भीतर से स्थिति को महसूस करता है। इसलिए मम्मी को अधिक दुख नहीं पहुँचाना चाहता। ऊपर से वह शांत रहता है, किंतु वह भीतर ही भीतर सोचता रहता है कि क्या मम्मी को कभी पापा की याद नहीं आती है? वह अपने-आपको उस परिस्थिति में डालकर अनुभव करता है कि टीटू और कुन्नी से दो-तीन दिन बोले बिना तो वह रह सकता है लेकिन आगे नहीं। कल वह टीटू से तलाक के विषय में और भी बहुत कुछ पूछेगा कि तलाक की दोस्ती कैसी होती है?

टास्क 'मन्नू भंडारी' के साहित्यिक योगदान पर अपने मत प्रस्तुत कीजिए।

नोट

दूसरा अध्याय

बंटी की मम्मी शनिवार को लंच के बाद कॉलेज नहीं जातीं। गर्मियों में भोजन करके सो जाया करती हैं। किंतु दिन में बंटी को सोना कतई पसंद नहीं वह बराबर पापा को याद करता रहता। हर क्षण वह यही सोचता रहता है कि किसी भी तरह से वह पापा के पास पहुँच जाय। मम्मी के सो जाने के उपरांत वह करोंदे की झाड़ियों में खेलने के लिए पहुँच जाता। अक्सर वह टीटू और कुन्नी के साथ इन्हीं झाड़ियों में खेलता है। एक दिन खेलते ही खेलते वह देखता है कि वकील चाचा आए हैं। मम्मी को वह वकील चाचा के आने की बात बताता है।

बंटी को यह मालूम है कि वकील चाचा उसके पापा के पास होकर आते हैं। बंटी वकील चाचा से पूछता है कि इस बार पापा कब आएँगे? उसके पापा कलकत्ता में रहते हैं। वकील चाचा भी वहीं रहते हैं। बंटी को वह बताते हुए कहते हैं कि इस बार वह उसके पापा से मिलकर नहीं आए, वरना उसके लिए वह जरूर कुछ भेजते। वकील चाचा उससे पूछते हैं कि जो बंदूक तुम्हारे लिए भेजी थी, वह तुम्हें पसंद आई या नहीं? बंदूक की प्रशंसा करते हुए उसने संतोष व्यक्त किया। वकील चाचा बंटी द्वारा निर्मित पेंटिंग्स की बहुत तारीफ करते हैं और मम्मी से कहते हैं कि तुम्हारा बेटा तो बड़ा ही कलाकार और गुणवान् है। इस छोटी उम्र में ही बड़ी अच्छी पेंटिंग्स बना लेता है। आगे चलकर एक दिन वह निश्चय ही बड़ा कलाकार बनेगा। यह सब सुनकर भी मम्मी शांत रहती है। कमरे में एक अजीब-सी उदासी उतर आई है..... सब कुछ स्तब्ध!

बंटी इस बात से पूरी तरह अवगत हो चुका है कि वकील चाचा उसके पापा के पास से होकर आते हैं और मम्मी-पापा के बीच संदेश का आदान-प्रदान करते हैं। आज बंटी वकील चाचा के आने पर अत्यधिक सतर्क हो गया है। यह इनकी परस्पर बातचीत सुनने के लिए चिंतातुर हो उठा है ताकि मम्मी-पापा के बीच का रहस्योद्घाटन हो सके। वकील चाचा कहते हैं कि पापा चाहते हैं कि अब इस बात की कानूनी कार्यवाही भी कर ही डाली जाए। मम्मी चिंतित स्वर में उनसे पूछती हैं कि क्या इसीलिए उनको यहाँ भेजा गया है? वह कहते हैं कि नहीं, वह तो अपने काम से आए थे। चाचा की बातों को सुनकर मम्मी टूट-सी गई। बंटी की आँखों में नींद नहीं आती। वह मम्मी के दुख-भरे चेहरे को देखता रहता है। पिछले सात साल से मम्मी, पापा से अलग रहती रही हैं। शाम को वकील चाचा ने बंटी की मम्मी को बताया कि अजय ने तलाक के कागज पर हस्ताक्षर कर दिए हैं और अब बंटी की मम्मी को भी उस कागज पर दस्तखत कर देने चाहिए ताकि उसे कचहरी में जमा करके कोई तारीख निश्चित हो जाए और दोनों स्वतंत्र जीवन जी सकें। बंटी उन दोनों की बात को छिपकर सुन रहा है। दुर्भाग्यवश उसकी यह चोरी पकड़ी गई। मम्मी और वकील चाचा ने उसे वहाँ से भगा दिया। बंटी ने मम्मी और वकील चाचा की बातचीत के दौरान वकील चाचा के मुँह से एक वाक्य सुना था कि "जब धुरी गड़बड़ा जाती है तो जिंदगी लड़खड़ा जाती है।" बंटी इसका अर्थ नहीं समझ सका।

रात को सोते समय बंटी के मन में एक प्रबल इच्छा काम कर रही थी कि मम्मी से पूछे कि वकील चाचा पापा के विषय में क्या बात कर रहे थे, किंतु साहस के अभाव में वह ऐसा न कर सका। ऐसा करके वह मम्मी को और अधिक उदास नहीं करना चाहता है। अंततः एक ही बात उसके मन और मस्तिष्क पर छाई हुई थी कि "मम्मी को किस प्रकार सुखी बनाया जाए?" इसी उधेड़-बुन और सुख-दुख की लहरों में वह देर रात तक डूबता-उतरता रहा और यही सब सोचते-सोचते, पता नहीं, कब उसे नींद आ गई।

तीसरा अध्याय

पिछले दो-तीन सालों से शकुन (बंटी की मम्मी) को यह अकेलापन बुरी तरह काटने लगा है। छुट्टियों में कॉलेज बंद हो जाने पर समय काटना अत्यंत कठिन हो जाएगा। कॉलेज के कार्यों में व्यस्त रहकर वह संतोष कर लेती है। इधर बंटी के लिए समस्या और भी अधिक गंभीर हो गई; क्योंकि अब उसे सारा दिन मम्मी के नियंत्रण में बिताना पड़ता है। मम्मी और पापा एक-दूसरे से दूर हो चुके थे और उनके परस्पर मिलने की कोई संभावना नहीं रह गई थी। कल वकील चाचा ने उनके सामने जो प्रस्ताव रखा और आज जिसके लिए वह फिर आने वाले हैं, उसने उसे

भीतर से जैसे पूरी तरह झकझोर दिया। लेखिका ने बंटी के मम्मी–पापा की मन:स्थिति का वर्णन करते हुए लिखा है कि "समझौते का प्रयत्न भी दोनों में से कोई अंडरस्टैंडिंग पैदा करने की इच्छा से नहीं करता था, वरन् एक–दूसरे को पराजित करके अपने अनुकूल बना देने की आकांक्षा से। तर्कों और बहसों में दिन बीतते थे और ठंडी लाशों की तरह लेटे–लेटे दूसरे को दुखी, बेचैन और छटपटाते हुए देखने की आकांक्षा में रातें। भीतर ही भीतर चलने वाली एक अजीब ही लड़ाई थी वह भी, जिसमें दम साधकर दोनों ने हर दिन प्रतीक्षा की थी कब सामने वाले की साँस उखड़ जायेगी और वह घुटने टेक देगा, जिससे कि फिर वह बड़ी उदारता और क्षमाशीलता के साथ उसके सारे गुनाह माफ करके उसे स्वीकार कर ले, उसके संपूर्ण व्यक्तित्व को 'निरे शून्य में बदलकर'।" वकील चाचा ने तलाक के कागज शकुन को दे दिये थे और अगले दिन कचहरी में चलकर हस्ताक्षर कर देने के लिए भी आग्रह किया था। दूसरे दिन नियत समय पर बंटी की मम्मी कचहरी चली गईं और अपने पति अजय के साथ बरसों से चली आ रही तनातनी को क़ानूनी रूप दे दिया। इस प्रकार उसके जीवन का एक अत्यंत महत्त्वपूर्ण अध्याय समाप्त हो गया।

वकील चाचा जब भी आते हैं, बंटी की मम्मी का दुख और भी गहरा हो जाता। अजय के किसी दूसरी स्त्री से संबंध बढ़ने की सूचना तथा उसके साथ वैवाहिक बंधन में बंधने की खबर से बंटी की मम्मी का मन व्याकुल हो उठा। चाचा ने जब बंटी को खिलौने दिए तो उसे ऐसी प्रतीति हो रही थी कि ये खिलौने केवल उसी के लिए नहीं हैं। वास्तव में बंटी को माध्यम बनाकर उस तक भी कुछ भेजा गया है। बाद में बंटी के पापा अजय भी आये थे। उन्होंने बंटी को बुलवाया था। उस दिन अजय के पास से लौटने पर वह बड़ी देर तक बंटी को दुलारती–पुचकारती रही, जैसे बंटी वहाँ से अकेला नहीं लौटा हो, अपने साथ अजय को भी लाया हो।

बंटी की माँ शकुन के लिए अजय को भूल पाना बड़ा मुश्किल है। कुछ दिनों के बाद उसने मन ही मन समझ लिया था कि अब किसी प्रकार की आशा करना बेकार है। चाचा ने भी उसे बताया था कि अब किसी भी प्रकार की आशा करना व्यर्थ है। उसने बड़ी गंभीरता से यह महसूस किया कि जैसे उन दोनों ने कभी प्यार किया ही नहीं।

पिछले सात वर्षों में विभागाध्यक्ष से प्रिंसिपल हो जाने के पीछे भी अपने को बढ़ाने से कहीं ज्यादा अजय को गिराने की इच्छा ही शायद प्रबल थी। इतना सबकुछ होने के बावजूद उसे ऐसा लग रहा था, जैसे वह अजय से हार गई हो।

इधर वकील चाचा ने शकुन से बंटी के संबंध में बताया कि बंटी को अत्यधिक नियंत्रण में रखकर उसके व्यक्तित्त्व के सहज विकास में बाधा डालना अनुचित है। उन्होंने स्पष्ट शब्दों में बंटी की मम्मी को बताया था कि "इस स्थिति की दो परिस्थितियाँ हो सकती हैं—या तो तुम उसके स्वतंत्र अस्तित्व को समाप्त करके उस पर हावी होने की कोशिश करोगी या फिर अपने को बहुत ही उपेक्षित और अपमानित महसूस करोगी। उस समय तुम्हें यही लगेगा कि जिसके पीछे तुमने सारी जिंदगी बर्बाद की, वह अब तुम्हें ही भूल कर अपनी जिंदगी जीने की बात सोच रहा है। उस समय तुम्हें बुरा लगेगा। आज अजय को लेकर तुम्हारे मन में जो कटुता है, हो सकता है, वही फिर बंटी को लेकर हो और आज से दस गुना ज्यादा हो।"

वकील चाचा ने शकुन से कहा था कि बंटी को हॉस्टल भेज देना चाहिए। यह उसके भविष्य के लिए ठीक रहेगा। बंटी की मम्मी ने यह महसूस किया कि इसके पीछे भी शायद अजय का ही कोई स्वार्थ है। वह चाचा को बताती है कि बंटी को हॉस्टल भेजने के बाद वह बिल्कुल अकेली हो जाएगी। चाचा ने उसे सलाह दी कि कहीं वह अपना अकेलापन खत्म करने के चक्कर में बंटी का भविष्य ही खत्म न कर दे। चाचा शकुन को सलाह देते हैं कि वह अपने बारे में एकदम व्यावहारिकता के साथ सोचे। जो कुछ हो गया उसे शकुन को भूल जाना चाहिए। वकील चाचा का कहना है कि वह केवल बंटी की माँ के रूप में ही नहीं, बल्कि शकुन के रूप में भी जिए। उनका दृढ़ विश्वास है कि बंटी के प्रति शकुन का अंधा मोह बंटी को विकसित होने में बाधक हो सकता है। और इस तरह यह बौना होकर ही रह जाएगा। फिर वकील चाचा बंटी की मम्मी शकुन से कहते हैं कि जो कुछ हो गया उसे भूल जाओ। अब जब भी तारीख पड़ेगी अजय आ जाएगा। तुम कोर्ट आ जाना। अब इस किस्से को भी खत्म ही करो। शकुन को एक बार ऐसा लगा, जैसे वकील चाचा के माध्यम से अजय ही यह सारा उपदेश दे रहा है।

नोट

शकुन के मन में अजय के प्रति गहरे प्रतिशोध का भाव है। जबसे उसे अजय और मीरा के आपसी संबंध का पता चला है, वह भी डॉक्टर जोशी के संबंध में बहुविध सोचने लगी है। वास्तविकता यह है कि उसके मन में एक विचित्र-सी भावना जागृत हुई कि बंटी के माध्यम से अजय को ही यातना देगी। इसी चिंतन-अनुचिंतन के क्रम में वह अपने व्यक्तित्त्व की डोर डॉ. जोशी की ओर ढीली करने की बात सोचती है। डॉ. जोशी शहर के प्रसिद्ध चिकित्सक और विदुर हैं।

स्व-मूल्यांकन (Self-Assessment)

रिक्त स्थानों की पूर्ति करें (Fill in the blanks) :

1. मन्नू भंडारी .... की धनी कथा लेखिका हैं।
2. बंटी की मम्मी शकुन कालेज में .... है।
3. जब बंटी के पापा आते हैं तो .... हाऊस में ठहरते हैं।

चौथा अध्याय

वकील चाचा के जाने के बाद मम्मी और भी अधिक उदास रहने लगी थी। बंटी समझ नहीं पाता कि आखिर, ऐसा क्यों हैं? आज बंटी के पापा आने वाले हैं, परसों ही उनका पत्र आया था। पिछली बार जब बंटी के नाम चिट्ठी आई थी, तब तो मम्मी बहुत प्रसन्न थी और बार-बार उससे पूछ रही थी। पापा से मिलकर जब बंटी घर वापस लौटा था, तब मम्मी उससे अनेक प्रश्न कर रही थी।

तलाक के प्रसंग में अजय आता है और सर्किट हाउस में ही ठहरता है। बंटी से मिलने के लिए वह उसे सर्किट हाउस में ही बुलाता है। मम्मी माली के साथ बंटी को भेज देती है। रास्ते में वह अनेक बातें सोचता रहा कि पापा से वह क्या-क्या पूछेगा? उसकी समझ में कुछ भी नहीं आता कि आखिर मम्मी-पापा अलग-अलग क्यों रहते हैं? वह उनसे तलाक के संबंध में भी पूछेगा। बंटी के पापा बंटी को कुछ किताबें, एक मैक्रोनी और टॉफी का एक डिब्बा देते हैं। उससे वह कहते हैं कि वह कभी उन्हें चिट्ठी क्यों नहीं लिखता? बंटी जब पापा को बताता है कि वह ताश, लूडो और कैरम खेलता है, तब वह उसे क्रिकेट, हॉकी, कबड्डी जैसे लड़कों वाले खेल खेलने की सलाह देते हैं।

बाद में बंटी अपने पापा को अपने दोस्तों टीटू और कुन्नी के संबंध में भी बताता है। बंटी के मन में कभी-कभी ऐसी इच्छा उत्पन्न होती है कि वह उनसे पूछे कि वह उनके साथ क्यों नहीं रहते? मन से वह यही चाहता है कि मम्मी-पापा के बीच किसी भी तरह से मधुर संबंध स्थापित हो जाए, किंतु उसे लगने लगा था कि संभवत: किसी भी प्रकार यह सब होने वाला नहीं है। उसके पापा उससे कहते हैं कि छुट्टियों में इस बार वह उनके साथ कलकत्ता चले। उत्तर में वह कहता है कि मम्मी चलेंगी तो वह चलेगा। पापा उससे विक्टोरिया मेमोरियल, बोटेनिकल गार्डन, लेक्स और ज़ू दिखाने की बात कहते हैं।

अगले दिन शाम को पापा बंटी को ताँगे में बिठाकर घुमाते हैं तथा आइसक्रीम और चाट खिलाते हैं। बंटी के वापस लौटने में देर हो जाने के कारण पापा उसे घर पहुँचाने के लिए स्वयं आते हैं और मम्मी-पापा में औपचारिक ढंग से बातें होती हैं। पापा मम्मी से कहते हैं, "कल दस बजे पहुँच जाना। दूसरा ही नंबर है। पंद्रह-बीस मिनट में ही आ जाएगा। अपने-आप आ सकोगी न?" मम्मी पहुँचने की बात को स्वीकृति दे देती है।

पापा फिर सर्किट हाउस वापस लौट जाते हैं। मम्मी उदास हो जाती है और रोने लगती है।

सोने से पहले बंटी अपने मन में बार-बार यही सोच रहा था कि मम्मी और पापा की मित्रता किसी भी प्रकार करा दे। मम्मी की पापा से नाराजगी का कारण उसकी समझ में नहीं आ रहा था। सोने के बाद बंटी के गालों पर बहे आँसू धीरे-धीरे सूख गए।

नोट

पाँचवाँ अध्याय

दूसरे दिन प्रात:काल आँख खुलने पर बंटी बड़ा ही खिन्न-मन दिखाई पड़ रहा था। पापा के साथ बीते वे क्षण उसे बार-बार याद आ रहे थे और दूसरी ओर मम्मी का उदास चेहरा। बंटी यह सोच रहा था कि मम्मी उससे नाराज हैं कि वह पापा से मिलने क्यों गया था और इसलिए पापा द्वारा प्रदत्त वस्तुओं को वह सोफे के नीचे रख देता है।

मम्मी से उसने पूछा कि वह उससे नाराज हैं? मम्मी ने उसे दुलार भरे शब्दों में कहा–"पागल कहीं का1 किसने कहा कि वह उससे नाराज हैं।" बंटी का भरा मन अब मम्मी की बातों को सुनकर हल्का हो गया। आज मम्मी ने कॉलेज से छुट्टी ले रखी है, क्योंकि पापा ने मम्मी को दस बजे कचहरी पहुँचने के लिए कहा था। बंटी भी मम्मी के साथ जाना चाहता है, लेकिन मम्मी उसे साथ नहीं ले गई। बंटी ने फूफी से मम्मी के बारे में पूछा कि वह कहाँ गई हैं, लेकिन उसने भी उसे नहीं बताया। वह रोने लगा और नाश्ता भी नहीं किया और क्रोध में आकर उसने दूध और दलिए की कटोरी फेंक दी।

कुछ देर बाद मम्मी घर वापस लौटकर आयीं। वह बहुत दुखी और परेशान दिख रही थीं। बंटी ने इसे बड़े गहरे में महसूस किया। अपने हाथ से उसने मम्मी को शिकंजी बनाकर दी। मम्मी ने उसके हाथ में गिलास देखकर समझ लिया कि शिकंजी उसी ने बनाई है और फिर उनकी आँखों में आँसू छलछला आए। मम्मी-पापा के बीच आखिर क्या हुआ, यह जानने को वह भीतर से बहुत उत्सुक था।

दोपहर की बारिश के बाद उसका बगीचा एकदम ताजा और हरा-भरा दिखाई दे रहा था। बंटी मम्मी से पूछता है कि क्या कुछ कहानियों में ऐसे पेड़ भी होते हैं, जिनमें चाँदी की पत्तियाँ होती हैं तथा सोने के फल और उन फलों के अंदर मोतियों के दाने निकलते हैं। क्या वे ऐसे पेड़ नहीं लगा सकते? मम्मी कहती हैं कि ये सब कहानियों की ही बातें होती हैं। मम्मी की यह बात सुनकर बंटी निराश हो जाता है।

मम्मी ने रात को सोते समय जब बंटी को पुकारा तो उसने उत्तर दिया–'हाँ, माँ!' बंटी जब बहुत खुश होता या लाड़-दुलार की मन:स्थिति में होता, तभी मम्मी को 'माँ' कहता है। मम्मी ने एक बार उसे बताया भी था कि उसका 'माँ' संबोधन उसे बहुत ही अच्छा और प्यारा लगता है।

मम्मी ने बंटी से पापा के साथ कल की बातचीत के बारे में पूछा कि क्या बातें हुईं? उसने बताया कि पापा छुट्टियों में कलकत्ता आने की बात कह रहे थे। फिर उसने बताया कि वह तो मम्मी के बिना कहीं जाता ही नहीं। बंटी की इन बातों को सुनकर मम्मी का मन दुख से भर गया। बंटी ने मम्मी से पूछा आज जब सवेरे वह पापा के पास गयीं तो क्या बातें हुईं? मम्मी ने कहा–"अब होने को क्या बाकी है? अपने पापा को भूल जा।" यह कहते-कहते वह रोने लगी। माँ को रोते देख बंटी भी रोने लगा और मम्मी से कहने लगा–"मम्मी रोओ मत।"

छठा अध्याय

इन सारी गतिविधियों से बंटी ने समझ लिया कि पापा से मम्मी की लड़ाई हो गई है और अब फिर इनमें परस्पर दोस्ती हो पाना कठिन है। इसलिए मम्मी को प्रसन्न रखने की जिम्मेदारी अब उसी के ऊपर है। इसलिए पापा के दिए हुए खिलौनों से उसने खेलना भी छोड़ दिया, ताकि उन खिलौनों को देखकर मम्मी का मन दुखी ना हो। इसके बावजूद भीतर से उसे पापा की याद बहुत सताती है। उसने जान-बूझकर उन खिलौनों को अलमारी में बंद कर दिया। अब वह गुम-सुम रहने लगा।

अब बंटी सारी परिस्थितियों और बातों को समझने लगा है। उसने मन ही मन तय कर लिया कि पापा को अब वह कभी चिट्ठी भी नहीं लिखेगा। वह पूरी तरह से अब मम्मी की तरफ है। एक प्रकार से वह अपने मन में इस बात की प्रतिज्ञा करता है कि कभी भी वह पापा के विषय में नहीं सोचेगा। जब कभी मम्मी कॉलेज चली जाती हैं और वह अकेला हो जाता है, तभी उसे पापा की याद तीव्रता से सताने लगती है। ऐसी स्थिति में वह कलकत्ता के बारे में सोचने और स्वप्न देखने लगता है। यह भी एक विचित्र बात है जब भी कभी वह पापा के अलग होने और रहने की बात सोचता है, तब मम्मी को और भी अधिक उदास और दुखी होते देखता है।

नोट

मम्मी बंटी से पूछती है कि क्या वह पापा के साथ रहना चाहता है? फिर मम्मी ने उससे प्रश्न किया कि क्या उसे पापा चाहिए? भीतर से तो वह पापा की भी चाहना करता है, पर कुछ स्पष्ट कह नहीं पाता। बार-बार वह यही सोचता है कि पता नहीं उसे पापा मिल पायेंगे या नहीं।

मम्मी के कॉलेज में पढ़ाने वाली उनकी सहेलियाँ शाम को जब आयीं तब बंटी ने सबसे प्रसन्नतापूर्वक बातचीत की। बाद में जब उससे यह कहा गया कि वह जाकर बाहर खेले तब उसने अपने आपको अपमानित महसूस किया।

रात में जब मम्मी डॉक्टर जोशी की कार में बैठकर उनके साथ घर आयीं, तब बंटी को यह अच्छा नहीं लगा। ऐसे समय उसे अपने पापा की याद आने लगी। भीतर से उसका मन फूट-फूटकर रोने का हो रहा था।

टास्क 'जब धुरी गड़बड़ा जाती है तो जिंदगी लड़खड़ा जाती है।' से उपन्यासकार का क्या तात्पर्य है?

सातवाँ अध्याय

गर्मी की छुट्टी समाप्त हो जाने के बाद बंटी स्कूल जाने लगा। अब वह पहले से कहीं अधिक प्रसन्न दिखाई देने लगा। उसने ऐसा महसूस किया जैसे उसका बचपन फिर से वापस लौट आया हो। इस बार गर्मी की छुट्टियों के बाद स्कूल जाना बड़ा ही अच्छा लग रहा था। स्कूल में बंटी के सभी साथी आपस में यही बातें कर रहे थे कि छुट्टियों में कहाँ-कहाँ घूमने गये और क्या-क्या देखा। इस प्रसंग में बंटी अपने दोस्तों के बीच अकेला मौन रह जाता है। इस बात से उसका मन अत्यधिक दुखी हो जाता है। इसका परिणाम यह होता कि बंटी उन बच्चों की बातों में अरुचि और अन्यमनस्कता से काम लेता और बाहर देखने लगता है। रह-रहकर वह अपने अतीत के चक्रवात में फँस कर आवर्तित होने लगता है। कभी तो वह वकील चाचा के बारे में सोचता और कभी मम्मी के उदास चेहरे को याद करने के लिए विवश हो उठता। छुट्टियों के बाद स्कूल जाते समय उसके मन में बहुत अधिक उत्साह था। स्कूल में आकर नई क्लास, नई किताबें और नये-नये अध्यापकों के बीच बिल्कुल नयेपन का अनुभव कर रहा था।

स्कूल से घर वापस लौटने पर बंटी बेहद खुश था। उसने फूफी से अपनी प्रसन्नता व्यक्त करते हुए बताया कि अब उसे इतना भारी बस्ता लेकर स्कूल जाना पड़ता है अब तो उसे इतिहास, जियोग्राफी, जनरल साइंस और न जाने क्या-क्या पढ़ना पड़ेगा। इस कथन के माध्यम से वह जैसे अपना बड़प्पन जाहिर करना चाह रहा था।

शाम को बंटी ने मम्मी से अपनी कापियों किताबों पर 'कवर' चढ़ाने के लिए कहा। इसी बीच डॉ. जोशी आ गये। मम्मी उनके साथ बातचीत करने लगी। बंटी को यह सब अच्छा न लगा। वह कहने लगा कि उसकी कापियों पर 'कवर' क्यों नहीं चढ़ाये? बंटी ने मम्मी के कहने पर डॉ. जोशी को नमस्ते की। उसे डॉ. जोशी बिल्कुल अच्छे नहीं लगते थे। इसका कारण यह था कि उसके मन में एक बात बैठ गई थी कि डॉ. जोशी के कारण ही उसकी उपेक्षा हो रही है, उसकी मम्मी में बदलाव आ गया है और पहले की तरह वह उसके प्रति स्नेह-भाव नहीं रख रही हैं। मम्मी के प्रति बंटी के मन में आक्रोश का भाव भर गया। वह मम्मी से कहता है कि "तुम्हें मेरी बिल्कुल परवाह नहीं रह गई है। मत करो मेरा कोई भी काम। बस, डॉक्टर साहब के पास बैठकर चाय पियो। तुम्हारा क्या है, सजा तो मुझे मिलेगी। मैं अब स्कूल ही नहीं जाऊँगा, कभी नहीं जाऊँगा, कभी भी...।"

मम्मी ने कॉलेज से कागज मंगवा कर उसकी कापियों और किताबों पर कवर चढ़ाये। बंटी को मम्मी की खुशी, उदासी और नाराजगी का पता चल गया था। अगले दिन उसने महसूस किया कि मम्मी अब पहले से कुछ बदल गई हैं। मम्मी द्वारा यह बताये जाने पर कि वे लोग डॉक्टर साहब के यहाँ जायेंगे, तब वह विक्षिप्त मन:स्थिति में पहुँच गया।

डॉक्टर जोशी ने अपनी कार में आगे मम्मी को बिठाया और बंटी को पीछे। यह बात उसे बड़ी अजीब लगी कि मम्मी

डॉ. जोशी से सटकर बैठी हुई हैं। बंटी अपने और मम्मी के बीच किसी तीसरे व्यक्ति की स्थिति सहन नहीं कर सकता था। कुछ क्षण बाद मम्मी ने बंटी को डॉक्टर जोशी के बच्चों के साथ खेलने के लिए कहा तो वह अन्यमनस्क भाव से चुपचाप चला तो गया किंतु उसकी दृष्टि बराबर मम्मी और डॉक्टर जोशी की ओर ही टिकी रही। बार-बार उसे एक ही बात का दुख सालता रहा कि एकमात्र मम्मी ही उसकी थी, वह भी इनसे जा मिली।

आठवाँ अध्याय

रविवार का दिन! छुट्टी का दिन! बंटी इस छुट्टी का उपयोग कर रहा है। रंग और ब्रश लेकर वह एक चित्र बनाने में व्यस्त है। आँगन में फूफी ने चटाइयाँ डालकर दालें और गेहूँ फैला रखे हैं। बंटी पेंटिंग बनाते-बनाते कभी मम्मी को भी देख लेता है। इस देखने में उसे मम्मी के चेहरे में बदलाव का भाव दिखाई देने लगा है। कभी-कभी वह सोचने लगता कि मम्मी में कितना परिवर्तन आ गया है। न तो मम्मी बंटी को पढ़ा पाती हैं और न ही उसके खाने-पीने की चिंता ही करती है।

बंटी की मम्मी डॉक्टर जोशी के लिए स्वेटर बुन रही हैं। बंटी को वह नहाने के लिए कहती हैं। वह फूफी से न नहाकर अपने आप नहाने की जिद करता है। बाद में मम्मी उसे बताती हैं कि आज डॉक्टर जोशी अपने बच्चों को लेकर यहाँ आने वाले हैं। मम्मी बंटी को यह बात इस भाव से बताती हैं कि बच्चों की बात सुनकर बंटी प्रसन्न होगा। किंतु मम्मी की ये बातें उसे बिल्कुल भी अच्छी न लगी। उत्तर में वह ड्राइंग बनाने की बात करता है।

इतने में डॉक्टर जोशी की गाड़ी फाटक पर आ पहुँची और मम्मी जल्दी-जल्दी उनकी आगवानी में वहाँ फाटक पर चली गई। लेकिन बंटी जान-बूझकर वहाँ नहीं गया। डॉक्टर जोशी के सामने आने पर उसने औपचारिकता की पूर्तिवश हाथ जोड़ लिये। अमि और डॉक्टर साहब को साथ लेकर मम्मी भीतर चली गई। जोत ने बंटी के पास आकर उसका हाथ पकड़ लिया और कहा कि "चलो बंटी हमको अपना बगीचा दिखाओ।" बंटी ने उसे बगीचा दिखाया और फिर एक फूल तोड़कर उसके बालों में लगा दिया। अमि ने बंटी का खिलौना ले लिया, जिसके कारण दोनों आपस में झगड़ पड़े। मम्मी शकुन ने बंटी के गाल पर तमाचा लगाया। डॉक्टर जोशी ने शकुन को समझाया कि बंटी को मारकर तुमने अच्छा नहीं किया। बच्चों की लड़ाई में किसी एक को नहीं मारना चाहिए।

बंटी के मन में मम्मी के इस दुर्व्यवहार के प्रति अधिकाधिक रोष और आक्रोश था। इसलिए बंदूक उठाकर बाहर पेड़ पर खूब ऊँचे चढ़कर वह निशाना साधने लगा। उसने उस दिन कुछ भी नहीं खाया। बाद में वह फूट-फूटकर रोने लगा। गुस्सा, दुख, अपमान और भूख ने साथ मिलकर भीतर से उसे बिल्कुल थका दिया। कुछ क्षण बाद पेड़ से उतरकर वह घास पर लेट गया। ऐसा उसने विरोध प्रकट करने के भाव से किया था। वैसे उसे आशा थी कि उसकी मम्मी उसे खोजेगी और मनाएगी। किंतु ऐसा कुछ नहीं हुआ। मम्मी भीतर डॉक्टर और उसके बच्चों में खोई रही और उन्हें विदा करने के बाद ध्यान आने पर बंटी को उठा लाई। अवसाद से उसका मन भर आया।

स्व-मूल्यांकन (Self-Assessment)

बहुविकल्पीय प्रश्न (Multiple Choice Questions) :

4. बंटी के घर में काम करने वाली बाई का नाम क्या है?

   (क) आई (ख) ताई

   (ग) फूफी (घ) इनमें से कोई नहीं।

5. बंटी को किसने बताया कि मम्मी-पापा की लड़ाई को तलाक कहते हैं।

   (क) फूफी (ख) टीटू

   (ग) वकील चाचा (घ) इनमें से कोई नहीं।

नोट

6. बंटी की मम्मी उसके पापा से कितने सालों से अलग रहती है?

(क) सात (ख) पाँच

(ग) नौ (घ) इनमें से कोई नहीं।

नवाँ अध्याय

मम्मी ने बंटी को बिस्तर पर सुला दिया। धीरे-धीरे सुबकते हुए वह सो गया। बंटी ने मम्मी से इस क्रूरता और निर्दयता की कभी कल्पना तक नहीं की थी। अब प्रत्येक पल उसे अपनी उपेक्षा ही उपेक्षा दिखाई देने लगी। उसे लगा कि मम्मी बार-बार मुझे ही गलत समझने लगी हैं। एक बार वकील चाचा ने मम्मी से कहा था कि वह बंटी पर इतना निर्भर करती है कि उसे अपनी जिंदगी का केंद्र बनाकर जीना चाहती है, यही गलत है। केवल उसके लिए ही नहीं, बंटी के लिए भी। लेट हिम गो लाइक ए बॉय, लाइक ए मैन, सारे समय अपने में दुबकाए रखोगी तो क्या बनेगा उसका?

शकुन को अपनी गलती का एहसास होने लगा है। बड़ी तीव्रता से उसने यह अनुमान लगाया कि बंटी को उसी ने गलत समझा। वास्तव में उस समय उसने कभी भी किसी भी मूल्य पर बंटी को अपने से अलग रखने की बात सोची ही नहीं। वकील चाचा की ही तरह डॉक्टर जोशी भी कहते हैं कि तुम उस पर शायद इतना ज्यादा हावी रही हो कि वह पूरी तरह लड़का बन ही नहीं पाया। तुमने उसे ऊधम करने ही नहीं दिया। "हाँ, औरतों वाली जिद और रोना जरूर सिखा दिया।" मम्मी बार-बार अतीत और वर्तमान के द्वंद्व में डूबने, उतरने लगी। वह कभी बंटी के बारे में सोच रही थी। कभी अपने बारे में और कभी डॉक्टर जोशी के संबंध में। वह सारी बातों, सारी घटनाओं का मन ही मन लेखा-जोखा करने लगी। तभी सहसा उसे डॉक्टर जोशी की एक बात याद हो आई, जिसे उसने एक बार किसी प्रसंग में कहा था कि "मनुष्य जब अपने भीतर ही भीतर बहुत गिल्टी महसूस करता है तो वह तर्क से अपने को 'जस्टिफाई' करता रहता है...अपने हर गलत काम को जस्टिफाई करता रहता है। न करे तो इतना अपराध-बोध ढोकर वह जी नहीं सकता। जहाँ जस्टिफिकेशन है, वहाँ गिल्ट है।"

मम्मी अब किसी भी मूल्य पर डॉक्टर जोशी को अपनाना चाहती है। अब यह सोचने के लिए भी विवश हो जाती है कि बंटी को लेकर उसने अपने जीवन को नरक बना लिया है। उसके लिए उसने अपने अरमानों का खून कर दिया है। अब वही बंटी उसके मार्ग की बाधा-सा बन गया है। जैसे भी हो, उसने अब डॉक्टर जोशी के साथ रहकर अपने नये जीवन जीने की शुरूआत करने का निर्णय कर लिया है। वह चाहती है कि उसकी नई जिंदगी के माहौल में बंटी भी साथ रहे और अपने आपको उसमें 'एडजस्ट' कर ले, अभियोजित कर ले। लेखिका ने उसकी मन:स्थिति को चित्रित करते हुए लिखा है: 'उस दिन डॉक्टर की दिलवाई हुई साड़ी पहनकर जब वह गाड़ी में बैठी तो डॉक्टर उसे कुछ देर देखते ही रह गए। वह देखना केवल देखना भर नहीं था, कुछ था, जिसमें रोम-रोम जैसे भीगता-डूबता चला जा रहा था।

शकुन अब दुविधा में फँसी हुई है। उसे अब स्वयं पर आश्चर्य होने लगता है कि अब वह छत्तीस वर्ष पूरे करने को है, इसके बावजूद उसके मन में किशोरवय वाला उल्लास व्याप्त है। इसके साथ ही उसमें यौवन वाली उमंग भी है। बार-बार उसके मन में डॉक्टर जोशी का ख्याल आता है, जिनके साथ होते हुए उसकी सुप्त भावनाएँ जागने लगती हैं। शकुन के पूछने पर एक बार डॉक्टर जोशी ने स्वीकार किया था कि उसे अपनी पत्नी की याद बराबर आती है, यह सुनकर वह भी अतीत की स्मृतियों में एक बार अंतर्ध्यान हो गई।

शकुन ने देख लिया कि बंटी उसके और उसके पति अजय के बीच सेतु नहीं बन सका, इसलिए उसने भी मन ही मन यह निश्चय कर लिया कि अब वह बंटी को अपने और डॉक्टर जोशी के बीच बाधा भी नहीं बनने देगी। उसे इस बात का पछतावा है कि उसने अपने जीवन के इस नये अध्याय की शुरूआत और भी पहले क्यों नहीं की? वह इस निष्कर्ष पर पहुँच चुकी थी कि बंटी कभी भी डॉक्टर जोशी को सहन नहीं कर पाएगा। अब वह एक ऐसी दुविधा में फँस गई है कि डॉक्टर जोशी और बंटी दोनों में से किसी एक का चयन करना था। लेकिन डॉक्टर जोशी

नोट

ने उसे बताया था कि बंटी थोड़ा 'प्रॉब्लम चाइल्ड' है, इसलिए उसकी समस्या को तो किसी भी प्रकार झेलना ही होगा। इस प्रकार उसका व्यवहार करने का कारण है कि वह तुम्हारे साथ अकेला रहा है। शकुन की पीठ को सहलाते हुए डॉक्टर जोशी उसे सांत्वना देते रहे। अंततः उसने अपने-आपको डॉक्टर जोशी के हवाले कर दिया और इस तरह अपने-आपको समर्पित करके उसने बहुत कुछ पा लिया। लेखिका के शब्दों में, "सारा रास्ता अकेले-अकेले चलकर, सारी परेशानियों से अकेले-अकेले लड़कर भी ऐसा आत्मविश्वास और ऐसी शक्ति तो उसने अपने भीतर कभी महसूस नहीं की, जो आज अपने को पूरी तरह डॉक्टर के हवाले करके वह महसूस कर रही थी। अपने को पूरी तरह देकर, निर्द्वंद्व भाव से समर्पित करके आदमी कितना कुछ पा लेता है।"

टास्क शकुन ने अपने नए जीवन को किस प्रकार जीने का निर्णय लिया?

दसवाँ अध्याय

शकुन और डॉक्टर जोशी की शादी एक दिन साधारण ढंग से संपन्न हो गई। पहली बार उसे उसी दिन मालूम हुआ कि मम्मी डॉक्टर जोशी के साथ शादी कर रही हैं। दूसरे लोगों से भी उसने यह चर्चा सुनी। टीटू की अम्मा ने घर आकर मम्मी को बधाई दी।

मम्मी बंटी को डॉक्टर जोशी के घर ले जाना चाहती थी। बंटी को कुछ भी अच्छा न लगा। मम्मी बार-बार उसे आश्वस्त करती हुई कह रही थी, "तुझे अच्छा लगेगा बंटी, वहाँ बहुत अच्छा लगेगा बेटे!"

इधर फूफी भी मम्मी की शादी से प्रसन्न नहीं थी। एक दिन उसने मम्मी के पास आकर कहा कि वह हरिद्वार जाना चाहती है। वहाँ जाने के लिए उसकी व्यवस्था कर दी जाए। मम्मी ने उससे कारण जानना चाहा, तब उसने उत्तर में कहा कि "जवानी यों ही अंधी होती है बहूजी, फिर बुढ़ापे में उठी हुई जवानी। महासत्यानाशी! साहब ने जो किया तो आपकी मिट्टी-पलीद हुई और अब आप जो कर रही हैं, इस बच्चे की मिट्टी-पलीद होगी। चेहरा देखा है बच्चे का? कैसा निकल आया है? जैसे दिन-रात घुलता रहता हो भीतर ही भीतर।" मम्मी अब और अधिक अपमान बर्दाश्त नहीं कर सकती, इसलिए उसने फूफी के जाने की व्यवस्था कर दी।

फूफी हरिद्वार चली गई। लेकिन उसके चले जाने से बंटी के मन में एक प्रकार की पीड़ा थी। उसे लग रहा था कि उसे कम-से-कम फूफी का तो साथ था, जिससे अब वह वंचित हो गया। दूसरे दिन स्कूल से वापस लौटने के बाद उसे फूफी बहुत अधिक याद आई। इधर मम्मी बंटी को बार-बार यह समझाने का प्रयत्न करती कि डॉक्टर साहब उसे कितना सारा प्यार करते हैं, वहाँ उसे बहुत अच्छा लगेगा।

बंटी के मन में डॉक्टर जोशी के घर जाने का उत्साह बिल्कुल न था। उसे बार-बार अपने पापा की याद सता रही है। अचानक उसके मन में ख्याल आया कि उसके पापा तो इस घर का पता जानते ही नहीं। अब अगर वह आयेंगे तो कैसे खबर भेजेंगे। इस प्रकार वह और भी अधिक चिंतित और दुखी हो उठता है। जब डॉक्टर जोशी के यहाँ जाने के उद्देश्य से उन्होंने अपना घर छोड़ा तब सभी अंदर से दुखी थे, किंतु बंटी के मन में न तो खुशी थी न दुख था।

ग्यारहवाँ अध्याय

मम्मी के स्वागत में डॉक्टर जोशी की कोठी ऐसे चमचमा रही थी, जैसे कल ही बनी हो। इसके पहले वह धूल-भरी थी। बंटी पहले भी एक बार मम्मी के साथ यहाँ आ चुका है। बंटी जब भी डॉक्टर जोशी को मम्मी के कंधे पर हाथ रखते देखता है, उसे अच्छा नहीं लगता। इसे देखकर वह मम्मी पर से नजर हटा लेता है।

मम्मी और बंटी के स्वागत के लिए डॉक्टर जोशी की कोठी अत्यंत आकर्षक ढंग से सजाई गई है—बड़ा-सा बेडरूम,

नोट

हल्की नीली दीवारों पर गहरे नीले पर्दे, सलेटी रंग का कारपेट, नया फर्नीचर, नई अलमारियाँ, नयी सजावट। सब कुछ अत्यधिक आकर्षक लग रहा था। मम्मी ने बंटी से पूछा कि बेटा, तुम्हें कैसा लगा कमरा, बताओ तो, पसंद आया? बंटी ने प्रसन्न मुद्रा में उत्तर दिया–"अच्छा लगा।" यहाँ के खाने की व्यवस्था को देखकर बंटी को दुख हुआ। उसे अपने घर की याद आ गई। कितने स्नेह से फूफी उसे खाना खिलाया करती थी।

इसी बीच डॉक्टर जोशी के एक मित्र उनके घर आए। उन्होंने बंटी से उसका नाम पूछा। उसने उत्तर दिया–"अरुण बत्रा।" उसके इस उत्तर को सुनकर मम्मी चौंक गई और घूर-घूरकर उसकी ओर देखने लगी। बंटी यही सोच रहा था कि वह तो बत्रा ही रहेगा, मम्मी की तरह वह नहीं बदलेगा। डॉक्टर जोशी के घर आकर मम्मी के जीवन में एक नया उत्साह आ गया था लेकिन एक बंटी था, जो यहाँ अपने-आपको 'एडजस्ट' न कर पाने के कारण एक प्रकार के अजनबीपन की मन:स्थिति से गुजर रहा था। इतना जरूर था कि जोत से उसकी दोस्ती हो गई थी।

डॉक्टर जोशी के घर में रहकर बंटी अपने आपको उपेक्षित और सबसे कटा-कटा महसूस करता है। इससे वह सबसे अपरिचित होता जा रहा है। यहाँ तो उसे आसमान भी अपरिचित लगने लगा है। ऐसी स्थिति में उसे बार-बार फूफी की याद आने लगती है। उसके मन में यही भाव बार-बार काम कर रहा है कि यह घर डॉक्टर साहब, जोत और अमि का है। इसलिए यहाँ से वह वापस चले जाने की बात सोच रहा है।

मम्मी और डॉक्टर जोशी, दोनों इस बात का भरसक प्रयत्न करते हैं कि बंटी इन बदलती हुई परिस्थितियों में अपने आपको ढाल ले, अभियोजित कर ले, किंतु ऐसा नहीं हो पाता। अपने होते वह मम्मी पर किसी और के अधिकार को सहन नहीं कर सकता। रात को सोते समय बंटी को डर लगता है और मम्मी के साथ सोता है लेकिन मम्मी है कि डॉक्टर जोशी के साथ वैवाहिक जीवन का सुख भोगना चाहती है। इस समय बंटी की मन:स्थिति अद्‌भुत हो जाती है। उसकी इस मन:स्थिति का विश्लेषण करती हुई लेखिका कहती है कि "बंटी को लगा घर से चला था तो बीच रास्ते में आकर उसका अपना घर और बगीचा छूट गया था। यहाँ आकर मम्मी भी छूट गई।" पहले ही दिन मम्मी ने बंटी को अन्य बच्चों के साथ सुला दिया और स्वयं डॉक्टर जोशी के कमरे में सोने चली गई। बंटी की आँखें जैसे ही खुली और उसने अपने-आपको अकेला पाया, वह उठ खड़ा हुआ और मम्मी के दरवाजे को जोर-जोर से पीटने लगा। रोते-रोते यह बेहाल हो गया। मम्मी ने दरवाजा खोलकर उसे अपनी छाती से लगा लिया। थोड़ी देर बाद वह 'नार्मल' हो पाया। उसने आँखें बंद कर लीं। मम्मी ने समझा कि बंटी सो गया है, तो उसने डॉक्टर जोशी से कहा कि "सुनो, तुम उठकर कपड़े पहन लो। पता नहीं, यह सवेरे जल्दी उठ जाए तो अजीब स्थिति पैदा हो जाएगी।" बंटी ने देखा कि डॉक्टर एकदम नंगे थे, उसकी आँखें फटी रह गई। बाद में उसने देखा कि मम्मी भी हाउस कोट के नीचे उसी रूप में थी। मन ही मन उसने दोनों को बेशर्म कहा और छी: छी: कर बैठा। उसकी आँखों के सामने बार-बार वही दृश्य घूमता है।

बारहवाँ अध्याय

सवेरा होने पर उसकी आँखों के सामने डॉक्टर जोशी और मम्मी की नंगी आकृतियाँ तैर गईं। रात के उस दृश्य को वह चाहकर भी भूल न सका। अमि और जोत स्कूल जाने के लिए तैयार हो रहे थे। बंटी भी तैयार होकर स्कूल चला गया। लेकिन स्कूल में भी वह उसी दृश्य के विषय में बार-बार सोच रहा था। पढ़ने में उसका मन जरा भी नहीं लग पा रहा था। घर में जब बाथरूम में वह स्नान करने गया तो अपने अंग को अपने हाथ में लेकर अपनी तुलना डॉक्टर जोशी के साथ करने लगा। एक विचित्र अपराध भावना ने तब उसे घेर लिया। अगली रात भी वैसा ही हुआ। मम्मी डॉक्टर जोशी के कमरे में सोने के लिए चली गई, वह बाहर बरामदे में रहा। मम्मी ने यह सोचकर कि बंटी रात को न डरे, बत्ती जलाकर छोड़ दी। बंटी के मन में पहली रात वाली नंगी आकृतियाँ बार-बार घूमती रहीं। कभी भी कहीं भी पेशाब कर देता था। कल्पना में वह भी पेशाब कर बैठा और उसने देखा कि उसका बिस्तर वास्तव में भीग गया था। मन ही मन वह लज्जित हो उठा। बिस्तर छोड़ने की उसे हिम्मत नहीं हो रही थी। किंतु मम्मी ने किसी तरह उसकी लाज बचाई।

दूसरे दिन सुबह डॉक्टर जोशी द्वारा मम्मी की इत्र की शीशी को लेकर पूरे घर में हंगामा मच गया। मम्मी ने तीनों बच्चों से शीशी के विषय में पूछा, किंतु शीशी गिराने का अपराध किसी ने स्वीकार नहीं किया। मम्मी ने बंटी से भी पूछा और उसने नकारात्मक उत्तर दिया। बार-बार उसे लग रहा था कि शक उसी पर किया जा रहा है।

बंटी जब स्कूल से वापस घर लौटता है, तब मम्मी उसे बताती है कि उसके लिए नई अलमारी लगवा दी है, लेकिन उसे यह पसंद नहीं आती, क्योंकि उसमें से दवाइयों की गंध आ रही है। वह इस बात का पूरा विरोध करता है कि उसे यह अलमारी नहीं चाहिए।

मम्मी बंटी से आग्रह करती है कि वह डॉ. जोशी को पापा क्यों नहीं कहता? वह इसे अस्वीकार करते हुए कहता है कि उसके पापा तो कलकत्ता में रहते हैं। मम्मी उसके इस उत्तर से दुखी और गंभीर हो जाती हैं। बंटी अपनी छोटी-छोटी बातों पर झूठ बोलने लगा था। इन सारी स्थितियों से मम्मी अब बहुत निराश हो गई थी। उसके मन में अब बात साफ हो गई थी कि बंटी को वह वैसा नहीं बना सकती, जैसा वह चाहती थी।

अमि ने बंटी की किताबों को अपनी मेज से उठाकर फेंक दिया। बंटी इस अपमान को बर्दाशत नहीं कर पाया और उसने अमि को दो थप्पड़ जड़ दिये। अमि ने जोर से बंटी की बाँह पर दाँत भरकर काट लिया। मम्मी ने बीच में आकर उनके झगड़े का निपटारा कराया। बंटी ने मन ही मन फैसला किया कि कल वह अपने पापा को चिट्ठी लिखेगा।

> *टास्क* डॉ. जोशी के घर जाकर बंटी के मन पर क्या प्रभाव पड़ा?

तेरहवाँ अध्याय

इस नये वातावरण से बंटी का मन बुरी तरह से घुटने लगा। अब सब ओर से वह अपने आपको कटा हुआ महसूस करने लगा। न तो उसका मन अब स्कूल में लग पाता है, न घर में। वह राजकुमार की जादू-भरी कहानी को याद करके अपने दुख को कम करने की कोशिश करता।

डॉक्टर साहब ने बंटी के लिए एक नई मेज मँगवाई, किंतु उसे उनकी कृपा नहीं चाहिए। वह मेज की बजाय जमीन पर पढ़ना पसंद करेगा। किसी भी मूल्य पर उपेक्षित जीवन उसे स्वीकार्य नहीं। वह कभी भी इस बात को नहीं भूल पाता कि जब वह मम्मी के साथ अकेला रहता था तो मम्मी उसके अतिरिक्त किसी और के बारे में नहीं सोचती थी। तब मम्मी पर उसका पूर्ण अधिकार था। लेकिन डॉक्टर जोशी के बीच में आने से उसके एकाधिकार का हनन हो गया है। अब उसे अपनी इन सभी समस्याओं का समाधान एकमात्र अपने पापा में दीख रहा था। बंटी की इस मन:स्थिति को डॉक्टर जोशी पूरी तरह समझते हैं, इसलिए वे किसी भी तरह बंटी को समझाना-बुझाना चाहते हैं। किंतु वह इतना ‘पजेसिव’ हो गया था कि अब किसी की भी कोई बात सुनने को तैयार नहीं होता।

एक बार डॉक्टर साहब ने उसे अकेले कार में घुमाने का वचन दिया, किंतु किसी आवश्यक कार्य में व्यस्त हो जाने के कारण ऐसा संभव नहीं हो सका। इसके परिणामस्वरूप वह घर के सामानों को इधर-उधर फेंकने लगा। मम्मी के लिए ये बातें सहनशक्ति की सीमा से बाहर होने लगी, तब उन्होंने बंटी को डाँटते हुए कहा–“कोई बात नहीं समझेगा। मौका बे मौका कुछ नहीं देखेगा–बस!”

एक दिन बंटी जोत से पूछता है कि क्या उसे अपनी मम्मी की याद नहीं आती है? उसने कहा–“थोड़ी-थोड़ी आती है।” बंटी जोत से अपने पापा की खूब प्रशंसा करता है। तभी मम्मी उससे पूछती है कि क्या पापा को चिट्ठी लिखेगा? उसने ‘हाँ’ में उत्तर दिया।

बंटी ने अब अनेक प्रकार से मम्मी को सताना शुरू किया। एक दिन स्कूल से लौटकर सीधे अपने पुराने मकान पर

नोट

चला गया और बगीचे में बैठा रहा, ताकि मम्मी उसे न पाकर परेशान हों, उसकी खोज करें। अपने आहत मन में सोचता-विचारता, हार-थक कर वह वहीं पर सो गया। आखिर, मम्मी का मन दुख से तड़प उठा। उसने बंटी से कहा—"बोल, बोल, तू क्यों यह सब करने पर तुला हुआ है? क्यों अपनी और मेरी जिंदगी में जहर घोलने पर तुला हुआ है? कौन-सा कष्ट है तुझे यहाँ पर? क्या तकलीफ है? रोज एक हंगामा खड़ा कर देता है, रोज एक तमाशा? कोई कब तक सहेगा और क्यों सहेगा?" इन सारी परिस्थितियों से वह ऊब गई। बंटी को उसने घर ले जाकर क्रोध में झटक दिया। इधर बंटी के मन में बार-बार पापा की याद आने लगी। मम्मी ने उसे डाँटते हुए कहा कि यदि तेरे पापा तुझे अपने पास बुलाना चाहते हैं तो हम भेज देंगे, लेकिन इस प्रकार रोज-रोज हंगामा करने से क्या है? बंटी अब स्वयं भी यह महसूस करने लगा है कि उसकी मम्मी यह भली-भाँति जान गयी हैं कि उसका मन यहाँ बिल्कुल नहीं लग रहा है। वह बैठे-बैठे स्वप्न ले रहा है। उसने देखा कि गाड़ी नहीं चल रही है। मम्मी भी कुछ नहीं बोल रही हैं। यह सब उसका भ्रम है। उसके अपने विचार ही उसे भटका रहे हैं।

चौदहवाँ अध्याय

बंटी अपने पापा की याद में बराबर खोया-सा रहने लगा। ऐसा लग रहा था जैसे पापा की याद ने उसे विक्षिप्त-सा बना दिया हो। सब कुछ वह शांत-भाव से सहन करता जा रहा है। वह सहम-सहम कर अपना समय काट रहा है। कभी तो उसका मन पेंटिंग करने का होता तो देखता कि रंग की बहुत सारी शीशियाँ टूटी पड़ी हैं।

इधर मम्मी की मनःस्थिति भी बिल्कुल बदल गई है। वह भी जैसे ऊब गई हो। यह एक विचित्र विडम्बना ही थी कि जो मम्मी हर पल बंटी पर छाई हुई रहती थी, वही अब उसे अपने मार्ग का व्यवधान मानने लगी है। कल बंटी के स्कूल से वापस लौटने पर मम्मी घर पर ही थी। मम्मी ने उसे कपड़े बदलने के लिए कहा। बंटी को ऐसा लगा कि मम्मी कुछ ज्यादा ही परेशान हैं। मम्मी ने बंटी के पापा के नाम लिखे सारे पत्रों को निकालकर दिखाते हुए पूछा कि उनमें से क्या कोई चिट्ठी उसने पापा को भेजी है? वह मम्मी की बातों का उत्तर दिए बिना शांत बना रहता है। तत्पश्चात् मम्मी ने उसे बताया कि तुम्हारे पापा तुम्हें ले जाना चाहते हैं। अगर तुम यहाँ खुश नहीं हो तो रोकना भी ठीक नहीं है।

बंटी इस बात से अवगत हुआ कि उसके पापा आ रहे हैं। उनके आगमन की सूचना मिलने पर डॉक्टर जोशी बंटी को लेकर स्टेशन के लिए चल पड़े। बंटी को जाने के लिए मम्मी ने ही तैयार किया था। डॉक्टर साहब ने मम्मी से पूछा कि तुम स्टेशन नहीं चलोगी? मम्मी ने जाना अस्वीकार कर दिया।

स्टेशन पहुँचने पर बंटी ने अपने पापा को पहचाना और उनके समीप चला गया। डॉक्टर जोशी बंटी के पापा को अपने घर पर ही लाना चाहते थे, किंतु वह तत्काल उनके साथ चलने के लिए सहमत न हो सके। उन्होंने शाम चार बजे पहुँचने की बात कही। नियत समय पर वह डॉक्टर जोशी के घर पहुँच गए और मम्मी तथा डॉक्टर जोशी के साथ काफी देर तक बातचीत की। मम्मी और पापा में परस्पर औपचारिक बातें हुईं। पापा ने बंटी से पूछा कि "बंटी, हमारे साथ कलकत्ता चलोगे न? मैं तुम्हें लेने आया हूँ।" बंटी तो ऐसे प्रस्ताव की प्रतीक्षा कर रहा था। उसने अपनी स्वीकृति दे दी। मम्मी भी इस बार उसके मार्ग में कोई रुकावट न डाल सकी। बंटी ने मम्मी से कहा कि वह फिर कभी उसके पास नहीं आएगा। पापा के पास ही हमेशा रहेगा। डॉक्टर साहब के घर में होने के कारण मम्मी रो भी नहीं सकी। बंटी सोचता था कि कलकत्ता जाने की बात से मम्मी उसे रोकेगी, दुखी होगी और रोयेगी, किंतु ऐसा कुछ भी नहीं हुआ। इससे बंटी का मन और भी आहत हो गया। मम्मी अब मानसिक रूप से बंटी को उसके पापा के पास भेजने के लिए आतुर थी। वह चाहती थी कि जाते समय बंटी को कुछ दे दे, लेकिन वह यह भी जानती थी कि वह कुछ भी लेने से इंकार कर सकता है। बंटी मन ही मन सोचता था कि कोई तो (कम से कम उसकी मम्मी तो) उसे जाने से रोके, "पर कुछ नहीं कुछ भी नहीं कहा गया उससे। वह आँसू पीता हुआ इधर-उधर घूमता रहा। मम्मी सामान जमाती गई। जैसे-जैसे समय बीतता गया, आँसू भी जैसे भीतर जाकर जम गए।" उसे सबसे बड़ा कष्ट इस बात से था कि किसी भी व्यक्ति ने एक बार भी उसे कलकत्ता जाने से नहीं रोका। आखिर पापा आ गए

और वह दौड़कर उनके पास चला गया। उसे विदा करने उसकी मम्मी भी आई। मम्मी ने उसे कुछ पैकेट दिए, जिसे निकालकर उसने अलग रख दिया। मम्मी ने बंटी के इस उपेक्षापूर्ण व्यवहार को देखा, फिर भी वह मौन बनी रही। स्टेशन पहुँचने के बाद भी बंटी के मन में ऐसी आशा थी कि "शायद मम्मी आए और रोकर उसे कहे कि बंटी, मत जा बेटे, मैं तेरे बिना रह नहीं सकूँगी।" लेकिन उसकी आशा निष्फल हो गई। वह अपने पापा के साथ गाड़ी में जा बैठा और गाड़ी स्टेशन छोड़ चली।

पापा बंटी को लेकर कलकत्ता पहुँच गए। वह बैठा हुआ पापा को देख रहा है। अंदर से वह घबराहट महसूस कर रहा था।

स्व-मूल्यांकन (Self-Assessment)

निम्नलिखित कथनों में सत्य अथवा असत्य की पहचान करें

(State Whether the following statements are True or False) :

7. बंटी के मन-मस्तिष्क में उसकी मम्मी के दो रूप काम करते थे।
8. शकुन के लिए अपने पति अजय को भूलना एक आसान काम था।
9. बंटी को कबड्डी, हॉकी और क्रिकेट जैसे खेलों का बहुत शौंक था।

पंद्रहवाँ अध्याय

बंटी के अपने पापा के साथ चले जाने के बाद शकुन ने ठंडे मन से, शांत भाव से इन सारी स्थितियों पर विचार करना शुरू किया। वह सोचती है कि बंटी स्वयं जाना चाहता था या अजय ही उसे अपने साथ ले जाना चाहता था। बंटी को उसने इस घर के अनुकूल बनाने का यथासंभव हर प्रयास किया किंतु "इतनी कोशिश करने पर भी वह बंटी को इस घर में रचा-पचा न सकी। वह इसे अपना घर समझा ही नहीं।"

अजय के साथ बंटी भी उसके जीवन से दूर चला गया। उसे याद आता है कि जब अजय ने बंटी को अपने पास रखने का प्रस्ताव भेजा था तो उसकी तत्काल प्रतिक्रिया मिश्रित ढंग की थी। अजय के उस पत्र को लेकर शकुन और डॉक्टर जोशी के बीच काफी बातचीत हुई थी। अजय के यहाँ आ जाने के बाद भी शकुन कुछ स्पष्ट निर्णय लेने में अक्षम रही। कभी-कभी वह सोचा करती थी कि बंटी ने कलकत्ता जाने का निर्णय भावुकता और आवेश में लिया होगा और अलग होते समय शायद अपने पापा के साथ जाने से मना कर देगा। लेकिन ऐसा कुछ भी नहीं हुआ।

शकुन बंटी के कारण दुखी है और उसे भेजते समय भी शायद उसने यही सोचा था कि जैसे भी हो बंटी खुश रहे। शकुन सोचने लगी कि बंटी उसके और अजय के बीच सेतु न बन सका। इसीलिए शायद उसे भी कट जाना पड़े।

इसी बीच शकुन को याद आता है कि बंसीलाल की बहू के पूछने पर उसने उत्तर दिया था—यह इनके पहले वाले आदमी का बच्चा है। इसके अतिरिक्त यह भी कहा था कि यही दहेज में लेकर आयी है। बंटी के साथ जुड़ी सारी यादें शकुन की स्मृति में ताजा हो उठी हैं। फूफी ने भी एक बार उसे कहा था कि "मत इतना सिर चढ़ाओ बहू जी! नहीं, एक दिन आप ही दुखी होंगी।" एक-सी ही तो वे सारी बातें थीं किंतु उनके अर्थ बदल गए क्योंकि शायद संदर्भ बदल गए थे। उस घटना के बाद एक प्रकार से सब सोचने लगे थे, लेकिन सब अपने-अपने बारे में, अपने-अपने ढंग से सोच रहे थे। इसलिए लेखिका का यह कहना सर्वथा उचित प्रतीत होता है कि "सब अपने-अपने अहं अपनी-अपनी कुंठाओं के संदर्भ में ही सोचते रहे। बंटी के संदर्भ में कभी सोचा ही नहीं।"

बंटी यहाँ खुश न था। यही कारण था कि इस घर में वह एक असाधारण बालक की तरह व्यवहार किया करता था। शकुन भी अत्यंत व्याकुल और व्यथित मनोदशा में थी। बार-बार उसे बंटी की याद आ रही थी।

नोट

टास्क 'आपका बंटी' के माध्यम से भंडारी जी समाज की कौन-सी बुराई की ओर हमारा ध्यान आकर्षित कराना चाहती हैं?

सोलहवाँ अध्याय

बंटी अपने पापा के साथ रेल के डिब्बे में बैठकर जा रहा है कलकत्ता के विषय में न जाने, उसने क्या-क्या और कैसी-कैसी कल्पनाएँ अपने मन में संजो रखी थीं। किंतु यथार्थ की आग में जलकर वे सब राख हो गईं।

पापा बंटी के दुख को समझ नहीं सकते। उसने सरककर खिड़कियों पर दोनों हथेलियाँ रखीं और बाहर के दृश्य देखने लगा। उसे ऐसा लगा, जैसे सबकुछ पीछे छूट गया है।

पापा बंटी को घर ले गए। घर पहुँचकर अजय ने बंटी का परिचय चीनू से कराया। चीनू अभी बहुत छोटा था। उसे ऐसा लगा, जैसे यहाँ भी ऐसा कुछ हैं, जो उसके और पापा के बीच दीवार बनकर खड़ा है। उसने पापा की नयी पत्नी मीरा को देखा और मन ही मन कहा कि यह मेरी मम्मी नहीं है, इसे मैं मम्मी नहीं कह सकता। पापा की नयी पत्नी ने बंटी का बहुत आदर-सत्कार किया, स्नेह दिया। सामने वाले चेहरे में दीपा आंटी का चेहरा घुल-मिल गया। बंटी सोचने लगा कि पापा रास्ते में जिस मीरा की बात कर रहे थे, शायद वह यही है। जब उसने छोटे चीनू को देखा तो उसे याद आया कि डॉक्टर जोशी के पुत्र अमि को लेकर उससे कहा गया था, "बंटी, यह तुम्हारा छोटा भाई है।" यहाँ आकर भी वह कुछ ऐसा ही अनुभव कर गुमसुम बन गया। यहाँ भी पापा का एकनिष्ठ प्यार चाहिए था, जो नहीं मिल सकता था। वर्षो साथ रहने के बावजूद इसी एकनिष्ठ प्यार को प्राप्त करने के लिए मम्मी से वह अलग हुआ था। इस एकनिष्ठ प्यार को न तो उसे उसकी मम्मी दे पायी, न पापा दे पा रहे थे। प्रतिपल वह खोया-खोया-सा, सहमा-सहमा-सा रहने लगा। इस नये वातावरण में भी वह अपने-आप से उतना ही कटा हुआ महसूस कर रहा था, जितना कि मम्मी के साथ रहते हुए महसूस करता था।

बंटी स्कूल में दाखिले के लिए परीक्षा देने जाता है तो ठीक उत्तर नहीं दे पाता। वास्तव में 'नर्वस' हो जाने के कारण ठीक-ठीक उत्तर नहीं दे पाता, जिसके फलस्वरूप स्कूल में उसका दाखिला नहीं हो पाता। अजय ने सोच लिया था कि अगर बंटी को स्कूल में दाखिला नहीं मिल पाता तो उसे होस्टल में रख देंगे। इसलिए कि वहाँ होस्टल में अपनी उम्र के बच्चों के साथ खेल-कूदकर अपने व्यक्तित्व का सहज विकास कर पाएगा। होस्टल का नाम सुनकर और भी कट जाता है। वह सोचने लगा कि "वह पापा से कहेगा कि पापा उसे वापस मम्मी के पास भेज दें। वह यहाँ रहेगा भी नहीं, पढ़ेगा भी नहीं, वह अपने स्कूल में ही पढ़ेगा।"

रात को जब सोने का समय आया तो उसके सामने वही पुरानी समस्या, जो डॉक्टर जोशी के यहाँ थी, फिर से उसके समक्ष आ गई। पापा ने पूछा, "अकेले में डरोगे तो नहीं, सो जाओगे न?" बंटी ने सहमते हुए 'हाँ' तो कर दी, किंतु जैसे ही पापा और मीरा ने अपने कमरे की बत्ती बुझाई तो उसे डॉक्टर जोशी के घर की वह रात स्मरण हो आयी, जब उसने उन्हें 'नंगा' देखा था।

बंटी के पापा ने कहा कि वह मीरा को मम्मी कहकर पुकारे। उसे मम्मी की वह बात याद हो आयी, जब उसने भी इसी प्रकार डॉक्टर जोशी को पापा कहकर पुकारने की बात कही थी। तब तो उसने बड़े ही गर्वित भाव से कहा था कि उसके पापा कलकत्ता में रहते हैं और डॉक्टर साहब को वह 'पापा' कभी नहीं कह सकता। किंतु यहाँ यह पापा का प्रतिवाद न कर मौन बना रहा। रात को सोते में बिस्तर में ही उसे पेशाब निकल आया। वह भीतर ही भीतर लज्जा का अनुभव कर रहा था। इसी प्रकार पहले भी एक दिन जोशी के यहाँ उसका पेशाब निकल आया था, तब मम्मी ने उसकी लाज बचायी थी। पापा ने भी कुछ कहा नहीं, लेकिन वह अपनी अपराध भावना से ग्रस्त हो गया।

यहाँ आकर भी बंटी को निराशा ही हाथ लगती है। वह खाना भी नहीं खा पाता। उससे उसके पापा उसकी उदासी के बारे में पूछते हैं। उसने पापा की ओर देखा। उसे बताया जाता है कि वह होस्टल में पढ़ने के लिए जा रहा है।

बंटी विचारों में लीन है। अंदर से वह सोच रहा है कि न पापा मिले, न मम्मी रही। उसके पापा कह रहे हैं कि तुम्हें होस्टल अच्छा लगेगा, वहाँ तेरी उम्र के बच्चे हैं। अब वह नये सामान के साथ नयी जगह जा रहा है। गाड़ी के हिचकोलों के साथ ही वह सो गया। उसे लगा जैसे, उसके पापा कह रहे हों कि 'वह सामने तुम्हारा होस्टल है।' गाड़ी स्टेशन पर पहुँचती है और पापा उसे जगाते हैं। वह सारी रात कल्पनाओं के घेरे में कैद रहता है, लेकिन अब वास्तविकता उसके सामने थी। इसे अब होस्टल में जाना था, इसलिए दुख से उसके नेत्र आँसुओं में डूब गए। लेखिका ने उसकी विषम स्थिति का चित्रण करते हुए लिखा है कि "पता नहीं, क्या हुआ कि इतनी देर में मन पर रखा हुआ पत्थर जैसे एकाएक दरक गया। और ढेर-ढेर आँसू उफन आए। भीतर की आँखों में ही नहीं, बाहर की आँखों में भी।" वैसे ट्रेन में ही उसे पापा ने बताया था कि 'देखो, वह सामने तुम्हारा होस्टल है।' उसने गाड़ी से उतरते हुए अजनबी लोगों के चेहरे धुँधले होते हुए देखे और पापा का चेहरा भी उनके साथ ही धुँधलाकर रह गया।

इस प्रकार भरे-पूरे संसार में भी बंटी सर्वथा अकेला हो गया है। मम्मी और पापा दोनों में कोई में कोई भी उसका 'अपना' न बन सका। मम्मी डॉक्टर जोशी के और पापा मीरा के प्रेम में खो जाते हैं और बंटी की चिंता कोई भी नहीं कर पाता। इस प्रकार माता-पिता के होते हुए भी वह 'अनाथ' और 'असहाय' बनकर बिखर जाता है।

20.3 सारांश (Summary)

- मन्नू भंडारी सृजन चेतना की धनी हैं। उन्होंने अनेक मौलिक रचनाओं का सृजन किया। उनकी रचनाओं पर उनके व्यक्तित्त्व की छाप स्पष्ट रूप से दिखाई पड़ती है क्योंकि वे रचनाएँ सधी हुई कलाकार की अमूल्य निधि हैं।
- बंटी के मन-मस्तिष्क में उसकी अपनी माँ के दो रूप काम करते हैं—एक, मम्मी का और दूसरा, प्रिंसिपल का। मम्मी-रूप में वह (शकुन) ममतामयी है, लेकिन जब वही मम्मी कुर्सी पर बैठती है तो उसका चेहरा अजीब तरह से सख्त हो जाया करता है।
- बंटी एक संवेदनशील बालक है। वह भीतर से स्थिति को महसूस करता है। इसलिए मम्मी को अधिक दुख नहीं पहुँचाना चाहता। ऊपर से वह शांत रहता है, किंतु वह भीतर ही भीतर सोचता रहता है।
- बंटी इस बात से पूरी तरह अवगत हो चुका है कि वकील चाचा उसके पापा के पास से होकर आते हैं और मम्मी-पापा के बीच संदेश का आदान-प्रदान करते हैं।
- पिछले दो-तीन सालों से शकुन (बंटी की मम्मी) को यह अकेलापन बुरी तरह काटने लगा है। छुट्टियों में कॉलेज बंद हो जाने पर समय काटना अत्यंत कठिन हो जाएगा। कॉलेज के कार्यों में व्यस्त रहकर वह संतोष कर लेती है।
- बंटी की माँ शकुन के लिए अजय को भूल पाना बड़ा मुश्किल है। कुछ दिनों के बाद उसने मन ही मन समझ लिया था कि अब किसी प्रकार की आशा करना बेकार है।
- शकुन के मन में अजय के प्रति गहरे प्रतिशोध का भाव है। जबसे उसे अजय और मीरा के आपसी संबंध का पता चला है, वह भी डॉक्टर जोशी के संबंध में बहुविध सोचने लगी है।
- इन सारी गतिविधियों से बंटी ने समझ लिया कि पापा से मम्मी की लड़ाई हो गई है और अब फिर इनमें परस्पर दोस्ती हो पाना कठिन है। इसलिए मम्मी को प्रसन्न रखने की जिम्मेदारी अब उसी के ऊपर है।
- डॉक्टर जोशी ने अपनी कार में आगे मम्मी को बिठाया और बंटी को पीछे। यह बात उसे बड़ी अजीब लगी कि मम्मी डॉ. जोशी से सटकर बैठी हुई हैं। बंटी अपने और मम्मी के बीच किसी तीसरे व्यक्ति की स्थिति सहन नहीं कर सकता था।
- मम्मी अब किसी भी मूल्य पर डॉक्टर जोशी को अपनाना चाहती है। अब यह सोचने के लिए भी विवश हो जाती है कि बंटी को लेकर उसने अपने जीवन को नरक बना लिया है। उसके लिए उसने अपने अरमानों का खून कर दिया है।

- शकुन और डॉक्टर जोशी की शादी एक दिन साधारण ढंग से संपन्न हो गई। पहली बार उसे उसी दिन मालूम हुआ कि मम्मी डॉक्टर जोशी के साथ शादी कर रही हैं। दूसरे लोगों से भी उसने यह चर्चा सुनी।
- बंटी अपने पापा की याद में बराबर खोया-सा रहने लगा। ऐसा लग रहा था जैसे पापा की याद ने उसे विक्षिप्त-सा बना दिया हो। सब कुछ वह शांत-भाव से सहन करता जा रहा है। वह सहम-सहम कर अपना समय काट रहा है।
- बंटी विचारों में लीन है। अंदर से वह सोच रहा है कि न पापा मिले, न मम्मी रही। उसके पापा कह रहे हैं कि तुम्हें होस्टल अच्छा लगेगा, वहाँ तेरी उम्र के बच्चे हैं। अब वह नये सामान के साथ नयी जगह जा रहा है।
- भरे-पूरे संसार में भी बंटी सर्वथा अकेला हो गया है। मम्मी और पापा दोनों में कोई में कोई भी उसका 'अपना' न बन सका। मम्मी डॉक्टर जोशी के और पापा मीरा के प्रेम में खो जाते हैं और बंटी की चिंता कोई भी नहीं कर पाता।

20.4 शब्दकोश (Keywords)

1. अमूल्य –बेशकीमती
2. निधि – खज़ाना
3. प्रतिभा – योग्यता
4. प्रतिभा – योग्यता
5. आग्रह – जिद, हठ
6. अपमानित – बेइज्जत
7. यातना – सज़ा
8. दस्तखत – हस्ताक्षर
9. आकांक्षा – इच्छा
10. आशा – उम्मीद
11. प्रबल – दमदार
12. प्रतिशोध – बदला
13. सुप्त – सोई हुई।

20.5 अभ्यास प्रश्न (Review Questions)

1. 'मन्नू भंडारी' की लेखन कुशलता पर एक लेख लिखिए।
2. 'आपका बंटी' की कथावस्तु का संक्षेप में वर्णन कीजिए।
3. बंटी को मम्मी के कितने रूप दिखाई देते हैं?
4. मम्मी की शादी की बात सुनकर फूफी ने क्या प्रतिक्रिया व्यक्त की?
5. डॉ. जोशी ने मम्मी का स्वागत किस प्रकार किया?
6. 'आपका बंटी' के दुखदायी अंत का वर्णन अपने शब्दों में कीजिए।

उत्तर : स्व-मूल्यांकन (Answers : Self-Assessment)

1. प्रतिभा
2. प्रिंसिपल
3. सर्किट
4. (ग)
5. (ख)
6. (क)
7. सत्य
8. असत्य
9. असत्य।

20.6 सन्दर्भ पुस्तकें (Further Readings)

पुस्तकें आपका बंटी–मन्नू भंडारी, राधाकृष्ण प्रकाशन (प्रा.) लि., नई दिल्ली।

नोट

इकाई–21: 'आपका बंटी' का उद्देश्य एवं मूल समस्या

अनुक्रमणिका (Contents)

उद्देश्य (Objectives)

प्रस्तावना (Introduction)

21.1 'आपका बंटी' उपन्यास का उद्देश्य

21.2 'आपका बंटी' उपन्यास की मूल समस्या

21.2.1 तलाक की समस्या

21.2.2 संतान की मानसिक यंत्रणा की समस्या

21.2.3 अन्तर्द्वन्द्व और कुण्ठाग्रस्त जीवन में संघर्ष की समस्या

21.2.4 संत्रास, घुटन और टुटन की समस्या

21.3 सारांश (Summary)

21.4 शब्दकोश (Keywords)

21.5 अभ्यास प्रश्न (Review Questions)

21.6 सन्दर्भ पुस्तकें (Further Readings)

उद्देश्य (Objectives)

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् विद्यार्थी योग्य होंगे–

- उपन्यास के उद्देश्य को समझने में;
- तलाक एवं संतान की मानसिक यन्त्रणा की समस्याओं को जानने में;
- निजी जीवन में संघर्ष एवं घुटन इत्यादि की समस्या पर प्रकाश डालने में;
- कथानक की संक्षेप में व्याख्या करने में।

प्रस्तावना (Introduction)

मन्नू भंडारी का 'आपका बंटी' आज के परिवेश में लिखा गया एक मनोवैज्ञानिक उपन्यास है। आधुनिक परिवेश में उत्पन्न संकटबोध और मूल्य-बोध को इस उपन्यास में उरेहा गया है। मन्नू भंडारी ने इस औपन्यासिक कृति के माध्यम से एक ओर पारम्परिक मूल्यों को नकारने की चेष्टा की है तो दूसरी ओर आधुनिकता की चुनौती का साक्षात्कार संवेदना के धरातल पर किया है।

21.1 'आपका बंटी' उपन्यास का उद्देश्य

साहित्यिक रचना कभी निरुद्देश्य नहीं होती। प्रत्येक रचना की सृजन-चेतना के पीछे रचनाकार का कुछ न कुछ, कोई न कोई उद्देश्य निहित अवश्य होता है। रचनाकार, अपनी रचना के माध्यम से या तो अपनी अनुभूति की अभिव्यक्ति

नोट

करना चाहता है अथवा वैचारिक प्रत्ययों को पाठकों तक संप्रेषित करने की चेष्टा करता है। रचनाकार अपनी अनुभूति की अभिव्यक्ति के प्रति पूरी ईमानदारी से प्रतिबद्ध रहता है। संप्रेषण-व्यापार उसकी एक अनिवार्यता है। अपनी अनुभूति को अभिव्यक्त किए बिना वह चैन की साँस नहीं ले सकता। इससे इतनी बात स्पष्ट हो जाती है कि रचनाकार का सबसे पहला और महत्त्वपूर्ण कार्य होता है–अपनी रचनाओं के द्वारा अपनी अनुभूतियों को संप्रेषित करना। वस्तुतः अपनी अनुभूतियों को अभिव्यक्त करने के क्रम में वह स्वयं अपने व्यक्तित्व को ही अपने वैचारिक प्रत्ययों और जीवन-दर्शन के माध्यम से प्रकाशित करता है।

रचना में रचनाकर का उद्देश्य कई बातों पर निर्भर करता है। कोई भी लेखक अपनी घनीभूत संवेदना, अनुभूति, अपने चिंतन-दर्शन तथा वैचारिक प्रत्ययों को अपनी कल्पना एवं प्रतिभा के आधार पर अपनी रचना में अभिव्यक्त करता है। प्राचीन लेखक या उपन्यासकार अपने लक्ष्यों को ध्यान में रखकर उपन्यास की रचना करता था। इसलिए उसमें या उसकी औपन्यासिक कृति में आरोपण व्यापार का आधिक्य मिलता था और स्वाभाविकता गौण हो जाती थी। इसका एक परिणाम यह भी होता था कि उपन्यास पर थोपा हुआ आदर्श अधिक दिखाई पड़ता था, जिसका प्रभाव पाठकों के मन पर सापेक्ष ढंग से नहीं पड़ पाता था।

आधुनिक उपन्यासकार इस अर्थ में प्राचीन लेखकों से सर्वथा भिन्न दिखाई पड़ता है। आज का लेखक संप्रेषण को अपना प्रमुख दायित्व मानता है। लक्ष्य को सामने रखकर वह उपन्यास का ढाँचा खड़ा नहीं करता, अपितु रचना के भीतर से ही रचना-प्रक्रिया के स्तर पर प्रत्ययों, विचारों और अनुभूतियों को बुनता चलता है। यही कारण है कि आज के उपन्यास में किसी प्रकार की कृत्रिमता नहीं पाई जाती।

प्राचीन उपन्यासों में किसी न किसी समस्या का समाधान मिलता है अर्थात उन उपन्यासकारों का अभीष्ट था–किसी न किसी समस्या का निदान प्रस्तुत करना। आज का उपन्यास उनसे इस अर्थ में बिल्कुल अलग और भिन्न है। आज के उपन्यास में न तो घटनाओं का बाहुल्य मिलता है न किसी प्रकार का समाधान। आज महत्त्व है–मानवीय स्वभाव के अंकन का। इसीलिए आज के अधिकांश उपन्यास समस्यामूलक न होकर चरित्रमूलक होते हैं। पात्रों के चरित्र की सूक्ष्म और आड़ी-तिरछी रेखाओं को उभारकर प्रस्तुत करना ही आधुनिक उपन्यासकार का लक्ष्य है।

'आपका बंटी' एक खासा मनोविश्लेषणपरक उपन्यास है। परिस्थितियों के तूफान में पड़कर व्यक्ति कितना असहाय बन जाता है, यह बात इस उपन्यास के माध्यम से स्पष्ट हो जाती है। बंटी एक ऐसा बालक है, जो परिस्थितियों की विषमता के कारण टुटन, घुटन और संवास का शिकार हो जाता है। वैसे, इस उपन्यास की सर्जना का आधार है–पति-पत्नी का परस्पर संबंध-विच्छेद। इस विषय पर पहले भी हिंदी में अनेक उपन्यासों की रचना की गई, किंतु मन्नू भंडारी का यह उपन्यास उनसे किंचित् भिन्न है। इस उपन्यास में यह दिखाने का भरसक प्रयत्न किया गया है कि पति-पत्नी के तलाक के पश्चात् उसकी संतान को किन-किन यातनाओं का सामना करना पड़ता है। इसलिए मन्नू भंडारी ने इस उपन्यास का सबसे प्रमुख पात्र बंटी को बनाया है, जिसे न तो पिता का दुलार मिल पाता है और न ही माँ का वात्सल्य। ऐसी विषम स्थिति में उपन्यास में प्रारंभ से अंत तक मानसिक रुग्णता से ग्रस्त और असामान्य बालक के रूप में बंटी दिखाई देता है।

विख्यात समीक्षक श्री विष्णुकांत शास्त्री ने 'आपका बंटी' उपन्यास के इसी संदर्भ में विचार करते हुए लिखा है कि "चूँकि इस उपन्यास का केंद्र-बिंदु बंटी है, अतः अन्य सभी प्रसंग उसी के माध्यम से उभारे गए हैं। लोकप्रियता और साहित्यिक मान्यता में आजकल विरोध माना जाने लगा है। मेरा विश्वास है कि 'आपका बंटी' इस धारणा का अपवाद साबित होगा, उसको लोकप्रियता भी प्राप्त होगी और साहित्यिक मान्यता भी प्राप्त होगी।"

इस उपन्यास में बंटी की असहायावस्था को चित्रित किया गया है। उसके मम्मी-पापा एक-दूसरे से अलग-अलग रहते हैं। यह उसे अच्छा नहीं लगता। उसके मन-मस्तिष्क में बार-बार यही विचार कौंधता रहता है कि कैसे वह अपने मम्मी-पापा को फिर से मिलाए। इस संदर्भ में एक उदाहरण देखिए–

"एक क्षण को बंटी पापा का चेहरा देखता रहा। कह दे कि पापा हमारे साथ क्यों नहीं रहते? इस घर में तो मेरी पेंटिंग लगी ही हुई है। पापा इसी घर को अपना घर क्यों नहीं बना लेते? अलग घर में क्यों रहते हैं? इस घर में मेरा बगीचा भी तो है–खूब सुंदर-सा।

"इस बार छुट्टियों में कलकत्ता चलोगे हमारे साथ?"

"बंटी ने बड़ी सशंकित-सी नजर से पापा की ओर देखा। उसे साथ चलने को क्यों कह रहे हैं, पहले तो कभी नहीं कहा?"

"बहुत मजा आएगा, खूब घूमेंगे। बोलो?"

"मम्मी चलेंगी तो चलूँगा।"

"छी: छी: इतने बड़े होकर भी मम्मी के बिना नहीं रह सकते। यह गंदी बात है बेटे! अब तुम्हें मम्मी के बिना रहने की आदत डालनी चाहिए। तुम क्या लड़की हो जो मम्मी से चिपटे-चिपटे फिरते हो?"

"बंटी बहुत संकुचित हो आया। भीतर ही भीतर कहीं गुस्सा भी आने लगा। फूफी ऐसा कहती तो मजा चखा देता। पापा से क्या कहे? पर पापा ऐसी बात कहते ही क्यों हैं? खुद तो मम्मी के साथ नहीं रहते, चाहते हैं वह भी नहीं रहे। बहुत चालाक हैं। एकाएक उसके मन में सामने बैठे पापा के लिए गुस्सा उफनने लगा। बहुत मन हुआ पूछे, "आप मम्मी को भी साथ लेकर क्यों नहीं चलते?" उसने एक उड़ती-सी नज़र पापा की ओर डाली। पता नहीं, पापा को जानता ही कितना है? मम्मी की तो हर बात का उसे पता है, पर पापा....।

टास्क 'आपका बंटी' में निहित उद्देश्य पर अपने विचार व्यक्त कीजिए।

'आपका बंटी' उपन्यास की सर्जना के पीछे मन्नू भंडारी का मूल उद्देश्य, वास्तव में यही दिखाना है कि पति-पत्नी के बीच अलगाव की स्थिति के पैदा होने से उनकी संतान की कितनी दयनीय दशा हो जाती है। साथ ही, शकुन जैसी भावुक और संवेदनशील पत्नी के लिए भी यह एक दुखद स्थिति है कि वह परिस्थितियों से समझौता नहीं कर पाती। इस संदर्भ में लेखिका ने शकुन की मन:स्थिति का अत्यंत सूक्ष्म चित्रण इन शब्दों में किया है।

"शुरू के दिनों में ही एक गलत निर्णय ले डालने का एहसास दोनों के मन में बहुत साफ होकर उभर आया था, जिस पर हर दिन और हर घटना ने केवल सान ही चढ़ाई थी। समझौते का प्रयत्न भी दोनों में एक अंडरस्टैन्डिंग पैदा करने की इच्छा से नहीं करता था। वरन दूसरे को पराजित करके अपने अनुकूल बना लेने की आकांक्षा से तर्कों और बहसों में दिन बीतते थे और ठंडी लाशों की तरह लेटे-लेटे दूसरे को दुखी, बेचैन और छटपटाते हुए देखने की आकांक्षा में रातें। भीतर ही भीतर चलने वाली एक अजीब ही लड़ाई थी वह भी, जिसमें दम साधकर दोनों ने हर दिन प्रतीक्षा की थी कि कब सामने वाले की साँस उखड़ जाती है और वह घुटने टेक देता है; जिससे कि फिर वह बड़ी उदारता और क्षमाशीलता के साथ उसके सारे गुनाह माफ करके उसे स्वीकार कर ले, उसके सम्पूर्ण व्यक्तित्व को निरे एक शून्य में बदलकर और इस स्थिति को लाने के लिए सभी तरह के दाँव-पेंच खेले गए थे। कभी कोमलता के, कभी कठोरता के, कभी सबकुछ लुटा देने वाली उदारता, तो कभी सबकुछ समेट लेने वाली कृपणता के। प्रेम के नाटक भी हुए थे और तन-मन को डुबो देने वाले विभोर क्षणों के अभिनय भी। पता नहीं, उन क्षणों में कभी भावुकता, आवेश या उत्तेजना रही भी हो, पर शायद उन दोनों के ही दयालु मनों ने कभी उन्हें उस रूप में ग्रहण नहीं किया। दोनों ही एक-दूसरे ही हर बात, हर व्यवहार और हर अदा को एक नया दाँव समझने को मजबूर थे और इस मजबूरी ने दोनों के बीच की दूरी को इतना बढ़ाया कि फिर बंटी भी इस लड़ाई को पाटने के लिए सेतु नहीं बन सका, नहीं बना।"

इस उपन्यास में शुरू से आखिर तक लेखिका का उद्देश्य यही रहा है कि वह अपने पाठकों को इस तथ्य से अवगत कराए कि पति-पत्नी के बिगड़ते संबंधों के कारण संतान को तो दुखद स्थिति की नियति को झेलना ही पड़ता है, साथ ही पति-पत्नी भी एक-दूसरे की स्मृति में बेसुध बने फिरते हैं। बाद में वे दोनों ही इस बात के लिए पश्चाताप करने को बाध्य हो जाते हैं कि तलाक के मामले में उनका निर्णय गलत था। यह पश्चाताप बुद्धिजीवी व्यक्ति को ही अधिक करना पड़ता है। शकुन एक सुशिक्षित महिला है। वह एक कॉलेज की प्रिंसिपल है। तलाक हो जाने के बाद भी वह तनाव की ज़िंदगी जीती है और समय-असमय अपने पूर्व पति अजय को याद करती रहती है, क्योंकि उन दोनों का पुत्र बंटी उसके साथ रहता है। बंटी भी अपने पिता अजय को नहीं भूल पाता। उन दोनों की मन:स्थिति

नोट

को इस उपन्यास में अत्यंत बारीकी के साथ विश्लेषित किया गया है, साथ ही उपन्यास के उद्देश्य पर भी प्रकारान्तर से प्रकाश पड़ता है।

"मेज के एक ओर मम्मी बैठी है और सामने की कुर्सी पर बंटी। बीच में प्लास्टिक के सुंदर डिब्बे में वह शीशी रखी है, जो डॉक्टर साहब लाए थे–जादुई शीशी। डॉक्टर साहब का मम्मी को सुँघाना....साड़ी पर मलना और तड़ाक ...याद नहीं, इसके पहले मम्मी ने कब मारा था, कभी मारा भी था या नहीं– एक अजीब-सा डर है जो उसके शरीर और मन को जकड़ता जा रहा है।"

"बंटी, अब तुम यही सब करोगे?" मम्मी की आवाज पता नहीं कहाँ से आ रही है।

"आज जो कुछ तुमने किया, वह बहुत अच्छा था ना? कोई घर में आए तो यही सब करना चाहिए?"

बंटी चुप है। लगा शीशी जैसे मेज पर हिलने लगी है।

"इतने साल से मैंने तुझे यही सिखाया है? यही अकल और तमीज। जोत को देखा? कैसा सलीका और कैसी तमीज है, जबकि उनकी देखने-भालने वाली माँ नहीं है। मैंने तो नौ साल तक तेरे साथ झक मारी है। घूमना-फिरना, मिलना-जुलना, सबकुछ छोड़ दिया था, सिर्फ इसलिए कि तू कुछ बन जाए....।" आवेश के मारे मम्मी का स्वर ही नहीं, सारा शरीर भी जैसे थरथरा रहा है।

"पर आज चार लोगों के सामने मेरे मुँह पर जूता मारकर तूने बता दिया कि तू क्या बना है और मैं तुझे क्या बना सकी हूँ?" और मम्मी का स्वर बिखर गया।

बंटी का अपना मन कहीं गहरे में डूबता जा रहा है।

"तू यह क्यों करता है बंटी? मत कर ऐसे, मत कर बेटे...।" और मम्मी फूटकर रो पड़ीं। जैसे उस दिन रोई थी, ठीक उसी तरह।

बंटी का मन हो रहा है कि वह दौड़कर मम्मी से लिपट जाए, रोए, चीखे। पर एकाएक किसी ने जैसे उसे बुरी तरह दबोच लिया और सीख जैसे भीतर ही भीतर छूटकर रह गई।

स्व-मूल्यांकन (Self-Assessment)

रिक्त स्थानों की पूर्ति करें (Fill in the blanks) :

1. 'आपका बंटी' आज के परिवेश में लिखा गया एक .... उपन्यास है।
2. पति-पत्नी के बिगड़ते संबंधों के कारण संतान को .... स्थिति को झेलना पड़ता है।
3. फूफी के माध्यम से ग्रामीण महिलाओं की .... का चित्रण किया गया है।

मन्नू भंडारी मानव मन के आभ्यंतर की कथा-शिल्पी हैं। अत: औपन्यासिक रचना के पीछे उनका दृष्टिकोण कथा कहने का न होकर अत्यंत छोटी से छोटी घटना के सहारे मानव मन के अभ्यंतर को विश्लेषित करना है। यही कारण है कि मन्नू भंडारी ने इस उपन्यास में शकुन और बंटी की मन:स्थिति को तो विश्लेषित किया ही, साथ ही साथ फूफी के माध्यम से अशिक्षित और ग्रामीण महिलाओं की मानसिकता को चित्रित करने का प्रयास किया है। उदाहरण द्रष्टव्य है:

"अरे, हम नौकर आदमी, हम कइसे नाराज होंगे? पर भगवान ने जीभ दी है तो बोलेंगे जरूर। आप सी जूता मारेंगी तो हम तनिको चिंता नहीं करेंगे, पर बोले बिना हम से रहा नहीं जाएगा।"

फिर आगे वह कहती है।

"अब आप जो कर रही हैं बालक-बच्चा को लेकर, सो आपको शोभा देता है? बड़े आदमियों की बड़ी बात, मुँह पर कौन बोलेगा और काहे बोलेगा? पर फूफी तो मुँह पर ही बोलेगी।"

"आप तो जानती हैं, साहब को लेकर हमारे मन में आज भी कइसा गुस्सा है। अब आप भी वही सब करेंगी। हम से नहीं देखा जाएगा यह सब।"

"जवानी यों ही अंधी होती है बहू जी, फिर बुढ़ापे में उठी हुई जवानी। महासत्यानाशी! साहब ने जो किया तो आपकी मट्टी-पलीद होगी। चेहरा देखा है बच्चे का? कैसा निकल आया है, जैसे रात-दिन घुलता रहता है भीतर ही भीतर।"

फूफी अपनी तल्ख प्रतिक्रिया शकुन के सामने ही व्यक्त करती है, जिससे वह काफी क्षुब्ध और क्रुद्ध होती है, किंतु यहाँ लेखिका ने उसके माध्यम से यह कहना चाहा है कि शिक्षित और शहरी व्यक्ति की अपेक्षा अशिक्षित और ग्रामीण व्यक्ति अधिक संवेनशील होता है तथा परहित चिंतन की भावना भी अधिक होती है। शकुन डॉक्टर जोशी के साथ वैवाहिक संबंध स्थापित करना चाहती है शकुन और डॉक्टर का आपसी संबंध लोगों की चर्चा का विषय बन जाता है। इसे लेखिका ने बड़ी बारीकी से अभिव्यक्त व विश्लेषित किया है:

"उसके और डॉक्टर के संबंध की बात शहर के एक खास तबके में फैल ही गई थी और एक दिन कॉलेज के मैनेजर ने जिस तरह आकर पूछा था तो वह समझ नहीं पाई थी कि बात केवल जानने मात्र के लिए ही पूछी जा रही है या कि जानी हुई बात को एक हल्की-सी भर्त्सना और हिकारत के साथ उस तक पहुँचाया जा रहा है।"

मैनेजर को तो उसने जैसे-तैसे जवाब दे दिया था, पर अपने मन को जैसे वह शाम तक जवाब नहीं दे पाई थी।

शाम को जब सारी बात डॉक्टर को बताई तो जाने किस आवेश में कह गई, "ये लोग ज्यादा चूँ-चपड़ करेंगे तो मैं नौकरी ही छोड़ दूँगी। संभालें अपनी नौकरी।"

तब डॉक्टर उसकी बात पर केवल हँसा था। कुछ ऐसे हल्के-फुल्के ढंग से मानो कुछ हुआ ही ना हो–

"तुम नौकरी करो या छोड़ो, यह बिल्कुल तुम्हारी अपनी इच्छा पर है, पर छोड़ो तो कारण यह नहीं होना चाहिए।"

डॉक्टर एक क्षण को रुका था और शकुन के मन में हल्का-सा संदेह कौंधा था–क्या डॉक्टर नहीं चाहते कि वह नौकरी छोड़े? उसका पैसा चाहे न हो, पर क्या उसका पद डॉक्टर के लिए ....।

"आज मैनेजर को आपत्ति हुई तो तुमने नौकरी छोड़ दी। कल शहर वालों को आपत्ति होगी तो तुम शहर छोड़ने को कहोगी। और जरूर कहोगी। छोटी जगह है...ऐसी बातें लोग आसानी से पचा नहीं पाते हैं। पर इस तरह कमजोर होने से कहीं काम चल सकता है? और सच पूछो तो आपत्ति बाहर नहीं होती है, कहीं मन के भीतर ही होती है। तभी तो हमें ये छोटी-छोटी बातें परेशान कर देती हैं।"

ऐसा लगता है कि डॉक्टर जोशी के माध्यम से इस जीवन-यथार्थ को स्वयं मन्नू भंडारी ने ही व्यक्त करना चाहा है।

'आपकी बंटी' उपन्यास में मन्नू भंडारी ने अनुभवों के सातत्य और नैरन्तर्य को आत्मसात् कर प्रकृत यथार्थ को सम्प्रेषित करने की चेष्टा की है। कुल मिलाकर, उनका उद्देश्य यहाँ व्यक्ति मन की 'प्रकृत वस्तु' को उद्घाटित करना है, न कि किसी बात को या विचार को आरोपित करना।

21.2 'आपका बंटी' उपन्यास की मूल समस्या

श्रीमती मन्नू भंडारी ने 'आपका बंटी' उपन्यास में किसी समस्या का निदान नहीं किया है, न समस्या उठाना उनको अभिप्रेत है। इस उपन्यास की रचना प्रक्रिया के भीतर से पति-पत्नी के संबंध अथवा तलाक की समस्या सतह के ऊपर आती हुई दिखाई देती है। वास्तव में इसकी सृजन-प्रक्रिया के गर्भ से तलाक की समस्या और उस समस्या से उत्पन्न संतान की यातना और उसके बिखराव व भटकाव को सहज ही अभिव्यक्ति प्राप्त हो गई है।

मन्नू भंडारी ने इस उपन्यास में प्रत्यक्ष अथवा परोक्ष रूप से कई समस्याओं को उठाने की चेष्टा की है, जिन्हें निम्नलिखित रूप में विवेचित कर सकते हैं–

21.2.1 तलाक की समस्या

तलाक की समस्या इस उपन्यास की केंद्रीय समस्या है। यह समस्या आधुनिक समाज की देन है। आज के परिवेश में इस समस्या की अधिकता देखने में आती है। इसके कई कारण हैं और हो सकते हैं। शकुन और अजय के माध्यम से यहाँ सुशिक्षित पति और सुशिक्षिता तथा पदप्रतिष्ठा वाली पत्नी की कहानी कही गई है। अजय और शकुन दोनों

नोट

ही किसी न किसी ग्रंथि से परेशान हैं। इन्हीं मानसिक ग्रंथियों के कारण दोनों में परस्पर अनबन पैदा होती है और उसकी परिणति होती है तलाक में। तलाक की जिंदगी जीते हुए दोनों ही मानसिक रूप से परेशान दिखाई देते हैं। दोनों में से चैन किसी को भी नहीं है। उदाहरण के लिए शकुन से संबंधित उपन्यास की ये पंक्तियाँ देखें:

"उसने एक उड़ती-सी नजर मम्मी पर डाली। मम्मी की आँखें वैसे ही चाचा पर टिकी हुई हैं। आँखों में वैसे ही सवाल झूल रहे हैं पर चाचा हैं कि चुप। बोलते क्यों नहीं? बात करनी है तो करें बात। वहाँ खिड़की में क्या देखे जा रहे हैं? बात वहाँ तो लिखी हुई नहीं है?"

"शकुन! चाचा बोले नहीं, जैसे शब्दों को किसी तरह ठेला। कैसी भरी-भरी आवाज निकल रही है आज उनकी। टकटकी लगाए-लगाए मम्मी की आँखों जैसे पथरा गई हैं। बस मूर्ति की तरह वह बैठी हैं, मानों साँस भी नहीं ले रही हों।"

"वह चाहता है कि अब इस सारी बात की क़ानूनी कार्यवाही भी कर ही डाली जाए।" चाचा का स्वर कैसा बिखर-बिखर रहा है।

यही बात कहनी थी चाचा को? पर क्या है, कुछ भी समझ में नहीं आया।

"तो क्या इसीलिए आपको भेजा है? मम्मी का चेहरा ही नहीं, उनकी आवाज भी सख्त हो गई है, वही प्रिंसिपल वाला चेहरा।"

"नहीं, नहीं मैं अपने काम से आया हूँ। पर जब आने लगा तो उसने मुझसे इस विषय में बात करने को कहा था। मैं नहीं आता तो वह खुद शायद तुम्हें लिखता।"

और एकाएक ही शकुन को वह रात याद आ गई, जब इसी तरह आमने-सामने बैठकर चाचा उसे समझा रहे थे–"दो जनें साथ रहते हैं तो ऐडजस्ट तो करना ही पड़ता है, शकुन अपने को कुछ तो मारना ही पड़ता है। और जब उनके सारे हथियार चुक गए थे, तो बड़े हताशा स्वर में बोले थे, यदि ऐसा ही है तो फिर अच्छा है कि तुम लोग अलग हो जाओ। संबंध को निभाने की खातिर अपने को खत्म कर देने से अच्छा है कि संबंध को खत्म कर दो।"

वकील चाचा की इस बात से शकुन की आंतरिक यातना का बखूबी एहसास होता है, जिसके मूल में पति-पत्नी के बीच मनमुटाव है।

> *टास्क* 'तलाक की समस्या' की अपने शब्दों में विवेचना कीजिए।

21.2.2 संतान की मानसिक यंत्रणा की समस्या

इस उपन्यास में प्रकारांतर से इस बात पर भी प्रकाश डाला गया है कि माता-पिता के पारस्परिक आचार-व्यवहार का प्रभाव किसी न किसी रूप में उनकी संतान पर अवश्य पड़ता है। बच्चे के व्यक्तित्व और चरित्र-निर्माण में घर के माहौल का बहुत बड़ा हाथ और योगदान होता है। इस उपन्यास का बंटी एक ऐसा ही बालक है, जिसे न तो उसके पिता का प्यार मिलता है और न माँ का ही। अत: वह मानसिक तनाव का शिकार हो जाता है तथा उसका व्यक्तित्व सर्वथा बिखर कर रह जाता है। इस उपन्यास में आद्यंत उसके मानसिक तनाव को विश्लेषित किया गया है। उदाहरणस्वरूप निम्नांकित पंक्तियाँ इस दृष्टि से देखी जा सकती हैं–

"पापा ने इस बार उसे चिट्ठी लिखने को कहा था। पर उसने नहीं लिखी। लिखना तो खूब अच्छी तरह जानता है, लिख भी सकता है। पापा से कहा भी था कि अब वह जरूर बराबर चिट्ठियाँ लिखा करेगा। पर तब वह सारी बात समझता कहाँ था? तब तो उसे यह भी नहीं मालूम था कि मम्मी-पापा की पक्की वाली कुट्टी हो गई है। पर अब कैसे लिख सकता है भला! वह पूरी तरह मम्मी की तरफ है और मम्मी से उनकी कुट्टी है तो फिर बंटी से भी है। ऐसा ही तो होता है।"

"फिर भी जब मम्मी इधर-उधर होती हैं तो वह चुपचाप अलमारी खोलकर उस किताब को निकाल कर देखता है, जिसके पीछे के कवर पर पापा अपना पता लिख गए थे। अब तो उसे मुँहजबानी याद भी हो गया है–8 ए, एलगिन रोड, कलकत्ता। पता पढ़ने के साथ ही उसके मन में पापा के घर के नक्शे उभरने लगते हैं, खूब-खूब ऊँचा मकान। एलगिन रोड के नक्शे उभरते हैं, कलकत्ता के नक्शे उभरते हैं–हावड़ा ब्रिज, जू, लैक्स, बॉटेनिकल गार्डेंस, बिना तने का बड़ का पेड़, पी.सी सरकार का जादू–और फिर इस सब को दबोचती हुई, कुचलती हुई समझदारी उभरती है कि नहीं, उसे इन सबके बारे में सोचना भी नहीं है। पर इन सबको कुचलने के साथ उसके अपने भीतर जाने क्या कुछ कुचलता रहता है। तब वह अपने-आप से प्रॉमिस करता है कि कभी भी पापा की बात नहीं सोचेगा। मन ही मन किए हुए प्रॉमिस पर जब पूरी तरह भरोसा नहीं हो पाता तब जोर-जोर से बोलकर प्रॉमिस करता है। अपनी ही आवाज सुनकर उसके भीतर एक नया आत्मविश्वास जागता है।"

बंटी अत्यधिक भावुक और संवेदनशील है। वास्तव में वह एक अंतर्मुखी व्यक्तित्व का बालक है, जो छोटी से छोटी बात को भी बड़ी गंभीरता के साथ लेता और उस पर सोचता रहता है। परिस्थितियों के साथ वह समझौता भी नहीं कर पाता, बल्कि उसके लिए मानसिक यातनाओं को झेलता रहता है। उसे न तो अकेली माँ स्वीकार्य है न बाप। दोनों के साथ मिलकर वह रहने की कल्पना करते-करते टूट-सा जाता है।

बंटी की मम्मी और पापा का संबंध-विच्छेद हो जाता है और उसकी मम्मी डॉक्टर जोशी के साथ विवाह कर लेती है। जब उसकी मम्मी के साथ सटकर डॉक्टर जोशी बैठते हैं, तब भी उसे बुरा लगता है। अजय के अतिरिक्त वह किसी भी दूसरे व्यक्ति को पिता के रूप में स्वीकार नहीं कर सकता है न शकुन के अतिरिक्त किसी अन्य स्त्री को माँ के रूप में ही स्वीकार कर पाता है। उसकी मानसिकता का एक उदाहरण देखिए–

"मिसेज जोशी!" एकाएक बंटी की नज़र मम्मी की ओर उठ गई। मम्मी ने कुछ भी नहीं कहा। अभी तक मम्मी को सब मिसेज बत्रा कहते थे और अब...

"ऐ बंटी, अब तू जोशी हो गया यार! बंटी जोशी, नहीं अरूप जोशी।"

"धत्, मैं क्यों हो गया जोशी? मैं अरूप बत्रा हूँ, बंटी बत्रा!"

"चल-चल! डॉक्टर जोशी तेरे पापा नहीं हो गए अब?"

"बिल्कुल नहीं, एकदम नहीं, मेरे पापा अजय बत्रा हैं। कलकत्ता में रहते हैं।"

"अब नहीं रहे वह पापा मिस्टर!"

"मार दूँगा ज्यादा बकवास की तो!" मन हो रहा था धज्जियाँ बिखेर दे इस कैलाश के बच्चे की।

21.2.3 अंतर्द्वंद्व और कुण्ठाग्रस्त जीवन में संघर्ष की समस्या

'आपका बंटी' उपन्यास के शकुन और बंटी दोनों ही पात्र नई परिस्थिति के कारण अंतर्द्वंद्व और कुंठा के शिकार हो जाते हैं। शकुन अपनी परिस्थितियों से ऊबकर, अंत में टूट जाती है और जीवन की सहजता को जीने के लिए आखिर में उसे अपने पति अजय से तलाक लेना पड़ता है तथा डॉक्टर जोशी को नए पति के रूप में स्वीकार करना पड़ता है। यह सब उसकी विवशता है। इस विवशतापूर्ण जीवन में उसका मन कुंठाग्रस्त हो जाता है और बंटी को भी एक असहाय की ज़िंदगी जीने की विवशता झेलनी पड़ती है। नई परिस्थिति के कारण दोनों को ही संघर्ष करना पड़ता है। यह संघर्ष बाहर और भीतर दोनों प्रकार का है। फिर भी बाहर से अधिक भीतर का ही है। इस संदर्भ में उपन्यास की कुछ पंक्तियाँ देखिए–

"बंटी बेटा, पसंद आया तुम्हें यह कमरा ड्यूड... ड्यूड ....।" मन में जैसे एक ज्वार उठ रहा है दु:ख का, गुस्से का। मन हो रहा है, जाए उस कमरे में और एक-एक चीज उठाकर फेंक दे; परदे फाड़ डाले, देखें कोई क्या कर लेता है उसका।"

मम्मी ने झुककर उसके गाल को चूमा तो उसने मम्मी का चेहरा झटक दिया।

"क्यों पागलपन कर रहा है बेटे? देख, ये दोनों भी तो हैं? मुझे तंग करने में, सबके बीच शर्मिंदा करने में तुझे खास ही सुख मिलने लगा है आजकल।"

नोट

"हाँ, मिलता है सुख....जरूर करूँगा शर्मिंदा। तुम नहीं कर रही हो मुझे शर्मिंदा? यहाँ दूसरे के घर लाकर पटक दिया। 'अपना घर होगा' कोई नहीं है अपना घर? मैं नहीं रहता किसी के घर......पहले तो कमरा पसंद करो और फिर... कितनी बातें हैं, जो फूट पड़ रही हैं। बंटी चाहता भी है कि सब कह दे। कितने दिन हो गए उसने कुछ कहा ही नहीं। आजकल तो वह सिर्फ सुनता है और मान लेता है, पर आज नहीं।

लेकिन गला है कि बुरी तरह भिंचा हुआ है। लगता है बोलना चाहेगा तो बस केवल हिचकी फूटकर रह जाएगी।"

"नींद नहीं आ रही बंटी को? क्या बात है बेटे?" डॉक्टर साहब तौलिया लटकाए दरवाजे पर खड़े पूछ रहे हैं।

"अभी सो जाएगा। नई जगह है न, शायद इसलिए।"

मम्मी शायद उसके जागते रहने की सफाई दे रही है।

"तुम जाओ, मैं सो जाऊँगा।" रूँधे हुए गले से बंटी ने किसी तरह शब्द ठेल दिए।

"ऐसा मत कर बेटे, ऐसा नहीं करते न! चल सो, मैं बैठी हूँ तेरे पास।"

स्व-मूल्यांकन (Self-Assessment)

निम्नलिखित कथनों में सत्य अथवा असत्य की पहचान करें

(State Whether the following statements are True or False) :

4. फूफी अपनी तीखी प्रतिक्रिया शकुन के सामने व्यक्त करती है।
5. शकुन डॉ. जोशी के साथ वैवाहिक संबंध बिल्कुल भी नहीं बनाना चाहती है।
6. तलाक की समस्या आधुनिक समाज की देन है।

मम्मी बैठी-बैठी उसका सिर सहलाती रही। धीरे-धीरे उसके गाल थपथपाती रही। बंटी आँखें मूँदे पड़ा रहा। थोड़ी देर बाद धीरे-से मम्मी उठी। एक बार चारों ओर से उसे अच्छी तरह ढका। खट्! बत्ती बंद हुई तो बंद आँखों में फैला अँधेरा खूब गाढ़ा हो गया। बंटी ने आँखें खोल दीं। सारी की सारी मम्मी अँधेरे में डूब गई थी, बस धीरे-धीरे दूर होता उनका जूड़े का गजरा चमक रहा था।

दरवाजे पर पहुँचकर मम्मी ने धीरे से आवाज दी। "......बंटी"

बंटी चुप

"सो गया?" डॉक्टर साहब रात के कपड़े पहन आए थे।

"हूँ।" मम्मी ने धीरे से कहा।

फिर दोनों उसी कमरे में चले गए और एक हल्की-सी आवाज हुई। शायद दरवाजा बंद होने की।

बंटी को लगा, घर से चला था तो बीच रास्ते में उसका अपना घर और उसका बगीचा छूट गया था। यहाँ आकर मम्मी छूट गई।

इतनी देर से दबा हुआ एक आवेग था जो दरवाजे के बंद होते ही फूट पड़ा। थोड़ी देर बाद ही अचानक उस कमरे का दरवाजा खुला और डॉक्टर साहब ने निकलकर बाहर के बरामदे की बत्ती बंद कर दी।

सारा घर अंधेरे में डूब गया। बंटी के मन का दुख और गुस्सा धीरे-धीरे डर में बदलने लगा। केवल डर ही नहीं, एक आतंक, कैसी-कैसी शक्लें उभरने लगीं उस अँधेरे में। उसने कसकर आँखें मींच लीं। पर अजीब बात है। बंद आँखों के सामने शक्लें और साफ हो गई—लपलपाती जीभ के राक्षस...उल्टे पंजों और सींगों वाला सफेद भूत, तीन आँखों वाली चुड़ैल, जादुई नगरी, नाचते हुए हड्डियों के ढाँचे, सब उसके चारों ओर नाच रहे हैं। धीरे-धीरे उसकी ओर बढ़ रहे हैं।

उसकी साँस जहाँ की तहाँ रुक गई।

नोट

टास्क 'आपका बंटी' में उठाई गई पारिवारिक समस्याओं को समाप्त करने के लिए क्या उचित कदम उठाने चाहिए?

21.2.4 संत्रास, घुटन और टुटन की समस्या

तलाक की समस्या आधुनिक व्यवस्था की देन है। इस समस्या के दुष्परिणामों को सहने के लिए आज का मनुष्य विवश और अभिशप्त है। इसके कारण आज के मनुष्य की ज़िंदगी में संत्रास, घुटन और टुटन की समस्या दिन-प्रतिदिन बढ़ती जा रही है। और अंततः उसके जीवन में बिखराव आता जा रहा है। इस क्रम में आधुनिक नारी की विडंबना और भी बदतर है। आज की नारी आधुनिकता की चकाचौंध में पुरातन मूल्यों को नकारना चाहती है, जबकि वह उन्हीं पुराने संस्कारों में मानसिक रूप से बंधी हुई है। इसलिए इन दोनों के टकराव का सीधा प्रभाव उसके जीवन पर भी पड़ता है। 'आपका बंटी' उपन्यास की शकुन एक ऐसी ही नारी है, जो जीवन की इन यातनाओं को सहने के लिए विवश है।

"कल पहली बार मन में आया कि वह अपनी दृष्टि अजय की जगह अपने ही ऊपर रखती तो शायद इतनी मानसिक यातना तो नहीं भोगती। तब उसका हर बढ़ता हुआ कदम, उसकी हर उपलब्धि उसे कुछ पाने का एहसास तो कराती। पर अब नहीं, अब और नहीं।"

इस प्रकार, मन्नू भंडारी ने 'आपका बंटी' उपन्यास में प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष रूप से कई समस्याओं को बड़ी बारीकी से उठाया है इनमें कुछ समस्याऐं बाह्य जीवन से संबंधित हैं और कुछ जीवन के अंतःपक्ष से संबंधित हैं। ये समस्याएँ आरोपित न होकर रचना-प्रक्रिया के भीतर से पैदा होती हैं।

21.3 सारांश (Summary)

- रचना में रचनाकार का उद्देश्य कई बातों पर निर्भर करता है। कोई भी लेखक अपनी घनीभूत संवेदना, अनुभूति, अपने चिंतन-दर्शन तथा वैचारिक प्रत्ययों को अपनी कल्पना एवं प्रतिभा के आधार पर अपनी रचना में अभिव्यक्त करता है।
- 'आपका बंटी' एक खासा मनोविश्लेषणपरक उपन्यास है। परिस्थितियों के तूफान में पड़कर व्यक्ति कितना असहाय बन जाता है, यह बात इस उपन्यास के माध्यम से स्पष्ट हो जाती है।
- इस उपन्यास में बंटी की असहायावस्था को चित्रित किया गया है। उसके मम्मी-पापा एक-दूसरे से अलग-अलग रहते हैं। यह उसे अच्छा नहीं लगता। उसके मन-मस्तिष्क में बार-बार यही विचार कौंधता रहता है कि कैसे वह अपने मम्मी-पापा को फिर से मिलाए।
- 'आपका बंटी' उपन्यास की सर्जना के पीछे मन्नू भंडारी का मूल उद्देश्य, वास्तव में यही दिखाना है कि पति-पत्नी के बीच अलगाव की स्थिति के पैदा होने से उनकी संतान की कितनी दयनीय दशा हो जाती है।
- फूफी अपनी तल्ख प्रतिक्रिया शकुन के सामने ही व्यक्त करती है, जिससे वह काफी क्षुब्ध और क्रुद्ध होती है, शिक्षित और शहरी व्यक्ति की अपेक्षा अशिक्षित और ग्रामीण व्यक्ति अधिक संवेनशील होता है।
- तलाक की समस्या इस उपन्यास की केंद्रीय समस्या है। यह समस्या आधुनिक समाज की देन है। आज के परिवेश में इस समस्या की अधिकता देखने में आती है।
- बच्चे के व्यक्तित्व और चरित्र-निर्माण में घर के माहौल का बहुत बड़ा हाथ और योगदान होता है। इस उपन्यास का बंटी एक ऐसा ही बालक है, जिसे न तो उसके पिता का प्यार मिलता है और न माँ का ही। अतः वह मानसिक तनाव का शिकार हो जाता है तथा उसका व्यक्तित्व सर्वथा बिखर कर रह जाता है।
- बंटी अत्यधिक भावुक और संवेदनशील है। वास्तव में वह एक अंतर्मुखी व्यक्तित्व का बालक है, जो छोटी से

नोट

छोटी बात को भी बड़ी गंभीरता के साथ लेता और उस पर सोचता रहता है। परिस्थितियों के साथ वह समझौता भी नहीं कर पाता, बल्कि उसके लिए मानसिक यातनाओं को झेलता रहता है।

- शकुन और बंटी दोनों ही पात्र नई परिस्थिति के कारण अंतर्द्वंद्व और कुंठा के शिकार हो जाते हैं। शकुन अपनी परिस्थितियों से ऊबकर, अंत में टूट जाती है और जीवन की सहजता को जीने के लिए आखिर में उसे अपने पति अजय से तलाक लेना पड़ता है।
- 'आपका बंटी' उपन्यास में प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष रूप से कई समस्याओं को बड़ी बारीकी से उठाया है इनमें कुछ समस्याएें बाह्य जीवन से संबंधित हैं और कुछ जीवन के अंत:पक्ष से संबंधित हैं।

21.4 शब्दकोश (Keywords)

1. निरूद्देश्य – बिना उद्देश्य के	2. समाधान – हल
3. असहाय – मजबूर	4. बेसुध – बेहोश
5. तल्ख – तीखी, तेज	6. वात्सल्य – प्यार, ममता
7. पराजय – हार	8. गुनाह – पाप
9. सेतु – पुल	10. भर्त्सना – बुराई।

21.5 अभ्यास प्रश्न (Review Questions)

1. 'बच्चे के व्यक्तित्व और चरित्र-निर्माण में घर के माहौल का बहुत बड़ा योगदान होता है।' इस पंक्ति पर अपने मत प्रस्तुत कीजिए।
2. शकुन और बंटी किस प्रकार अंतर्द्वन्द्व एवं कुंठा का शिकार होते हैं?
3. 'क्या आज की नारी आधुनिकता की चकाचौंध में पुरातन मूल्यों को नकारना चाहती है?' इसके पक्ष एवं विपक्ष में अपने विचार रखिए।

उत्तर : स्व-मूल्यांकन (Answers : Self-Assessment)

1. मनोवैज्ञानिक	2. दुखद	3. मानसिकता	4. सत्य
5. असत्य	6. सत्य।		

21.6 सन्दर्भ पुस्तकें (Further Readings)

पुस्तकें आपका बंटी–मन्नू भंडारी, राधाकृष्ण प्रकाशन (प्रा.) लि., नई दिल्ली।

नोट

इकाई–22: 'आपका बंटी' के पात्रों का चरित्र-चित्रण

अनुक्रमणिका (Contents)

उद्देश्य (Objectives)

प्रस्तावना (Introduction)

22.1 बंटी का चरित्र-चित्रण

22.2 उपन्यास के नायकत्व का आधुनिक विवेचन

22.3 शकुन का चरित्र-चित्रण

22.4 अन्य पात्रों का चरित्र-चित्रण

22.4.1 अजय का चरित्र-चित्रण

22.4.2 वकील चाचा का चरित्र-चित्रण

22.4.3 डॉक्टर जोशी का चरित्र-चित्रण

22.5 सारांश (Summary)

22.6 शब्दकोश (Keywords)

22.7 अभ्यास प्रश्न (Review Questions)

22.8 सन्दर्भ पुस्तकें (Further Readings)

उद्देश्य (Objectives)

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् विद्यार्थी योग्य होंगे–

- उपन्यास के नायक बंटी के चरित्र को समझने में;
- 'आपका बंटी' के नायकत्व का आधुनिक विवेचन करने में;
- उपन्यास की नायिका शकुन के चरित्र-चित्रण में;
- उपन्यास के अन्य पात्रों की जानकारी प्राप्त करने में।

प्रस्तावना (Introduction)

'आपका बंटी' एक चरित्र-प्रधान उपन्यास है। इसकी संपूर्ण कथा-वृत्त बंटी से संबंधित और उसी पर आधारित है। इसमें समस्त घटना-वृत्त बंटी के चारित्रिक विकास के लिए ही आयोजित किए गए हैं। उपन्यास के सारे कार्य-व्यापार भी उसी के चरित्र को विकसित करने में लगे हुए हैं।

22.1 बंटी का चरित्र-चित्रण

उपन्यास के नायकत्व के संबंध में दो प्रकार के दृष्टिकोण हैं: एक, प्राचीन विद्वानों का, जिनमें 'परंपरा' का आग्रह

नोट

है और दूसरा दृष्टिकोण आधुनिक या नए विचारकों का जो घटनाओं के स्थान पर चरित्र और संवेदना को महत्त्व देते हैं। प्राचीन और परंपरावादी विचारकों के मतानुसार नायकत्व की ये शर्तें हैं:

1. नायक समस्त पात्रों में विशिष्ट महत्त्व का पात्र होता है।
2. वह पूरे कथानक पर किसी न किसी रूप में छाया रहता है यानी उसकी उपस्थिति उपन्यास के प्रारंभ से अंत तक बनी रहती है।
3. उसका संबंध उपन्यास के सभी पात्रों के साथ किसी न किसी रूप में जुड़ा हुआ होता है।
4. नायक का उपन्यास की मुख्य कथा और प्रासंगिक कथा के साथ संबंध होता है।
5. अपनी चारित्रिक विशिष्टा के कारण वह पाठकों को न केवल प्रभावित करता है, बल्कि सहानुभूति भी उसी के साथ होती है।
6. नायक का व्यक्तित्व और चरित्र ऐसा होता है कि भाव, संवेग और रस सब उसी में से फूटते और समाहित होते हैं।
7. नायक वह विशिष्ट पात्र होता है जिसे उपन्यास से अलग हटा देने पर उपन्यास की अस्मिता बच ही नहीं सकती।
8. नायक चूँकि उपन्यासकार का मानस-पुत्र होता है, इसलिए उसके व्यक्तित्व पर उपन्यासकार के वैचारिक व्यक्तित्व की मुहर लगी हुई होती है।

प्राचीन आचार्यों तथा विद्वानों की कसौटी को अगर ध्यान में रखकर 'आपका बंटी' उपन्यास के पात्रों पर विचार करें तो इनमें 'बंटी' ही एकमात्र ऐसा पात्र है, जो नायक पद पर प्रतिष्ठित किया जा सकता है। इसके निम्नलिखित कारण हैं:

1. 'आपका बंटी' उपन्यास में 'बंटी' ही एकमात्र ऐसा पात्र है, जिसकी उपस्थिति उपन्यास के कथा-वृत्त में आदि से अंत तक है। उपन्यास की समस्त घटनाओं में किसी न किसी रूप में बंटी की साझेदारी अवश्य है। बंटी या तो कर्ता है अथवा भोक्ता।
2. इस उपन्यास में एकमात्र बंटी ही ऐसा पात्र है, जिसका संबंध उपन्यास में वर्णित समस्त पात्रों से किसी न किसी रूप में अवश्य है। शकुन उसकी माँ है, अजय पिता, फूफी नौकरानी के रूप में शुभैषी, टीटू दोस्त, डॉक्टर जोशी तथाकथित अथवा आरोपित पिता (सौतेला पिता) तथा मीरा सौतेली माँ है। इस प्रकार, बंटी का लगाव सभी पात्रों के साथ प्रत्यक्ष अथवा परोक्ष किसी न किसी रूप में अवश्य दिखाई पड़ता है।
3. इस उपन्यास में मुख्य कथा के साथ-साथ जिन प्रासंगिक कथाओं का आयोजन किया गया है, उन सबके साथ किसी न किसी रूप में बंटी अवश्य ही सम्बद्ध है, चाहे प्रत्यक्ष या परोक्ष किसी भी रूप में। इससे यह स्पष्ट पता चलता है कि बंटी के कारण ही इन सारी कथाओं का अस्तित्व टिका हुआ है। अर्थात इन कथाओं के कारण बंटी की अस्मिता नहीं हैं, बल्कि बंटी की अस्मिता पर ही ये सारी कथाएँ आधारित और निर्भर हैं। इसलिए सारी कथाओं पर अधिकार बंटी का है और उसी में नायकत्व की क्षमता है।
4. 'आपका बंटी' उपन्यास के अनेक पात्रों में एकमात्र 'बंटी' ही ऐसा पात्र है, जो पाठकीय संवेदना और सहानुभूति को अर्जित करने में सक्षम होता है। उसकी परिस्थिति इतनी दारुण है कि माता-पिता के होते हुए भी वह अनाथ की ज़िंदगी जीने के लिए विवश होता है। माता-पिता दोनों ही अपने-अपने रास रंग में इतने मस्त और व्यस्त है कि उसकी ओर से केवल विमुख ही नहीं रहते, बल्कि उसके नैसर्गिक विकास की भी वे चिंता नहीं करते। इसलिए वह एकाकी जीवन जीने के लिए अभिशप्त हो जाता है। इस अभिशाप का कारण वह 'स्वयं' नहीं है अपितु अभिशाप की आग में वह अपने निजी माता-पिता द्वारा ही डाल दिया जाता है। इसलिए स्वाभाविक रूप में पाठकों की करुणा का उद्रेक उसके प्रति हो जाता है। इस दृष्टि से, बंटी ही इस उपन्यास का नायक प्रतीत होता है।
5. बंटी एक शिशु-पात्र है, किन्तु वह इतना महत्त्वपूर्ण और सशक्त है कि उपन्यास के सभी पात्र उसके समक्ष बौने से लगते हैं, चाहे उसकी माँ शकुन हो या पिता अजय, डॉक्टर जोशी हो अथवा वकील चाचा। ऐसा प्रतीत

होता है कि सभी पात्र जैसे उसी के चारों ओर घूमते और मँडराते चलते हों। इसलिए इस उपन्यास में जितने भी संवेग, भाव या रस प्रस्फुटित होते हैं, वे सब किसी न किसी रूप में बंटी के जीवन से ही संबद्ध होते हैं।

6. बंटी का व्यक्तित्व अपने-आप में इतना सशक्त है कि अगर उसे काटकर इस उपन्यास से अलग कर दिया जाए तो शेष कुछ भी नहीं बच पाएगा। इससे भी सिद्ध होता है कि बंटी ही इस उपन्यास का नायक है।

22.2 उपन्यास के नायकत्व का आधुनिक विवेचन

श्रीमती मन्नू भंडारी का 'आपका बंटी' उपन्यास परंपरा-मुक्त और आधुनिक उपन्यास है। यह उपन्यास न केवल आधुनिक जीवन संदर्भों को अभिव्यक्त और रूपायित करता है, बल्कि आधुनिकता की चुनौती को भी यह स्वीकार करता है। रूपात्मक दृष्टि से विचार करने पर एक बात निश्चय ही खुलकर सामने आती है कि आधुनिक उपन्यास में कथानक का विस्तार न होकर चरित्र विश्लेषण की गहराई अधिक होती है। चूँकि इसका आधार और रूप परिवर्तित हो गया, इसलिए परखने की कसौटी भी बदल गई।

आधुनिक उपन्यास के संबंध में 'अज्ञेय' ने लिखा है:

"आरंभ में वृत्तांत में एक नायक होता था, जिस पर या जिसके द्वारा घटनाएँ घटित होती थीं। लेकिन उपन्यासकार यहाँ से निरंतर बढ़ता हुआ नायक के व्यक्तित्व और चरित्र को प्रधानता देता गया और अंत में चरित्रनायक व्यक्ति प्रकार (टाइप) न होकर विशिष्ट व्यक्ति होने लगे। पुरानी घटनाओं के नायकों की भाँति आधुनिक उपन्यास के नायक को 'धीर', 'धीरोदात्त' या 'शांत' आदि वर्गों में रख देना पर्याप्त नहीं है, प्रत्येक व्यक्ति का एक विशेष और अद्वितीय चरित्र होता है।"

अज्ञेय की इन पंक्तियों का विश्लेषण करने पर दो बातें स्पष्ट रूप से उभर कर सामने आती हैं–

1. सबसे पहली बात यह है कि प्राचीन उपन्यासों में नायक के द्वारा घटनाओं का विकास होता था। अतः घटना और पात्र में परस्पर संबंध होते थे। अर्थात उन उपन्यासों में घटनाओं के लिए घटनाओं का आयोजन होता था, जबकि आधुनिक उपन्यास में घटनाओं की बहुलता न होकर घटनात्मक संकोच ही अधिक होता है। आधुनिक उपन्यास में वस्तु, तत्व को फैलाने का काम नहीं करतीं अपितु व्यक्ति-पात्र अथवा नायक ही आंतरिक गहराई को रूपायित करने का प्रयास करती हैं।

टास्क 'आपका बंटी' उपन्यास के नायकत्व की आधुनिक विवेचना कीजिए।

2. प्राचीन उपन्यासों के चरित्र–नायक व्यक्ति-प्रकार (टाइप) हुआ करते थे, जबकि आधुनिक उपन्यासों का नायक अपनी सीमा में बँधा एक साधारण व्यक्ति मात्र होता है और इसके चरित्र के माध्यम से व्यक्ति-चरित्र के आंतरिक पक्ष का उद्‌घाटन करना ही आज के उपन्यासकार का अभीष्ट है।

'आपका बंटी' उपन्यास परंपरित उपन्यासों से सर्वथा भिन्न और अलग है। इस उपन्यास के माध्यम से मन्नू भंडारी ने हिंदी उपन्यास के क्षेत्र में नया कीर्तिमान स्थापित करने के साथ-साथ एक नए आयाम की शुरूआत भी की है। इसके संबंध में विष्णुकांत शास्त्री ने लिखा है:

'चूँकि इस उपन्यास का केंद्र बिंदु बंटी है, अतः अन्य सभी प्रसंग उसी के माध्यम से उभारे गए हैं। लोकप्रियता और साहित्यिक मान्यता में आजकल विरोध माना जाने लगा है। मेरा विश्वास है कि 'आपका बंटी' उस धारणा का अपवाद साबित होगा, उसको लोकप्रियता भी प्राप्त होगी और साहित्यिक मान्यता भी।'

सच्चाई भी यही है कि प्रारंभ से अंत तक बंटी का इस उपन्यास की कथावस्तु से संबंध है। उपन्यास में उसकी भूमिका अत्यंत प्रभावशाली, सशक्त तथा महत्त्वपूर्ण है। श्रीमती मन्नू भंडारी ने 'बंटी' के माध्यम से मानव मन की

नोट

कुंठा, निराशा, हताशा, दुर्बलता, उत्पीड़न, आशा, आकांक्षा तथा घुटन आदि का चित्रण अत्यंत सूक्ष्मता से किया है। इस तथ्य के समर्थन की दृष्टि से एक उदाहरण देखें–

"मम्मी ने ऐसी चुभती नजरों से उसे देखा कि वह भीतर तक सहम गया और खट से उसने आँखें बंद कर लीं। पर बंद आँखों से भी वह चुभन को महसूस करता रहा। फिर बंद आँखों से ही उसने जाना कि मम्मी भी उसकी बगल में आकर लेट गई हैं। अब सबको सुलाकर मम्मी जागती रहेंगी।"

चाचा की कही हुई बात बुरी थी? अनायास ही मम्मी की उँगलियाँ उसके बालों को सहलाने लगीं–काँपती-थिरकती उँगलियाँ। उन उँगलियों के पोरों में से झर-झरकर जाने कैसा स्नेह बंटी की नसों में दौड़ने लगा कि मन में थोड़ी देर पहले जो भय समाया था, वह अपने-आप ही धीरे-धीरे बह गया। स्पर्श से ही वह जान गया कि अब तक मम्मी के चेहरे की वह सख्ती भी जरूर पिघल गई होगी।

उसने धीरे-धीरे आँखें खोलीं। मम्मी हमेशा की तरह छत की ओर देख रही थीं। आँख से शायद अभी-अभी झरा आँसू कनपटी को भिगोता हुआ बालों की लट से लटका था। मम्मी का आँसू। मम्मी को उदास होते देखा है। गुस्सा होते और डाँटते हुए भी देखा है पर रोते हुए कभी नहीं देखा।

चाचा ने शायद कोई बहुत ही खराब बात कह दी है। चाचा को लेकर उसके मन में अजीब तरह का आक्रोश घुलने लगा। एक तो कुछ लाए नहीं, फिर झूठ बोला और अब कोई गंदी-सी बात कहकर मम्मी को–

"मम्मी शायद बहुत दुखी हैं। जैसे भी होगा, वह मम्मी के दुख को दूर करेगा। ये लोग सारी बात बताएँगे तो ठीक है, नहीं तो खुद पता लगाएगा। माँ का दुख दूर करने वाले राजकुमार तो कैसे-कैसे कठिन काम करते थे।"

आधुनिक उपन्यास में घटना का महत्त्व उतना नहीं रहा, जितना परिस्थिति और मानसिक संघर्ष का। इसका कारण यह है कि व्यक्ति के भीतर ही घटनाएँ घटित होती हैं। दूसरे शब्दों में यों कह सकते हैं कि पुराने उपन्यासों में वर्णित नायक अथवा पात्र बाह्य घटनाओं से अधिक प्रभावित होते थे, किंतु आधुनिक उपन्यासकार यह मानते हैं कि अधिकांश घटनाएँ व्यक्ति-मन पर निर्भर करती तथा उनके भीतर ही घटती हैं। यही कारण है कि आधुनिक उपन्यासकार घटनाक्रम को महत्त्व न देकर पात्रों के आंतरिक और चारित्रिक विश्लेषण पर जोर देता है। इस चारित्रिक विश्लेषण के लिए व्यक्ति-पात्रों के अवचेतन और अचेतन मन की अतल गहराई का मनोवैज्ञानिक अध्ययन प्रस्तुत करता है।

'आपका बंटी' एक व्यक्तिवादी और चरित्र विश्लेषणात्मक उपन्यास है जैसा कि इस उपन्यास के शीर्षक से ही स्पष्ट हो जाता है कि बंटी इस उपन्यास का सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण पात्र है, जिसके चरित्र का उद्घाटन पूरे उपन्यास में किया गया वही सबसे विशिष्ट पात्र है और उपन्यास की सारी घटनाएँ उसी के चारों ओर घटित होती हैं। उसका चरित्र इतना सशक्त और महिमा-मंडित है कि उपन्यास के अन्य सभी पात्र, एक प्रकार से उसी पर निर्भर करते हैं, वह चाहे शकुन हो या फूफी, अजय हो या डॉक्टर जोशी, वकील चाचा हो अथवा माली, जोत हो या मीरा। इस उपन्यास में बंटी की कथा आद्यंत रूप से प्रस्तुत की गई है। यहाँ 'कथा' कथामात्र न होकर उसके चरित्र-विश्लेषण का माध्यम बन गई है।

बंटी एक असाधारण व्यक्ति-चरित्र है। वह 'टाइप' न होकर मूल रचना है। वह यथार्थ की मिट्टी से बना है। इसीलिए उसके व्यक्तित्व में यथार्थ का अनगढ़पन दिखाई पड़ता है। उसका व्यक्तित्व मनोविज्ञान समर्थित है। बंटी एक ऐसा बालक है जिसकी मानसिक वृत्तियाँ हैं–अहम्, विद्रोह, अक्खड़पन, बौद्धिकता, संवदेनशीलता, यौन-भावना, कुंठा, अकेलापन, भय तथा संत्रास आदि। बंटी के माध्यम से मन्नू भंडारी ने इस उपन्यास में इन्हीं मानसिक वृत्तियों को विश्लेषित करने का उपक्रम किया है।

बंटी एक सजग और अत्यंत संवेदनशील बालक है। उसमें जिज्ञासा की गहराई और तीव्र तड़प है। उपन्यास के प्रारंभ से अंत तक वह अपने और अपने पापा के विषय में अत्यधिक गंभीरता से सोचता-विचारता रहता है। नई परिस्थितियों के आने पर वह उन्हें पूरी तरह समझना चाहता है तथा उन्हें अपने अनुकूल जोड़ना-मोड़ना चाहता है। परिस्थितियों से जहाँ उसका अभियोजन (एडजस्टमेंट) नहीं हो पाता, वहाँ वह विद्रोही हो जाता है। कभी स्वयं के प्रति, कभी परिस्थितियों के प्रति और कभी अपने और परिस्थितियों के बीच आने वाले लोगों के प्रति। अत्यधिक बौद्धिक होने के कारण वह परिस्थितियों से समझौता नहीं कर पाता। उसमें एक प्रकार का अक्खड़पन है, जिसके कारण वह

आत्मपीड़न को बराबर झेलता रहता है। इसीलिए मम्मी के लाख समझाने पर भी वह डॉक्टर जोशी को 'पापा' कहने के लिए सहमत नहीं होता। वह 'पापा' के रूप में अजय को ही देखता है। ठीक इसी प्रकार अजय भी जब उसके सामने मीरा को मम्मी कहने का प्रस्ताव रखता है तो उसे स्वीकार नहीं कर पाता, क्योंकि मम्मी के रूप में वह केवल शकुन को देखता-मानता है।

बंटी का संपूर्ण व्यक्तित्व उपेक्षाओं से भरा है। इसलिए उसका जीवन असामान्य-सा बन जाता है। घर में तो उसकी मम्मी उसे बेहद प्यार करती है किंतु कॉलेज में पहुँचने पर वह केवल प्रिंसिपल रह जाती है–मम्मी नहीं। 'इसलिए उसने कॉलेज जाना छोड़ दिया। घर में चाहे वह अकेला रह ले, पर वहाँ नहीं जाता। वहाँ किसके पास जाए? मम्मी तो वहाँ रहती नहीं, रहती है बस एक प्रिंसिपल, जिसके चारों ओर बहुत सारे काम, बहुत सारे लोग रहते हैं। नहीं रहता है तो केवल बंटी।'

स्व-मूल्यांकन (Self-Assessment)

रिक्त स्थानों की पूर्ति करें (Fill in the blanks) :

1. बंटी एक सजग एवं अत्यंत .... बालक है।
2. भय की प्रवृत्ति मध्यमवर्गीय परिवार के बालकों में .... अधिक पाई जाती है।
3. शकुन अपनी परिस्थितियों की .... से एकदम ऊब जाती है।

बंटी एक ऐसा पात्र है, जो अपने संपर्क में आने वाली हर वस्तु, नई बात और नई परिस्थितियों के संबंध में जिज्ञासा भाव रखता है। जब कभी फूफी उसे कोई कहानी कहकर सुनाती है तो कभी वह तर्क करता है और कभी उससे प्रभावित होता है। कभी तो वह 'डायन' के बारे में जानकारी हासिल करना चाहता है और कभी पर्वतों के भीतर या उसके दूसरे छोर पर तपस्या करने वाले साधु-सन्यासी के विषय में कल्पना करते-करते खो जाता है। कभी तो दूसरों से सुनकर वह 'तलाक' का अर्थ समझने की कोशिश करता है और कभी अपने पिता के बारे में अपनी तीव्र जिज्ञासा व्यक्त करता है। अपने पिता के द्वारा जब वह कलकत्ता का वर्णन सुनता है तो अपने सहज-स्वाभाविक रूप में उसके बारे में कल्पना करने लगता है। जब उसकी मम्मी डॉक्टर जोशी के संपर्क में आने लगती है, तब बंटी डॉक्टर जोशी को पूरी तरह समझने की कोशिश करता है। डॉक्टर और मम्मी के क्रिया-व्यापार को वह बड़े गौर से देखता है और उसके अर्थ को समझने की कोशिश करता है। वह प्रारंभ से ही सजग और जिज्ञासु है–"मम्मी जब भी कॉलेज जाने के लिए तैयार होती है, बंटी बड़े कौतुहल से देखता है। जान तो वह आज तक नहीं पाया, पर उसे हमेशा लगता है कि ड्रेसिंग टेबल की इन रंग-बिरंगी शीशियों में जरूर कोई जादू है कि मम्मी इन सबको लगाने के बाद एकदम बदल जाती है। कम से कम बंटी को ऐसा ही लगता है कि उसकी मम्मी अब उसकी नहीं रही, कोई और ही हो गई।"

ठीक उसी प्रकार, जब कभी टीटू उसके पिता के विषय में बातें करता है तो उसका कोमल मन आहत हो उठता है–"क्यों रे बंटी, तेरा मन नहीं होता कि पापा तेरे साथ रहें? जब यहाँ आते हैं तो तू कहता क्यों नहीं? पर अब शायद रह नहीं सकते।"

"तेरे मम्मी-पापा में तलाक जो हो गया है।"

न चाहते हुए भी बंटी पूछ बैठता है, "तलाक? तलाक क्या होता है?"

"तू नहीं जानता? बुद्धू कहीं का। मम्मी-पापा की जो लड़ाई होती है न उसे तलाक कहते हैं।"

"तुझे कैसे मालूम?"

"मेरी अम्मा बता रही थी, पापा बता रहे थे।"

बंटी तब भीतर ही भीतर कहीं अपमानित हो गया।

इस बात को जानने के बाद बंटी के भीतर एक प्रकार की आग सुलगने लगती है। वह सोचने लगता है, "पर मम्मी को तो ऐसा नहीं करना चाहिए न? मम्मी उसे पापा की बात बताती क्यों नहीं है? कितनी ही बार उसने मम्मी से

नोट

यह बात करनी चाही, पर जब भी वह ऐसी बात करता है, मम्मी का चेहरा न जाने कैसा-कैसा हो जाता है। उसे डर-सा लगने लगता है।

पर मम्मी-पापा की लड़ाई क्यों हुई? मम्मी कभी पापा की बात नहीं करती। पापा आते हैं तो सर्किट हाउस में ठहरते हैं। मम्मी को बुलाते भी नहीं, मम्मी की बात भी नहीं करते। क्या इतने बड़े लोग भी लड़ते हैं? ऐसी लड़ाई, जिसमें कभी दोस्ती ही न हो। क्या मम्मी को पापा की याद नहीं आती होगी?"

बंटी में जिज्ञासा की तीव्रता काम करती है। प्रत्येक नई वस्तु या नई बात की वह पूरी जानकारी प्राप्त करना चाहता है। इसीलिए डॉक्टर जोशी तथा मम्मी के पारस्परिक संबंधों को वह बड़ी बारीकी से समझना चाहता है। जब डॉक्टर जोशी बंटी और उसकी माँ शकुन को गाड़ी में बिठाकर घुमाने और अपने घर ले जाते हैं तब उसकी जिज्ञासा प्रतिक्रिया में बदल जाती है। वह सोचने लगता है "ये मम्मी डॉक्टर साहब से इतना सटकर क्यों बैठी हैं? ऐसे तो मम्मी कभी किसी के साथ नहीं बैठतीं। बंटी को बहुत अजीब लग रहा है। अजीब और बहुत खराब भी।" वह जानता है कि उसकी मम्मी इन दिनों बदल गई हैं। 'पर अच्छी हो गई हैं या बुरी' यह तय नहीं कर पाया।

बंटी एक ऐसा बालक है, जिसमें जिज्ञासा की पैठ है। 'सेक्स' एक मूल-प्रवृत्ति है, जो प्रत्येक व्यक्ति में शैशव से ही काम करने लगती है। बंटी 'सेक्स' के विषय में बहुत नहीं जानता, किन्तु उसके मन में यह मूल प्रवृत्ति विद्यमान अवश्य है। "पलंग के एक सिरे से डॉक्टर साहब रजाई उतार कर उठे तो बंटी धक्। छी! छी! यह क्या? इतना बड़ा आदमी एकदम नंग-धड़ंग। बंटी की आँखें फटी पड़ रही हैं।"

और मम्मी भी देख रही है। शरम नहीं आ रही है इन लोगों को? उसे जैसे मिचली-सी आने लगी.... पर आँखें हैं कि फिर भी बंद नहीं हो रही...।

फिर मम्मी धीरे से उतरी उसी रैक की ओर गई। उन्होंने भी अपना हाउस कोट उतारा तो...। उसने आज तक अपनी मम्मी को ऐसे नहीं देखा। छी! छी! बेशरम-बेशरम...।

बंटी एक अहंवादी व्यक्ति है। यह अकारण नहीं है, बल्कि परिस्थितियों ने उसके स्वभाव को ऐसा बना दिया है। उसका अहंभाव, वास्तव में आत्मतुष्टि के लिए है, जिससे उसके व्यक्तित्व में संतुलन स्थापित होता है। टीटू जब उससे उसके पिता के विषय में पूछता है, तब उसका अहंभाव विभिन्न प्रकार से व्यक्त होता है–"पापा साथ नहीं रहते तो क्या हुआ, वह तो शुरू से ही साथ नहीं रहते। वह तो हमेशा से ही मम्मी के पास रहता है। उसकी मम्मी कोई ऐसी-वैसी हैं? कॉलेज की प्रिंसिपल हैं, आते-जाते लोग कैसे सलाम ठोकते हैं। करेगा कोई ऐसे सलाम उनकी अम्मा को?...अच्छा है, पापा के साथ रहो, डाँट खाओ, पिटो और कान खिंचवाओ। उसका यह अहंभाव बार-बार व्यक्त होता रहता है। जब कभी उससे उसकी बागवानी के बारे में बात करता या अमि जब उसके खिलौनों को लेना चाहता है तो अपने पापा द्वारा दिए गए खिलौनों के प्रति वह अपना अहंभाव प्रदर्शित करता है। इससे यह स्पष्ट होता है कि बंटी का चरित्र, इस उपन्यास में एक अहंवादी व्यक्ति के रूप में चित्रित किया गया है।

इस उपन्यास के नायक बंटी में न केवल अंहभाव, बल्कि विद्रोही की तीव्रता भी है। जब भी उसका अहंभाव बाधित होता है या उसकी परितुष्टि नहीं होती, तब या तो वह जिद्दी बन जाता है अथवा विद्रोही। उसका विद्रोह कभी तो स्वयं के प्रति होता है और कभी दूसरों के विरुद्ध। उसका विद्रोह कभी तो भावना, संवेदना या विचार के स्तर पर होता है और कभी बाह्य क्रिया-व्यापार के रूप में। डॉक्टर जोशी जब उसकी मम्मी को 'तुम' कहकर संबोधित करते हैं, तब उसे 'तुम' शब्द बिल्कुल अच्छा नहीं लगता। मन ही मन वह सोचता है। "सब लोग मम्मी को आप-आप कहकर बोलते हैं और ये कैसे तुम-तुम कह रहे हैं। इतना भी नहीं मालूम कि मम्मी प्रिंसिपल हैं। प्रिंसिपल को आप कहा जाता है कि नहीं।"

उसके चरित्र-विश्लेषण के संदर्भ में एक घटना उल्लेखनीय है। बंती अपनी कापी पर 'ब्राउन कवर' चढ़ाने की जिद्द किए जा रहा है और उसकी माँ डॉक्टर जोशी से बातें करने में व्यस्त है। उसके मन में एक प्रकार की खीझ-सी उत्पन्न होती है और वह भभक उठता है–"तुम्हें मेरी बिल्कुल परवाह नहीं रह गई है। मत करो मेरा कोई भी काम। बस, डॉक्टर साहब के पास बैठकर चाय पिओ। तुम्हारा क्या है, सजा मुझे मिलेगी। मैं अब स्कूल ही नहीं जाऊँगा, कभी नहीं जाऊँगा, कभी भी नहीं।" और बंटी फूट-फूटकर रोने लगा।

मम्मी ने पकड़कर उसे अपनी ओर खींचा–"पागल हो गया है। एक दिन कवर नहीं चढ़ेंगे तो क्या हो गया? कोई सजा नहीं मिलेगी, मैं चिट्ठी लिख दूँगी 'सर' के नाम, चुप हो जा।"

"नहीं, मैं कोई चिट्ठी-विट्ठी नहीं ले जाऊँगा। मैं स्कूल भी नहीं जाऊँगा गंदी कहीं की..." और कहने के साथ ही बंटी ने मम्मी की ओर देखा–लो, अब डाँटो मुद्रा में।

बंटी का विद्रोही व्यक्तित्व उपन्यास के कई स्थलों पर दिखाई देता है। डॉक्टर जोशी के घर आने पर अमि के साथ उसकी नहीं बनती। कभी टेबल के लिए तो कभी अलमारी के लिए उसके मन में विद्रोह का भाव बार-बार उठता रहता है कि उसकी जो मम्मी इतना प्यार करती थी, जिस पर वह उतना गर्व पालता था, उसे भी परिस्थितिवश छोड़कर अपने पिता अजय के साथ कलकत्ता चला जाता है। इस प्रकार विद्रोह उसके व्यक्तित्व का एक आवश्यक अंग बन जाता है।

विद्रोही और अंहवादी बंटी में संकोच वृत्ति कूट-कूटकर भरी हुई है। वस्तुस्थिति को महसूस करने के बावजूद वह बहुत कुछ कह नहीं पाता है। उसका प्रत्येक कथन चिंतन के स्तर पर होता है। मम्मी, पापा, डॉक्टर जोशी, वकील चाचा तथा मीरा आदि के संबंध में कई बार उसके मन में खीझ-सी पैदा होती है। किंतु अधिकांशत: वह अपनी अनुभूति और तीव्र प्रतिक्रिया को मन में ही दबा लेता है–संकोच के कारण वह कुछ कह नहीं पाता। अत्यधिक संवेदनशील होने के कारण वह स्थिति का अनुभव तो करता है, किंतु अपनी संकोच-वृत्ति के कारण कोई ठोस प्रतिक्रिया व्यक्त नहीं कर पाता। इसके पीछे सबसे बड़ा मनोवैज्ञानिक कारण यह है कि उसकी मम्मी ने उसके व्यक्तित्व पर 'समझदार' और 'अच्छा' होने की मुहर लगाकर उसे दबा दिया है–बंटी से कुछ भी नहीं पूछा गया, कुछ भी नहीं कहा गया। मम्मी उसे कितना ही प्रेम करे फिर भी वह मम्मी से कहीं डरता जरूर है।

नोट्स बंटी का व्यक्तित्व मनोविज्ञान समर्थित है। उसके व्यक्तित्व का विकास फ्रायड के यौन-सिद्धांत के ही अनुरूप होता है। उसके व्यक्तित्व और चरित्र में किसी न किसी रूप में यौन-भाव व्याप्त है। यौन-भाव उसके जीवन को परिचालित भी करता है।

बंटी का चारित्रिक विकास बाल मनोविज्ञान के परिप्रेक्ष्य में होता है। वह जहाँ किसी वर्जित दृश्य को देखता है, उसे और भी गहराई से देखने लगता है तथा उसकी चेतना यौन-भावना से आंदोलित हो उठती है। यह एक मनोवैज्ञानिक सिद्धांत है कि बच्चे निषिद्ध अथवा वर्जनाओं के प्रति अधिकाधिक तीव्रता से आकृष्ट होते हैं। वर्जनाएँ जिस मात्रा में होती हैं, आकर्षण भी उसी तीव्रता से होता है। मनोविज्ञान का यह सिद्धांत बंटी पर एकदम सही ढंग से लागू होता है। बंटी एक मध्यमवर्गीय परिवार का लड़का है। मध्यमवर्ग के परिवार में यौन संबंधों की चर्चा वर्जित होती है। उसके परिवार की भी स्थिति यही है। एक और विशेष बात यह है कि उसके परिवार में उसके और उसकी माँ के अलावा कोई भी और नहीं है, जिसके कारण उसकी यौनभावना कुंठित और दमित हो जाती है। बाद में वह अपनी इस यौन-कुण्ठा का साक्षात्कार अपनी मम्मी और डॉक्टर जोशी की काम-भावना में लिप्त होकर करता है। पहले तो इसे वह एक शर्मनाक बात समझता है–"कहीं मम्मी उसे जागता हुआ न देख लें।"

पलंग के एक सिरे से डॉक्टर साहब रजाई उतार कर उठे तो बंटी धक्! छी-छी यह क्या? इतना बड़ा आदमी नंग-धड़ंग। बंटी की आँखें फटी पड़ रही हैं।

और मम्मी भी देख रही हैं। शरम नहीं आ रही है इन लोगों को? उसे जैसे मितली-सी आने लगी। पर आँखें हैं कि फिर भी बंद नहीं हो रहीं।

डॉक्टर साहब ने कपड़े पहन लिए फिर भी जैसे दिमाग में वही सब घूम रहा है।

फिर मम्मी धीरे से उतरीं और उसी रैक की ओर गई। उन्होंने भी अपना हाउस-कोट उतारा तो...।

बंटी भीतर ही भीतर भय से थर-थर काँपने लगा। ये उसी की मम्मी हैं? उसने आज तक अपनी मम्मी को ऐसे नहीं देखा। उसकी मम्मी ऐसी हो ही नहीं सकतीं। यह क्या हो रहा है?

छी-छी, बेशरम-बेशरम! उसका मन हुआ रजाई उतार फेंके और जोर-जोर से चीखे।

नोट

इन सारे दृश्यों को देखने के बाद उसके मन में दो प्रकार की प्रतिक्रिया होती है। पहली प्रतिक्रिया तो अपनी माँ और डॉक्टर जोशी के विरुद्ध होती है अर्थात् माँ के प्रति उसके मन में जो औदात्य था, वह धराशायी हो गया और दूसरी प्रतिक्रिया के रूप में उसके भीतर भी यौन-भावना (सेक्स) की धारा प्रवाहित होने लगती है। फलस्वरूप वह डॉक्टर जोशी की लड़की–जोत के प्रति सहज भाव से आकृष्ट होने लगता है–'जोत की बात, जोत की आवाज, जोत का चेहरा, सबसे उसे बड़ी तसल्ली मिल रही है। कल से ही उसे ऐसा लग रहा है। जब-जब उसने जोत को देखा, जोत उसे हमेशा अच्छी लगी। जोत की तरफ देखते रहना भी उसे अच्छा लगता है।' पहले तो बंटी के मन में जोत का रूप और सौंदर्य का आकर्षण तीव्र होता है, फिर बाद में यौन-भाव तीव्रतर होने लगता है–'जोत कभी अपने रूप में और कभी मम्मी के रूप में सामने आती है। वह उसके फ्रॉक में से झाँकने की कोशिश करता है। मम्मी जैसा तो कुछ नहीं है, शायद बड़े होकर सबकुछ वैसा ही हो जाएगा।

और फिर सब जगह वही... वही....।

पर साँझ घिरने के साथ-साथ और सारी भावनाएँ तो गायब हो गईं, रह गई सिर्फ एक अपराध भावना। कुछ बहुत ही गंदा काम करने की अपराध-भावना। बंटी का यौन भाव विपरीत लिंगी रति है, जो अपनी मम्मी के स्पर्श-सुख से प्रारंभ होकर जोत पर जा टिकता है। वास्तव में यह एक मूल प्रवृत्ति है, जिसका विकास प्रत्येक शिशु में अपने विपरीत लिंग वाले के प्रति स्वत: होता है। बाद में, बंटी की यह यौन-भावना आंगिक चेष्टा के रूप में परिवर्तित और विकसित होने लगती है। "नहाने लगा तो अपने अंग को लेकर भी वैसी थील महसूस होने लगी। मन ही मन डॉक्टर साहब के साथ अपनी तुलना शुरू हो गई। बड़ा होकर वह भी ऐसा ही हो जाएगा। वह सोच रहा है, हाथ में लेकर देख रहा है और भीतर ही भीतर एक अजीब-सी सिहरन हो रही है। पहली बार उसे लग रहा है, जैसे वह है, उसके भी कुछ है।"

क्या आप जानते हैं बालकों में 'भय' की प्रवृत्ति भी नैसर्गिक होती है। 'भय' की प्रवृत्ति मध्यमवर्गीय परिवार के बालकों में अपेक्षाकृत अधिक पाई जाती है। यह वर्ग ऐसा है, जो हर बात को पाप और पुण्य की कसौटी पर कसकर स्वीकार करता अथवा नकारता है।

बंटी एक मध्यवित्त परिवार का बालक है, जो जोत के प्रति अपनी सौंदर्य-भावना तथा यौन-भावना का बौद्धिक विश्लेषण करता है। वह अपनी इस नैसर्गिक प्रवृत्ति का दमन भी करता है। 'आज एक मिनट भी पढ़ने में मन लगा है। उसका स्कूल में? अब किस तरह वह पढ़ेगा? नहीं, नहीं, वह अब कभी नहीं सोचेगा इन बातों को। कितना पाप चढ़ा होगा आज उस पर। क्या करे वह? जैसे अजीब-सी असहायता घिर आई उसके चारों ओर और रात आते ही यह अपराध भावना भय में बदलने लगी है। पता नहीं किसका भय, कैसा भय? पर कुछ है, जो उसे दबोचे जा रहा है।'

'प्रेम और घृणा' के मनोवैज्ञानिक सिद्धांत के अनुरूप ही बंटी का चारित्रिक व्यक्तित्व दृष्टिगत होता है। मनोविज्ञान का एक सिद्धांत है, जिसके मुताबिक प्रेम और घृणा का अस्तित्व समानुपातिक मात्रा में होना बताया गया है अर्थात् कोई भी मनुष्य किसी दूसरे व्यक्ति को जिस मात्रा में प्यार करता है, उसी मात्रा में उससे घृणा भी करता है। इस सिद्धांत की चरितार्थता इस बात से सिद्ध होती है कि बंटी अपनी माँ को बेहद प्यार करता है लेकिन बाद में उसे उसी मात्रा में घृणा की दृष्टि से भी देखता है और उसका परिणाम यह होता है कि बंटी उससे दूर हो जाता है। बाह्य जगत् के दृश्यों के संबंध में भी यही सिद्धांत काम करता है। इस संदर्भ में एक उदाहरण देखें–

"मक्खन लगाते-लगाते चाय का घूँट लेती मम्मी के भी मिनट-मिनट में कपड़े उतर जाते हैं। एक बड़ा भारी-सा रहस्य था, जो उसे एकाएक ही पता लग गया है। जैसे पहले बड़ा डर लगा था, फिर अजीब-सी घिन छूटी और अब गुस्से और घिन के साथ-साथ इच्छा हो रही है कि बार-बार उसी दृश्य को देखे।"

बंटी में, सामान्य बालकों की तरह 'बदले की भावना' भी अत्यंत सशक्त रूप में दृष्टिगत होती है। इस भावना के द्वारा वह एक प्रकार से अपने भीतर अपने अहं की क्षति-पूर्ति करता तथा भीतर से हल्कापन महसूस करता है। बंटी

इस वृत्ति से पूर्णतया ग्रस्त है। उसकी माँ का ध्यान उसकी ओर से हटकर डॉक्टर जोशी की ओर लग गया है, जिसके कारण उसका मन दुख, अवसाद और उपेक्षा से भर गया है। इसका बदला वह अपने अवचेतन मन के स्तर पर अपनी माँ से लेना चाहता है। ऐसी स्थिति में वह मम्मी के दुख को बढ़ाने या चिढ़ाने के लिए अपने पापा को पत्र लिखता है। "यहाँ आकर जाने कैसे। परेशानी और दु:ख के साथ उसका संतोष और जुड़ गया है। एक बदला...।"

बदला! और एकाएक ख्याल आया, वह इस समय पापा को चिट्ठी क्यों नहीं लिख देता।

बदले की भावना उसके मन में इस हद तक सघन बन जाती है कि वह एक प्रकार से आत्मघाती बन जाता है। वह समझ ही नहीं सकता कि शकुन से बदला लेते-लेते कितना बड़ा बदला उसने अपने आप से ले लिया है। शकुन को कष्ट देने के लिए कितना बड़ा कष्ट उसने अपने आपको दे डाला है।

इस प्रकार ऊपर के विवेचन-विश्लेषण से यह बात स्पष्ट हो जाती है कि बंटी का चारित्रिक व्यक्तित्व परिस्थितियों की देन है। परिस्थितियां ही उसके व्यक्तित्व को बनाने-बिगाड़ने के लिए जिम्मेदार हैं। माता-पिता के बिगड़ते संबंधों और तलाक की विकट परिस्थिति के हाथों में पड़कर ही उसका चारित्रिक व्यक्तित्व बनता-बिगड़ता है। इस संबंध में अत: यह सोचना एकदम सार्थक है कि "हम लोग शायद बंटी को मात्र एक साधन ही समझते रहे। अपने-अपने अहम् अपनी-अपनी महत्वकांक्षाओं और अपनी-अपनी कुंठाओं के संदर्भ में ही सोचते रहे। बंटी के संदर्भ में कभी सोचा ही नहीं।"

बंटी का जीवन उपेक्षाओं से भरा हुआ है। अकेलेपन का बोध, न केवल उसे अंदर ही अंदर काटता बल्कि समाज से भी अलग कर देता है। इसी कारण वह समाज के प्रति भीरु भी बन गया है। उसके व्यक्तित्व में जीवंतता का अभाव नहीं है, फिर भी विकास की अनुकूल परिस्थिति के अभाव में वह सुदृढ़ और स्थिर नहीं हो पाता।

बंटी अत्यधिक संवेदशील है। उपन्यास के प्रारंभ से लेकर अंत तक वह बराबर ही अपने माता-पिता के प्रति सोचता-विचारता रहता है। बराबर उसकी यही प्रबल इच्छा बनी रहती है कि उसे अपने पापा का स्नेह और प्यार प्राप्त हो, किंतु उसकी यह इच्छा पूरी नहीं हो पाती। अंदर ही अंदर दोनों को एक साथ देखना चाहता है, लेकिन ऐसा हो नहीं पाता। इससे उसके मन में एक प्रकार की कुंठा की भावना बैठ जाती है। उपन्यास के अंत में वह मम्मी से अलग, होस्टल में दाखिल कर दिया जाता है। लेखिका ने इसका बड़ा ही सूक्ष्म चित्रण किया है–

"तुम बहस मत करो मीरा, इस बात पर कुछ भी मत कहो।" आकाश के सारे तारे बुझ गए। मोगरा और डहेलिया गायब हो गए। सारा दृश्य जहाँ का तहाँ स्थिर हो गया। सिर्फ पापा की आवाज यहाँ से वहाँ तक गूँजती रही, गुस्से से भरी हुई आवाज।

"मुझे किसी और स्कूल में कोशिश नहीं करनी, उसे होस्टल ही भेजना है। यहाँ घर में रखने के लिए मैं उसे नहीं लाया हूँ। मैं क्या जानता नहीं कि इस घर में...।"

"और फिर बातों के टुकड़े-टुकड़े....एबनॉर्मल....महीना कैसे चलेगा.... तुम्हारी जिद...मेरा तो कुछ कहना ही गलत है...।"

"और फिर केवल आवाजें, बिना शब्दों की आवाजें–कभी जोर-जोर की, कभी दबी-दबी फुसफुसाती हुई।"

"और फिर सन्नाटा।"

"सन्नाटा और ज्यादा गहरा हो गया।"

इस प्रकार बंटी का मोह भंग हो जाता है और कामनाएँ बिखर जाती हैं।

ऊपर के समस्त विवेचन-विश्लेषण से हम इस निष्कर्ष पर पहुँचते हैं कि मन्नू भंडारी ने बंटी के चरित्र का विकास यथार्थ और मनोविज्ञान के परिप्रेक्ष्य में आकलित किया है। उसके व्यक्तित्व में, इसीलिए एक सामान्य मनुष्य की सहजता और स्वाभाविकता दिखाई पड़ती है। उसका चरित्र कहीं भी अतिरंजित और अतिशयोक्ति पूर्ण नहीं दिखाई देता बंटी ही वास्तव में सबसे प्रमुख और विशिष्ट पात्र है। अतएव वही उस उपन्यास का नायक भी है, जिसके लिए उपन्यास की रचना की गई है। इस संबंध में डॉ. परमानंद श्रीवास्तव ने लिखा है:

'आपका बंटी' हिंदी कथा साहित्य में शायद लंबे अरसे के बाद उभरने वाला, सवालों से घिरा और टूटा हुआ एक ऐसा चरित्र है, जो आश्चर्य नहीं, पाठक को अपने भीतर, बहुत नजदीक जान पड़े, बहुत सजीव, भीतर-बाहर के दबावों के बीच एक खंडित लय की तरह टीसता हुआ....।

नोट

उपन्यास के शीर्षक के वाच्यार्थ से भी यही प्रतीति होती है कि बंटी इस उपन्यास का नायक है, जिसके माध्यम से उपन्यास-लेखिका ने सामाजिक विसंगतियों को रेखांकित करने का प्रयास किया है।

स्व-मूल्यांकन (Self-Assessment)

निम्नलिखित कथनों में सत्य अथवा असत्य की पहचान करें

(State Whether the following statements are True or False) :

4. बंटी का संपूर्ण व्यक्तित्व उपेक्षाओं से भरा है।
5. वकील चाचा के समझाने पर भी शकुन तलाक के कागज पर साईन नहीं करती है।
6. शकुन का पति अजय मुंबई में रहता है।

22.3 शकुन का चरित्र-चित्रण

किसी भी उपन्यास की नायिका के लिए निम्नांकित शर्तें मानी गई हैं–

1. नायिका उपन्यास में वर्णित समस्त नारी-पात्रों में विशिष्ट नारी-पात्र होती है।
2. उसकी उपस्थिति उपन्यास में आद्यांत (आदि से अंत तक) बनी रहती है।
3. नायिका का उपन्यास के कथानक पर लगभग वैसा ही अधिकार होता है, जैसा कि नायक का।
4. नायिका का संबंध उपन्यास की आधिकारिक कथा के साथ ही साथ प्रासंगिक कथा के साथ भी किसी न किसी रूप में अवश्य होता है।
5. नायिका का व्यक्तित्व इतना सशक्त होता है कि उपन्यास का अस्तित्व उसके अभाव में संदेहास्पद बन जाता है। अर्थात् उपन्यास से उक्त पात्र को अगर निष्कासित कर दें तो उपन्यास की कथावस्तु एक कदम भी आगे नहीं बढ़ सकती।

नायिका की पहचान के इन लक्षणों को 'आपका बंटी' उपन्यास के संदर्भ में देखते और उन पर विचार करते हैं तो समस्त नारी पात्रों में केवल एक 'शकुन' ही ऐसी है, जिसमें नायिका होने की सामर्थ्य दिखाई देती है। क्योंकि–

1. इस उपन्यास में जितने भी नारी-पात्र हैं, उनमें शकुन सबसे विशिष्ट है। उसकी विशिष्टता गुण, रूप, बुद्धि सभी दृष्टियों से लक्षित होती है। वह न केवल पढ़ी-लिखी युवती, बल्कि कॉलेज की एक प्रिंसिपल है। वह बुद्धिजीवी है और समाज में उसकी प्रतिष्ठा और धाक है। उपन्यास में एक भी ऐसी नारी नहीं, जो किसी भी दृष्टि से शकुन का मुकाबला कर सके। इससे उसकी विशिष्टता निर्विवाद है।
2. 'आपका बंटी' उपन्यास में एकमात्र शकुन ही ऐसा पात्र है, जो इस उपन्यास की कथा-वस्तु में आद्यंत विद्यमान रहती है। लेखिका ने इस उपन्यास में आदि से अंत तक शकुन की यातना को चित्रित करने का उपक्रम किया है। इसलिए उसका लगाव संपूर्ण कथावस्तु के साथ है। इस दृष्टि से शकुन ही इस उपन्यास की नायिका ठहरती है।
3. शकुन की नायिका होने का सबसे बड़ा प्रमाण यह है कि उपन्यास की मुख्य कथा के साथ तो वह जुड़ी है ही, प्रासंगिक कथाओं में भी प्रत्यक्ष और परोक्ष दोनों रूपों में वह संबद्ध है। शकुन और डॉक्टर जोशी का प्रसंग ऐसा है, जिसमें वह साफ-साफ दिखाई देती है। वकील चाचा, अजय आदि के प्रसंग से भी उसे मुक्ति नहीं मिलती। इसलिए समस्त नारी-पात्रों में उसकी महत्ता सर्वाधिक है। इस दृष्टि से भी लगता है कि शकुन ही इस उपन्यास की नायिका है।
4. शकुन एक ऐसी नारी है, जो इस उपन्यास पर पूरी तरह हावी है। वास्तव में, उसकी ही कथा वह आधार और भित्ति है, जिस पर संपूर्ण उपन्यास आधारित और स्थित है। अगर इस उपन्यास के घटना-वृत्त से शकुन को अलग निकाल दें तो शेष 'शून्य' ही बच पाएगा। कथावस्तु के साथ शकुन की साझेदारी इतनी अधिक है कि उसके अभाव में उपन्यास खड़ा हो ही नहीं सकता। इसका सबसे बड़ा कारण यही है कि वही इसका मेरुदंड है। इस दृष्टि से भी मानना होगा कि शकुन ही नायिका है।

अब परंपरित दृष्टि से थोड़ा अलग हटकर विचार करें।

इसके पूर्व हम देख चुके हैं कि 'आपका बंटी' उपन्यास का नायक एक दस वर्षीय बालक बंटी है, जिसकी माँ है–शकुन। 'शकुन' एक नाम है–'असाधारण व्यक्तित्व' का। उपन्यास की कथावस्तु में जितनी दूरी बंटी तय करता है, लगभग उतनी ही दूरी शकुन भी करती है। वह तो उपन्यास के आधार का काम करती है अर्थात् वही वह विशिष्ट कारण है, जिसके चलते बंटी का निर्माण अपने स्वाभाविक रूप में होता है। उसका बनना-बिगड़ना सब कुछ शकुन पर निर्भर करता है। बंटी के जीवन में जो बिखराव आया, जो कुंठा पैदा हुई, उसके मूल में शकुन और अजय का टूटता संबंध अर्थात् तलाक काम करता है।

शकुन का जीवन भी यातना-ग्रस्त है। वह अपने जीवन में व्याप्त कुंठा, निराशा, टूटन, घुटन, तनाव, बिखराव और यातनाओं से बुरी तरह ग्रस्त है। उच्च शिक्षा तथा प्रिंसिपल के बड़े ओहदे को प्राप्त करने बाद भी वह मन से दुखी बनी रहती है। इस सबसे मुक्त होने के लिए वह जीवन में संघर्ष करती रहती है। वह अपने-आपको अधिक से अधिक व्यस्त रखने का प्रयास करती है, ताकि दुख के बोझ को कुछ क्षण के लिए भूल सके, किंतु त्रासदी यह है कि जितना ही वह दुख को अपने-आपसे काटने की या उससे दूर भागने की कोशिश करती है, दुख उसका उतना ही पीछा करता है। इस संदर्भ में कुछ उदाहरण देखे जा सकते हैं–

"साथ रहने की यंत्रणा भी बड़ी विकट थी और अलगाव का त्रास भी। अलग रहकर भी वह ठंडा युद्ध कुछ समय तक जारी ही नहीं रहा बल्कि अनजाने ही अपनी जीत की संभावनाओं का एक नया संबल मिल गया था कि अलग रहकर ही शायद सही तरीके से महसूस होगा कि सामने वाले को खोकर क्या कुछ अमूल्य खो दिया है। और वकील चाचा की हर खबर, हर बात इन संभावनाओं को बनाती-बिगाड़ती रही थी।"

"सामने वाले को पराजित करने के लिए जैसा साभास और सन्नद्ध जीवन उसे जीना पड़ा, उसने उसे खुद ही पराजित कर दिया। सामने वाला व्यक्ति तो पता नहीं कब परिदृश्य से हट भी गया और वह आज तक उसी मुद्रा में, उसी स्थिति में खड़ी है–साँस रोके, दम साधे, घुटी-घुटी और कृत्रिम।"

"सात वर्षों में विभागाध्यक्ष से प्रिंसिपल हो जाने के पीछे कहीं, अपने को बढ़ाने से ज्यादा अजय को गिराने की आकांक्षा ही थी। वह स्वयं कभी अपना लक्ष्य रही ही नहीं। एक अदृश्य, अनजान-सी चुनौती थी, जिसे उसने हर समय अपने सामने हवा में लटकता हुआ महसूस किया था और जैसे उसका मुकाबला करते-करते, उससे जूझते-जूझते ही वह आगे बढ़ती चली गई थी।"

"पर इतने पर भी जब सामने वाला नहीं टूटा तो उसकी प्रगति उसके अपने लिए ही निरर्थक हो उठी थी।"

"कल पहली बार मन में आया कि यदि वह अपनी दृष्टि अजय की जगह अपने ही ऊपर रखती तो शायद इतनी मानसिक यातना तो नहीं भोगती। तब उसका हर बढ़ता हुआ कदम, उसकी हर उपलब्धि उसे कुछ पाने का एहसास तो कराती। पर अब नहीं, अब और नहीं।"

शकुन एक ऐसी नारी–विवश नारी है, जो पति के प्यार के बंधन के ढीला पड़ जाने के कारण अपने बेटे को कसकर पकड़ लेती है। पति द्वारा तिरस्कृत प्यार को भी वह अपने बेटे पर ही उड़ेल देती है। अतएवं बंटी के प्रति उसका प्रेम-भाव दुहरा था। वास्तव में अपने पति अजय बत्रा के रूप को भी वह बंटी में देखा करती है क्योंकि वह जानती है कि "बंटी ने अजय को ज्यों का त्यों इनहेरिट कर लिया है।" परिस्थितियों ने शकुन को इस तरह झकझोर दिया है कि वह एकदम विवश और असहाय-सी हो गई है। उसकी जिंदगी कई-कई त्रासदियों के बीच जूझती हुई पेंडुलम की तरह झूल रही है। अंदर से उसका संतुलन बिगड़ चुका है। इसलिए वकील चाचा की कही हुई बात उसे बार-बार याद हो आती है कि "अजय बहुत इगोइस्ट भी है बहुत पजेसिव भी। अपने आपको पूरी तरह समाप्त करके ही तुम उसे पा सको तो पा सको, अपने को बचाए रखकर तो उसे खोना ही पड़ेगा....।"

"वह अपने को समाप्त नहीं कर सकी थी, इसलिए उसे अजय को खोना पड़ा। समाप्त तो वह अब भी अपने को नहीं कर सकेगी। अब अपने को समाप्त करने का मतलब है, अपने और डॉक्टर के बीच का सब कुछ समाप्त कर देना। पर यह तो... शकुन का मन कहीं बहुत गहरे में डूबने लगा।"

शकुन अपनी परिस्थितियों की विषमताओं से एकदम ऊब जाती है, जिसके परिणामस्वरूप वह वकील चाचा के परामर्श के मुताबिक तलाक के कागज पर अपना हस्ताक्षर कर देती है। वकील चाचा ने डॉक्टर जोशी के प्रति उसकी

नोट

प्रणय-संवेदना को और भी तीव्रतर बनाते हुए वैवाहिक संबंध स्थापित करने का संकेत दिया था। समय और परिस्थितियों की सापेक्षता में उसकी प्रेम-संवेदना अंकुरित और विकसित होते-होते एक दिन प्रेम-संवेदना में परिणत हो जाती है। नई परिस्थिति में आकर वह थोड़ी-बहुत खुश भी होती है, किंतु बंटी के कारण उसकी परेशानी बढ़ती ही जाती है, यहाँ तक कि उसका संतुलन भी ढीला पड़ता गया। इसीलिए डॉक्टर जोशी ने उपचार के लहजे में सलाह दी थी कि "बंटी में संतुलन लाने के लिए पहले तुम्हें अपने में संतुलन लाना होगा।"

टास्क 'आपका बंटी' की शकुन के चरित्र की व्याख्या अपने शब्दों में कीजिए।

शकुन के जीवन और व्यक्तित्व में 'क्षति-पूर्ति' का सिद्धांत लागू होता है। वह अजय को खोकर डॉक्टर जोशी को प्राप्त करती है। अजय उसे तलाक देता है, यानी अजय को वह खो देती है, किंतु डॉक्टर के साथ वैवाहिक संबंध स्थापित कर लेती है। डॉक्टर उसकी पीठ, उसके कंधे सहलाते रहे, उसे सांत्वना देते रहें, क्या था उन सांत्वना-भरे शब्दों में, उस स्नेह-भरे स्पर्श में कि शकुन को लगा जैसे उसके भीतर के सारे तनाव अपने आप ढीले होते चले जा रहे हैं... सारे द्वंद्व अपने आप-आप गलते चले जा रहे हैं। कहीं भी तो कुछ नहीं...सभी कुछ सहज और सुगम हो उठा।

"सारा रास्ता अकेले-अकेले चलकर, सारी परेशानियों से अकेले-अकेले लड़कर भी ऐसा आत्मविश्वास और ऐसी शक्ति तो उसने अपने भीतर कभी महसूस ही नहीं की, जो आज अपने को पूरी तरह डॉक्टर के हवाले करके वह महसूस कर रही है।"

शकुन में अहंभाव भी है और अपने से खोए अपने पूर्व पति अजय के प्रति एक प्रकार का व्यामोह भी। रह-रहकर उसे उसकी याद आती रहती है और उसके अवचेतन में गर्व का भाव काम करता है। इसलिए वह अपने मन के भीतर ही सोचती और कहती है कि "डॉक्टर जान लें कि इस घर के लिए बंटी चाहे अनावश्यक हो, फालतू हो, पर कोई है, एक ऐसा भी घर है, जहाँ बंटी की आवश्यकता है, बंटी की प्रतीक्षा है।"

अजय और शकुन दोनों ही बंटी को एकसाधन अथवा माध्यम मात्र समझते रहे। बंटी दोनों के बीच एक कड़ी का काम करता है। शकुन अजय को नीचा दिखाना चाहती है और अजय शकुन को। "शकुन ने शादी कर ली और इससे अजय के अहं को कहीं चोट लगी है। बंटी को ले जाकर वह केवल अपने उस आहत अहं को सहलाना चाहता है। वह शकुन को टॉर्चर करना चाहता है।"

"हम लोग शायद बंटी को मात्र एक साधन ही समझते रहे। अपने-अपने अहम् अपनी-अपनी महत्त्वाकांक्षाओं और अपनी-अपनी कुंठाओं के संदर्भ में ही सोचते रहे। बंटी के संदर्भ में कभी सोचा ही नहीं।"

शकुन अपनी स्थिति और नियति से बेहद परेशान रहती है, इसलिए मन ही मन वह अपने-आपको 'जस्टिफाई' भी करती रहती है—"अजय उससे कुछ नहीं चाहता। वह अपनी भरी-पूरी ज़िंदगी जी रहा है। उसने शकुन को काट दिया है, शायद कोई कसक भी बाकी नहीं है। पर जब शकुन ने अपने जीवन को भरा-पूरा करना चाहा, अजय की कसक को भी धो-पोंछना चाहा तो बंटी...।"

सब लोग केवल उससे चाहते ही हैं और वह उनकी चाहनाओं को पूरती रहे, यही एकमात्र रास्ता है उसके लिए। बस, वह कुछ न चाहे। जहाँ चाहती है, वहीं गलत क्यों हो जाती है? ऐसा अनुचित-असंभव भी तो उसने कुछ नहीं चाहा। एक सहज-सीधी जिंदगी, जिसमें रहकर वह कम से कम यह तो महसूस कर सके कि वह जिंदा है। केवल सूरज डूब-उगकर ही उसे रात होने और बीतने का एहसास न कराए, उसके अतिरिक्त भी 'कुछ' हो।

"कितनी सहज-स्वाभाविक इच्छाएँ थीं उसकी। फिर भी सब गलत केवल इसलिए कि वे उसकी थीं।"

शकुन के व्यक्तित्व में एक प्रकार का खोखलापन भी दिखाई देता है। उसके खोखलापन का कारण है—अजय। अजय के कारण ही उसका भरा-पूरा जीवन अपना संतुलन खो बैठता है, जिसका फल भी उसे ही भुगतना पड़ता है। इसलिए फूफी ने बहुत पहले ही कहा था—"जवानी यों ही अंधी होती है बहू जी, फिर बुढ़ापे में उठी हुई जवानी,

महासत्यानाशी! साहब ने जो किया तो आपकी मट्टी पलीद हुई और अब आप जो कर रही हैं, इस बच्चे की मट्टी पलीद होगी।" इससे स्पष्ट है कि शकुन के जीवन में एक प्रकार की विवशता है, जिस पर उसका अपना कोई वश नहीं। शकुन का व्यक्तित्व त्रिकोणात्मक है–एक तरफ बंटी है, दूसरी तरफ अजय और तीसरी ओर है डॉक्टर जोशी। इन तीनों बिंदुओं की तरफ खिंचती-मुड़ती शकुन टूट-सी जाती है। श्रीमती मन्नू भंडारी ने उसकी मानसिकता को प्राकृतिक उपादानों के माध्यम से इन शब्दों में विश्लेषित किया है:

"ये पौधे तो सूख रहे हैं माली?"

"नहीं बहू जी साहब, सूख नहीं रहे, अब तो जड़ें पकड़ ली हैं।"

"कहाँ? ये पत्तियाँ तो सूख रही हैं।"

माली की हँसी–"ये तो सूखेंगी ही। उस जमीन के खाद-पानी की पत्तियाँ हैं ये तो सूखकर झड़ जाएँगी। फिर नई पत्तियाँ फूटेंगी। जड़ पकड़ने के बाद कोई डर नहीं।"

शकुन के चरित्र में यथार्थ का खुरदुरापन है। उसके व्यक्तित्व में अनगिनत आड़ी-तिरछी रेखाएँ हैं। इन आड़ी-तिरछी रेखाओं से ही उसके चारित्रिक व्यक्तित्व का चित्र बनता है। उसके चरित्र में यथार्थ का खुरदुरापन तथा मनोविश्लेषण की गहराई है, जिस पर 'आदर्श' और 'नैतिकता' का कोई मुलम्मा नहीं चढ़ा है। उपन्यास में 'शकुन' संपूर्ण कथावस्तु को घेरती है। उपन्यास के नायक–बंटी का भी सूत्रधार वही है, जो कभी नेपथ्य से और कभी रंगमंच से उसे परिचालित करती है। इन सारी दृष्टियों से विचार करने पर स्पष्ट रूप से यह प्रतीत होता है कि शकुन ही 'आपका बंटी' उपन्यास की नायिका है।

टास्क अजय और शकुन के बीच मनमुटाव का मुख्य कारण क्या था?

22.4 अन्य पात्रों का चरित्र-चित्रण

'आपका बंटी' उपन्यास कलेवर की दृष्टि से चाहे भले ही एक वृहद् उपन्यास है, किंतु कथानक और पात्र की दृष्टि से वह ठीक इसके विपरीत है। इसका कारण यह है कि उपन्यास लेखिका श्रीमती मन्नू भंडारी का उद्देश्य न तो कथानक को कथा-विस्तार देना है न पात्रों की अनावश्यक भीड़भाड़ इकट्ठा करना। कम से कम पात्रों के आयोजन से 'कथ्य' की गहराई को संप्रेषित करना आधुनिक उपन्यासकार की अभीष्ट सिद्धि है। पात्रों के अनावश्यक जमघट से उपन्यास की प्रमुख संवेदना के बिखरने की आशंका बनी रहती है। इसलिए मन्नू भंडारी ने इस उपन्यास में कम से कम पात्रों का प्रयोजन करके अपना काम चला लिया है।

इस उपन्यास में बंटी और शकुन के अतिरिक्त कुछ अन्य पात्र हैं–अजय, वकील चाचा, डॉक्टर जोशी तथा फूफी। इन पात्रों की भूमिका भी उपन्यास की कथावस्तु में अत्यंत सहायक प्रतीत होती है। संक्षेप में इन पात्रों का विश्लेषण किया जा रहा है।

22.4.1 अजय का चरित्र-चित्रण

'आपका बंटी' उपन्यास में अजय एक महत्त्वपूर्ण पात्र है। वह इस उपन्यास के नायक बंटी का पिता तथा नायिका शकुन का पति है। नायक और नायिका अर्थात् बंटी और शंकुन की तरह अजय का अस्तित्व भी इस उपन्यास की कथावस्तु पर पूरी तरह व्याप्त है–आदि से अंत तक। इसकी भूमिका इतनी सशक्त है कि उपन्यास से अगर इसे हटा दें तो उपन्यास का अस्तित्व ही समाप्त हो जाएगा। इसलिए कहा जा सकता है कि वह इस उपन्यास का केंद्रीय अथवा धुरी पात्र है, जिसके आसपास ही उपन्यास की सारी घटनाएँ घटित होती हैं। घटनाओं के मूल में भी उसी की प्रमुख भूमिका है। एक प्रकार से पूरी कथावस्तु को वह आंदोलित करने में समक्ष है। अगर वह चाहता तो इस उपन्यास

नोट

के घटना-वृत्त को दूसरा मोड़ भी मिल सकता। इसलिए पाठक को विवशत उसे एक सशक्त तथा सामर्थ्यवान् पात्र मानना ही पड़ता।

उसकी पत्नी शकुन सुंदर, रूपवती, पढ़ी-लिखी कमाने वाली, यहाँ तक कि कॉलेज की प्रिंसिपल है। वह उस पर गर्वित हो सकता था लेकिन ऐसा न होकर ठीक उसके विपरीत होता है। दोनों में मन-मुटाव होने के कारण अलगाव की स्थिति पैदा हो जाती है। उपन्यास का प्रारंभ पति-पत्नी—अजय और शकुन के अलगाव से ही होता है। अजय शकुन से दूर, कलकत्ता में रहता है। उसका बेटा बंटी उसे बेहद चाहता है। इसलिए उसके स्नेह के प्रति वह अतिशय गर्व पालता है। अजय के मन में बंटी के प्रति स्नेह और आकर्षण है। इसलिए वकील चाचा के हाथों वह बंटी के लिए खिलौने भेजता है। बंटी के मन में एक प्रकार की करुणामूलक जिज्ञासा काम करती है कि उसके पापा उससे अलग क्यों रहते हैं? इसी बीच वह अपने एक पड़ोसी मित्र टीटू से जान लेता है कि उसके मम्मी-पापा में तलाक हो गया है, इसलिए पापा अलग रहते हैं। अजय के मन में अपने बेटे बंटी के लिए बराबर एक प्रकार की कचोट बनी रहती है।

अजय, मीरा नामक एक दूसरी स्त्री से प्रणय-व्यापार में संलग्न होकर उसके साथ शादी करना चाहता है। किंतु शादी के पूर्व तलाक की प्रक्रिया पूरी करनी पड़ेगी। इस सिलसिले में वह शकुन और बंटी के पास प्रायः आता रहता है और सर्किट हाउस में ठहरता है। वह बंटी को वहाँ अपने पास बुलवाता और दुलारता। इससे स्पष्ट होता है कि अपने रक्त-संबंध की दुर्बलता से वह ग्रस्त है, लेकिन यह कोई अस्वाभाविक नहीं है। वह अपने बेटे को कुछ किताबें, एक मैकेनी और टॉफी का एक डिब्बा देता है तथा चिट्ठी लिखने की बात कहता है। अजय उसे यह भी कहता है कि छुट्टियों में कलकत्ता आना। वह उसे विक्टोरिया मेमोरियल, बॉटोनिकल गार्डेस, लेक्स और जू दिखाने की बात कहता है।

इधर अजय और शकुन की दूरी और अधिक बढ़ने लगी और उधर बंटी के मन में अपने पापा अजय के अभाव का हाहाकार मचा हुआ है। इसलिए वह सोचता रहता है कि पता नहीं, उसे पापा मिलेंगे या नहीं। मम्मी के लाख सिखाने के बावजूद वह डॉक्टर जोशी को पापा कहने से इंकार करते हुए अत्यंत दृढ़ता के साथ कहता है कि उसके पापा तो कलकत्ता में रहते हैं। थोड़ी-सी भी बात पर जब उसे किसी प्रकार का कष्ट होता तो उसका मन अपने पापा के पास भाग जाता और उनके लिए बेचैन हो जाता है। अजय की याद ने उसके बेटे बंटी को विक्षिप्त-सा बना दिया था। आखिर, वह बंटी को शकुन की सहमति से अपने पास कलकत्ता ले जाता है और उसकी सुख-सुविधा की बात सोचता है। अजय अपनी नई पत्नी-मीरा से बंटी का परिचय कराता है। लेकिन बंटी उसे माँ के रूप में स्वीकार नहीं कर पाता। ठीक वैसे ही, जैसे डॉक्टर जोशी को अपना पापा होना अस्वीकार कर दिया था।

अजय बंटी के सुंदर भविष्य के लिए उसे होस्टल में दाखिल कराना चाहता है। उसकी नई पत्नी मीरा इस बात का प्रतिवाद करती है, किंतु उसके मन में बंटी के प्रति एक सुखद सपना है, जिसके कारण वह उसे किसी भी मूल्य पर होस्टल भेजना चाहता है। उसकी इस मानसिकता का चित्रण मन्नू भंडारी ने अत्यंत सूक्ष्मता के साथ किया है।

"तुम बहस मत करो मीरा, इस बात पर तुम कुछ भी मत कहो" आकाश के सारे तारे बुझ गए। मोगरा और डहेलिया गायब हो गए। सारा दृश्य जहाँ का तहाँ स्थिर हो गया। सिर्फ पापा की आवाज यहाँ से वहाँ तक गूँजती रही, गुस्से से भरी हुई आवाज।

"मुझे किसी और स्कूल में कोशिश नहीं करनी, उसे होस्टल ही भेजना है। यहाँ घर में रखने के लिए मैं उसे नहीं लाया हूँ। मैं क्या जानता नहीं कि इस घर में...।"

"और फिर बातों के टुकड़े-टुकड़े... एबनॉर्मल महीना कैसे चलेगा? तुम्हारी जिद....।"

इससे यह स्पष्ट होता है कि अजय में पुत्र के प्रति एक स्वाभाविक वात्सल्य है। यह वात्सल्य नई पत्नी के प्रतिरोध के मूल्य पर भी कम नहीं होता। वह वात्सल्य के लिए अपने सर्वस्व को दाँव पर लगाने के लिए तैयार है। इस प्रकार, अजय का चरित्र इस उपन्यास के कथानकों को न केवल गति प्रदान करता, बल्कि उसकी चरित्रगत भूमिका अत्यंत महत्त्वपूर्ण और सार्थक प्रतीत होती है। अजय इस उपन्यास का एक धुरीपात्र है। अतः उसकी महत्ता स्वयं सिद्ध है।

नोट

स्व-मूल्यांकन (Self-Assessment)

बहुविकल्पीय प्रश्न (Multiple Choice Questions) :

4. अजय की नई पत्नी का क्या नाम है?

   (क) राधा (ख) मीरा

   (ग) हीरा (घ) इनमें से कोई नहीं।

5. डॉ. जोशी की पत्नी जिसका देहांत हो चुका है–

   (क) उर्मिला (ख) कमला

   (ग) प्रमिला (घ) इनमें से कोई नहीं।

6. 'आपका बंटी' का सबसे प्रमुख और विशिष्ट पात्र कौन है?

   (क) बंटी (ख) शकुन

   (ग) अजय (घ) इनमें से कोई नहीं।

22.4.2 वकील चाचा का चरित्र-चित्रण

'आपका बंटी' उपन्यास में वकील चाचा एक प्रासंगिक पात्र है, फिर भी औपन्यासिक कथावस्तु में उसकी अहम् भूमिका है। वह एक ओर पात्रों की बीच संवाद-सेतु का काम करता है तो दूसरी ओर मुख्य कथा को प्रासंगिक कथा-सूत्रों के साथ जोड़ने की कोशिश करता है। उपन्यास में अगर उसका आयोजन नहीं किया गया होता तो कथावस्तु का विकास इस रूप में नहीं हो पाता। उस अवस्था में इस उपन्यास की सहजता नष्ट हो जाती।

वकील चाचा बंटी के पिता अजय के पास से होकर आते हैं और उसके मम्मी-पापा के बीच संदेश का आदान-प्रदान करते हैं। वकील चाचा के आने पर बंटी को भी थोड़ी-बहुत राहत मिलती है। उसकी उपस्थिति में बंटी को ऐसा लगता है, जैसे उसके बीच उसका कोई अपना विद्यमान हो, जिससे वह कुछ कह सुन सकता है।

वकील चाचा एक प्रकार से शकुन और अजय दोनों का संदेशवाहक है, लेकिन वह बराबर अजय की ही वकालत करता है, क्योंकि वह उसका वकील है। शकुन को वही बताता है कि अजय तलाक को कानूनी रूप देना चाहता है। इसलिए शकुन को कचहरी जाकर तलाक की कार्यवाही समाप्त कर लेनी चाहिए। उसकी इस बात को सुनकर शकुन टूट-सी जाती है। वकील चाचा ने स्पष्ट शब्दों में बता दिया कि अजय ने तलाक के कागजों पर हस्ताक्षर कर दिया है। अत: उसकी सलाह यही है कि वह भी दस्तखत कर दे और दोनों ही स्वतंत्र जीवन जीएं। वकील चाचा पेशे और बुद्धि दोनों ही दृष्टियों से अत्यंत परिपक्व और सुलझा हुआ है। शकुन को वह बहुत तरह से समझाने-बुझाने की कोशिश करता है। कभी-कभी अपनी संवेदना और सहानुभूति में भी वह शकुन को शरीक करता है। समझाने-बुझाने के क्रम में उसने शकुन को एक अत्यंत महत्त्वपूर्ण बात बताई और कहा कि 'जब धुरी गड़बड़ा जाती है तो ज़िंदगी लड़खड़ा जाती है।' उसकी यह बात सूक्ति की तरह सार्थक और प्रभाव सम्मत प्रतीत होती है।

वकील चाचा पेशे से चाहे भले ही वकालत करते हैं किंतु वह अनुभवसिद्ध, बौद्धिक तथा मनोवैज्ञानिक भी हैं। अगर वह अपने पेशे के प्रति ही वफादार होता तो न बंटी में रुचि लेता और न शकुन के प्रति अपनी सहानुभूति ही दिखाता। लेकिन ऐसा नहीं है। उसके व्यवहार से ऐसा लगता है कि बंटी के भविष्य और शकुन के शेष जीवन के लिए भी वह कहीं न कहीं, किसी न किसी स्तर पर चिंतित है। यही कारण है कि समय-असमय उसने शकुन का ध्यान बंटी की अस्वाभाविक प्रवृत्तियों की ओर आकृष्ट किया। शकुन तो यह समझती थी कि बंटी के साथ अधिक से अधिक समय रहकर वह बंटी को संसार की बहुविध विकृतियों से बचाए हुए है, जबकि वस्तुत: बंटी को अतिशय नियंत्रण में रखकर वह उसके व्यक्तित्व के स्वतंत्र विकास को अवरुद्ध किए जा रही थी। वकील चाचा ने शकुन को इस बात से सतर्क किया और कहा कि "इस स्थिति की दो परिस्थितियाँ हो सकती हैं– या तो तुम उसके स्वतंत्र अस्तित्व को समाप्त करके उस पर हावी होने की कोशिश करोगी या फिर अपने को बहुत ही अपेक्षित और अपमानित महसूस करोगी। उस समय तुम्हें यही लगेगा कि जिसके पीछे तुमने सारी ज़िंदगी बर्बाद की, वह अब तुम्हें ही भूल कर अपनी

ज़िंदगी जीने की बात सोच रहा है। उस समय तुम्हें बुरा लगेगा। आज अजय को लेकर तुम्हारे मन से जो कटुता है, हो सकता है वही फिर बंटी को लेकर हो और आज से दस गुना ज्यादा हो।" वकील चाचा की यह भविष्यवाणी आगे चलकर सच भी निकलती है। वकील चाचा ने उसे ठीक ही परामर्श दिया कि शकुन केवल बंटी की माँ की तरह ही नहीं, बल्कि शकुन की तरह भी जिए। उनका दृढ़ विश्वास है कि बंटी के प्रति शकुन का अंधा मोह बंटी को विकसित ही नहीं होने देगा, वह बौना होकर रह जाएगा। शकुन वकील चाचा की इन बातों पर विश्वास न कर सकी। उसे लगा, मानो उनके माध्यम से अजय ही सब उपदेश दे रहा है।

वकील चाचा शकुन से बंटी की भलाई के लिए उसे होस्टल भेजने का सुझाव देते हैं तो शकुन कहती है कि "बंटी को होस्टल भेजने की बात तो आपने कह दी, पर कभी यह भी सोचा है कि उसे होस्टल भेजकर मैं कितनी अकेली हो जाऊँगी?" उत्तर में वकील चाचा कहते हैं कि "मुझे डर है शकुन कि कहीं तुम अपना अकेलापन खत्म करने के चक्कर में बंटी का भविष्य ही न खत्म कर दो। तुम्हारा यह अतिरिक्त स्नेह उसे बौना ही न छोड़ दे।" अपनी बात को आगे बढ़ाते हुए वे कहते हैं "चीजों को सही तरीके से लेना सीखो शकुन! मैं जानता हूँ कि तुम्हें इस बात में तरह-तरह की गंध आ रही होगी। जिस स्थिति में तुम हो, उसमें यह बहुत स्वाभाविक भी है। जब आदमी एक जगह धोखा खाता है तो उसे लगता है, सब जगह धोखा ही धोखा है। पर ऐसा होता नहीं है....। बात बंटी के हित की है और सच पूछो तो बंटी से भी ज्यादा तुम्हारे हित की है। तुम मानोगी नहीं और कहना भी बड़ा अजीब लगता है, पर मेरे सामने इस समय तुम्हारी बात ही सबसे प्रमुख है....। जरा आज से आठ-नौ साल बाद की बात सोचो, जब बंटी की अपनी ज़िंदगी होगी, अपने स्वतंत्र संबंध होंगे, अपनी इच्छाएँ और अपनी महत्त्वाकांक्षाएँ होंगी। तब तुम्हारा कितना अस्तित्व होगा उसकी ज़िंदगी में?"

वकील चाचा स्पष्टवादी तथा अत्यधिक व्यवहार कुशल हैं। वह बात को बिना किसी लगाव-लिपटाव के कहते हैं। शकुन के साथ उनकी एक बात देखिए–"तुम मुझे दूसरों में गिनने लगी हो? कब से? यह सही है कि मैं अजय का मित्र हूँ, कलकत्ता रहता हूँ, पर तुम्हारे लिए भी मेरे मन में कम स्नेह नहीं है। पक्षपात की शिकायत भी करना चाहोगी तो एक बात भी तुम्हें ढूँढ़े नहीं मिलेगी।"

"तुम भी जानती हो, मैं बहुत साफ और दो टूक बात कहने वाला व्यक्ति हूँ। जरा सोचो, स्कूल के अलावा बंटी सारा दिन तुम्हारे साथ रहता है या तुम्हारी उस फूफी के साथ! तुम्हारे यहाँ अधिकतर महिलाएँ ही आती होंगी। यानी इसकी क्या कंपनी है? बहुत हुआ पड़ोस के एक-दो बच्चों के साथ खेल लिया। पर एक आठ-नौ साल के ग्रोइंग बच्चे के लिए यह तो कोई बात नहीं हुई न?"

22.4.3 डॉक्टर जोशी का चरित्र-चित्रण

'आपका बंटी' उपन्यास में डॉक्टर जोशी एक प्रासंगिक पात्र होते हुए भी अपनी महत्त्वपूर्ण भूमिका का निर्वाह करता है। वह कथावस्तु को न केवल गति प्रदान करता, बल्कि मोड़ और प्रवाह भी देता है। एक प्रकार से, वह मुख्य कथा में शामिल होकर कथा के साथ एकरंग और एकलय हो जाता है। उपन्यास से अगर उसे हटा दें तो कथानक में न केवल ह्रास ही आएगा, बल्कि कथावस्तु की सहजता, स्वाभाविकता नष्ट हो जाएगी तथा उसमें विकृति उत्पन्न हो जाएगी। अत: वह एक अत्यधिक महत्त्वपूर्ण पात्र है।

इस उपन्यास में डॉक्टर जोशी का अवतरण उस समय होता है, जब एक रात बंटी की मम्मी-शकुन को छोड़ने के लिए अपनी कार में लेकर आते हैं। उसी समय उनके साथ बंटी का पहला-पहला परिचय होता है। बंटी की माँ–शकुन ने जब से अजय से तलाक की औपचारिकताएँ पूरी कर ली हैं, तभी से उसके मन के किसी न किसी भाग में डॉक्टर जोशी का सुखद और मनोरम चित्र उभरने लगा। शकुन इस बात से पूरी तरह अवगत हो चुकी थी कि डॉक्टर जोशी शहर के सुविख्यात चिकित्सक है और उनकी पत्नी-प्रमिला का देहांत हो चुका है। अत: कभी-कभी वह डॉक्टर जोशी की सुखद और मधुर कल्पना क्रीडा में खो जाया करती। डॉक्टर जोशी का चारित्रिक व्यक्तित्व इस उपन्यास में इस प्रकार चित्रित किया गया है–

1. एक सुयोग्य चिकित्सक–डॉक्टर जोशी शहर का सर्वाधिक योग्य चिकित्सक माना जाता है। उसकी ख्याति पूरे शहर में फैली हुई है। शकुन के साथ उसका सबसे पहला परिचय बंटी की बीमारी के दौरान होता है। उस प्रथम परिचय का स्मरण वह इस रूप में करती है। "पिछली सर्दियों में बंटी बीमार हो गया था तो कितनी आत्मीयता और

एहतियात से संभाला था उसे। केवल बंटी को ही नहीं, बुखार के बढ़ते रहे पाइंट के साथ हौंसला खोती और घबराती शकुन को भी संभाला था।"

शहर में डॉक्टर जोशी का अपना क्लिनिक है, कोठी है, कार है। शहर भर में डॉक्टर की प्रसिद्धि है, रोगियों की भीड़ लगी रहती है। लेखिका के शब्दों में, "बरामदे की बेंचें रोगियों से भरी रहती हैं, दो-एक ज़मीन पर भी बैठे हैं। बंटी बड़े कौतूहल से उन्हें देख रहा है। कमरे में डॉक्टर साहब बैठे हैं। यहाँ से बंटी को भी वह दिखाई दे रहे हैं। शायद रोगी बारी-बारी से अंदर जाते हैं।"

2. **आत्मीयतापूर्ण व्यवहार**–एक सुयोग्य डॉक्टर की सफलता के लिए यह भी आवश्यक है कि रोगियों के साथ उसका व्यवहार और आचरण आत्मीयतापूर्ण हो। चिकित्सा की कुशलता तो आवश्यक है ही, किंतु आत्मीयतापूर्ण व्यवहार का भी अचूक प्रभाव रोगी के ऊपर होता है। शकुन को डॉक्टर जोशी के इसी व्यवहार ने उनकी ओर पहली बार आकृष्ट किया था। अजय से तलाक हो जाने के पश्चात् वह सोचती है कि "बीमारी के कारण ही दोनों का परिचय हुआ था। धीरे-धीरे कारण हट गया, बस परिणाम बाकी रह गया। वह पति से अलग होकर रहती है, यह शायद सारा शहर जानता है, इसलिए एक बार भी बंटी के पापा के बारे में नहीं पूछा था। हाँ, अपनी पत्नी की मृत्यु का समाचार जरूर दे दिया था और फिर बिना कुछ कहे ही बहुत कुछ कह दिया था।"

डॉक्टर का अपनी पत्नी की मृत्यु की सूचना प्रकारांतर से एक मौन आमंत्रण था। डॉक्टर जोशी बंटी के साथ अत्यंत आत्मीयतापूर्ण व्यवहार करते हैं। उनके घर जाने के बाद बंटी अपने-आपको नये वातावरण में अभियोजित न कर सका और उसकी उद्दण्डता तथा हठवादिता इतनी बढ़ जाती है कि स्वयं शकुन भी आत्म-नियन्त्रण खोकर उसे दण्डित करती है। किन्तु डॉक्टर ऐसी अवस्था में भी बंटी के साथ आत्मीयतापूर्ण आचरण करते हैं, क्योंकि वह बंटी की आन्तरिक और मानसिक समस्या से सुपरिचित हैं। वह शकुन की तरह उस पर न तो झल्लाता है, न डाँटता या घृणा ही करता है जब शकुन डॉक्टर जोशी से कहती है कि "तुम नहीं समझोगे डॉक्टर, बंटी ने अजय को ज्यों का त्यों इनहेरिट कर लिया है, वह कभी मेरे साथ तुम्हें बर्दाश्त नहीं कर सकेगा। मैं जानती हूँ....।" तब भी डॉक्टर जोशी बात को दूसरे ढंग से ही सोचते हैं। शकुन को वह समझाते हुए कहते हैं कि "देखो शकुन, तुम अपने पति की रोशनी में बंटी को देखोगी तो शायद कुछ गलत कर बैठो। मैं जानता नहीं, पर सोच सकता हूँ कि उनके लिए शायद तुम्हारे मन में कटुता होगी, अनजाने ही तुम उसी कटुता को उसमें देखोगी तो ठीक नहीं होगा।"

3. **एक सफल प्रेमी**–डॉक्टर जोशी जितने बड़े चिकित्सक, उतने ही बड़े प्रेमी भी हैं। नारी हृदय को आकृष्ट करने में सिद्धहस्त हैं। मात्र धन-सम्पदा अथवा रूप-सौंदर्य के द्वारा ही नारी हृदय को वशीभूत नहीं किया जा सकता। नारी हृदय को वश में करने की सबसे पहली शर्त यह है कि उसे इस बात का विश्वास हो सके कि जिस व्यक्ति के प्रति वह अपने-आपको समर्पित करने जा रही है उस व्यक्ति के पास उसका भविष्य सुरक्षित रह सकता है अथवा नहीं। शकुन का दाम्पत्य जीवन बिखर चुका था, तलाक की आग में सब कुछ नष्ट हो गया था। अतः एकाकी जीवन व्यतीत करते हुए किसी सहारे की जरूरत, उसमें तीव्रतर हो उठी थी। दूसरी ओर डॉक्टर जोशी विदुर थे। दोनों ही अपने-अपने ढंग से एकाकी जीवन जीने की यातना से पीड़ित थे। एक ही रोग से पीड़ित होने के कारण दोनों में एक-दूसरे के प्रति परस्पर सहानुभूति होने से आकर्षण का भाव भी बढ़ता जाता है। इसलिए इनका प्रेम, प्रेम कम आवश्यकता जन्य प्रेम-संबंध अधिक था। दोनों एक दूसरे के अभाव के पूरक थे।

अजय द्वारा विधिवत् तलाक दिए जाने के बाद ही शकुन के मन में डॉक्टर के साथ रहने की इच्छा धीरे-धीरे बलवती होती है किन्तु उसके मन में पहले से ही शकुन को प्राप्त करने की लालसा काम कर रही थी। किन्तु उनकी कल्पना तब साकार होने लगी, जब शकुन ने अपनी ओर से इस दिशा में सोचना शुरू किया। शकुन की शह पाकर डॉक्टर जोशी की गति में तीव्रता आने लगी। उधर शकुन को वर्षों बाद डॉक्टर जोशी के रूप में एक ऐसा पुरुष मिल पाया था, जो उसमें भरपूर रुचि ले रहा था। शकुन की समस्याओं को अपनी ही समस्याएँ समझकर उसका समाधान करता था तथा उसके साज-श्रृंगार का ख्याल रखता था। लम्बे समय से अवदमित इच्छाएँ अब उसके चेतन-संसार में अपना प्रभुत्व स्थापित करने लगी। उस समय की उसकी मानसिकता का विश्लेषण लेखिका ने इन शब्दों में किया है–"आज लगता है साथ रहना भी कितनी तरह का हो सकता है। जिन्दगी-भर साथ रहकर भी आदमी कितना अकेला रह सकता है और किसी का हल्का स्पर्श भी कैसे जिंदगी को किसी के साथ होने के एहसास और अपनेपन से भर सकता है।" इससे स्पष्ट होता है कि शकुन डॉक्टर जोशी के व्यक्तित्व से कितनी सघनता से प्रभावित थी। अब उसे

लगता है कि वह पिछले सात वर्षों तक यों ही अपने-आपको सालती रही। डॉक्टर जोशी के प्रति अपने-आपको समर्पित करके वह बेहद खुश और संतुष्ट रहने लगी है। लेखिका के मतानुसार, "सारा रास्ता अकेले-अकेले चलकर, सारी परेशानियों से अकेले-अकेले लड़कर भी ऐसा आत्मविश्वास और ऐसी शक्ति तो उसने अपने भीतर कभी महसूस ही नहीं की जो आज अपने को पूरी तरह डॉक्टर के हवाले करके वह महसूस कर रही है।" इससे स्पष्ट हो जाता है कि डॉक्टर जोशी में एक सफल प्रेमी होने की समस्त विशेषताएँ विद्यमान हैं, जिनसे शकुन इतना प्रभावित और आर्द्र दिखाई देती है।

4. **व्यवहार-कुशल**–डॉक्टर जोशी एक व्यवहार-कुशल व्यक्ति है। वह भावुक न होकर, यथार्थ-जीवी है। यथार्थ जीवन जीना उसे अधिक अच्छा लगता है। शकुन को प्राप्त करने में भी वह यथार्थ का ही सहारा लेता है। इसलिए शकुन से पहली ही भेंट में वह बता देता है कि उसकी पत्नी का देहांत हो चुका है।

डॉक्टर जोशी की व्यवहार-कुशलता का और भी विशेष रूप से परिचय तब प्राप्त होता है, जब बंटी का आचरण प्रतिकूल होता है। ऐसे समय वह अत्यन्त धीरज, असाधारण सूझ-बूझ और सहनशीलता से काम लेता है। वह भली-भाँति जानता है कि बंटी ही शकुन के लिए सबसे बड़ा आकर्षण है, अत: बंटी के प्रति क्रूर होने का मतलब है–शकुन का दिल दुखाना 'Love the Child, love the mother' अर्थात् अगर माँ को प्यार करना है तो पहले उसके बच्चे को प्यार करो के सिद्धांत को वह बखूबी मानता है। इसीलिए शकुन को प्रसन्न रखने के लिए पहले बंटी को सभी प्रकार से प्रसन्न रखने की कोशिश करता है। एक घटना का उल्लेख इस प्रसंग में किया जा सकता है: एक बार जब डॉक्टर अपने दोनों बच्चों के साथ शकुन के घर आता है तो बंटी उन बच्चों से लड़ पड़ता है, साथ ही अपने खिलौनों से उन्हें खेलने नहीं देता। ऐसी अवस्था में शकुन उसे समझाने की कोशिश करती है, किंतु जब वह नहीं मानता तो उसे एक चाँटा लगा देती है। तब, डॉक्टर ने उसका प्रतिवाद करते हुए कहा था, "शकुन, तुमने बंटी को क्यों मारा? बच्चों की लड़ाई में मारने की क्या बात हो गई?"

ठीक इसी प्रकार जब एक बार बंटी ने इत्र की शीशी तोड़ दी तो घर में तूफान मच गया। तब डॉक्टर ने बड़े ही शांत और सौम्य भाव से शकुन से कहा कि "अरे छोड़ो अब! इतवार के दिन क्या सवेरे-सवेरे यह पचड़ा लेकर बैठ गई। जो हुआ, सो हुआ। और मँगवा लेंगे।" डॉक्टर की इस बात से उनके सौम्य व्यक्तित्व का परिचय मिलता है।

इसी प्रकार एक और घटना का उल्लेख अप्रासंगिक न होगा। जब डॉक्टर जोशी को पता चलता है कि अजय अपने बेटे बंटी को लेने के लिए आ रहा है तो वह उसके स्वागत में स्वयं स्टेशन तक जाता है और अजय से घर चलने का साग्रह अनुरोध करता है। अजय उसके अनुरोध पर शाम को आना स्वीकार ही नहीं करता अपितु आता है। वस्तुत: अजय डॉक्टर जोशी के व्यवहार से इतना अधिक प्रभावित होता है कि न चाहते हुए भी उसके घर जाता है।

टास्क 'आपका बंटी' में डॉ. जोशी के व्यक्तित्व को किस रूप में चित्रित किया गया है?

5. **स्पष्टवादी**–इस उपन्यास में डॉक्टर जोशी को एक स्पष्टवादी व्यक्ति के रूप में चित्रित किया गया है। बंटी को लेकर उसने शकुन को कितनी ही बार समझाने की कोशिश की है। डॉक्टर इस बात से पूरी तरह अवगत है कि शकुन के लिए बंटी ही सब कुछ है। इसलिए बंटी की शिकायत का मतलब है–शकुन को दुख पहुँचाना और उसे उत्तेजित करना। इस संबंध में डॉक्टर शकुन को आवश्यकता और परिस्थिति के अनुसार समझाने की भी कोशिश करते हैं। बंटी के लिए जब कभी शकुन अपना संतुलन खो बैठती है और मार लगा देती है, तब डॉक्टर उसे अत्यंत आत्मीयता के साथ समझाता है। इसी संदर्भ में एक बार वह शकुन को समझाते हुए कह रहा था–"तुम उस पर शायद इतनी ज्यादा हावी होती जा रही हो कि वह पूरी तरह लड़का बन ही नहीं पाया। तुमने उसे ऊधम करने ही नहीं दिया–हाँ, औरतों वाली जिद और रोना सिखा दिया।"

डॉक्टर जोशी एक चिकित्सक ही नहीं, एक कुशल मनोविज्ञान-वेत्ता भी हैं। उन्होंने बंटी को फ्रायड की मनोविश्लेषणवादी दृष्टि से देखा था, इसीलिए शकुन से उन्होंने स्पष्ट शब्दों में कहा था कि "यह तुम माँ-बेटों का

नोट

चूमने-चाटने और गले में बाँहें डाल-डालकर लिपटने वाला जो रवैया है, वह अब बंद होना चाहिए। लगता है, तुम अपनी इस अर्ज को भी बंटी के साथ ही पूरी करती हो। पर अब तो सही जगह और सही ढंग....।"

एक बार शकुन ने डॉक्टर से उसकी पहली पत्नी के बारे में पूछा था। डॉक्टर चाहता तो उसके मनोनुकूल उत्तर दे देता, लेकिन वह ऐसा नहीं करता। वह एकदम स्पष्ट शब्दों में उत्तर देता है कि "प्रमिला के साथ का जीवन जैसा भी था, अच्छा या बुरा–मेरा इतना निजी है कि मैं उसे किसी के साथ शेयर नहीं कर सकता। तुम गलत मत समझना और बुरी भी मत मानना। वह अध्याय था, जो उसी के साथ समाप्त हो गया और अब मैं उसे किसी के साथ खोलना नहीं चाहता। चाहूँ तो भी खोल नहीं सकता। शायद अब तो अपने सामने भी नहीं।"

इस प्रकार, उपन्यास में डॉक्टर जोशी का व्यक्तित्व और चरित्र अत्यंत प्रभावोत्पादक बन पड़ा है।

22.5 सारांश (Summary)

- 'आपका बंटी' एक चरित्र-प्रधान उपन्यास है। इसकी संपूर्ण कथा-वृत्त बंटी से संबंधित और उसी पर आधारित है। इसमें समस्त घटना-वृत्त बंटी के चारित्रिक विकास के लिए ही आयोजित किए गए हैं।
- बंटी एक शिशु-पात्र है, किन्तु वह इतना महत्त्वपूर्ण और सशक्त है कि उपन्यास के सभी पात्र उसके समक्ष बौने से लगते हैं, चाहे उसकी माँ शकुन हो या पिता अजय, डॉक्टर जोशी हो अथवा वकील चाचा।
- 'आपका बंटी' एक व्यक्तिवादी और चरित्र विश्लेषणात्मक उपन्यास है जैसा कि इस उपन्यास के शीर्षक से ही स्पष्ट हो जाता है कि बंटी इस उपन्यास का सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण पात्र है, जिसके चरित्र का उद्घाटन पूरे उपन्यास में किया गया।
- बंटी का संपूर्ण व्यक्तित्व उपेक्षाओं से भरा है। इसलिए उसका जीवन असामान्य-सा बन जाता है। घर में तो उसकी मम्मी उसे बेहद प्यार करती है किंतु कॉलेज में पहुँचने पर वह केवल प्रिंसिपल रह जाती है–मम्मी नहीं।
- बंटी में जिज्ञासा की तीव्रता काम करती है। प्रत्येक नई वस्तु या नई बात की वह पूरी जानकारी प्राप्त करना चाहता है। इसीलिए डॉक्टर जोशी तथा मम्मी के पारस्परिक संबंधों को वह बड़ी बारीकी से समझना चाहता है।
- बंटी का चारित्रिक विकास बाल मनोविज्ञान के परिप्रेक्ष्य में होता है। वह जहाँ किसी वर्जित दृश्य को देखता है, उसे और भी गहराई से देखने लगता है तथा उसकी चेतना यौन-भावना से आंदोलित हो उठती है। यह एक मनोवैज्ञानिक सिद्धांत है।
- बदले की भावना उसके मन में इस हद तक सघन बन जाती है कि वह एक प्रकार से आत्मघाती बन जाता है। वह समझ ही नहीं सकता कि शकुन से बदला लेते-लेते कितना बड़ा बदला उसने अपने आप से ले लिया है।
- कथावस्तु के साथ शकुन की साझेदारी इतनी अधिक है कि उसके अभाव में उपन्यास खड़ा हो ही नहीं सकता। इसका सबसे बड़ा कारण यही है कि वही इसका मेरुदंड है।
- शकुन एक ऐसी नारी–विवश नारी है, जो पति के प्यार के बंधन के ढीला पड़ जाने के कारण अपने बेटे को कसकर पकड़ लेती है। पति द्वारा तिरस्कृत प्यार को भी वह अपने बेटे पर ही उड़ेल देती है।
- शकुन के व्यक्तित्व में एक प्रकार का खोखलापन भी दिखाई देता है। उसके खोखलापन का कारण है–अजय। अजय के कारण ही उसका भरा-पूरा जीवन अपना संतुलन खो बैठता है, जिसका फल भी उसे ही भुगतना पड़ता है।
- अजय, मीरा नामक एक दूसरी स्त्री से प्रणय-व्यापार में संलग्न होकर उसके साथ शादी करना चाहता है। किंतु शादी के पूर्व तलाक की प्रक्रिया पूरी करनी पड़ेगी। इस सिलसिले में वह शकुन और बंटी के पास प्राय: आता रहता है और सर्किट हाउस में ठहरता है।

नोट

- वकील चाचा बंटी के पिता अजय के पास से होकर आते हैं और उसके मम्मी-पापा के बीच संदेश का आदान-प्रदान करते हैं। वकील चाचा के आने पर बंटी को भी थोड़ी-बहुत राहत मिलती है।
- डॉक्टर जोशी शहर का सर्वाधिक योग्य चिकित्सक माना जाता है। उसकी ख्याति पूरे शहर में फैली हुई है। शकुन के साथ उसका सबसे पहला परिचय बंटी की बीमारी के दौरान होता है।
- जब डॉक्टर जोशी को पता चलता है कि अजय अपने बेटे बंटी को लेने के लिए आ रहा है तो वह उसके स्वागत में स्वयं स्टेशन तक जाता है और अजय से घर चलने का साग्रह अनुरोध करता है।

22.6 शब्दकोश (Keywords)

1. आधुनिक – नवीनतम
2. अस्मिता – मान-सम्मान
3. अभिशाप – श्राप
4. पर्याप्त – काफी
5. ड्रेसिंग टेबल – सिंगार मेज
6. कोमल – मुलायम
7. शैशव – बचपन
8. मिचली – उल्टी
9. अहंवादी – घमंडी
10. विद्रोही – बागी।

22.7 अभ्यास प्रश्न (Review Questions)

1. उपन्यास के नायक बंटी के चरित्र पर प्रकाश डालिए।
2. मम्मी-पापा के मनमुटाव का बंटी के जीवन पर क्या प्रभाव पड़ा?
3. शकुन को वकील चाचा क्या समझाते हैं?
4. एक पिता के रूप में अजय ने अपना कर्त्तव्य किस प्रकार निभाया?
5. अजय के चरित्र की व्याख्या अपने शब्दों में कीजिए।

उत्तर : स्व-मूल्यांकन (Answers : Self-Assessment)

1. संवेदनशील
2. अपेक्षाकृत
3. विषमताओं
4. सत्य
5. असत्य
6. असत्य
7. (ख)
8. (ग)
9. (क)।

22.8 सन्दर्भ पुस्तकें (Further Readings)

पुस्तकें आपका बंटी–मन्नू भंडारी, राधाकृष्ण प्रकाशन (प्रा.) लि., नई दिल्ली।

नोट

इकाई–23: 'आपका बंटी' की संवाद-योजना एवं भाषा-शैली

अनुक्रमणिका (Contents)

उद्देश्य (Objectives)

प्रस्तावना (Introduction)

23.1 'आपका बंटी' की संवाद-योजना

23.2 'आपका बंटी' की भाषा-शैली

23.2.1 कथा-प्रस्तुति में प्रयुक्त भाषा

23.2.2 पात्रों के संवादों में प्रयुक्त भाषा

23.3 सारांश (Summary)

23.4 शब्दकोश (Keywords)

23.5 अभ्यास प्रश्न (Review Questions)

23.6 सन्दर्भ पुस्तकें (Further Readings)

उद्देश्य (Objectives)

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् विद्यार्थी योग्य होंगे–

- उपन्यास की संवाद-योजना का विश्लेषण करने में;
- 'आपका बंटी' की भाषा-शैली के रूपों को जानने में;
- उपन्यास की भाषा-शैली पर प्रकाश डालने में;
- उपन्यास में निहित भंडारी जी का उद्देश्य समझने में।

प्रस्तावना (Introduction)

उपन्यास में संवाद एक ऐसा विशिष्ट माध्यम है, जिसके द्वारा कथानक या मुख्य कथा का विकास और विस्तार होता है। संवाद यदि अनावश्यक ढंग से प्रयुक्त किया जाए तो कथा विकास में अवरोध उत्पन्न हो सकता है। इसलिए उपन्यासकार को इसकी प्रासंगिकता पर ध्यान रखना जरूरी है। प्रासंगिक और पात्रोचित कथोपकथन का प्रयोग उपन्यास सृष्टि को महान् बनाता है। जिस उपन्यास में ऐसा नहीं होता, उसमें कृत्रिम वातावरण पूरे औपन्यासिक प्रभाव को नष्ट कर देता है।

23.1 'आपका बंटी' की संवाद-योजना

किसी भी उपन्यास में कथोपकथन अथवा संवाद-योजना का महत्त्व निर्विवाद रूप से स्वीकार किया जाता है। संवाद उपन्यास का एक अनिवार्य तत्व है। वास्तव में, यह उपन्यास का एक विधायक तत्व होता है, जिसके प्रयोग के पीछे उपन्यासकार के दो उद्देश्य निहित होते हैं–एक मुख्य अथवा आधिकारिक कथा के विकास में सहायता प्रदान करने

नोट

के लिए तथा दूसरा, पात्रों के चारित्रिक विकास और विश्लेषण के लिए। सबसे पहली बात तो यह है कि संवाद मुख्य कथा के एक सहज अंग के रूप में प्रयुक्त किये जाने चाहिए। दूसरी महत्त्वपूर्ण बात यह है कि संवादों की भाषा सजीव और पैनी होनी चाहिए ताकि संवाद पाठकीय संवेदना को स्पर्शित कर सकें और तीसरी बात यह है कि संवादों का आकार प्रसंगानुकूल हो।

श्रीमती मन्नू भंडारी ने 'आपका बंटी' नामक अपने उपन्यास में संवादों की योजना अत्यंत सुनियोजित ढंग से की है। उपन्यास में कहीं तो इसके माध्यम से उन्होंने कथावस्तु को विकासात्मक गति प्रदान की है और कहीं पात्रों के चरित्र विश्लेषण के लिए। अध्ययन की सुविधा को दृष्टि में रखकर इस उपन्यास की संवाद-योजना का विश्लेषण इस प्रकार किया जा सकता है–

1. मुख्य कथा को गति प्रदान करना
2. पात्रों का चारित्रिक विकास करना
3. वातावरण-सृष्टि के लिए संवादों का प्रयोग
4. यथार्थपरक दृष्टि की अभिव्यक्ति के लिए संवादों का प्रयोग
5. उपन्यासकार के कथ्य और उद्देश्य को स्पष्ट करने वाले संवाद।

1. मुख्य कथा को गति प्रदान करना–मुख्य कथा का विकास निश्चय ही वर्णन द्वारा भी होता है, किंतु कथोपकथन, एक तो उसे गति प्रदान करता है और दूसरे कथा-तत्व की संभावना की ओर भी संकेत करता है। इस प्रकार, कथोपकथन उपन्यास में धुरी का काम करता है, जो गति में सहायक होता है।

'आपका बंटी' उपन्यास की संवाद-योजना इस कसौटी पर खरी उतरती है। इसमें प्रयुक्त संवाद पात्रों के चरित्र-विश्लेषण में भी सहायक सिद्ध होते हैं। इसके संवाद भावी कथानक पर भी प्रकाश डालते हैं और साथ ही कथानक को संबद्ध और सुनियोजित करते हैं। एक उदाहरण द्रष्टव्य है–

"सौतेली माँ बहुत बुरी होती है मम्मी?"

"हाँ, और नहीं तो क्या? मारकर गड़वा देती है।"

"बच्चों के पापा ने क्यों नहीं कुछ कहा?"

"सौतेली माँ ने उन्हें पता ही नहीं लगने दिया।"

"हुंह! ऐसा भी कभी हो सकता है? झूठ। सात बच्चे गायब हो जाएँ और पापा को पता ही न लगे।"

"हाँ, होता है ऐसा। पापा कोई ऐसा-वैसा आदमी था? राजा था। उसके पास राज्य के बहुत सारे काम थे–बच्चों का ख्याल ही नहीं रहा। पापा लोग ऐसे ही होते हैं। उन्हें बच्चों का ख्याल कभी रहता ही नहीं। वह तो माँ ही होती है जो...।" और मम्मी एकाएक चुप हो गई। एकाएक ख्याल आया पापा की बात पूछ ले।

"मम्मी।"

"हूँ।"

"मम्मी, मम्मी!"

"चल, तू बहस करता है, मैं नहीं सुनाती तुझे कहानी।"

"मम्मी, पापा हम लोगों के साथ क्यों नहीं रहते है?"

(मम्मी चुप)

"आज टीटू कह रहा था...."

"क्या कह रहा था टीटू?" (आवाज की सख्ती से बंटी जैसे एक क्षण को सहम गया।)

नोट

"बता, क्या कह रहा था टीटू?"

"टीटू कह रहा था कि तेरे मम्मी-पापा का तलाक हो गया है। अब पापा कभी हमारे साथ नहीं रह सकते।" बंटी ने जैसे-तैसे कह दिया।

"क्यों रे, तू और टीटू ये ही सब बातें करते रहते हो?"

"मैं नहीं करता मम्मी, टीटू कह रहा था। मुझे तो तलाक का मतलब ही नहीं मालूम! उसी ने बताया कि मम्मी-पापा की लड़ाई को तलाक कहते हैं। जब देखो, उसके घर वाले पापा की बात जरूर करते हैं।"

ठण्डी साँस खींचकर मम्मी बोली, "करने दे। इन लोगों के पास ये बातें न हों तो वे जीएं कैसे बेचारे?"

टास्क उपन्यास की संवाद-योजना का विश्लेषण अपने शब्दों में कीजिए।

2. **पात्रों का चारित्रिक विकास करना**–संवादों के माध्यम से औपन्यासिक पात्रों की चारित्रिक विशेषताएँ उभारने की पद्धति काफी पुरानी है। इस पद्धति का प्रयोग दो रूपों में किया जाता है–प्रत्यक्ष चरित्र-चित्रण और दूसरा परोक्ष चरित्र-चित्रण। प्रत्यक्ष चरित्र-चित्रण में संवाद बोलने वाले पात्रों के चरित्र का प्रत्यक्ष ज्ञान प्राप्त होता है, जबकि परोक्ष चरित्र-चित्रण की पद्धति में दो पात्रों के परस्पर संवाद से किसी तीसरे पात्र का चरित्र उद्‌घाटित होता है। इस उपन्यास में इन दोनों ही विधियों का प्रयोग किया गया है।

(क) प्रत्यक्ष चरित्र-चित्रण पद्धति–कुछ कथोपकथन (संवाद) ऐसे होते हैं, जो पात्रों के चरित्र पर सीधा प्रकाश डालते हैं, इन्हें प्रत्यक्ष चरित्र-चित्रण की पद्धति कहते हैं। उदाहरण के लिए 'आपका बंटी' उपन्यास का निम्नलिखित संवाद देखें, जिसमें फूफी की रूढ़िग्रस्तता तथा शकुन की चारित्रिक सुदृढ़ता का परिचय मिलता है। फूफी को जब यह पता चलता है कि शकुन डॉक्टर जोशी के साथ वैवाहिक संबंध स्थापित करने जा रही है तो प्राचीन रूढ़िग्रस्तताओं में बँधी फूफी शकुन का विरोध करती है। उदाहरण देखें–

"बहूजी, हम हरिद्वार जाना चाहते हैं। आप हमारा टिकट कटा दीजिए।"

"क्या बात हो गई फूफी?"

"इतने साल आपकी नौकरी कर ली बहूजी, अब भगवान् की नौकरी करेंगे, और क्या?"

"कुछ बात भी बताओगी? तुम भी मुझसे नाराज हो फूफी?"

"अरे हम नौकर आदमी। हम कइसे नाराज होंगे। पर भगवान् ने जीभ दी है तो बोलेंगे जरूर। आप सौ जूता मारेंगी तो हमको तनिको चिंता नहीं करेंगी, पर बोले बिना हम से रहा नहीं जाएगा।"

"अब आप जो कर रही हैं बाल-बच्चा को लेकर सो आपको शोभा देता है? बड़े आदमियों की बड़ी बात, मुँह पर कौन बोलेगा और काहे बोलेगा? पर फूफी तो मुँह पर ही बोलेगी।"

"आप तो जानती हैं, साहब को लेकर हमारे मन में आज भी कइसा गुस्सा है। अब आप भी वही सब करेंगी–हम से नहीं देखा जाएगा यह सब?"

"जवानी यों ही अंधी होती है बहू जी! फिर बुढ़ापे में उठी हुई जवानी, महासत्यानाशी! साहब ने जो कुछ किया सो आपकी मट्टी-पलीद हुई और अब आप जो कर रही हैं, इस बच्चे की मट्टी पलीद होगी। चेहरा देखा है बच्चे का कैसा निकल आया है, जैसे रात-दिन घुलता रहता हो भीतर ही भीतर!"

"फूफी, देखो फूफी, मैं तुम्हारी बहुत इज्जत करती हूँ, अपनी माँ से भी ज्यादा....पर माँ को भी कभी मैंने अपनी बातों के बीच में बोलने नहीं दिया... मुझे याद नहीं, वह कभी बोली हों।" एक क्षण को मम्मी रुकी, "यह अधिकार तो

नोट

मैं किसी को दे ही नहीं सकती।"

"हम ने कहा न बहूजी, आप हमें हरिद्वार भिजवा दो बस।"

"तुम जिस दिन चाहो में इन्तजाम करवा दूँगी। तुम यहाँ से जो कुछ भी चाहो, ले जा सकती हो। इस घर पर तुम्हारा भी उतना ही अधिकार है, जितना मेरा। और तो क्या कहूँ?"

स्व-मूल्यांकन (Self-Assessment)

रिक्त स्थानों की पूर्ति करें (Fill in the blanks) :

1. कथोपकथन उपन्यास में ··············· का काम करता है।
2. प्राचीन रूढ़िग्रस्तताओं में बँधी फूफी ··············· की शादी का विरोध करती है।
3. फूफी अनपढ़ एवं खासे ग्रामीण परिवेश से ··············· रखती है।

(ख) परोक्ष चरित्र-चित्रण पद्धति–जब दो पात्र आपस में बात करते हैं और उनके वार्तालाप से जब किसी तीसरे पात्र के चरित्र पर प्रकाश पड़ता है तो उसे परोक्ष चरित्र-चित्रण पद्धति कहते हैं। इस उपन्यास में वकील चाचा और शकुन के बीच निम्न संवादों से बंटी के चरित्र पर प्रकाश डाला गया है। देखें–

"हो सकता है, तुम्हें मेरी कल की बात का बुरा लगा हो। रात में भी मैं इसी बात पर सोच रहा था। पर बंटी को तुम्हें होस्टल भेज ही देना चाहिए।"

"सात साल से मैं अकेली ही तो बंटी को पाल रही हूँ। उसका हित-अहित मैं दूसरों से ज्यादा जानती हूँ।"

"तुम मुझे दूसरों में गिनने लगी हो? कब से? यह सही है कि मैं अजय का मित्र हूँ, कलकत्ता रहता हूँ, पर तुम्हारे लिए भी मेरे मन में कम स्नेह नहीं। पक्षपात की शिकायत भी करना चाहोगी तो एक बात तुम्हें ढूँढे नहीं मिलेगी।"

"नहीं, मेरा यह मतलब नहीं, आप तो गलत समझ गए। मैं तो...।"

"खैर छोड़ो।"

"तुम यह मत सोचो कि केवल अजय ही ऐसा चाहता है, मुझे खुद ऐसा लगता है कि बंटी को तुम्हें एकदम होस्टल भेज देना चाहिए। इट इज ए मस्ट...तुम भी जानती हो, मैं बहुत साफ और दो टूक बात कहने वाला आदमी हूँ। जरा सोचो, स्कूल के अलावा बंटी सारा दिन तुम्हारे साथ रहता है या तुम्हारी फूफी के साथ। तुम्हारे यहाँ अधिकतर महिलाएँ ही आती होंगी। यानी इसकी क्या कम्पनी है? बहुत हुआ, पड़ोस के एक-दो बच्चे के साथ खेल लिया। पर एक आठ-नौ साल के ग्रोइंग बच्चे के लिए तो कोई बात नहीं हुई ना। ही शुड ग्रो लाइक ए बॉय, लाइक ए मैन।"

"बोलो, मैं गलत कह रहा हूँ?" कल मैं देख रहा था कि किस कदर वह अभी भी तुमसे चिपका-चिपका रहता है। यह सब बहुत नॉर्मल नहीं है। अपनी उम्र के बच्चों का साथ उसके लिए बहुत जरूरी है और वह तो उसे इस घर में मिल नहीं सकता। अच्छा बताओ, बंटी जिस तरह पल रहा है, तुम उससे सन्तुष्ट हो?"

"मैं जितना भी संभव हो सकता है, उसके लिए करती हूँ। कॉलेज के बाद का सारा समय एक तरह से उसी पर देती हूँ और इससे ज्यादा कर ही क्या सकती हूँ?"

"ओफ्फोह! बात तुम्हारे करने की तो नहीं है। इससे किसे इन्कार है कि तुम बहुत करती हो, पर उसे तुम हम-उम्र की कम्पनी तो नहीं दे सकती हो?"

3. वातावरण-सृष्टि के लिए संवादों का प्रयोग–उपन्यासों में कई बार संवादों का प्रयोग वातावरण की सृष्टि के लिए भी किया जाता है। इससे वातावरण के माध्यम से पात्रों की मन:स्थिति का पता चलता है, साथ ही पाठकों के सामने एक यथार्थपरक चित्र उभरकर व्यक्त होता है। उदाहरण के लिए 'आपका बंटी' उपन्यास का निम्नलिखित संवाद देखा जा सकता है, जिसमें डॉक्टर जोशी और शकुन बंटी के व्यवहार को लेकर चिन्तित हैं–

नोट

"तुमने कुछ कहा नहीं पत्र पढ़कर?" और शकुन ने बहुत ही भेदती-सी नजरों से डॉक्टर को देखा; मानो उसे केवल शब्दों पर ही विश्वास नहीं करना है, उन्हें ही अंतिम नहीं मानना है, उनके भीतर छिपे अर्थों को भी देखना है...।

"बताओं न, क्या जवाब दूँ अजय को?" शकुन को जैसे जवाब चाहिए ही, वह भी डॉक्टर से ही।

"मैं मिस्टर बतरा को बिल्कुल नहीं जानता। उन्होंने यह क्यों लिखा है, यह भी नहीं समझ सका। क्या जवाब हो सकता है इसका? मैं क्या बताऊँ?"

"क्यों? अभी चाची अम्मा लिखें कि अमि को शुरू से मैंने पाला है, उसे मेरे पास भेज दो तो तुम जवाब नहीं दोगे? ....कुछ नहीं बताओगे?" आवेश से जैसे उसका स्वर काँपने लगा। वह बात दूसरी होगी। डॉक्टर का स्वर कभी भी कहीं से भी विचलित क्यों नहीं होता? कैसी आस्था है? कौन-सा विश्वास है यह अपने ऊपर, जो कहीं भी डिगने नहीं देता? डॉक्टर के संकोच के सामने शकुन जैसे और ज्यादा-ज्यादा बिखरा महसूस कर रही है।

"बात दूसरी नहीं है, बस यह कहो कि बच्चा दूसरा है। अमि तुम्हारा बच्चा है, तुम उसके बारे में निर्णय ले सकते हो। बंटी तुम्हारा....।"

"शकुन," और डॉक्टर की दोनों हथेलियाँ शकुन के कंधों पर आ टिकी।.... "पागल हो गई हो? लगता है, इस पत्र ने परेशान कर दिया है। इस तरह परेशान होने से तो कोई चीज हल नहीं होती।....तुम लोग अपने को, अपने 'इगो' को ऊपर न रखकर बंटी को ऊपर रखो। आई मीन, उसकी दृष्टि से सारी बात सोचो तो ज्यादा सही होगा।"

'आपका बंटी' उपन्यास में मन्नू भंडारी ने संवाद में प्रकृतिगत उपादानों के प्रयोग से वातावरण की सृष्टि की है और फिर उस वातावरण से बंटी की मन:स्थिति को उजागर किया गया है–

"ये पौधे तो सूख रहे हैं माली?"

"नहीं बहू जी साहब, सूख नहीं रहे, अब तो जड़े पकड़ ली हैं।"

"कहाँ? ये पत्तियाँ तो सूख रही हैं।"

"ये तो सूखेंगी ही। उस जमीन के खाद-पानी की पत्तियाँ हैं, ये तो सूखकर झड़ जाएँगी, फिर नयी पत्तियाँ फूटेंगी। जड़ पकड़ने के बाद कोई डर नहीं।"

शकुन सोचती है, एक ही बात इतने-इतने अर्थ भी लपेटे रह सकती है अपने में?

4. पथार्थपरक दृष्टि की अभिव्यक्ति के लिए संवादों का प्रयोग–उपन्यास में संवादो के माध्यम से यथार्थपरक दृष्टि की अभिव्यक्ति भी होती है। दो पात्रों के परस्पर संवाद से स्वाभाविकता और यथार्थ-दृष्टि की सृष्टि भी होती है। 'आपका बंटी उपन्यास इसका अपवाद न होकर अपने-आप में एक प्रमाण है। उदाहरण के लिए शकुन और वकील चाचा के बीच प्रयुक्त यह संवाद देखें–

"बंटी को होस्टल भेजने की बात तो आपने कह दी, पर कभी यह भी सोचा है कि उसे होस्टल भेजकर मैं कितनी अकेली अकेली हो जाऊँगी।" उत्तर में वकील चाचा कहते हैं–

"मुझे डर है शकुन कि कहीं तुम अपना अकेलापन खत्म करने के चक्कर में बंटी का भविष्य ही खत्म न कर दो। तुम्हारा यह अतिरिक्त स्नेह उसे बौना ही न छोड़ दे।"

"चीजों को सही तरीके से लेना सीखो शकुन! मैं जानता हूँ कि तुम्हें इस बात में तरह-तरह की गंध आ रही होगी। जिस स्थिति में तुम हो, उसमें यह बहुत स्वाभाविक भी है। जब आदमी एक जगह धोखा खाता है तो लगता है सब जगह धोखा ही धोखा है। पर ऐसा होता नहीं है....बात बंटी के हित की है और सच पूछो तो बंटी से भी ज्यादा तुम्हारे हित की है। तुम मानोगी नहीं और कहना भी बड़ा अजीब लगता है, पर मेरे सामने इस समय तुम्हारी बात ही सबसे प्रमुख है। जरा आज से आठ-नौ साल बाद की बात सोचो, जब बंटी की अपनी ज़िंदगी होगी, अपने स्वतंत्र संबंध होंगे, अपनी इच्छाएँ और अपनी महत्त्वाकांक्षाएँ होंगी, तब तुम्हारा कितना अस्तित्व होगा उसकी ज़िंदगी में?"

5. उपन्यासकार के कथ्य और उद्देश्य को स्पष्ट करने वाले संवाद–कथ्य अथवा उद्देश्य ही वह केंद्र बिन्दु होता है, जिसको स्पष्टता के साथ व्यक्त करने के लिए उपन्यासकार अपने उपन्यास की रचना करता है। प्रत्येक रचना के पीछे रचनाकार का एक सुनिश्चित उद्देश्य होता है।

'आपका बंटी' उपन्यास में लेखिका मन्नू भंडारी का मुख्य उद्देश्य शकुन और बंटी का मानसिक विश्लेषण करना है तथा उसके माध्यम से तलाक की समस्या तथा उससे उत्पन्न होने वाली अन्य मानसिक परेशानियों को प्रस्तुत करना है। उसके माध्यम से मन्नू भंडारी ने आधुनिक परिवेश में उत्पन्न नैतिक मूल्यों को भी परखने की चेष्टा की है। वस्तुत: इस उपन्यास में मन्नू भंडारी का उद्देश्य है–टूटते हुए दाम्पत्य जीवन में कसमसाए हुए बंटी की मानसिक व्यथा को व्यक्त करना। इस संदर्भ में शकुन के नैतिक मूल्यों को भी विश्लेषित किया गया है। कुछ उदाहरण द्रष्टव्य हैं–

(क) जस्टिफिकेशन!

पर क्यों? किस बात के लिए? क्या किया है शकुन ने? अजय उससे कुछ नहीं चाहता। वह अपनी भरी-पूरी ज़िंदगी जी रहा है। उसने शकुन को काट दिया है, शायद कोई कसक भी बाकी नहीं है। पर जब शकुन ने अपने जीवन को भरा-पूरा करना चाहा, अजय की कसक को भी धो-पोंछना चाहा तो बंटी....

सब लोग उससे चाहते ही हैं और वह उनकी चाहनाओं को पूरती रहे, यही एकमात्र रास्ता है उसके लिए। बस, वह कुछ न चाहे। जहाँ चाहती है, वहीं गलत क्यों हो जाती है? ऐसा अनुचित असंभव भी तो उसने कुछ नहीं चाहा। एक महज सीधी ज़िंदगी, जिसमें रहकर वह कम से कम यह तो महसूस कर सके कि वह जिंदा है। केवल सूरज डूब-उगकर ही उसे रात होने और बीतने का एहसास न कराए, उसके अतिरिक्त भी 'कुछ' हो।

कितनी सहज स्वाभाविक इच्छाएँ थी उसकी! फिर भी सब गलत, केवल इसलिए कि वे उसकी थी।

"जहाँ जस्टिफिकेशन है, समझ लो, वहाँ गिल्ट है। आदमी अपने गिल्ट को जस्टिफाई न करे तो...."

(ख) "बंटी सेतु नहीं बन सका। इसीलिए शायद उसे भी कट जाना पड़ा।"

(ग) "जवानी यों ही अंधी होती बहू जी, फिर बुढ़ापे में उठी हुई जवानी, महासत्यानाशी! साहब ने जो किया तो आपकी मट्टी-पलीद हुई और अब आप जो कर रही हैं, इस बच्चे की मट्टी-पलीद होगी। चेहरा देखा है बच्चे का? कैसा निकल आया है, जैसे रात-दिन घुलता रहता हो भीतर ही भीतर।"

(घ) "एक वचन दे दो कि हमारे बंटी भैया को जैसा आपने बिसरा दिया है आजकल, वैसा और मत करना। बाप के रहते यह बिना बाप का हो रहा, अब माँ के रहते यह बिना माँ का न हो जाए।"

ऊपर के इस विवेचन-विश्लेषण से यह बात पूरी तरह स्पष्ट हो जाती है कि 'आपका बंटी' की संवाद-योजना अपने उद्देश्य में सर्वथा सफल है। इसके माध्यम से एक ओर कथात्मक संघटना का विकास हुआ है तो दूसरी ओर इसके द्वारा पात्रों के चारित्रिक व्यक्तित्व पर प्रकाश पड़ता है और तीसरी बात, जो सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण है, इसके द्वारा लेखिका श्रीमती मन्नू भंडारी ने अपने कथ्य को संप्रेषित करने का प्रयास किया है।

टास्क 'आपका बंटी' की भाषा-शैली पर प्रकाश डालिए।

23.2 'आपका बंटी' की भाषा-शैली

श्रीमती मन्नू भंडारी का 'आपका बंटी' एक खासा मनोविश्लेषणात्मक उपन्यास है। इस उपन्यास में उन्होंने नये दृष्टिकोण तथा आधुनिक संदर्भगत नये मूल्यों की खोजकर उन्हें स्थापित करने की चेष्टा की है। चूँकि इस उपन्यास

नोट

का वस्तु तत्व नया है, इसलिए शिल्प में भी नयापन है। भाषा, शिल्प का एक अभिन्न और अनिवार्य अंग है। मन्नू भंडारी ने अपने इस उपन्यास में नई दृष्टि के अनुरूप नये भाषा-शिल्प का भी सहारा लिया है, जो अपने आप में अत्यंत महत्त्वपूर्ण है। इस उपन्यास का भाषिक पक्ष अत्यंत प्रबल है। यहाँ भाव और भाषा एक रंग में रंजित हैं। ऐसा लगता है, जैसे भाव और भाषा में होड़ लगी हो और किसकी महत्ता किससे अधिक है। निर्णय करना अत्यंत कठिन जान पड़ता है। इस उपन्यास की भावानुभूतियों और रचना-प्रक्रिया के भीतर से ही भाषा इसकी रचनात्मक संवेदनाओं को ऊर्जा और प्राणवत्ता प्रदान करती है।

मन्नू भंडारी ने अपने इस उपन्यास में विषय और वस्तु के अनुरूप ही भाषा का प्रयोग किया है। इनकी भाषा संयत होने के साथ ही साथ नई अर्थवत्ता को संप्रेषित करती चलती है। यहाँ बंटी के माध्यम से मानवीय व्यक्तित्व की व्याख्या और उसके विश्लेषण में भाषा का अत्यंत सशक्त प्रयोग किया गया है। इस उपन्यास में भाषा और भाव में एकरूपता और सादृश्यता स्थापित हो गई है। यहाँ दोनों में एकमेक की स्थापना इतनी बनीभूत है कि दोनों को एक-दूसरे से बिलग करना कठिन है।

जहाँ तक औपन्यासिक भाषा का प्रश्न है, इसके संबंध में दो दृष्टियों से विचार किया जा सकता है—एक उपन्यासकार भी भाषा और दूसरा उपन्यास के पात्रों द्वारा प्रयुक्त भाषा। दोनों ही स्थितियों में भाषा एक ही उपन्यासकार की होती है किंतु अध्ययन की सुविधा की दृष्टि से इसका विश्लेषण, विवेचन और मूल्यांकन इस रूप में किया जा सकता है। जहाँ तक 'आपका बंटी' की भाषा का प्रश्न है, उसका अध्ययन मुख्य रूप से दो रूपों में किया जा सकता है—एक, कथा-प्रस्तुति में प्रयुक्त भाषा और दूसरी, पात्रों के संवादों में प्रयुक्त भाषा।

23.2.1 कथा-प्रस्तुति में प्रयुक्त भाषा

कथा-प्रस्तुति में प्रयुक्त भाषा पर उपन्यासकार के व्यक्तित्व ही छाप स्पष्ट रूप से दिखाई पड़ती है अर्थात् कथा के प्रस्तुतीकरण में कथाकार अपनी भाषा का प्रयोग करता है। इसलिए प्रत्येक उपन्यास की भाषा अलग-अलग होती है, क्योंकि उपन्यासकार का व्यक्तित्व अलग-अलग होता है। 'आपका बंटी' उपन्यास की कथा-प्रस्तुति में मन्नू भंडारी ने भाषा का प्रयोग कई स्तरों पर और कई रूपों में किया है। इसका विवेचन-विश्लेषण निम्न रूपों में कर सकते हैं—

(क) सहज-स्वाभाविक बोलचाल की भाषा—मन्नू भंडारी ने अपने इस उपन्यास में जहाँ कथा का प्रस्तुतीकरण किया है अथवा पात्रों के संबंध में परिचय दिया है, वहीं अपनी भाषा को अत्यंत सहज, स्वाभाविक और बोलचाल का रूप दिया है। इसलिए इसकी भाषा पाठकों को जानी-पहचानी सी लगती है। उदाहरण के लिए उपन्यास की निम्नांकित पंक्तियों को देखें—

"चलने से पहले मम्मी ने उसका गाल थपथपाया। बालों में उंगलियाँ फँसा कर बड़े प्यार से बाल झिंझोड़ दिए, पर बंटी जैसे बुत बना खड़ा रहा। बाँह पकड़कर झूला नहीं, किसी चीज की फरमाइश नहीं की। मम्मी ने खींचकर उसे अपने पास सटा लिया, पर एकदम चिपक कर भी बंटी को लगा जैसे मम्मी उससे बहुत दूर है। और फिर सचमुच वह दूर हो गईं। उनकी चप्पल की खट-खट जब बरामदे की सीढ़ियों पर पहुँची तो बंटी कमरे के दरवाजे पर आकर खड़ा हो गया। और मम्मी जब फाटक खोलकर सड़क पार करके, घर के ठीक सामने बने कॉलेज में घुसी तो बंटी दौड़कर अपने घर के फाटक पर खड़ा हो गया।

स्व-मूल्यांकन (Self-Assessment)

निम्नलिखित कथनों में सत्य अथवा असत्य की पहचान करें

(State Whether the following statements are True or False) :

4. अजय की सोच है कि बंटी को हॉस्टल भेज देना चाहिए।
5. 'आपका बंटी' की संवाद-योजना अपने उद्देश्य में सर्वथा सफल है।
6. उपन्यास में लेखिका का मुख्य उद्देश्य शकुन और अजय के मनमुटाव को दर्शाना है।

नोट

(ख) भावुकता-प्रधान काव्यात्मक भाषा–श्रीमती मन्नू भंडारी ने इस उपन्यास में पात्रों की चरित्रगत भावुकता तथा तनाव की मन:स्थिति के चित्रण में भावुकता से ओत-प्रोत भाषा का प्रयोग किया है। भावुकता की मन:स्थिति में नि:सृत शब्द, प्राय: अलंकृत और काव्यपरक हो जाते हैं। अत: इस उपन्यास में जहाँ कहीं ऐसी भाषा का प्रयोग किया गया है, उसे अस्वाभाविक नहीं कह सकते। उदाहरण के लिए ये पंक्तियाँ देखें–"भीतर ही भीतर चलने वाली एक अजीब लड़ाई थी वह भी, जिसमें दम साधकर दोनों ने हर दिन प्रतीक्षा की थी कि कब सामने वाले की साँस उखड़ जाती है और वह घुटने टेक देता है। जिससे कि फिर वह बड़ी उदारता और क्षमाशीलता के साथ उसके सारे गुनाह माफ करके उसे स्वीकार कर ले–उसके संपूर्ण व्यक्तित्व को निरे एक शून्य में बदल कर। और इस स्थिति को लाने के लिए सभी तरह के दाँव-पेंच खेले गए थे–कभी कोमलता के, कभी कठोरता के, कभी सब कुछ लुटा देने वाली उदारता के तो कभी सब कुछ समेट लेने वाली कृपणता के। प्रेम के नाटक भी हुए थे और तन-मन को डुबो देने वाले विभोर क्षणों के अभिनय भी। पता नहीं, उन क्षणों में कभी भावुकता, आवेश या उत्तेजना रही भी हो पर शायद उन दोनों के ही दयालु मनों ने कभी उन्हें उस रूप में ग्रहण नहीं किया।"

(ग) वैचारिक तथा चिंतनपरक भाषा–'आपका बंटी' उपन्यास में जहाँ विचार और चिंतन का पक्ष प्रबल हो उठा है, वहाँ भाषा स्वाभाविक तौर पर विचार-प्रधान तथा चिंतनपरक बन गई है। उदाहरणस्वरूप उपन्यास की निम्नलिखित पंक्तियाँ देखी जा सकती हैं–"शकुन के हर दुख को अपना दुख और उसकी हर कही-अनकही इच्छा को एक आदेश-सा बना लेने की बंटी की मजबूरी ने शकुन को अपनी ही नजरों में अपराधी बनाकर छोड़ दिया था। दिन में दो-चार बार पापा की बात करने वाले बच्चे ने कैसे इस शब्द को काट कर फेंक दिया था–शब्द को ही नहीं, अजय के भेजे खिलौने, उसकी तस्वीर तक को अलमारी में बंद कर दिया था। बिना शकुन के चाहे या कहे भी वह उसे प्रसन्न करने का भरसक प्रयत्न करता रहा था और शकुन का काट बढ़ते-बढ़ते असह्य हो गया था।"

23.2.2 पात्रों के संवादों में प्रयुक्त भाषा

उपन्यास के पात्र जिस भाषा का प्रयोग करते हैं, वह भी मूलत: उपन्यासकार की ही होती है। यह बात दूसरी है कि प्रासंगिक पात्रों की भाषा में अन्य बाह्य कारण और प्रभाव भी काम करते हैं किंतु आमतौर पर उपन्यास का नायक और उसकी नायिका दो ऐसे विशिष्ट पात्र होते हैं, जो उपन्यासकार के मानस पुतले होते हैं। ये दोनों पात्र एक प्रकार से उपन्यास-लेखक के मुँह की ही भाषा का प्रयोग करते हैं। 'आपका बंटी' उपन्यास इसका कोई अपवाद नहीं हैं। इस उपन्यास में पात्र जिस भाषा का प्रयोग करते हैं, वह निम्नलिखित रूप में विवेच्य है–

(क) सामान्य बोलचाल की भाषा–'आपका बंटी' उपन्यास में पात्रों के आपसी संवाद में अधिकांशत: सामान्य बोलचाल की भाषा का प्रयोग किया गया है। भाषा चाहे बोलचाल की हो या शुद्ध साहित्यिक हो, उसकी सफलता इस बात पर निर्भर करती है कि भावाभिव्यक्ति की उसमें कितनी क्षमता है। भाषा-संप्रेषण की दृष्टि से 'आपका बंटी' उपन्यास के निम्नांकित संवाद को उदाहृत किया जा सकता है–

वकील चाचा शकुन को कह रहे हैं, "बोलो, मैं गलत कह रहा हूँ? कल मैं देख रहा था कि किस कदर वह अभी भी तुम से चिपका-चिपका रहता है। यह सब बहुत नार्मल नहीं है। अपनी उम्र के बच्चों का साथ उसके लिए बहुत जरूरी है। और वह तो उसे इस घर में मिल नहीं सकता...। अच्छा बताओ, बंटी जिस तरह पल रहा है तुम उसे संतुष्ट हो?"

"मैं जितना भी संभव हो सकता है, उसके लिए करती हूँ। कॉलेज के बाद का सारा समय एक तरह से उसी पर देती हूँ और कर ही क्या सकती हूँ?"

"ओफ्फोह! बात तुम्हारे करने की तो नहीं है। इससे किसको इनकार है कि तुम बहुत करती हो? बल्कि जितना नहीं करना चाहिए उतना करती हो। पर उसे तुम हमउम्र बच्चों की कम्पनी तो नहीं दे सकतीं?"

"बंटी को होस्टल भेजने की बात तो आपने कह दी, पर कभी यह भी सोचा है कि उसे होस्टल भेजकर मैं कितनी अकेली हो जाऊँगी।"

(ख) भाषा पर स्थानीय प्रभाव–उपन्यास की घटना और उसके पात्रों पर स्थानीय प्रभाव किसी न किसी रूप में अवश्य दिखाई पड़ता है। यह बात सुशिक्षित पात्रों पर कम, किंतु अर्द्धशिक्षित या अशिक्षित पात्रों पर अधिक लागू होती है। 'आपका बंटी' उपन्यास के अधिकांश पात्र सुशिक्षित हैं। केवल एकमात्र फूफी ही ऐसी है, जो अनपढ़ तथा खासा ग्रामीण परिवेश की है। ऐसी स्थिति में उसकी बोली पर स्थानीय प्रभाव परिलक्षित होना कोई अस्वाभाविक नहीं है। इस संबंध में कुछ उदाहरण देखें–

"तुम यहाँ खड़े-खड़े क्या कर रहे हो बंटी भैया? चलकर नहा काहे नहीं लेते?"

"फूफी, कहानी सुनाओ तो सोनल रानी की जो सचमुच में डायन थी और रानी बनकर रहती थी।"

"एल्लो, और सुनो। यह कहानी सुनाने का बखत है। काम सारा पड़ा है और तुम्हें कहानी सूझ रही है। कहानी रात में सुनी जाती है, दिन में नहीं।"

"नहीं, मैं अभी सुनूँगा। कोई काम-वाम नहीं।"

"अच्छा फूफी, वह डायन से रानी कैसे बन जाती थी? उसके पास जादू था?"

"और क्या तो? डायन थी, सारे जादू वस में कर रखे थे। बस, जो चाहती बन जाती। मन होता वैसा भेस धर लेती।"

"क्यों फूफी, आदमी भी चाहे तो ऐसा कर सकता है?"

"कइसे कर लेगा आदमी? आदमी के बस में क्या जादू है?"

(ग) शुद्ध तत्सम-प्रधान परिनिष्ठित भाषा–इस उपन्यास के संवादों में शुद्ध तत्सम प्रधान परिनिष्ठित भाषा का प्रयोग बहुत कम हुआ है। इसमें अधिकांश रूप से बोलचाल की भाषा का ही प्रयोग दिखाई देता है। फिर भी ऐसा नहीं कि परिनिष्ठित भाषा का प्रयोग है ही नहीं। कुछ पंक्तियाँ उदाहरण के रूप में देखिए–

"ये लोग ज्यादा चूँ-चपड़ करेंगे तो मैं नौकरी छोड़ दूँगी। संभालें अपनी नौकरी।"

"तुम नौकरी करो या छोड़ो, यह बिल्कुल तुम्हारी अपनी इच्छा पर है। पर छोड़ो तो कारण यह नहीं होना चाहिए।... आज मैनेजर को आपत्ति हुई तो तुमने नौकरी छोड़ दी। कल शहर वालों को आपत्ति हुई तो तुम शहर छोड़ने को कहोगी, और जरूर कहोगी। छोटी जगह है....ऐसी बातें लोग आसानी से पचा नहीं पाते। और इस तरह कमजोर होने से कहीं काम चलता है, चल सकता है? और सच पूछो तो आपत्ति बाहर नहीं होती, कहीं मन के भीतर ही होती है। तभी तो हमें ये छोटी-छोटी बातें परेशान कर देती है वरना इन आपत्तियों पर एक मिनट भी जाया करना मैं उचित नहीं समझता। इन लोगों का क्या हक है तुम्हारे व्यक्तिगत जीवन में हस्तक्षेप करने का?"

23.3 सारांश (Summary)

- श्रीमती मन्नू भंडारी ने 'आपका बंटी' नामक अपने उपन्यास में संवादों की योजना अत्यंत सुनियोजित ढंग से की है। उपन्यास में कहीं तो इसके माध्यम से उन्होंने कथावस्तु को विकासात्मक गति प्रदान की है और कहीं पात्रों के चरित्र विश्लेषण के लिए।
- 'आपका बंटी' उपन्यास की संवाद-योजना इस कसौटी पर खरी उतरती है। इसमें प्रयुक्त संवाद पात्रों के चरित्र-विश्लेषण में भी सहायक सिद्ध होते हैं। इसके संवाद भावी कथानक पर भी प्रकाश डालते हैं और साथ ही कथानक को संबद्ध और सुनियोजित करते हैं।
- संवादों के माध्यम से औपन्यासिक पात्रों की चारित्रिक विशेषताएँ उभारने की पद्धति काफी पुरानी है। इस पद्धति का प्रयोग दो रूपों में किया जाता है–प्रत्यक्ष चरित्र-चित्रण और दूसरा परोक्ष चरित्र-चित्रण।

नोट

- उपन्यासों में कई बार संवादों का प्रयोग वातावरण की सृष्टि के लिए भी किया जाता है। इससे वातावरण के माध्यम से पात्रों की मन:स्थिति का पता चलता है, साथ ही पाठकों के सामने एक यथार्थपरक चित्र उभरकर व्यक्त होता है।
- कथ्य अथवा उद्देश्य ही वह केंद्र बिन्दु होता है, जिसको स्पष्टता के साथ व्यक्त करने के लिए उपन्यासकार अपने उपन्यास की रचना करता है। प्रत्येक रचना के पीछे रचनाकार का एक सुनिश्चित उद्देश्य होता है।
- श्रीमती मन्नू भंडारी का 'आपका बंटी' एक खासा मनोविश्लेषणात्मक उपन्यास है। इस उपन्यास में उन्होंने नये दृष्टिकोण तथा आधुनिक संदर्भगत नये मूल्यों की खोजकर उन्हें स्थापित करने की चेष्टा की है।
- मन्नू भंडारी ने अपने इस उपन्यास में जहाँ कथा का प्रस्तुतीकरण किया है अथवा पात्रों के संबंध में परिचय दिया है, वहीं अपनी भाषा को अत्यंत सहज, स्वाभाविक और बोलचाल का रूप दिया है।
- उपन्यास की घटना और उसके पात्रों पर स्थानीय प्रभाव किसी न किसी रूप में अवश्य दिखाई पड़ता है। यह बात सुशिक्षित पात्रों पर कम, किंतु अर्द्धशिक्षित या अशिक्षित पात्रों पर अधिक लागू होती है।
- इस उपन्यास के संवादों में शुद्ध तत्सम प्रधान परिनिष्ठित भाषा का प्रयोग बहुत कम हुआ है। इसमें अधिकांश रूप से बोलचाल की भाषा का ही प्रयोग दिखाई देता है।

23.4 शब्दकोश (Keywords)

1. निर्विवाद – बिना विवाद के
2. पैनी – तेज
3. ग्रोइंग – बढ़ते हुए
4. कसक – तड़प
5. आवेश – गुस्सा
6. प्रमाण – सबूत
7. अस्तित्व – वजूद
8. बिसराना – भुलाना
9. अनिवार्य – जरूरी
10. रंजित – रंगा।

23.5 अभ्यास प्रश्न (Review Questions)

1. किसी उपन्यास की सफलता में उसकी संवाद-योजना क्या स्थान रखती है?
2. 'जस्टिफिकेशन' पर टिप्पणी लिखिए।
3. सिद्ध कीजिए कि 'आपका बंटी' एक मनोविश्लेषणात्मक उपन्यास है।

उत्तर : स्व-मूल्यांकन (Answers : Self-Assessment)

1. धुरी
2. शकुन
3. सम्बंध
4. सत्य
5. सत्य
6. असत्य।

23.6 सन्दर्भ पुस्तकें (Further Readings)

पुस्तकें आपका बंटी–मन्नू भंडारी, राधाकृष्ण प्रकाशन (प्रा.) लि., नई दिल्ली।

नोट

इकाई–24: प्रेमचन्द की प्रतिनिधि कहानियों का सार एवं पात्रों का चरित्र-चित्रण

अनुक्रमणिका (Contents)

उद्देश्य (Objectives)
प्रस्तावना (Introduction)
24.1 'कफन' की कथावस्तु का सारांश
24.2 'कफन' के पात्र और चरित्र-चित्रण
24.3 'मोटेराम शास्त्री' की कथावस्तु का सारांश
24.4 'मोटेराम शास्त्री' के पात्र और चरित्र-चित्रण
24.5 'सद्गति' की कथावस्तु का सारांश
24.6 'सद्गति' के पात्र और चरित्र-चित्रण
24.7 सारांश (Summary)
24.8 शब्दकोश (Keywords)
24.9 अभ्यास प्रश्न (Review Questions)
24.10 सन्दर्भ पुस्तकें (Further Readings)

उद्देश्य (Objectives)

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् विद्यार्थी योग्य होंगे–

- 'कफन' के कथासार एवं पात्रों को समझने में;
- 'मोटेराम शास्त्री' की कथावस्तु और पात्रों की जानकारी प्राप्त करने में;
- 'सद्गति' की कथावस्तु की व्याख्या करने में;
- 'सद्गति' के पात्रों के चरित्र पर प्रकाश डालने में।

प्रस्तावना (Introduction)

कथानक कहानी का पहला तत्व होता है। कहानी का भवन इसी तत्व अर्थात् कथानक के आधार पर खड़ा होता है। कथानक को कथावस्तु भी कहा जाता है। प्रेमचंद यथार्थवादी लेखक थे। उनका यथार्थवादी आदर्शोन्मुख होता था। प्रेमचंद ने अपनी कहानियों का कथानक और उनके पात्र अपने समय के समाज से लिए हैं। इसी कारण उनकी कहानियाँ जीवंत प्रतीत होती हैं।

24.1 'कफन' की कथावस्तु का सारांश

चमार स्वभावत: वैसे ही आलसी एवं अकर्मण्य होते हैं। घीसू तथा माधव तो उनमें भी सरनाम थे। घीसू एक दिन

नोट

काम करता और तीन दिन आराम। माधव घीसू का लड़का इतना कामचोर था कि आधे घंटे काम करता और घंटाभर चिलम पीता। इसीलिए उन्हें मजदूरी नहीं मिलती थी। गाँव में काम की तो कमी नहीं थी, पर कामचोरों को काम कौन दे? उन्हें कोई काम तभी देता, जब कोई और न मिलता तथा एक आदमी का काम दो जनों से कराना मंजूर होता। वे दूसरों के खेतों से मटर-आलू चुरा लाते और भूनकर खा जाते। घीसू ने अपने जीवन के साठ साल इसी तरह निकाल दिए थे और माधव पिता के कदम-चिह्नों पर चल रहा था, बल्कि कहिए कि उसका नाम और भी उजागर कर रहा था।

पिछले साल उसका विवाह न जाने कैसे हो गया था। लड़की भली थी। उसने उस खानदान की व्यवस्था की। पिसाई करके या घास छीलकर वह दो जून आटे का जुगाड़ करती और उनके पेट भरती। तब से वे दोनों और भी आराम तलब हो गए थे, कहीं काम पर जाते ही नहीं थे।

साल भर बीतते-न-बीतते वह प्रसव-वेदना से कराहने लगी। एक दिन उसको प्रसव की अपार वेदना हो रही थी, पर उनमें इतना आलस्य भरा हुआ था कि देखने भी नहीं गए, दाई आदि का प्रबंध तो दूर, लेटे-लेटे ही उसकी कराह सुनते रहे। न बाप उठा, न बेटा। दोनों कहीं से आलू चुरा कर लाए थे और उन्हें भून रहे थे। माधव को भय था कि अगर वह उठा तो घीसू आलू अकेले खा जाएगा। उन्हें यह भी संभावना थी कि इस वेदना में कहीं वह मर न जाए, पर इसकी भी उन्हें कोई चिंता नहीं थी। यदि एक और खाने वाला आ गया तो क्या होगा, इससे अच्छा है कि दोनों ही मर जाएं।

आलू खाकर दोनों ने पानी पिया और वहीं अलाव के पास अपनी धोतियाँ ओढ़कर पाँव पेट में डाले सो गए। बुधिया के कराहने की ओर उन्होंने ध्यान नहीं दिया और इसी प्रसव-वेदना में तड़पते हुए उसके प्राण निकल गए। सुबह देखा तो पाया कि बुधिया के मुँह पर मक्खी भिनक रही थीं और बच्चा उसके पेट में ही मर गया था। सारा शरीर लहू से सना हुआ था।

माधव और घीसू दोनों ही हाय-हाय करके छाती पीटने लगे। पड़ोसियों ने सुना तो दौड़े आए और उन्हें समझाया। और तब वे उसके लिए कफन और लकड़ी के बारे में सोचने लगे। घर में एक पैसा भी न था। दोनों जमींदार के पास गए। हालाँकि वह उनसे घृणा करता था, पर उनकी दीनता, रोना और गिड़गिड़ाना देखकर दो रुपए उनकी ओर फेंक दिए। फिर तो दोनों ने जमींदार के नाम की दुहाई देकर गाँव के बनिये-महाजनों से भी पैसे लिए। जब जमींदार साहब ने पैसे दिए तो भला वे कैसे मना कर सकते थे। थोड़ी ही देर में घीसू और माधव की जेब में पाँच रुपए हो गए। कहीं से अनाज मिल गया, कहीं से लकड़ी। दोपहर को दोनों बाजार से कफन लाने चल दिए।

पर बाजार पहुँचकर घीसू की नियत बदल गयी। उसने माधव को सुझाया कि जो मर गया उस पर अच्छा कफन डालने से क्या फायदा, इसलिए कोई घटिया-सा कपड़ा देख लिया जाए। पर शाम तक घूमते-फिरते रहने के बाद भी उन्हें कुछ पसंद न आया। वास्तव में वे दोनों रुपए हजम कर जाना चाहते थे और इसी प्रेरणा से वह एक शराब की हट्टी के सामने जा खड़े हुए। घीसू ने गद्दी के सामने जाकर एक बोतल शराब का आर्डर दिया। थोड़ी देर बाद चिखौना आया, तली हुई मछलियाँ आयीं। दोनों कुज्जियों में डाल-डाल कर शराब पीने लगे और सरूर में आकर बकने लगे। मृतक बुधिया को आशीर्वाद देते हुए कहने लगे कि आज उसी के कारण यह खाना मिला है, इसलिए उसे स्वर्ग मिलेगा। वह बड़ी पुण्यात्मा है। लेकिन फिर उनके सामने चिंता थी कि वे लोगों से क्या कहेंगे कि कफन क्यों नहीं लाए? पैसे तो सभी समाप्त हो गए थे।

माधव की बात पर घीसू बड़ी काँइया हँसी हँसा और सुझाया कि वह कह देंगे कि पैसे जेब से खिसक गए। उन्हीं को देखने में इतनी देर भी लग गयी। उसकी तरकीब सुनकर माधव भी दिल खोलकर हँसा। उसने सोचा कि बुधिया तो मर गयी पर उसके बहाने आज खाने को खूब मिला।

आधी बोतल समाप्त हो जाने पर माधव सामने की दुकान से गर्मागर्म पूरियाँ, चटनी, अचार और कचौड़ियाँ ले आया। दोनों दो सेर पूरियाँ खा गए। उन्होंने सोच लिया था कि पड़ोसी कफन का प्रबंध तो करेंगे ही, हाँ अबके उन्हें पैसे न मिलेंगे। मरे को कौन ऐसे छोड़ देता है, भला?

भरपेट खाकर माधव ने बची हुई पूरियों की पत्तल उठाकर एक भिखारी को दे दी जो काफी देर से वहीं खड़ा उनकी ओर भूखी आँखों से देख रहा था और उल्लास का अनुभव जीवन में पहली बार ही किया।

खा-पीकर दोनों बकने लगे। घीसू तो दार्शनिकों जैसी बातें करने लगा। प्रलाप और उन्माद दोनों ही उन पर छा रहे थे। पहले तो पत्नी की दयालुता और सहृदयता का वर्णन करते हुए उसे सीधे बैकुण्ठ को पहुँचाते रहे और नशे की हालत में उसके दुख की कल्पना करके दोनों आँखों पर हाथ रखकर चीखें मार-मारकर रोने लगे।

घीसू ने उसे बाद में समझाया कि रोने से क्या लाभ, खुश होना चाहिए कि मरते-मरते भी वह हमें इतना दे गयी। इससे माधव प्रफुल्लित हो उठा और दोनों खड़े होकर नाचने लगे। फिर मस्ती में भरकर गाने लगे–

"ठगिनी, क्यों नैना झमकावे! ठगिनी।"

पियक्कड़ों की आँखें उनकी ओर लगी हुई थीं। घर पर रात की मरी पड़ी पत्नी पर मक्खियाँ भिनक रही थी। पर उसकी चिंता से दूर अपनी मस्ती के आलम में घीसू और माधव शराब के नशे में धुत प्रलाप कर रहे थे और जब अधिक सहा न गया तो आखिर नशे से मदमस्त होकर वहीं गिर पड़े।

उधर पड़ौसी उनके आने की बाट जोह रहे थे और वे दोनों कफन को खरीदकर लाने की अपेक्षा स्वयं ही नशे में चूर, सड़क पर पड़े हुए थे।

टास्क 'कफन' की कथावस्तु का संक्षेप में वर्णन कीजिए।

24.2 'कफन' के पात्र और चरित्र-चित्रण

'कफन' कहानी में प्रेमचंद ने मानवीय दुर्बलताओं का सफल एवं यथार्थ चित्रण किया है। इसके पात्र स्वाभाविक हैं और उनका आधार मनोवैज्ञानिक है। घीसू और माधव समाज की आर्थिक विषमता में शोषित वर्ग के प्रतिनिधि हैं। इनके चरित्रों में शोषित वर्ग की विपन्नता और उपजीविता साकार हो गयी है। इसमें तीन पात्र हैं–बुधिया, घीसू और माधव। इनमें भी घीसू का चरित्र मुख्य है। बुधिया, घीसू और माधव का चरित्र विकसित करने के लिए ही कहानी में दी गयी है क्योंकि उसके निधन से ही उनके चरित्र का निखार होता है।

प्रेमचंद ने इन दोनों का चरित्र व्याख्यात्मक शैली में ना देकर ध्वन्यात्मक रूप में दिया है। दोनों ही कफन के लिए मिले रुपयों से पहले पेट भरकर खाना चाहते हैं, पर एक-दूसरे से कह भी नहीं सकते। इसकी चित्रण-कुशलता देखिए–

माधव बोला–"लकड़ियाँ तो बहुत हैं, अब कफन चाहिए।"

"तो चलो, कोई हल्का-सा कफन ले लें।"

"हाँ और क्या? लाश उठते-उठते रात हो जाएगी, रात को कफन कौन देखता है?"

"कैसा बुरा रिवाज है कि जीते-जी तन ढाँकने को चीथड़ा भी न मिले, उसे मरने पर नया कफन चाहिए।"

× × × ×

दोनों एक-दूसरे के मन की बात ताड़ रहे थे। बाजार में इधर-उधर घूमते रहे। कभी बजार की इस दुकान पर गए, कभी बजार की उस दुकान पर। मगर कुछ जँचा नहीं, यहाँ तक कि शाम हो गयी, तब दोनों न जाने किस दैवी प्रेरणा से एक मधुशाला के सामने जा पहुँचे और जैसे किसी पूर्व निश्चित योजना से अंदर चले गए।

पात्रों की मन:स्थिति की यह सूक्ष्म विवेचना प्रेमचंद की कुशल लेखनकला का स्पष्ट उदाहरण है।

नोट

24.3 'मोटेराम शास्त्री' की कथावस्तु का सारांश

मोटेराम शास्त्री प्रस्तुत कहानी का नायक है। वह पेशे से एक ब्राह्मण अध्यापक है। शिक्षा उसका व्यवसाय है। लेकिन शिक्षक की हालत बहुत दयनीय है। अध्यापक के व्यवसाय में लिप्त व्यक्ति ईमानदारी, शांति और धैर्य से अपने लिए दो रोटियों का जुगाड़ भी नहीं कर पाता क्योंकि मासिक अनिवार्य खर्चों की तुलना में आय के नाम पर शिक्षा व्यवसाय में जो कुछ भी वह अर्जित कर पाता है वह अपर्याप्त होता है। मोटेराम शास्त्री की भी यही स्थिति है। वह इसीलिए यजमानी करने को विवश है। अध्यापक के अतिरिक्त अपने यजमानों के यहाँ थोड़ी बहुत पूजादि एवं अन्य धार्मिक कृत्यादि, अनुष्ठानादि करवा कर भोजन, वस्त्रादि प्राप्त करता रहता है, जिससे किसी तरह अपने लिए और अपनी पत्नी के लिए भरपेट भोजन एवं तन ढकने को वस्त्र उपलब्ध कर पाता है। अभावग्रस्त जिंदगी जीने की विवशता उसे लोभी, लालची और भ्रष्ट बनाने लगती है। मोटेराम शास्त्री की अवसरवादिता भी कोई रंग नहीं ला पाती। वह स्वदेशी आंदोलन के दिनों में भी राष्ट्रभावना से प्रेरित होने के स्थान पर सत्ता का पक्ष लेता है। सरकारी अधिकारियों के साथ मिलकर उनके लिए मुखबिरी भी करता है। वह स्वदेशी आंदोलन का विरोध भी करता है, सत्ता पक्ष के अंग्रेज एवं देसी हुक्मरानों को भरसक प्रसन्न करने की चेष्टा भी करता है ताकि उनकी दया-दृष्टि हो जाए, तो कुछ पद, प्रतिष्ठा प्राप्त हो जाए। शायद उसके दिन फिर जाएँ। लेकिन ऐसा कुछ भी नहीं होता। जब स्वराज्य आंदोलन आरंभ हुआ तो अंग्रेजों के विरुद्ध बख्त का रुख देखकर वह स्वराजी भी बना। देशभक्ति का नारा बुलंद करते हुए सत्याग्रहियों की अग्रिम पंक्ति में घुसपैठ करने की जी-तोड़ कोशिश की, लेकिन सफलता हाथ नहीं लगी। बेचारा अध्यापकी करता था, अध्यापकी ही करता रह गया।

स्व-मूल्यांकन (Self-Assessment)

रिक्त स्थानों की पूर्ति करें (Fill in the blanks) :

1. माधव और घीसू प्रकृति से आलसी और .... थे।
2. प्रसव-वेदना में तड़पते हुए बुधिया के .... निकल गए।
3. मोटेराम शास्त्री धूर्त, मक्कार और .... व्यक्ति है।

मोटेराम शास्त्री धूर्त भी है और मक्कार भी। वह महत्त्वाकांक्षी है। चारों ओर से असफल होने पर उसने पाया कि चारों तरफ वैद्यजी का धंधा खूब फल-फूल रहा है। गुप्त रोगों के इलाज में चाँदी ही चाँदी है। इसमें रोगी स्त्री-पुरुष शर्मोहया के कारण हर किसी से कुछ कहते भी नहीं हैं और स्वयं को रोगमुक्त करने-कराने के चक्कर में हँसकर जेबें ढीली करते हैं। साथ ही इसमें थोड़ा बहुत रसव्हार प्राप्त करने की भी गुंजाइश है। मोटेराम शास्त्री उच्च नैतिक मूल्यों अथवा मजबूत लंगोटी में विश्वास करने वाला व्यक्ति नहीं है। पत्नी है, पर फिर भी उसकी रसिक मिजाजी आशिकाना सीमा तक पहुँची हुई है और वह देखता है कि वैद्यजी के पेशे में गुप्त रोगों के इलाज में स्त्रियों के साथ इश्क लड़ाने की, उन्हें छूने और अनुभव करने की भी भरपूर गुंजाइश है। साथ ही इसमें कोई खास खर्चा भी नहीं है। बस एक ठीक-ठाक किस्म की जगह दुकान लेकर दो-चार शीशियाँ सजाने, दो-चार किस्म की सस्ती जड़ी बूटियों को कुटवा-पिसवा कर भरवाने और उनका शीशियों में प्रदर्शन करने की आवश्यकता है। थोड़ा बहुत विज्ञापन और इश्तहारबाजी करनी है तथा अलंकार शास्त्र, शब्दविद्या और वाक्पटुता के बल पर वैद्यजी तथा गुप्त रोगों के निदान पर दो-चार चटखारे भरे लेख छपवाने हैं और दो-चार कवि मित्रों के साथ महफिल सजाकर अपनी दुकान में बस जम कर बैठना है, प्रचार अपने आपसे होने लगेगा, ग्राहक आने भी शुरू हो जाएँगे। बगैर वैद्यकी पढ़े कहीं से कोई परीक्षा पास किए बिना, वैद्यकी की डिग्री लिए बिना, बस लच्छेदार भाषा में रोगियों पर मनोवैज्ञानिक असर डालकर पानीनुमा दवाइयों से उनका इलाज करना होगा क्योंकि अनेक रोग तो विशिष्ट कालखंड के स्वत: ही समाप्त हो जाते हैं, हाँ सेहरा मोटेराम शास्त्री के सिर बाँधा जाएगा कि शास्त्रीजी की पुड़िया, गोली ने रामबाण औषधि का काम किया और शास्त्रीजी अपने रोगियों को उल्टे उस्तरे से मूँडते जाएँगे। जेबें गर्म करते चले जाएँगे। खूब आमदनी होगी। रस रंग का मौका भी प्राप्त होगा। पत्नी को भी जेवरों से लाद देंगे खुद भी बढ़िया वस्त्र और बढ़िया भोजन

नोट

प्राप्त करेंगे। बढ़िया रहन-सहन हो जाएगा। ऐसा सोचकर मोटेराम शास्त्री अध्यापकी के पेशे को लात मारकर वैद्यकी का पेशा अपनाने का निश्चय कर बैठते हैं। शास्त्रीजी की पत्नी काफी समझदार है, वह अपने पति की रग-रग से वाकिफ है। उनकी धूर्तता और मक्कारी को भी खूब समझती है। वह अपने पति को हर तरह से इस पेशे में आने से रोकती है। उन्हें समझाती है, पर मोटेराम शास्त्री पर किसी बात का असर नहीं पड़ता है। वे अपने तर्कों से तथा निदानमूलक जवाबों से पत्नी के प्रत्येक प्रश्न को, हर विरोध को, निरस्त कर देते हैं। उसे हवेली और गहनों के सब्ज बाग दिखाते हैं। हार कर वह भी पति की हाँ में हाँ कर देती है। पत्नी के परामर्श से सहमत होकर मोटेराम शास्त्री अपने क्षेत्र के लोकप्रवाद की संभावना से बचने की लिए अपना पुराना बसेरा, शहर छोड़कर लखनऊ आ जाते हैं। वे लखनऊ आकर अपनी योजना के अनुसार वैद्यजी का धंधा शुरू कर देते हैं और किस्मत की बात उनका धंधा खूब चल निकलता है। वैद्यजी के नाम पर शून्य मोटेराम शास्त्री एक पहुँचे हुए वैद्य मान लिए जाते हैं। खूब धन बरसने लगता है। अपने अलंकार ज्ञान, संगीतज्ञान और काव्य-पांडित्य के बल पर वे अच्छी खासी काव्य-गोष्ठियाँ भी जमा लेते हैं। इन गोष्ठियों में सम्मिलित होने वाले रसिक उनके मित्र तो बन ही जाते हैं, उनकी वैद्यकी का लाभ उठाने के लिए गुप्त रोग निदानार्थ उनके मुरीद भी बनने लगते हैं। इस तरह मोटेराम शास्त्री लखनऊ तथा आसपास के क्षेत्रों के रईसों, नवाबों, राजाओं में अच्छी धाक जमा लेते हैं, घुसपैठ कर लेते हैं, दोनों हाथों से चाँदी बटोरने लगते हैं। नाजुक मिजाज रईस स्त्री-पुरुषों के गुप्त रोगों का इलाज करने लगते हैं।

टास्क 'मोटेराम शास्त्री' की पात्र-योजना पर अपने विचार व्यक्त कीजिए।

मोटेराम शास्त्री के ग्राहकों में विड़हल की एक युवा, पर विधवा रानी भी है। वह अत्यंत खूबसूरत है। असमय ही पति की मृत्यु हो जाने से कामवंचिता हो गई है। वह गुप्त रोग से भी पीड़ित है। उस पर मोटेराम शास्त्री का जादुई डंडा चल जाता है। वह मोटेराम शास्त्री की हृदय से मुरीद बन जाती है। फलस्वरूप शास्त्रीजी का उसके यहाँ वैद्यकी के नाम पर आना-जाना बढ़ जाता है। दिन में पाँच-पाँच बार वे विड़हल की युवा रानी की तीमारदारी के लिए जाने लगते हैं। खूब पैसा बटोरने लगते हैं। रईसों में दिखाने लायक शान-ओ-शौकत भी बढ़ने लगती है। रसूख बढ़ जाने से रानी साहिबा के वास्ते से अपने दो चार मित्रों को नौकरी, राय वगैरह भी दिलवा देते हैं। खूब वाहवाही लूटने लगते हैं। शायद थोड़ा बहुत रसरंग भी करने लगते हैं। कम से कम ठरक तो लेने ही लगते हैं। एक दिन रानी साहिबा की गोरी-गोरी नाजुक कलाइयाँ थामें रानी साहिबा के वक्षों पर हाथ फेरते हुए उनके मर्ज की धड़कन पकड़ने का मजा ले रहे थे कि अचानक पाँच-सात आदमी मोटे-मोटे सोटे लिए धड़ाधड़ रानी साहिबा के शयन कक्ष में घुसे चले आए और ताबड़तोड़ मोटेराम जी की धुनाई कर डाली। मोटेराम शास्त्री संभल भी नहीं पाए। उस पर बेभाव की मार पड़ने लगी। रानी साहिबा तो उठकर अंदर की तरफ महल के दूसरे कक्ष में भाग गईं। मोटेराम शास्त्री हाय-हाय करते लुढ़क पड़े। खूब ठुकाई की गई। सोटों के बाद लात-घूँसों से भी मार पड़ी। किसी तरह हाथ-पाँव जोड़कर जान बख्शी की माँग की। पीटने वालों ने पंचलत्ती जमाते हुए इस शर्त पर ही छोड़ा कि सुबह पौ-फटने से पहले ही वे बीवी समेत लखनऊ छोड़कर नौ-दो ग्यारह हो जाएँ, वरना उनकी खैर नहीं। मोटेराम शास्त्री पिट-पिटाकर नीला बदन लिए किसी तरह रोते, कलपते गिरते-पड़ते घर पहुँचे। घर पहुँचकर मोटेराम ने सारा किस्सा कह सुनाया। पत्नी सारी बात सुनकर मोटेराम शास्त्री पर ही नाराज हुई। उसने उन्हें खूब लानत-मलानत भेजी। उनकी आशिकाना तबियत एवं रस मिजाजी की कटु आलोचना की। साथ ही उनके बदन पर पड़े नीलों पर मरहम पट्टी भी की। तदुपरांत ठेला भी दरवाजे पर बुलवा लिया गया। मोटेराम शास्त्री पड़े-पड़े कराह रहे थे और उनकी पत्नी शहर छोड़कर पुन: अध्यापकी के कर्म में पति देवता को प्रविष्ट करने के लिए घर का सामान लदवा रही थी ताकि जहाँ से वैद्यकी का धंधा करने के लिए आए थे वहीं वैद्यकी का धंधा छोड़कर पुराना अध्यापकी का पेशा पुन: साख्तियार करने के लिए लखनऊ शहर छोड़कर वापस पलायन किया जा सके। वैसे भी सुबह होने से पहले ही शहर छोड़ देने की ताकीद थी। इस प्रकार प्रेमचंद ने प्रस्तुत कहानी के माध्यम से एक यथार्थ स्थिति को प्रस्तुत किया है तथा गाँधीवादी अहिंसक दर्शन की

नोट

लीक से हटकर भ्रष्टाचार का निदान भी कर दिया है कि जमकर ठुकाई होनी चाहिए। मार के आगे भूत भी भागता है। मोटेराम शास्त्री को भ्रष्ट पथ से हटाने का जो तौर तरीका अपनाया गया, वही भ्रष्टाचारी को सही सबक सिखाने का अचूक तरीका है। कहानी काव्य न्याय के चरमबिंदु पर पूर्ण हो जाती है।

24.4 'मोटेराम शास्त्री' के पात्र और चरित्र-चित्रण

प्रेमचंद ने प्रस्तुत कहानी में मोटेराम शास्त्री को कहानी का मुख्य पात्र बनाया है वह कहानी का नायक है। कहा जा सकता है कि अपनी दुष्ट प्रकृति, भ्रष्ट प्रवृत्ति, धन लोलुप व काम लोलुप मनोवृत्ति के कारण वह एक ऐसा प्रतिनिधि वर्ग चरित्र है जो किसी भी आम भ्रष्टाचारी के व्यक्तित्व में देखने को मिलता है। मोटेराम शास्त्री कोई अपराधी किस्म का कोई खतरनाक आदमी नहीं है। वह एक गृहस्थ गरीब ब्राह्मण है, पेशे से अध्यापक है पर अध्यापन कार्य में पर्याप्त धन न मिल पाने के कारण वैद्यकी (देशी चिकित्सा पद्धति) की ओर आकर्षित होता है। गुलाम भारत में स्वतंत्रता के लिए संघर्ष करने वाले गाँधीवादी सुरागियों का भरपूर विरोध और उनकी मुखबिरी करके उसने हर तरह से ब्रिटिश हुक्मरानों तथा देशी अधिकारियों और सरकारी कर्मचारियों को प्रसन्न करके उनसे कुछ पा लेने का पूर्ण प्रयास तो जरूर किया पर बदकिस्मती हमेशा उसके आड़े आई और उसे कुछ प्राप्त नहीं हुआ। अभावग्रस्त जीवन से तंग आकर वैद्यकी का पेशा अपनाता है। उसे चिकित्सा शास्त्र का रंच मात्र भी ज्ञान नहीं है। शास्त्री गुप्त रोगों का इलाज करने लगता है। उसकी मुहिम चल निकलती है। खूब धन बटोरने लगता है। मोटेराम शास्त्री लंगोट का ढीला है। वह ठरकी है उसकी इश्क मिजाजी उसके लिए गले की फाँसी बन जाती है। अपनी इस कमजोरी के कारण वह पिटता है और अपनी भली चंगी वैद्यकी के धंधे से महरूम होकर आखिरकार लखनऊ छोड़, अपने पुराने शहर और पुराने पेशे में पलायन करने के लिए बाध्य होता है। कुल मिलाकर मोटेराम शास्त्री एक अवसरवादी, मक्कार, धूर्त और पोंगे किस्म का अधेड़ उम्र का आदमी है। इस कहानी में वह एक यथार्थ पात्र है जो आम जिन्दगी में भी कहीं न कहीं देखने को मिल ही जाता है।

स्व-मूल्यांकन (Self-Assessment)

निम्नलिखित कथनों में सत्य अथवा असत्य की पहचान करें

(State Whether the following statements are True or False) :

4. मोटेराम शास्त्री की पत्नी ने उसकी रस मिजाजी की कटु आलोचना की।
5. भूख और प्यास की चिंता ना करके दुखी दिनभर पंडितजी का काम करता रहा।
6. बुधिया के निधन के उपरांत घीसू और माधव शीघ्रता से कफन खरीदकर लाए।

24.5 'सद्‌गति' की कथावस्तु का सारांश

जाटव जाति का निर्धन व्यक्ति दुखी अपनी पुत्री का विवाह करना चाहता था। वह विवाह का मुहूर्त पूछने पंडित घासीराम के पास जाता है। भेंट के रूप में वह उनकी गाय के लिए एक गट्ठर घास ले गया। पंडितजी ने उसे दरवाजे पर झाड़ू लगाने, बैठक लीपने, खलिहान से भूसा लाने और दरवाजे पर लकड़ी की गाँठ चीरने का आदेश दिया। दुखी ने दरवाजे पर झाड़ू लगाने और बैठक लीपने के बाद लकड़ी फाड़नी आरंभ की। गाँठ वाली लकड़ी को चीरने की कोशिश कई लोग कर चुके थे, पर वह नहीं चिर सकी थी। दुखी भी कुल्हाड़ी चलाते-चलाते जब परेशान हो गया तो उसने नयी शक्ति सँजोने के लिए चिलम पीने की सोची। ब्राह्मणों के टोले में उसे चिलम तम्बाकू कहाँ से मिलती? उसी गाँव के झूरी गोंड के घर से दुखी चिलम और तंबाकू माँगकर लाया, पर आग उसके घर पर नहीं थी। दुखी ने पंडितजी के घर में घुसकर आग माँगी तो पंडिताइन क्रोधित हुई। पंडितजी के कहने पर उन्होंने आग दुखी की ओर फेंकी, जिससे उसका सिर जल गया। चिलम पीकर दुखी फिर लकड़ी चीरने लगा। तभी झूरी गोंड ने आकर दुखी से कुल्हाड़ी ले ली और गाँठ को फाड़ने का प्रयास करने लगा। उससे गाँठ नहीं फटी तो वह चला गया। दुखी

ने लकड़ी फाड़ना छोड़कर दोपहरी भर भूसा ढोया। उसके बाद वह फिर लकड़ी फाड़ने लगा। शाम के समय पंडित घासीराम बाहर आए तो उन्होंने लकड़ी न फटने के कारण दुखी को फटकारा। दुखी फिर लकड़ी फाड़ने लगा। लकड़ी तो फट गयी, पर दुखी गिर गया। पंडितजी ने उसे जाकर जगाया, तब उन्हें पता चला कि दुखी मर गया है। उन्होंने दुखी के गाँव में खबर की पर पुलिस के डर से कोई लाश उठाने नहीं आया। सवेरे सूरज निकलने से पहले पंडितजी ने उसके पैर में रस्सी का फन्दा डालकर लाश घसीटी और गाँव के बाहर डाल दी। उसे सियार, कुत्ते और कौवे नोंच-नोंचकर खाने लगे। यही दुखी की सद्‌गति थी।

24.6 'सदगति' के पात्र और चरित्र-चित्रण

इस कहानी में पाँच पात्र हैं—पंडित घासीराम, उनकी पत्नी, दुखी और दुखी की पत्नी तथा झूरी गोंड। पंडित घासीराम पुरोहिती का काम करते हैं। यजमानों से दक्षिणा के अतिरिक्त बेगार लेना उनका स्वभाव है। वे भाँग पीते, भजन करते, भोजन करते और दोपहरी भर सोते हैं। भूखा दुखी दिनभर उनका काम कर रहा है, इसकी उन्हें कोई चिंता नहीं है। थककर दुखी आराम करने लगा तो उन्होंने फटकार लगाई। भूखा-प्यासा बूढ़ा आदमी दिनभर उनका काम करते-करते थक गया है, इससे उनके मन में दया नहीं आती। पंडिताइन को अपने घर की पवित्रता का इतना ध्यान है कि दुखी के भीतर जाने से उनका घर अपवित्र हो गया है। नीच जाति वाले को आग देना भी वह अनुचित समझती है। पंडितजी के कहने से उन्होंने आग दुखी की ओर फेंकी जिससे उसका सिर जल गया। उन्होंने आलस्य के कारण दुखी के लिए दो रोटियाँ बनाना भी उचित नहीं समझा। दुखी ब्राह्मण का आदर करता है। ब्राह्मण के बताए हुए विवाह के मुहूर्त पर उसको पूरा विश्वास है। वह अपने आप को नीच और अछूत समझता है। वृद्ध और दुर्बल होने पर भी वह भूख और प्यास की चिंता न करके दिनभर पंडितजी का काम करता रहता है। लकड़ी फाड़ते-फाड़ते मर जाने से सिद्ध होता है कि दुखी परिश्रमी था। झुरी गोंड स्पष्टवादी है। पंडितजी दुखी से दिनभर काम कराते रहे, पर उसे खाना नहीं दिया, इस पर वह क्रोधित हो जाता है। दुखी के गाँव वालों को दुखी की लाश उठाने से उसी ने रोका। एक आदमी काम करते-करते जिसके द्वार पर मर गया, उसका कोई कर्त्तव्य नहीं बनता, इससे झूरी को क्रोध आता है। दुखी की पत्नी भोली तथा अंधविश्वासी है। वह सोच रही है कि पंडितजी उनके कपड़ों और चारपाई पर कैसे बैठेंगे? इससे उनकी पवित्रता नष्ट न हो जाएगी। इस प्रकार प्रेमचंद ने इस कहानी के सभी पात्रों के चरित्र पर पूर्णरूप से प्रकाश डाला है। इस कहानी के सभी पात्र जीवंत हैं। दुखी के प्रति करुणा और पंडित-पंडिताइन के प्रति क्रोध की भावना प्रत्येक पाठक के मन में उत्पन्न कर देने से सिद्ध होता है कि प्रेमचंदजी को इस कहानी के पात्रों के चरित्र-चित्रण में पूरी सफलता मिली है।

24.7 सारांश (Summary)

- चमार स्वभावतः वैसे ही आलसी एवं अकर्मण्य होते हैं। घीसू तथा माधव तो उनमें भी सरनाम थे। घीसू एक दिन काम करता और तीन दिन आराम।
- आलू खाकर दोनों ने पानी पिया और वहीं अलाव के पास अपनी धोतियाँ ओढ़कर पाँव पेट में डाले सो गए। बुधिया के कराहने की ओर उन्होंने ध्यान नहीं दिया और इसी प्रसव-वेदना में तड़पते हुए उसके प्राण निकल गए।
- बाजार पहुँचकर घीसू की नियत बदल गयी। उसने माधव को सुझाया कि जो मर गया उस पर अच्छा कफन डालने से क्या फायदा, इसलिए कोई घटिया-सा कपड़ा देख लिया जाए। पर शाम तक घूमते-फिरते रहने के बाद भी उन्हें कुछ पसंद न आया।
- घीसू और माधव समाज की आर्थिक विषमता में शोषित वर्ग के प्रतिनिधि हैं। इनके चरित्रों में शोषित वर्ग की विपन्नता और उपजीविता साकार हो गयी है।

नोट

- मोटेराम शास्त्री धूर्त भी है और मक्कार भी। वह महत्त्वाकांक्षी है। चारों ओर से असफल होने पर उसने पाया कि चारों तरफ वैद्यजी का धंधा खूब फल-फूल रहा है। गुप्त रोगों के इलाज में चाँदी ही चाँदी है।
- मोटेराम शास्त्री कोई अपराधी किस्म का कोई खतरनाक आदमी नहीं है। वह एक गृहस्थ गरीब ब्राह्मण है, पेशे से अध्यापक है पर अध्यापन कार्य में पर्याप्त धन न मिल पाने के कारण वैद्यकी (देशी चिकित्सा पद्धति) की ओर आकर्षित होता है।
- जाटव जाति का निर्धन व्यक्ति दुखी अपनी पुत्री का विवाह करना चाहता था। वह विवाह का मुहूर्त पूछने पंडित घासीराम के पास जाता है। भेंट के रूप में वह उनकी गाय के लिए एक गट्ठर घास ले गया।
- भूखा दुखी दिनभर उनका काम कर रहा है, इसकी उन्हें कोई चिंता नहीं है। थककर दुखी आराम करने लगा तो उन्होंने फटकार लगाई। भूखा-प्यासा बूढ़ा आदमी दिनभर उनका काम करते-करते थक गया है, इससे उनके मन में दया नहीं आती।

24.8 शब्दकोश (Keywords)

1. अकर्मण्य – कामचोर
2. वेदना – दर्द, पीड़ा
3. अपार – अत्यधिक
4. लहू – रक्त
5. आलम – माहौल
6. ताड़ना – समझना
7. व्यवसाय – कारोबार
8. प्रदर्शन – दिखावा
9. पलायन – भागना
10. किस्म – प्रकृति।

24.9 अभ्यास प्रश्न (Review Questions)

1. 'कफन' उपन्यास के पात्रों के चरित्र की व्याख्या कीजिए।
2. प्रेमचंद द्वारा लिखित 'मोटेराम शास्त्री' की कथावस्तु का सारांश अपने शब्दों में लिखिए।
3. 'सद्‌गति' कहानी की समीक्षा कीजिए।
4. 'सद्‌गति' में प्रेमचंद जी ने 'दुखी' का अंत किस प्रकार दर्शाया है?
5. प्रेमचंद जी द्वारा लिखित 'मोटेराम शास्त्री' से हमें क्या शिक्षा मिलती है?

उत्तर : स्व-मूल्यांकन (Answers : Self-Assessment)

1. कामचोर
2. प्राण
3. महत्त्वाकांक्षी
4. सत्य
5. सत्य
6. असत्य।

24.10 सन्दर्भ पुस्तकें (Further Readings)

पुस्तकें प्रेमचंद की प्रतिनिधि कहानियाँ–प्रेमचंद, राजकमल प्रकशन, दिल्ली।

इकाई–25: आचार्य रामचन्द्र शुक्ल का साहित्यिक योगदान

अनुक्रमणिका (Contents)

उद्देश्य (Objectives)

प्रस्तावना (Introduction)

25.1 आचार्य रामचन्द्र शुक्ल की लेखन कुशलता

25.2 आलोचक रामचन्द्र शुक्ल

25.3 आचार्य शुक्ल के समीक्षा सिद्धांत

25.4 सारांश (Summary)

25.5 शब्दकोश (Keywords)

25.6 अभ्यास प्रश्न (Review Questions)

25.7 सन्दर्भ पुस्तकें (Further Readings)

उद्देश्य (Objectives)

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् विद्यार्थी योग्य होंगे–

- आचार्य रामचंद्र शुक्ल की लेखन कुशलता को जानने में;
- आलोचक के रूप में शुक्ल जी की भूमिका समझने में;
- रामचंद्र शुक्ल जी के समीक्षा सिद्धांतों की व्याख्या करने में।

प्रस्तावना (Introduction)

परिष्कार और परिमार्जन का कार्य समाप्त हो चुका था। अब हिन्दी गद्य साहित्य को विशदता और गंभीरता की आवश्यकता थी। सन् 1920–21 के आसपास बाबू श्यामसुंदरदास ने 'साहित्यालोचन' प्रस्तुत कर इस दिशा में पदन्यास किया था, किंतु हिन्दी समीक्षा के लिए एक मान्य एवं प्रौढ़ मानदंड और प्रभावशाली पद्धति की आवश्यकता थी। इसकी पूर्ति शुक्ल जी के व्यक्तित्व ने की।

25.1 आचार्य रामचन्द्र शुक्ल की लेखन कुशलता

शुक्ल जी समीक्षा-क्षेत्र में आने के पहले साहित्य के अन्य क्षेत्रों में भटक चुके थे। संपादक, अनुवादक, कवि, निबंध लेखक, कहानीकार आदि कई रूपों में उनका व्यक्तित्व अभिव्यक्त हो चुका था। विफलता उन्हें कहीं नहीं मिली। संपादक जीवन का अनुभव उन्हें विद्यार्थी जीवन में ही **बदरीनारायण चौधरी** 'प्रेमघन' की 'आनन्दकादम्बिनी' में कार्य करते हुए हुआ था। 'काशी नागरी प्रचारिणी पत्रिका' (मासिक) के संपादन का गुरुतर दायित्व भी कुछ दिनों के लिए शुक्ल जी को उठाना पड़ा था। शुक्ल जी ने अंग्रेजी और बंगला से सफल अनुवाद भी किया था। गद्य में भी और पद्य में भी। बंगला के प्रसिद्ध ऐतिहासिक उपन्यास 'शशांक' का अनुवाद तो हिन्दी संसार कदाचित् नहीं

नोट

भूलेगा। कवि के रूप में शुक्ल जी का विवेचन यहाँ अभीष्ट नहीं, किंतु यह निश्चित है कि इस क्षेत्र में भी वे विफल नहीं कहे जा सकते।

निबंध लेखक और आलोचक एवं शुक्ल के व्यक्तित्व एक दूसरे के पूरक हैं। निबंधों में उनकी समीक्षा के सिद्धांत निर्मित हुए हैं और आलोचनाओं में उन्हें व्यावहारिक रूप मिला है। इन दोनों क्षेत्रों में आपका स्थान आज भी निर्विवाद रूप से सर्वश्रेष्ठ है।

25.2 आलोचक रामचंद्र शुक्ल

आलोचक शुक्ल जी की सैद्धांतिक एवं व्यावहारिक दोनों प्रकार की आलोचनाएँ हमारे सम्मुख हैं। आपका सैद्धांतिक समीक्षा ग्रंथ **रसमीमांसा** रस-चिंतन के क्षेत्र में स्वयं अपना प्रतिमान है। आपकी व्यावहारिक आलोचना का प्रौढ़तम रूप 'तुलसी' और 'जायसी' ग्रंथावली की भूमिकाओं 'भ्रमरगीतसार' की भूमिका तथा 'हिन्दी साहित्य का इतिहास' में प्रकट हुआ है। शुक्ल जी की समीक्षा का सैद्धान्तिक आधार भारतीय 'रसवाद' है। शुक्ल जी ने इसे सर्वथा पूर्ण मानदंड माना है। **आपने जीवन की क्रिया-भूमि, काव्य की भावभूमि और समीक्षा की विचारभूमि में अद्‌भुत सामंजस्य स्थापित किया है।** आपके सिद्धांत जीवन से गृहीत हैं। काव्य में उनको परीक्षित किया गया है और अंततः विवेक की कसौटी पर कसकर उन्हें सिद्धांत रूप में उपस्थित किया गया है। समीक्षा का जो सिद्धांत इन तीनों में सामंजस्य नहीं ला सकता, वह आपको मान्य नहीं। सामंजस्य की यह पूर्णता भारतीय 'रसवाद' में है। ऐसी आपकी मान्यता थी, जो कभी बदली नहीं।

आचार्य शुक्ल ने 'रसवाद' को आध्यात्मिक भूमि से उतारकर वैज्ञानिक आधार पर प्रतिष्ठित किया। उसे बौद्धिक चिंतन की दृष्टि से अधिक पूर्ण और विश्वसनीय बनाया। 'रस' के प्रवर्तक भावों को विशद, सूक्ष्म और गंभीर मनोवैज्ञानिक विवेचन किया। उनको नये ढंग से परिभाषित और वर्गीकृत किया। भारतीय और पाश्चात्य काव्य सिद्धांतों का अनुशीलन किया और 'रस' को काव्य की आत्मा स्वीकार करके शेष समस्त मान्यताओं को या तो इसी के भीतर समाविष्ट किया या अनुचित प्रमाणित किया। वस्तुतः उन्होंने 'रस सिद्धांत' को आधुनिक युग की आकांक्षा के अनुकूल परिभाषित करके पुनः प्रतिष्ठित किया। उनका समीक्षा सिद्धांत एक प्रकार से रस सिद्धांत की व्याख्या के रूप में ही विकसित हुए हैं। शुक्ल जी ने सैद्धांतिक और व्यावहारिक दोनों ही प्रकार की समीक्षाओं के माध्यम से रस सिद्धांत की ही प्रतिष्ठा की। उन्होंने सौंदर्यानुभूति पर विचार करते हुए उसे भी रसानुभूति के स्तर पर ही समझाने की चेष्टा की। आचार्य शुक्ल के आलोचक रूप को समझाने के लिए उनके समीक्षा सिद्धांतों पर थोड़ा विस्तार से विचार करना होगा।

टास्क 'आलोचक' के रूप में शुक्ल जी ने क्या कीर्तिमान स्थापित किया है?

25.3 आचार्य शुक्ल के समीक्षा सिद्धांत

आधुनिक हिन्दी-समीक्षा के विकास क्रम में आचार्य **पं. रामचंद्र शुक्ल** का व्यक्तित्व अनेक दृष्टियों से अप्रतिम है। वे सच्चे अर्थों में एक पथिकृत आचार्य हैं। उच्च कोटि की समीक्षा के लिए विस्तृत अध्ययन, सूक्ष्म अन्वीक्षण बुद्धि और मर्मग्राहिणी प्रज्ञा अपेक्षित है। आचार्य शुक्ल के आलोचक व्यक्तित्व में उपर्युक्त तीनों ही विशेषताओं का सामंजस्य लक्षित होता है। वे हिन्दी के पहले आलोचक हैं, जिन्होंने भारतीय काव्य शास्त्र की अतल गहराई में प्रवेश करके उसकी महत्ता, सारवत्ता, व्यापकता और उपयोगिता के प्रति पूर्ण विश्वास व्यक्त किया। उन्होंने घोषित किया कि **"शब्दशक्ति, रस और अलंकार, ये विषय-विभाग काव्य समीक्षा के लिए इतने उपयोगी हैं कि इनको**

अंतर्भूत करके संसार की नयी पुरानी सब प्रकार की कविताओं की बहुत ही सूक्ष्म, मार्मिक और स्वच्छ आलोचना हो सकती है।" उनका सिद्धांत था कि "हमें अपनी दृष्टि से दूसरे देशों के साहित्य को देखना होगा, दूसरे देशों की दृष्टि से अपने साहित्य को नहीं"। अपनी दृष्टि या भारतीय दृष्टि के सम्पर्क बोध के लिए उन्होंने नाट्यशास्त्र, काव्यादर्श, काव्यालंकार, अभिनवभारतीय, काव्यप्रकाश, धवन्यालोक, दशरूपक, काव्यमीमांसा, साहित्यदर्पण, रसतरंगिणी, रसगंगाधर आदि अनेक ग्रंथों का अनुशीलन किया था। उनका कहना था "रस निरूपण पद्धति का आधुनिक मनोविज्ञान आदि की सहायता से खूब प्रसार और संस्कार करना पड़ेगा। इस पद्धति की नींव बहुत दूर तक डाली गयी है।" कहना न होगा कि इस नींव की गहराई का अनुभव उन्होंने स्वयं भली-भाँति किया था और आधुनिक मनोविज्ञान की सहायता से उसे व्यापक आधार पर प्रतिष्ठित करने की चेष्टा भी की थी। 'रस-सिद्धांत' के अतिरिक्त आचार्य शुक्ल ने रीति, अलंकार, ध्वनि, गुण, वक्रोक्ति और औचित्य सिद्धांतों का अध्ययन भी किया था किंतु काव्य में इनकी स्थिति उन्हें वहीं तक मान्य थी, जहाँ तक ये रस के पोषक, उपकारक, आश्रित या रक्षक बनकर उपस्थित हों। उनके अनुसार काव्य का आभ्यंतर स्वरूप या आत्मा 'भाव' या 'रस' है। अलंकार उसके बाह्य स्वरूप हैं। 'रीति' केवल संघटना है, शरीर का अंग-विन्यास है। रस और गुण का संबंध 'अन्वय-व्यतिरेक संबंध' है। 'ध्वनि' भी काव्य की आत्मा नहीं है क्योंकि इसमें अतिव्याप्ति दोष है। इसमें अलंकारध्वनि और वस्तुध्वनि भी आ जाती है। वक्रोक्ति भी काव्य में रसाश्रित होकर ही सार्थक होती है, स्वतन्त्र रूप में नहीं। औचित्य रस का रक्षक है। उसकी अनुपस्थिति में रस, रसाभास के स्तर पर पहुँच जाता है। इस प्रकार आचार्य शुक्ल की समीक्षा का आधार भारतीय रस सिद्धांत है।

स्व-मूल्यांकन (Self-Assessment)

रिक्त स्थानों की पूर्ति करें (Fill in the blanks) :

1. निबंध लेखक और आलोचक एवं शुक्ल के व्यक्तित्व एक-दूसरे के ·············· हैं।
2. शुक्ल जी की समीक्षा का सैद्धांतिक आधार भारतीय ·············· है।
3. हृदय की मुक्तावस्था ·············· कहलाती है।

रस को परिभाषित करते हुए आचार्य ने कहा है–

"हृदय की अनुभूति ही साहित्य में 'रस' और 'भाव' कहलाती है।"

× × × ×

"हृदय के प्रभावित होने का नाम ही रसानुभूति है।"

× × × ×

"जिस प्रकार आत्मा की मुक्तावस्था ज्ञान-दशा कहलाती है, उसी प्रकार हृदय की यह मुक्तावस्था रसदशा कहलाती है।"

उपर्युक्त परिभाषाओं से प्रकट है कि शुक्ल जी की दृष्टि में **हृदय की मुक्तावस्था, प्रभावित होने की दशा, लोक-हृदय में लीन होने की दशा** और **अनुभूतिदशा** लगभग एक ही हैं। इस मनोदशा तक पहुँचना ही काव्य का चरम लक्ष्य है। यह गोचर जगत् अनेक रूपात्मक है और मानव-हृदय अनेक भावात्मक। इन आंतरिक भावों और ब्राह्य रूपों में सामंजस्य स्थापित करने में ही कवि की काव्य साधना की सार्थकता मान्य हो सकती है। इस सामंजस्य के द्वारा ही अर्थात् भावों के अनुकूल विषय और विषय के अनुकूल भाव का चित्रण करके ही कवि अपने कर्म विधान को पूरा करता है। शास्त्रीय दृष्टि से इसे ही 'आलम्बन' और 'आश्रय' की यथोचित प्रतिष्ठा कहा जा सकता है। आश्रय तो कोई सहृदय मनुष्य ही हो सकता है किंतु आलम्बन रूप में हम 'मानव' तथा 'मानवेतर समस्त चराचर' का चित्रण कर सकते हैं। तात्पर्य यह कि पहले तो कवि स्वयं इस अनेक रूपात्मक जगत् के (जिसमें मानव और मानवेतर प्रकृति दोनों की आती है) मार्मिक तथ्यों में अपने हृदय को लीन करता हुआ अनुभूति ग्रहण करता है और

नोट

फिर कल्पना द्वारा अपनी उस अनुभूति को व्यक्त करता है। यह अभिव्यक्ति तीन प्रकार से हो सकती है–(1) जहाँ आलम्बन मात्र का विशद वर्णन किया जाए, (2) जहाँ आलम्बन उपेक्षित हो और कवि केवल भाव व्यंजना में ही लीन हो, (आचार्य शुक्ल इसे भाव प्रदर्शक काव्य कहते हैं और आधुनिक गीत-मुक्तकों को इसी कोटि में रखते हैं)। (3) जहाँ आश्रय, आलम्बन, उद्दीपन, अनुभाव और संचारी भाव सभी चित्रित हों। आचार्य शुक्ल ने आश्रय, आलम्बन, उद्दीपन इन तीनों को ही 'विभाव' के अंतर्गत रखा है। 'अनुभाव' आश्रय की चेष्टाएँ हैं। उन्होंने इस विभावपक्ष को काव्य में सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण माना है क्योंकि रस का आधार खड़ा करने वाला तत्व यही है। वे तो यहाँ तक कहते हैं–"मैं आलम्बन मात्र के विशद वर्णन को श्रोता में रसानुभव (भावानुभव सही) उत्पन्न करने में पूर्ण समर्थ मानता हूँ।" आचार्य शुक्ल की दृष्टि में विभाव, अनुभाव और संचारी भावों की एकत्र स्थिति होने पर भी 'रसपरिपाक' होना आवश्यक नहीं है। कभी-कभी इनको एकत्र करके रस की शर्त पूरी की जाती है। इस परिपाक के लिए मूल वस्तु है विभाव विधान। इसमें कवि को पूरी सतर्कता बरतनी चाहिए। विभाव में आलम्बन प्रधान वस्तु है। आलम्बन का लोकधर्मी होना नितान्त आवश्यक है। उदाहरण के लिए वीर रस की निष्पत्ति के लिए आलम्बन रूप में ऐसे वीर पुरुष का चित्रण करना अधिक उचित होगा, जिसकी वीरता लोक विश्रुत एवं लोक समर्थित हो। इसी प्रकार रौद्र रस के वर्णन में आलम्बन का चित्रण इस रूप में होना चाहिए कि वह मनुष्यमात्र के क्रोध का पात्र हो सके। आलम्बन के लोकधर्मी होने पर ही विभाव विधान की पूर्णता मानी जा सकती है। विभाव विधान की महत्ता और आलम्बन के लोकधर्मी स्वरूप की अनिवार्यता पर बल देते हुए भी आचार्य ने पूर्ण रस-व्यंजना के लिए कवि आलम्बन तथा सहृदय तीनों की आनुभूतिक एकता को आवश्यक माना है। वे कहते हैं–"जहाँ आचार्यों ने पूर्ण रस माना है, वहाँ तीन हृदयों का समन्वय चाहिए। आलम्बन द्वारा भाव की अनुभूति प्रथम तो कवि में चाहिए फिर उसके वर्णित पात्र में और फिर श्रोता या पाठक में। विभाव द्वारा जो **साधारणीकरण** कहा गया है वह तभी चरितार्थ हो सकता है।" जो लोग यह समझते हैं कि आचार्य शुक्ल ने केवल आलम्बनत्वधर्म के साधारणीकरण की बात कहकर कवि और पाठकों के पक्ष की उपेक्षा की है, उन्हें उपर्युक्त कथन पर ध्यान देना चाहिए। आलम्बन के लोकधर्मी स्वरूप पर बल देने का कारण यह था कि आचार्य शुक्ल उसे ही कवि-हृदय में अनुभूति का उद्रेक करने वाला तत्व मानते थे। तुलसी के हृदय में रामभक्ति का उद्रेक सीतापति के (राम) शील स्वभाव को देखसुन कर ही हुआ था और वे चाहते थे कि सबके हृदय में वैसी ही अनुभूति हो। आदि कवि बाल्मीकि ने भी नारद द्वारा इक्ष्वाकुकुलोद्भव राम की लोक-विश्रुत गाथा सुनकर और उससे अभिभूत होकर ही रामायण में उनके लोकधर्मी चरित्र की अवतारणा की थी। कवि भूषण के चित्त को काव्याभिमुख करने वाला प्रेरक तत्व शिव चरित्र ही था। जिस प्रकार उपास्य के लोक-पावन विरुद्ध से आकृष्ट होकर उपासक उसके स्वरूप में अपने हृदय को लीन करने के लिए प्रेरित होता है, उसी प्रकार आलम्बन का लोक समर्थित व्यक्तित्व कवि हृदय को प्रेरित करके उसे कवि कर्म में लीन करता है। श्रोता या पाठक भी ऐसे ही लोकधर्मी आलम्बन के प्रति निष्ठावान् होकर उसके साथ अपने हृदय का सामंजस्य स्थापित करता है। कवि अपने तप-बल (शब्द साधना) से जिस किसी आलम्बन को सहृदय पाठक के हृदय में प्रविष्ट कराना चाहेगा, तो उसकी स्थिति 'त्रिशंकुवत्' होगी।

25.4 सारांश (Summary)

- शुक्लजी ने अंग्रेजी और बंगला से सफल अनुवाद भी किया था। गद्य में भी और पद्य में भी। बंगला के प्रसिद्ध ऐतिहासिक उपन्यास 'शशांक' का अनुवाद तो हिन्दी संसार कदाचित् नहीं भूलेगा।
- आपका सैद्धांतिक समीक्षा ग्रंथ रसमीमांसा रस-चिंतन के क्षेत्र में स्वयं अपना प्रतिमान है। आपकी व्यावहारिक आलोचना का प्रौढ़तम रूप 'तुलसी' और 'जायसी' ग्रंथावली की भूमिकाओं 'भ्रमरगीतसार' की भूमिका तथा 'हिन्दी साहित्य का इतिहास' में प्रकट हुआ है।
- आधुनिक हिन्दी-समीक्षा के विकास क्रम में आचार्य पं. रामचंद्र शुक्ल का व्यक्तित्व अनेक दृष्टियों से अप्रतिम है। वे सच्चे अर्थों में एक पथिकृत आचार्य हैं। उच्च कोटि की समीक्षा के लिए विस्तृत अध्ययन, सूक्ष्म अन्वीक्षण बुद्धि और मर्मग्राहिणी प्रज्ञा अपेक्षित है।

नोट

- शुक्ल जी की दृष्टि में हृदय की मुक्तावस्था, प्रभावित होने की दशा, लोक-हृदय में लीन होने की दशा और अनुभूतिदशा लगभग एक ही हैं। इस मनोदशा तक पहुँचना ही काव्य का चरम लक्ष्य है।
- जहाँ आचार्यों ने पूर्ण रस माना है, वहाँ तीन हृदयों का समन्वय चाहिए। आलम्बन द्वारा भाव की अनुभूति प्रथम तो कवि में चाहिए फिर उसके वर्णित पात्र में और फिर श्रोता या पाठक में।
- कवि अपने तप-बल (शब्द साधना) से जिस किसी आलम्बन को सहृदय पाठक के हृदय में प्रविष्ट कराना चाहेगा, तो उसकी स्थिति 'त्रिशंकुवत्' होगी।

25.5 शब्दकोश (Keywords)

1. प्रभावशाली – असरदार
2. विफलता – नाकामी
3. सर्वश्रेष्ठ – सबसे अच्छा
4. सम्मुख – सामने
5. प्रौढ़ – वृद्ध
6. विवेक – दिमाग।

25.6 अभ्यास प्रश्न (Review Questions)

1. रामचंद्र शुक्ल जी के साहित्यिक योगदान पर प्रकाश डालिए।
2. आचार्य शुक्ल जी की समीक्षा के क्या सिद्धांत हैं?
3. 'हृदय के प्रभावित होने का नाम ही रसानुभूति है।' इस पंक्ति पर अपने विचार प्रस्तुत कीजिए।

उत्तर : स्व-मूल्यांकन (Answers : Self-Assessment)

1. पूरक
2. रसवाद
3. रसदशा।

25.7 सन्दर्भ पुस्तकें (Further Readings)

पुस्तकें आचार्य रामचन्द्र शुक्ल का गद्य साहित्य–अशोक सिंह, राजकमल प्रकाशन समूह।

नोट

इकाई–26: 'चिन्तामणि' के निबंधों का सार एवं प्रमुख गद्यांशों की व्याख्या

अनुक्रमणिका (Contents)

उद्देश्य (Objectives)

प्रस्तावना (Introduction)

26.1 'श्रद्धा और भक्ति' का सारांश

26.1.1 श्रद्धा की परिभाषा

26.1.2 श्रद्धा के प्रकार

26.1.3 भक्ति का स्वरूप

26.2 महत्त्वपूर्ण अवतरणों की सप्रसंग व्याख्या

26.3 निबंध 'लोभ और प्रीति' का सारांश

26.3.1 लोभ का स्वरूप

26.3.2 प्रीति का स्वरूप

26.4 महत्त्वपूर्ण स्थलों की व्याख्या

26.5 'लज्जा और ग्लानि' का सार

26.6 सारांश (Summary)

26.7 शब्दकोश (Keywords)

26.8 अभ्यास प्रश्न (Review Questions)

26.9 सन्दर्भ पुस्तकें (Further Readings)

उद्देश्य (Objectives)

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् विद्यार्थी योग्य होंगे–

- श्रद्धा और भक्ति के सार को जानने में;
- श्रद्धा के प्रकारों की व्याख्या करने में;
- लोभ, प्रीति, लज्जा एवं ग्लानि का सारांश समझने में;
- निबंधों के महत्त्वपूर्ण अवतरणों की सप्रसंग व्याख्या करने में।

प्रस्तावना (Introduction)

आचार्य रामचंद्र शुक्ल की गणना हिन्दी के उन गिने-चुने समर्थ निबंधकारों में की जाती है जिन्होंने मानवीय सूक्ष्म भावों का अत्यंत सजीव वर्णन किया है। अपने निबंधों में शुक्ल जी ने मानव मन की इन प्रवृत्तियों का बहुत बारीकी से विश्लेषण प्रस्तुत किया है।

नोट

26.1 'श्रद्धा और भक्ति' का सारांश

26.1.1 श्रद्धा की परिभाषा

किसी मनुष्य में साधारण जनों से अधिक गुण अथवा शक्ति को देखकर उसके प्रति जो एक प्रकार का आनंदपूर्ण पूज्य भाव जागृत हो जाता है, उसे श्रद्धा कहते हैं। किसी व्यक्ति के वीरता, दानशीलता, उदारता आदि गुणों से प्रभावित होकर हम उसके प्रति आनंद की भावना एवं पूजा की भावना से भर जाते हैं और उसके प्रशंसक बन जाते हैं। उसकी निन्दा को हम सहन नहीं कर सकते। इस प्रकार सर्वसामान्य से अधिक और विशेष गुण वाले किसी व्यक्ति के प्रति पूज्य और आनंद से पूर्ण भाव का नाम ही श्रद्धा है।

प्रेम और श्रद्धा का अंतर—श्रद्धा और प्रेम में अंतर है। प्रेम रूप को देखकर उत्पन्न होता है जबकि श्रद्धा के आविर्भाव का कारण किसी व्यक्ति के गुण विशेष होते हैं। प्रेम का व्यापार स्थल एकांत और सीमित है, श्रद्धा का विस्तृत। किसी व्यक्ति से प्रेम करने वाले दो-चार ही मिलेंगे परंतु उस पर श्रद्धा करने वाले असंख्य हो सकते हैं। श्रद्धेय व्यक्ति अपने सत्कर्मो से संसार में अनुकरणीय बन जाता है। अत: श्रद्धा में सामाजिकता के भावों का उदय होता है। प्रेम में प्रेमी का रूप प्रमुख आकर्षण का विषय होता है। जबकि श्रद्धा में श्रद्धेय के कर्म पर दृष्टि जाती है। प्रिय का चिंतन आँख मूँदकर किया जा सकता है जबकि श्रद्धेय का चिंतन हम आँख खोलकर संसार में उसके द्वारा किए गए कर्मों को देखकर ही करते हैं। यदि प्रेम स्वप्न है तो श्रद्धा जागरण है। प्रेम में प्रेमी प्रिय को संसार से अलग रखकर उस पर केवल अपना ही अधिकार रखना चाहता है, जबकि श्रद्धा में श्रद्धालु की भावना सदा यही रहती है कि उसके श्रद्धाभाजन पर अधिक से अधिक लोग श्रद्धा करें। प्रेम में दो पक्ष होते हैं, श्रद्धा में तीन। प्रेमी और प्रिय के बीच कोई अन्य अनिवार्य नहीं परंतु श्रद्धेय और श्रद्धालु के बीच मध्यस्थ की आवश्यकता होती है। यह मध्यस्थ श्रद्धेय के गुण हैं जिनके कारण श्रद्धा उत्पन्न होती है।

नोट्स प्रेम का कारण अनिश्चित और अज्ञात होता है पर श्रद्धा का कारण निर्दिष्ट और ज्ञात होता है। प्रेम में प्रेमी प्रिय को प्रत्येक क्षण देखना चाहता है और उसके अस्तित्व को अपने में मिला लेना चाहता है।

श्रद्धा में पहले दृष्टि श्रद्धेय के कर्म और गुणों पर जाती है जबकि प्रेम में पहले प्रिय के रूप फिर उसके कर्म दिखाई देते हैं। अत: एक में कर्म प्रधान है, दूसरे में व्यक्ति।

प्रेम रूप को स्वयं देखकर ही उत्पन्न होता है। किसी एक की प्रशंसा कानों से सुनने पर प्रेमोदय नहीं हो सकता परंतु श्रद्धा किसी के गुणों की प्रशंसा सुनकर भी उत्पन्न हो सकती है। प्रेम अपने ही अनुभव पर और श्रद्धा दूसरों के अनुभव पर आधारित होती है। श्रद्धा एक सामाजिक भाव है। श्रद्धा के बदले हम श्रद्धेय से कुछ नहीं चाहते परंतु प्रेमी प्रिय पर एकाधिकार चाहता है। अपने प्रिय से किसी और द्वारा प्रेम किया जाना हम सहन नहीं कर सकते परंतु श्रद्धा में हम जिस पर श्रद्धा रखते हैं उस पर चाहते हैं कि और भी हमारी ही भाँति श्रद्धा रखें।

श्रद्धा के मूल में दूसरे व्यक्ति के महत्त्व को स्वीकार करने की भावना होती है। अहंकारी, स्वार्थी एवं संकुचित दृष्टि के लोग किसी पर श्रद्धा नहीं कर सकते।

26.1.2 श्रद्धा के प्रकार

श्रद्धा के तीन प्रकार किए जा सकते हैं–

1. प्रतिभा संबंधिनी
2. शील संबंधिनी
3. साधन-संपत्ति संबंधिनी।

1. **प्रतिभा संबंधिनी श्रद्धा**—जो श्रद्धा श्रद्धेय की प्रतिभा से संबंधित होती है उसे प्रतिभा संबंधिनी कहते हैं। प्रतिभा से आशय अंत:करण की सृजनात्मक शक्ति से है जिससे विज्ञान एवं कला के क्षेत्र में नवीन सृजन होता है। कला में श्रद्धा रखने के लिए श्रद्धालु में भी कला को परखने की प्रतिभा होनी चाहिए। इसके अभाव में हम कला की सही प्रशंसा नहीं कर सकते। कला को परखने की प्रतिभा के अभाव में यदि हम कलाकार पर श्रद्धा न कर सकें तो भी कोई हानि नहीं इसमें कलाकार का महत्व कम नहीं हो जाता। इसमें तो हमारी ही अज्ञता है। इस अज्ञता को दूर करने के लिए हमें कला संबंधी प्रचार की व्यवस्था करनी चाहिए। जिससे कलाओं का सामान्य आदर्श जनसाधारण तक में फैल जाए।

2. **शील संबंधिनी श्रद्धा**—इस प्रकार की श्रद्धा का संबंध सदाचार से है। इस प्रकार की श्रद्धा प्रत्येक का कर्तव्य है। शील अथवा धर्म के सामान्य लक्षण संसार के प्रत्येक जन समुदाय में पाये जाते हैं। धर्म से ही तो समाज स्थित है। अत: उसके संबंध में किसी प्रकार का रुचिभेद या मतभेद नहीं होना चाहिए। सदाचारी के प्रति हमें श्रद्धा रखनी चाहिए और उसके सत्कर्मों की प्रशंसा करनी चाहिए। अन्यथा हम अपने कर्तव्य का सही पालन नहीं कर रहे, हम समाज को विकास की ओर नहीं ले जा रहे। ऐसी स्थिति में हम समाज में रहने योग्य नहीं हैं। किसी कर्म को करने से पूर्व हमें यह सोचना पड़ता है कि वह हमारे लिए अथवा समाज के लिए श्रेयस्कर है या नहीं। श्रद्धेय के कार्य की प्रशंसा करके हम यह आनंदपूर्वक स्वीकार करते हैं कि यह कार्य धर्म का है। चूँकि धर्म समाज का मूल है अत: श्रद्धा द्वारा हम यह सिद्ध कर देते हैं कि हम भी धर्माचरण कर रहे हैं। यद्यपि श्रद्धा धर्म की प्रथम सीढ़ी है। उसकी दूसरी सीढ़ी कर्म है जिसके लिए भी प्रत्येक व्यक्ति को तैयार रहना चाहिए।

3. **संपत्ति संबंधिनी श्रद्धा**—किसी के साधन संपन्नता के प्रति पूज्य भाव को साधन संपत्ति संबंधिनी श्रद्धा कहा जाता है। साधन संपन्नता का सदुपयोग अथवा दुरुपयोग भी हो सकता है। उदाहरण के लिए, अभ्यास और शिक्षा से प्राप्त उन्नत भाव वाला कवि अपनी संपन्नता का प्रयोग सत्काव्य के सृजन में करेगा और इसके विपरीत कोई अल्पज्ञ गद्य को ही काव्य में बदलना चाहेगा। संभावना इसकी भी हो सकती है कि लोग उसके भोंडे काव्य की प्रशंसा करें और उसके श्रद्धालु बन जाए परंतु ऐसी श्रद्धा साधन सम्पन्नता के प्रति ही है साध्य की पूर्णता के प्रति नहीं।

देसी कारीगरी, चित्रकारी, संगीत आदि में नियम-पालन के अभ्यास द्वारा प्राप्त साधन संपन्नता पर कुछ दिनों से अधिक ध्यान दिया जाने लगा। इमारतों में बहुत बारीक बेल-बूटे और पच्चीकारी की जाती है जो बिल्कुल पास जाकर ही देखी जा सकती है। दूर से उसकी कला नजर ही नहीं आती। ऐसी कलाकारी में श्रम और समय का कोरा अपव्यय ही होता है। चित्रकारी की भी यही दशा है। संगीत के शास्त्रीय रूप के गायन को देखकर तो हठयोग की क्रियाएँ सहज ही याद या जाती है। लोग घंटों मुँह फाड़कर आ-आ करते रहते हैं। सारांश यह है कि सभी कलाएं कृत्रिमता के कारण दुरूह, दुर्बोध और कहीं-कहीं तो हास्यास्पद बन गयी हैं।

किसी मनुष्य में बहुत अधिक शारीरिक शक्ति देखकर उसमें जनसाधारण की श्रद्धा होना स्वाभाविक ही है, वह होनी ही चाहिए। प्रो. राममूर्ति के मोटर रोकने, छाती पर 40 मन भारी पत्थर रखने तथा छाती पर हाथी खड़ा करने पर श्रद्धा होना स्वाभाविक ही है, इस शारीरिक शक्ति सम्पन्नता का वह सदुपयोग, दुरुपयोग और अनुपयोग भी कर सकते हैं। किसी संकटग्रस्त व्यक्ति की अथवा अपनी रक्षा करके सदुपयोग, निरपराध को पीड़ित करके दुरुपयोग कर सकते हैं। हमारी श्रद्धा तो कोरी साधन संपन्नता पर ही होती है। कोरे विद्वानों के प्रति भी इसी प्रकार की श्रद्धा होती है। भिन्न-भिन्न मानसिक स्तर के लोगों की किसी विषय के संबंध में श्रद्धा भिन्न-भिन्न मात्रा की होती है। किसी शक्तिशाली के अनाचारी कार्यों की भी प्रशंसा करने वाले लोग भी मिल जाएँगे। इसी प्रकार मद्यप और विलासी कवि की भी प्रशंसा होती ही है।

उपर्युक्त तीनों प्रकार की श्रद्धा में से शील संबंधिनी श्रद्धा को ही अपनाना चाहिए क्योंकि इससे मनुष्य मात्र की रक्षा होती है। इसके अभाव में कला और साधन संपन्नता की कल्पना नहीं की जा सकती।

श्रद्धा समाज के लिए नितान्त आवश्यक है क्योंकि इसके द्वारा मनुष्य के दुर्गम कार्य भी सुगम बन जाते हैं। इसीलिए कुछ चालाक लोग दूसरों की श्रद्धा को प्राप्त करने के लिए गुणी और सदाचारी होने का ढोंग करते हैं। श्रद्धा नि:स्वार्थ होती है। श्रद्धावान श्रद्धेय को प्रसन्न करने की चेष्टा करता है और बदले में कुछ नहीं चाहता।

नोट

टास्क 'श्रद्धा और भक्ति' का सारांश अपने शब्दों में लिखिए।

श्रद्धा और भक्ति में अंतर–श्रद्धा और प्रेम के योग का नाम भक्ति है। जब पूज्य भाव के साथ-साथ श्रद्धेय व्यक्ति के सामीप्य लाभ की इच्छा भी मन में जागृत होती है, तब वह भक्ति भावना कहलाती है। भक्ति में श्रद्धा के साथ-साथ प्रेम का भी उदय होता है। इसमें श्रद्धालु के हृदय में श्रद्धेय के दर्शन, श्रवण, कीर्तन, ध्यान आदि में आनन्द अनुभव के साथ-साथ उसका बैठना, चलना, फिरना, क्रोध करना आदि भी अच्छा लगने लगता है। भक्ति और श्रद्धा में निम्नलिखित अंतर है–

1. भक्ति में हम आराध्य के प्रति अपने जीवन का थोड़ा बहुत अंश समर्पित करते हैं और उसके जीवन क्रम पर भी अपना प्रभाव डालना चाहते हैं। उससे घनिष्ठ संबंध स्थापित कर लेते हैं। परंतु श्रद्धा में श्रद्धेय के प्रति पूज्य भाव और उसकी प्रशंसा ही पर्याप्त है। भले ही उससे हमारा घनिष्ठ संबंध है अथवा नहीं।
2. श्रद्धा द्वारा हम दूसरे के महत्त्व के किसी अंश के अधिकारी नहीं हो सकते पर भक्ति द्वारा हो सकते हैं। श्रद्धा में हम जीवन शक्ति द्वारा उपार्जित कोई फल अर्पित कर सकते हैं पर भक्ति में हम जीवन ही के कुछ अंश को अर्पित कर देते हैं।
3. श्रद्धालु महत्त्व को स्वीकार करता है, पर भक्त महत्त्व की ओर अग्रसर होता है। श्रद्धालु श्रद्धेय पर श्रद्धा करके निवृत्त हो जाता है परंतु भक्त अपने जीवन में काट-छाँट करता है। अत: श्रद्धा की अपेक्षा भक्ति समाज के लिए हितकारी है। यदि गोविन्द सिंह के प्रति कोरी श्रद्धा करने वाले और दंडवत करने वाले ही मिलते और अपने सारे जीवन को समर्पित करने वाले भक्त न मिलते तो वे अन्याय, दमन में इतने समर्थ न हो पाते।
4. भक्ति में ऐसे किसी सानिध्य की आवश्यकता होती है जिसके कार्यों के अनुरूप हम अपना चारित्रिक विकास करना चाहते हैं। हम अपने आराध्य को आदर्श के रूप में स्वीकार करते हैं और अपने क्रिया-कलापों की समीक्षा उसी के अनुसार करते हैं। भक्ति में दूसरे के महत्त्व को स्वीकार करने के साथ-साथ निज के दैन्य या लघुत्व का समावेश भी होता है जबकि श्रद्धा में ऐसा नहीं होता।

26.1.3 भक्ति का स्वरूप

भक्ति में गुण, श्रवण, कीर्तन, स्मरण आदि के द्वारा आराध्य का सामीप्य प्राप्त किया जाता है। इष्टदेव के कर्मक्षेत्र को लाने के समय ऐसे व्यक्ति भी सामने आ जाते हैं जिन पर हमारी भक्ति बिल्कुल नहीं परंतु वे हमारे इष्ट के स्वरूप का पूर्ण विकास दिखाने में सहायक हैं। इसीलिए यदि राम हमारे काम के हैं तो रावण भी हमारे काम का है।

पाप का फल छिपाने वाला, पाप छिपाने वाले से अधिक अपराधी है। कुछ लोग दूसरों का घर जलाकर अपने हाथ जला लेते हैं और कहते हैं कि वे होम करते हुए जले हैं। धर्म के स्थापन और अन्याय के दमन के लिए ईश्वर अवतार ग्रहण करते हैं। पाप और अनाचार-अत्याचार का आशुफल संसार के समक्ष रखना लोकरक्षा का कार्य है। अपने ऊपर किए गए अत्याचार का प्रतिकार न करना ठीक वैसा ही पाप है जैसे किसी के उपकार को न मानना पाप है।

मनुष्य अपने में अन्य पदार्थों और जीवों की अपेक्षा विश्वात्मा का अधिक अंश मानता है। हम परम भावमय की भावना अपने भावों के अनुरूप करते हैं। जिस रूप में मनुष्य जाति को उसकी आवश्यकता होती है, उसी रूप में वह उसकी आराधना करती है। अत्याचार से पीड़ित हो उसके कोप का आह्वान, विपत्ति में उसकी दया की भीख माँगना, सुख में उसका धन्यवाद करके भक्ति से पूर्ण उसके आश्रय की वांछा की जाती है।

नोट

भक्ति का स्थान मानव हृदय है। वहाँ श्रद्धा और प्रेम के संयोग से वह जन्म लेती है। शील, शक्ति, सौंदर्य और उदारता के भावों से प्रभावित होकर ही मनुष्य परमात्मा की ओर आकर्षित होता है। राम, कृष्ण आदि अवतारों में परमात्मा की कला देखकर हिन्दू की सारी शुभ और आनंदमयी वृत्तियाँ उनकी ओर दौड़ पड़ती हैं और उनका सामीप्य प्राप्त करने की चेष्टा करती हैं। रामलीला, कृष्णलीला इसी के विधान हैं।

निवृत्ति मूलक दृष्टि अपनाने वालों का हिन्दू धर्म में उतना महत्व नहीं है, जितना कि प्रवृत्ति मूलक दृष्टि को अपनाने वालों का है। हमारे यहाँ उपदेशक को अवतार नहीं माना गया प्रत्युत अपने कर्म सौंदर्य द्वारा लोकमंगल का विधान करने वाले ही अवतार कहे गए हैं। कर्म सौंदर्य के कारण उनके स्वरूप में इतना माधुर्य आ गया है कि हमारा हृदय अपने आप उनकी ओर खिंच जाता है। रागों के दमन की अपेक्षा उनका परिष्कार अधिक श्रेयस्कर है।

जनता के संपूर्ण जीवन को स्पर्श करने वाला क्षात्र धर्म है। इसलिए हमारे अवतार राम और कृष्ण क्षत्रिय हैं। क्षात्र धर्म का संबंध लोक रक्षा से है। उसमें कर्म सौंदर्य की योजना विविध और परस्पर विरोधी भावों से समन्वित होती है। क्षात्र धर्म पालन की आवश्यकता जब तक संसार में अनाचार-अत्याचार रहेगा, तब तक बनी ही रहेगी।

26.2 महत्त्वपूर्ण अवतरणों की सप्रसंग व्याख्या

1. किसी मनुष्य में जन-साधारण से विशेष गुण या शक्ति का विकास देख उसके संबंध में जो स्थायी आनंद पद्धति हृदय में स्थापित हो जाती है, उसे श्रद्धा कहते हैं। श्रद्धा महत् की आनंदपूर्ण स्वीकृति के साथ-साथ पूज्यबुद्धि का संचार है। यदि हमें निश्चय हो जाएगा कि कोई मनुष्य बड़ा वीर, बड़ा सज्जन, बड़ा गुणी, बड़ा दानी, बड़ा विद्वान, बड़ा परोपकारी व बड़ा धर्मात्मा है तो वह हमारे आनंद का एक विषय हो जाएगा। हम उसका नाम आने पर प्रशंसा करने लगेंगे, उसे सामने देख आदर से सिर नवाएँगे, किसी प्रकार का स्वार्थ न रहने पर भी हम सदा उसका भला चाहेंगे, उसकी बढ़ती से प्रसन्न होंगे और अपनी पोषित आनंद पद्धति में व्याघात पहुँचने के कारण उसकी निन्दा न सह सकेंगे। इससे सिद्ध होता है कि जिन कर्मों के प्रति श्रद्धा होती है उनका होना संसार को वांछित है।

संदर्भ—प्रस्तुत गद्यावतरण आचार्य रामचंद्र शुक्ल के सुप्रसिद्ध निबंध 'श्रद्धा और भक्ति' के प्रारंभ का है।

प्रसंग—इस अवतरण में शुक्ल जी ने श्रद्धा नामक भाव की परिभाषा प्रस्तुत की है। वे श्रद्धा की व्याख्या करते हुए कहते हैं कि—

व्याख्या—यदि किसी मनुष्य में सर्वसाधारण से कुछ अधिक गुण हमें देखने को मिलते हैं तो उन गुणों के कारण हम उसकी ओर आकर्षित होते हैं और हमारे हृदय में एक स्थायी आनंद का भाव जाग्रत हो जाता है, इसी भाव को श्रद्धा कहा जाता है। श्रद्धा में दूसरे व्यक्ति के गुणों को आनंदपूर्वक स्वीकार करने के साथ-साथ उसके प्रति पूजा या सम्मान की भावना भी होती है। उदाहरण के लिए यदि हमें मालूम हो जाए कि अमुक व्यक्ति बड़ा गुणवान है, वह बड़ा सज्जन, दानी, धर्मात्मा, दयालु, परोपकारी, विद्वान है तो उसके प्रति हमारे मन में एक प्रकार की आनंद की भावना जाग्रत होगी। उसका नाम सुनकर, उसके गुणों की चर्चा सुनकर हम आनन्दित होंगे। साथ ही उसके लिए हमारे मन में एक प्रकार का पूज्य भाव या सम्मान की भावना उभरेगी और हम उसकी प्रशंसा करेंगे, निन्दा न सुन सकेंगे। भले ही उससे हमारा कोई स्वार्थ न निकलता हो परंतु फिर भी हम उसका सदैव उपकार ही चाहेंगे। उसकी उन्नति में हमें हार्दिक सुख की प्राप्ति होगी और उसके दुख में हम अपने को दुखी अनुभव करेंगे। हमारे मन में चूँकि उसके प्रति आनंद एवं पूजा के भाव हैं इसलिए यदि कोई उसकी बुराई करता है तो हमें कदापि सहन नहीं होगी क्योंकि उससे हमारे मन की आनंद भावना को ठेस पहुँचती है।

टिप्पणी

(1) इन पंक्तियों में शुक्ल जी ने बड़े ही सहज ढंग से श्रद्धा नामक भाव की व्याख्या की है।

(2) प्रारंभिक पंक्ति में श्रद्धा की परिभाषा दी गयी है।

(3) यहाँ शुक्ल जी ने निगमन शैली का प्रयोग किया है।

(4) छोटे-छोटे वाक्य एवं समास रहित पदों के प्रयोग से भाषा का सरल रूप व्यवहृत हुआ है।

2. प्रेम और श्रद्धा में अंतर यह है कि प्रेम स्वाधीन कार्यों पर उतना निर्भर नहीं। कभी-कभी किसी का रूप मात्र, जिसमें उसका कुछ भी हाथ नहीं, उसके प्रति प्रेम उत्पन्न होने का कारण होता है, श्रद्धा ऐसी नहीं है। किसी की सुंदर आँख या नाक देखकर उसके प्रति श्रद्धा नहीं उत्पन्न होगी, प्रीति उत्पन्न हो सकती है। प्रेम के लिए इतना ही बस है कि कोई मनुष्य हमें अच्छा लगे, पर श्रद्धा के लिए आवश्यक यह है कि मनुष्य किसी बात में बढ़ा हुआ होने के कारण हमारे सम्मान का पात्र हो श्रद्धा का व्यापार स्थल विस्तृत है, प्रेम का एकान्त। प्रेम में घनत्व अधिक है और श्रद्धा में विस्तार। किसी मनुष्य से प्रेम रखने वाले एक-दो ही मिलेंगे, परन्तु उस पर श्रद्धा रखने वाले सैकड़ों, हजारों, लाखों क्या करोड़ों मिल सकते हैं।

प्रसंग–इन पंक्तियों में शुक्ल जी ने श्रद्धा को प्रेम से अधिक व्यापक, गहन और विस्तृत माना है। श्रद्धा और प्रेम के अंतर को स्पष्ट करते हुए वे कहते हैं–

व्याख्या–प्रेम और श्रद्धा में सबसे पहला अंतर तो यह है कि प्रेम में प्रिय के कार्यों पर दृष्टि नहीं जाती। बहुधा प्रेम प्रिय के सुंदर रूप को देखकर उत्पन्न हो जाया करता है जिसमें उसका (प्रिय का) कोई हाथ नहीं होता क्योंकि रूप तो ईश्वर की देन है। परंतु श्रद्धा इसके विपरीत श्रद्धेय के गुणों के कारण उत्पन्न होती है। किसी की सुंदर छवि सुंदर आँख, नाक, मुख आदि को देखकर हमारे मन में उसके प्रति प्रेम का भाव उदय हो सकता है, श्रद्धा का नहीं क्योंकि श्रद्धा गुणों पर आधारित होती है। और किसी के सुंदर रूप को उसके द्वारा सम्पन्न अच्छे कार्य में सम्मिलित कैसे किया जा सकता है? रूप को उसने स्वयं तो पैदा नहीं किया। प्रेम के लिए इतना ही होना जरूरी है कि कोई व्यक्ति हमें अच्छा लगे परंतु किसी पर हमारी श्रद्धा तब होगी जब वह अपने सत्कार्यों, सद्‌गुणों से विभूषित होगा, अन्य व्यक्तियों से श्रेष्ठ होगा। अपने सद्‌गुणों के कारण ही वह हमारे सम्मान का पात्र हो सकेगा। श्रद्धा का व्यापार क्षेत्र फैला हुआ है, प्रेम का एकांत में है। श्रद्धा सबके सामने की जाती है, प्रेम एकांत में। प्रेम में गहनता या गहराई अधिक होती है जबकि श्रद्धा में विस्तार अधिक होता है। किसी मनुष्य से प्रेम करने वाले तो सीमित ही होते हैं अधिक से अधिक एक-दो ही होते हैं परंतु उस पर श्रद्धा करने वाले असंख्य मिल सकते हैं। उदाहरण के लिए महात्मा गाँधी से प्रेम करने वाले उनके स्वजन और परिजन ही होंगे, परंतु उन पर श्रद्धा करने वाले देश-विदेश के करोड़ों लोग हैं। अतः श्रद्धा में विस्तार है और प्रेम में सीमितता।

टिप्पणी

(1) अवतरण में श्रद्धा और प्रेम के अंतर को स्पष्ट किया गया है।

(2) शुक्ल जी ने बताया है कि प्रेम जहाँ गहन और सीमित होता है वहीं श्रद्धा विस्तृत होती है।

(3) प्रेम रूप पर आधारित है, श्रद्धा गुणों पर।

(4) व्याख्यात्मक शैली का प्रयोग हुआ है।

(5) भाषा में सरलता को अपनाया गया है।

(6) अपनी बात को अधिक स्पष्ट करने के लिए शुक्ल जी ने बीच-बीच में उदाहरण भी दिए हैं। यह उनकी शैली का अपना विशिष्ट और अलग रूप है।

टास्क 'श्रद्धा' और 'प्रेम' के अन्तर को समझाइए।

नोट

3. कर्ता से बढ़कर कर्म का स्मारक दूसरा नहीं। कर्म की क्षमता प्राप्त करने के लिए बार-बार कर्ता की ही ओर आँख उठती है। कर्मों से कर्ता की स्थिति को जो मनोहरता प्राप्त हो जाती है उस पर मुग्ध होकर बहुत से प्राणी उन कर्मों की ओर प्रेरित होते हैं। कर्ता अपने सत्कर्म द्वारा एक विस्तृत क्षेत्र में मनुष्य की सद्वृत्तियों के आकर्षण का एक शक्ति केंद्र हो जाता है। जिस समाज में किसी ऐसे ज्योतिष्मान शक्ति केंद्र का उदय होता है उस समाज में भिन्न-भिन्न हृदयों से शुभ भावनाएँ मेघ-खंडों के समान उठकर तथा एक ओर और एक साथ अग्रसर होने के कारण परस्पर मिलकर, इतनी घनी हो जाती हैं कि उनकी घटा-सी उमड़ पड़ती है और मंगल की ऐसी वर्षा होती है कि सारे दुख और क्लेश बह जाते हैं।

प्रसंग—अच्छे कार्यों को करने वाला व्यक्ति उन कार्यों के प्रति समाज में आकर्षण उत्पन्न करता है और सद्गुणों के प्रसार में सबसे बड़ा सहायक वही होता है।

व्याख्या—कर्म को समाज में फैलाने या लोगों को उसकी ओर आकर्षित करने वाला कर्ता से बढ़कर और कोई नहीं हो सकता अर्थात् किसी कार्य को समाज में मान्यता देने और दूसरों को उसकी ओर लालायित करने का काम जितना उस कार्य को करने वाला कर सकता है, उतना कोई और नहीं कर सकता। कर्ता अपने शुभ कार्यों से समाज के अन्य लोगों में उनके प्रति आकर्षण उत्पन्न करता है तभी वे उससे प्रेरणा ग्रहण करके शुभ कार्यों की ओर अग्रसर होते हैं। अत: सत्कार्यों के प्रसार का सबसे बड़ा काम उन कार्यों को करने वाला कर्ता ही करता है। लोग बार-बार उसी (कर्ता) की ओर देखते हैं और उसका अनुकरण करने की चेष्टा करते हैं। अच्छे कर्मों के करने पर कर्ता को जो यश और प्रशस्ति प्राप्त होती है उसी की मनोहरता पर मुग्ध होकर लोग उन कर्मों को करने लगते हैं। इस प्रकार कर्ता अपने कर्मों के कारण आसपास के विशाल जन समूह ही प्रेरणा का केंद्र बन जाता है। सभी उसके कर्मों से प्रेरणा ग्रहण करके सत्कर्म में निरत होते हैं। जिस समाज में ऐसे शुभ कर्मों के करने वाले लोग होते हैं जो सद्गुणों की ज्योति से अपने समस्त परिवेश को प्रकाशित कर सकें। उस समाज में लोगों की शुभ भावनाएँ (सद्गुणों के प्रति तथा सत्कार्यों की ओर) एक साथ और कभी अलग-अलग ऐसे घुमड़ती हैं जैसे आकाश में घटाएँ उमड़ती हैं। घटायें उमड़कर जिस प्रकार जल की वर्षा करके पृथ्वी को हरा-भरा बना देती हैं, उसी प्रकार शुभ भावनाओं की उत्पत्ति जनमानस के लिए कल्याण की ऐसी वर्षा करती है कि उससे दुख और क्लेश रूपी समस्त ताप समाप्त हो जाते हैं और सर्वत्र आनंद ही आनंद, मंगल ही मंगल छा जाता है।

टिप्पणी

(1) शुक्ल जी सूत्रात्मक शैली के प्रयोग में सर्वाधिक कुशल निबंधकार हैं। छोटे-छोटे सूत्र वाक्यों द्वारा आगमन शैली में वे अपने विचार व्यक्त करते हैं। प्रस्तुत अवतरण के प्रारंभ में 'कर्ता से बढ़कर कर्म का स्मारक दूसरा नहीं' में इसी शैली का प्रयोग है।

(2) अवतरण की अंतिम पंक्तियों में उनकी शैली आलंकारिक हो गयी है।

(3) अवतरण के प्रारंभ में सरल और अंत में आलंकारिक भाषा का प्रयोग हुआ है।

4. हमारे अंत:करण में प्रिय के आदर्श रूप का संघटन उसके शरीर या व्यक्ति मात्र के आश्रय से हो सकता है, पर श्रद्धेय के आदर्श रूप का संघटन उसके फैलाए हुए कर्म-तन्तु के उपादन से होता है। प्रिय का चिंतन हम आँख मूँदे हुए, संसार को भुलाकर करते हैं, पर श्रद्धेय का चिंतन हम आँख खोले हुए, संसार का कुछ अंश सामने रखकर करते हैं। यदि प्रेम स्वप्न है तो श्रद्धा जागरण है। प्रेमी प्रिय को अपने लिए और अपने को प्रिय के लिए संसार से अलग करना चाहता है। प्रेम में केवल दो पक्ष होते हैं, श्रद्धा में तीन। प्रेम में कोई मध्यस्थ नहीं, पर श्रद्धा में मध्यस्थ अपेक्षित है। प्रेमी और प्रिय के बीच कोई और वस्तु अनिवार्य नहीं, पर श्रद्धालु और श्रद्धेय के बीच कोई वस्तु चाहिए।

प्रसंग—इन पंक्तियों में प्रिय और श्रद्धेय का अंतर स्पष्ट किया गया है।

व्याख्या—हमारे हृदय में प्रेम का उदय प्रिय के सौंदर्य या उसके व्यक्तित्व के सहारे से होता है, परंतु जिस व्यक्ति के प्रति श्रद्धा उत्पन्न होती है। उसमें सद्‌गुणों का होना अति आवश्यक है क्योंकि उसके द्वारा संपादित शुभ कामों की शृंखला की ओर ही हम आकर्षित होते हैं। सारांश यह है कि प्रेम प्रिय के सौंदर्य पर और श्रद्धा श्रद्धेय के कर्मों पर आधारित होती है। श्रद्धा में हमारी दृष्टि श्रद्धेय के रूप पर न जाकर उसके गुणों पर जाती है। प्रेमी प्रिय का स्मरण करते हुए संसार को भुला देता है, परंतु श्रद्धेय का चिंतन हम उसे संसार में रखकर ही कर सकते हैं। क्योंकि उसके कर्मों का प्रसार तो संसार में ही होता है। यदि हम संसार से आँखें मूँद लेंगे तो इसका तात्पर्य होगा कि हमने श्रद्धेय के कार्यों से भी आँखें मूँद लीं। ऐसी स्थिति में फिर श्रद्धा कहाँ रहेगी? अत: संसार में श्रद्धेय के गुणों को देखकर और संसार को सामने रखकर हम श्रद्धा करते हैं। प्रेम कल्पना पर आधारित है। प्रेम में प्रिय के संबंध में भाँति-भाँति की कल्पनाएँ की जाती हैं परंतु श्रद्धा में श्रद्धेय के वास्तविक गुण देखकर ही उसकी ओर आकर्षित हुआ जाता है। श्रद्धावान की दृष्टि श्रद्धेय के गुणों के प्रति सदैव जागरूक रहती है।

प्रेम और श्रद्धा में एक अन्य अंतर यह भी है कि प्रेम प्रिय को लेकर एकांत चाहता है और उसे संसार से अलग करके केवल अपने पास ही रखना चाहता है जबकि श्रद्धावाद श्रद्धेय को दूसरों के सम्मुख भी प्रकट करता है और चाहता है कि अन्य लोग भी उसी की भाँति श्रद्धा रखें। प्रेम में प्रेमी और प्रिय केवल दो पक्ष होते हैं परंतु श्रद्धा में तीन–श्रद्धावान, श्रद्धेय और उसके गुण। श्रद्धा में बिना मध्यस्थ के काम नहीं चलता। प्रेम में प्रेमी और प्रिय के बीच किसी वस्तु की अनिवार्यता नहीं होती अपितु प्रेम में कोई तीसरी वस्तु बाधक और हानिकारक ही होती है, वहाँ श्रद्धा में श्रद्धेय और श्रद्धालु के बीच कोई न कोई मध्यस्थ (श्रद्धेय के गुण) अवश्य होने चाहिएँ।

टिप्पणी

(1) प्रेम और श्रद्धा का अंतर स्पष्ट किया गया है।

(2) सूत्रात्मक शैली का प्रयोग हुआ है।

(3) भाषा में सजीवता एवं प्रवाहात्मकता के गुण विद्यमान हैं।

5. प्रेम का कारण बहुत कुछ अनिर्दिष्ट और अज्ञात होता है पर श्रद्धा का कारण निर्दिष्ट और ज्ञात होता है। कभी-कभी केवल एक साथ रहते-रहते दो प्राणियों में यह भाव उत्पन्न हो जाता है कि वे बराबर साथ रहें, उनका साथ कभी न छूटे। प्रेमी प्रिय के संपूर्ण जीवन-क्रम के सतत् साक्षात्कार का अभिलाषी होता है। वह उसका उठना-बैठना, चलना-फिरना, सोना-जागना, खाना-पीना सबकुछ देखना चाहता है। संसार में बहुत-से लोग उठते-बैठते, चलते-फिरते हैं, पर सबका उठना-बैठना, चलना-फिरना उसको वैसा अच्छा नहीं लगता। प्रेमी प्रिय के जीवन को अपने जीवन से मिलाकर एक निराला मिश्रण तैयार करना चाहता है। वह दो से एक करना चाहता है। सारांश यह है श्रद्धा में दृष्टि पहले कर्मों पर से होती हुई श्रद्धेय तक पहुँचती है और प्रीति में प्रिय पर से होती हुई उसके कर्मों आदि पर आ जाती है। एक में व्यक्ति को कर्मों द्वारा मनोहरता प्राप्त होती है, दूसरी में कर्मों को व्यक्ति द्वारा। एक में कर्म प्रधान है, दूसरी में व्यक्ति।

प्रसंग—पूर्ववत्।

व्याख्या—श्रद्धा और प्रेम के अंतर को स्पष्ट करते हुए शुक्ल जी बताते हैं कि प्रेम का कारण अज्ञात होता है। वह पहले से सोचा हुआ नहीं होता परंतु श्रद्धा जिन कारणों से उत्पन्न होती है, वे कारण सुनिश्चित और ज्ञात होते हैं क्योंकि किसी के सत्कार्यों अथवा गुणों के कारण ही हम उस पर श्रद्धा करते हैं और वे पहले से विद्यमान होते हैं। अत: श्रद्धा का कारण ज्ञात होता है और प्रेम का अज्ञात। प्रथम दर्शन प्रेम तो अचानक ही अज्ञात कारणों से उत्पन्न हुआ करता है। कभी-कभी केवल साथ रहने मात्र से प्राणियों में प्रेमोदय हो जाता है। प्रेमी की सदैव यही अभिलाषा होती है कि वह अपने प्रिय के दर्शन सतत् और निरंतर करता रहे, उसका प्रिय कभी आँखों से ओझल न हो। वह प्रिय के प्रत्येक क्रिया-कलाप–उठने, बैठने, सोने, खाने आदि को अपनी आँखों से देखता रहे। प्रेमी को जहाँ प्रिय की प्रत्येक क्रिया अच्छी लगती है और वह उन पर मुग्ध होता रहता है, वहाँ अन्य लोगों की या सबकी क्रियाएँ उसे

नोट

उतनी मनभावन नहीं लगतीं। प्रेमी प्रिय के व्यक्तित्व को अपने में समाहित कर लेना चाहता है और वह द्वैत को मिटाकर अद्वैत हो जाना चाहता है अथवा दो व्यक्तियों को मिलाकर एक कर देना चाहता है। परंतु श्रद्धा में ऐसा नहीं होता। श्रद्धावान, श्रद्धेय के गुणों का अनुकरण तो करना चाहता है परंतु उसके व्यक्तित्व को अपने में समाहित करना नहीं चाहता और न उसकी यह अभिलाषा ही होती है कि उसके श्रद्धेय पर कोई और दृष्टि न डाले या कोई अन्य उसकी प्रशंसा न करे अथवा श्रद्धेय पर उसी का एकाधिकार हो। श्रद्धालु अपने श्रद्धेय का सतत् सामीप्य भी आवश्यक नहीं मानता।

अन्त में निष्कर्ष रूप में शुक्ल जी कहते हैं कि श्रद्धा में दृष्टि श्रद्धेय के कर्मों पर से होती हुई उस तक पहुँचती है और प्रेम में प्रिय पर पहले पहुँचकर बाद में उसके कर्मों पर जाती है। श्रद्धा में व्यक्ति को उसके कर्मों द्वारा महत्व प्राप्त होता है और प्रेम में कर्मों को व्यक्ति के माध्यम से मनोहरता प्राप्त होती है। अत: श्रद्धा में कर्म (गुण) प्रधान हैं जबकि प्रेम में व्यक्ति की प्रधानता होती है। भाव यह है कि श्रद्धा किसी व्यक्ति के गुणों और शुभ कर्मों के प्रतिफलस्वरूप उत्पन्न होती है और प्रेम किसी के व्यक्तिव की चारुता पर आकर्षित होकर पैदा होता है।

टिप्पणी

(1) यहाँ प्रेम और श्रद्धा का सूक्ष्म एवं मनोवैज्ञानिक आधार पर विश्लेषण करते हुए उनके अंतर को स्पष्ट किया गया है।

(2) व्याख्यात्मक या निगमन शैली प्रयुक्त हुई है।

(3) भाषा में व्यास प्रधानता है। छोटे-छोटे और सरल वाक्यों के माध्यम से विचारों की सहज अभिव्यक्ति की गई है।

स्व-मूल्यांकन (Self-Assessment)

रिक्त स्थानों की पूर्ति करें (Fill in the blanks) :

1. प्रेम रूप को देखकर एवं श्रद्धा गुणों को देखकर .... होती है।
2. कोई भी कला कृत्रिमता के कारण दुरूह, दुर्बोध एवं .... बन जाती है।
3. पाप का फल छिपाने वाला, पाप छिपाने वाले से अधिक .... है।

6. श्रद्धा एक सामाजिक भाव है, इससे अपनी श्रद्धा के बदले में हम श्रद्धेय से अपने के लिए कोई बात नहीं चाहते। श्रद्धा धारण करते हुए हम अपने को उस समाज में समझते हैं जिसके किसी अंश पर चाहे हम व्यष्टि रूप में उनके अंतर्गत न भी हों, जान-बूझकर उसने कोई शुभ प्रभाव डाला। श्रद्धा स्वयं ऐसे कर्मों के प्रतिकार में होती है जिनका शुभ प्रभाव अकेले हम पर नहीं, बल्कि सारे मनुष्य समाज पर पड़ सकता है। श्रद्धा एक ऐसी आनंदपूर्ण कृतज्ञता है जिसे हम केवल समाज के प्रतिनिधि रूप में प्रकट करते हैं।

प्रसंग—यहाँ श्रद्धा के स्वरूप को स्पष्ट किया गया है। शुक्ल जी श्रद्धा की व्याख्या करते हुए उसकी विशेषताओं का उल्लेख करते हैं।

व्याख्या—श्रद्धा का भाव सामाजिक है। हम जिस पर श्रद्धा करते हैं उससे अपनी श्रद्धा के बदले में कुछ चाहते नहीं, हम श्रद्धेय पर श्रद्धा करके अपने को उस समाज का अंग मानने लगते हैं जिस पर हमारे श्रद्धेय ने अपने सद्गुणों से प्रभाव डाला है। अथवा जो समाज उसके शुभ कार्यों का क्षेत्र रहा है। भले ही हम उस समाज में व्यक्तिगत रूप से न रहते हों और उसके अंग भले ही न हों परंतु मानसिक स्तर पर हम यह मानते हैं कि हम उसी समाज के अंग है जिस पर हमारे श्रद्धेय ने अपने गुणों से प्रभाव डाला है। हमारी श्रद्धा श्रद्धेय के ऐसे शुभ कार्यों के प्रति होती है जो हमें ही नहीं अपितु पूरे समाज को प्रभावित कर सकते हैं। इन सद्गुणों और शुभ कर्मों के प्रति ही हम श्रद्धेय के प्रति आनंदपूर्ण कृतज्ञता की भावना श्रद्धा के माध्यम से व्यक्त करते हैं अर्थात् किसी के शुभ कामों से प्रभावित

होकर उसके प्रति आनंदपूर्ण कृतज्ञता और पूज्य भावना हम समाज के प्रतिनिधि के रूप में करते हैं। यही श्रद्धा की सामाजिकता है।

टिप्पणी

(1) शुक्ल जी ने बताया है कि श्रद्धालु अपनी श्रद्धा के बदले में कुछ नहीं चाहता। श्रद्धा निःस्वार्थ होती है।

(2) निगमन शैली।

(3) सरल और प्रवाहपूर्ण भाषा।

7. श्रद्धा का मूल तत्व है दूसरे का महत्व स्वीकारना। अतः जिनकी स्वार्थबद्ध दृष्टि अपने से आगे नहीं जा सकती अथवा अभिमान के कारण जिन्हें अपनी ही बड़ाई के अनुभव की लत लग गई है उनकी इतनी समाई नहीं कि वे श्रद्धा जैसे पवित्र भाव को धारण करें। स्वार्थियों और अभिमानियों के हृदय में श्रद्धा नहीं टिक सकती है। उनका अंतःकरण संकुचित और मलिन होता है कि वे दूसरों की कृति का यथार्थ मूल्य नहीं परख सकते।

प्रसंग–प्रस्तुत गद्यांश में शुक्ल जी ने बताया है कि श्रद्धा में दूसरे की महिमा को स्वीकार किया जाता है। जो लोग अहंकारी होते हैं वे अपने सामने किसी दूसरे को महत्त्व नहीं देते और जब दूसरे को महत्त्व प्रदान नहीं करेंगे तो श्रद्धा कैसे करेंगे? इसी को और स्पष्ट करते हुए शुक्ल जी कहते हैं कि–

व्याख्या–श्रद्धा किसी दूसरे व्यक्ति के गुणों पर होती है। किसी के द्वारा संपादित शुभ कर्मों से हम प्रभावित होकर ही श्रद्धा करते हैं। दूसरे शब्दों में हम उसके महत्त्व को स्वीकर करते हैं तभी उसकी प्रशंसा कर पाते हैं और तभी उसके प्रति हमारी पूज्य भावना जाग्रत होती है। जो लोग स्वार्थी और अभिमानी होते हैं वे अहंकार के कारण स्वयं को तो सब कुछ समझते हैं परंतु दूसरे को कोई महत्त्व प्रदान नहीं करते। वे हर समय अपनी ही प्रशंसा में लगे रहते हैं दूसरों की अच्छाई उन्हें दिखाई ही नहीं देती। अपने राई जैसे गुण भी उन्हें पर्वत दिखाई देते हैं और दूसरों के सुमेरु जैसे गुण उन्हें 'कनूका' और 'तिनूका' भी नहीं लगते। अतः वे किसी दूसरे के गुणों के प्रशंसक हो ही नहीं सकते। इसीलिए अपने सिवाय किसी पर उनकी श्रद्धा नहीं होती। इस प्रकार स्वार्थी और अभिमानियों के हृदय में श्रद्धा भाव का जागरण नहीं होता क्योंकि उनका हृदय संकुचित और दृष्टिकोण सीमित एवं आत्मकेन्द्रित होता है। परिणामस्वरूप उनकी दृष्टि दूषित हो जाती है जिसके कारण किसी के अच्छे कार्य न तो उन्हें अच्छे लगते हैं और न वे उन शुभ कार्यों का सही मूल्यांकन ही कर पाते हैं।

टिप्पणी

(1) अहंकारी में श्रद्धा नहीं होती।

(2) स्वार्थी और अभिमानियों पर व्यंग किया गया है।

(3) विश्लेषणात्मक शैली।

8. प्रतिभा से मेरा अभिप्राय अंतःकरण की उस उद्भाविका क्रिया से है जिसके द्वारा कला विज्ञान आदि नाना क्षेत्रों में नई-नई बातें या कृतियाँ उपस्थित की जाती हैं। यह ग्रहण और धारण शक्ति से भिन्न है, जिसके द्वारा इधर-उधर से प्राप्त ज्ञान (विद्वना) संचित किया जाता है। कला संबंधिनी श्रद्धा के लिए श्रद्धालु में भी थोड़ी बहुत मार्मिक निपुणता चाहिए, इसमें उसका अभाव कोई भारी त्रुटि नहीं, वह क्षम्य है। यदि किसी उत्तम काव्य या चित्र की विशेषता न समझने के कारण हम कवि या चित्रकार पर श्रद्धा न कर सके तो यह हमारा अनाड़ीपन है, हमारे रुचि संस्कार की त्रुटि है। इसका उपाय यही है कि समाज कला संबंधिनी मर्मज्ञता के प्रचार की व्यवस्था करे, जिससे विविध कलाओं के सामान्य आदर्श की स्थापना जन समूह में हो जाए। पर इतना होने पर भी कला संबंधिनी रुचि की विभिन्नता थोड़ी-बहुत अवश्य रहेगी। अश्रद्धालु रुचि का नाम लेकर ईर्ष्या या अहंकार के दोषारोपण से बच जाया करेंगे।

नोट

प्रसंग–शुक्ल जी ने श्रद्धा को तीन प्रकार की माना है–प्रतिभा संबंधिनी, शील संबंधिनी और साधन संपत्ति संबंधिनी। प्रस्तुत अवतरण में उन्होंने प्रतिभा संबंधिनी श्रद्धा की व्याख्या की है। पहले वे प्रतिभा के संबंध में बताते हैं कि–

व्याख्या–प्रतिभा अंत:करण की उस सृजनशील शक्ति को कहते हैं जिससे कला और विज्ञान के क्षेत्र में नई-नई कृतियों का सृजन होता है। प्रतिभा नवोन्मेषशालिनी शक्ति होती है जो साहित्य, कला और विज्ञान के क्षेत्र में सृजन करती है। प्रतिभा को न तो किसी दूसरे से उधार लिया जा सकता है और न प्रयत्न करके धारण किया जाता है। प्रतिभा ग्रहण और धारण करने की शक्ति से भिन्न होती है। इन शक्तियों के द्वारा तो इधर-उधर से प्राप्त ज्ञान को एकत्र किया जाता है जबकि प्रतिभा स्वयं प्रकाश्य ज्ञान है।

प्रतिभा की परिभाषा प्रस्तुत करने के उपरांत शुक्ल जी आगे कहते हैं कि कला से संबंधित श्रद्धा के लिए यह आवश्यक है कि श्रद्धालु में थोड़ी-बहुत कला की जानकारी हो। कला के संबंध में यदि उसे जानकारी न होगी तो वह कला के गुणों को कैसे समझ सकता है? और जब तक कला के गुणों से परिचय न होगा तब तक उसके प्रति श्रद्धा उत्पन्न नहीं हो सकती। कला की परख न होने पर प्राय: हम उत्तम कलाकृतियों की अवहेलना कर जाया करते हैं। ऐसे में त्रुटि कला या कलाकार की नहीं, हमारी है क्योंकि हमें उस कलाकृति की विशेषताओं का ज्ञान ही नहीं। उदाहरण के लिए यदि किसी कवि के उत्तम काव्य या कलाकार के सुंदर चित्र की विशेषताओं को समझ न सकने की स्थिति में हम उसकी प्रशंसा न करें या उस पर श्रद्धा न करें तो यहाँ दोष उस कवि या चित्रकार का नहीं है, अपितु हमारी अज्ञता है। हमारी गुणग्राहकता की कमी या कविता अथवा कला को परखने की शक्ति का अभाव है।

सच्ची कला या साहित्य की प्रशंसा तभी हो सकती है जब उसे परखने वाले समाज में विद्यमान हों। इसके लिए समाज में कलाओं के समझने के लिए उनके प्रचार की व्यवस्था की जानी चाहिए ताकि समाज में कलाओं का एक सामान्य आदर्श स्थापित हो जाए और लोग उस आदर्श के अनुसार कला को समझ सकेंगे। परंतु यहाँ भी एक कठिनाई उपस्थित होगी। वह यह है कि संसार के सभी लोगों की रुचि प्राय: एक-सी नहीं होती, फिर समाज के विभिन्न लोग कला के एक ही मानदंड को कैसे स्वीकार कर सकेंगे? इसका उत्तर देते हुए शुक्ल जी कहते हैं कि थोड़ी बहुत तो रुचि विभिन्नता रहेगी ही। इससे बहुमत तो कला संबंधी ज्ञान से परिचित हो ही जाएगा और उसके आदर्श तो समान रहेंगे ही और जो अश्रद्धालु हैं वे अपनी रुचि का नाम लेकर कि अमुक कलाकृति हमारी रुचि के अनुकूल नहीं है, बच जाया करेंगे यद्यपि हमें भी (कला की प्रशंसा न करने में) मुख्य कारण उनकी ईर्ष्या और अहंकार भावना ही अधिक होगी तथापि वे रुचि के बहाने दोषारोपण से बच सकेंगे।

टिप्पणी

(1) अवतरण के प्रारंभ में शुक्ल जी ने प्रतिभा की परिभाषा प्रस्तुत की है।

(2) कला को न समझ सकने की स्थिति में कलाकार का दोष नहीं होता अपितु यह पारखी या दृष्टा का दोष है।

(3) व्याख्यात्मक शैली का प्रयोग है।

(4) प्रवाहयुक्त सरल भाषा प्रयुक्त हुई है।

9. पर शील संबंधिनी श्रद्धा प्रत्येक व्यक्ति का कर्त्तव्य है। शील या धर्म के सामान्य लक्षण संसार के प्रत्येक सभ्य जन-समुदाय में प्रतिष्ठित हैं। धर्म ही से मनुष्य समाज की स्थिति है, अत: उसके संबंध में किसी प्रकार का रुचि-भेद, मत-भेद आदि नहीं। सदाचारी के प्रति यदि हम श्रद्धा नहीं रखते तो समाज के प्रति अपने कर्तव्य का पालन नहीं करते। यदि किसी को दूसरों के कल्याण के लिए भारी स्वार्थ त्याग करते देख हमारे मुँह से 'धन्य-धन्य' भी न निकला तो हम समाज के किसी काम के न ठहरे, समाज को हमसे कोई आशा नहीं, हम समाज में रहने योग्य नहीं।

प्रसंग–तीन प्रकार की प्रतिभा संबंधिनी, शील संबंधिनी और साधन-संपत्ति संबंधिनी श्रद्धा में से यहाँ शील संबंधिनी श्रद्धा को स्पष्ट करते हुए शुक्ल जी कहते हैं–

व्याख्या–प्रतिभा संबंधिनी श्रद्धा भले ही किसी में हो अथवा न हो परंतु शील संबंधिनी श्रद्धा सभी में होनी चाहिए। शील और सदाचार पर आधारित धर्म के लक्षण संसार के प्रत्येक सभ्य समाज में पाए जाते हैं और धर्म समाज को बनाए रखने में अत्यंत आवश्यक है। इसलिए धर्म के सिद्धांत और नियमों में प्रत्येक व्यक्ति की आस्था होनी ही चाहिए। इसमें रुचि-भेद का बहाना नहीं चलेगा। शील से संबंधित श्रद्धा में कोई भी समाज का व्यक्ति ये बहाना नहीं बना सकता कि मेरा अमुक धर्म में विश्वास नहीं है। अत: मैं उसके नियम, शील, सदाचार में विश्वास नहीं करता। इस संबंध में किसी भी मतभेद की गुंजाइश नहीं है। जो व्यक्ति शील और सदाचार से संपन्न है, उसका सम्मान हमें करना ही चाहिए। यदि हम ऐसा नहीं करते तो समाज के प्रति अपने कर्त्तव्य का पालन नहीं करते। दूसरे शब्दों में हम धर्म की भी अवहेलना कर रहे हैं। किसी परोपकारी या जन सेवक के नि:स्वार्थ जनसेवा के कार्यों को देखकर यदि हम उसकी प्रशंसा नहीं करते तो हममें सामाजिकता नहीं है क्योंकि समाज के द्वारा प्रशंसा या उत्साहवर्द्धन न मिल पाने की स्थिति में उसे जन सेवक परोपकारी का उत्साह सत्कार्यों के प्रति धीरे-धीरे मंदा हो जाएगा और एक स्थिति यह भी आ सकती है जब वह ऐसे कार्यों से नितांत उदासीन हो जाए। इस प्रकार सदाचार की प्रशंसा न करके हम समाज और धर्म का अहित करते हैं। ऐसी स्थिति में हम समाज के किसी काम के नहीं क्योंकि समाज का कोई हित नहीं कर रहे। अत: समाज में रहने योग्य भी नहीं हैं।

टिप्पणी

(1) शुक्ल जी ने शील संबंधिनी श्रद्धा पर जोर दिया है।

(2) शील और सदाचार को धर्म का अंग और धर्म को समाज का अनिवार्य अंग माना है।

(3) शुक्ल जी मर्यादावाद एवं आदर्श से अनुप्राणित लोक मंगल की भावना से प्रभावित थे। उनकी इस विचारधारा का पल्लवन प्रस्तुत अवतरण में हुआ है।

(4) विश्लेषण प्रधान व्याख्यात्मक शैली का प्रयोग विचारों को पूर्णत: स्पष्ट करने में सफल है।

(5) समासीन सरल भाषा का प्रयोग है।

टास्क कलाओं की बारीकी, कृत्रिमता एवं शास्त्रीय संगीत की आलोचना शुक्ल जी ने किस प्रकार की है?

10. संगीत के पेंच-पाँच देखकर भा हठयोग याद आता है। जिस समय कोई कलावन्त पक्का गाना गाने के लिए आठ अंगुल मुँह फैलाता है और 'आ-आ' करके विकल होता है, उस समय बड़े-बड़े धीरों का धैर्य छूट जाता है–दिन-दिन भर चुपचाप बैठे रहने वाले बड़े-बड़े आलसियों का आसन डिग जाता है। जो संगीत नाद की मधुर गति द्वारा मन में माधुर्य का संचार करने के लिए था वह इन पक्के लोगों के हाथ में पड़कर केवल स्वरग्राम की लंबी-चौड़ी कवायद हो गया। श्रद्धालुओं के अन्त:करण की मार्मिकता इतनी स्तब्ध हो गई कि एक खर-श्वान के गले से भी इस लंबी कवायद को ठीक उतरते देख उनके मुँह से 'वाह-वाह', 'ओ-हो-हो' निकलने लगा। काव्य पर शब्दालंकार आदि का इतना बोझ लादा गया कि उसका सारा रूप ही छिप गया।

प्रसंग–कलाओं की बारीकी, कृत्रिमता और संगीत कला के शास्त्रीय संगीत की आलोचना करते हुए वे कह रहे हैं कि–

व्याख्या–शास्त्रीय संगीत में एक ही पंक्ति के घंटों आलाप को देखकर ऐसा लगता है कि वह संगीतकार हठयोग की क्रियाएँ कर रहा है। जब वह शास्त्रीय संगीत को गाने के लिए स्वरों के विविध आरोह-अवरोह भरे आलाप लेता है और कभी-कभी तो मुँह को आठ-आठ अंगुल फाड़ कर घंटों केवल 'आ-आ' करता रहता है तो बड़ी बोरियत

नोट

होती है। ऐसी स्थिति में केवल 'आ-आ' के अतिरिक्त श्रोता को और कुछ पल्ले नहीं पड़ता और बड़े-बड़े धैर्यशालियों का भी धैर्य समाप्त हो जाता है। वे भी उकताकर घर चलने को उतारू हो जाते हैं। दिनभर आलसी बने पड़े रहने वाले अजगर टाइप व्यक्ति भी इस प्रकार की आ-आ से ऊब जाते हैं।

संगीत नाद के द्वारा मन प्राणों में माधुर्य भरता है, वह हृदय को विभोर करके तन्मय बना देता है। तब रसमग्न श्रोता तन्मय होकर झूम उठता है परंतु शास्त्रीय संगीतज्ञों ने संगीत के माधुर्य को विकृत कर दिया है। वे स्वरों की व्यर्थ खींचतान करके श्रोताओं को बोर करने के सिवाय और कुछ नहीं करते। इस पर भी मजे की बात यह है कि कुछ अंधे श्रद्धालुओं की संगीत के प्रति इतनी कम जानकारी हो गयी है कि वे ऐसे निरर्थक संगीत की प्रशंसा में भी वाह-वाह कर उठते हैं। गधे और कुत्ते के गले से निकलने वाले भोंडे और लंबे स्वरों से भी अधिक लंबे आलाप भरे इन स्वरों को सुनकर वे 'वाह-वाह' या 'ओ-हो-हो' आदि प्रशंसात्मक उक्तियाँ चिल्लाने लगते हैं।

टिप्पणी

(1) शास्त्रीय संगीत की व्यर्थ लंबी खींचतान की आलोचना की गई है।

(2) व्यंग्यात्मक शैली का प्रयोग है।

(3) प्रवाहयुक्त सरल भाषा है।

11. कला कुशल या सदाचारी अपने चारों ओर प्रसन्नता देखना चाहता है। अतः अपनी श्रद्धा द्वारा हम उसे अपनी प्रसन्नता का निश्चय मात्र कराते हैं। हमारी प्रसन्नता से उसे अपनी सामर्थ्य का बोध हो जाता है और उसका उत्साह बढ़ता है। इस प्रकार अपनी श्रद्धा द्वारा हम भी समाज का मंगल साधन करते हैं। दूसरे की श्रद्धा का श्रद्धेय पर इतना ही प्रभाव पड़ना चाहिए, इससे अधिक नहीं। यदि हमारी श्रद्धा के कारण वह हमें किसी प्रकार का लाभ पहुँचाना चाहता है तो वह हमारी श्रद्धा को खुशामद समझता है और हमारा अपमान करता है।

प्रसंग–श्रद्धेय के शुभ कार्यों की जब हम प्रशंसा करते हैं तो उसका उत्साहवर्द्धन होता है और इस उत्साह को बढ़ाकर हम भी समाज के मंगल-विधान में अपना योगदान करते हैं। इसी भाव को अभिव्यक्त करते हुए शुक्ल जी कहते हैं कि–

व्याख्या–सच्चा कलाकार और सदाचारी व्यक्ति सदैव यह चाहता है कि उसके आसपास और समस्त समाज में प्रसन्नता व्याप्त हो। इस प्रसन्नता का विधान वह अपनी कला या कार्यों द्वारा करता भी है। परंतु इस प्रकार प्रसन्नता प्रदान करने वाली अपनी कला का प्रभाव उसे तभी ज्ञात हो सकेगा जब हम सामाजिक अर्थात् उसी कला के पारखी उसकी प्रशंसा करेंगे। हम उसमें अपनी श्रद्धा व्यक्त करके यह निश्चय कराते हैं कि उसकी कला का प्रभाव हम पर पड़ा है। इस प्रकार हमारी श्रद्धा और प्रसन्नता से उसे अपनी सामर्थ्य का भान होता है और वह फिर उन्हीं कार्यों में दूने उत्साह से लग जाता है। अतः किसी पर श्रद्धा करके हम भी समाज का मंगल करने में सहायक होते हैं क्योंकि हमारी श्रद्धा से श्रद्धेय का उत्साह बढ़ता है और वह समाज के लिए शुभ कार्यों में और भी अधिक प्रयत्नशील हो जाता है। हमारी श्रद्धा का श्रद्धालु पर इतना ही प्रभाव पड़ना चाहिए कि वह उससे प्रसन्न होकर अपने सत्कार्यों में क्रियाशील होता रहे, इससे अधिक नहीं। यदि वह हमारी श्रद्धा से प्रभावित होकर हमें किसी प्रकार लाभ पहुँचाना चाहता है तो वह श्रद्धा को खरीद रहा है या उसे खुशामद समझ रहा है। श्रद्धा में याचकता बिल्कुल नहीं होती। अपनी चाटुकारिता समझ कर वह हमारा अपमान करता है। श्रद्धा में याचकता बिल्कुल नहीं होती है। किसी पर श्रद्धा करने का यह तात्पर्य नहीं है कि हम उससे कुछ याचना करेंगे। जब श्रद्धा में स्वार्थ का लेशमात्र तक नहीं होता तो फिर याचना का प्रश्न ही उत्पन्न नहीं होता। किसी पर श्रद्धा करके हम उसके कार्यों को स्वीकार करते हैं, साथ ही यह भी संकेत करते हैं कि उन कार्यों में हमारी भी रुचि है। हमारा भी अन्तःकरण सात्विक आचरण या कला से प्रसन्न होने में सक्षम है और हममें भी कला की परख है।

टिप्पणी

(1) शुक्ल जी के लोकमंगलकारी विचारों की अभिव्यक्ति है।

(2) श्रद्धा का तात्पर्य याचना नहीं और न चाटुकारिता ही है।

(3) व्याख्यात्मक शैली।

(4) भाषा में प्रवाहात्मकता का गुण।

12. श्रद्धा और प्रेम के योग का नाम भक्ति है। जब पूज्यभाव की वृद्धि के साथ श्रद्धाभाजन के सामीप्य लाभ की प्रवृत्ति हो, उसकी सत्ता के कई रूपों के साक्षात्कार की वासना हो, तब हृदय में भक्ति का प्रादुर्भाव समझना चाहिए। जब श्रद्धेय के दर्शन, श्रवण, कीर्तन, धान आदि से आनंद का अनुभव होने लगे जब उससे संबंध रखने वाले श्रद्धा के विषयों के अतिरिक्त बातों की ओर भी मन आकर्षित होने लगे, तब भक्ति रस का संचार समझना चाहिए।

प्रसंग–श्रद्धा के स्वरूप और उसकी व्याख्या प्रस्तुत करने के उपरान्त शुक्ल जी श्रद्धा और भक्ति का अंतर स्पष्ट करते हैं। प्रस्तुत प्रघटुक के प्रारंभ में ही उन्होंने भक्ति की परिभाषा प्रस्तुत की है।

व्याख्या–श्रद्धा की भावना के साथ जब प्रेम का भाव भी जुड़ जाता है तो इन दोनों के मिले-जुले रूप को भक्ति कहते हैं। इसे यों कहा जा सकता है–श्रद्धा + प्रेम = भक्ति। जब किसी व्यक्ति के प्रति हम में सम्मान और पूजा की भावना के साथ-साथ उसका सानिध्य प्राप्त करने की वासना भी जाग्रत हो जाए अर्थात् उसे हम अपने पास देखना चाहें तब समझना चाहिए कि अंत:करण में भक्ति की भावना जन्म ले रही है। जब श्रद्धेय के कई रूपों को देखने की इच्छा मन में जगे और उसके गुणों की प्रशंसा करने के अतिरिक्त दर्शन, कीर्तन या ध्यान में मन आनंद का अनुभव करने लगे तो भक्ति का भाव उत्पन्न होता है। सारांश यह है कि जो श्रद्धा के विषय (गुण या शुभ कर्म) हैं, उनके अतिरिक्त और भी बातों में मन जब रमने लगता है तब भक्ति का संचार होता है। श्रद्धा में श्रद्धेय का सामीप्य आवश्यक नहीं है परंतु भक्ति में सामीप्य-लाभ की कामना होती है।

टिप्पणी

(1) शुक्ल जी ने बड़े ही सूक्ष्म एवं मनोवैज्ञानिक आधार पर भक्ति की परिभाषा प्रस्तुत की है।

(2) 'श्रद्धा और प्रेम के योग का नाम भक्ति है' में सूत्रात्मक शैली का प्रयोग है। शेष में व्याख्यात्मक शैली प्रयुक्त हुई है। बाद की पंक्तियों में शुक्ल जी ने प्रारंभ में दिए इसी सूत्र की व्याख्या की है।

टास्क 'कोरे सिद्धांत जिनका पालन ना किया जा सकता हो, समाज के लिए हितकारी नहीं होते।' इस संदर्भ में अपने मत प्रकट कीजिए।

13. श्रद्धालु महत्त्व को स्वीकार करता है, पर भक्त महत्त्व की ओर अग्रसर होता है। श्रद्धालु अपने जीवनक्रम को ज्यों-का-त्यों छोड़ता है पर भक्त उसकी काट-छाँट में लग जाता है। अपने आचरण द्वारा दूसरों की भक्ति के अधिकारी होकर ही संसार के बड़े-बड़े महात्मा समाज के कल्याण साधन में समर्थ हुए हैं। गुरु गोविन्दसिंह को यदि केवल दंडवत् करने वाले और गद्दी पर भेंट चढ़ाने वाले श्रद्धालु ही मिलते, दिन-रात साथ रहने वाले, अपने सारे जीवन को अर्पित करने वाले, भक्त न मिलते तो वे अन्याय दमन में कभी समर्थ न होते।

प्रसंग–श्रद्धा एवं भक्ति के अंतर को स्पष्ट किया गया है–

नोट

व्याख्या—श्रद्धा और भक्ति में एक अंतर यह है कि श्रद्धालु अपने श्रद्धेय के महत्त्व को स्वीकार करता है, वह उसके गुण एवं कर्मों की प्रशंसा करता है परंतु भक्त अपने इष्ट के गुणों को अपनाता है—तदनुकूल आचरण करने का प्रयत्न करता है। पहला केवल महत्त्व स्वीकार करता है, दूसरा महत्व को स्वीकार करके एक कदम और आगे जाकर आचरण करने में लग जाता है। इस प्रकार श्रद्धालु गुणों से प्रभावित होते हुए भी अपने जीवन क्रम को ज्यों-का-त्यों छोड़ देता है (क्योंकि श्रद्धा में यह आवश्यक नहीं है कि श्रद्धेय के अनुकूल ही आचरण किया जाए) वहाँ भक्त अपने जीवनक्रम में परिष्कार करना प्रारंभ करता है। अपने शुद्धाचरण से ही भक्ति मिलती है। संसार के महापुरुष या महात्मा अपने सदाचार और शुद्ध आचरण के द्वारा ही दूसरों की भक्ति को प्राप्त करने में सफल हुए हैं और तब उन्होंने समाज का कल्याण किया है।

गुरु गोविन्द सिंह का उदाहरण देते हुए शुक्ल जी कहते हैं कि यदि उनके साथ गुण-ग्राहक एवं प्रशंसक श्रद्धालु जन ही होते जो श्रद्धावनत होकर उन्हें प्रणाम ही करते रहते या भेंट-पूजा ही चढ़ाते रहते तो वे मुगल शासकों को अनाचार-अत्याचार को दबाने में समर्थ न हो पाते। गुरु गोविन्द सिंह जी अन्याय-दमन में इसलिए सफल हुए कि उनके साथ प्राणों की आहुति देने वाले, सदा साथ रहने वाले एवं अपना सर्वस्व समर्पण करने वाले भक्त थे, कोरी प्रशंसा करने वाले श्रद्धालु नहीं।

टिप्पणी

(1) श्रद्धा और भक्ति का अंतर स्पष्ट किया गया है।

(2) शैली विश्लेषणात्मक है।

14. भक्ति में किसी ऐसे सानिध्य की प्रवृत्ति होती है जिसके द्वारा हमारे महत्त्व के अनुकूल गति के प्रसार और प्रतिकूल गति का संकोच होता है। इस प्रकार का सामीप्य लाभ करके हम अपने ऊपर पहरा बैठा देते हैं, अपने को ऐसे स्वच्छ आदर्श के सामने कर देते हैं जिसमें हमारे कर्मों का प्रतिबिम्ब ठीक-ठीक दिखाई पड़ता है। जिसे अपनी वास्तविक क्षुद्रता का परिज्ञान अरुचिकर होगा वह सापेक्षिकता के भय से ऐसे महत्वादर्श का सामीप्य कभी न चाहेगा, दूर-दूर भागा फिरेगा। 'हमी-हम' वाले 'तुम भी' नहीं सह सकते, 'तुम्हीं-तुम' की क्या बात है? ऐसे लोग तो स्वयं अपने के लिए भक्त ढूँढने निकलते हैं।

प्रसंग—प्रस्तुत गद्यावतरण में शुक्ल जी ने बताया है कि भक्ति में हम अपना सर्वस्व इष्ट के चरणों में समर्पित कर देते हैं और उसे प्राप्त करने के लिए अनुकूल का संकल्प एवं प्रतिकूल का त्याग करते हैं।

व्याख्या—भक्ति में हम इष्ट की निकटता प्राप्त करना चाहते हैं और उसके लिए हम महत्त्वपूर्ण या अच्छे कार्य करने में तत्पर होते हैं। भाव यह है कि हमारे कर्मों की गति महत्त्वशाली कार्यों की ओर हो जाती है और प्रतिकूल अर्थात् इससे उलटे कार्यों से हम विमुख हो जाते हैं। अर्थात् हम अनुकूल के प्रति संकल्प और प्रतिकूल का विरोध करते हैं। इस प्रकार अपने इष्ट की समीपता प्राप्त करके हम स्वत: अपने ऊपर एक चौकीदार नियुक्त कर लेते हैं जो प्रतिक्षण हमारे अच्छे-बुरे कार्यों को देखता रहता है और हम भी इस तथ्य से परिचित रहते हैं कि कोई हम पर बराबर निगाह रखे हुए है। फलत: हम कर्त्तव्य-अकर्त्तव्य के प्रति सतत् सचेत रहते हैं। हम अपने इष्ट को ऐसा आदर्श मानते हैं जिसके सामने हमारे अच्छे-बुरे कार्यों का प्रतिबिम्ब पड़ता है। जो वस्तुत: अभिमान के कारण किसी के सम्मुख लघुता का व्यवहार नहीं कर सकता या अपने को छोटा नहीं मान सकता। वह किसी के महत्त्व को न तो स्वीकार करेगा और न उस महत्त्वशाली का सामीप्य लाभ करना चाहेगा क्योंकि ऐसी स्थिति में उसे किसी दूसरे का लिहाज करना होगा या उसके ऊपर निर्भर रहना पड़ेगा। ऐसी स्थिति में वह महत्त्वादर्श के सामीप्य से दूर ही दूर भागेगा। जो अभिमानी हैं वे 'हमी-हम' के आगे किसी दूसरे का अस्तित्व स्वीकार तक नहीं कर सकते, किसी का वर्चस्व स्वीकार करना तो बहुत बड़ी बात है। अत: वे किसी के भक्त नहीं बन सकते। वे तो उल्टे दूसरों को भक्त बना लेते हैं। विशेषता की बात यह है कि ऐसे लोगों को भक्त मिल भी जाते हैं।

टिप्पणी

(1) भक्ति के लिए आवश्यक गुण–अनुकूल के संकल्प और प्रतिकूल के विरोध का उल्लेख किया गया है।

(2) विश्लेषणात्मक शैली का प्रयोग है।

(3) संस्कृतनिष्ठ साहित्यिक खड़ी बोली भाषा का प्रयोग है।

15. व्यक्ति संबंधित सिद्धांत मार्ग निश्चयात्मिकता बुद्धि को चाहे व्यक्त हो, पर प्रवर्तक मन को अव्यक्त रहते हैं। वे मनोरंजनकारी तभी लगते हैं, जब किसी व्यक्ति के जीवनक्रम के रूप में देखे जाते हैं। शील की विभूतियाँ अनन्त रूपों में दिखाई पड़ती हैं। मनुष्य जाति ने जब से होश सँभाला, तब से वह इन अनन्त रूपों को महात्माओं के आचरणों तथा आख्यानों और चरित्र संबंधी पुस्तकों में देखती चली आ रही है। जब इन रूपों पर मनुष्य मोहित होता है, तब सात्विक शील की ओर आप से आप आकर्षित होता है। शून्य सिद्धांत वाक्यों में कोई आकर्षण शक्ति या प्रवृत्तिकारिणी क्षमता नहीं होती।

प्रसंग–कोरे सिद्धांत जिनका पालन न किया जा सकता हो, समाज के लिए हितकर नहीं होते। ऐसे व्यक्ति जो सिद्धांतों की रट तो लगाते हैं परंतु व्यावहारिक रूप में उन्हें अपनाते नहीं, समाज के लिए नितान्त अनुपयोगी हैं। इनकी बात तक नहीं सुननी चाहिए। इसी संदर्भ में शुक्ल जी कहते हैं–

व्याख्या–जिन सिद्धांतों का पालन मनुष्य जाति द्वारा नहीं किया जा सकता, वे बुद्धि को भले ही अच्छे लगें, मन को प्रभावित नहीं करते। कोरा सिद्धांतवाद मन को आकर्षित नहीं करता। वे सिद्धांत मनोरंजनकारी तभी लगते हैं जब कोई मनुष्य उन्हें प्रयोगात्मक रूप में अपनाता है। जीवन में व्यवहार रूप में अपनाये जाने पर ही सिद्धांत या आदर्श दूसरों को आकर्षित कर पाते हैं। शील और सदाचार के अनेक रूप दिखाई देते हैं। मानव सभ्यता के प्रारंभिक काल से सदाचार के उदाहरण अनेक महापुरुषों के जीवन चरित्रों, आचरणों में अनेक पुस्तकों में और अनेक उपाख्यानों में देखने सुनने को मिलते रहे हैं। जब मनुष्य इन सदाचारी रूपों पर मोहित श्रद्धा करने लगता है तब शील की सात्विकता पर भी स्वत: मोहित हो जाता है और उसे अपने जीवन में अपने आप अपनाने लगता है। इस प्रकार समाज में शील और सदाचार के प्रसार के लिए यह आवश्यक है कि सिद्धांतों को व्यावहारिक रूप में अपनाया जाए। कोरे सिद्धांत वाक्यों के रटने या दुहराने से कोई भी उनकी तरफ आकर्षित नहीं होता और न कोई उनमें प्रवृत्त होता है।

टिप्पणी

(1) शुक्ल जी के अनुसार सिद्धांतों को जब तक व्यावहारिक रूप प्रदान नहीं किया जाएगा तब तक वे दूसरों को आकर्षित नहीं कर सकते।

(2) कोरे सिद्धांत वाक्यों से समाज का हित नहीं होता।

(3) समासयुक्त, संस्कृतनिष्ठ भाषा का प्रयोग।

(4) व्याख्यात्मक शैली।

16. अनुभवात्मक मन को आकर्षित करने वाले आश्रय और परिणाम हैं, गुण नहीं। ये ही अनुभूति के विषय हैं। अनुभूति पर प्रवृत्ति और निवृत्ति निर्भर हैं। अनुभूति मन ही की पहली क्रिया है, संकल्प-विकल्प दूसरी। अत: सिद्धांत पथों के संबंध में जो आनंदानुभव करने की बातें है, जो अच्छी लगने की बातें हैं, वे पथिकों में तथा उनके चारों ओर पाई जाएँगी। सत्पथ के दीपक उन्हीं के हाथों में हैं या वे ही सत्पथ के दीपक हैं। सत्वोन्मुख प्राणियों के लिए ऐसे पथिकों के सामीप्य लाभ की कामना करना स्वाभाविक ही है।

प्रसंग–गुणों का प्रभाव उनको अपनाने वाले के क्रिया-कलापों से पड़ता है। गुण कोई शरीरधारिणी वस्तु नहीं जो दिखाई देती हो। गुणों का परिणाम और उसको अपनाने वाला आश्रय दिखाई देता है और इन्हीं से हम प्रेरणा ग्रहण करते हैं।

नोट

व्याख्या–जो अनुभव करता है वह मन है और इस मन को गुण नाम की चीज प्रभावित नहीं करती अपितु उन गुणों को अपनाने वाला आश्रय और गुणों के परिणाम ही प्रभावित करते हैं। गुणों के आश्रय और उनके परिणाम ही अनुभव किए जा सकते हैं या देखे जा सकते हैं। अनुभूति पर ही गुणों में प्रवृत्त होता या उनसे अलग होना निर्भर करता है अर्थात् गुणों का सुपरिणाम यदि हमें अनुभव होगा तो हम उनकी ओर आकर्षित होंगे और उन्हें अपनायेंगे। यदि गुणों का अनुभव न हो सकेगा तो हम उनकी ओर प्रवृत्त भी न हो पायेंगे। अत: अनुभव करना या अनुभूति मन का पहला कार्य है। संकल्प-विकल्प तो बाद में उठते हैं। इस प्रकार सिद्धांत के मार्ग के संबंध में जो आनंद अनुभव की बातें हैं। या उन्हें अपनाने की बातें हैं, वे उस मार्ग पर चलने वाले पथिकों के चारों ओर ही पायी जाएँगी अर्थात् जो लोग सिद्धांत के पथ पर स्वयं चलते हैं उनके द्वारा सिद्धांत का कथन अधिक प्रभावशाली और अनुकरणीय होगा। इस प्रकार के सत्पथ पर चलने वाले व्यक्ति अपने चारों ओर के परिवेश को अधिक प्रभावित कर सकेंगे। वे वास्तव में सच्चे पथ के दीपक हैं और दूसरों को सत्पथ दिखाने का दीपक भी उन्हीं के हाथों में है। जो लोग सत्य और सदाचार के मार्ग पर चलना चाहते हैं उन्हें ऐसे सन्मार्गगामी महापुरुषों के सामीप्य को प्राप्त करने की कामना होती ही है और ऐसा होना अत्यंत स्वाभाविक भी है।

टिप्पणी

(1) यहाँ शुक्ल जी ने स्पष्ट किया कि दूसरों के मन को आकर्षित करने का काम गुण नहीं गुणों के आश्रय और उनके परिणाम करते हैं।

(2) सन्मार्ग पर चलने वाले महापुरुषों का ही सामीप्य प्राप्त करने की दूसरे लोग कामना करते हैं।

(3) विवेचनात्मक शैली।

(4) संस्कृतनिष्ठ भाषा।

स्व-मूल्यांकन (Self-Assessment)

बहुविकल्पीय प्रश्न (Multiple Choice Questions) :

4. श्रद्धा को कितने भागों में विभाजित किया जा सकता है?

   (क) 4 (ख) 3

   (ग) 5 (घ) इनमें से कोई नहीं।

5. महात्मा गाँधी पर श्रद्धा रखने वाले देश-विदेश के कितने लोग हैं?

   (क) लाखों (ख) हजारों

   (ग) करोड़ों (घ) इनमें से कोई नहीं।

6. संगीत मनुष्य के कौन-से अंग को विभोर करके तन्मय बना देता है?

   (क) दिल (ख) जिगर

   (ग) दिमाग (घ) इनमें से कोई नहीं।

17. भक्ति का स्थान जहाँ मानव हृदय है वहीं श्रद्धा और प्रेम के संयोग से उसका प्रादुर्भाव होता है। अत: मनुष्य की श्रद्धा के जो विषय ऊपर कहे जा चुके हैं उन्हीं को परमात्मा में अत्यंत विशद् रूप में देखकर ही उसका मन खिंचता है और वह उस विशद् रूप विशिष्ट का सामीप्य चाहता है, उसके हृदय में जो सौंदर्य का भाव है, जो शील का भाव है, जो उदारता का भाव है, जो शक्ति का भाव है उसे वह अत्यंत पूर्ण रूप में परमात्मा में देखता है और ऐसे पूर्ण पुरुष की भावना से उसका हृदय गदगद हो जाता है, और उसका धर्मपथ आनन्द से जगमगा उठता है।

नोट

प्रसंग–अनाचार-अत्याचार की दुर्दम कालिमा को मिटाने के लिए और धर्म की स्थापना के लिए मानव परमात्मा के विशद गुणों को देखकर ही उसकी भक्ति में अनुरक्त होता है। शुक्ल जी ने इसी तथ्य को यहाँ स्पष्ट किया है–

व्याख्या–मनुष्य के हृदय में श्रद्धा और प्रेम के योग से भक्ति उत्पन्न होती है। मनुष्य परमात्मा में श्रद्धा इसलिए करता है कि उसमें शील, शक्ति, सौंदर्य अथवा प्रतिभाशील और साधन संपत्ति संबंधी गुण प्रचुर मात्रा में पाए जाते हैं और उन गुणों की विशदता संसार में अन्यत्र कहीं देखने में नहीं आती। इसीलिए मनुष्य उन विशद गुणों को धारण करने वाले तथा विशिष्ट रूप वाले परमात्मा का सान्निध्य प्राप्त करना चाहता है। तब भक्ति से ओतप्रोत होकर उसका मन अपने शील, शक्ति, सौंदर्य और उदारता के भाव को परमात्मा में देखता है और पाकर उसकी ओर आकर्षित होता है। ऐसी स्थिति में उसका मन आनंद की भावनाओं से गदगद हो जाता है एवं उसका धर्म का मार्ग आनंद से जगमग करने लगता है।

टिप्पणी

(1) यहाँ शुक्ल जी का अभिप्राय यह है कि परमात्मा की भक्ति में लीन होने का कारण उसमें शील, शक्ति, सौंदर्य और उदारता आदि गुणों की बहुलता है जो इतनी मात्रा में अन्य किसी आलम्बन में नहीं मिलती।

(2) व्याख्यात्मक शैली का प्रयोग हुआ है।

(3) तत्सम शब्दावली से युक्त भाषा है।

18. संसार में तटस्थ रहकर शांति सुखपूर्वक लोक व्यवहार संबंधी उपदेश देने वालों का उतना अधिक महत्त्व हिन्दू धर्म में नहीं है, जितना संसार के भीतर घुसकर उसके व्यवहारों के बीच सात्त्विक विभूति की ज्योति जगाने वालों का है। हमारे यहाँ उपदेशक ईश्वर के अवतार नहीं माने गए हैं। अपने जीवन द्वारा कर्म सौंदर्य संगठित करने वाले ही अवतार कहे गए हैं। कर्म सौंदर्य के योग से उनके स्वरूप में इतना माधुर्य आ गया है कि हमारा हृदय आप से आप उनकी ओर खिंचा पड़ता है।

प्रसंग–प्रस्तुत अवतरण में शुक्ल जी बताते हैं कि निवृत्ति मूलक दृष्टिकोण अपनाने वालों की अपेक्षा प्रवृत्ति मूलक दृष्टिकोण के लोग अधिक महत्त्वपूर्ण होते हैं और समाज में उन्हीं का सम्मान होता है।

व्याख्या–जो लोग संसार को असत् या मिथ्या कहकर इसको छोड़ पर्वतों की कन्दराओं में रहकर शांति, सुख एवं संसार के व्यावहारिक ज्ञान संबंधी भाषण देते हैं उनकी बातों को उतना महत्त्व नहीं दिया जाता जितना कि इस संसार के भीतर रहकर इसके कष्ट और विपत्तियों को झेलते हुए अपने सात्विक आचरण से धर्माचरण का प्रसार करने वालों की बातों को महत्त्वपूर्ण माना जाता है। भारतवर्ष में कोरा उपदेश देने वालों को परमात्मा या ईश्वर नहीं माना गया। इसके विपरीत जिन्होंने अपने सदाचार और सत्कर्मों द्वारा समाज में आनंद एवं धर्म की प्रभा ज्योतित की, उन्हें महापुरुष और उससे भी अधिक कहीं बढ़कर परमात्मा या ईश्वर माना गया है। लोकरंजनकारी और लोकरक्षणकारी उनके कर्मों में इतना सौंदर्य है कि उनकी ओर हमारा मन बरबस खिंचा चला जाता है। वे हमारी श्रद्धा के पात्र तो बन ही जाते हैं। साथ ही हम उनका सामीप्य लाभ भी प्राप्त करना चाहते हैं। अत: उनके प्रति हमारी भक्ति भी अनायास उमड़ पड़ती है। अत: कर्म सौंदर्य के उपासक या प्रवृत्ति मूलक दृष्टिकोण अपनाने वाले महापुरुषों में ही भक्ति उत्पन्न होती है, कोरे धर्मोपदेशकों के प्रति नहीं।

टिप्पणी

(1) इस अवतरण में शुक्ल जी ने प्रवृत्ति मूलक दृष्टिकोण को अच्छा माना है।

(2) कर्म सौंदर्य के उपासक ही सच्ची श्रद्धा के पात्र होते हैं, कोरे उपदेशक नहीं, ऐसी शुक्ल जी की मान्यता है।

(3) व्याख्यात्मक शैली का प्रयोग है।

(4) प्रवाहपूर्ण सरल भाषा प्रयुक्त हुई है।

नोट

टास्क निवृत्ति मूलक दृष्टिकोण अपनाने वाले लोगों की अपेक्षा प्रवृत्ति मूलक दृष्टिकोण के लोग किस प्रकार अधिक महत्त्वपूर्ण हैं?

26.3 निबंध 'लोभ और प्रीति' का सारांश

26.3.1 लोभ का स्वरूप

लोभ के स्वरूप का विश्लेषण करते हुए शुक्ल जी कहते हैं कि 'किसी प्रकार का सुख या आनंद देने वाली वस्तु के संबंध में मन की ऐसी स्थिति को जिसमें उस वस्तु के अभाव की भावना होते ही प्राप्ति सानिध्य या रक्षा की प्रबल इच्छा जग पड़े, लोभ कहते हैं।' उपर्युक्त परिभाषा के आधार पर यह स्पष्ट होता है कि लोभ का जन्म इच्छित वस्तु के अभाव की कल्पना के बिना नहीं हो सकता। कदाचित इसी कारण निबंधकार ने लोभ की सुखात्मक और दुखात्मक दोनों प्रकार की स्थितियाँ मानी हैं। अप्राप्त के लिए तो लोभ की दुखमयी स्थिति स्पष्टत दिखती है किंतु प्राप्त वस्तु के संबंध में भी ऐसी स्थिति की आशंका सदैव बनी रहती है। यह आशंका तब उभरती है जबकि प्राप्त वस्तु के अभाव की स्थिति या कल्पना उत्पन्न हो जाती है।

26.3.2 प्रीति का स्वरूप

लोभ सामान्य अथवा जाति के प्रति होता है किंतु प्रीति किसी वस्तु अथवा व्यक्ति विशेष के प्रति ही हो सकती है। लोभ और प्रीति के मध्य विभाजक रेखा खींचते हुए निबंधकार ने कहा है कि "लोभ सामान्योन्मुख होता है और प्रेम विशेषोन्मुख।" वृत्ति की एकनिष्ठता प्रीति की पहली शर्त है।

इच्छात्मकता: एक अनिवार्य अवयव–लोभ हो अथवा प्रीति–दोनों ही स्थितियों में प्राप्ति की इच्छा अनिवार्य है। जो वस्तु अथवा व्यक्ति हमें सुख पहुँचाता है, हम उसे केवल देखकर ही संतुष्ट नहीं हो जाते, हम उसे प्राप्त करने, उसके सान्निध्य में रहने के लिए भी लालायित रहते हैं।

जो भी वस्तु अथवा व्यक्ति हमें भाता है, अच्छा लगता है उसके प्रति हमारी इच्छात्मकता के दो पक्ष होते हैं–एक तो हम उसे प्राप्त करना अथवा उसके सानिध्य में रहना चाहते हैं, दूसरे हम यह भी चाहते हैं कि वह सानिध्य और सामीप्य नष्ट न होने पाए। प्राप्ति या सानिध्य की इच्छा भी पुन: दो प्रकार ही होती है–पहली तो इतने संपर्क की इच्छा जितना किसी भी अन्य व्यक्ति का न हो, दूसरी इतने संपर्क की इच्छा जितना अन्य लोग रखते हों। पहले प्रकार की इच्छा प्रतिषेधात्मक श्रेणी में आती है और इस कारण लोगों का ध्यान उस ओर जा सकता है। इस प्रकार के लोभ के विषय दो प्रकार के हो सकते हैं–सामान्य और विशेष। अच्छा मकान, आरामदेह सवारी, सुस्वाद भोजन सभी को प्रिय होता है, सभी इनकी प्राप्ति के लिए प्रयत्नशील रहते हैं और इसी कारण लोगों के भीतर मारधाड़, छल-कपट, धोखाधड़ी की प्रवृत्ति बनी रहती है। जब इच्छा का विषय विशिष्ट होता है अर्थात् यदि किसी व्यक्ति को सफेद रंग की पोशाक प्रिय है तो उसकी ओर किसी का ध्यान नहीं जाएगा क्योंकि उसकी यह इच्छा केवल अपने तक सीमित है, दूसरों के लिए व्यवधान नहीं होती अर्थात् सफेद पोशाक की इच्छा रखने वाला व्यक्ति इस बात से न तो चिन्तित होता है न दुखी कि दूसरा भी ऐसी ही सफेद पोशाक पहने हुए है।

लक्ष्य की भिन्नता: लोभ का मूलाधार–लोभ के विषय अनेक होते हैं फिर भी संसार के कतिपय आकर्षण ऐसे होते हैं जिनके प्रति मनुष्य मात्र में लोभ की प्रवृत्ति बनी रहती है। धन, वैभव, ऐश्वर्य आदि विषयों की गणना ऐसे विषयों के अंतर्गत ही की जाएगी। संसार में ऐसा कोई ही विरला व्यक्ति जो ऐसे लक्ष्यों की पूर्ति के लिए लालायित न हो। धन, वैभव आदि की इसी लालसा ने समाज में इन वस्तुओं की प्रतिष्ठा में अतिशय वृद्धि कर दी। परिणामत: चरित्र और प्रेम जैसे भाव भी धन की तुला पर तोले जाने लगे। निबंधकार के शब्दों में, "लक्ष्मी की मूर्ति धातुमयी

नोट

हो गई, उपासक सब पत्थर के हो गए, धीरे-धीरे यह दशा आई कि जो बातें पारस्परिक प्रेम की दृष्टि से, धर्म की दृष्टि से की जाती थीं, वे भी रुपए-पैसे की दृष्टि से होने लगीं।" लोभ का यह रूप निश्चय ही सामाजिकता का शत्रु होता है।

लोभ की संकुचित दृष्टि–जब लोभ की दृष्टि संकुचित होती है तो उसका दोष उतना ही कम हो जाता है। उदाहरण के लिए यदि किसी व्यक्ति को एक ही श्रेणी की पचास वस्तुओं में से कोई एक वस्तु बहुत अधिक पसंद आ जाती है तो उसे लोभी नही कहा जा सकता, अधिक से अधिक उसे परिष्कृत रुचि का व्यक्ति कहा जा सकता है। इसी प्रकार विश्वामित्र को वशिष्ठ की गाय इतनी अधिक अच्छी लगी कि वे उसके बदले में कितनी ही गायें देने को तत्पर हो गए थे। निश्चय ही विश्वामित्र को लोभी नहीं कहा जा सकता।

स्वदेश-प्रेम का रहस्य–स्वदेश-प्रेम का रहस्य वस्तुत: अपने देश, अपने स्थान के प्रति लोभ की भावना का सात्विक रूप ही तो है। स्वदेश-प्रेम में खो जाने वाला व्यक्ति देश से नहीं, वहाँ के लोगों, पक्षियों, पशुओं, पर्वतमालाओं, नदियों और समुद्रों सभी के प्रति प्रेम रखता है। यह मानव मन की स्वाभाविक वृत्ति है कि वह जहाँ कहीं रहता है, जिस समाज के बीच रहकर पलता और बड़ा होता है, उसके प्रति उसे गहरा प्रेम स्वत: हो जाता है। प्रेम की स्थिति परिचय से आरंभ होती है। देश के प्रति प्रेम देश और देशवासियों से परिचित हो जाने के बाद की अवस्था है। जब तक हम अपने देश की संस्कृति और समाज से परिचित नहीं होते तब तक हमारे भीतर देश के प्रति प्रेम की लौ कैसे उत्पन्न हो सकती है।

टास्क 'लोभ' और 'प्रीति' का अपने शब्दों में वर्णन कीजिए।

रक्षा की इच्छा के दो प्रकार–अपनी प्रिय वस्तु के प्रति मनुष्य की इच्छा दो प्रकार की होती है–सानिध्य की इच्छा तथा दूर न करने की इच्छा दो प्रकार की होती है–एक तो केवल अपने अधिकार में रखने की इच्छा, दूसरे स्वनिरपेक्ष रक्षा की इच्छा अर्थात् केवल बने रहने की इच्छा। केवल अपने अधिकार में रखने की इच्छा लोगों की आँखों में खटकती है। उदाहरण के लिए यदि किसी दफ्तर के कर्मचारियों की सुविधा के लिए शीतल जल का कूलर लगा है और यदि कोई श्री 'क' अकेले ही उसकी रक्षा करने की बात सोचे तो निश्चय ही इस पर अन्य कर्मचारियों को आपत्ति होगी क्योंकि कूलर की रक्षा के पीछे उसके अनन्य प्रयोग की बात अनिवार्यत: रहती है।

यदि लोभ का विषय ऐसा है जिसमें सबको सुख की अनुभूति होती है तो उसकी रक्षा के प्रति लोगों में एकता का भाव रहेगा। गाँव की चौपाल प्रत्येक ग्रामवासी के लिए सुख का स्थान होती है, अत: सारे गाँव वाले मिलकर उसके रखरखाव और उसकी सुरक्षा के प्रति जागरूक रहते हैं।

लोभ का सबसे अधिक प्रशस्त रूप–लोभ का सबसे अधिक प्रशस्त रूप वह होता है जबकि लोभ के विषय की रक्षा के प्रति मनुष्य का भाव केवल यही रहे कि वह वस्तु बनी रहे, भले ही वह उसके प्रयोग में आए अथवा नहीं। यहाँ भी रक्षा का यह भाव उस स्थिति में दोषपूर्ण बन जाता है जबकि वस्तु किसी अन्य के लिए हानि का कारण सिद्ध होती है। आपका पालतू कुत्ता आपको बहुत प्रिय हो सकता है, और आप उसकी रक्षा भी करते हैं किंतु यदि वह कुत्ता आपके पड़ोसी के यहाँ लगी हुई फुलवारी को तोड़-फोड़ दे तो वह अपके लिए सिरदर्द बन जाएगा। लोभ के प्रशस्त रूप का विश्लेषण करते हुए निबंधकार कहता है कि "वह लोभ धन्य है जिससे किसी के लोभ का विरोध नहीं और लोभ की जो वस्तु अपने सब लोभियों को एक-दूसरे का लोभी बनाए रखती है वह भी परम पूज्य है।" हमारे घर, हमारे गाँव, हमारे शहर और हमारे देश के प्रति जो हमारा प्रेमभाव होता है वह लोभ के इसी प्रशस्त रूप के उदाहरण हैं। मनुष्य की प्रवृत्ति यह होती है कि उसे सबसे पहले अपने घर की रक्षा की चिंता होती है, बाद में अपने गाँव की, उसके भी बाद अपने शहर की और अंत में अपने देश की। तथापित संसार में ऐसे भी कुछ लोग

नोट

होते हैं जिनके समक्ष देश का महत्त्व तो सर्वोपरि होता है और घर का महत्त्व नगण्य होता है। ऐसे ही लोग अपने घर का मोह छोड़कर देश के विकास की बातें सोच सकते हैं।

धन का लोभ—धन का लोभ एक प्रकार का संकुचित लोभ कहलाता है। शुक्ल जी इस प्रकार के लोभ को उद्धत लोभ की संज्ञा देते हैं जिसके प्रकटत: दो लक्षण माने गए हैं—असंतोष और अन्य मनोवृत्तियों का दमन। धन के लोभ में असंतोष की वृत्ति बराबर बनी रहती है। शुक्ल जी के शब्दों में, "धन का लोभ जब रोग होकर चित्त में घर कर लेता है तब प्राप्ति होने पर भी और प्राप्ति की इच्छा बराबर जगी रहती है। जिससे मनुष्य सदा आतुर और प्राप्त के आनन्द से विमुख रहता है। जितना नहीं है उतने के पीछे जितना है उतने से प्रसन्न होने का उसे कभी अवसर ही नहीं मिलता। धन का यह लोभ जब रोग का रूप धारण कर लेता है तो मनुष्य को इसके अतिरिक्त कुछ भी और नहीं दीखता। शनैः शनैः उसके भीतर की दयालुता, करुणा, परदु:खकातरता, सहानुभूति जैसी कोमल वृत्तियाँ कुंठित हो जाती है। ऐसे लोग किसी के लिए नहीं, अपने लिए भी नहीं, केवल धन के लिए जीते हैं। स्वभावत: समाज के लिए इनका कोई उपयोग नहीं हो सकता।"

पक्के लोभी की पहचान—लोभी की सबसे बड़ी पहचान यह होती है कि वे कभी भी अपने लक्ष्य से विचलित नहीं होते है। किसी की करुण से करुण पुकार, सुंदर से सुंदर रूप, दया की बड़ी से बड़ी याचना उनका ध्यान धन से विचलित नहीं कर सकती। यहाँ तक की अत्यधिक क्रोध की स्थिति में भी वे ऐसा कोई काम नहीं करते जिससे उनका एक रुपया भी नष्ट हो जाए। एक रुपए के लिए वे बड़े से बड़ा झूठ, बड़े से बड़ा अन्याय, बड़े से बड़ा अपराध करने में तनिक भी संकोच नहीं करते।

लोभ और प्रेम की भिन्नता—लोभ वस्तु के प्रति होता है जबकि प्रेम में मनस्तत्व अवश्य बना रहता है। प्रेम करने वाला और जिसे प्रेम किया जाता है—दोनों के भीतर एक धड़कता हुआ हृदय होता है। प्रेमतत्व की दूसरी विलक्षणता यह होती है कि प्रेम करने वाले व्यक्ति का बराबर यह प्रयत्न रहता है कि जिसके प्रति वह प्रेमभाव रखता है, वह भी उसके प्रेमभाव से अवश्य परिचित हो सके। इसके विपरीत वस्तु का लोभी वस्तु के भीतर ऐसी किसी चेतना के दर्शन नहीं कर पाता। यही नहीं, प्रेमी अपने प्रिय को प्रभावित भी करना चाहता है, उसके हृदय को जीतना चाहता है। इस सब में उसका लक्ष्य प्रिय का सानिध्य और सामीप्य प्राप्त करना होता है।

प्रेम-तत्व की विशेषताएँ—प्रेम करने वाले व्यक्ति की सबसे पहली विशेषता यह होती है कि वह अपने प्रिय का सामीप्य पाने के लिए बहुविध प्रयत्न करता है। जिससे उसे एक विचित्र प्रकार की तुष्टि का अनुभव होता है। इस संबंध में दूसरी बात यह है कि प्रेमभाव का विकास तभी संभव होता है जबकि प्रेमी और प्रिय दोनों के भीतर एक-दूसरे से मिलने, बैठने-उठने की उत्कृष्ट चाह हो। तीसरी बात यह है कि प्रेमी इस बात का पूरा प्रयत्न करता है कि वह अपने प्रिय के समक्ष अच्छे-से-अच्छे रूप में प्रस्तुत हो। प्रिय के हृदय को जीतने के लिए प्रेमी आवश्यकतानुसार त्याग, दया, व्यवहारकुशलता, शिष्टता आदि का भी भरपूर परिचय देने से नहीं चूकता। चौथी बात यह है कि प्रेमी का सारा संसार प्रिय के सुख-दुख में केन्द्रित हो जाता है। वह उसके मिलन में अपरिमित आनंद का अनुभव करता है तो उसके वियोग में रो-रो उठता है। कभी-कभी प्रेम उन्माद की स्थिति को भी पहुँच जाता है जिसके फलस्वरूप प्रेमी जीवन के अन्य क्षेत्रों से बुरी तरह कट जाता है। उसका जीवन सामाजिक और पारिवारिक जीवन से अलग हो जाता है। ऐसे प्रेम को एकान्तिक या लोकबाह्य प्रेम कहते हैं।

प्रेम की विलक्षणता—प्रेम का यही भाव लौकिक स्तर से क्रमश: ऊपर उठता हुआ अंतत: अलौकिक स्तर तक भी पहुँचता है। प्रभु-भक्ति के मूल में वस्तुत: मनुष्य का यही प्रेमभाव विद्यमान रहता है। इसे प्रेम का रंजनकारी प्रभाव कहा जा सकता है। जब किसी सुंदर युवती के प्रेम में डूबे हुए युवक-हृदय को सारा संसार प्रेम की आभा से सिक्त दीखता है तब परम प्रिय परमात्मा से प्रेम की डोर बाँधने वाले भक्त के अंतर्गत के आह्लाद को कैसे मापा जा सकता है? शुक्ल जी के शब्दों में, "हम तो जगत के बीच हृदय के सम्यक् प्रसाद में ही भक्ति का प्रकृत लक्षण देखते हैं क्योंकि राम की ओर ले जाने वाला रास्ता इसी संसार से होता हुआ गया है। जगत् से विरक्त होकर भक्ति का सुर अलापना एक ऐसी साधना है जिसकी चरम परिणति मानव-प्रेम में नहीं होती। संसार में रहकर ही प्रभु की प्राप्ति

हो सकती है। जिसे यह संसार राम के रंग में रंगा हुआ दीखता है, जिसे दीन-हीनों की दुर्दशा के प्रति सहज सहानुभूति हो उठती है, जो नन्हें बालकों की निश्छल मुस्कान पर लुटना जानता है, वही भक्त हो सकता है।"

प्रेम का लौकिक रूप–जब प्रेम एकान्तिकता से ऊपर उठकर एक संजीवन रस की तरह प्रेमी के भीतर कवि की प्रतिभा, चित्रकार की कला और संगीतज्ञ के सुरों में व्यक्त होता है तो उसे प्रेम का दिव्य रूप कहा जाएगा। ये सारी स्थितियाँ लौकिक प्रेम का उदात्तीकरण कहलाती हैं। प्रेमी के हृदय की दो कोमल वृत्तियाँ होती हैं–करुणा और प्रेम। प्रिय के वियोग में अपनी दारुण अवस्था का वर्णन करके प्रेमी प्रिय हृदय में दया का भाव उत्पन्न करता है। प्रेमी की इस मन:स्थिति का वर्णन करते हुए निबंधकार कहता है। कि "यह प्रेम-मार्ग की एक सामान्य प्रवृत्ति है जो प्रेमी के हृदय में सदैव बनी रहती है। प्रेम की रखवाली करने के लिए प्रेमी प्रिय के हृदय में दया को बराबर जगाता रहता है।"

प्रेम का आदर्श रूप–प्रेम के क्षेत्र में ऐसी अनेक स्थितियाँ हो सकती हैं जबकि प्रेमी तो प्रिय के प्रति भाव-विह्वल रहता है किंतु प्रिय उससे निरपेक्ष रहता है। सूर की गोपियाँ इसी आदर्श प्रेम को अपनी थाती मानकर चलती हैं–

जहं जहं रहौ राज करौं तहं तहं लेहु कोटि सिर भार।
यह असीस हम देति सूर सुनु न्हात खसै जनि बार।।

ऐसा प्रेमी केवल प्रिय के सुख की ही कामना करता है, उसे इससे अधिक कुछ नहीं चाहिए। लौकिक प्रेम का आदर्श रूप यहीं दीखता है। लौकिक प्रेम की यह उच्च भूमि सर्वत्र नहीं मिल पाती।

प्रेम के इस आदर्श रूप में न तो वासना की गंध रहती है, न ईर्ष्यादि भावों का संचार रहता है। निश्चय ही, उस प्रकार के आदर्श-प्रेम के दर्शन विरल ही होते हैं।

प्रेम के दो रूप–प्रेम के सुखात्मक और दु:खात्मक दो रूप होते हैं। संयोग के क्षणों में प्रेम की व्यंजना हँसी की खिलखिलाहट में होती है तो वियोग के क्षणों की व्यंजना अश्रुओं और दीर्घ नि:श्वासों में होती है। कदाचित् इसी आधार पर काव्यशास्त्रियों ने श्रृंगार के दो पक्ष माने हैं–संयोगपक्ष ओर वियोगपक्ष।

टास्क प्रेम का 'दिव्य रूप' किसे कहा गया है?

26.4 महत्त्वपूर्ण स्थलों की व्याख्या

1. "विशिष्ट वस्तु या व्यक्ति के प्रति होने पर लोभ वह सात्विक रूप प्राप्त करता है जिसे प्रीति या प्रेम कहते हैं। जहाँ लोभ सामान्य या जाति के प्रति होता है वहाँ यह लोभ ही रहता है जहाँ पर किसी जाति के एक ही विशेष व्यक्ति के प्रति होता है वहाँ वह 'रुचि' या 'प्रीति' का पद प्राप्त करता है। लोभ सामान्योन्मुख होता है और प्रेम विशेषोन्मुख। कहीं कोई अच्छी चीज सुनकर दौड़ पड़ना लोभ है। किसी विशेष वस्तु पर इस प्रकार मुग्ध रहना कि उससे कितनी ही अच्छी-अच्छी वस्तुओं के सामने आने पर भी उस विशेष वस्तु से प्रवृत्ति न हटे, रुचि या प्रेम है। किसी स्त्री या पुरुष के रूप की प्रशंसा सुनते ही पहला भाव लोभ का होगा। किसी को हमने बहुत सुंदर देखा और लुभा गए, उसके पीछे दूसरे को उससे भी सुंदर देखा तो उस पर लुभा गए। जब तक प्रवृत्ति का यह व्यभिचार रहेगा, तब तक हम रूप-लोभी ही माने जाएँगे। जब हमारा लोभ किसी एक ही व्यक्ति पर स्थिर हो जाएगा हमारी वृत्ति एकनिष्ठ हो जाएगी, तब हम प्रेमी कहे जाने के अधिकारी होंगे, पर साधारणत: मन की ललक यदि वस्तु के प्रति होती है तो लोभ और किसी प्राणी या मनुष्य के प्रति होती है तो प्रीति कहलाती है।"

नोट

प्रसंग–प्रस्तुत गद्यांश आचार्य रामचंद्र शुक्ल द्वारा विरचित 'चिन्तामणि' नामक निबंध-संग्रह के 'लोभ और प्रीति' विषयक निबंध से लिया गया है। प्रस्तुत गद्यांश में निबंधकार ने लोभ और प्रीति का अंतर स्पष्ट किया है।

व्याख्या–लोभ और प्रीति के मध्य विभाजक रेखा खींचते हुए निबंधकार शुक्ल जी कहते हैं कि लाभ का सात्विक रूप प्रेम के आदरणीय स्थान का अधिकारी होता है। लोभ और प्रीति में मूल अंतर यही है कि लोभ किसी भी सामान्य या जाति की वस्तु के प्रति हो सकता है। किंतु जब लोभ जाति के किसी व्यक्ति विशेष के प्रति हो जाता है तो उसे प्रीति कहा जाएगा। इस प्रकार यह स्पष्ट हो जाता है कि लोभ सामान्य के प्रति होता है जबकि प्रीति अथवा रुचि विशिष्ट के प्रति होती है। मान लीजिए आपने कहीं कोई सुंदर फूल देखा, आप उसे देखकर लुभा गए तो आपका यह लोभ केवल 'लोभ' के स्तर तक ही रहेगा। प्रीति की स्थिति तक पहुँचने की पहली शर्त ही विशिष्टता है। प्रत्येक माँ को अपना शिशु सुंदर लगता है, यहाँ तक कि उस माँ को भी जिसका बालक देखने में अत्यधिक कुरूप, मरियल और गंदा हो। माँ के इस भाव को वात्सल्यपूर्ण प्रेम कहा जाएगा क्योंकि उसकी दृष्टि में और कोई भी बालक उतना सुंदर नहीं दीख सकता जितना कि उसका अपना बालक है। प्रीति की पहचान ही यह है कि जिस व्यक्ति विशेष पर प्रीति टिक जाती है, वहाँ से वह फिर हटती नहीं है। प्रेमी अपने प्रिय को अपनी ही दृष्टि से देखता है, संसार की दृष्टि से नहीं।

रूप का लोभी केवल रूप ही देख पाता है और रूप अपने आप से सापेक्ष होता है। किसी एक युवती के रूप को निहारकर यह नहीं कहा जा सकता कि उससे बढ़कर सुंदर कोई और युवती नहीं हो सकती। रूप के लोभी को आज कुमारी 'क' सुंदर लगती है। तो कल उसकी दृष्टि कुमारी 'ख' पर भी टिक सकती है। तथापि प्रेमी की स्थिति सर्वथा भिन्न होती है। प्रेमी की दृष्टि जिस रूप को अपने अंतर्मन में एक बार बिठा लेती है, फिर वह कहीं और नहीं भटकती। उसके बाद उसके समक्ष आप यदि विश्वसुंदरी भी लाकर प्रस्तुत कर दें तो वह निश्चय ही दृष्टि फेर लेगा। प्रेम में एकनिष्ठता होती है और यही एकनिष्ठता लोभ और प्रेम के मध्य की विभाजक रेखा होती है।

लोभ और प्रीति का एक अन्य अंतर विषय को लेकर भी किया जा सकता है। लोभ का विषय प्राय: वस्तुएँ होती हैं जबकि प्रेम का विषय कोई प्राणी अथवा व्यक्ति होता है।

विशेष

(1) प्रस्तुत गद्यांश में निबंधकार ने विवेचनात्मक शैली का प्रयोग करके लोभ और प्रीति के मध्य एक सूक्ष्म किंतु सुस्पष्ट विभाजक रेखा खींच दी है।

(2) निबंधकार ने मानव-मन के सूक्ष्म भावों को अत्यंत सजीव ढंग से प्रस्तुत किया है। प्राप्ति या सान्निध्य की इच्छा भी दो प्रकार की हो सकती है–

(क) इतने संपर्क की इच्छा जितना और किसी का न हो,

(ख) इतने संपर्क की इच्छा जितनी सब कोई या बहुत से लोग एक साथ रख सकते हैं।

2. इनमें से प्रथम प्रतिषेधात्मक होने के कारण प्राय: विरोधग्रस्त होती है इससे उस पर समाज का ध्यान अधिक रहता है। कोई वस्तु हमें बहुत अच्छी लगती है, लगा करे, दूसरों को इससे क्या? पर जब हम उस वस्तु की ओर हाथ बढ़ाएँगे या औरों को उसकी ओर हाथ बढ़ाने न देंगे तब बहुत से लोगों का ध्यान हमारे इस कृत्य पर जाएगा जिनमें से कुछ हाथ थामने वाले और मुँह लटकाने वाले भी निकल सकते हैं। हमारे लोभ की शिकायत ऐसे ही लोग अधिक करते पाए जाएँगे दूसरों के लोभ की निंदा जैसी अच्छे लोभी कर सकते हैं वैसी और लोग नहीं। माँगने पर पाने वाले और न देने वाले दोनों, इसमें प्रवृत्त होते हैं। एक कहता है "वह बड़ा लोभी है, देता नहीं" दूसरा कहता है कि "वह बड़ा लोभी है, बराबर माँगा करता है।" रहीम दोनों को लोभी, दोनों को बुरा कहते हैं–

रहिमन वे नर मरि चुके जे कहुँ माँगन जाहिं।

उनतें पहिले वे मुए जिन मुख निकसत नाहिं।।

प्रसंग–प्रस्तुत गद्यांश आचार्य रामचंद्र शुक्ल के निबंध संग्रह 'चिन्तामणि' के 'लोभ और प्रीति' विषयक निबंध से लिया गया है। प्रस्तुत पंक्तियों में निबंधकार ने यह समझाने का प्रयास किया है कि लोभ का कौन-सा रूप समाज की आँखों में खटकता है।

व्याख्या–लोभ की एक अनिवार्य शर्त सानिध्य अथवा प्राप्ति की इच्छा होती है। हमें कोई कलाई घड़ी बहुत सुंदर लगी किंतु बात यहीं तो समाप्त नहीं हो गई। सुंदर लगने के बाद हमारे मन में स्वभावत: वैसी ही घड़ी प्राप्त करने की उत्कट इच्छा जन्म ले लेती है, हम उसकी प्राप्ति के लिए साधन जुटाते हैं और हमारा मन तभी तुष्ट होता है। जबकि हम अंतत: उसे प्राप्त कर लेते हैं। निबंधकार ने सानिध्य की इस इच्छा को पुन: दो भेदों में बाँटा है। ऐसे सानिध्य की इच्छा जितना किसी का भी न हो अथवा ऐसे संपर्क की इच्छा जितना अनेक लोगों का हो सकता है अथवा होता है।

पहले प्रकार के संपर्क अथवा सानिध्य की इच्छा निश्चय ही समाज की आँखों में खटकेगी। किसी वस्तु या व्यक्ति पर जब हम एकाधिकार की बात सोचते हैं तो समाज का प्रश्न स्वत: उपस्थित हो जाता है। मान लीजिए किसी सार्वजनिक पुस्तकालय में कोई दुर्लभ ग्रंथ विद्यमान है, विषय से संबंधित विद्यार्थी और अध्यापक वर्ग आवश्यकतानुसार उस ग्रंथ का प्रयोग करते हैं और लाभ उठाते हैं। इस व्यवस्था में किसी को भी कोई आपत्ति नहीं होगी किंतु यदि कोई महाशय उस ग्रंथ को अपने नाम चढ़वाकर अपने घर ले जाकर रख देते हैं और लौटाने का नाम ही नहीं लेते तो निश्चय ही उनका यह व्यवहार घोर आपत्तिपूर्ण माना जाएगा। वह दुर्लभ ग्रंथ यदि आपको अथवा किसी और को बहुत अच्छा, उपयोगी लगता है तो यहाँ तक कोई बुराई नहीं है। किसी भी व्यक्ति का ध्यान आपकी इस रुचि की ओर नहीं जाएगा। बुराई तो वहाँ से आरंभ होती है जहाँ हम उस दुर्लभ ग्रंथ पर एकाधिकार रखने की बात सोचते हैं।

हमारे ऐसे लोभ को कोई भी मौन रहकर सहन नहीं करेगा। लोग हमारे ऐसे लोभ की निन्दा करेंगे और वे लोग तो संभवत: गालीगुफ्तार तक भी उतर आएँ जो प्रकृति से हमारी ही तरह के लोभी हैं। लोभी के स्वभाव को लोभी ही अच्छी तरह समझ सकता है। भीख माँगने वाले व्यक्ति के लोभ को वही लोभी अच्छी तरह समझता है जो संपन्न होते हुए भी उसकी सहायता करने से इंकार कर देता है। रहीम ने ऐसे लोभियों की बहुत निंदा की है। उनके अनुसार जो होते हुए माँगता है और जो होते हुए देने से इंकार करता है–दोनों ही लोभी हैं और निन्दा के योग्य हैं।

विशेष

(1) प्रस्तुत गद्यांश में निबंधकार ने मनुष्य की सानिध्य अथवा संपर्क रखने की इच्छा का अत्यंत प्रभावशाली वर्णन किया है।

(2) प्रस्तुत पंक्तियों में शुक्ल जी ने लोभी व्यक्ति के मनोविज्ञान को अत्यंत सुबोध शैली में प्रस्तुत किया है।

(3) निबंधकार की शैली अत्यंत सशक्त बन पड़ी है। सीधे सरल शब्दों में उन्होंने मानवीय भावों की सूक्ष्मताओं का वर्णन खूबी के साथ किया है।

टास्क 'लोभ' और 'प्रीति' के अंतर को स्पष्ट कीजिए।

3. "यदि मनुष्य समाज में सब के लोभ के लक्ष्य भिन्न-भिन्न होते तो लोभ को बुरा कहने वाले कहीं नहीं मिलते। यदि एक साथ रहने वाले दस आदमियों में से कोई गाय बहुत चाहता, कोई घोड़ा, कोई कपड़ा,

कोई ईंट, कोई पत्थर, कोई सोना, कोई चाँदी, कोई ताँबा और इन वस्तुओं में से किसी को शेष सब वस्तुओं को प्राप्त करने की कृत्रिम शक्ति न दी जाती तो एक के लोभ से दूसरे को कोई कष्ट नहीं पहुँचता और दूसरी बात यह होती कि लोभ का एक बुरा लक्षण जो असंतोष है, उसकी भी एक सीमा हो जाती। कोई कितनी गायें रखता, कितने घोड़े बाँधता, कहाँ तक सोना-चाँदी इकट्ठी करता। पर विनिमय की कठिनता दूर करने के लिए मनुष्यों ने कुछ धातुओं में सब आवश्यक वस्तुएँ प्राप्त कराने को कृत्रिम गुण आरोपित किया जिससे मनुष्य मात्र की सांसारिक इच्छा और प्रयत्न का लक्ष्य एक हो गया, सब की टकटकी टके की ओर लग गई।"

प्रसंग—प्रस्तुत गद्यांश आचार्य रामचंद्र शुक्ल के 'चिंतामणि' नामक निबंध-संग्रह के 'लोभ और प्रीति' विषयक लेख से लिया गया है। प्रस्तुत पंक्तियों में निबंधकार ने यह समझाने का प्रयास किया है कि यदि लोभ के लक्ष्य भिन्न-भिन्न होते तो किसी एक का लोभ किसी दूसरे के लिए कष्ट का कारण सिद्ध नहीं होता।

व्याख्या—लोभ के लक्ष्यों की भिन्नता लोभ के दोष पक्ष का शमन करती है। यदि हर व्यक्ति का लोभ अलग वस्तु के प्रति होता तो कोई झंझट ही नहीं था। मान लीजिए किसी व्यक्ति का लोभ केवल घोड़ों के प्रति होता तो यदि वह संसारभर के घोड़े बाँधे रहता तो किसी दूसरे को क्या कठिनाई हो सकती थी। कठिनाई तो दो स्थितियों में ही हो सकती है—पहली तो तब जबकि घोड़ों के प्रति लोभ किसी और का भी होता, दूसरी तब जबकि वह किसी प्रकार घोड़े प्राप्त करने के साधन जुटा पाता। यदि ये दोनों स्थितियाँ नहीं हैं तो किसी का लोभ किसी को नहीं खटकने वाला।

कठिनाई यह हुई कि विनिमय के लिए मानव समाज ने मुद्रा का आविष्कार कर लिया और मुद्रा अपने-आप में एक ऐसा साधन बन गई जिससे सब कुछ प्राप्त हो सकता है। यही आपसी टकराव का कारण सिद्ध हुआ और परस्पर असंतोष का भाव भी इसी कारण उत्पन्न हुआ। यदि किसी घोड़े के लोभ को यह पता चल जाए कि वह किसी भी साधन से घोड़े प्राप्त नहीं कर सकता तो निश्चय ही उसके भीतर असंतोष का भाव उत्पन्न नहीं होगा। अप्राप्य के संबंध में मनुष्य अपने आपको यह कहकर समझा लेता है कि वह तो प्राप्त ही नहीं होने वाला, उसके लिए क्या रोना। तथापि मुद्रा के आविष्कार ने मानव समाज को प्रत्यक्षतः दो रूपों में क्षति पहुँचाई है—एक तो इसके कारण सभी के लोभ का लक्ष्य एक ही अर्थात् रुपया पैसा हो गया, दूसरे सभी के भीतर असंतोष का भाव उत्पन्न हो गया। यही मानव समाज के दुख का मूल कारण बन गया है।

विशेष

(1) प्रस्तुत पंक्तियों में शुक्ल जी ने यह सिद्ध करने का प्रयास किया है कि मुद्रा ही समस्त लोभ का विषय बन गई है और मानव मात्र की अशांति का कारण यही बन गई है।

(2) निबंधकार ने विवेचनात्मक शैली का प्रयोग करके गंभीर विषय को भी सुबोध रूप में व्यक्त किया है।

स्व-मूल्यांकन (Self-Assessment)

निम्नलिखित कथनों में सत्य अथवा असत्य की पहचान करें

(State Whether the following statements are True or False) :

7. लोभ की दृष्टि संकुचित होने पर उसका दोष उतना ही बढ़ जाता है।
8. जब प्रेमी का जीवन सामाजिक एवं पारिवारिक जीवन से अलग हो जाए तो यह एकान्तिक प्रेम कहलाता है।
9. धन का मद मनुष्य के भीतर की श्रेष्ठता का हरण कर लेता है।

4. "धन का जो लोभ मानसिक व्याधि या व्यसन के रूप में होता है उसका प्रभाव अंतःकरण की शेष वृत्तियों पर यह होता है कि वे अनभ्यास से कुँठित हो जाती हैं। लोभ मान-अपमान के भाव को, करुणा और दया के भाव को, न्याय-अन्याय के भाव को, यहाँ तक कि अपने कष्ट-निवारण या सुख-भोग की

नोट

इच्छा तक को दबा दे, वह मनुष्य कहाँ तक रहने देगा? जो अनाथ विधवा का सर्वस्वहरण करने के लिए कुर्क अमीन लेकर चढ़ाई करते हैं, जो अभिमानी धनिकों की दुतकार सुनकर त्यौरी पर बल नहीं आने देते, जो मिट्टी में रुपया गाड़कर न आप खाते है। न दूसरे को खाने देते हैं, जो अपने परिजनों का कष्ट-क्रन्दन सुनकर भी रुपए गिनने में लगे रहते हैं वे अधमरे होकर जीते हैं। उनका आधार अंतःकरण मारा गया समझिए। जो किसी के लिए नहीं जीते, उनका जीना बराबर है।"

प्रसंग–प्रस्तुत गद्यांश आचार्य रामचंद्र शुक्ल के निबंध-संग्रह 'चिन्तामणि' के 'लोभ और प्रीति' विषयक निबंध से उद्धृत किया गया है। प्रस्तुत पंक्तियों में निबंधकार ने यह बताने का प्रयास किया है कि धन का लोभ किस प्रकार मानव मन की सद्वृत्तियों का नाश कर देता है।

व्याख्या–निबंधकार के अनुसार धन का लोभ जब अति को पहुँच जाता है तो वह मनुष्य के भीतर के दया, करुणा, सहानुभूति जैसे कोमल भावों के लिए घातक सिद्ध होता है। यह स्थिति एक प्रकार की व्याधि की-सी स्थिति होती है। जब मनुष्य ऐसी स्थिति में पहुँच जाता है तो उसे धन के अतिरिक्त कुछ भी अच्छा नहीं लगता, उसकी दृष्टि, उसकी समूची वृत्तियाँ एकमात्र धन की ओर केन्द्रित रहती हैं। उसके जीवन का एकमात्र लक्ष्य धन-प्राप्ति के साधन हो जाते हैं। शनैः शनैः यह व्याधि उस चरम सीमा तक भी पहुँच जाती है जहाँ मनुष्य दूसरों की बात छोड़िए स्वयं अपने दुख का निवारण भी नहीं कर सकता। इस प्रकार यह बहुत स्पष्ट हो जाना चाहिए कि जो व्यक्ति स्वयं अपने सुख-लाभ के लिए अपना रुपया नहीं खर्च कर सकता वह किसी और के दुख की कथा सुनने का अवकाश कैसे निकाल सकता है। उसके भीतर की सारी करुणा, दयालुता और सहानुभूति तो धन का लोभ सोख लेता है, तो फिर भला वह किसी के दुख से दुखी कैसे हो सकता है? निश्चय ही धन के लोभी के शरीर की खाल बहुत मोटी होती है, उसे उसके कंजूस स्वभाव को लेकर आप एक हजार बुरी-भली बात कह दें, उस पर कोई प्रभाव नहीं पड़ सकता। वह धन के मद में इतना अन्धा हो जाता है कि वह मान-अपमान, दया, करुणा यहाँ तक कि मानवीय मूल्यों को भी भुला बैठता है।

विशेष

(1) निबंधकार ने धन के मद के प्रभाव का अत्यंत प्रभावशाली वर्णन किया है। धन का मद मनुष्य के भीतर की श्रेष्ठता का किस प्रकार हरण कर लेता है–शुक्ल जी ने इस तथ्य को सजीव रूप में व्यक्त किया है।

(2) प्रस्तुत पंक्तियों में निबंधकार ने धनी व्यक्ति के मनोविज्ञान पर समुचित प्रकाश डाला है।

5. "अपने प्रेम की सूचना देने के उपरांत प्रेमी प्रिय के हृदय में अपनी ओर कुछ भावों की प्रतिष्ठा चाहता है। पहले कहा जा चुका है कि सहसा उत्पन्न लोभ या प्रीति का प्रथम संवेदनात्मक अवयव है 'अच्छा लगना'। वस्तु के संबंध में उसी बात का अच्छा लगना काफी होता है। लोभियों को इस फेर में नहीं पड़ना पड़ता कि कोई वस्तु उन्हें अच्छी लग रही है। उसे वे भी अच्छे लगें, पर प्रेमी यह चाहने लगता है कि जिस प्रकार प्रिय मुझे अच्छा लगता है उसी प्रकार मैं भी प्रिय को अच्छा लगूँ। वह अपना सारा अच्छापन किसी न किसी बहाने उसके सामने रखना चाहता है। यह बराबर देखने में आता है कि जब कभी किसी नवयुवक का चित्त किसी युवती की ओर आकर्षित होता है। तब ऐसे स्थानों पर जाते समय यहाँ उसके दिखाई पड़ने की संभावना होती है। उसका ध्यान कपड़े-लत्ते की सफाई और सजावट की ओर कुछ अधिक हो जाता है। सामने होने पर बातचीत और चेषा में भी एक स्वप्न सा देखा जाता है। अवसर पड़ने पर चित्त की कोमलता, सुशीलता, वीरता, निपुणता इत्यादि का भी प्रदर्शन होता है। प्रेमी को जिस घड़ी यह पता चलता है कि प्रिय का चित्त भी उसकी ओर थोड़ा बहुत खिंचा है उसी घड़ी से वह लोभ की ऊपरी सतह से और गहरे में जाकर प्रेम के आनंद लाने में मग्न हो जाता है।"

प्रसंग–प्रस्तुत गद्यांश आचार्य रामचंद्र शुक्ल के निबंध संग्रह 'चिंतामणि' के 'लोभ और प्रीति' विषयक निबंध से लिया गया है। प्रस्तुत पंक्तियों में निबंधकार ने प्रेम के स्वरूप को स्पष्ट करने का प्रयत्न किया है।

नोट

व्याख्या–प्रेम के स्वरूप को स्पष्ट करते हुए आचार्य शुक्ल कहते हैं कि प्रेम-पथ का प्रथम सोपान 'अच्छा लगना' होता है। अच्छा लगना नितांत रूप से एक हृदय की बात है। आपने किसी सुंदर रूप को देखा और वह आपको अच्छा लगा। उस रूप के प्रति आपका प्रेम-भाव इसी बिन्दु से शुरू हुआ समझना चाहिए। अच्छा लगने की इस बात में भी एक भेद है–एक तो किसी वस्तु का अच्छा लगना, दूसरे किसी व्यक्ति का अच्छा लगना–ये दोनों अलग-अलग बातें हैं। हमें कोई कपड़ा बहुत अच्छा लगा और हमने उसे प्राप्त करने के बारे में विचार किया। हमें इस बात की तनिक भी चिंता नहीं है कि जैसे कपड़ा हमारे मन को भा गया, क्या वैसे ही कपड़े को हम भी भाए कि नहीं। कपड़ा तो जड़ पदार्थ है, उसके संबंध में इस प्रकार की बात सोचना ही हमारे मस्तिष्क के दिवालियेपन का परिचायक है। किंतु जब कोई व्यक्ति हमें अच्छा लगता है तो हमारी बराबर यह इच्छा रहती है कि हम भी उसे अच्छे लगें। अपने प्रिय को अच्छा लगने के उद्देश्य से प्रेमी क्या-कुछ नहीं करता। प्रिय की प्रसन्नता के लिए वह बड़े से बड़ा त्याग कर सकता है, अपनी हर इच्छा का गला घोंट सकता है और जब यह प्रेम-भाव अपनी चरम स्थिति में पहुँचता है तो प्राणों तक को दाँव पर लगा दिया जाता है। प्रेम भी एक प्रकार का उन्माद होता है, उसमे 'क्या दिया–क्या पाया' शैली में हिसाब-किताब नहीं रखा जाता। प्रेमी का एकमात्र लक्ष्य अपने प्रिय के हृदय को जीतना होता है। और इस उद्देश्य की पूर्ति के लिए वह सब कुछ करने को तत्पर रहता है। जब कभी वह प्रिय के समक्ष उपस्थित होता है तो वह अपने व्यवहार की शिष्टता, सुशीलता आदि गुणों से प्रभावित करना चाहता है। वस्तु के प्रति जो लोभ होता है, उसमें ऐसी किसी स्थिति का प्रश्न नहीं उठता है। वहाँ तो केवल दो ही स्थितियाँ होती है–एक तो किसी वस्तु का अच्छा लगना, दूसरे उसकी प्राप्ति के लिए प्रयत्नशील होना। प्रेम-भाव की एक अन्य विशेषता यह भी होती है कि जिस क्षण प्रेमी को यह आभास हो जाता है कि केवल वही प्रिय के प्रति आकृष्ट नहीं है बल्कि प्रिय के मन में भी उसके प्रति कुछ आकर्षण उत्पन्न हो गया है तो वह लोभ की स्थिति से उच्चतर स्थिति को पहुँच जाता है जिसे प्रेम की स्थिति कहा जा सकता है। प्रेम की यह स्थिति प्रेमी के जीवन की आकांक्षा बन जाती है। एक बार इस स्थिति में पहुँच जाने के बाद प्रेमी अपने प्रिय की प्राप्ति के लिए अपने भीतर का सारा अच्छापन व्यक्त कर देना चाहता है।

विशेष

(1) प्रस्तुत पंक्तियों में शुक्ल जी ने एक प्रेमी के मनोविज्ञान को सजीव अभिव्यक्ति प्रदान की है। निबंधकार ने प्रेमी के हृदय की सूक्ष्मताओं का बहुत खूबी के साथ विश्लेषण किया है।

(2) मानव-मन के सूक्ष्म भावों की इतनी प्रभावोत्पादक अभिव्यक्ति शुक्ल जी की निबंध शैली की एक अन्यतम विशेषता है जो कि प्रस्तुत पंक्तियों में सहज स्पष्ट हो सकती है।

टास्क 'धन का लोभ' किस प्रकार मानव मन की सद्‌वृत्तियों का नाश कर देता है?

6. **"उस एकान्तिक प्रेम की अपेक्षा जो प्रेमी को एक घेरे में उसी प्रकार बंद का देता है जिस प्रकार कोई मर्ज मरीज को एक कोठरी में डाल देता है, हम उस प्रेम का अधिक मान करते हैं जो एक संजीवन-रस के रूप में प्रेमी के सारे जीवन-पथ को रमणीय और सुंदर कर देता है, उसके सारे कर्मक्षेत्र को अपनी ज्योति से जगमगा देता है। जो प्रेम जीवन की नीरसता हटाकर उसमें सरसता ला दे, वह प्रेम धन्य है। जिस प्रेम का रंजनकारी प्रभाव विद्वान की बुद्धि कवि की प्रतिभा, चित्रकार की कला, उद्योगी की तत्परता वीर के उत्साह तक बराबर फैला दिखाई दे उसे हम भगवान् का अनुग्रह मानते हैं। जबकि प्रिय के संबंध से न जाने कितनी वस्तुएँ प्रिय हो जाती हैं तब उस परम प्रिय के संबंध में सारा जगत् प्रिय हो सकता है। शुद्ध भक्ति मार्ग में जगत् से विरक्ति का स्थान हम ढूँढते हैं और नहीं पाते हैं। भक्ति राग की वह दिव्यभूति है जिसके भीतर**

सारा चराचर जगत् आ जाता है। जो भक्त इस जगत् को ब्रह्म की ही व्यक्त सत्ता या विभूति समझेगा, भगवान के लोकपालक और लोकरंजन स्वरूप पर मुग्ध रहेगा, वह अपने स्नेह, अपनी दया, अपनी सहानुभूति को लोक में और फैलाएगा कि चारों ओर से खींच लेगा? हम तो जगत् के बीच हृदय के सम्पक प्रचार में ही भक्ति का प्रकृत लक्षण देखते हैं क्योंकि राम की ओर ले जाने वाला रास्ता इसी संसार से होता हुआ गया है।"

प्रसंग–प्रस्तुत गद्यांश आचार्य रामचंद्र शुक्ल के निबंध-संग्रह 'चिंतामणि' के 'लोभ और प्रीति' विषयक लेख से लिया गया है। प्रस्तुत पंक्तियों में निबंधकार ने प्रेम के एकान्तिक रूप पर प्रेम के रंजनकारी रूप की श्रेष्ठता सिद्ध करने का प्रयास किया है।

व्याख्या–प्रेम के एकान्तिक रूप पर उसके रंजनकारी रूप की श्रेष्ठता सिद्ध करते हुए निबंधकार कहता है कि वह प्रेम मानव-मन का श्रेय नहीं हो सकता जो मनुष्य की सारी वृत्तियों को उसी प्रकार कटघरे में बंद कर देता है जिस प्रकार कोई रोग रोगी को एक कोठरी देता है। प्रेम का वही रूप श्रेय है जो मनुष्य को सभी दृष्टियों से ऊपर उठाता है, उसे कर्म की सच्ची राह की ओर प्रवृत्त करता है। केवल प्रेम का पथ मनुष्य को कहीं नहीं ले जाता। यह स्मरणीय है कि जीवन-पथ से हटकर चलने वाला कोई भी पथ मानवीय साधना का लक्ष्य नहीं हो सकता। यह निर्विवाद है कि जब प्रेम की भावना मनुष्य को एक बार कर्म के अनंत पथ पर प्रवृत्त कर देती है। तो मनुष्य जीवन की उच्च से उच्चतर भूमियों का स्पर्श करने लगता है। एकान्तिक प्रेम की परिधि केवल प्रेमी और प्रिय तक ही रहती है, उसकी दृष्टि भी एक सतही स्तर से ऊपर नहीं उठ पाती। निश्चय ही प्रेम-भाव का स्तर मनुष्य को किसी दृष्टि से ऊँचा नहीं उठा सकता। तथापि किन्हीं परिस्थितियों में प्रिय के प्रति प्रेम की भावना शारीरिक संबंधों के सतही स्तर से ऊपर उठकर कलात्मकता, संगीतात्मकता आदि रूपों में उभरकर आती है। मनोविज्ञान की भाषा में इसे उदात्तीकरण कहा जाता है। उदात्तीकरण का आशय मानवीय प्रवृत्तियों को सतही स्तर से ऊपर उठाने से होता है। प्रेम का रंजनकारी रूप भी यही होता है। कवि की प्रतिभा, चित्रकार की कला संत के ज्ञान, भक्त की निष्ठा–इन सबके पीछे किसी न किसी रूप में यही प्रेमभाव विद्यमान रहता है।

भगवान् की भक्ति के मूल में भी अन्ततः यही प्रेमभाव क्रियारत रहता है। जिस प्रकार लौकिक प्रेम में प्रेमी को सारा संसार प्रिय के रंग में रंगा हुआ दीखता है, उसी प्रकार भक्त को सबकुछ परमपिता परमात्मा के रंग में रंगा हुआ दीखता है। प्रेमभावना का यह प्रसार प्रेम के रंजनकारी प्रभाव का परिचायक होता है। भक्त जब इस संसार को परमसत्ता का ही प्रसार मानता है, जब उसे संसार के कण-कण में उसी विराट् सत्ता का प्रतिबिम्ब दीखने लगता है तभी वह सच्चा भक्त कहलाने का अधिकारी होता है। यह स्मरणीय है कि ईश्वर को प्राप्त करने का मार्ग इसी संसार में विद्यमान है। संसार में आँखें मूँदकर ईश्वर की प्राप्ति हो ही नहीं सकती। ईश्वर को जानने के लिए ईश्वर द्वारा रची गई इस सृष्टि से प्यार करना होगा। वैराग्य के सहारे ईश्वर का ज्ञान बहुत दुष्कर होता है।

विशेष

(1) प्रस्तुत पंक्तियों में निबंधकार ने प्रेम के एकान्तिक और रंजनकारी रूपों का विश्लेषण करते हुए भक्ति का मनोविज्ञान व्यक्त किया है।

(2) विवेचनात्मक शैली के प्रयोग से शुक्ल जी ने सूक्ष्म मानवीय भावों को सजीव अभिव्यक्ति प्रदान की है।

26.5 'लज्जा और ग्लानि' का सार

'लज्जा और ग्लानि' आचार्य रामचंद्र शुक्ल के निबंध संग्रह चिंतामणि भाग-1 में संकलित है। दूसरों के चित्त में अपने विषय में बुरी यह तुच्छ धारणा होने के निश्चित या आशंका मात्र से वृत्तियों का जो संकोच होता है उनकी स्वच्छंदता के विद्यात का जो अनुभव होता है उसे लज्जा कहते हैं। इस मनोभाव के मारे लोग सिर ऊँचा नहीं करते मुँह नहीं दिखाते, सामने नहीं आते, साफ-साफ कहते नहीं और भी न जाने क्या-क्या नहीं करते।

नोट

विशुद्ध लज्जा अपने विषय में दूसरे की ही भावना पर दृष्टि रखने से होती है। अपनी बुराई, मूर्खता, तुच्छता इत्यादि का एकांत अनुभव करने से वृत्तियों में जो शैथिल्य आता है उसे ग्लानि कहते हैं। इसे अधिकतर उन लोगों को भोगना पड़ता है जिसका अंत:करण सत्व प्रधान है, मन में ग्लानि आने के लिए यह आवश्यक नहीं कि जो हमारी बुराई, मूर्खता, तुच्छता आदि से परिचित हो, या परिचित समझे जाते हो, उनका सामना हो। हम अपना मुँह न दिखाकर, लज्जा से बच सकते हैं, पर ग्लानि से नहीं। कोठरी में पड़े-पड़े लिहाफ के नीचे भी लोग ग्लानि से गल सकते हैं। चित्रकूट में भरत-राम के मिलाप के स्थान पर जब जनक के आने का समाचार पहुँचा तब "सुनत जनक-आगमन बस हरखेउ अवध समाजा" पर "गरइ गलानि कुटिल कैकेयी।"

26.6 सारांश (Summary)

- किसी मनुष्य में साधारण जनों से अधिक गुण अथवा शक्ति को देखकर उसके प्रति जो एक प्रकार का आनंदपूर्ण पूज्य भाव जागृत हो जाता है, उसे श्रद्धा कहते हैं।
- श्रद्धा और प्रेम में अंतर है। प्रेम रूप को देखकर उत्पन्न होता है जबकि श्रद्धा के आविर्भाव का कारण किसी व्यक्ति के गुण विशेष होते हैं। प्रेम का व्यापार स्थल एकांत और सीमित है, श्रद्धा का विस्तृत।
- श्रद्धा समाज के लिए नितान्त आवश्यक है क्योंकि इसके द्वारा मनुष्य के दुर्गम कार्य भी सुगम बन जाते हैं। इसीलिए कुछ चालाक लोग दूसरों की श्रद्धा को प्राप्त करने के लिए गुणी और सदाचारी होने का ढोंग करते हैं। श्रद्धा नि:स्वार्थ होती है।
- श्रद्धा और प्रेम के योग का नाम भक्ति है। जब पूज्य भाव के साथ-साथ श्रद्धेय व्यक्ति के सामीप्य लाभ की इच्छा भी मन में जागृत होती है, तब वह भक्ति भावना कहलाती है। भक्ति में श्रद्धा के साथ-साथ प्रेम का भी उदय होता है।
- भक्ति का स्थान मानव ह्दय है। वहाँ श्रद्धा और प्रेम के संयोग से वह जन्म लेती है। शील, शक्ति, सौंदर्य और उदारता के भावों से प्रभावित होकर ही मनुष्य परमात्मा की ओर आकर्षित होता है।
- प्रेम और श्रद्धा में सबसे पहला अंतर तो यह है कि प्रेम में प्रिय के कार्यों पर दृष्टि नहीं जाती। बहुधा प्रेम प्रिय के सुंदर रूप को देखकर उत्पन्न हो जाया करता है जिसमें उसका (प्रिय का) कोई हाथ नहीं होता क्योंकि रूप तो ईश्वर की देन है।
- प्रेम का कारण अज्ञात होता है। वह पहले से सोचा हुआ नहीं होता परंतु श्रद्धा जिन कारणों से उत्पन्न होती है, वे कारण सुनिश्चित और ज्ञात होते है।
- श्रद्धा का भाव सामाजिक है। हम जिस पर श्रद्धा करते हैं उससे अपनी श्रद्धा के बदले में कुछ चाहते नहीं, हम श्रद्धेय पर श्रद्धा करके अपने को उस समाज का अंग मानने लगते हैं जिस पर हमारे श्रद्धेय ने अपने सद्‌गुणों से प्रभाव डाला है। अथवा जो समाज उसके शुभ कार्यों का क्षेत्र रहा है।
- किसी प्रकार का सुख या आनंद देने वाली वस्तु के संबंध में मन की ऐसी स्थिति को जिसमें उस वस्तु के अभाव की भावना होते ही प्राप्ति सानिध्य या रक्षा की प्रबल इच्छा जग पड़े, लोभ कहते हैं।
- प्रेम के सुखात्मक और दु:खात्मक दो रूप होते हैं। संयोग के क्षणों में प्रेम की व्यंजना हँसी की खिलखिलाहट में होती है तो वियोग के क्षणों की व्यंजना अश्रुओं और दीर्घ नि:श्वासों में होती है।
- धन का लोभ जब अति को पहुँच जाता है तो वह मनुष्य के भीतर के दया, करुणा, सहानुभूति जैसे कोमल भावों के लिए घातक सिद्ध होता है। जब मनुष्य ऐसी स्थिति में पहुँच जाता है तो उसे धन के अतिरिक्त कुछ भी अच्छा नहीं लगता, उसकी दृष्टि, उसकी समूची वृत्तियाँ एकमात्र धन की ओर केन्द्रित रहती हैं।
- दूसरों के चित्त में अपने विषय में बुरी यह तुच्छ धारणा होने के निश्चित या आशंका मात्र से वृत्तियों का जो संकोच होता है उनकी स्वच्छंदता के विघात का जो अनुभव होता है उसे लज्जा कहते हैं।

नोट

- अपनी बुराई, मूर्खता, तुच्छता इत्यादि का एकांत अनुभव करने से वृत्तियों में जो शैथिल्य आता है उसे ग्लानि कहते हैं।

26.7 शब्दकोश (Keywords)

1. प्रशंसक – तारीफ करने वाला
2. सत्कर्म – अच्छे कार्य
3. निरपराध – निर्दोष
4. सौंदर्य – सुंदरता
5. आकर्षण – खिंचाव
6. अज्ञात – अनजान
7. अर्पित – चढ़ाना
8. प्रतिकार – बदला
9. विपत्ति – मुसीबत
10. विद्वान – ज्ञानी
11. अनिवार्य – जरूरी
12. अभिलाषी – इच्छुक।

26.8 अभ्यास प्रश्न (Review Questions)

1. आचार्य शुक्ल जी ने श्रद्धा के कितने प्रकार बताए हैं?
2. श्रद्धा और भक्ति में क्या अंतर है?
3. शुक्ल जी ने लोभी की क्या पहचान बताई है?
4. 'लज्जा और ग्लानि' का सार अपने शब्दों में लिखिए।
5. शुक्ल जी के निबंध 'श्रद्धा और भक्ति' में 'प्रिय' और 'श्रद्धेय' के अंतर को स्पष्ट कीजिए।

उत्तर : स्व-मूल्यांकन (Answers : Self-Assessment)

1. उत्पन्न
2. हास्यास्पद
3. अपराधी
4. (ख)
5. (ग)
6. (क)
7. असत्य
8. सत्य
9. सत्य।

26.9 सन्दर्भ पुस्तकें (Further Readings)

पुस्तकें चिन्तामणि–रामचन्द्र शुक्ल, राजकमल प्रकाशन समूह।

नोट

इकाई–27: 'विष्णु प्रभाकर' का साहित्यिक योगदान

अनुक्रमणिका (Contents)

उद्देश्य (Objectives)

प्रस्तावना (Introduction)

27.1 प्रभाकर जी की लेखन कुशलता

27.2 जीवनी के प्रमुख तत्वों का वर्णन

27.3 जीवन वृतांत के आधार पर लेखक द्वारा साहित्य की मर्मज्ञता की व्याख्या

27.4 प्रभाकर जी के कृतित्व के आधार पर 'आवारा मसीहा' की समालोचना

27.5 सारांश (Summary)

27.6 शब्दकोश (Keywords)

27.7 अभ्यास प्रश्न (Review Questions)

27.8 सन्दर्भ पुस्तकें (Further Readings)

उद्देश्य (Objectives)

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् विद्यार्थी योग्य होंगे–

- प्रभाकर जी की लेखन कुशलता को जानने में;
- जीवनी के प्रमुख तत्वों का वर्णन करने में;
- लेखक द्वारा साहित्य की मर्मज्ञता की व्याख्या को समझने में;
- 'आवारा मसीहा' की समालोचना करने में।

प्रस्तावना (Introduction)

'आवारा मसीहा' श्री विष्णु प्रभाकर द्वारा लिखित बंगाल के प्रसिद्ध उपन्यासकार श्री शरतचन्द्र की प्रमाणिक जीवनी है। इसमें प्रभाकर जी ने उस महान व्यक्ति के जीवन चरित का वर्णन किया है जो कुछ लोगों की दृष्टि में महामानव, मसीहा, देवता आदि था परंतु कुछ लोग उसे बुरा व्यक्ति तथा वेश्यागामी कहते थे। प्रभाकर जी का यह जीवनी साहित्य इसी एक व्यक्ति को केंद्र मानकर लिखा गया है। उन्होंने नायक के भाव जगत और सामाजिक जीवन की गाथा को दर्शाया है। इस प्रकार उन्होंने यह सिद्ध किया है कि किस प्रकार परिस्थितियों के बीच नायक आगे बढ़ता जाता है अर्थात् व्यक्ति का कृतित्व और अंकन का ढंग किस रूप में हुआ है? उस युग की शक्तियों ने नायक के साथ कैसा व्यवहार किया?

27.1 प्रभाकर जी की लेखन कुशलता

विष्णु प्रभाकर जी ने बंगाल के सुप्रसिद्ध उपन्यासकार शरतचन्द्र की जीवनी की 'आवारा मसीहा' के नाम से रचना की है। यहाँ हम लेखक की जीवनी कला की समीक्षा निम्नांकित तत्वों के आधार पर करेंगे–

1. जीवन वृत्तांत के तत्वों की व्याख्या,
2. जीवन वृत्तांत के आधार पर लेखक द्वारा साहित्य की मर्मज्ञता की व्याख्या,
3. प्रभाकर जी के कृतित्त्व के आधार पर 'आवारा मसीहा' की समालोचना।

जीवनी साहित्य बहुत पुराने समय से लिखा जाता रहा है परंतु इसके तत्वों के बारे में बहुत कम लोग जानते हैं। इसलिए हम यहाँ पर जीवनी साहित्य के तत्वों पर विस्तार से विचार करेंगे ताकि 'आवारा मसीहा' नामक कृति की समीक्षा आसानी से हो सके।

जीवनी साहित्य में किसी महत्त्वपूर्ण व्यक्ति के जीवन से संबंधित कार्यों का लेखा-जोखा होता है। इसमें बाहरी घटनाओं का आकलन नायक के चरित को आधार बनाकर किया जाता है जिसमें आंतरिक जगत से संबंधित विशेषताओं को भी स्पष्ट किया जाता है। इस प्रकार 'जीवन चरित' मानव की जीवनी का असली और वास्तविक कार्यचक्र है।

इस बात को हम भली-भाँति जानते हैं कि 'जीवन चरित' संपूर्ण जीवन का विस्तृत नक्शा है। इसमें विशिष्ट व्यक्ति के संपूर्ण चरित्र की चर्चा की जानी चाहिए। लेकिन कभी-कभी चरित्र तथा आचरण से बाहर की बातों का वर्णन करना भी आवश्यक हो जाता है। जीवनी साहित्य में कुछ बातें बड़ी हो सकती हैं और कुछ छोटी अर्थात् जन्म से लेकर व्यक्ति के मरण तक का लेखा लिखना परमावश्यक हो जाता है। डा. प्रजापति ने लिखा, "जीवनी एक ऐसा इतिहास है जिसमें विशिष्ट व्यक्ति के जीवन की गीली मिट्टी को सूखा बनाकर एक मंजूषा में भरा जाता है।"

27.2 जीवनी के प्रमुख तत्वों का वर्णन

जीवनी के प्रमुख तत्वों का वर्णन निम्नांकित शीर्षकों के अंतर्गत किया जाएगा–

1. जीवनी नायक: विशिष्ट व्यक्ति–जिस विशेष व्यक्ति का 'जीवन चरित' लिखना होता है उसे केंद्र में रखा जाता है। उससे संबंधित अन्य चरित आसपास घूमते हुए से दिखाई देते हैं। इस चरित नायक के व्यक्तित्व को इस ढंग से लिखा जाता है मानो उसके जीवन को नए सिरे से गढ़ा गया है। उसमें नवीनता लाने का पूर्ण प्रयास किया जाता है। इसके लिए लेखक यथार्थ के साथ कल्पना को भी जोड़ता हैं क्योंकि कल्पना के सूत्र अतीत को जगाते हैं और तथ्यों में एक नयापन ले आते हैं। इससे नायक की भावनाओं को बल मिलता है और यथार्थ का ताना-बाना बुनने में आसानी हो जाती है। कल्पना की इस परिधि को उस सीमा तक लाँघने की चेष्टा की जाती है जिस सीमा तक कल्पना यथार्थ के साथ घुल-मिल सके। यदि किसी कमजोरी से कल्पना का आवरण हट जाता है तो इससे जीवनी की देह भद्दी और कुडौल दिखाई देने लगती है। इस दृष्टि से यह कहना भी उचित ही होगा कि कल्पना शीलता ही जीवनी चरित नायक को पुनः जन्म देती है।

इस संबंध में राहुल सांकृत्यायन के शब्दों का स्मरण अपरिहार्य है–

"लेखक यदि किसी नायक की जीवनी लिखना चाहता है तो उसका कर्त्तव्य है कि जैसा उसे देखे वैसा ही वह पाठकों के सामने रख दे। जीवन चरित्र में अंदर और बाहर की भावनाओं का एक सेतु होता है जो विषय को जड़ता से बचाता है। इससे मानव की गरिमा, उसकी ख्याति को कोई हानि नहीं पहुँच पाती है। लेखक को चाहिए कि वह अपने मन में केवल एक ही मूर्ति को प्रतिष्ठापित करे और उसी की पूजा-अर्चना करते हुए अन्य पात्रों को उसके सामने लाकर बिठा दे। इसके विपरीत चलने वाला रचनाकार जीवन-चरित्र न लिखकर इतिहास की रचना करने वाला मान लिया जा सकता है।"

इस प्रकार जो लेखक जीवनी चरित की रचना करता है वह नायक के कार्यों को ज्यों-का-त्यों रखने का प्रयास करता है क्योंकि कार्य भी वास्तव में चरित्र के साथ ही चलता है। यदि हम व्यक्तित्व को ही सृजित करने की बात सोचते

नोट

रहेंगे तो नायक के कर्म पीछे छूट जाएँगे और जीवन चरित अधूरा रह जाएगा। इसलिए व्यक्तित्व और कृतित्व दोनों पर विशेष बल दिया जाता है। हम केवल वही लिख सकते हैं जिसका हमें ज्ञान होता है या फिर हम नायक के सानिध्य से सीखते हैं। नायक के हृदय में क्या है? इसके बारे में हम अपनी ओर से कोई भी अनुमान नहीं लगा सकते। इसलिए कर्म ही मनुष्य के व्यक्तित्व का निर्धारण करता है और उसी आधार पर विशिष्ट व्यक्ति की जीवनी लिखी जाती है।

टास्क प्रभाकर जी की लेखन कुशलता पर एक लेख लिखिए।

2. सामाजिक पृष्ठभूमि का परिपूर्ण आकलन–'जीवन चरित' की रचना करते समय लेखक को चरित नायक के कार्यों को प्रभावित करने वाले सामाजिक, धार्मिक, राजनीतिक और सांस्कृतिक संगठनों का भी गंभीरता के साथ आकलन करना पड़ता है क्योंकि नायक इन तत्वों के बीच रह कर ही अपने जीवन को सही रूप देता है। कोई भी नायक बिना कर्मों के जीवित नहीं रह सकता। कर्म जीवन की एक विश्वसनीय कला है, जो मानव को स्थिर, स्थायी और जीने योग्य बनाती है। कर्म के पीछे मनुष्य किसी उद्देश्य, मान्यता, संकल्प शक्ति और किसी अज्ञात प्रेरणा को सजाए रहता है क्योंकि ये सारे तत्व जीवनी-तत्व के सूत्र हैं जो मानव को आगे बढ़ने की प्रेरणा देते रहते हैं। प्राय: मनुष्य निरूद्देश्य कुछ भी नहीं करता है। कर्म के द्वारा वह विश्व में कुछ ऐसे चिह्न भी छोड़ जाता है जो उसके संस्कारों को पवित्र बनाते हैं, साथ ही दूसरों को अच्छे कार्य करने की प्रेरणा भी देते हैं। जब व्यक्ति या नायक के कर्म आदर्श उपस्थित करते हैं तो वे एक पवित्र परंपरा का रूप धारण कर लेते हैं। इस दृष्टि से हमें यह विचार करना है कि यदि चरित्र चित्रण का लेखक किसी भी नायक की जीवनी को लिखते समय इन तमाम महत्त्वपूर्ण उद्देश्यों और तथ्यों को ध्यान में रखता है तो जीवनी अपने सही रूप में सबके सामने आती है अन्यथा जीवनी का उद्देश्य मर जाता है। जीवनी लेखक को कभी-कभी तुलनात्मक अध्ययन प्रस्तुत नहीं करना चाहिए क्योंकि ऐसा करने से नायक के भावों, विचारों और कार्यों को ठेस पहुँचती है तथा जीवनी का उद्देश्य भी पूर्ण नहीं होता।

श्री प्रभाकर जी ने 'आवारा मसीहा' में इन सब बातों का परिपालन किया है। वे केवल अंतरदर्शी ज्ञान से ही नहीं जूझते रहे हैं, वरन् उन्होंने नायककालीन वातावरण और घटनाओं की सामाजिक पृष्ठभूमि का भी पूर्ण आकलन किया है। इससे जीवनी उद्देश्यपूर्ण बन पड़ी है। उन्होंने चरित्र नायक के चरित्र का विकास बड़ी कुशलता के साथ किया है। इसके लिए उन्होंने उस काल की परंपराओं से भी परिचय कराया है। वह अतीत की चेतना में काफी गहरे पहुँचे हैं और बड़ी योग्यता के साथ अपनी बात को स्पष्ट कर सके हैं।

3. वास्तविकता का विशिष्ट ध्यान–लेखक को चरित नायक के जीवन से संबंधित सभी जोड़-घटाओं को वास्तविक रूप में रखने का प्रयास करना चाहिए ताकि नायक के जीवन चरित को लोग निरी कपोल कल्पना न समझने लगें। जिस स्थान पर तथ्यों का जाल टूट जाए वहाँ लेखक को अनुमान (सत्य से परे नहीं) का सहारा लेना चाहिए। इस बात का ध्यान भी रखना चाहिए कि लेखक हर स्थान पर अपनी ही बात न थोपे। जीवनी को विकास देने के लिए लेखक टिप्पणी के रूप में अपनी बात रख सकता है परंतु उद्देश्य से परे उसे कुछ भी नहीं कहना चाहिए। जीवनी कला का मुख्य उद्देश्य तो यही होता है कि लेखक अपनी ओर से जो कुछ कहे, उसे वह पृष्ठभूमि में रखे। अत: लेखक के अपने विचार जितने गुप्त रहेंगे उतना ही जीवनी में 'जीवन' आएगा। 'जीवन चरित' को वास्तविक बनाने के लिए इससे अच्छी बात और क्या सोची जा सकती है?

4. प्रामाणिकता–लेखक को प्रामाणिक जीवन चरित लिखना चाहिए। इसके लिए उसे नायक की सत्य घटनाओं को संकलित करने की ओर विशेष ध्यान देना होगा। सच बातों से 'जीवन चरित' की आत्मा मरती नहीं है। इससे नायक प्रत्येक काल में जीवित रहता है। सच बातों को छोड़कर 'जीवन चरित' लिख डालने से कोई भी पाठक उसे जीवनी नहीं कहेगा। सच बातों से नायक को सम्मान मिलता है। सच बातें ही जीवन को प्रामाणिक बनाती है। इसके

लिए चरित लेखक को संघर्षशील होना चाहिए। उसे प्रत्येक बात बड़ी निष्पक्षता के साथ रखनी चाहिए। यह निर्विवाद सत्य है कि जहाँ निष्पक्षता और निडरता होती है वहाँ जीवनी का शरीर जीवित रहता है। जो लेखक चरित नायक के गुणों का ही बखान करते हुए, दुर्गुणों पर परदा डालते हुए आगे चलते हैं, वे अच्छे जीवनीकार कभी नहीं कहे जा सकते।

5. रुचिकर भाषा शैली का प्रयोग–जीवनी लेखक को सदैव सरल, सुबोध और रुचिकर भाषा-शैली का प्रयोग करना चाहिए क्योंकि इससे जीवनी जन साधारण के लिए भी पठनीय हो जाती है। जीवनी का यह एक सशक्त पक्ष है। बिना इस पक्ष को ध्यान में रखे जीवनी लिखने का कार्य सिवाय पांडित्य बघारने के और कुछ नहीं होगा। एक सफल जीवनी लेखक वही है जो चलताऊ भाषा का प्रयोग करता है। साथ ही जीवन की घटनाओं को थोड़े से शब्दों में व्यक्त करने की क्षमता भी लेखक में होनी चाहिए परंतु इस बात का विशेष ध्यान रखना चाहिए कि विचारों और भावों को किसी भी सीमा तक हानि न पहुँचे। भाषा को सजाकर रखने में लेखक की सार्थकता है।

6. कल्पना और अनुभूति का प्रयोग–जीवन चरित को लिखते समय लेखक को साफ-सुथरी और सप्राण कल्पना तथा आत्मपरक अनुभूति का प्रयोग करना पड़ता है क्योंकि कल्पना और अनुभूति जीवनी कला के प्राण हैं। इनका प्रयोग जीवनी को इतिहास बनने से बचाता है और कौशल का परिचय देता है। जिस लेखक के पास यह दोनों तत्व नहीं होते वह उच्चकोटि की जीवनी लिखने में असमर्थ रहता है। इस दृष्टि से यह बात भी स्मरणीय है कि कल्पना का प्रयोग उसी सीमा तक करना चाहिए जहाँ तक उसकी आवश्यकता हो। कल्पना का हर जगह प्रयोग करने से बचना चाहिए। जीवनी को अधिक कल्पनाशील बना देने से चरित नायक का चरित यथार्थ से परे हो जाता है। अतः सत्य के धरातल पर कल्पना सम्मत ढाँचा खड़ा करने में कोई हानि नहीं है।

स्व-मूल्यांकन (Self-Assessment)

रिक्त स्थानों की पूर्ति करें (Fill in the blanks) :

1. जीवनी में विशिष्ट व्यक्ति के जीवन की गीली मिट्टी को सुखाकर एक .... में भरा जाता है।
2. कल्पनाशीलता ही जीवनी चरित नायक को पुनः .... देती है।
3. कर्म ही मनुष्य के व्यक्तित्व का .... करता है।

27.3 जीवन वृत्तांत के आधार पर लेखक द्वारा साहित्य की मर्मज्ञता की व्याख्या

1. जीवनी का नायक: विशेष व्यक्ति–जीवनी का नायक एक प्रकार से जीवित व्यक्ति होता है जो अपने जन्मकाल से लेकर मृत्यु पर्यंत तक ऐसे विशिष्ट कार्य करता है जो उसे महत्त्वपूर्ण व्यक्ति बना देते हैं। इसलिए लेखक उसका चरित्र चित्रण नायक की तरह करता है न की देवलोक के देवता की तरह। लेखक उसका तथ्यों के आधार पर वर्णन करता है। ऐसा व्यक्ति राजनीतिज्ञ, साहित्यकार, वैज्ञानिक आदि कुछ भी हो सकता है। जीवनी लेखक जब उस चरित नायक के व्यवहार, घटनाओं और आचरण का उल्लेख करता है तो उसे क्रमशः अनेक समस्याओं का सामना करना पड़ता है। वह उन समस्याओं पर विजय प्राप्त करता हुआ अपने कार्य में मग्न हो जाता है और फिर एक दिन पाठकों को पठनीय कृति सौंप देता है। यहाँ हम 'आवारा मसीहा' के विश्वविख्यात नायक से संबंधित लेखक की कला की समीक्षा कर रहे हैं। इस विख्यात उपन्यासकार की जीवनी को लिखने में लेखक ने अपने कीमती चौदह वर्ष व्यतीत किए क्योंकि शरत के जीवन-चरित को लिखना आसान काम नहीं था। वह एक ऐसा व्यक्ति था जो अतीत में खो गया था और जिसके जीवन की घटनाओं की वास्तविकता को खोजना हँसी खेल नहीं था क्योंकि शरच्चंद्र बड़े विचित्र व्यक्ति थे। उनसे संबंधित बहुत-सी बातें लोगों की जबान पर थीं। कुछ का आधार उनकी कृतियों में खोजा जा सकता था। उनके बारे में बहुत सी किवदंतियाँ भी प्रचलित थीं जिन पर लिखना या कोई यथार्थ बात कहना सरल काम नहीं था। दूसरे, शरत बाबू एक ऐसे व्यक्ति थे जो हजारों कल्पनाओं, रहस्यों, मिथ्याचारों और भ्रांतियों से घिरे हुए थे। न तो कभी एक स्थान पर बँध कर रहे और न कभी किसी को उन्होंने अपने बारे में कुछ

नोट

भी विस्तार से बताया। वे लोगों को अपनी बनाई गल्पें सुनाते रहते थे। लेकिन उनके कहने का ढंग इतना सुंदर होता था कि लोग समझते, जैसे यह सचमुच की बात बता रहा है।

एक बार कुछ लोग उनके पीछे पड़ गए कि वे अपने जीवन के बारे में कुछ अवश्य बताएँ। इस पर उन्होंने कहा कि लेखक और पानी की गति एक समान समझनी चाहिए। इसलिए लेखक के व्यक्तिगत जीवन के बारे में कुछ भी पूछना कोरे कागज के समान है। वह लेखक है इसलिए यदि वह अपने विषय में कुछ नहीं बताता है तो भी लोगों को उसकी रचनाएँ पढ़कर उसके बारे में बहुत कुछ जान लेना चाहिए। यदि पाठक खोजेगा तो लेखक का जीवन उसकी रचनाओं में से झाँकता हुआ दिखाई देगा। सोचो, क्या लेखक के जीवन का यह वास्तविक परिचय नहीं है? यही कारण है कि विज्ञ पाठक उसके लेखकीय जीवन और उसके वास्तविक जीवन दोनों को जरा से इशारे में ही समझ जाते हैं। दोनों अलग-अलग भी हैं और एक भी हैं। बस यही समझ लो कि शरत ने जो कुछ लिखा वही 'वह' है कुछ नहीं। इसके बाद कभी किसी जिज्ञासु पाठक ने उनसे कुछ नहीं पूछा।

अब हम शरत के साहित्य को छान कर आत्मसात करने का प्रयास करेंगे तो पाएँगे कि शरत बाबू ने अपने लेखकीय कार्य से अपने विषय में सबकुछ बता दिया है। वे असलियत में क्या थे? इस रहस्य को खोलने में शायद वे अपना अपमान समझते थे। यही कारण है कि उन्होंने अपने बारे में कभी किसी को कुछ नहीं बताया। शायद वे कभी प्रसिद्ध होना नहीं चाहते थे। उन्होंने काफी लिखा लेकिन कभी इस बात का प्रयत्न नहीं किया कि उनकी रचनाएँ ठीक समय पर प्रकाशित हों। उनकी सभी रचनाओं का प्रकाशन उनके मित्रों द्वारा ही संभव हो सका। यदि उनके मित्र उनको साहित्यिक जगत में न लाते तो वे अंधकार में खोए रहते या फिर उनका अंत रंगून जैसे देश में ही हो जाता। यही कारण है कि उनकी प्रतिभा को आलोकित करने का श्रेय उनके मित्रों को ही जाता है। एक विद्वान ने उनके बारे में लिखा है, "शरतचन्द्र बड़े शर्मीले स्वभाव के थे। इसी कारण वे अपनी काल में सदैव अपनी ख्याति से बचते रहे। शायद वे बराबर इस कारण लिखते रहे कि मृत्यु के उपरांत उनका कृतित्त्व लोगों के सामने आएगा और तब सबको बड़ा अजूबा सा लगेगा। शायद उनके लेखन कार्य को देखकर लोग उनसे कुछ सीख सकेंगे। इसके साथ ही शरत बाबू ने ऐसा साहित्य दिया जो जीवन को निकट से छूने वाला है। ऐसे साहित्यकार कम ही हुए हैं जो जीवन की वास्तविकताओं की गाँठ सत्य की धरती पर खोलते हैं। शरतचंद्र इस क्षेत्र में अपना उदाहरण स्वयं हैं।"

शरत बाबू का जीवन भी बड़ी अनोखी घटनाओं से भरा हुआ है। वह एक ऐसे पिता की संतान थे जो नदी की धार की तरह इधर से उधर घूमता ही रहा। उनकी माता का जीवन पेट के लिए चून जुटाने, तन ढकने के लिए वस्त्र जुटाने और शरत बाबू के लिए फीस जुटाने में कटता था। उनको अपने मायके से ही सहायता मिलती थी। इन सब बातों का सीधा प्रभाव बालक शरत पर पड़ना स्वाभाविक था। वह बाल्यकाल से ही शरारती स्वभाव लेकर इस धरती पर अवतरित हुए थे। इसी कारण उनकी इच्छा स्वतंत्र वातावरण में जीने की थी। चूँकि पिता किसी एक स्थान पर बँधकर नहीं रहे और न उन्होंने बालक की शिक्षा-दीक्षा पर विशेष ध्यान दिया। अत: स्वाभाविक था कि शरत की पढ़ाई में बाधा पड़ती रही। परंतु शरत बाबू ने तीक्ष्ण बुद्धि पाई थी। वे किसी बात को एक बार समझ लेते तो फिर उसे जीवन भर नहीं भूलते थे। अपनी इसी विलक्षण स्मृति और बुद्धि के कारण वे प्रत्येक कार्य बड़ी समझदारी से करते थे। कक्षा में भी उनके अध्यापक उनके परिश्रम और लगन की प्रशंसा करते थे। पढ़ाई-लिखाई के मामले में शायद ही उनको कभी दंड मिला हो। कक्षा अध्यापक के अलावा अन्य अध्यापक भी उनसे प्रभावित थे। अचानक एक-एक करके जब उनके माता-पिता को नियति ने उठा लिया तो घर-गृहस्थी का सारा भार उनके कंधों पर आ पड़ा। ऐसी अवस्था में वे अपने छोटे भाई-बहनों को नाना-नानी के पास छोड़कर जीवकोपार्जन हेतु रंगून चले गए। वहाँ उनको पचास रुपए महीने की एक नौकरी मिल गई। इसके साथ ही वे लेखन कार्य भी करते रहे। उनका हृदय बड़ा कोमल था। वे फूल की तरह कोमल और सूर्य की तरह स्पष्ट थे। दूसरों के दुख देखकर वे बड़ी जल्दी उसकी सहायता करने में जुट जाते थे। रंगून में उन्होंने एक स्त्री से विवाह किया और प्रकृति ने उनको एक बच्चा भी दिया। परंतु उनके भाग्य में बालक का सुख नहीं लिखा था अत: बालक सामान्य सी बीमारी में और पत्नी प्लेग के प्रकोप में चली गई शरत बाबू ने धीरे से एक साँस भरी और छोड़ दी-'मनुष्य अकेला आया और अकेला ही जाएगा।' शायद ये शब्द उनकी दुखी आत्मा से निकले थे।

नोट

> *टास्क* शरत बाबू का जीवन किस प्रकार की घटनाओं से भरा हुआ था?

वह सोचने लगे, जब नियति ने मेरे पल्ले से दुख बाँध ही दिया है तो मुझे उसका सामना अपने ही ढंग से करना चाहिए। वह मदिरा के प्याले का अधरों से स्पर्श कर मदिरा की धार को घूँट-घूँट कंठ के नीचे उतारने लगे। मदिरा के साथ ही उनको अफीम गटकने की भी आदत पड़ गई। इसके बाबजूद भी वे साहित्य-निर्झरणी का भी आनंद लेते रहे। वह दिनभर कार्यालय में लेखनी चलाते और रात्रि को उपन्यास, कहानी-कथा आदि जो मन में आता लिखने लगते। इसी बीच एक अनोखी घटना घटी। एक ब्राह्मण देवता से उनकी भेंट हुई। वह अपनी तरुणी पुत्री को उनके पास छोड़कर कलकत्ता खिसक लिए। शरत बाबू ने उस तरुणी को अपनी जीवन-संगिनी बनाया और उसके साथ अपना शेष जीवन बिताया।

जिस मकान में वह अपनी पत्नी के साथ रहते थे, उसमें अचानक आग लग गई। उन्होंने बड़े मनोयोग से 'चरित्रहीन' नामक उपन्यास लिखा था, वह आग में जल कर स्वाहा हो गया। लेकिन सचमुच वे बड़े जीवट के व्यक्ति थे। उन्होंने बड़े धैर्य से इस विष को पी लिया और शरत बने रहे-ऐसा शरत जो सदैव ठंडी करके पीना जानता है। इसके बाद उन्होंने अन्य रचनाओं का निर्माण किया और बराबर छपने के लिए भेजते रहे। उनका प्रकाशन कलकत्ता जैसी महानगरी से निरंतर गति से होता रहा। इसी समय उनके मित्रों और प्रकाशकों ने जोर डाला कि वे कलकत्ता में आकर रहे इसलिए उन्होंने ठीक चौदह वर्ष के बाद रंगून छोड़ दिया और पत्नी सहित कलकत्ता चले आए। उस समय भारत में स्वाधीनता का आंदोलन खुलकर चल रहा था। अत: शरत बाबू ने भी उसमें ऊँची आवाज से भाग लिया। उन्होंने भारत की स्वतंत्रता के विषय पर 'पाथेर दावी' नामक एक अभूतपूर्व रचना लिखी जिसे अंग्रेज सरकार ने अपने नियंत्रण में ले लिया। लेकिन इससे शरत जरा भी नहीं घबराए। वे गुप्त रूप से क्रांतिकारियों का साथ देते रहे क्योंकि वह गरम दल को स्वीकार करने वाले व्यक्ति थे। उनका कहना था कि बिना क्रांति के अंग्रेज भारत को छोड़कर कभी नहीं भाग सकते। क्रांति में सच्चाई होती है और वार्तालाप में राजनीति। अत: शरतच्चंद्र क्रांति का समर्थन करते थे।

इस समय तक शरत बाबू अपनी रचनाओं के कारण प्रसिद्धि पा चुके थे। कुछ लोगों का विचार बना कि उनको रवींद्र बाबू की तरह 'नोबल पुरस्कार' मिलना चाहिए। लेकिन शरत बाबू झूठी ख्याति के लिए कभी इधर से उधर नहीं दौड़े वह कहते थे कि मैं जो कुछ लिखता हूँ अपने देश और समाज के लिए लिखता हूँ। चूँकि वह मदिरा पान और अफीम खाने की आदत को अभी तक नहीं छोड़ पाए थे इसलिए वह बीमार रहने लगे। डॉक्टरों ने उनका परीक्षण किया तो पता चला कि उनको कैंसर है। इसी जानलेवा कैंसर की शाखाएँ जब उनके शरीर में फैलीं तो वह इस देह को छोड़कर अनंत में मिल गए।

प्रभाकर जी ने शरत बाबू के चरित का वर्णन बड़े मनोयोग से किया है। उनके रूप-रंग, उनके व्यक्तित्व, कृतित्व, उनके विचार, अनुभव, उनका स्वभाव और प्रकृति शक्ति आदि का सजीव वर्णन लेखक ने इस ढंग से किया है, मानो पाठकों के सामने ही सारी बातें हो रही हैं। इस दृष्टि से हम प्रभाकर जी की जीवनी कला में विविधता, कलात्मकता, मनुष्य के हृदय की सच्चाई आदि को देखते हैं। जीवनी के तत्वों को सजाने में उन्होंने अपनी अपूर्व क्षमता का परिचय दिया है। चरित नायक के कार्यों को जीवन मूल के साथ कुशलता से जोड़ा है। इसी कारण लेखक शरत की दयालुता और परदुख कातरता को लेखबद्ध करने में सफल रहे हैं। सचमुच वह दृश्य कितना विचित्र होगा जब घर धू-धू करके जल रहा होगा और जिसके साथ नायक की पुस्तकें और पांडुलिपियाँ भी राख में बदल रही होंगी। और जिसे देखकर नायक के मुख से दु:ख भरे शब्द निकले होंगे–'अब क्या किया जा सकता है?' लेखक ने शरत के इन जैसे मनोभावों को बड़े सुंदर ढंग से व्यक्त किया है।

शरतचन्द्र पढ़ने और लिखने दोनों कार्यों में रुचि लेते थे। यही कारण था कि उन्होंने एक विदेशी व्यक्ति से सैंकड़ों पुस्तकें थोड़े से रुपयों के बदले ले ली थीं फिर उन पुस्तकों को बड़े करीने से घर की अलमारियों में सजाया था।

नोट

उन्होंने बड़े परिश्रम से कुछ चित्रों को भी बनाया था। साथ ही 'चरित्रहीन' जैसी पुस्तक लिखने में उन्होंने न जाने कितनी रातें जागकर काटी थीं लेकिन नियति ने अपने मुख की ज्वाला में सबकुछ निगल लिया। क्या शरत बाबू के वश की बात थी कि वे उस आग को शांत कर अपनी पाण्डुलिपि को बचा लेते? शायद नहीं, इसी कारण वे हाथ बाँधे खड़े रहे और भीतर ही भीतर दुखभरे आँसू पीते रहे। बड़ी मुश्किल से वे कुछ पुस्तकें, अपनी प्यारी पत्नी, पक्षी और वफादार कुत्ते को बचा सके। उसी समय उन्हें एक व्यक्ति के चीखने चिल्लाने की आवाज सुनाई पड़ी। वह चौंक गए। उन्हें पता चला कि आग की लपटों में उसकी बकरी घिर गई है। शरत ने तुरंत जलते हुए घर में छलांग लगा दी और बकरी को लेकर आग से बाहर निकल आए। उनके बाहर निकलते ही वह मकान भरभरा कर धराशायी हो गया। इस दृश्य को देखकर लोग काँप उठे। काश! दो क्षण पहले यह घर ढह जाता तो क्या होता?

इस प्रकार शरत बाबू के जीवन की छोटी-छोटी बातों में जो बड़प्पन के भाव तैर रहे हैं उनको लेखक ने बड़े करीने से अपनी पुस्तक में सजाया है। एक बार उन्होंने किसी मित्र के घर पर भोजन करते समय बाहर सड़क पर भूखे कुत्तों को खड़े देखा। उनसे कुत्तों की दयनीय दृष्टि देखी न जा सकी। उन्होंने अपना भोजन कुत्तों को खिला दिया। इस पर उनके मित्र नाराज हो गए। पर शरत बाबू ने इसकी चिंता नहीं की। इस प्रकार शरत बाबू दया और धर्म की जीती-जागती मूर्ति थे। उनके प्रत्येक कार्य में दया, सहानुभूति, परोपकार आदि के भाव भरे रहते थे।

2. सामाजिक पृष्ठभूमि का परिपूर्ण आकलन–प्रभाकर जी की रचनाओं में वातावरण और परिस्थितियों का पूर्ण रूप से आकलन हुआ है। उन्होंने सामाजिक, आर्थिक, सांस्कृतिक और मनोवैज्ञानिक परिस्थितियों का सच्चा विश्लेषण किया है। शरत बाबू ने जिन परिस्थितियों का सामना करते हुए अपना जीवन काटा उनका मूल्यांकन प्रभाकरजी ने यथार्थ के धरातल पर किया है। शरत बाबू घोष परिवार के मकान की उत्तर दिशा में गंगा जी के निकट रहते थे। उनका घर अंधकार में डूबा रहता था क्योंकि मकान के आसपास नीम, करौंदों, आदि के वृक्ष अपनी घनी छाया करते रहते थे। उस स्थान पर तरह-तरह की लताएँ फैली रहती थीं जिनमें से होकर भीतर जाना एक प्रकार से कठिन था। शायद ही कोई विचारक सोच सकता कि इस झुरमुट के पीछे किसी साहित्यकार का मकान है। शरत बाबू बड़ी सावधानी से लताओं को हटाकर मकान के भीतर प्रवेश पा जाते थे। भीतर सूर्य की किरणें जैसे-तैसे प्रवेश पा जाती थीं। इस प्रकार शरत का निवास स्थान बड़े विचित्र वातावरण के बीच था। प्रभाकरजी ने इस सुखद वातावरण का चित्रण बड़े सुंदर शब्दों में किया है। जैसे–

"नाना लताओं ने उस स्थान को ऐसे घेर रखा था कि मनुष्य का उसमें प्रवेश करना कठिन था। बड़ी सावधानी से एक स्थान की लताओं को हटाकर शरत उसके भीतर गया। वहाँ थोड़ी-सी साफ-सुथरी जगह थी। हरी-भरी लताओं के भीतर सूर्य की उज्जवल किरणें छन-छनकर आ रही थीं और उनके कारण स्निग्ध हरित प्रकाश फैल गया था। देखकर आँखें जुड़ने लगीं और मन गदगद होकर मानो स्वप्नलोक में पहुँच गया।"

प्रभाकरजी ने उस समय के सामाजिक वातावरण का चित्रण इन शब्दों में किया है–

"देवानंदपुर बंगाल का एक साधारण सा गाँव है। हरा-भरा, ताल-तलैयों, नारियल और केले के वृक्षों से पूर्ण। मलेरिया की प्रचुरता भी कम नहीं है। नवाबी शासन में यह फारसी भाषा की शिक्षा का केंद्र था। इसी गाँव में 15 सितंबर 1876 ई० शुक्रवार की संध्या को शरत का जन्म हुआ था। यहीं उसका बाल्यकाल अत्यंत अभाव में आरंभ हुआ। माँ न जाने कैसे गृहस्थी चलाती थी। जानती थी पति कैसे हैं? उनसे शिकवा-शिकायत व्यर्थ है। सार्थक यही है कि घर की शोभा बनी रहे। उन्होंने कभी न गहनों की माँग की, न कीमती पोशाक की ही। आत्मोत्सर्ग ही मानों उनका नाम था। जब भागलपुर में वे रहती थी तब चाचाओं के इतने बड़े परिवार में उन्हीं का अधिकार था कि सब माँओं के बच्चों को अपनी छाती में छिपाकर उनकी देखरेख करें। कौन कब आएगा? कौन कब जाएगा? किसको क्या और कब खाना है? ऐसे असंख्य प्रश्नों को सुलझाने में उन्हें साँस लेने की फुरसत नहीं मिलती थी।"

एक उदाहरण यह भी दृष्टव्य है, "जिस समय शरतचंद्र का जन्म हुआ वह चहुँमुखी जागृति और प्रगति का काल था। 1857 ई० के स्वाधीनता संग्राम की असफलता और सरकार के तीव्र दमन के कारण कुछ दिन शिथिलता अवश्य दिखाई दी थी परंतु वह तूफान के पूर्व की शांति जैसी थी। शीघ्र ही क्रांति का स्वर फूटने लगा। साहित्य में इस स्वर

नोट

की सबसे पहले अभिव्यक्ति हुई बंकिमचंद्र के 'आनंदमठ' में। इसी उपन्यास ने आधुनिक बंगाल को जन्म दिया जो कालांतर में सारे देश की प्रेरणा बन गया।"

स्व-मूल्यांकन (Self-Assessment)

बहुविकल्पीय प्रश्न (Multiple Choice Questions) :

4. 'आवारा मसीहा' को लिखने में प्रभाकर जी ने कितने वर्ष व्यतीत किए?

   (क) चौदह (ख) सौलह

   (ग) बारह (घ) इनमें से कोई नहीं।

5. लेखक के व्यक्तिगत जीवन के बारे में कुछ भी पूछना किसके समान है?

   (क) कोरे पन्ने (ख) कोरी किताब

   (ग) कोरे कागज (घ) इनमें से कोई नहीं।

6. शरतचंद्र की पत्नी कौन-सी बीमारी के प्रकोप से चल बसी?

   (क) कैंसर (ख) प्लेग

   (ग) ताऊन (घ) इनमें से कोई नहीं।

3. वास्तविकता का विशिष्ट ध्यान–लेखक को निष्पक्ष रूप से चरित नायक के विषय में लिखना चाहिए। इसमें वह अपने विचारों को भी पाठकों के सामने रखता हुआ चलता है। लेकिन ये विचार परिपक्व होने चाहिए। 'आवारा मसीहा' में श्री विष्णु प्रभाकर पाठकों को अपने उदात्त विचारों के दर्शन कराते हुए आगे बढ़ते हैं। लेखक ने इस विशिष्टता की ओर ध्यान देते हुए अपने विचार इन शब्दों में रखे हैं, "बंगला साहित्य में निश्चय ही उनकी अनेक प्रामाणिक जीवनियाँ प्रकाशित हुई होंगी। लेख, संस्मरण तो न जाने कितने लिखे गए होंगे। वहीं से सामग्री लेकर यही छोटी-सी जीवनी लिखी जा सकेगी। लेकिन खोज करने पर पता चला कि प्रामाणिक तो क्या, सही अर्थों में उसे जीवनी कह सकें, वैसी पुस्तक बंगला भाषा में कोई नहीं है।" ऐसी दशा में एक अनोखे किंतु महत्त्वपूर्ण व्यक्ति की जीवनी लिखना हँसी-खेल नहीं है। जब लेखक को सामग्री नहीं मिल पाती और वह कुछ लिखकर आगे बढ़ने की चेष्टा करता है तो वह सोचता है कि मैं यह कार्य पूर्ण कर भी पाऊँगा या नहीं। इसी बात को प्रभाकर जी ने अपने शब्दों में इस प्रकार व्यक्त किया है, "जीवनी लिखना निःसंदेह कठिन काम है। यूँ देखने में लगता है कि वह कुछ अद्‌भुत असाधारण घटनाओं और कुछ क्रांतिकारी विचारों का समुच्चय है। किसी के जीवन को समझने के लिए कुछ महत्त्वपूर्ण घटनाएँ आवश्यक अवश्य हैं, पर अनिवार्य नहीं। अनिवार्य है उन घटनाओं और विचारों के पीछे रहने वाले प्रेरणा स्रोत। जो दिखाई देता है, वह सत्य नहीं होता। सत्य को पाने के लिए गहरे उतरना होता है और उस उतरने में जहाँ आस्था का प्रकाशन है, वहीं तटस्थता का उससे भी अधिक है। यह सर्वोपरि अनिवार्यता है।"

श्री प्रभाकर ने वास्तविकता को जानने के लिए शरत बाबू के निवास स्थान की यात्रा की। उनसे संबंधित व्यक्तियों से बहुत-सी बातों को पूछा। इस प्रकार वास्तविकता का पता लगाने के लिए उन्होंने दूरी को भी निकट ही समझा। उन्होंने लिखा है कि शरत बाबू मदिरा पान करने में बहुत दक्ष थे। "वह देशी शराब से लेकर विदेशी शराब तक पीने में विशेष रुचि लेते थे। कभी-कभी तो सीधे बोतल में मुँह लगा लेते थे। वह शैंपेन में चावल डालकर खा लेते थे।" सचमुच शरत बाबू एक विलक्षण व्यक्ति थे। लेकिन वह कभी सार्वजनिक रूप से शराब या अफीम नहीं लेते थे। इसी वास्तविकता को श्री प्रभाकर जी ने अपने शब्दों में इस प्रकार लिखा है, "इस बात के हमारे सामने प्रमाण है कि शरत शराब पीते थे, लेकिन जैसा कि उनके बारे में प्रचलित हो गया था, वैसे पियक्कड़ वे कभी नहीं थे।" इतनी प्रामाणिकता के साथ जीवन के सूत्रों को जोड़ना प्रभाकर जी के ही बूते की बात थी।

4. प्रामाणिक सृजन–जीवनी लेखक का यह कर्त्तव्य है कि वह जोड़-तोड़ के द्वारा जीवनी साहित्य का सृजन न करे। हम जानते हैं कि सत्य कडुवा होता है और बहुत से जीवनी लेखक प्रसिद्ध नायक के चरित्र का निर्माण करते

नोट

समय उसे छिपाने की चेष्टा करते हैं परंतु प्रभाकर जी ने कड़ुवे सच को भी जीवनी में लिखा है। उन्होंने पाठकों के सामने चरित्र नायक की प्रामाणिक बातें ही प्रदर्शित की हैं। जीवनी लिखना उतना ही कठिन है जितना बिना दाढ़ वाले व्यक्ति के लिए कड़े चने चबाना क्योंकि जीवनी का कार्य जीवन की सही छाया होती है। उसमें सत्य और यथार्थ के ताने-बाने होते हैं। लेखक चरित नायक के चरित्र को इस ढंग से रखना चाहता है जिससे उसकी न तो प्रामाणिकता नष्ट हो और न ही उसकी ऐतिहासिकता पर आँच आए। इसके लिए लेखक को जीवनी से संबंधित सामग्री इकट्ठी करने के लिए कई यात्राएँ भी करनी पड़ती हैं। श्री विष्णु प्रभाकर जी ने 'आवारा मसीहा' से संबंधित सत्य का पता लगाने के लिए संदर्भित ग्रंथों से बहुत कुछ लिया है। इसकी प्रामाणिकता हेतु उन्होंने संदर्भ ग्रंथों की सूची हाशिए में दे दी है। इससे उनकी प्रामाणिकता पर संदेह नहीं किया जा सकता। कुछ बातों को उन्होंने पत्रों और डायरी के द्वारा प्राप्त किया है।

एक बार शरत बाबू ने प्रेमनाथ को 'चरित्रहीन' उपन्यास की पाण्डुलिपि भेजते हुए लिखा—"तुमने जो कुछ लिखा है वह तुम्हारी दृष्टि में सत्य हो सकता है पर जो आदमी मेस की दासी को आरंभ में ही ला खड़ा करने का साहस करता है वह जान-बूझकर ही करता है। तुम उसका अंत न जानकर उसको अर्थात् सावित्री को मेस की दासी करके देखते हो। प्रमथ, हीरे को काँच कहकर भूल करते हो। काउंट ताल्सताय का 'रेजेक्शन' पढ़ा है? उनकी यह पुस्तक एक साधारण वेश्या को लेकर है। हमारे देश में अभी तक उस कला को समझने का समय नहीं आया है। मैं अनावृत्त कहकर आर्ट से घृणा नहीं कर सकूँगा। लेकिन जिसमें यह ठीक अर्थों में नैतिक हो ऐसा उपसंहार करूँगा। इससे पहले यदि कोई इस विषय में जरा भी सतर्क कर देता यानि कहता कि दासी को लेकर शुरू करना ठीक नहीं है तो हो सकता है, मैं दूसरे रास्ते पर जाने की चेष्टा करता। अब बहुत देर हो चुकी है।

सचमुच इससे अधिक प्रामाणिक बात और क्या हो सकती है? लेखक ने यथार्थता का दिग्दर्शन कराने के लिए एक स्थान पर लिखा है, "मेरे बारे में जानना चाहते हो। संक्षेप में इस प्रकार है कि मैंने पढ़ा काफी है, पर लिखा क्या है, कुछ भी नहीं...जो पक गया है उसको बाँधें रखना दूसरों के लिए देखने में अच्छा लग सकता है, लेकिन जिस आदमी के शरीर में घाव है उसको कोई सुविधा नहीं होती। केवल सौंदर्य-सृष्टि के अतिरिक्त उपन्यास लेखक का और एक महत्त्वपूर्ण काम है। वह काम यदि घाव को देखना है तो वैसा करना ही होगा।"

इस प्रकार लेखक ने यही प्रमाणित किया है कि शरत बाबू ने हृदय से अपने साहित्यकार को प्राप्त कर लिया था।

> *टास्क* शरतचंद्र के निवास का चित्रण प्रभाकर जी ने किस प्रकार किया है?

5. रोचकभाषा और शैली—कोई भी साहित्यिक रचना भाषा के ढाँचे पर खड़ी की जाती है। भाषा एक ऐसा तत्त्व है जिसके बिना रचना का कार्य आगे कभी नहीं बढ़ सकता। परंतु भाषा ऐसी होनी चाहिए जो रोचक, भावपूर्ण, हृदयग्राही, सुगठित, मँजी-धुली, जन साधारण की समझ में आने वाली तथा सार्थक हो। इसलिए जीवनी साहित्य की भाषा जीवन को बुनते हुए चलती है—ऐसा विद्वानों का मत है। जीवनी चरित में जो धारा प्रवाह, गतिशीलता, विश्लेषण सूक्ष्मता और संश्लिष्टता होती है वह भाषा के द्वारा खुलकर सामने आती है। इसलिए जीवनी में लेखक को कहीं तो सामान्य चलताऊ शब्दों का प्रयोग करना पड़ता है और कहीं अलंकृत और मुहावरेदार भाषा शैली को लिखना पड़ता है। बिना ऐसा किए जीवनी का मतलब स्पष्ट नहीं हो पाता।

'आवारा मसीहा' की भाषा-शैली में ऊपर लिखे गुण मौजद हैं। प्रभाकर जी की भाषा सामान्य पाठक की समझ में आने वाली है। उसमें मुहावरे, सूक्तियाँ और अलंकार हैं। भाषा को बोधगम्य और सहज बनाने के लिए प्रभाकर जी ने कहीं-कहीं लंबे वाक्यों का सृजन किया है। इस दृष्टि से भाषा ऐसी भी है कि जिसके विषय में पाठक कुछ क्षण तक सोचता रह जाता है। भावात्मक और समीक्षात्मक भाषा शैली भी कुछ स्थानों पर देखने को मिलती है।

6. **कल्पना का सृजनात्मक प्रयोग**–जीवनी लेखक को इस बात का ध्यान रखना पड़ता है कि चरित नायक जीवित है या स्वर्गवासी। यदि वह गोलोकवासी हो चुका है तो उसके चरित्र को कल्पना का मिश्रण देते हुए इस ढंग से लिखना पड़ता है जिससे पता चले कि वह जो कुछ कहना चाहता है वह सामने ही घटित हो रहा है। अत: कभी-कभी लेखक को घटनाओं को नाटकीय रूप देने के लिए सुनी-सुनाई बातों को भी नमक-मिर्च मिलाकर लिखना पड़ जाता है। प्रभाकर जी ने 'आवारा मसीहा' में संवादों का उल्लेख करते समय अनेक स्थानों पर कल्पना को आगे रख दिया है। एक उदाहरण से यह बात स्पष्ट हो जाएगी–

और यह कहते-कहते उसके आँचल में से मूड़ी खोलकर खाने लगा। वह खाता रहा और धीरू पण्डित जी की बात सुनती रही। अचानक वह बोला, "पानी लाई हो?"

धीरू ने कहा, "पानी तो नहीं लाई।"

शरत बिगड़ कर बोला–"तो अब लाओ जाकर।"

धीरू को यह अच्छा नहीं लगा, कहा, "अब मैं नही जा सकती। तुम पी आओ।"

"मैं यहाँ से नहीं जा सकता। तुम्हीं जाकर ले आओ।"

धीरू नहीं उठी। शरत ने गुस्सा होकर कहा, "जाओ, मैं कह रहा हूँ न।"

धीरू अब भी चुप रही। तब शरत ने उसकी पीठ एक घूँसा मारा। कहा, "जाएगी की नहीं?"

धीरू रो पड़ी। एक दम उठते हुए बोली, "मैं अभी जाकर तुम्हारी माँ से सब कुछ कह दूँगी। यह भी कहूँगी कि तुम हुक्का पी रहे हो।"

"कह दे, जा मर।"

इस प्रकार लेखक ने जीवनी के प्रत्येक भाग में कल्पना का थोड़ा बहुत सहारा अवश्य लिया है। इसके साथ ही अन्य लेखकों के समान प्रभाकर जी की भी मान्यता है कि शरत बाबू ने 'श्रीकांत', 'देवदास' आदि उपन्यास अपने जीवन को ही आधारित मानकर लिखे हैं। लेकिन वास्तविकता क्या है, यह बात आज भी रहस्य के गर्भ में छिपी है क्योंकि साहित्यकारों के पास इसका कोई प्रमाण नहीं है कि ऐसा वास्तव में ही है। कुछ भी सत्य हो लेकिन प्रभाकर जी ने सत्य के साथ कल्पना का जो पुट दिया है वह सत्य-सा ही लगता है।

एक स्थान पर प्रफुल्लचंद्र राय और शरतचन्द्र के विषय में लेखक ने कल्पना का सहारा लेते हुए घटना को यों मोड़ दिया है–"सुनते ही प्रफुल्लचंद्र राय ने चश्मे के ऊपर से शरतचन्द्र को एक बार अच्छी तरह देखा। फिर उठकर तुरंत द्वार पर आए और अपने प्रिय शिष्यों के नाम ले-लेकर पुकारने लगे। क्षण भर में वहाँ एक छोटी-सी भीड़ जमा हो गई। उनको लेकर सेनापति की तरह वह आगे-आगे घर में घुसे। शरत बाबू की ओर उँगली से दिखाकर बोले, "देखते हो, उधर कौन बैठा है? ये हैं श्री शरतचन्द्र चट्टोपाध्याय। उधर देखो उनकी सब पुस्तकें हैं और आज स्वयं भी आए हैं," अच्छी तरह देखो। पैरों की धूल लो।"

उसके बाद शरतचन्द्र के पास आकर बैठ गए और एक अंतरंग मित्र की तरह बातें करने लगे। बोले, "आपकी पुस्तकें पढ़कर कितनी बार बातचीत करने की इच्छा हुई है। आज इतने दिन बाद वह पूरी हुई।"

उपर्युक्त कल्पना के द्वारा 'आवारा मसीहा' का जीवन चरित यथार्थ के साथ-साथ विकासोन्मुखी होता है। यदि विष्णु प्रभाकर निरे यथार्थ को लेकर जीवनी लिखने का कार्य करते तो भय था कि पुस्तक इतिहास बन जाती।

27.4 प्रभाकर जी के कृतित्व के आधार पर 'आवारा मसीहा' की समालोचना–

जीवनी लेखक को अन्य बहुत सी बातों पर भी ध्यान देना पड़ता है। जैसे, जीवनी लेखक को सूझ-बूझ वाला, तुरत-फुरत निर्णायक, कला को गहराई से समझने वाला तथा गंभीर को सरल बनाने वाला होना चाहिए। ये बातें ऐसी

नोट

हैं जो जीवनीकार के लिए अलग से मानी जाती हैं क्योंकि बिना इनके जीवनी के अनेक तत्व खुल नहीं पाते हैं और अधूरी बात पूर्ण नहीं हो पाती है। उदाहरण के लिए यदि कोई जीवनीकार किसी ऐसे जीवन चरित की रचना करना चाहता है जिसका नायक एक दार्शनिक रहा है किंतु वह रूढ़िवादी और अशिक्षित लोगों के बीच रहता था, तब बाद में ऐसे लोगों से जीवनी के सूत्र प्राप्त करना अत्यधिक कठिन कार्य होगा। परंतु यदि जीवनीकार अनपढ़ व्यक्तियों के मन को मोड़ना जानता है तो वह उनको अपना बनाकर सारे रहस्य हासिल कर सकता है। प्रभाकर जी को 'आवारा मसीहा' लिखते समय ऐसे ही कुछ लोगों से पाला पड़ा, किंतु वे जरा भी नहीं घबराए और उन्होंने अतिरिक्त विशेषताओं को अमल में लाकर जीवनी संबंधी अनेक बातें पता लगा ली। प्रभाकर जी ने चरित नायक की बहुत सी बातों को विशेष रूप से लिखा है जिनका यहाँ पर उल्लेख करना उचित होगा–

1. सामाजिक जीवन का वास्तविक दृष्टिकोण,
2. उन्नत विचारों का यथार्थ चित्रण,
3. वर्णन कुशलता की सजीवता,
4. वास्तविक नर-नारियों का वर्णन,
5. असफल प्रेम की पीड़ा का वर्णन।

1. सामाजिक जीवन का वास्तविक दृष्टिकोण–लेखक ने अपनी कृति 'आवारा मसीहा' में बंगाली समाज का वास्तविक चित्रण इस रूप में किया है जैसे सारी बातें हमारे सामने ही चलचित्र के समान घटित होती हुई चल रही हैं। उन्होंने लिखा है कि जो व्यक्ति समाज को उठाना चाहता था उसको बुरी दृष्टि से देखा जाता था। स्त्रियों का समाज में परंपरागत स्थान था। वे कदम-कदम पर अपमानित की जाती थीं। उनको घर से बाहर कहीं भी जाने की आज्ञा नहीं थी। यदि धोखे से उनके ऊपर पुरुष की छाया पड़ जाती या वे पर पुरुष से बातें करते हुए देख ली जातीं तो उनके चरित्र पर कलंक का दाग लग जाता था। कुलीन स्त्रियों के लिए ही समाज में 'कुछ' समझा जाता था। यदि स्त्री अकुलीन स्वीकार कर ली जाती तो वह पापिष्ठा थी, चरित्रहीन थी, दुराचारिणी थी। ऐसी बहुत-सी लड़कियाँ थीं जिनका विवाह धनाभाव के कारण नहीं हो पाता था, इस प्रकार धर्म के मुर्दों ने जिंदों को मुर्दा बना दिया था। ऐसे समाज का असली खेवनहारा कौन था? इसे कोई नहीं जानता था। प्रभाकर जी ने ऐसे समाज का चित्रण अपने दृष्टिकोण से सत्य और यथार्थ की छलनी से छानकर पाठकों के सामने रखा है।

इतना ही नहीं जो बंगाल गाने-बजाने, नृत्य आदि में कभी सारे भारत का गुरु था उसी बंगाल के समाज में नाचना-गाना क्लब या पार्टी में सम्मिलित होना सबकुछ बुरा समझा जाता था। जो स्त्री-पुरुष परंपरागत मर्यादा को भंग करते थे उन्हें समाज से बहिष्कृत करके प्रायश्चित करने के लिए छोड़ दिया जाता था। इसी डर के कारण लोग समुद्री यात्रा पर जाने से भी डरते थे क्योंकि समुद्री यात्रा करने वाले को भ्रष्ट समझा जाता था।

स्व-मूल्यांकन (Self-Assessment)

निम्नलिखित कथनों में सत्य अथवा असत्य की पहचान करें

(State Whether the following statements are True or False) :

7. जीवनी लिखना उतना ही कठिन है जितना बिना दाढ़ वाले व्यक्ति का कड़े चने चबाना।
8. शरतचंद्र ने अपनी प्रेमिका धीरू का नाम हिरण्यमयी रख दिया।
9. शरत जीवनभर असफल प्रेम की पीड़ा से तड़पते रहे।

2. उन्नत विचारों का यथार्थ चित्रण–प्रभाकर जी ने शरत की जीवनी को उन्नत विचारों से सजाया है। शरत चंद्र एक कुलीन पुरुष थे। उन्होंने विज्ञान की अनेक शाखाओं का अध्ययन किया था। इसलिए उनकी जीवनी में इस प्रकार के विचारों में संबंधित संकेतों का आना स्वाभाविक ही था। शरत के संबंध में उन्होंने लिखा है, "यह व्यंग्य भी हो सकता है और निपट सत्य भी, लेकिन इस बात के प्रमाण उपलब्ध हैं कि बचपन और यौवन में जिस प्रकार का

जीवन उन्हें जीना पड़ा था, उससे वे संतुष्ट नहीं थे। वे निचली गहराइयों से होकर ऊपर उठे। प्रारंभिक जीवन में जिस अभाव, अपमान और उपेक्षा में से गुजरना पड़ा उससे उनके कलाकार को तो बल मिला पर उनका जीवन टूट गया। जीवन संध्या में उन्हें सचमुच इस बात का दुख था कि उन्होंने आवारगी का जीवन बिताया। नाना प्रकार के वास्तविक और अवास्तविक प्रेम-प्रपंच किए?"

3. **वर्णन कुशलता की सजीवता**–प्रभाकर जी जीवनी के वर्णन विषय को रखने में भी सफल हुए हैं। उन्होंने बड़ी कुशलता के साथ सजीव चित्रण किया है। पात्रों के संवाद, उनके संबंध में विषय वर्णन आदि बड़ा आत्मिक और सजीव है। पढ़कर लगता है जैसे सबकुछ आँखों के सामने हो रहा है। एक उदाहरण से यह तथ्य स्पष्ट हो जाता है–

वहाँ एक संन्यासी रहते थे। इन्हें निस्संग उन्होंने स्वयं ही चिता निर्मित की और इस प्रकार शांति देवी का दाह संस्कार संपन्न हुआ।

शरत के शोक की कोई सीमा नहीं है। केशौर्य के उस असफल प्रेम के समान इस सदमें का भी उसके जीवन पर गहरा प्रभाव पड़ा। छूट गया अध्ययन, छूट गया लिखना और चित्रांकन, बस बावलों की तरह इधर-इधर घूमता रहा। इसी बीच में शिशु भी महामारी का शिकार बन गया था। वर्षों बाद अपने मित्र के युवा पुत्र की मृत्यु पर उसकी माँ से उसने दार्शनिक उपेक्षा से कहा था, "दीदी, तुम तो इतने दिन तक पुत्र-सुख देख चुकीं, मैं तो एक वर्ष भी उस सुख को नहीं भोग सका था।" पर उस दिन उसकी व्यथा का अंत नही था। सब कुछ लुटाकर एक बार फिर वह अकेला रह गया।

4. **वास्तविक नर-नारियों का वर्णन**–प्रभाकर जी ने 'आवारा मसीहा' में शरत के अतिरिक्त अन्य जितने भी नर-नारियों का वर्णन किया है सभी वास्तविक हैं उनके विचार, भाव, रूप आदि मनुष्यता के रस में पगे हुए हैं। एक उदाहरण से इस कथन को स्पष्ट किया जा सकता है–

तब एक दिन कृष्णदास ने कहा, "यदि आप मोक्षदा से विवाह नहीं करना चाहते तो मुझे कुछ धन दीजिए, जिससे मैं देश लौटकर इसका विवाह कर सकूँ।"

एक दिन लौटकर शरत ने मोक्षदा से कहा, "आज मैंने तुम्हारे लिए एक वर ढूँढ़ लिया है।"

मोक्षदा हठात शरत की ओर देखती रह गई। फिर उसकी आँखें भर आईं। बोली, "इस तरह की बातें करते हुए आपको अच्छा लगता है?"

शरत ने कहा, "ना-ना, मैं परिहास नहीं कर रहा और तुम्हें बुरा भी नहीं मानना चाहिए। आखिर तुम्हें विवाह तो करना ही है। जो व्यक्ति मैंने तुम्हारे लिए ढूँढ़ा है, वह तुम्हारा आदर करता है और तुम्हारे प्रति सदय भी है।"

मोक्षदा और भी विस्मित हो उठी। अटक-अटक कर उसने कहा, "मैं इस बारे में कुछ नहीं जानती। वह व्यक्ति कौन है? बिना जाने उसके बारे में क्या कह सकती हूँ?"

शरत ने शरारत से मुस्कुराते हुए कहा–"तुमने उसे देखा है।"

"क्या?"

"हाँ, बहुत बार देखा है।"

उसने मोक्षदा से कहा, "आज से तुम हिरणयमयी हुईं। तुम खरे सोने के समान हो। उस पर कभी भी किसी प्रकार का मैल नहीं जम सकता। तुम्हारे अंतर के उज्जवल रूप को मैंने देखा लिया है। वह मेरी शक्ति बनेगा।"

टास्क शरत बाबू की असफल प्रेम-पीड़ा का वर्णन अपने शब्दों में कीजिए।

नोट

5. असफल प्रेम की पीड़ा का वर्णन–प्रभाकर जी ने शरत बाबू की जीवनी में इस तथ्य को भी नहीं छिपाया है कि शरत बाबू प्रेम के मामले में असफल रहे और वे जीवन भर उसी की पीड़ा को ढोते रहे। यद्यपि वे बचपन से ही एक प्रेमी जीव थे। खेल-खेल में उनका प्रेम एक कन्या से हुआ। परंतु वे धीरू नामक उस कन्या का प्रेम युवावस्था में न पा सके। शरत ने अपनी प्रेमिका की चर्चा नहीं की है परंतु उनके उपन्यासों में प्रेम की जो पीड़ा पात्रों के द्वारा उभरकर आई है उससे सीधा-सादा अनुमान लगाया जा सकता है कि शरत जीवन भर असफल प्रेम की पीड़ा से तड़पते रहे। इस कसक और इस पीड़ा को श्री प्रभाकर जी ने बड़े मार्मिक शब्दों में व्यक्त किया है–

"सृजन के इन दिनों वह आकंठ प्रेम में डूबा हुआ था। इस आयु में हर युवक की आत्मा प्रेम के लिए तड़पती है। विचारों और भावनाओं का जो तूफान उस समय उसके मन और मस्तिष्क को आलोकित करता रहता है, उसकी कल्पना करना अत्यंत दुष्कर कार्य है। कितनी विभिन्नता, कैसा विरोधाभास। न सही हाड़-माँस की प्रेमिका, काल्पनिक प्रेमिका से तो यह भूमिका निभाई जा सकती है।"

"कुछ लोगों ने यह भी कहा कि शरत एक यहूदी लड़की से प्रेम करता है। कुछ लोगों ने उसे भिन्न-भिन्न लड़कियों से एकांत में बात करते या बाँसुरी बजाते भी देखा था, लेकिन आश्चर्य इस बात का था कि कोई दूसरे को इस स्थिति में नहीं दिखा सका।"

एक उदाहरण और–

"नीरदा कभी कल्पना लोक के एकांत में उसके पास ऐसे आती जैसे नींद में चल रही हो। उसे लिखते देखती रहती, बोलती नहीं शरत को यह मौन असह्य हो उठता, तब नीरदा एकाएक पास आ बैठती, कहती, सुनाओ क्या लिखा है?"

"शरत सुनाने लगता, उसकी श्वास जोर-जोर से चलने लगती। नीरदा मुस्कुराती हुई अपना मस्तक उस अभागे के कंधे पर रख देती और फिर उसे होश न रहता। उसी बेहोशी में बाँसुरी बजाकर वह उसे मुग्ध कर देता। कभी उससे लड़ पड़ता और उसे छोड़कर चल देता। फिर नीरदा उसकी तलाश में निकल पड़ती, उसे ढूँढ़ लाती, अपने घर ले जाकर सबसे अच्छी शैय्या पर उसे सुलाती। उसके लिए हुक्का तैयार करती, अपने हाथों से संदेशा बना कर खिलाती।"

कभी-कभी वह उससे कहती, "तुम्हारा मेरा कोई संबंध नहीं है। तुम कुछ भी तो नहीं करते।"

"मैं...मैं कृतिकार हूँ एक दिन..."

"कृतिकार!" वह हँस पड़ती, "कृतिकार भूखे मरते हैं। आवारा, चरित्रहीन, भला तुमसे मेरी शादी कैसे हो सकती है? कुल-मर्यादा का विचार भी तो..."

"कुल-मर्यादा? मैं कुल-मर्यादा में विश्वास नहीं करता। इस लोक-दिखाऊ मर्यादा के ऊपर निर्भर करके तुम्हें दो प्राणों का नाश नहीं करना चाहिए।"

इस प्रकार नीरदा के साथ मान-मनोबल का यह कार्यक्रम चलता रहा, लेकिन कब और कहाँ, यह कोई नहीं जानता था।

सारांश–सारांश रूप में यह कहा जा सकता है कि श्री प्रभाकर जी का जीवनी लेखन का कार्य बड़ा तर्क संगत, बड़ा सजीव, बड़ा चित्रमय, बड़ा यथार्थ और बड़ा कौशलमय है। लेखक की कला की यह उत्कृष्टता और यथार्थता पाठक को कुछ सोचने-समझने के लिए विवश कर देती है।

27.5 सारांश (Summary)

- 'आवारा मसीहा' श्री विष्णुप्रभाकर द्वारा लिखित बंगाल के प्रसिद्ध उपन्यासकार श्री शरतचन्द्र की प्रमाणिक

जीवनी है। इसमें प्रभाकर जी ने उस महान व्यक्ति के जीवन चरित का वर्णन किया है जो कुछ लोगों की दृष्टि में महामानव, मसीहा, देवता आदि था।

- जिस विशेष व्यक्ति का 'जीवन चरित' लिखना होता है उसे केंद्र में रखा जाता है। उससे संबंधित अन्य चरित आसपास घूमते हुए से दिखाई देते हैं।
- लेखक को चरित नायक के जीवन से संबंधित सभी जोड़-घटाओं को वास्तविक रूप में रखने का प्रयास करना चाहिए ताकि नायक के जीवन चरित को लोग निरी कपोल कल्पना न समझने लगें।
- जीवनी लेखक को सदैव सरल, सुबोध और रुचिकर भाषा-शैली का प्रयोग करना चाहिए क्योंकि इससे जीवनी जन साधारण के लिए भी पठनीय हो जाती है। जीवनी का यह एक सशक्त पक्ष है।
- जीवनी का नायक एक प्रकार से जीवित व्यक्ति होता है जो अपने जन्मकाल से लेकर मृत्यु पर्यंत तक ऐसे विशिष्ट कार्य करता है जो उसे महत्त्वपूर्ण व्यक्ति बना देते हैं। इसलिए लेखक उसका चरित्र-चित्रण नायक की तरह करता है न की देवलोक के देवता की तरह।
- शरत बाबू का जीवन भी बड़ी अनोखी घटनाओं से भरा हुआ है। वह एक ऐसे पिता की संतान थे जो नदी की धार की तरह इधर से उधर घूमता ही रहा। उनकी माता का जीवन पेट के लिए चून जुटाने, तन ढकने के लिए वस्त्र जुटाने और शरत बाबू के लिए फीस जुटाने में कटता था।
- जिस मकान में वे अपनी पत्नी के साथ रहते थे, उसमें अचानक आग लग गई। उन्होंने बड़े मनोयोग से 'चरित्रहीन' नामक उपन्यास लिखा था, वह आग में जल कर स्वाहा हो गया। लेकिन सचमुच वे बड़े जीवट के व्यक्ति थे। उन्होंने बड़े धैर्य से इस विष को पी लिया।
- शरतचन्द्र पढ़ने और लिखने दोनों कार्यों में रुचि लेते थे। यही कारण था कि उन्होंने एक विदेशी व्यक्ति से सैंकड़ों पुस्तकें थोड़े से रुपयों के बदले ले ली थीं फिर उन पुस्तकों को बड़े करीने से घर की अलमारियों में सजाया था।
- प्रभाकर जी की रचनाओं में वातावरण और परिस्थितियों का पूर्ण रूप से आकलन हुआ है। उन्होंने सामाजिक, आर्थिक, सांस्कृतिक और मनोवैज्ञानिक परिस्थितियों का सच्चा विश्लेषण किया है।
- लेखक चरित नायक के चरित्र को इस ढंग से रखना चाहता है जिससे उसकी न तो प्रामाणिकता नष्ट हो और न ही उसकी ऐतिहासिकता पर आँच आए। इसके लिए लेखक को जीवनी से संबंधित सामग्री इकट्ठी करने के लिए कई यात्राएँ भी करनी पड़ती हैं।
- लेखक ने अपनी कृति 'आवारा मसीहा' में बंगाली समाज का वास्तविक चित्रण इस रूप में किया है जैसे सारी बातें हमारे सामने ही चलचित्र के समान घटित होती हुई चल रही हैं।
- आज से तुम हिरणयमयी हुईं। तुम खरे सोने के समान हो। उस पर कभी भी किसी प्रकार का मैल नहीं जम सकता। तुम्हारे अंतर के उज्जवल रूप को मैंने देखा लिया है। वह मेरी शक्ति बनेगा।
- श्री प्रभाकर जी का जीवनी लेखन का कार्य बड़ा तर्क संगत, बड़ा सजीव, बड़ा चित्रमय, बड़ा यथार्थ और बड़ा कौशलमय है। यह उत्कृष्टता और यथार्थता पाठक को कुछ सोचने-समझने के लिए विवश कर देती है।

27.6 शब्दकोश (Keywords)

1. जगत – संसार
2. मंजूषा – पिटारी, पिंजरा
3. अतीत – बीता हुआ कल
4. स्मरण – याद
5. कंठ – गला
6. तमाम – सारे
7. किवदंतियाँ – कहावतें
8. जिज्ञासु – उत्सुक
9. अवतरित – पैदा
10. अधर – होंठ

नोट

11. तरूणी – जवान युवती
12. स्वाहा – खाक
13. मनोयोग – लगन।

27.7 अभ्यास प्रश्न (Review Questions)

1. प्रमुख तत्वों के आधार पर जीवनी कला की समीक्षा कीजिए।
2. 'शरत बाबू दया और धर्म की जीती-जागती मूर्ति थे।' इस कथन पर अपने विचार व्यक्त कीजिए।
3. 'आवारा मसीहा' की समालोचना अपने शब्दों में कीजिए।

उत्तर : स्व-मूल्यांकन (Answers : Self-Assessment)

1. मंजूषा
2. जन्म
3. निर्धारण
4. (क)
5. (ग)
6. (ख)
7. सत्य
8. असत्य
9. सत्य।

27.8 सन्दर्भ पुस्तकें (Further Readings)

पुस्तकें आवारा मसीहा–विष्णु प्रभाकर, राजकमल एंड संस, दिल्ली।

नोट

इकाई–28: 'आवारा मसीहा': कथावस्तु एवं उद्देश्य

अनुक्रमणिका (Contents)

उद्देश्य (Objectives)
प्रस्तावना (Introduction)
28.1 'आवारा मसीहा' का कथानक
28.2 'आवारा मसीहा' का साहित्यिक उद्देश्य
28.3 'आवारा मसीहा' के नामकरण की सार्थकता
28.4 सारांश (Summary)
28.5 शब्दकोश (Keywords)
28.6 अभ्यास प्रश्न (Review Questions)
28.7 सन्दर्भ पुस्तकें (Further Readings)

उद्देश्य (Objectives)

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् विद्यार्थी योग्य होंगे–

- 'आवारा मसीहा' के कथासार को समझने में;
- 'आवारा मसीहा' के साहित्यिक उद्देश्य पर प्रकाश डालने में;
- साहित्यिक उद्देश्य के रूपों की जानकारी प्राप्त करने में;
- 'आवारा मसीहा' के नामकरण की सार्थकता को जानने में।

प्रस्तावना (Introduction)

'आवारा मसीहा' नामक कृति बंगला साहित्य के लेखक श्री शरतचंद्र चट्टोपाध्याय के जीवन पर आधारित है। यह जीवनी श्री विष्णु प्रभाकर जी ने तीन पर्वों में विभाजित की है। पहला पर्व 'दिशाहारा' के नाम से लिखा गया है। इस पर्व में शरत बाबू के बचपन की घटनाओं को एक सूत्र में पिरोया गया है। इस काल में शरत बाबू की इच्छाएँ उनको कभी एक स्थान पर ठहरने ही नहीं देती हैं। वे जीवन को स्थायी बनाने के लिए इधर-उधर भटकते रहते हैं। दूसरे पर्व का नाम 'दिशा की खोज' है। इसमें शरत बाबू के साहित्यिक जीवन का दर्शन तथा जीविका की खोज में देश-विदेश में भटकने की बातों का वर्णन किया गया है। तीसरे और अंतिम पर्व का नाम 'दिशांत' है। इस पर्व में लेखक ने दर्शाया है कि कैसे वह उपन्यासकार के रूप में प्रतिष्ठित होते हैं और साथ ही सामाजिक क्षेत्र में क्या-क्या क्रिया-कलाप करते हैं इसी पर्व में शरत बाबू के स्वर्गवास की घटनाओं को भी सजाया गया है।

28.1 'आवारा मसीहा' का कथानक

प्रभाकर जी ने 'आवारा मसीहा' को निम्न तीन पर्वों में विभाजित किया है– दिशाहारा, दिशा की खोज एवं दिशान्त। तीनों पर्वों के आधार पर जीवनी का कथानक प्रस्तुत किया जा रहा है–

नोट

दिशाहारा: एक जीवन बाल्यकाल—इस पर्व में श्री विष्णु प्रभाकर ने शरतचंद्र के बाल्यकाल का चित्रण बड़े मार्मिक शब्दों में किया है। उनके पिता का नाम मोतीलाल चट्टोपाध्याय था। वे जनपद 'चौबीस परगना' के कांचड़ा पाड़ा के निकट मामूदपुर के निवासी थे। मोतीलाल जी बड़े निर्भीक और स्वच्छंद स्वभाव के व्यक्ति थे। उनका विवाह भागलपुर के केदारनाथ गंगोपाध्याय की दूसरी पुत्री भुवनमोहिनी से हुआ था। भुवनमोहिनी साधारण रूप-रंग की महिला थी। परंतु वे एक सच्चे हृदय की बात को स्वीकार करती थी। यही कारण था कि स्वतंत्र प्रकृति के साथ वे अपनी पटरी बैठाए रही। उनके पुत्र का जन्म 15 सितंबर 1876 ई. तद्नुसार 31 भाद्र 1283 बंगाब्द अश्विन कृष्णा द्वादशी, सम्वत् 1933 के दिन शुक्रवार की शाम को हुआ था। माता-पिता ने इनका नाम 'शरतचंद्र' रखा। शरत का बचपन देवानन्दपुर में व्यतीत हुआ। बचपन में उनको बहुत से कष्ट उठाने पड़े। घर में खाने-पीने की चीजों की कमी रहती थी। पिता एक स्थान पर ठहर कर जीवन यापन के लिए कोई व्यापार या धंधा नहीं करते थे। उनको इधर-उधर भ्रमण करने में विशेष आनंद आता था। कभी एक कार्य को उन्होंने मन लगा कर नहीं किया। यदि कहीं किसी नौकरी में लग भी गए तो अधिक दिनों तक वे उसमें रहे ही नहीं। जरा-सा मन उचाट खाया कि नौकरी छोड़कर भाग खड़े हुए। इसलिए उनका अधिकांश समय ससुराल में ही व्यतीत हुआ। ऐसी स्थिति में शरत को भी इधर से उधर भटकना पड़ता था।

शरत को पाँच वर्ष की आयु में पाठशाला में भर्ती कराया गया। चूँकि शरत बचपन से ही नटखट स्वभाव का था इसलिए वह स्कूल में भी कोई न कोई शरारत करता रहता था। कभी वह पंडित जी की चिलम में तंबाकू की जगह पत्थर भर देता तो कभी हुक्के में पानी की जगह कुछ और भर देता। उसकी इन हरकतों से पंडित जी प्राय: उससे नाराज रहते थे। एक बार उसने ऐसी ही शरारत की। पंडित जी ने शरारती का नाम पूछा तो एक लड़के ने मार के डर से शरत का नाम बता दिया। शरत को मालूम पड़ा कि उसे दंड मिलेगा तो वह कक्षा से भाग खड़ा हुआ। इस बात को पंडित जी ने उसके पिता से कहा। नाना ने उसकी पिटाई की। इस प्रकार शरत का बचपन तरह-तरह की शरारतें करने में बीतता था। इतने पर भी शरत पढ़ने-लिखने में अन्य विद्यार्थियों की तुलना में तेज था। इसलिए अध्यापकगण उसकी बहुत सी शैतानियों को अनदेखा कर देते थे।

उसका एक परम मित्र था—पंडित का बेटा काशीनाथ। दोनों बालक जब तब सड़क पर घूमते हुए दिखाई दे जाते थे। पास के जंगल या झाड़ियों में तरह-तरह की शैतानियाँ करते हुए गाँव-कस्बे आदि के लोग उनको देखते रहते थे। शरत की कक्षा में एक लड़की पढ़ती थी। शरत उसके साथ भी शरारतें करता हुआ घूमता था। प्राय: दोनों जरा-जरा सी बात पर लड़-झगड़ पड़ते थे। दोनों बालक नदी या तालाब के किनारे मछली पकड़ते और पानी में गिट्टियाँ फेंकते हुए दिखाई देते थे। कभी नाव लेकर नदी में सैर करने निकल जाते थे और कभी बागों से फल चुराते थे। पतंगबाजी के भी ये शौकीन थे। इन सब कर्मों में बालिका भी शरत का साथ देती थी। उस लड़की का नाम धीरू था। धीरू एक प्रकार से शरत के सुख-दु:ख की साथिन हो गई थी। एक दिन की बात है, शरत ने एक लड़के को ईंट मार दी। इसके बाद वह भाग कर एक स्थान पर छिप गया। इस बात का पता धीरू को था। अत: वह खोजती हुई उसके पास जा पहुँची। उसने देखा कि शरत हुक्का गुड़गुड़ा रहा है। धीरू ने धमकी दी कि वह इस बात को उसकी माता से कह देगी। यह सुनकर शरत क्रुद्ध हो उठा। उसने धीरू की पीठ पर एक धौल जमा दी। धीरू रोती हुई घर चली गई। शरत की माँ को पता चला तो उसने शरत की पिटाई कर दी। इतना सबकुछ होने के बाद भी दोनों की मित्रता ज्यों की त्यों बनी रही।

धीरे-धीरे दिन और रात बीतते जा रहे थे। लेकिन दोनों बालक-बालिका के घूमने-फिरने में कोई अंतर नहीं आया। वे दोनों सारा दिन धूप में इधर-उधर घूमने और बातें करने में बिता दिया करते थे। शाम को जब वे अपने-अपने घर लौटते तो उनकी पीठ पूजा होती थी। इसके बावजूद भी मछली मारने और नाव में बैठ कर सैर करने का काम कभी बंद नहीं होता था। शरत का कंठ मीठा था अत: वह अपनी मित्र मंडली तथा चेलों के बीच गाना भी गा लिया करता था। एक बार शरत ने एक नाव पकड़ी और वह उसे खेता हुआ कृष्णपुर गाँव तक चला गया। यह गाँव गंगा नदी के किनारे से लगभग तीन-चार मील दूर था। वह गाँव में पहुँच कर कीर्तन मंडली में सम्मिलित हो गया। रात

हो जाने के कारण उसका लौटना नहीं हो सका। दूसरे दिन उसके पिता ढूँढते-ढूँढते कृष्णपुर पहुँचे और उसे घर लिवाकर ले आए। इसी मध्य उसके पिता को एक नौकरी मिल गई। शरत अपने पिता के साथ देवानन्दपुर आ गया। यहाँ शरत ने मछली पकड़ने का कार्य तेजी से शुरू कर दिया।

साहस और निडरता का प्रतीक–शरत बहुत साहसी और निडर बालक था। एक बार मुहल्ले का एक व्यक्ति नयन बागदी उसकी दादी के पास आया। वह एक अच्छी सी गाय खरीदना चाहता था। अत: वह दादी से पाँच रुपए माँगने लगा। वह गाय बसंतपुर से लाने का इच्छुक था। शरत की दादी दयालु स्त्री थी। अत: उसने पाँच रुपए नयन बागदी को दे दिए। शरत से किसी ने कहा कि बसंतपुर में मछली पकड़ने की छपि बनाने के लिए अच्छे बाँस मिलते हैं। शरत ने सोचा कि बाँस लेना चाहिए। अत: वह चुपके से बिना किसी से पूछे कहे नयन बागदी के पीछे-पीछे चल दिया। एक मील चलने के उपरांत नयन बागदी ने देखा कि उसके पीछे-पीछे शरत चला आ रहा है तो वह ताज्जुब में पड़ गया। उसने शरत से कहा कि उसे लौट जाना चाहिए क्योंकि रास्ते बहुत खराब हैं। परंतु शरत पर बागदी के समझाने का कोई प्रभाव नहीं पड़ा। वह आगे जाना चाहता था। अब नयन बागदी लौट पड़ा और घर तक छोड़ने आया। दादी ने शरत को न जाने के लिए कहा, परंतु शरत नहीं माना। वह दादी से झूठ बोलकर कि पोखर में नहाने जा रहा है, घर से निकल पड़ा। इसके बाद वह नदी के किनारे-किनारे आम और कटहल के बागों को पार करता हुआ दो-ढाई मील तक दौड़ता हुआ चला गया। वह एक चौराहे पर जाकर खड़ा हो गया। कुछ देर के बाद नयन बागदी भी वहाँ आ पहुँचा। विवश होकर वह शरत को अपने साथ ले चलने के लिए राजी हो गया। इस प्रकार शरत निडरता और साहस का प्रतीक था।

व्यक्तित्व का निखार–शरत ऐसा नहीं था जिसे सुंदर कहा जा सकता। हाँ उसकी आँखें अवश्य सुंदर थीं। लेकिन उसमें परोपकारिता के गुण विद्यमान थे। साहस के कार्यों में वह सब से पहले कूद कर आगे आ जाता था। वह प्राय: आधी रात को घर से निकल जाता और गंगा किनारे या किसी ताल से मछलियाँ पकड़ने का कार्य बखूबी करता था। वह पढ़ने से घबराता तो नहीं था परंतु भीतर से जाने क्यों उसका ह्रदय बुझा हुआ था।

यद्यपि वह नाना-नानी के पास रहता था लेकिन तरह-तरह की शरारतों से अपने को नहीं बचा पाता था। एक दिन की बात है–शरत कुछ लड़कों और लड़कियों के साथ खेल रहा था। अचानक उसके सामने नाना आकर खड़े हो गए। उन्होंने उससे पूछा, क्या उसने पाठ याद किया? इस पर उसने पंडित जी की बीमारी का बहाना बनाया। यह सुनकर नाना जी पंडित जी को देखने पहुँचे। शरत ने सोचा कि मुसीबत टल गई। अत: वह सब के साथ पुन: खेलने लगा। इस प्रकार उसे एक अच्छा खिलाड़ी कहा जा सकता है। परंतु उसका स्वभाव बड़ा विचित्र था क्योंकि वह जीती हुई वस्तुएँ अपने पास नहीं रखता था। दिनभर में जितनी गोलियाँ और लट्टू वह जीतता, शाम को वह सबकुछ अपने संगी-साथियों में बाँट देता। इस तरह उसे बाँटने में विशेष आनंद आता था। लेकिन इस देने में उसे अभिमान छू तक नहीं गया था।

वह प्राय: नदी के किनारे एकांत में बैठ जाता और तरह-तरह की बातें सोचता रहता। वह मन ही मन कहता कि मैं जीवनभर सौंदर्य की उपासना करूँगा। मैं जीवनभर अन्याय के विरुद्ध लड़ूँगा। मैं सदैव यश के काम की ओर कदम बढ़ाऊँगा। सब जानते थे कि पढ़ने-लिखने से वह जी चुराता है परंतु वह कुशाग्र बुद्धि का बालक था। जब वह छोटा ही था तो उसने अपने स्कूल के वाचनालय की वे सारी पुस्तकें पढ़ डाली थीं जिन्हें महान् लेखकों ने लिखा था।

एक दिन उसके अध्यापक अघोरनाथ गंगा स्नान के लिए जा रहे थे। शरत उनके पीछे-पीछे चल रहा था। इसी समय उसके कान में किसी स्त्री के रोने का स्वर सुनाई दिया। वह समझ गया कि कौन रो रहा है? मास्टर साहब ने पूछा कि कौन हो सकता है? शरत ने तुरंत उत्तर दिया कि इस स्त्री का स्वामी चक्षुहीन है। यह स्त्री कुछ लोगों के घरों में बरतन माँजती है तथा अन्य काम करती है और उसके बदले में उसे जो कुछ मिलता है उससे अपना और अपने पति का पेट पालती है। कल रात उसके अंधे पति का स्वर्गवास हो गया। इस कारण यह रो रही है। दुखी लोग बड़ों को दिखाने के लिए जोर-जोर से नहीं रोते। उनका रोना दुख से विदीर्ण प्राणों का क्रन्दन होता है।

नोट

टास्क शरतचंद्र के व्यक्तित्व पर प्रकाश डालिए।

मास्टर मुशाई शरत के शब्द सुनकर चकित रह गए। क्या वास्तव में ऐसा ही है जैसा शरत कह रहा है? वे सोच भी नहीं सकते थे कि शरत इतने पते की बात बता सकता है। सचमुच छोटी सी आयु में ही शरत ने रोने का इतना सूक्ष्म विश्लेषण किया था। मुशाई ने अपने मित्र से कहा तो मित्र ने उत्तर दिया कि, "जो रूदन के विभिन्न रूपों को पहचानता है, वह साधारण बालक नहीं है। बड़ा होकर वह निश्चय ही मनस्तत्त्व के व्यापार में प्रसिद्ध होगा।" लेकिन देखा जाए तो शरत की प्रतिभा को समझने वाले लोग कम थे। शरत तो शुरू से ही बंकिमचंद्र और गुरु रवीन्द्रनाथ टैगोर से प्रभावित थे। जब वे बड़े हुए तो उन्होंने कहा, "मैं पुश्किन से बहुत कुछ सीख सकता हूँ। वह मेरे पिता हैं। परंतु रवीन्द्रनाथ मेरे गुरु हैं।"

शरत बाबू अपने नाना जी के घर अधिक समय तक नहीं रह सके। चूँकि उनके पिता जी किसी एक स्थान पर ठहर कर कार्य नहीं करते थे। इसलिए शरत के सामने भी विवशता मुँह बाकर खड़ी हो जाती थी। असल में बात यह थी कि शरत के पिता स्वाभिमानी और स्वतंत्र विचारों के व्यक्ति थे। अत: वे ससुराल की रोटी तोड़ना बुरा समझते थे। इस कारण उन्होंने शरत सहित भागलपुर छोड़ दिया और देवानन्दपुर आ गए। इस तरह बार-बार इधर से उधर जाने के कारण शरत की पढ़ाई-लिखाई ठीक प्रकार से नहीं हो सकी। जब बालक को पढ़ने-लिखने में व्यस्त नहीं रखा जाता है तो वह कुसंगत में पड़ जाता है या आवारा हो जाता है। शरत ने भी आवारा जीवन को जैसे अपना-सा लिया। इस जीवन में रहकर वे जीवन से संबंधित अनुभवों को अर्जित करने लगे। कहानी-किस्से सुनाने में उन्हें विशेष आनंद आने लगा। वह किसी भी सुनी-सुनाई बात को गढ़कर इस ढंग से रखते थे कि लोग उसे सच मान लेते थे। इसके साथ ही किसी बात की तह तक पहुँचने की उनमे अपूर्व क्षमता थी। वह एक चीज एक बार देख लेते तो उसकी खोज में तुरंत जुट जाते और जब तक उसके विषय में सारी बातें जान नहीं लेते तब तक चैन से नहीं बैठते थे।

पिता जी का मन देवानन्दपुर में नहीं लगा तो वे पुन: भागलपुर आ गए। बेचारे शरत को भी उनके साथ आना पड़ा। यहाँ आकर उन्हें पुन: स्कूल को जाना पड़ा। भागलपुर के इस स्कूल में शरत के बहुत से नये मित्रों में राजू नामक बालक अंतरंग मित्र हो गया। अब दोनों मिलकर एक ओर तरह-तरह की शरारतें करते तो दूसरी ओर परोपकार के कार्यों में भी थोड़ा-बहुत समय देते। एक बार माघ मास में बंगला पाठशाला के पंडित जी की पत्नी की मृत्यु हो गई। पंडित जी स्वयं भी बीमार रहा करते थे। उनकी पत्नी एक छोटे बच्चे को छोड़कर मरी थी। पंडित जी के सामने यह बड़ी भारी समस्या आकर खड़ी हो गई। पत्नी का दाह-संस्कार कैसे किया जाए? स्कूल के प्रधानाध्यापक को पता चला तो वे पंडित जी की पत्नी के दाह-संस्कार का प्रबंध करने लगे। शरत और राजू इस कार्य के लिए आगे आ गए। उस दिन अमावस्या की रात थी। आकाश में काले-काले बादल मँडरा रहे थे। शमशान भी दूर था। सब लोग पंडित जी की पत्नी की अर्थी लेकर चले तो पानी बरसने लगा। धीरे-धीरे वर्षा तेज हो गई। उस जमाने में लालटेनों का आविष्कार नहीं हुआ था। अत: छेदों वाली हांडी में दीपक रखकर काम चलाया जाता था। थोड़ी दूर और जाने पर वर्षा बहुत तेज हो गई। देखते-देखते चारों ओर पानी ही पानी दिखाई देने लगा। रास्ते और घाट पानी से भर गए। लाश भी भीगने के कारण भारी हो गई। ऐसी दशा में क्या किया जाए? सब यही एक बात सोचने लगे। अंत में लाश को एक इमली के पेड़ के नीचे रख दिया गया। इसी समय ओलों ने भी अपनी माया को दर्शाना शुरू कर दिया।

चारों ओर जल ही जल दिखाई दे रहा था। राजू ने कहा कि आप सब लोग यहाँ से चले जाएँ क्योंकि पानी ने सैलाब का रूप धारण कर लिया तो यहाँ से निकलना कठिन हो जाएगा। मैं शव की देखभाल कर रहा हूँ। सब लोग किसी सुरक्षित स्थान पर चले गए। जब वर्षा रुकी तो वे लोग वापस आ गए। उन्होंने देखा कि शव पेड़ के नीचे रखा हुआ है लेकिन राजू का कहीं पता नहीं है। इसी समय उन लोगों ने देखा कि लाश हिल रही है। सब लोग डर के मारे

काँपने लगे। तभी राजू जो लाश के पास लेट गया था और ओलों से अपनी रक्षा कर रहा था, यकायक उठकर खड़ा हो गया। राजू के इस साहस को देखकर सब लोग चकित रह गए।

शरत बाबू के समय में गाँवों में चोरी-डकैती आए दिन होती रहती थी। इसलिए लोग जान-माल की रक्षा के लिए साथ में बंदूकें लेकर सोते थे। एक रात की बात है, शरत अपने मामा के कमरे में खिड़की के मार्ग से घुस गए। खटपट हुई तो मामा ने अपनी बंदूक उठा ली। वे बंदूक चलाना चाहते थे कि शरत ने कहा गोली मत चलाना मैं हूँ शरत। तुम्हें डराने के लिए मैं खिड़की के रास्ते से भीतर घुस आया था। मामा के चेहरे पर हँसी और भय के मिले-जुले भाव तैर गए।

स्व-मूल्यांकन (Self-Assessment)

रिक्त स्थानों की पूर्ति करें (Fill in the blanks) :

1. शरतचन्द्र के पिता का नाम ················ चट्टोपाध्याय था।
2. शरत का जन्म ················ की शाम को हुआ था।
3. पंडित का बेटा ················ शरतचन्द्र का परम मित्र था।

शरत बाबू वास्तव में बड़े साहसी बालक थे। अँधेरी रात में वे कहीं भी आ-जा सकते थे। उन्हें साँप और बिच्छू से बिल्कुल डर नहीं लगता था। इसके साथ-साथ वे उपन्यास और कहानी भी लिखते रहते थे। लेकिन स्वभाव से लजालु होने के कारण वह किसी से भी नहीं कहते थे कि मैं लिखता भी हूँ। उनकी माता बड़ी दयालु प्रकृति की थी। वे उधार माँग कर उनकी फीस जुटाती थी ताकि शरत अपनी पढ़ाई कर सके। पहले साल विज्ञान की परीक्षा होने वाली थी। शरत अपने मामा के बच्चों को पढ़ाते थे। इसके बदले में मामा कभी-कभी उनकी फीस भर दिया करते थे। उस रात शरत ने मामा के बच्चों को बुलाकर कहा कि कल मेरी परीक्षा है। तुम लोग मुझे रात को डिस्टर्ब मत करना। मैं रात भर पढ़ाई करूँगा और सचमुच वे लालटेन के प्रकाश में अपनी पढ़ाई करने लगे। दूसरे दिन विद्यार्थीगण उनके कमरे में पहुँच गए और देखा कि लालटेल जल रहा है शरत अध्ययन में डूबे हुए हैं।। लड़कों को देखकर शरत यकायक बिगड़ पड़े, मैंने कहा था कि मुझे परेशान मत करना, कल मेरी परीक्षा है लेकिन तुम लोग फिर भी आ गए। बालक बोले, यह बात तो कल की थी। आज तो इस समय सवेरा हो गया है। शरत आश्चर्य में डूबकर उठे। उन्होंने खिड़की खोली, देखा कि सचमुच सवेरा हो गया है और धूप कमरे में आ गई है।

इसके बाद शरत ने विज्ञान की परीक्षा दी। उनके उत्तर देखकर अध्यापकगण चकित रह गए क्योंकि उन्होंने सोचा था कि शरत सही उत्तर नहीं दे पाएँगे। ये जो उत्तर आए हैं ये शायद नकल द्वारा दिए गए है। अत: उन्होंने फिर एक नया प्रश्न-पत्र बनाया और कहा, प्रश्नों के उत्तर दो। इस बार शरत ने प्रश्नों को एक बार पढ़ा और मौखिक रूप से उनके उत्तर दे दिए। उनकी असाधारण स्मरण शक्ति को देखकर अध्यापकों को बड़ी प्रसन्नता हुई। पढ़ने-लिखने के साथ-साथ शरत का जीवन राजू के साथ बैठकों में भी बीतता था। इसी समय शरत की माता की मृत्यु हो गई। शरत को इसका बहुत दुख हुआ क्योंकि शरत ने अभी तक जितनी भी शिक्षा ग्रहण की थी वह अपनी माता के प्रयास के कारण ही की थी। अब उनको पिता के साथ रहना था। इसलिए वे समझ गए कि कदाचित् आगे वे कालेज की शिक्षा ग्रहण नहीं कर सकेंगे। इस बार उन्हें भागलपुर का पानी फिर पीना पड़ा। उनके नाना के घर का वातावरण बंगाली समाज के नियमों के अंतर्गत बँधा हुआ था। परंतु शरत थे उच्छृंखल प्रवृत्ति के। इसलिए वे घरेलू नियमों के अनुसार नहीं चल सकते थे। इसलिए वे दुखी रहने लगे। किसी कारणवश वे परीक्षा में भी नहीं बैठ सके।

माता की मृत्यु हो चुकी थी। पिता के पास इतना पैसा नहीं था कि उनकी पढ़ाई हो सकती। इस कारण उनकी पढ़ाई-लिखाई बंद हो गई। अब वे साहित्य लेखन में जुट गए। साथ ही वे नाटक मंडली में भी जाते और गाने-बजाने में भी रुचि लेते थे। कई बार उन्होंने अपने मधुर कंठ से गाने भी सुनाए थे। एक बार वह अपने मित्र के साथ गाना गाने के लिए गए। गाने का कार्यक्रम किसी जमींदार के घर पर था। रात भर लोग शराब पीकर झूमते रहे। फिर सब वहीं सो गए। सुबह को शरत के मित्र ने कहा कि मेरे पास जमींदार के तीन हजार रुपए थे। इस समय नहीं मिल

नोट

रहे हैं। इतना कह कर मित्र बुरी तरह रोने लगा। इसी समय वह स्त्री आई जिसने रात में नाच गाना किया था। वह डाँटती हुई बोली कि तुम्हें रात को इतने रुपए लेकर नहीं आना चाहिए था। कई गुण्डे तुम्हारे रुपए छीनने की ताक में थे। इसलिए मैंने तुम्हारे पैसे निकाल लिए थे। मुझे रात भर इसी चिंता के कारण नींद नहीं आई। इतना कहकर उसने सारा धन शरत के मित्र को वापस कर दिया। यह देखकर शरत आश्चर्यचकित रह गए। वे सोचने लगे कि लोग वेश्याओं को कुलटा, पापिन, दुष्टा, दुराचारिणी और न जाने क्या-क्या समझते हैं पर वे भी ईमानदार और चरित्रवान् हो सकती हैं। इस घटना ने शरत के जीवन पर स्थायी प्रभाव डाला और अब उनके हृदय में नारी के प्रति दूसरे विचार उत्पन्न होने लगे। वे सोचने लगे, नारी श्रद्धा की पात्र है, नारी कलंक का पिटारा नहीं है, नारी का सम्मान किया जाना चाहिए। यदि नारी के गुणों को समझा जाए तो वह मनुष्य को कुछ का कुछ बना सकती है। आगे चलकर 'देवदास' उपन्यास में चंद्रमुखी जैसी वेश्या का चरित्र-चित्रण इसी अनुभूति का एक नमूना है।

शरत के पिता जी संथाल परगना में सैटलमेंट के काम में नौकरी करते थे। वहाँ स्थायी मकानों का अभाव था अत: शिविरों में रहना पड़ता था। यहाँ शरत बाबू गढ़-गढ़कर कहानी सुनाते और अपने मधुर कंठ से गाने भी गाते थे। एक दिन वहाँ के राजकुमार ने एक गोष्ठी सजाई और शरत से आग्रह किया कि वह गाना सुनाए। शरत ने इतना सुंदर और मीठा गाना गाया कि सब लोग उनकी प्रशंसा करने लगे। गाने के साथ-साथ शरत बाबू साहित्यिक गोष्ठियों में भी हिस्सा लेते थे। इन गोष्ठियों में उनके मामा सुरेंद्रनाथ, सौरिन्द्र कुमार और निरुपमा देवी होती थी। गोष्ठी का कार्यक्रम बड़े अच्छे ढंग से चलता था। साहित्यकार एक दूसरे को अपनी-अपनी कहानियाँ सुनाते थे। नाना जी को शरत की बातें पसंद नहीं थीं अत: शरत बाबू अपने साथियों के साथ किसी खण्डहर या एकांत में जाकर यह कार्य संपन्न करते थे। कभी-कभी गंगा किनारे और शमशान में भी 'जमात' जम जाती थी। वहाँ शरत, उनका साथी राजू और दो-चार अन्य लड़के तंबाकू पीते और साहित्य की चर्चा करते थे। ऐसी बहुत सी बातें हैं जो जीवन से संबंधित तो हैं लेकिन उनके बारे में इन लड़कों को कुछ पता था और न लेखक ही इनकी गहराई में पहुँच पाया है। कुछ बातें जरूर ऐसी थीं जिन्हें जानबूझकर ये लोग इधर-उधर अफवाह के रूप में जीवन का आनंद लूटने के लिए फैलाते रहते थे। शरत कभी अपने मामा से कहते कि एक लड़की को चाहता हूँ। लेकिन मामा जब इसका पता लगाते तो पता चलता कि शरत झूठ बोल रहे हैं क्योंकि उन्होंने शरत को प्रेमिका सहित कभी नहीं देखा। इतना पता चला है कि शरत अपने मित्र सौरिन्द्र की विधवा बहिन के प्रति आकर्षित हुए थे। लेकिन उससे विवाह आदि की चर्चा कभी नहीं चली। सौरिन्द्र की बहिन निरुपमा कवियत्री थी। निरुपमा शरत की कहानियाँ पढ़कर उनकी प्रशंसा करती थी और शरत निरूपमा की कविताओं को बड़े मन से पढ़ते थे।

शरत का सांसारिक रिश्ता–शरत के पिता को कीमती पत्थर संग्रह करने का शौक था। वे उन पत्थरों को प्राण-ठिकाने रखते थे। एक दिन शरत को कुछ रुपयों की जरूरत थी। अत: उन्होंने उन पत्थरों में से कुछ लेकर बेच दिए। पूछने पर उन्होंने जैसी बात थी सच-सच बता दी। यह सुनकर उनके पिता जी आग बबूला हो गए और उन्होंने शरत को खूब डाँटा। शरत को यह बात लग गई और वे उसी समय घर छोड़कर चले गए। लेकिन गहराई से देखने पर पता चलता है कि शरत ने घर अन्य कारणों से भी छोड़ा था। मामा के घर में एक दाय-माँ थी जिसे बच्चों की बाल-सुलभ शरारतें जरा भी नहीं भाती थीं। वह बालकों को बात-बात पर डाँटती रहती थी। पिता जी को जब पता चलता कि दाय-माँ ने शरत को खूब डाँटा-फटकारा है तो उससे कुछ न कहकर शरत के विरुद्ध ही बोलते थे। पिता के इस व्यवहार से शरत का हृदय टूट गया और वह सोचने लगे, जिस परिवार में सच की हार है, सम्मान का भाव नहीं है, उस घर को छोड़ देना चाहिए। घर से निकलकर वह घूमते-घामते एक आम के बाग में आए। वहाँ उन्होंने कुछ संयासियों को देखा और उनसे प्रार्थना की कि उन्हें भी चरणों में स्थान दे दिया जाए। पहले तो सन्यासियों ने उनकी बात पर ध्यान नहीं दिया। लेकिन काफी अनुनय-विनय करने के पश्चात् संयासियों ने उन्हें रहने की आज्ञा दे दी। शरत ने गले में रुद्राक्ष की माला डाल ली और संयासी बाबा के शिष्य बन गए। लेकिन इस स्थान पर भी अधिक दिन तक उनका मन नहीं लगा। दूसरे, संयासियों की मंडली में उन्होंने बहुत सी कमजोरियाँ भी देखीं। अत: एक दिन वह वहाँ से चल दिए। मार्ग में एक श्रद्धालु परिवार के साथ लग गए। अचानक शरत बाबू का शरीर बुखार

से तपने लगा। वे लोग शरत को वहीं छोड़कर आगे चले गए। एक बिहारी व्यक्ति ने उन्हें देखकर दया की। वे उन्हें स्टेशन पर ले आए। एक बंगाली ने उन्हें कुछ दवाएँ तथा दूध पीने को दिया।

धीरे-धीरे शरत बाबू स्वस्थ हो गए। अब उन्होंने अपने घर एक पत्र डाला। एक संयासी को पत्र लिखते देखकर सब समझ गए कि शरत पढ़े-लिखे हैं। उन्होंने लोगों से अपनी जाति छिपाई और कहा कि मैं बिहार का रहने वाला हूँ। लेकिन लोग उनकी बातचीत से पहचान गए कि बंगाली हैं। शरत बाबू इन लोगों के बीच रहकर गीत भी गाते थे। वे कहानी भी सुना दिया करते थे। इन सब बातों के कारण बहुत से लोग शरत बाबू के मित्र बन गए। अब वे पुन: बहुत से नये-नये मित्रों की गोष्ठी में आ गए। इस नई गोष्ठी में एक धनी साहू भी था। शरत साहू के घर पर रहने लगे। साहू उन्हें वेश्याओं के कोठे पर ले जाता और उन्हें मंदिरा भी पिलाता। गृहस्वामी शरत के इन कार्यों से नाराज हो गया। लेकिन शरत पर इसका कोई प्रभाव नहीं हुआ। कुछ दिनों बाद शरत को पिता की मृत्यु का समाचार मिला। अब शरत को भागलपुर जाना पड़ा। भागलपुर में पहुँचने पर काफी देर हो गई। इसलिए शरत बाबू को पिता के अंतिम दर्शन नहीं हो सके। उनके पिता का दाह संस्कार उनके मामा मणीन्द्रनाथ ने किया। अब शरत के सामने नई समस्या आकर खड़ी हो गई। उनके ऊपर तीन छोटे भाइयों और एक बहिन का दायित्व आ गया। सब से छोटी बहन का नाम सुशीला था। उसे मकान मालकिन ने अपने पास रख लिया क्योंकि वह उसे अपनी बेटी की तरह प्यार करती थी। छोटे भाई का नाम प्रभास था और वह 11-12 वर्ष की आयु का साधारण सा दीखने वाला लड़का था। शरत बाबू उसे अपने साथ आसनसोल ले गए। वहाँ अपने एक मित्र के पास रेलवे से संबंधित काम सीखने के लिए छोड़ दिया। अब उनके पास प्रकाश था। उसे शरत ने अपने नाना-नानी के पास छोड़ दिया। उन लोगों ने प्रकाश को पढ़ाने-लिखाने का भार अपने ऊपर ले लिया।

टास्क शरत बाबू ने संसार के साथ कैसा रिश्ता निभाया?

समय बड़ी तेजी से बीतता चला जा रहा था। शरत बाबू नाना-नानी के घर अधिक समय तक न रहकर अपनी बड़ी विवाहित बहिन के घर चले गए। लेकिन शरत ने अपनी पुरानी आदतों पर लगाम नहीं लगाई थी। वह शराब भी पीते थे और इधर-उधर सैर-सपाटे के लिए भी निकल जाते थे। इसलिए बहन ने एक दिन उनसे कह दिया, शरत यदि तुम अपनी आदतों को बदलना नहीं चाहते तो हमारा घर छोड़ दो। शरत ने मन ही मन विचार बनाया कि मुझे बर्मा (ब्रह्मा) चला जाना चाहिए। इसी बीच उन्होंने अपना 'चरित्रहीन' उपन्यास पूरा कर लिया था। एक दिन एक मित्र ने उनसे कहा कि 'कुन्तलीन' पुरस्कार के लिए तुम्हें एक अच्छी सी कहानी लिखनी चाहिए। यदि तुम्हारी कहानी प्रथम आई तो तुम्हें 25 रुपए इनाम मिलेगा। अन्य मित्रों ने भी उनसे कहानी लिखने का अनुरोध किया। अंत में शरत ने कहानी लिखना स्वीकार कर लिया। उन्होंने 'मंदिर' नामक कहानी लिखी। प्रकाशक ने उस कहानी को ले लिया। कहानी पर अपना नाम न लिखकर उन्होंने अपने मामा सुरेंद्रनाथ का नाम दिया। प्रतियोगिता का फल कुछ दिनों बाद प्रकाशित हुआ। शरत बाबू की कहानी प्रथम आई। इनाम के रूप में उनको 25 रुपयों का पुरस्कार मिला। सब लोग सुरेंद्रनाथ को बधाई पत्र भेजने लगे। लेकिन सुरेंद्रनाथ ने लोगों को जवाब दिया कि बधाई का असली अधिकारी शरत है क्योंकि यह कहानी उन्होंने ही मेरे नाम से लिखी है। शरत इस समय रंगून जाने की तैयारी कर रहे थे। उनके पास इतने पैसे नहीं थे कि वे किराया दे सकें। एक सज्जन से उधार पैसे लेकर वह सुबह चार बजे भवानीपुर स्टेशन पहुँचे। इस प्रकार शरत बाबू एक नई दिशा की खोज में बर्मा की ओर चले गए। सचमुच शरत बाबू का शुरू का जीवन अनेक कठिनाइयों, उतार-चढ़ाव और कष्टों से भरा हुआ था। लेकिन वे बड़े साहसी थे। उनकी तुलना अब्राहम लिंकन से की जाती है क्योंकि अध्ययन, मनन, प्रेम की कथा, विनोदप्रियता, लेखन कला आदि की दृष्टि से वह वास्तव में दूसरे लिंकन थे।

रंगून का साहित्यिक जीवन–उस जमाने में जहाज की यात्रा द्वारा बर्मा पहुँचा जा सकता था। अत: चार दिन की

नोट

यात्रा के बाद शरत बाबू बर्मा पहुँचे। इस बीच उनका जहाज एक तूफान में फँस गया था और वह बड़ी कठिनाई में से गुजरकर निकल सके थे। मार्ग में उनको अन्य कठिनाइयों का भी सामना करना पड़ा। यह सब दूसरी कहानी है। खैर, किसी प्रकार शरत बाबू के पाँव बर्मा में पड़े। बर्मा की सरकार प्लेग के भय से तरह-तरह की व्यवस्था करती रहती थी क्योंकि उन दिनों बर्मा में प्लेग का रोग बड़ी जल्दी फैल जाता था। शहर से लगभग आठ मील दूर रेत में कुछ झोपड़ियाँ बना दी गई थीं। बाहर से आने वाले यात्रियों को आठ-दस दिन तक इन्हीं झोपड़ियों में रहना पड़ता था जिससे उनकी शारीरिक परीक्षा की जा सके। शरत बाबू ने वे आठ-दस दिन रो-रोकर काटे। फिर वह अपने एक मौसा अघोरनाथ चटर्जी के घर पहुँचे। उस समय शरत की हालत बहुत खराब हो रही थी, लगता था जैसे वह एक भिखारी है। उनकी माता ने काफी देर बाद उन्हें पहचाना। शरत बाबू ने उन्हें सारी घटनाएँ बताई।

बाबू अघोरनाथ रंगून के एक प्रसिद्ध वकील थे। उनके पास धन की कमी नहीं थी। उनके मौसा ने उनसे कहा कि तुम चाहो तो बर्मी भाषा सीखकर कानून की परीक्षा पास कर सकते हो। इस बीच मैं तुम्हें कहीं न कहीं नौकरी भी दिला दूँगा। शरत मन ही मन बड़े खुश हुए। उन्होंने अपने मौसा के चरण छूकर उन्हें आश्वासन दिया कि जैसा वे कहेंगे वह वैसा ही करेंगे। लेकिन भविष्य के गर्भ में तो कुछ और ही छिपा हुआ था। लगभग तीन मास बाद उनके मौसा को निमोनिया का प्रकोप हो गया। शरत ने रात-रात भर जागकर उनकी तीमारदारी की। लेकिन उनके मौसा बच नहीं सके। अब शरत बाबू पुन: निराश्रित हो गए। इसी समय उनको गुप्त रोग लग गया। मौसी ने उनको अपने घर में रखने से मना कर दिया। ऐसी दशा में शरत बाबू दर-दर की ठोकरें खाने वाले बन गए। जैसे-तैसे कुछ लोगों की सहायता से उनका जीवन कटने लगा। कुछ दिनों के उपरांत मणीन्द्रनाथ मित्र के सहयोग से उनको एक्जीक्यूटिव इंजीनियर के कार्यालय में एक नौकरी मिल गई। धीरे-धीरे मणीन्द्रनाथ के प्रयास से उनको एक आफिस में स्थायी रूप से, एक दूसरी नौकरी का अवसर मिला। वहाँ उस समय शरत बाबू को पचास रुपए मासिक वेतन मिलता था। तीन माह बाद उनका वेतन पैंसठ रुपए कर दिया गया। अब उनकी नाव रेत में न चलकर पानी में चलने लगी।

शरत ने रंगून में एक साहित्यिक सभा में जाना आरंभ कर दिया था। उस सभा में लोग बड़े आराम से गाते-बजाते थे। शरत से भी गाना गाने का आग्रह किया गया किंतु शरत कभी भी भीड़-भाड़ के सामने नहीं गा सके जब कभी उन्हें गाना पड़ा तो परदे के पीछे से गाते थे। अनेक बार लोगों की इच्छा हुई कि कम से कम उस गायक के दर्शन तो कर लिए जाएँ जो इतने मधुर कंठ से गाता है परंतु जब शरत को इस भेद का ज्ञान होता तो वे नंगे पाँव ही वहाँ से रफूचक्कर हो जाते थे। उन दिनों रंगून में प्लेग की महामारी ने भयंकर रूप धारण कर लिया था। शरत के संगी-साथियों ने शहर छोड़ दिया और वे किसी सुरक्षित स्थान पर जाकर रहने लगे थे, किंतु शरत महामारी के भय से जरा भी नहीं घबराये। वह अन्य बाबुओं के मेस में ठिकाना खोज कर आराम से रहने लगे। वहाँ अन्य लोग भी उनकी सहायता पाने के लिए आ जाते थे। शरत सदैव नीची श्रेणी के लोगों के साथ रहने में विशेष आनंद का अनुभव करते थे और जब कभी उन लोगों को दुखी देखते तो तुरंत उनका दुख बाँटने के लिए आ जाते थे।

जब कभी उन्हें लोगों के दुख बंटाने से अवकाश मिलता तो वे पुस्तकें लिखने में जुट जाते। उन्होंने अवकाश क्षणों का सदुपयोग विदेशी पुस्तकों को पढ़ने में भी किया। अनेक असहाय और पतित स्त्रियों की सहायता के लिए भी उन्होंने बहुत से कार्य किए। एक बार उनका साक्षात्कार ऐसे व्यक्ति से हुआ जो अच्छा मिस्त्री था। उसकी एक युवती कन्या थी। उसने एक बूढ़े से कुछ धन उधार ले लिया था। किंतु वह उधार का धन चुकाने में असमर्थ था। अंत में वह उस बूढ़े के साथ अपनी पुत्री का विवाह करने के लिए तैयार हो गया। शरत ने उसे धन देने का वचन दिया। इसके बावजूद भी मिस्त्री अपनी कन्या के विवाह के लिए चिंतित दीख रहा था। शरत बड़े दयालु थे। अत: वे उससे बोले-"मैं तुम्हारी बेटी से विवाह करने के लिए तैयार हूँ।" शरत ने उस कन्या से विवाह किया। वह लड़की शरत बाबू के पास ही रहने लगी। एक वर्ष के बाद उस युवती से एक लड़का हुआ। इस प्रकार शरत लगभग दो वर्ष तक अपनी पत्नी के साथ सुखपूर्वक रहे। लेकिन भगवान् की मर्जी तो दूसरी थी। उसी समय बर्मा में दुबारा प्लेग फैला और उनकी पत्नी मौत के मुँह में चली गई। शरत को बहुत दु:ख हुआ। उनके दु:ख की कोई सीमा नहीं थी। वे बालकों के समान रुदन करने लगे। दु:ख ने उनके मन और हृदय में घर कर लिया। अत: उनकी पढ़ाई-लिखाई का कार्य रुक गया। वे सोचने लगे कि भगवान् ने उनके लिए किसी संगिनी को गढ़ा ही नहीं है क्या? कुछ दिनों शांत

रहने के पश्चात् वे चित्रकला में अपना समय बिताने लगे। इसी समय बंगाल वासियों को उनकी सुध आई। वे उनके साहित्य की चर्चा करने लगे। रवींद्रनाथ तथा अन्य साहित्यकारों की इच्छा थी कि शरत बाबू रंगून छोड़कर अपनी भूमि बंगाल में आ जाएँ क्योंकि वे लोग ऐसा सोचने लगे थे कि शरत बाबू बंगाल के लिए बेजोड़ साहित्य का सृजन कर सकते हैं। इस धारा के बलवती होने के कारण शरत के मित्र सौरिन्द्र नाथ ने उनसे आज्ञा लिए बगैर उनकी कुछ रचनाएँ छपवा दीं। जब शरत बाबू को इस बात का पता चला तो वे मन ही मन क्रुद्ध हुए लेकिन प्रकट रूप में उन्होंने किसी से कुछ नहीं कहा।

स्व-मूल्यांकन (Self-Assessment)

बहुविकल्पीय प्रश्न (Multiple Choice Questions) :

4. शरतचन्द्र का जन्म कब हुआ था?

   (क) 13 जून 1875 (ख) 14 नवम्बर 1877

   (ग) 15 सितंबर 1876 (घ) इनमें से कोई नहीं।

5. प्रभाकर जी ने शरतचन्द्र की जीवनी को कितने पर्वों में विभाजित किया है?

   (क) चार (ख) तीन

   (ग) दो (घ) इनमें से कोई नहीं।

6. शरतचन्द्र की माता का क्या नाम था?

   (क) भुवनमोहिनी (ख) दयामोहिनी

   (ग) जगमोहिनी (घ) इनमें से कोई नहीं।

साहित्यिक जीवन का श्रेष्ठ बिन्दु–एक दिन एक मित्र ने उनसे अधिकारी नामक एक सज्जन व्यक्ति की पुत्री से विवाह करने के लिए कहा परंतु शरत इसके लिए तैयार नहीं हुए। इसी समय उनको ज्वर हो गया। अधिकारी की सयानी बेटी मोक्षदा ने उनकी खूब सेवा की। धीरे-धीरे शरत का ज्वर शांत हुआ। तब शरत ने अचानक एक दिन देखा कि मोक्षदा उनके सिरहाने बैठी है। मोक्षदा के पिता कृष्णदास बोले, यदि तुम्हारी इच्छा मेरी बेटी से विवाह करने की नहीं है तो मुझे कुछ रुपए दे दो ताकि मैं अपने देश वापस चला जाऊँ और वहाँ जाकर अपनी पुत्री का विवाह कर सकूँ। शरत के पास धनाभाव था। अत: वे कृष्णदास को रुपए नहीं दे सके। ऐसी दशा में अधिकारी महोदय अपनी कन्या को शरत के पास छोड़कर चुपचाप कलकत्ता चले गए। शरत को मोक्षदा को विवशत: आश्रय देना पड़ा। मोक्षदा जीवनभर शरत बाबू के साथ रही। वह शरत की गृहस्थी को बड़े अच्छे ढंग से चलाती थी।

शरत बाबू 'चरित्रहीन' नामक उपन्यास लगभग पूरा कर चुके थे। 'नारी इतिहास' प्रबंध पूरा करने में जुटे हुए थे कि अचानक एक संध्या को उनके घर को आग ने भक्षण करना शुरू कर दिया। इस आग में शरत बाबू की महीनों की मेहनत स्वाहा हो गई। दोनों पाण्डुलिपियों के जल जाने के कारण शरत को बहुत दुख हुआ। इसी समय वे अनुभव करने लगे कि हृदय रोग ने उनको घेर लिया है। लेकिन उन्होंने इस तरफ ध्यान नहीं दिया। एक बार उन्होंने चाय का एक स्टाल भी लगाया परंतु उसमें सफलता नहीं मिली।

थोड़े दिनों के बाद शरत बाबू कलकत्ता लौट आए और कहानियाँ लिखकर छपवाने लगे। उनकी कहानियाँ प्राय: 'यमुना' नामक पत्रिका में प्रकाशित होती थीं। यहाँ कलकत्ता के लोगों ने शरत बाबू का हृदय से स्वागत किया। कलकत्ता में शरत एक किराए के मकान में रहते थे। उन्होंने अपने भाई-बहिनों की भी सुधि ली। वे चाहते थे कि सारा परिवार एक स्थान पर संगठित होकर रहे। उनकी इस भावना से ज्ञात होता है कि वे संयुक्त परिवार के पक्षपाती हो गए थे। इसीलिए उन्होंने अपने पितृ परिवार को संगठित करने में कोई कसर नहीं छोड़ी।

कुछ ही समय में बुरे दिन छँट गए और अच्छे दिन आ गए। उनकी कृतियाँ लोगों की जुबान पर चढ़ने लगीं। 'श्रीकांत'

नोट

(प्रथम पर्व), 'देवदास', 'चरित्रहीन', 'काशीनाथ' आदि पुस्तकों के प्रकाशित होते ही शरत बाबू उच्च कोटि के लेखक माने जाने लगे। पत्र-पत्रिकाओं में भी उनकी कहानियाँ छपती रहीं। 'श्रीकांत' (द्वितीयपर्व), 'स्वामी', 'दत्ता', 'गृहदाह', 'आमार आशय' आदि रचनाओं ने बंग समाज में धूम मचा दी। लोग उनकी रचनाओं की प्रशंसा करने लगे। इसी समय शरत के जीवन में एक नई विचारधारा ने जन्म लिया। देश में राजनीतिक उथल-पुथल होने लगी। शरत बाबू के जीवन में भी एक नयी लहर उत्पन्न हुई। वे सोचने लगे कि राजनीति की इस क्रांति में मुझे भी भाग लेना चाहिए। अत: वह देश में गरम दल की ओर झुक गए। वे लोकमान्य तिलक को सच्चे हृदय से स्वीकार करते थे। वे कहते थे कि यदि सभी देशवासी मिलकर अंग्रेजों के विरुद्ध हो जाएँ तो अंग्रेजों को चौबीस घंटे में देश छोड़ देना पड़ेगा। शरत बाबू को चरखा चलाने में विशेष आनंद आता था। वह काफी महीन सूत कातना जानते थे। परंतु उनकी धारणा थी कि चरखा चलाने से 'स्वराज्य' कभी नहीं मिल सकता। स्वराज्य पाने के लिए लोगों को त्याग करना पड़ेगा। वे रवींद्रनाथ ठाकुर की भी प्रशंसा करते थे। परंतु उन्हें इस बात का दुख था कि रवींद्रनाथ ने मजदूरों के हित में असहयोग आन्दोलन का साथ नहीं दिया। इस कारण उन्होंने रवींद्रनाथ के प्रति कुछ नाराजगी भी दिखाई वैसे शरत बाबू ने सक्रिय राजनीति में कभी भाग नहीं लिया क्योंकि उनका मन एक स्थान पर लगता ही नहीं था। वे सत्याग्रह के पक्षपाती भी नहीं थे क्योंकि कारागार में रहकर उनकी स्वतंत्रता का हरण हो सकता था। दूसरे जेल में तंबाकू खाने की व्यवस्था भी नहीं हो सकती थी। इस प्रकार शरत बाबू अपनी कहानियों में ही राजनीति की बातें लिख दिया करते थे जिसका सीधा प्रभाव जनता पर पड़ता भी था।

शरत बाबू चाहते थे कि देश से जमींदारी प्रथा समाप्त हो क्योंकि जमींदार कृषकों का शोषण करते थे जिसे देखकर शरत बाबू का हृदय रो उठता था। उन्होंने जमींदार प्रथा के विरोध में आवाज उठाई थी और कहा था कि एक दिन यह प्रथा अवश्य समाप्त होगी। उनकी भविष्यवाणी सत्य निकली। भारत जब स्वतंत्र हुआ तो कांग्रेस सरकार ने सबसे पहले जमींदारी प्रथा को समाप्त किया। उन्होंने 'पाथेर दाबी' नामक उपन्यास लिखा जिसमें उन्होंने क्रांतिकारियों के लिए नये संदेश देने की बात कही। वे क्रांतिकारियों के विचारों का आदर करते थे। उनका कहना था भारत में स्वराज्य की प्राप्ति क्रांति ही ला सकती है, अहिंसा नहीं। यद्यपि वे गाँधी जी के विचारों के विरोधी नहीं थे, तथापि उन्हें क्रांतिकारी विचारों से एक प्रकार का आनंद प्राप्त होता था। वे गुप्त रूप से क्रांतिकारियों की सहायता भी करते थे। एक दिन उन्हें देशबंधु के देहावसान का समाचार मिला। इस समाचार ने उनको बहुत दु:ख पहुँचाया। लेकिन अब उनका मन राजनीति से उचाट खाने लगा। उधर अंग्रेज सरकार के पास 'पाथेर दाबी' पुस्तक की सूचना पहुँची तो उसने इनकी पुस्तक को जब्त कर लिया। लेकिन इस समय तक 'पाथेर दाबी' बंगाल के घर-घर में पहुँच चुकी थी। जब पुलिस उनके घर में तलाशी के लिए आई तो उसे 'पाथेर दाबी' की एक प्रति भी नहीं मिली। इससे सिद्ध होता है कि उनके विचारों को लोग सुनना चाहते थे।

शरत बाबू पशु-पक्षियों से बहुत प्रेम करते थे। उनके पास एक कुत्ता था जिसे वह बहुत प्यार करते थे। पक्षियों को वे प्राय: दाना डाल दिया करते थे और जब तरह-तरह के पक्षी दानों पर चोंच मारते थे तो उन्हें बड़ा आनंद आता था। साहित्य के क्षेत्र में उनकी कहानियाँ 'यमुना' नामक पत्रिका में छपती रहती थीं। अवकाश के क्षणों का सदुपयोग करके वे उपन्यास भी लिखते रहते थे। उन्होंने अपनी पुस्तकों की पाण्डुलिपियाँ अपने मित्रों को दे दीं। मित्रों ने उन्हें प्रकाशित करवाया। प्रकाशकों ने पारिश्रमिक के रूप में उनको काफी पैसा दिया लेकिन वे उस धन से दूसरों की सहायता कर देते थे। इस तरह उनकी जेब सदा खाली रहती थी।

बुढ़ापे में उनको कैंसर हो गया था परंतु वे अपने रोगों की कभी चिंता नहीं करते थे और कैंसर के कारण भी उन्होंने अपने मन को छोटा नहीं किया। जब कभी लोग बीमारी के बारे में पूछते तो कह देते कि रोग अपना काम करता है और मुझे अपना काम करना चाहिए। शरीर है तो बीमारी भी आएगी ही। डाक्टरों ने उनसे तंबाकू छोड़ने के लिए आग्रह किया लेकिन वे अंतिम समय तक तंबाकू खाते रहे। कुछ लोगों की इच्छा थी कि वह कैंसर का ऑपरेशन करा लें। परंतु उनके पास धनाभाव था। फिर भी कुछ मित्रों ने उनको एक अस्पताल में भर्ती करा दिया।

28.2 'आवारा मसीहा' का साहित्यिक उद्देश्य

प्रत्येक साहित्यिक रचना के पीछे कोई न कोई उद्देश्य अवश्य रहता है। यह उद्देश्य प्रत्यक्ष भी हो सकता है और अप्रत्यक्ष भी। प्रत्यक्ष उद्देश्य से साहित्य का 'कला पक्ष' प्रबल होता है जबकि अप्रत्यक्ष उद्देश्य से साहित्य को एक 'विकसित धारा' मिलती है। यह हम भली–भाँति जानते हैं कि जब किसी रचना का निर्माण किसी उद्देश्य से किया जाता है तो उसकी स्वाभाविक आत्मा मर जाती है, उसमें सजीवता के भाव देखने को नहीं मिल पाते हैं। ऐसा लगता है जैसे रचना का शरीर दिखावटी शब्द–वस्त्रों से ढक दिया गया है। सच में सोचा जाए तो 'अपनेपन' और 'सजीवता' के विचार तभी आते हैं जब रचना का ढाँचा स्वतंत्र रूप से खड़ा किया जाता है। इसके साथ ही यदि उसमें उद्देश्य के छींटे भी बीच–बीच में लग जाएँ तो रचना की आत्मा की शक्ति घटती नहीं है। श्री प्रभाकर जी ने साहित्य–समुद्र की गहराई को छाना है। उन्होंने साहित्य की अनेक विधाओं पर अपनी पैनी लेखनी से वार किया है। इसलिए इनकी रचना 'आवारा मसीहा' में व्यक्ति और समाज की वास्तविक धारा के साथ झरने–सी शैली और मनचली शब्द सुन्दरता का सृजन हुआ है। साथ ही लेखक ने समाज के प्रत्येक अंग को छूने का प्रयास भी किया है।

'आवारा मसीहा' बंगला भाषा के विश्व प्रसिद्ध साहित्यकार शरतचन्द्र की जीवनी है। इसे अध्ययन कर पाठक इस परिणाम पर पहुँचता है कि एक लुप्त जीवन चरित को बुनने में प्रभाकर जी ने कोई कसर नहीं उठा रखी है। जीवन चरित्र को इतने उदात्त स्थल पर शायद ही कोई लेखक पहुँचा सकता था, जितना प्रभाकर जी ने पहुँचाया है। मेरी दृष्टि में यह चाटुकारिता न होकर वास्तविकता है। इस प्रकार प्रभाकर जी ने अलभ्य, असंतुलित, लुप्त और अप्रकाशित घटनाओं को एक सूत्र में बाँध कर उन्हें प्रकाशित किया है। इसी का मूल्यांकन करना लेखक का मुख्य उद्देश्य है। लेखक ने शरत बाबू के जीवन से संबंधित ऐसी घटनाओं का वर्णन किया है जिनके विषय में किसी को भी कुछ बोध नहीं था। इन घटनाओं के द्वारा उन्होंने तत्कालीन समाज की स्थितियों, संबंधित राजनीतिक, आर्थिक और धार्मिक समस्याओं आदि पर भी विचार किया है। यद्यपि लेखक द्वारा इन बातों को समझाने का उद्देश्य गौण है तथापि जीवन चरित में इनकी भी परमावश्यकता है। उन्होंने स्वयं कहा है कि मैंने शरतचन्द्र जी की जीवनी को अधिक से अधिक प्रामाणिक बनाने के लिए अनेकानेक विवरणों का उपयोग किया है। उन्होंने श्री उमाप्रसाद मुकर्जी को हृदय से धन्यवाद दिया क्योंकि उनके द्वारा लेखक को शरत बाबू के जीवन की अनेक बातें प्राप्त हुई है। इस प्रकार 'आवारा मसीहा' का अध्ययन करके यह बात स्पष्ट हो जाती है कि शरत बाबू के जीवन चरित को लिखने का उद्देश्य एक 'प्रामाणिक ग्रंथ' की रचना करना था।

टास्क 'आवारा मसीहा' के उद्देश्य पर अपने विचार प्रस्तुत कीजिए।

शरतचन्द्र का पर्यटनशील जीवन–शरत बाबू ने अपने जीवन का अधिकांश समय इधर–उधर भ्रमण करने में ही बिताया। इसी कारण उन्होंने जो कुछ लिखा उसमें उनकी पर्यटनशीलता देखने को मिलती है। लेखक ने उनके घुमक्कड़ जीवन की घटनाओं को एकत्र कर जिस ग्रंथ की रचना की उसका सार्थक नाम 'आवारा मसीहा' रखा। संभवत: लेखक ने उनके निरुद्देश्य पर्यटन के कारण इस नाम में कुछ अच्छाई ढूँढी हो। शरत बाबू ने वस्तुत: अपना समय आवारा व्यक्ति के समान ही व्यतीत किया और जो दुख देखा, उसके निवारणार्थ अनेक कष्ट सहन किए, उसके पीछे जीवन के उद्देश्य को पाने की संभावना ही झलकती है। लेखक का जिन लोगों से साक्षात्कार हुआ, प्राय: सभी ने यही कहा कि शरत बाबू स्वच्छ रहने में विश्वास रखते थे। इसी कारण उनके जीवन से किसी ने न तो कोई प्रेरणा ली और न उसे प्रतिदर्श माना।

बहुत से लोगों ने शरत बाबू को एक साहित्यकार स्वीकार नहीं किया क्योंकि उन लोगों ने उनमें एक साहित्यकार के गुणों का अभाव ही देखा। प्रभाकर जी ने पुस्तक की भूमिका में लिखा है, "छोड़ा भी, क्या था उसके जीवन

नोट

में जो तुम पाठकों को देना चाहोगे। नितान्त स्वच्छंद व्यक्ति का जीवन क्या किसी के लिए अनुकरणीय हो सकता है?" अर्थात् लेखक के कथनानुसार कोई भी उनके विषय में कुछ नहीं बताना चाहता था क्योंकि शायद उनका जीवन अनुकरणीय नहीं था। रंगून में वे शायद एक स्त्री के साथ रहकर जीवन व्यतीत करते थे और शराब पीने के आदी थे। लोग उनको अच्छा व्यक्ति न समझकर एक नीच व्यक्ति समझते थे। हो सकता है उनके समाज के विरुद्ध आचरणों को देखकर लोगों ने यह धारणा बना ली हो। लेकिन प्रभाकर जी ने उनके आवारापन में भी बहुत-सी अच्छाइयों को ढूँढ़ना चाहा—"शायद कमल कीचड़ में खिलता है और देखने वालों का मन मोह लेता है।"

शरत बाबू ने बचपन से ही आवारापन में अपना समय व्यतीत किया। उनकी शिक्षा-दीक्षा भी बंगाल के किसी एक नगर में नहीं हो सकी। पिता को एक स्थान पर टिककर रहने की आदत नहीं थी या फिर समाज ने उनको एक जगह टिकने ही नहीं दिया। इस कारण कभी तो शरत बाबू को नाना जी के घर रहना पड़ा तो कभी देवानंदपुर जाना पड़ा। इधर-उधर बार-बार आने-जाने के कारण उनकी पढ़ाई में बाधा पड़ती रही। उन्होंने एक मित्र मंडली बना ली थी जिसके साथ वे निर्जन स्थानों पर बड़े अटपटे खेल खेला करते थे। परंतु एकांत स्थानों पर अधिकांश समय बिताने के कारण शरत बाबू को प्रकृति को देखने-समझने का अच्छा अवसर प्राप्त हुआ। इस प्रकार जीवनभर वह अफीम, शराब और वेश्या आदि के संपर्क में रहें। लेकिन इन सबके पीछे इतने दीवाने कभी नहीं देखे गए कि उनका जीवन नारकीय हो जाता। उन्होंने अपने उपन्यासों में प्रकृति की सुंदरता का इतना सुंदर चित्रण किया कि कोई मद्यपी व्यक्ति कैसे कर सकता है? अत: यह कहा जा सकता है कि प्रकृति की सूक्ष्मता को समझने की उनकी दृष्टि अत्यधिक पैनी थी और इसी पैनेपन का इजहार उन्होंने अपने प्रत्येक उपन्यास में किया है। न जाने कितनी बार उन्होंने फूल और काँटों की वार्तालाप सुनी। न जाने कितनी बार उन्होंने गंगा के किनारे बैठकर 'गंगा मैय्या' की लहरों से ऐसे बातें की जैसे प्राय: बच्चे हरेक से बातें करते हुए दिखाई देते हैं। उन्होंने जैसे स्वयं से कहा—"मैं सूर्य, गंगा और हिमालय को साक्षी करके प्रतिज्ञा करता हूँ कि जीवनभर सौंदर्य की उपासना करूँगा। मैं जीवनभर अन्याय के विरुद्ध लड़ूँगा और मैं कभी छोटा काम नहीं करूँगा।" शायद इसी भ्रमणशील जीवन के फलस्वरूप उनके हृदय में घुमक्कड़पन के विचारों ने जन्म ले लिया हो। सचमुच बचपन से ही वे बंग समाज में व्याप्त अन्याय को देखकर काँप उठते थे। वे चाहते थे कि दुखी मानव जाति के कष्टों का निराकरण किया जाए तथा एक संघर्षशील जीवन को अपनाया जाए।

प्रभाकर जी ने लिखा है, "देवानन्दपुर में रहते हुए एक बार लंबी यात्रा पर निकल पड़ा। इस बार उसका गन्तव्य स्थान था पुरी। यहाँ जाना अकारण और अनायास ही नहीं था।"

चलते-चलते उसका शरीर थक गया। न कहीं खाने की व्यवस्था, न ठहरने की सुख-सुविधा, परिणाम यह हुआ कि तीव्र ज्वर ने उसे जकड़ लिया। उसे एक पेड़ के नीचे आश्रय लेने को विवश होना पड़ा। उसी समय एक विधवा उधर से निकली। शायद उसने पानी माँगा था या वह कराहा था। वह तुरंत उसके पास गई। छूने पर उसका हाथ जैसे तपते तवे पर पड़ा हो। करुणा द्रवित वह बोल उठी- "राम! तुझे तो तेज बुखार है।"

वह उसे अपने घर ले गई। कई दिन की उसकी ममतापूर्ण सेवा-शुश्रूषा के बाद ही उसे ज्वर से मुक्ति मिल सकी। परंतु तभी एक ज्वर में वह फँस गया। उस विधवा का एक देवर था और एक था बहनोई। देवर चाहता था, वह उसकी होकर रहे। बहनोई मानता था कि उस पर उसका अधिकार है। लेकिन वह किसी के पास नहीं रहना चाहती थी। एक दिन दुखी होकर उसने शरत से कहा, "तुम अब ठीक हो गए हो, चलो मैं भी तुम्हारे साथ चलती हूँ।"

"और कहीं जाने को वह चुपचाप उसके साथ निकल पड़ी। इस निकल पड़ने के पीछे मात्र मुक्ति की चाह थी, लेकिन वह अभी कुछ ही दूर जा पाए थे कि उस विधवा के दोनों प्रेमी वहाँ आ पहुँचे। उन्होंने किसी से कुछ नहीं पूछा। जी-भर कर शरत को पीटा और चीखती-चिल्लाती विधवा को वापस ले गए। वह पुरी के मार्ग पर आगे बढ़ा फिर गाँव-गाँव में आतिथ्य लाभ कर जब वह घर लौटा तो उसका चेहरा इतना विकृत था कि पहचाना तक न जाता था।"

"शरत फिर देवानंदपुर नहीं लौटा। यहाँ उसका जीवन घोर दारिद्र्य और अभाव में बीता। माँ और दादी के रक्त और आँसुओं से इस गाँव के पथ-घाट भीगे हुए हैं।"

इस प्रकार का जीवन था शरत बाबू का। वह दुखी प्राणी का दुख दूर करने के लिए तुरंत तैयार हो जाते थे। उसके लिए उन्हें चाहे कितने ही कष्टों का सामना क्यों न करना पड़े? उनका जीवन अभावों और कष्टों में बीता था। इसलिए वह दूसरों के दुख-दर्द को तत्काल अपनी ओर मोड़कर अपना जैसा समझने लग जाते थे। मानवता के प्रति उनमें अपार सहानुभूति थी और वह उसको समझने के लिए तड़प-तड़प उठते थे।

एक बार रंगून में प्लेग फैला। शरत बाबू उस समय रंगून में ही थे। उन्होंने अपने जीवन की चिंता किए बिना रोगी स्त्री-पुरुषों की जी-जान से सेवा की। प्रभाकरनी ने लिखा है, "प्लेग का यह आक्रमण इतना भयानक था कि हर व्यक्ति किसी दूसरे की चिंता किए बिना भाग खड़ा हुआ। रोगी अकेले तड़प-तड़पकर समाप्त होने लगे। शरत असहाय लोगों की सहायता करने में सदा आगे रहता आया था। यहाँ भी आगे रहा। जहाँ 'प्लेग' शब्द सुनकर बड़े से बड़ा साहसी भी अपने प्रिय से प्रियजन को छोड़ देता था, वहीं शरत एक अजनबी के पास भी पहुँच जाता था। बर्फ और औषधि खरीद देने तक में उसे संकोच नहीं होता था। राजू की पाठशाला में मानवीय करुणा का जो पाठ उसने पढ़ा था, उसे वह कभी नहीं भूल सका।"

एक दृश्य और, "कुछ देर बाद डॉक्टर के साथ वह वहाँ पहुँचे तो पाया, लकड़ी के तख्त पर चादर से मुँह ढके रोगिणी अचेतन अवस्था में छटपटा रही है। प्राण कंठ में आ गए हैं। एक बुढ़िया उसके सिरहाने बैठी पंखा झल रही है। डॉक्टर तुरंत समझ गए कि प्लेग है और बचने की कोई आशा नहीं है। दो क्षण उसे देखकर वह बाहर आ गए। शरत और भी कातर हो उठा। विकल-विह्वल वह शांति की प्राण-रक्षा के लिए बार-बार डॉक्टर से अनुरोध करने लगा। लेकिन वे क्या कर सकते थे? सान्त्वना देकर तथा उपचार बताकर वहाँ से चले गए। शरत फिर रोगिणी की शय्या के पास आ गया।"

"कुछ क्षणों के लिए शांति की संज्ञा लौटी। क्षीणकंठ से धीरे-धीरे उसने कहा, मेरे कारण आपको बहुत दुख पहुँचा है। उस सब के लिए क्षमा कर दो।"

शरत आर्द्र स्वर में बोल उठा–"ऐसी बात मत कहो। मुझे डर लगता है।"

शांति ने कहा–"छी! डर किस बात का? लाओ, जरा मुझे अपने पैरों की धूलि तो दो। आशीर्वाद भी दो।"

"शरत समझ गया कि अब आशीर्वाद देने को कुछ नहीं बचा है। सारे प्रयत्न व्यर्थ हो गए हैं। शांति संसार के दुख कष्टों को तुच्छ करके परलोक चली गई। वह अपलक दृष्टि से स्त्री की मृत्यु से विवर्ण मुख को देखता हुआ रो उठा।"

इस प्रकार शरत बाबू का दया-धर्म से पूर्ण हृदय दुखी प्राणी के दुख और कष्ट को देखकर रो उठता था। इस एक उदहारण से यह बात प्रमाणित हो जाती है कि जीवन के प्रति उनकी भावना और विचारधारा कितनी सजीव और करुणापूर्ण थी। वह वेश्याओं को भी समाज का अंग बताया करते थे। उनके दुख-दर्द को देखकर वह बर्फ की तरह पिघल जाते थे और उनकी सहायता करने के लिए तन-मन-धन से जुट जाते थे। वह वेश्याओं में भी गुणों को खोजते थे और उनसे कुछ शिक्षा ग्रहण करने की कामना करते थे। उनमें प्रेम, दया, करुणा और अपनत्व का इतना विशाल सागर तरंगित होता रहता था कि वह अपना भोजन तक सड़क पर घूमने वाले आवारा कुत्तों को दे देते थे और स्वयं भूखे रह जाते थे। वह मनुष्यों से प्रेम करने की बातें करते थे, घृणा करने की नहीं। उनकी दृष्टि में कोई भी मनुष्य बुरा नहीं था, भले ही वह चोर, डाकू या समाज को अपार कष्ट पहुँचाने वाला व्यक्ति क्यों न हो, वह कहते थे कि मनुष्य के अंतर में मानवता छिपी है, दानवता नहीं इसलिए हमें मनुष्यता को पहचानने का प्रयास करना चाहिए। यही कारण था कि जब कोई व्यक्ति उनके संपर्क में आता था तो वह श्रद्धा से अवनत हो जाता था और उनका आदर करने लगता था।

डॉ. धरणीधर ने शरत बाबू के संबंध में लिखा है, "शरतचन्द्र सचमुच एक प्रतिभाशाली लेखक थे। उन्होंने अपनी लेखनी से समाज की बड़ी सेवा की है।"

इन सब बातों के अतिरिक्त प्रभाकर जी ने शरत की जीवनी में समाज की वास्तविकताओं का भी चित्रण किया है।

नोट

इस विषय को स्पष्ट करने के लिए उन्होंने अनेकानेक प्रसंगों को प्रस्तुत किया है। इनका अध्ययन करके ऐसा लगता है कि प्रभाकर जी शरत बाबू से संबंधित सभी अंगों को स्पर्श करना चाहते थे। उनका उद्देश्य था कि समाज में घटने वाली घटनाओं का विवरण पाठकों के समक्ष रखा जाए ताकि वे भी उस काल के समाज की बारीकियों से अवगत हो सकें।

टास्क शरतचंद्र के पर्यटनशील जीवन पर टिप्पणी कीजिए।

प्रभाकर जी के साहित्यिक उद्देश्य को हम निम्नलिखित रूप में देख सकते हैं–

1. सामाजिक मान्यताओं का वर्णन
2. धार्मिक मान्यताओं का वर्णन
3. आर्थिक मान्यताओं का वर्णन
4. सांस्कृतिक मान्यताओं का वर्णन
5. राजनीतिक परिस्थितियों का वर्णन।

1. सामाजिक मान्यताओं का वर्णन–प्रभाकर जी ने 'आवारा मसीहा' में शरतकालीन समाज की मान्यताओं तथा परिस्थितियों का वर्णन बड़े ही स्वाभाविक रूप में किया है। इन मान्यताओं और परिस्थितियों के कारण ही शरत को लिखने की प्रेरणा मिली। इन्हीं मान्यताओं ने उनके हृदय में करुणा और दया का झरना बहाया और वे समाज की भलाई के लिए कुछ सोचने-समझने और कुछ करने के लिए पग-पग पर आगे बढ़ते हुए दिखाई दिए।

शरत जी के जन्म के समय के भारत में चारों ओर जागृति और प्रगति की लहर दौड़ रही थी। सन् 1857 के प्रथम स्वतंत्रता संग्राम का समय बीत चुका था और अंग्रेज भारत में दमन-चक्र चला रहे थे। लेकिन जिस बात को जितना दबाया जाता है, वह उतनी ही अधिक उछलती है। इस वैज्ञानिक सत्य के कारण देश में शांति के बीज पुनः प्रस्फुटित होने लगे थे। पादरी लोग ईसाई धर्म का प्रचार बड़ी तेजी से कर रहे थे और भोले-भाले भारतीयों को तरह-तरह के प्रलोभन देकर उन्हें ईसाई बनाते जा रहे थे। इस कारण देश में पाश्चात्य सभ्यता और संस्कृति बड़ी तीव्र गति से अपने पाँव जमाती जा रही थी। चूँकि अंग्रेज बंगाल में भली भाँति जम चुके थे, इसलिए पादरियों ने बंगाल को ईसाई धर्म प्रचार का एक बड़ा केंद्र बना लिया था। शुरू में भारत और विशेषकर बंगाल की जनता ने इन पादरियों को बुरा-भला कहा, लेकिन धीरे-धीरे जब जनता पादरियों के संपर्क में आती चली गई तो उनकी बातों और धर्म में भी रुचि लेने लगी। इस दृष्टि से देखा जाए तो बंगाल में सामाजिक जागृति फैलाने में पादरियों का बहुत बड़ा हाथ था।

पादरी वास्तव में भारतीयों का भला नहीं चाहते थे। वे तो समाज सुधार और शिक्षा के क्षेत्र में प्रचार के बहाने ईसाई धर्म फैलाना चाहते थे। वे कहते थे कि हिन्दू धर्म में अनेक कुरीतियाँ हैं। हिन्दू धर्म आडम्बरों और रूढ़ियों से भरा हुआ है। इसके विपरीत ईसाई धर्म सीधा-साधा है। इसलिए बंगालियों को ईसाई धर्म अपना लेना चाहिए। प्रचार की इस चमक-दमक को देखकर समझदार और विद्वान् लोगों में नये विचार उत्पन्न हुए और वे अपने धर्म में सुधार करने के लिए दौड़ पड़े। भारत में धर्म का भूत सर्वत्र मान्य रहा है। इसी ने व्यक्ति और समाज की मूलधारा को सदैव मोड़ दिया है। अतः राजा राममोहन राय जैसे समाज सुधारक ने धर्म सुधार की ओर विशेष ध्यान दिया। उन्होंने कहा–"हिन्दू धर्म विश्व का एक श्रेष्ठ धर्म है। इसमें सदैव से ही निराकार ब्रह्म की उपासना पर बल दिया गया है। हिन्दू धर्म में ईश्वर एक ही है, ऐसा हर ग्रंथ में समझाया गया है।" ऐसी बातें बंगाली जनता के सामने रखकर उन्होंने 'आत्मीय सभा' की स्थापना की थी। इस सभा में बंगाल के प्रसिद्ध विद्वान आकर जुड़ते थे। वे धर्म चर्चा के साथ-साथ जाति-पाँति की समस्या, बाल विवाह, बहु विवाह और सती प्रथा जैसी ज्वलंत सामाजिक कुप्रथाओं पर

भी विचार करते थे। देखा जाए तो बंगाल में समाज सुधार की यह पहली कड़ी थी जिसे आगे चलकर अनेकानेक विद्वानों ने बल दिया। सामाजिक सुधार का यह महत्त्वपूर्ण कार्य धीरे-धीरे संपूर्ण भारत में फैलाया गया। इसी वृक्ष की शाखाओं के रूप में प्रार्थना समाज, ब्रह्मसमाज, आर्यसमाज, थियोसोफीकल सोसाइटी आदि संस्थाओं की स्थापना की गई।

सुधार के इन कार्यों को बंगाली समाज में अच्छी निगाह से नहीं देखा जाता था। संभवतः इसके दो कारण थे–(1) अभी तक उच्च सामाजिक शिक्षा का प्रचार नहीं हो पाया था और (2) परंपरागत रूढ़िवादी मान्यताओं को तोड़ने से बहुत से ढोंगी लोगों की रोजी-रोटी पर सीधा आघात होता था। प्रभाकर जी ने लिखा है, "विधवा विवाह, जाति-विचार, कुलीनता, धर्माडम्बर के विषय में लोगों की भावनाएँ अत्यंत संकीर्ण दायरे में सीमित थीं, इसलिए नवजागरण के विश्वासी व्यक्तियों को बुरी दृष्टि से देखा जाता था।"

बिहार में भी बंगालियों के निवास स्थान थे। वे बंगालियों को भली निगाह से नहीं देखते थे। वे नहीं चाहते थे कि भद्र लोगों की बंगाली कन्याएँ पढ़ाई-लिखाई करें या अच्छी शिक्षा ग्रहण करने के लिए वे आगे बढ़ें। वे कहते थे कि बंगालियों की जाति शुद्ध नहीं है। वे माँस-मछली और भात खाते हैं और अपनी लड़कियों की पवित्रता पर कोई अंकुश नहीं लगाते हैं। ऐसी विषय परिस्थितियों में भी राजा राममोहन राय जैसे भद्र पुरुषों ने बंगाली समाज में सुधार करने का बीड़ा उठाया और वह अन्य विद्वानों को भी अपनी ओर आकर्षित करने में सफल हुए।

2. धार्मिक मान्यताओं का वर्णन–बंगाल में धर्म की प्राचीन मान्यताओं को तोड़-मरोड़ कर नया रूप दे दिया गया था। इसलिए धर्म के अंधविश्वासों के कारण समाज का अधःपतन हो रहा था। जनता किसी भी नई बात को मानने के लिए तैयार नहीं होती थी। इसी के साथ ही ईसाईयों के धर्म प्रचार के कारण सनातन धर्मी भारतीय (हिन्दू) धर्म की जड़ों को फिर से हरा-भरा बनाकर उसे नया रूप देने के लिए जुट गया था। एक ओर तो धार्मिक मान्यताओं की यह दशा थी और दूसरी ओर कुछ भद्र लोगों का कहना था कि धर्म की पुरानी मान्यताएँ समाज और व्यक्ति के विकास में बाधा उत्पन्न कर रही हैं। इसलिए उनको तोड़ देना चाहिए। इन सब बातों को ध्यान में रखकर ही प्रभाकर जी ने 'आवारा मसीहा' की रचना की। उन्होंने जीवन चरित में शरतकालीन धार्मिक विचारों को भी स्पष्ट किया है। अतः शरत जी के साहित्य में जो धार्मिक विचारधारा झरती है, उसके माध्यम से धार्मिक मान्यताओं का वर्णन भी किया गया है।

शरत बाबू ने भारतीय समाज की मूलभूत समस्याओं पर गंभीरतापूर्वक विचार किया है। सती प्रथा के प्रश्न ने भारतीय समाज में एक विचित्र-सी स्थिति उत्पन्न कर दी थी। अतः शरत बाबू ने सती प्रथा को घृणित बताते हुए बंग-भाषियों के सामने नये विचार रखे। उस काल में इस प्रकार के विचार रखना हँसी-खेल नहीं था क्योंकि यह समाज की भावनाओं पर सीधी चोट थी। लेकिन शरत बाबू ने इसकी तनिक-सी भी चिंता नहीं की। उनका कहना था कि यदि हमारे पुरुषों की भूल से कोई प्रथा गलत सिद्ध हो चुकी है तो उसमें सुधार करना हम सबका कर्त्तव्य है। पुरुष हो या स्त्री यदि वे गिर जाते हैं तो उनके उठने का मार्ग खुला रहना चाहिए। हिन्दुओं ने स्वयं अपने समाज को हानि पहुँचाई है क्योंकि सती प्रथा की घृणित काया के कारण ही हिन्दू समाज से हजारों-लाखों स्त्रियाँ निकल कर विधर्मी हो गई हैं। उनका कहना था, "किसी विशेष धर्म के संबंध में मैं न तो कभी कुछ कहता हूँ, न कहना चाहता हूँ, शायद मैं किसी धर्म में आस्था नहीं रखता, पर इतना तो कहूँगा, जिसे आप हिन्दू धर्म कहते हैं उसी पर हमें पंगु और जड़ बनाने की सबसे बड़ी जिम्मेदारी है। मेरे लिए जीवन ही सब-कुछ है। मरने के बाद जीवन है या नहीं, मैं नहीं जानता।"

शरब बाबू के उपन्यास साधारण जनता के लिए थे। अतः जब स्त्रियों ने समाज सुधार, धर्म और सती प्रथा आदि के संबंध में ऐसे विचार पढ़े तो वे शरत बाबू की विरोधी हो गईं। ब्रह्म समाज से जुड़ी अनेक स्त्रियों ने भी शरत बाबू को बुरा भला कहा। परंतु शरत बाबू जरा भी अपने मार्ग से नहीं हटे। उन्होंने सदैव यही कहा–"मानव को मानव समझने में ही समाज का भला है। यदि मैं मानव को पशु से ऊपर उठने की बात करता हूँ तो उसमें कुछ भी बुराई नहीं है।"

नोट

एक स्थान पर उनके दृढ़ शब्दों का रसास्वादन इस प्रकार लिया जा सकता है, "कोई धारणा या वस्तु बहुत प्राचीन काल से चली आई है इसी कारण वह सही नहीं है। कुछ भी हमेशा के लिए सही नहीं हो सकता। सतीत्व परिपूर्ण मनुष्यता का एक अंग है। वह मनुष्यता पर हावी नहीं हो सकता। कर्त्तव्य और अधिकार का संबंध ऐसी अविच्छिन्न है कि एक न रहे तो दूसरा निरर्थक हो जाता है। मैं शास्त्र का ज्ञाता होने का दावा नहीं करता, मेरा कोई धर्म ही नहीं है, पर जो कुछ देखता आ रहा हूँ इससे लगता है कि शास्त्रों में पुरुषों के लिए किसी कर्तव्य की चर्चा नहीं है। उनके अधिकार ही अधिकार बताए गए हैं। पुरुषों के लिए कुछ वर्जित नहीं पर किसी युवती का जरा सा पैर फिसल जाए तो फिर उसकी मुक्ति नहीं, ऐसा क्यों? उसके लिए समाज में फिर लौट कर सम्मान का स्थान प्राप्त करना क्यों बंद हो जाता है? क्या उसके प्राण नहीं? मैं तो कहता हूँ कि इसमें इतना बड़ा प्राण है जितना किसी गृहस्थ स्त्री में दुर्लभ है।"

3. आर्थिक मान्यताओं का वर्णन–श्री विष्णु शर्मा ने आर्थिक मान्यताओं एवं परिस्थितियों का वर्णन भी बड़ी सूझ-बूझ के साथ किया है। अर्थात् शरत बाबू के काल में तत्कालीन समाज में देश की आर्थिक दशा कैसी थी और शरत जी का जीवन उन आर्थिक परिस्थितियों के मध्य किस रूप में व्यतीत हुआ? इस प्रकार लेखक का एक उद्देश्य आर्थिक मान्यताओं का वर्णना करना भी हो जाता है। उन्होंने लिखा है कि शरत का बचपन कितनी गरीबी में बीता। उनकी माता उनके किए स्कूल की फीस भी नहीं भर पाती थीं। इसी कारण शरत बाबू की पढ़ाई भी ठीक प्रकार से नहीं हो सकी। अंत में शरत बाबू को रंगून में चाकरी के लिए जाना पड़ा। चूँकि शरत ने आरंभ से ही जीवन को नजदीक से जिया, इसलिए उनके हृदय में दया, सहानुभूति, मानवता आदि के गुण अंत तक बने रहे। उस समय बंगाल की आर्थिक स्थिति को दुष्ट और धूर्त अंग्रेजों ने बिगाड़ दिया था। अत: समाज में अनेक माता-पिता अपनी कन्याओं के विवाह तक नही कर पाते थे। समाज में विधवाओं के लिए पुनर्विवाह के द्वार बंद थे। विवश होकर विधवाएँ विधर्मियों के हाथ पड़ जाती थीं, या फिर वे जीवन भर नारकीय जिन्दगी जीने के लिए विवश रहती थीं। कदम-कदम पर स्त्रियों को दुख, कष्ट, अभाव आदि सहन करने पड़ते थे। उनको पर्दे में रहना पड़ता था क्योंकि यदि उन पर पराये पुरुष की छाया भी पड़ जाती है तो वे कलंकिनी मान ली जाती थीं। दूसरी ओर कुलीनता ने भी उनको कीचड़ में पड़ी रहने के लिए विवश कर दिया था। ऐसी बहुत-सी कन्याएँ थीं जिनके विवाह ही नहीं हो पाते थे। ऐसी कन्याओं को कुलीन रसोइए कुछ रुपयों के बदले पाटे पर बैठकर पार कर देते थे। ये कन्याएँ माँग में सिंदूर भरकर विधवाओं से भी बुरा जीवन जीती रहती थीं।

शरत बाबू ने दूसरा विवाह भी आर्थिक संकट को 'जीवित देखकर' ही कर लिया था। बाबू कृष्णदास कन्या के विवाह के लिए धन तथा दहेज इकट्ठा करने के लिए बंगाल से रंगून जा पहुँचे थे। वहीं उनका साक्षात्कार शरत बाबू से हुआ। शरत बाबू को देखकर उन्होंने अपनी कन्या उन्हें सौंपने के लिए प्रार्थना की। पर शरत बाबू इसके लिए तैयार नहीं हुए। अंत में उन्होंने शरत जी से कहा–"यदि आप मोक्षदा से विवाह नहीं करना चाहते तो मुझे कुछ धन दे दीजिए, जिससे मैं देश लौटकर लड़की का विवाह कर सकूँ।" शरत बाबू कृष्णदास को धन देने में असमर्थ थे। अंत में शरत बाबू को मोक्षदा को स्वीकार करना पड़ा।

इस प्रकार बंगाल के समाज में माता-पिता धनाभाव के कारण अपनी कन्याओं को कुपात्र या सुपात्र किसी को भी सौंपने के लिए तैयार हो जाते थे। वे इतने असहाय थे कि उनके सामने प्रेम और ममता भी अभिशाप नजर आते थे। बंग समाज इसी प्रकार के उदाहरणों से भरा पड़ा है, जिसे शरत बाबू ने यथास्थान अपने साहित्य में उतारा है। लेखक ने उसी से उद्धत होकर सार्थक चित्रण किया है।

4. सांस्कृतिक मान्यताओं का वर्णन–लेखक ने तत्कालीन सांस्कृतिक मान्यताओं का भी वर्णन किया है। शरत बाबू की जीवनी में प्रभाकर जी ने यात्रा, लीला, मृत्यु भोज आदि का वर्णन किया है। इससे प्रकट होता है कि लेखक का एक उद्देश्य सांस्कृतिक परिस्थितियों व मान्यताओं को भी दर्शाना है। शरत बाबू की मान्यता है कि विश्व की सभी उन्नत कलाओं में ईश्वर की सत्ता विराजमान है। यदि व्यक्ति बुरी वस्तु को सुंदर दृष्टि से देखे तो उसे संसार में कुछ भी बुरा नहीं दिखाई देगा। वस्तु बुरी नहीं होती है, वरन हमारी दृष्टि की तुलनात्मक सूझ बुरी या अच्छी होती है।

टास्क शरतचंद्र का झुकाव कौनसे राजनीतिक दल की ओर था?

5. राजनीतिक परिस्थितियों का वर्णन–शरत बाबू अपने उपन्यासों के द्वारा प्रसिद्धि के शिखर पर पहुँच चुके थे। उस समय देश में स्वतंत्रता की लहर तेजी से दौड़ने लगी थी। जनता दुष्ट, धूर्त और मक्कार अंग्रेजों की गुलामी की जंजीरों को तोड़कर फेंक देना चाहती थी। इस समय देश में राजनीति की धरती नई चादर ओढ़ रही थी। इन सब परिस्थितियों से शरत बाबू का प्रभावित होना स्वाभाविक था। प्रभाकर जी ने शरत बाबू की जीवनी में तत्कालीन राजनीतिक विचारधाराओं और परिस्थितियों का भी वर्णन किया है। एक उदाहरण से यह बात स्पष्ट हो जाती है–

"देशबंधु चितरंजन दास स्वयं मन-प्राण से इस आंदोलन में कूद पड़े थे। राष्ट्रीय कांग्रेस के अमृतसर अधिवेशन में उन्होंने सक्रिय भाग लिया। शरत बाबू का देशबंधु के साथ अत्यंत स्नेह था, इसलिए वे भी बड़ी तेजी के साथ उस ओर खिंच गए। जलियावाला बाग हत्याकाण्ड के प्रतिशोध में हावड़ा में जो विशाल सभा हुई, उसमें उन्होंने प्रत्यक्ष भाग लिया और इस प्रकार देशबंधु दास के साथ उनका जो संपर्क था उसे निरा साहित्यिक ही रहने दिया।"

शरत बाबू का राजनीतिक झुकाव सदा गरम दल की ओर रहा। लोकमान्य के प्रति उनकी सच्ची श्रद्धा थी। 'हरिलक्ष्मणी' में मंझली बहू शरमाते हुए, हँसते हुए कहती है, "तिलक महाराज की तस्वीर देख-देख कर बनाने की कोशिश की थी जीजी, पर कुछ बनी नहीं।" यह कहते हुए उसने उँगली उठाकर सामने की दीवार पर टंगे हुए भारत के कौस्तुभ लोकमान्य तिलक का चित्र दिखा दिया। उन्हीं तिलक का जब 31 जुलाई की आधी रात के बाद देहावसान हो गया तब व्याकुल मन शरतचन्द्र ने लिखा, "तिलक केवल हमारे भाई ही नहीं थे, बंधु ही नहीं थे, नेता ही नहीं थे, वे हमारे बाइस करोड़ के मलिन ललाट थे, शुभ्र गौरवमय तिलक थे। वह तिलक आज मिट गया है। हम अनाथ हो गए हैं।"

पहला अवसर था जब गाँधी जी के आह्वान पर भारत की नारी सामूहिक रूप में पुरुष के कन्धे से कन्धा मिलाकर रणभूमि में उतरी भी। दोनों साथ-साथ रहेंगे तो क्या अप्रतीकर घटनाएँ घटेंगी? यह आशंका अनेक व्यक्तियों को परेशान कर रही थी। शरत बाबू ने इस अवसर पर स्पष्ट शब्दों में कहा, "मशाल के दीप्त प्रकाश से अंधकार नष्ट होता है, यही बात सब लोग जानते हैं लेकिन उससे उठने वाली किंचित बदबू की ओर क्या किसी का ध्यान जाता है? जलप्लावन से धरती उर्वर हो उठती है। यदि उस जल के साथ कुछ मैला भी आ जाए तो परेशान होने की क्या बात है?"

"आंदोलन का एक प्रमुख अंग था सरकारी स्कूलों और कॉलेजों का बहिष्कार। कांग्रेस ने छात्रों के अभिभावकों से अनुरोध किया कि वे अपने बच्चों को सरकारी स्कूलों और कॉलेजों से निकाल लें। इस प्रार्थना का अच्छा प्रभाव हुआ। देखते-देखते असंख्य छात्र स्कूलों और कॉलेजों से बाहर आ गए। देशबंधु दास ने बैलिंग्टन स्क्वायर की 'फरवीज मेंशन' की विशाल अट्टालिका में 'गौड़ीय सर्वविद्या आयतन' नाम से राष्ट्रीय विश्वविद्यालय की स्थापना की और उसके परिचालन के लिए यहीं पर एक राष्ट्रीय विद्यालय 'कलकत्ता विद्या मंदिर' भी स्थापित किया गया। महात्मा गाँधी ने इसका उद्घाटन किया।"

"बंगाल में आंदोलन के संचालक देशबंधु दास थे। बाजारों में खादी बेचने के लिए जो स्वयं सेवक गए, उनमें उनके पुत्र भी थे। उन्हें बंदी बना लिया गया। उसके बाद उनकी पत्नी बासन्ती देवी और बहिन उर्मिला देवी ने नेतृत्व संभाला। युवराज उसी समय कलकत्ता पधारे। उस दिन हड़ताल का अनुरोध करने के कारण बासन्ती देवी को भी गिरफ्तार कर लिया गया। बंगाल में जैसे उत्साह का तूफान जाग उठा। शरच्चंद्र की उत्तेजना का कोई पार नहीं था। भारतवर्ष के संपादक जालंधर सेन उन्हें प्यार करते थे। बार-बार निराश होकर भी उनके पास लेख माँगने के लिए आना उन्होंने नहीं छोड़ा था।"

इस प्रकार लेखक ने शरत की जीवनी में तत्कालीन राजनीतिक परिस्थितियों और मान्यताओं का वर्णन भी उद्देश्यपूर्ण किया है।

नोट

सारांश—उपर्युक्त विवेचन से यह बात स्पष्ट हो जाती है कि प्रभाकर जी का उद्देश्य किन मान्यताओं में निहित है और वह जीवन चरित के माध्यम से क्या कहना चाहते हैं? व्यक्ति के चरित्र का उद्घाटन करते हुए उन्होंने मानव अनुभूतियों का बड़ा सुंदर वर्णन किया है। इसी कारण उनके जीवन चरित्र का उद्देश्य राजनीतिक, सामाजिक, धार्मिक, आर्थिक और सांस्कृतिक भी है। इन सभी का वर्णन लेखक ने बड़े मनोयोग से किया है।

स्व-मूल्यांकन (Self-Assessment)

निम्नलिखित कथनों में सत्य अथवा असत्य की पहचान करें

(State Whether the following statements are True or False) :

7. मोक्षदा जीवनभर शरतबाबू के साथ रही।
8. शरत कहते थे–'मनुष्य के अंतर में दानवता छिपी है, मानवता नहीं।'
9. शरत के आवारापन ने ही उन्हें महान साहित्यकार बनाया।

28.3 'आवारा मसीहा' के नामकरण की सार्थकता

मनुष्य के जीवन में नाम की बड़ी महत्ता है। नाम से वस्तु का संगठित रूप व्यक्ति के सामने आ जाता है। यही कारण है कि संसार की प्रत्येक वस्तु अपने नाम से ही जीवित है। नाम के बिना या तो वह वस्तु नष्ट हो जाती है या फिर लोग उसे भूल जाते हैं। जब कभी उन्हें उस वस्तु की पुनः याद आती है तो वे सर्वप्रथम उसका नाम ही याद करते हैं। साहित्यिक रचना के संबंध में भी यही बात है। लेखक सर्वप्रथम कृति का नामकरण करता है। तदुपरांत वह उसके शरीर को विस्तार देता है। यह नाम ही है जिसके कारण वह हजारों साहित्यिक रचनाओं में से पहचानी जाती है। यह नाम ही है जिसको पुकारते ही लेखक के यश और सम्मान का बखान भी साथ-साथ होने लगता है। इसलिए रचना चाहे वह कहानी, निबंध, उपन्यास, जीवनी आदि कुछ भी हो, उसके नाम का सामने आना एक प्रकार से अनिवार्य-सा है।

जीवनी लेखक अपनी कृति का नाम प्रायः चरित नायक की विशेषताओं को ध्यान में रखकर केन्द्रीय स्थिति के अनुरूप गढ़ता है। इसके बाद वह उसे सिद्ध करने के लिए नायक के रूप को विस्तार देता है। पाठक बिना नाम की पुस्तक को कभी ग्रहण नहीं करना चाहता। नाम के द्वारा ही उसके चरित नायक का सामान्य परिचय हो जाता है। इसलिए प्रत्येक लेखक इस बात का प्रयास करता है कि कृति का नाम संक्षिप्त, सार्थक और संपूर्ण रचना के भाव को स्पष्ट करने वाला होना चाहिए। हिन्दी साहित्य में अनेक रचनाकारों की जीवनियाँ मिलती हैं। प्रायः सभी का नामकरण रचनाकारों के गुणों के आधार पर ही रचा गया है। उदाहरण के लिए प्रेमचंद्र की जीवनी 'कलम का सिपाही', 'पथ के साथी' आदि नामों से लिखी गई है। उसी प्रकार अन्य विश्वविख्यात लेखकों की जीवनियाँ भी लगभग उनकी अपनी विशेषताओं के आसपास बुनी गई हैं।

'आवारा मसीहा' नामक कृति जो श्री विष्णु प्रभाकर द्वारा शरत बाबू के जीवन चरित्र पर लिखी गई है, इसी श्रेणी में आती है। पुस्तक के नाम को पढ़कर पाठक सोचने के लिए विवश हो जाता है कि विश्वविख्यात लेखक शरत क्या वास्तव में 'आवारा मसीहा' ही था। सचमुच शरत बाबू का जीवन एक आवारा व्यक्ति के समान इधर से उधर रहने और आने-जाने में ही व्यतीत हुआ। विरोधाभासों के बीच उभरा उनका घुमक्कड़ जीवन वास्तव में उनको 'आवारा मसीहा' सिद्ध कर देता है। नाम की इस सार्थकता को हम इस प्रकार समझने का प्रयास करेंगे।

श्री विष्णु प्रभाकर ने शरत बाबू के जीवन से संबंधित जो सामग्री इकट्ठी की उससे यही बात साबित होती है कि शरत बाबू पर्यटनशील व्यक्ति थे। कुछ तो अपने पिता की घुमक्कड़ प्रवृत्ति के कारण और कुछ शरत के एक स्थान पर न टिकने के कारण उनमें आवारापन के भाव आ गए थे। इसीलिए प्रभाकर जी ने 'आवारा मसीहा' के नाम से रचना की। शरत बाबू की इस प्रवृत्ति के कारण कुछ लोग उनको साहित्यकार मानते ही नहीं हैं वे कहते हैं कि शरत

अपना समय बुरी संगत के लोगों और वेश्याओं के बीच बिताया करते थे। परंतु असल में यह बात नहीं है। शरत बाबू पर्यटनशील होते हुए भी वेश्यागामी तथा चरित्रहीन नहीं थे। उन्होंने इस रहस्य को अपनी पुस्तकों में भी खोल दिया है क्योंकि वह वास्तविक जीवन की बातों को कभी नहीं छिपाते थे। लोगों ने उनकी आवारागर्दी को देखकर उनके विषय में झूठी-सच्ची बातें गढ़ ली हैं। वह अपने जीवनकाल में बंग समाज के व्यंग्यबाणों से दुखी रहते थे। इस दुख को समेटने के लिए ही उन्होंने साहित्य के माध्यम से सामाजिक कुरीतियों को निकालने की चेष्टा की। वह जीवनभर अन्याय के विरुद्ध लड़ते रहे। यह ठीक है कि वह शराब पीने लगे थे लेकिन शायद शराब पीने के पीछे भी उनके हृदय को अपूर्ण प्रेम द्वारा ठेस पहुँचाने की भावना थी। खोजों से पता चला है कि जीवन के आखिरी दिनों में उन्होंने शराब भी छोड़ दी थी।

असल मे शरत बाबू ने बचपन से ही अनेक ऐसे कार्य करने आरंभ कर दिए थे जो एक मसीहा ही कर सकता है। वे प्लेग के रोगियों की सेवा निःस्वार्थ भाव से करते थे। दूसरों के दुखों को अपना दुख समझकर उसे दूर करने के लिए तन-मन-धन से जुट जाना जैसे उनकी आदत बन गई थी। वह अछूतों, दरिद्रों और कोढ़ियों की सेवा के लिए जुट जाते थे। यही कारण था कि उन्होंने एक बूढ़े का संस्कार भारी वर्षा की चिंता न करते हुए थी अपने मित्र राजू की सहायता से किया। वे दूसरों की सेवा के लिए स्वयं को जैसे होम कर देते थे। इतने पर भी यदि लोग उनको भ्रष्ट, आवारा और दुराचारी कहते थे तो वे इस बदनामी को भी अपने ऊपर ओढ़कर शांत रहते थे। ईसा मसीह ने यहूदियों के समाज में सुधार का बीड़ा उठाया था और उनके दुःखों को दूर करने के लिए सूली पर चढ़ गए। राबिया ने अरब के समाज की बुराइयों को दूर करने के लिए अपने को मिटा दिया। ये लोग वास्तव में गले-सड़े समाज में सुगंध फैलाना चाहते थे। शरत ने भी बंग समाज की कुरीतियों को दूर करने के लिए साहित्य का सहारा लिया।

शरत बाबू कहते थे कि हिन्दू धर्म मुर्दों की पूजा करता है, जिन्दों की नहीं। वह धर्म की झूठी और आडम्बरपूर्ण मर्यादाओं का खुलकर विरोध करते थे। यही कारण था कि वे मानव जाति को जितना प्रेम करते थे उतना ही पशु-पक्षियों को चाहते थे। पक्षी या पशु की मृत्यु हो जाने पर उनकी आँखें झर-झर आँसू की धारा बहाने लगती थीं। वे सोचने लगते थे। इनका कौन है सिवाय हमारे? भगवान ने इनको हमारे सहारे ही तो बनाया है। यदि हम इनकी सहायता नहीं करेंगे तो ये दुनिया से मिट जाएँगे। तब क्या यह सच नहीं है कि पशुओं की बहुत सी प्रजातियाँ मानव की देखभाल की कमी के कारण मिट गईं? जिस समय वे रंगून में थे तो अचानक उनके घर में आग लग गई। एक धोबी के रोने-धोने और चीखने-चिल्लाने से पता चला कि उसकी बकरी आग में फंस गई है। सुनते ही शरत बाबू उस भयानक आग में कूद पड़े और धोबी की बकरी को बाहर निकाल लाए। सोचने की बात है कि कोई साधारण व्यक्ति क्या ऐसा कार्य करने के लिए तत्पर हो जाएगा? घर में लगी आग में उनका वर्षों का परिश्रम जलकर खाक हो गया और वह चुपचाप उस गम को पी कर रह गए। अवश्य ही ऐसा कोई मसीहा ही कर सकता है। मसीहा दूसरों के दुख को दूर कर करने के लिए जीता-मरता है। उसे अपनी चिंता बिल्कुल नहीं होती है।

मसीहा एक ऐसा विशिष्ट व्यक्ति होता है जिसे पग-पग पर कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है। जिसका विरोध छोटे-बड़े सभी करने के लिए तैयार हो जाते हैं। समाज में शरत बाबू को चरित्रहीन और नास्तिक व्यक्ति समझा जाता था परंतु क्या वह वास्तव में नास्तिक थे? असल में जो व्यक्ति धर्म भीरू होता है वही नास्तिक भी होता है। वह कहते थे कि भले ही मैं भगवान को न मानता हूँ लेकिन कम से कम मैं उस व्यक्ति को अवश्य प्यार करता हूँ जो ईश्वर की पूजा करता है। वे एक अशिक्षित और दरिद्र व्यक्ति की सच्ची भक्ति में देवत्व के दर्शन करते थे। यही बात रवीन्द्रनाथ ने भी गीतांजलि में कही है, "ईश्वर सड़क पर पत्थर कूटने वालों के पास है, हमारे पास नहीं, यदि ईश्वर के दर्शन करना है तो हमें दरिद्रों की झोंपड़ी में जाना चाहिए।" यही बात अरब की परम विदुषी राबिया ने कही थी कि हम बंदगी स्वार्थवश करते हैं इसलिए ऐसी बंदगी ईश्वर कभी कबूल नहीं कर सकता।

इस प्रकार शरत बाबू के संबंध में हजारों ऐसी बातें हैं जो केवल मसीहा के लिए ही सही साबित हो सकती हैं। समाज का निरंतर विरोध सहते हुए भी वह अपने मार्ग से पीछे नहीं हटे। जब उन्होंने 'चरित्रहीन' जैसी ऊँची कृति लिखी तो समाज में उनका पत्थर मार कर विरोध हुआ परंतु उन्होंने सबसे यही कहा कि इस रचना को भीतर से

नोट

झाँक कर देखो। तब शायद तुम लोगों को पता चलेगा कि हमारा समाज कैसा है? वह स्त्रियों को बहुत सम्मान करते थे। इसीलिए शायद रूढ़िवादी और अंधविश्वासी समाज ने उन पर यह आरोप लगाया था कि वह वेश्याओं को अच्छा समझते हैं परंतु उन्होंने इसकी चिंता नहीं की क्योंकि वह वेश्याओं में भी मानवता के गुण देख चुके थे। इस दृष्टि से शरत बाबू स्त्रियों को अँधेरी और दुर्गंधयुक्त कोठरियों से बाहर निकाल कर प्रकाश में लाना चाहते थे।

उनके पिता ने एक स्थान पर बँधकर रहने में न तो अपना हित देखा और न कभी कोई बँधा हुआ रोज़गार या नौकरी की। कभी वह अपनी ससुराल में रहे तो कभी किसी दूसरी जगह। ऐसे ही गुण बालक शरत में भी आ गए थे। नाना के घर के बंधनों ने उनको आवारा बनने के लिए प्रेरित किया। गेंद को पानी में जितना डुबाया जाता है उतनी ही वह उछलती है। बछड़े को खूँटे से बाँध दो तो वह रस्सी तोड़कर भागने के लिए प्रयास करता रहता है। शरत बाबू के रक्त में स्वच्छंदता, एकांत भाव और भ्रमणशीलता घर कर गई थी। अत: वह समाज और परिवार के बंधनों को कैसे स्वीकार कर सकते थे? यही कारण था कि वह कभी शमशान को अपना बिछौना बनाते तो कभी खण्डहर को अपना ओढ़ना। जब वे बड़े हुए तो उनका मन बंगाल की श्यामला धरती से ऊब गया और वे रंगून चले गए। वहाँ भी वह हरी-भरी धरती का आश्रय ढूँढ़कर लुढ़क जाया करते थे। रंगून में मन नहीं लगा तो कलकत्ता वापस आ गए। कलकत्ता में आदमियों का जंगल और शोर-शराबा उन्हें पसंद नहीं आया और वह गाँव में घर बनाकर रहने लगे। घर भी उन्होंने कहाँ बनाया? नदी के किनारे, जहाँ प्रकृति की निकटता उनसे न छिनने पाए।

इन सब बातों को देखकर क्या यह सत्य नहीं है कि उनके आवारापन ने उन्हें महान साहित्यकार बनाया, उन्हें मानवता की पूजा करना सिखाया। उनमें जीवन को नए सिरे से, नए कायदे से जीने के भाव आए। यद्यपि उन्होंने परंपरागत घिसे-पिटे संस्कारों और मान्यताओं को स्वीकार करने से इन्कार कर दिया। एक नजर से उनको हम आवारा ही कह सकते हैं क्योंकि वे जिस नगर, गाँव या मुहल्ले में रहने के लिए गए, वह सदैव निर्धनों, दुखियों, दरिद्रों, वेश्याओं और आवारा लोगों के मुहल्ले में रहे। उन्हें बड़े लोगों, कथित सभ्य लोगों और न्यायविदों के मुहल्लों में रहना पसंद नहीं था। वे कहते थे कि संभ्रान्त और कुलीनों का जीवन मर्यादा में बंधा हुआ होता है। वे स्वार्थी और अन्यायी होते हैं। इसके विपरीत दुखी और दरिद्र का जीवन सच्ची आत्मा के अत्यधिक निकट होता है। वे यदि झूठ बोलते हैं तो अपने पेट के लिए, दूसरों को धोखा देने के लिए झूठ कभी नहीं बोलते हैं। इसलिए उनसे कुछ सीखा जा सकता है, उनसे कुछ ग्रहण किया जा सकता है।

टास्क कौनसी घटना ने शरतचन्द्र को वेश्याओं का प्रशंसक बनने पर विवश कर दिया?

शरत बाबू कहते थे कि सच्ची नारी वेश्याओं के हृदय में छिपी है। यह दूसरी बात है कि समाज उनको अच्छी दृष्टि से नहीं देखता पर असल बात यही है कि समाज ने ही उनको वेश्या बनने के लिए विवश किया है। समाज ने उनके शरीर में काँटे भरे हैं। इसलिए वेश्याओं के पास वह स्नेहमयी दृष्टि और दया-धर्म से भरा हृदय देखा करते थे। वह शराब पीने और अफीम खाने के शौकीन थे। लेकिन इन दोनों कार्यों को करने के पश्चात उन्होंने कभी किसी को चोट नहीं पहुँचाई। वह शराब व्यक्तिगत कारणों से पीते थे। अफीम वह जीवन को समझने के लिए खाते थे। इस बात को उन्होंने इन शब्दों में व्यक्त किया है, "जीवन में मैंने छोटी-मोटी भूलें बहुत-सी की हैं परंतु अपनी मूर्खता को मैं उस सीमा तक खींचकर नहीं ले गया। शराब को मैंने नशे के रूप में ग्रहण नहीं किया। बराबर दवा के रूप में ग्रहण किया है, किसी शारीरिक रोग की दवा के रूप में नहीं, वरन अपने स्वभाव की एक कमी की पूर्ति के लिए। मैं स्वभाव से अंतर्मुखी हूँ और बुद्धि से सामाजिक जीवन को पूर्णतया अपनाने पर भी व्यावहारिक रूप से समाज और समूह से भागना चाहता हूँ। समाज के बीच बड़े असंतोष का अनुभव करने लगता हूँ। इसलिए बीच-बीच में कभी-कभी दवा की मात्रा में थोड़ी-सी मदिरा पी लेता हूँ और मैं समाज में सामाजिक प्राणियों के समान रहने लगता हूँ।"

नोट

इस तरह अपने जीवन को आवारा व्यक्ति के समान जीने के बाद भी वह किसी को कोई दुख नहीं देना चाहते थे। वह भीतर से अपने को बीमार समझते थे और उस बीमारी को दूर करने के लिए जैसे शराब को दवा मानते थे। वह शराब पीने के बाद भी दूसरों को न्याय दिलाने या दूसरों की रक्षा करने के लिए दौड़ पड़ते थे। उस समय उनकी आँखों में छायी लाली जैसे धुल-पुंछ जाती थी और वह लोगों से प्यार करने लगते थे। शराब के नशे में ही उन्होंने एक व्यक्ति का जीवन बचाया था। उनकी पुस्तकों को पढ़कर न जाने कितनी युवतियों का जीवन गलत मार्ग पर जाने से बच गया। वह जो कुछ भी लिखते थे उसके पीछे अपना कर्त्तव्य, एक उद्देश्य और एक न्याय की भावना को अवश्य सोच लिया करते थे। वह कहते थे। कि 'चरित्रहीन' की किरणमयी से हजारों स्त्रियों का उद्धार होगा, समाज मेरी इस बात को स्वीकारे या नहीं, मुझे इसकी चिंता नहीं है। इसलिए आज यह बात सभी पाठक जानते हैं कि उनकी पुस्तकों से युवकों और युवतियों को लाभ ही हुआ है, हानि नहीं। वे कहते है, "सारा मनुष्यत्व सतीत्व से कहीं बड़ा है। इस बात को मैंने एक दिन कहा था और उसी को अभद्र और गंदा कह कर मुझे गाली देने में कुछ उठा नहीं रखा गया।"

उन्होंने दुराचारिणी कही जाने वाली स्त्रियों को सम्मान दिया है। यही कारण है कि जब पाठक उनके उपन्यास पढ़ता है तो यह सोचने के लिए विवश हो जाता है कि शरत बाबू कैसा समाज चाहते थे? वे स्त्रियों को सुधारने के लिए बहुत-कुछ करना चाहते थे, यह तथ्य उनके साहित्य को छानने से प्रकट होता है। इसी एक बात को लेकर वे जीवन भर लड़ते रहे कि नारी को समाज में वैसी ही प्रतिष्ठा मिलनी चाहिए जैसी कि वैदिक काल में नारियों को मिलती थी। इसी कारण बंगाल की स्त्रियों ने उनकी सत्तावनवीं जयन्ती के अवसर पर उनका अभिनन्दन किया था। उनके श्री मुख से निकला था, "पराधीन देश के अधि:पतित समाज की असहाया अंत:पुर चारिणियों के हृदय की मूक अनंत वेदना को तुमने भाषा में मूर्त कर दिया है। उनके दुर्गतिपूर्ण जीवन के सुख-दुखों की सभी अनुभूतियों को निविड़ सहानुभूति में ढालकर तुमने साहित्य में सत्य करके प्रत्यक्ष करा दिया है। तुम्हारी अनाविष्ट दृष्टि, सूक्ष्म पर्यवेक्षण सामर्थ्य, सुंगधमयी उपलब्धि, शक्ति तथा विचित्र मानव चरित्र की अतलस्पर्शी अभिज्ञता ने निखिल नारी चरित्र की निगूढ़ प्रकृति का पता पा लिया है। हे नारी चरित्र के परम रहस्यज्ञाता, हम लोग तुम्हारी वंदना करते हैं।"

इन शब्दों को सुनकर यह बात स्पष्ट हो जाती है कि शरतचंद्र नारियों के लिए देवता थे, मसीहा थे। सचमुच लेखक ने उनकी जीवनी का नाम 'आवारा मसीहा' रखकर पाठकों पर बड़ा उपकार किया है।

28.4 सारांश (Summary)

- 'आवारा मसीहा' नामक कृति बंगला साहित्य के लेखक श्री शरतचंद्र चट्टोपाध्याय के जीवन पर आधारित है। यह जीवनी श्री विष्णु प्रभाकर जी ने तीन पर्वों में विभाजित की है।
- शरत को पाँच वर्ष की आयु में पाठशाला में भर्ती कराया गया। चूँकि शरत बचपन से ही नटखट स्वभाव का था इसलिए वह स्कूल में भी कोई न कोई शरारत करता रहता था।
- शरत ऐसा नहीं था जिसे सुंदर कहा जा सकता। हाँ उसकी आँखें अवश्य सुंदर थीं। लेकिन उसमें परोपकारिता के गुण विद्यमान थे। साहस के कार्यों में वह सबसे पहले कूद कर आगे आ जाता था।
- शरत बाबू वास्तव में बड़े साहसी बालक थे। अँधेरी रात में वे कहीं भी आ-जा सकते थे। उन्हें साँप और बिच्छू से बिल्कुल डर नहीं लगता था। इसके साथ-साथ वे उपन्यास और कहानी भी लिखते रहते थे।
- शरत के पिता को कीमती पत्थर संग्रह करने का शौक था। एक दिन शरत को कुछ रुपयों की जरूरत थी। अत: उन्होंने उन पत्थरों में से कुछ लेकर बेच दिए।
- शरत ने अपनी पुरानी आदतों पर लगाम नहीं लगाई थी। वह शराब भी पीते थे और इधर-उधर सैर-सपाटे के लिए भी निकल जाते थे। इसलिए बहन ने एक दिन उनसे कह दिया, शरत यदि तुम अपनी आदतों को बदलना नहीं चाहते तो हमारा घर छोड़ दो।

नोट

- उस जमाने में जहाज की यात्रा द्वारा बर्मा पहुँचा जा सकता था। अत: चार दिन की यात्रा के बाद शरत बाबू बर्मा पहुँचे। इस बीच उनका जहाज एक तूफान में फँस गया था और वह बड़ी कठिनाई में से गुजरकर निकल सके थे।
- शरत बाबू 'चरित्रहीन' नामक उपन्यास लगभग पूरा कर चुके थे। 'नारी इतिहास' प्रबंध पूरा करने में जुटे हुए थे कि अचानक एक संध्या को उनके घर को आग ने भक्षण करना शुरू कर दिया। इस आग में शरत बाबू की महीनों की मेहनत स्वाहा हो गई।
- जब किसी रचना का निर्माण किसी उद्देश्य से किया जाता है तो उसकी स्वाभाविक आत्मा मर जाती है, उसमें सजीवता के भाव देखने को नहीं मिल पाते हैं। ऐसा लगता है जैसे रचना का शरीर दिखावटी शब्द-वस्त्रों से ढक दिया गया है।
- एक बार रंगून में प्लेग फैला। शरत बाबू उस समय रंगून में ही थे। उन्होंने अपने जीवन की चिंता किए बिना रोगी स्त्री-पुरुषों की जी-जान से सेवा की।
- बिहार में भी बंगालियों के निवास स्थान थे। वे बंगालियों को भली निगाह से नहीं देखते थे। वे नहीं चाहते थे कि भद्र लोगों की बंगाली कन्याएँ पढ़ाई-लिखाई करें या अच्छी शिक्षा ग्रहण करने के लिए वे आगे बढ़ें।
- शरत बाबू ने भारतीय समाज की मूलभूत समस्याओं पर गंभीरतापूर्वक विचार किया है। सती प्रथा के प्रश्न ने भारतीय समाज में एक विचित्र-सी स्थिति उत्पन्न कर दी थी। अत: शरत बाबू ने सती प्रथा को घृणित बताते हुए बंग-भाषियों के सामने नये विचार रखे।
- जीवनी लेखक अपनी कृति का नाम प्राय: चरित नायक की विशेषताओं को ध्यान में रखकर केन्द्रीय स्थिति के अनुरूप गढ़ता है। इसके बाद वह उसे सिद्ध करने के लिए नायक के रूप को विस्तार देता है। पाठक बिना नाम की पुस्तक को कभी ग्रहण नहीं करना चाहता।
- शरत बाबू कहते थे कि हिन्दू-धर्म मुर्दों की पूजा करता है, जिन्दों की नहीं। वह धर्म की झूठी और आडम्बरपूर्ण मर्यादाओं का खुलकर विरोध करते थे। यही कारण था कि वह मानव जाति को जितना प्रेम करते थे उतना ही पशु-पक्षियों को चाहते थे।
- शरत बाबू के संबंध में हजारों ऐसी बातें हैं जो केवल मसीहा के लिए ही सही साबित हो सकती हैं। समाज का निरंतर विरोध सहते हुए भी वह अपने मार्ग से पीछे नहीं हटे। जब उन्होंने 'चरित्रहीन' जैसी ऊँची कृति लिखी तो समाज में उनका पत्थर मारकर विरोध हुआ।
- शरत बाबू कहते थे कि सच्ची नारी वेश्याओं के हृदय में छिपी है। यह दूसरी बात है कि समाज उनको अच्छी दृष्टि से नहीं देखता पर असल बात यही है कि समाज ने ही उनको वेश्या बनने के लिए विवश किया है। समाज ने उनके शरीर में काँटे भरे हैं।
- उन्होंने दुराचारिणी कही जाने वाली स्त्रियों को सम्मान दिया है। वह स्त्रियों को सुधारने के लिए बहुत-कुछ करना चाहते थे, यह तथ्य उनके साहित्य को छानने से प्रकट होता है।

28.5 शब्दकोश (Keywords)

1. निर्भीक – निडर
2. नटखट – शरारती
3. सम्मिलित – शामिल
4. चक्षुहीन – आँखों रहित
5. तीमारदारी – देखभाल
6. बाकर – खोलकर
7. सैलाब – बाढ़
8. लजालु – शर्मीला
9. जमात – मंडली
10. महीन – बारीक।

28.6 अभ्यास प्रश्न (Review Questions)

1. शरतचन्द्र का बाल्यकाल किस प्रकार व्यतीत हुआ?
2. रंगून में शरत बाबू ने साहित्यिक जीवन किस प्रकार बिताया?
3. शरतचन्द्र के साहित्यिक जीवन का सर्वश्रेष्ठ बिंदु किसे कहा जा सकता है? अपने विचार व्यक्त कीजिए।
4. प्रभाकर जी के साहित्यिक उद्देश्य को हम किन रूपों में देख सकते हैं?
5. 'आवारा मसीहा' के नामकरण की सार्थकता पर एक लेख लिखिए।
6. शरत बाबू के पशु-पक्षी प्रेम को उदाहरण देकर समझाइए।

उत्तर : स्व-मूल्यांकन (Answers : Self-Assessment)

1. मोतीलाल 2. शुक्रवार 3. काशीनाथ 4. (ग)
5. (ख) 6. (क) 7. सत्य 8. असत्य
9. सत्य।

28.7 सन्दर्भ पुस्तकें (Further Readings)

पुस्तकें आवारा मसीहा—विष्णु प्रभाकर, राजकमल एण्ड संस, दिल्ली।

नोट

इकाई–29: 'आवारा मसीहा' : प्रमुख गद्यांशों की व्याख्या

अनुक्रमणिका (Contents)

उद्देश्य (Objectives)

प्रस्तावना (Introduction)

29.1 'आवारा मसीहा' के गद्यांशों की सप्रसंग व्याख्या

29.2 सारांश (Summary)

29.3 शब्दकोश (Keywords)

29.4 अभ्यास प्रश्न (Review Questions)

29.5 सन्दर्भ पुस्तकें (Further Readings)

उद्देश्य (Objectives)

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् विद्यार्थी योग्य होंगे–

- 'आवारा मसीहा' के प्रमुख गद्यांशों की सप्रसंग व्याख्या करने में;
- शरत बाबू के व्यक्तित्व एवं प्रकृति को जानने में;
- शरतचंद्र के मित्र राजू की जानकारी प्राप्त करने में;
- बंग-समाज में व्याप्त अंधविश्वास एवं पिछड़ेपन को समझने में।

प्रस्तावना (Introduction)

प्रभाकर जी ने शरतचन्द्र की जीवनी 'आवारा मसीहा' के प्रमुख गद्यांशों का विवरण बड़ी सूक्ष्मता के साथ किया है। इन गद्यांशों की व्याख्या को पढ़कर हमें शरत बाबू के व्यक्तित्व एवं प्रकृति के बारे में पता चलता है। उस समय बंग-समाज में कौनसी बुराइयाँ और अंधविश्वास फैले हुए थे, इसकी जानकारी भी प्राप्त होती है।

29.1 'आवारा मसीहा' के गद्यांशों की सप्रसंग व्याख्या

1

"सौन्दर्यबोध भी कम नहीं था। सुंदर कलम में नया निब लगाकर बढ़िया कागज पर मोती जैसे अक्षरों में रचना आरंभ करते, परंतु आरंभ जितना महत्त्वपूर्ण होता, अंत उतना ही महत्त्वहीन। अंत अनिवार्यता मानो उन्होंने कभी स्वीकार ही नहीं की। बीच में ही छोड़कर नई रचना आरंभ कर देते। शायद उनका आदर्श बहुत ऊँचा होता था या शायद अंत तक पहुँचने की क्षमता ही उनमें नहीं थी। वह कभी कोई रचना पूरी ही नहीं कर सके।" **(पृष्ठ–7)**

प्रसंग–शरत बाबू को नाना के घर रहते हुए लगभग तीन वर्ष व्यतीत हो चुके थे। वह काम की खोज में बार-बार इधर से उधर घूमते थे। यदि कभी नौकरी उन्हें मिल भी जाती तो उनका स्वच्छंद स्वभाव और शिल्पी मन उन्हें एक स्थान पर ठहरने ही नहीं देता था। उन्हें कहानी, उपन्यास, नाटक आदि लिखने का शौक था। परंतु एक जगह बंध

कर न रहने के कारण वह कुछ भी नहीं लिख पाते थे। उनके मन में देश, समाज, परिवार, स्त्री, पुरुष सभी से संबंधित विचार उठते रहते थे। परंतु वह मन न लगाने के कारण उन विचारों को साहित्य का रूप देने में असमर्थ रहते थे। यहाँ पर लेखक ने उनके मन की उसी गति का वर्णन किया है।

व्याख्या–शरत बाबू जन्म से यायावर स्वभाव के होने के कारण संसार की प्रत्येक वस्तु का अनुभव प्राप्त करना चाहते थे। वह सुन्दरता को समझने का गहरा ज्ञान रखते थे, परंतु कभी उन्होंने इस ओर ध्यान नहीं दिया था। वह समझते कि प्रकृति ने सुंदर वस्तुओं का निर्माण संसार को सुंदर बनाने के लिए किया है। इसी कारण वह सुंदरता का साधारण-सा आनंद लेकर दूसरी ओर मुड़ जाते थे। इस सुंदरता को साहित्य में भरने के लिए भी वह प्रयास करते रहते थे। परंतु उनका मन शीघ्र ही ऊब जाता था और वह एक बात को छोड़कर दूसरी बात की ओर उन्मुख हो जाते थे। जब कभी उनकी लिखने की इच्छा होती तो वह एक सुंदर-सी कलम में नयी निब लगाकर बढ़िया कागज़ पर मन के विचारों को उतारने के लिए बैठ जाया करते थे। उनका लेख बहुत सुंदर था। इसलिए वह मोती के समान अक्षरों में लिखना शुरू करते थे। परंतु आरंभ को वह बड़े मनोयोग से सजाते। लिखते-लिखते वह इतनी जल्दी ऊब जाते कि सब-कुछ छोड़कर अपना मन दूसरी तरफ दौड़ाने लग जाते थे। यही कारण था कि शुरू की बात अत्यधिक महत्त्वपूर्ण होने के बाद भी वह अधूरी रह जाती थी। इसी हेतु लेखक ने व्यक्त किया है कि कहानी या उपन्यास का अंत बड़ा महत्त्वहीन होता था। उनकी दृष्टि में अंत का शायद अधिक महत्त्व नहीं था। अर्थात् वह किसी भी कार्य को मन लगाकर पूर्ण करने के पक्ष में नहीं थे। कभी-कभी तो वह एक रचना को बीच में ही अधूरी छोड़कर दूसरी लिखना आरंभ कर देते थे। वह सोचते थे कि जो कुछ उनके मन में है वह कागज पर नहीं आ पाया है। या फिर उनका मेल मन के विश्वास से पूरा नहीं हो पाता था। इसी बात को लेखक ने नए रूप में व्यक्त किया है। लेखक का कथन है कि शरत बाबू किसी अत्यधिक ऊँचे आदर्श को प्रस्तुत करना चाहते थे। या फिर वह अपने को इस योग्य नहीं समझते थे कि वह किसी अच्छे उपसंहार का सृजन कर सकेंगे। ऐसी दशा में वह अपनी कोई भी रचना पूरी कर ही नहीं सके। कार्य को अधूरा छोड़ने में शायद वह एक प्रकार के आनंद का अनुभव करते थे।

विशिष्ट

1. लेखक ने उपर्युक्त पंक्तियों में साहित्यकार शरत की कमजोरियों का वर्णन किया है क्योंकि शरत बाबू सांसारिक सुंदरता को भली-भाँति आत्मसात करना जानते थे। परंतु उस सुंदरता को पूर्णरूपेण रचना के रूप में व्यक्त करने से घबराते थे। शायद वह किसी ऐसी बात को कहना चाहते थे जो आदर्शपूर्ण और विचित्र हो।
2. लेखक ने शरत बाबू के लेखकीय कौशल का चित्रण सौंदर्य-बोध के साथ किया है। शरत बाबू की लेखन कला अत्यधिक सुंदर थी। वह नई कलम और नए निब से बड़े सुंदर अक्षरों में लिखा करते थे। अन्य लोग भी उनके लेख की प्रशंसा किया करते थे। शायद उनको खराब लेख से घृणा थी। इसी कारण उन्होंने आरंभ से ही मोती जैसे अक्षरों में लिखने का अभ्यास कर लिया था। अच्छे लेख के कारण ही उनकी पाण्डुलिपियाँ प्रकाशकगण दौड़कर ले लेते थे। वैसे भी सुंदर लेख का महत्त्व है। लोग सुघड़ और सुडौल अक्षरों वाले लेख को बड़ी रुचि के साथ पढ़ते हैं और लेखक की प्रशंसा करते हैं।
3. इन पंक्तियों में लेखक ने दर्शाया है कि शरत बाबू बचपन से ही सौंदर्य को परखना जान गए थे। परंतु सौंदर्य की यह परख उनके लिए आंतरिक थी, न कि बाह्य।
4. गद्यांश सरल, सुबोध और गंभीर भाषा में लिखा गया है। विचारों को स्पष्ट करने के लिए कठिन शब्दों का प्रयोग भी किया गया है। पाठकगण गद्यांश की भाषा आसानी से समझ जाते हैं।
5. गद्यांश में मुहावरों और सूक्तियों का अभाव है।
6. शरत के मनोभावों का सामान्य चित्रण है।

नोट

टास्क किन घटनाओं से शरत की स्वच्छंद एवं शैतान प्रकृति का पता चलता है?

2

"इस अपराध का दंड पीठ पर चाबुक खाना ही नहीं था, अस्तबल में बंद होना भी था। परंतु शरत पर इन बातों का कोई असर नहीं होता था। यहाँ तक कि स्कूल में भी दुष्टता करने में वह नहीं चूकता था। अक्सर वहाँ की घड़ी समय से आगे चलने लगती। उसको ठीक करके चलाने का भार वैसे अक्षय पंडित पर था। लेकिन दो घंटे खूब जमकर काम करने के बाद तंबाकू खाने की इच्छा हो आना स्वाभाविक था। तब वह स्कूल के सेवक जगुआ की पानशाला में जा उपस्थित होते। इसी समय शरत की प्रेरणा से दूसरे छात्र उस घड़ी को दस मिनट आगे कर देते।" (पृष्ठ–8)

प्रसंग–शरत बचपन से ही शरारती स्वभाव के बालक थे। अपनी इस आदत को बल देने के लिए उन्होंने स्कूल में बहुत से बालकों को अपना मित्र बना लिया था। उनके बड़े मामा ठाकुर दास अन्य बच्चों के समान उनकी भी देखभाल करते थे। लेकिन शरत उनकी दृष्टि से बचकर इधर-उधर निकल जाते और अपनी टोली के साथ तरह-तरह की शरारतें करते हुए घूमते थे। पढ़ते समय भी वह शैतानियाँ करने से बाज नहीं आते थे। यद्यपि वे पढ़ने-लिखने में तेज थे परंतु पिता के एक स्थान पर स्थायी रूप से न रहने के कारण उनकी शिक्षा ठीक प्रकार से नहीं हो सकी। लेखक ने प्रस्तुत गद्यांश में शरत की स्वच्छंद प्रकृति और शैतानी का वर्णन किया है।

व्याख्या–नई-नई शैतानियों के कारण शरत को दंड भी मिलता था परंतु वह शैतानी किए बिना रह ही नहीं पाते। ज्यों ही उन्हें अवसर मिलता था। वह कुछ न कुछ नया कर ही डालते थे। एक दिन शरत के मामा बच्चों को देखते हुए गंगा के किनारे आ गए। उन्होंने शरत को कुछ बालकों सहित घूमते हुए देख लिया। वह उन पर बिगड़ उठे। घर आकर उन्होंने शरत को दंड दिया। उनकी पीठ पर चाबुक मारे। शरत ने चुपचाप सब-कुछ सहन कर लिया। और फिर उन्हें घुड़साल में बंद कर दिया गया। लेकिन शरत ऐसी मिट्टी के बने थे कि शांत रह ही नहीं सकते थे। एक शैतानी छोड़कर वह दूसरी शैतानी करने में जुट जाते थे। वह स्कूल में भी शैतानी करने से नहीं चूकते थे। स्कूल में वह अन्य प्रकार की शरारतें करते थे। प्राय: वह स्कूल की घड़ी की सुई आगे कर देते थे। इस कारण स्कूल की घड़ी समय से आगे चलती रहती थी। स्कूल में एक अक्षय पंडित थे। वह जब कभी देखते कि घड़ी अधिक समय बता रही है तो वह उसे मिलाकर ठीक कर देते थे। लेकिन अक्षय पंडित तंबाकू खाने के शौकीन थे। वह बिना तंबाकू खाए रह नहीं पाते थे। काम करते-करते जब दो घंटे निकल जाते तो उनकी इच्छा तंबाकू खाने की होती थी। तंबाकू तैयार करने में थोड़ा समय तो लगता ही था। अत: वह ऐसा न करके स्कूल के नौकर जगुआ की पान की दुकान पर तंबाकू खाने चले जाते थे। इसी समय शरत को अवसर प्राप्त हो जाता था। वह देखते कि अक्षय पंडित तंबाकू खाने गए हैं तो तुरंत कुछ लड़कों को इकट्ठा करके कहते कि घड़ी की सुई आगे बढ़ाने का यह अवसर अच्छा है। बस, शरत पंडित को देखने के लिए खड़े हो जाते और दूसरे लड़के घड़ी की सुई दस मिनट आगे कर देते थे। इस प्रकार शरत के पास शैतानियों का अक्षय भंडार था।

विशिष्ट

1. प्रस्तुत गद्यांश में शरत की शैतानियों का लेखा-जोखा मिलता है। घर तथा स्कूल में वह कैसी-कैसी शैतानियाँ करते थे, इस विषय को लेखक ने सहज रूप में समझाया है।
2. चूँकि शरत स्वभाव से ही स्वच्छंद विचारों के पोषक थे इसलिए शैतानियों के बाद उन पर दंड का भी कोई प्रभाव नहीं पड़ता था। लेखक ने यह दर्शाया है कि शैतानियाँ जैसे उनकी दिनचर्या का एक भाग हो गई थीं।

3. प्रस्तुत पंक्तियों में लेखक ने उल्लेख किया है कि शरत अन्य बालकों से कुछ हटकर थे। बचपन में उनके अंदर जिन प्रवृत्तियों का विकास हुआ था, आगे चलकर वह धीरे-धीरे छूट गईं। परंतु उनका स्वच्छंद स्वभाव नहीं बदल सका। इतना होने पर भी वह तीक्ष्ण बुद्धि के बालक थे।
4. गद्यांश की भाषा सरल किंतु प्रचलित शब्दों से पूर्ण हैं। भाषा में कृत्रिमता कहीं नहीं दिखाई देती है। इसलिए साधारण पाठक भी उसे आसानी से समझ सकता है।
5. शरत के बचपन का चरित्र-चित्रण सरल और सहज रूप में किया गया है।

3

"न जाने कितनी बार वह इस पवित्र मौन-एकांत में आकर बैठा होगा। दूर से आती बच्चों की शरारतों की आवाजें गंगा की कल-कल ध्वनि में मिलकर एक रहस्यमय वातावरण का निर्माण करती होंगी। प्रकृति का सौंदर्य जैसे उसके थके तन-मन को सहलाता होगा और तब उसने मन ही मन प्रतिज्ञा की होगी, 'मैं सूर्य, गंगा और हिमालय को साक्षी करके प्रतिज्ञा करता हूँ कि मैं जीवन-भर सौंदर्य की उपासना करूँगा, कि जीवन-भर अन्याय के विरुद्ध लडूँगा, कि मैं कभी छोटा काम नहीं करूँगा।" (पृष्ठ–12)

प्रसंग–शरत एकान्तप्रिय व्यक्ति थे। बचपन में वह एकांत में जाकर बैठ जाते थे और घंटों न जाने क्या-क्या सोचते रहते थे। उनके बैठने के स्थान खंडहर, शमशान या फिर गंगा के किनारे के रेतीले स्थान होते थे। इन स्थानों में अपने को एक ओर सुरक्षित महसूस करते थे और दूसरी ओर उनको वह स्थान तपोवन के समान लगता था। उनके घर के पास ही गंगा बहती थी इसलिए वह गंगा की उज्ज्वल धाराओं में अपना भविष्य खोजते रहते थे। प्रस्तुत गद्यांश में लेखक ने उनकी एकांत प्रियता का ही वर्णन किया है।

व्याख्या–शरत को प्रकृति के बीच रहना बहुत सुहाता था। इसी कारण लेखक ने उल्लेख किया है कि जब कभी उनका मन घर से ऊब जाता था तो वह किसी एकांत स्थान पर जाकर बैठ जाते थे। फिर वह घंटों कुछ सोचते रहते थे। ऐसी ही एक घटना का वर्णन लेखक ने किया है कि शरत न जाने कितनी बार गंगा नदी के पवित्र किनारे पर जाकर बैठा होगा। वह एकांत को प्रकृति से जोड़ता था क्योंकि प्रकृति चुपचाप अपना कार्य करती है और जो व्यक्ति प्रकृति के क्रिया-कलापों का आनंद लेना चाहता है उसे एकांत में जाकर अपने को पहचानने का प्रयास करना पड़ता है। एकांत में शरत सुनता रहता होगा कि दूर कहीं बच्चे खेल रहे हैं। उनकी शरारतों की आवाजें धीमे स्वर में आ रही हैं और गंगा जी की कल-कल आवाज में मिलकर एक पवित्र और भेदपूर्ण वातावरण की सृष्टि कर रही हैं। गंगा की आती-जाती तरंगों और शीतल, मंद वायु शरत के मन को अवश्य उस आसमान की ओर ले जाती होंगी जिसका ठाठ ही निराला है।

प्रकृति की सुंदरता को देखकर शरत का थका हुआ मन एकांत में डूब जाता होगा। थोड़ी देर के लिए वह सब-कुछ भूल जाता होगा। लेखक अत्यंत भावुक होकर लिखता है कि शरत प्रकृति के इस अनूठे और पवित्र सौंदर्य को देखकर मन ही मन यह प्रतिज्ञा करता होगा कि सच्चाई यहीं पर है। मैं सच्चाई को प्राप्त करने के लिए कभी गलत कार्य नहीं करूँगा। इसी दृष्टिकोण को ध्यान में रखकर शरत ने सूर्य और हिमालय को साक्षी बनाया होगा। फिर मन में यह प्रण लिया होगा कि मैं आजीवन सुंदरता की पूजा करूँगा क्योंकि सुंदरता ही जीवन का मूल्य है। जीवनभर अन्याय के विरुद्ध संघर्ष करने की चेतना भी शरत के मन में इसी विचार के साथ जागी होगी। साथ ही उसने यह भी शपथ खाई होगी कि कभी ऐसा कोई कार्य नहीं करूँगा जिससे समाज और देश की बदनामी हो।

विशिष्ट

1. इस गद्यांश में लेखक ने शरत के प्रकृति-प्रेम को दर्शाया है। वह एकांत में बैठकर प्रकृति का आनंद लेने के लिए सदैव तत्पर रहते थे। प्रकृति की सुंदरता में डूबकर वह अपने को भूल जाते थे। इसी कारण शायद उनके मन में यह विचार उठते होंगे कि मैं प्राकृतिक सौंदर्य की पूजा करने के लिए कोई कसर नहीं उठा रखूँगा

नोट

क्योंकि प्रकृति मनुष्य को परमात्मा से जोड़ती है। शरत बाबू ने बंग-समाज में अन्याय और आडम्बर भी देखा था। इसलिए वह इन दोनों के निराकरण के लिए भी जूझना चाहते थे।

2. इस गद्यांश की भाषा दार्शनिक भावों से पूर्ण है। लेखक ने सीधी-सादी बात को सहज रूप में दर्शाने की चेष्टा की है।

4

"पिता की स्वाधीन चेतना परंपरा को राजू ने चरम सीमा तक पहुँचा दिया था। पतंगबाजी के द्वंद्व युद्ध में शरत की तरह वह भी पारंगत था। इसलिए स्वाभाविक रूप से दोनों एक-दूसरे को हराने की कामना करते थे। राजू के पास पैसे का बल था पतंग का बढ़िया से बढ़िया सरंजाम जुटाने में जरा भी कठिनाई नहीं हुई। लेकिन शरत के पास पैसा कहाँ था? उसके दल ने बोतल के काँच को मैदा की तरह पीसकर और उसमें नाना प्रकार की वस्तुएँ मिलाकर माँझा तैयार किया। उस दिन शनिवार था। संध्या होते ही शरत की गुलाबी पतंग मनचाही दिशा में उड़ चली।" (पृष्ठ-14)

प्रसंग-शरत का एक परम मित्र था, जिसका नाम राजू था। दोनों स्वच्छंद प्रकृति के थे। वे खेलने के लिए घर से निकल जाते और घंटों किसी मैदान में खेलते रहते थे। राजू श्यामवर्ण का साधारण बालक था। लेकिन जितना साहसी था उतनी ही शक्ति उसके शरीर में थी। वह शरत की प्रेरणा था क्योंकि शरत को अच्छे कार्यों को करने की प्रेरणा वही दिया करता था। शरत और राजू दोनों के परिवारों में मन-मुटाव था। लेकिन दोनों बालकों को इससे कुछ भी मतलब नहीं रहता था। वे अनुशासन के बंधनों को तोड़कर खंडहरों और वन्य-प्रान्तरों में घूमते फिरते थे। राजू के घर में पुरानी बातों की ओर विशेष ध्यान नहीं दिया जाता था। इसी कारण बंगाली समाज राजू के पिता को इस संबंध में कभी क्षमा नहीं कर सका। लेकिन अपने पिता की तरह शरत का यह मित्र भी आधुनिक विचारों को मानने वाला हो गया था। इसी कारण राजू और शरत की पटरी आपस में अच्छी तरह बैठ जाती थी।

व्याख्या-प्रस्तुत पंक्तियों में लेखक ने शरत और उसके मित्र राजू की स्वाधीन चेतना का वर्णन किया है। राजू के पिता पुरातन पंथी समाज की बातों को नहीं मानते थे। इसका प्रभाव राजू पर भी पड़ा था। इसी कारण राजू अपने पिता से दो कदम आगे चलकर स्वतंत्रता का पक्षपाती हो गया था। वह पतंगबाजी करने में निपुण था और कभी-कभी शरत से पेंच लड़ाने की तैयारी करने लगता था। इस द्वंद्व-युद्ध में दोनों को विशेष आनंद आता था। इसलिए दोनों मित्र अपनी-अपनी पतंगे आकाश में उड़ाकर एक-दूसरे को हराने के लिए तत्पर हो जाते थे। राजू धनी पिता का पुत्र था इसलिए वह अच्छी-अच्छी पतंगे और तेजधार वाला माँझा आसानी से प्राप्त कर लेता था। इसके विपरीत शरत के पास सदैव पैसे का अभाव रहता था क्योंकि उसके पिता निर्धन थे। इतने पर भी शरत को बिल्कुल चिंता नहीं रहती थी। वह अच्छा माँझा तैयार करने के लिए अपने साथियों को एक काँच की बोतल दे देता था। उसके दल के साथी बोतल को तोड़ कर काँच को मैदा की तरह महीन पीस लेते थे। फिर इस पिसे हुए काँच को भात, माढ़ आदि के साथ मिलाकर लुगदी तैयार कर लेते थे। इस लुगदी से माँझा सूँता जाता था। इसके बाद पेंच लड़ाने का कार्य शुरू किया जाता था। उस दिन शनिवार था। शरत ने गुलाबी पतंग में सुत्तल बाँधी और स्वयं तैयार किए माँझे की सहायता से पतंग उड़ाने लगा। वायु के सहारे पतंग आकाश से बातें करने लगी। उसी समय राजू ने अपनी सफेद पतंग तैयार करके उड़ानी शुरू की। दोनों मित्र पतंग उड़ाने का आनंद लेने लगे।

विशिष्ट

1. प्रभाकरजी ने राजू और शरत के मध्य होने वाली पतंगबाजी का वर्णन बड़ी सरल भाषा में किया है। दोनों मित्रों को अन्य खेलों के साथ-साथ पतंग उड़ाने का भी शौक था। विशेष बात यह थी कि दोनों बालक पतंगबाजी में निपुण थे और आपस में पेंच लड़ाने का कार्य करते रहते थे। दोनों नि:स्वार्थ भाव से पतंगबाजी का द्वंद्व-युद्ध करते थे। परंतु कभी परस्पर लड़ाई-झगड़ा नहीं करते थे। दोनों बालक सहज बुद्धि और सरल

नोट

स्वभाव के थे। बंग-समाज में पिछड़ापन अधिक था। परंतु दोनों बालक इस बात की चिंता न करके स्वाधीन चेतना के पक्षपाती थे।

2. गद्यांश की भाषा सरल, सुबोध और रोचक है। लेखक ने विषय को स्पष्ट करने के लिए भाषा की संप्रेषणीयता में वृद्धि की है।

टास्क शरत और राजू के बीच होने वाली पतंगबाजी का वर्णन अपने शब्दों में कीजिए।

5

"शरत सुंदर नहीं था। आँखों को छोड़कर उसमें कोई विशेषता नहीं थी। लेकिन आँखों की यह चमक ही सामने वाले को बाँध लेती थी। वर्ण श्यामता की ओर था और देह थी खूब रोगी, लेकिन पैर हिरन की तरह दौड़ने में मजबूत थे। बिल्ली की तरह पेड़ों पर चढ़ जाता था। बुद्धि भी तीक्ष्ण थी, लेकिन दिशाहीन कठोर अनुशासन के कारण उसका प्रयोग पथभ्रष्टता में ही अधिक होता था।" (पृष्ठ–20)

प्रसंग–इन पंक्तियों में लेखक ने प्रसंगानुकूल विषय को स्पष्ट किया है। शरत अपनी बुआ के यहाँ बसंतपुर पहुँच चुके थे। उनको देखकर बुआ ने उनकी अच्छी तरह खातिर की थी। परंतु शरत के मन में मार्ग में होने वाली एक घटना का भय बैठ गया था। इस कारण वह डरा-डरा सा रहता था। परंतु साहसी होने के कारण उसने इस ओर से ध्यान हटा लिया था। यहाँ लेखक ने शरत के व्यक्तित्व और रूप-रंग का वर्णन किया है, जो निम्नवत है–

व्याख्या–शरत देखने में सुंदर नहीं था क्योंकि न तो उसके नैन-नक्श तीखे थे और न चेहरे का रंग ही गोरा था। वैसे भी बंगाली लोग श्याम वर्ण होते हैं परंतु सामान्यत: उनके नैन-नक्श तीखे होते हैं। ईश्वर ने शरत को सुंदरता का वरदान नहीं दिया था। उनकी आँखें सुंदर थीं। इसलिए लेखक ने उल्लेख किया है कि "उसकी आँखों को छोड़कर उसमें और कोई विशेष बात नहीं थी" परंतु सुंदर आँखें होने के कारण उनका चेहरा आकर्षक हो गया था। यही कारण था कि जो व्यक्ति एक बार उनको देख लेता था वह उनकी ओर खिंचता चला जाता था। उनकी आँखों में विचित्र प्रकार की चमक थी जो आगन्तुक को आसानी से बाँध लेती थी। उनका रंग काला था लेकिन उनके शरीर में तरह-तरह के रोग भरे हुए थे। इतना होने पर भी वे बीमारियों की चिंता नहीं करते थे। वह तेज चलने में माहिर थे और हिरन के समान दौड़ लगाते थे। इस दृष्टि से उनके पाँवों में प्रकृति ने काफी शक्ति भरी थी। वह पेड़ों पर चढ़ने में भी निपुण थे और बड़ी तेजी से बिल्ली के समान पेड़ों पर चढ़ जाया करते थे। उनकी बुद्धि तेज थी। एक बात को सुनकर वह उसे बड़ी जल्दी याद कर लेते थे। परंतु प्रारंभ से ही स्वच्छंद विचार के होने के कारण वे दिशाहीन से हो गए थे। उनके नाना-नानी ने उनको सदैव कठोर अनुशासन में रखना चाहा लेकिन वह खुले बछड़े के समान विचरण करना चाहते थे। इसीलिए वह पथभ्रष्ट से हो गए थे और ऐसे जीवन में उनको विशेष आनंद आता था।

विशिष्ट

1. लेखक ने इन पंक्तियों में विश्व प्रसिद्ध साहित्यकार के रूप-रंग का वर्णन किया है। उसके कथनानुसार प्रकृति ने शरत को सुंदरता प्रदान नहीं की थी। परंतु उनकी आँखें मीन की तरह बड़ी-बड़ी और सुंदर थीं। यही कारण था कि लोग उनकी ओर आकर्षित हो जाते थे। परंतु शरत बाबू का जीवन दिशाहीन था क्योंकि वह शुरू से ही स्वच्छंद वातावरण में रहना पसंद करते थे। उन्हें कठोर अनुशासन में रहना बिल्कुल पसंद नहीं था।

2. लेखक ने शरत के रूप-रंग का वर्णन यथार्थ रूप में किया है। गद्यांश की भाषा सरल और छोटे-छोटे वाक्यों द्वारा बुनी गई है।

नोट

6

"सूक्ष्म पर्यवेक्षण की प्रवृत्ति उसमें बचपन से ही थी। जो कुछ भी देखता उसकी गहराई में जाने का प्रयत्न करता और यही अभिज्ञता उसकी प्रेरणा बन जाती। गाँव में एक ब्राह्मण की बेटी थी बाल विधवा, नाम था उसका नीरू। बत्तीस साल की उम्र तक कोई कलंक उसके चरित्र को छू भी नहीं पाया था। सुशीला, परोपकारिणी, धर्मशीला और कर्मठ होने के नाते वह प्रसिद्ध थी। गाँव में एक भी घर ऐसा नहीं था जिसने उससे किसी न किसी रूप में सहायता न पाई हो। शरत उसे दीदी कहकर पुकारता था।" (पृष्ठ–22)

प्रसंग–शरत बहुत बढ़िया कहानी लिखता था। धीरे-धीरे उसने मौलिक कहानी लिखने का अभ्यास डाल लिया था। परंतु इस बात को कोई नहीं जानता था कि शरत ने कब और कहाँ बैठकर लिखना सीखा था? सबसे पहली कहानी उसने 'काशीनाथ' नाम से लिखी थी। जिन लोगों ने उसकी यह कहानी पढ़ी उसी ने उसकी प्रशंसा की थी। इस कहानी के अतिरिक्त उसने कुछ और कहानियाँ भी लिखीं। इन सभी कहानियों में उसने नायक का चरित्र-चित्रण बड़ी सूझ-बूझ के साथ किया था क्योंकि किसी भी चीज की गहराई तक पहुँचने की उसमें अद्‌भुत शक्ति थी। इस सूक्ष्म निरीक्षण के कारण उसके मस्तिष्क में विचार उठे होंगे और उसने उन विचारों को शब्दों के रूप में व्यक्त करना शुरू कर दिया होगा।

व्याख्या–शरत बाबू की बुद्धि बचपन से ही तेज थी। इसलिए वह अपने पाठ को बड़ी जल्दी याद कर लिया करते थे। उनकी स्मरण-शक्ति देखकर स्कूल के अध्यापक उनकी बड़ी प्रशंसा करते थे। इन पंक्तियों में लेखक ने शरत की सूक्ष्म पर्यवेक्षण शक्ति का वर्णन किया है। कुछ बालक आरंभ से ही विलक्षण प्रतिभा और अनोखी स्मरण शक्ति वाले होते हैं। शरत ऐसी ही प्रतिभा के धनी थे। वह एक बार किसी बात को सुन लेते तो तुरंत उसे मन में भर लेते थे और काफी दिनों के बाद भी उस बात को याद करने में समर्थ हो जाते थे। इसके साथ ही किसी वस्तु या उपकरण को देखने के पश्चात् उसके विषय में सबकुछ जानने के लिए वह लालायित हो उठते थे। फिर उससे सम्बन्धित भाँति-भाँति के प्रश्न करते थे। जब उनको संतोष हो जाता कि बात ठीक है, तब कहीं वे उसका पीछा छोड़ते थे। गाँव में एक ब्राह्मण की पुत्री रहती थी। वह बचपन में ही विधवा हो गई थी। जिस बालिका का विवाह छोटी-सी आयु में हो जाता था और दैवयोग से उसका पति मर जाता था तो उस बालिका को 'बाल विधवा' कहा जाता था। ऐसी लड़की को समाज में स्त्री-पुरुष अच्छी दृष्टि से नहीं देखते थे। उस ब्राह्मण की बेटी का नाम नीरू था। यह लड़की शरत की प्रेरणा थी क्योंकि शरत उसको बहुत चाहते थे। नीरू बत्तीस वर्ष की आयु तक विधवा ही रही। वह बड़े अच्छे विचारों वाली लड़की थी। इसलिए उसके चरित्र के विरुद्ध कलंक मढ़ने का किसी को साहस नहीं हुआ था। नीरू गाँव में शील-स्वभाव की नरम, धर्मानुसार कार्य करने वाली और परिश्रमी स्त्री थी। इस बात को सब गाँव वाले जानते थे और उसकी प्रशंसा किया करते थे। वह गाँव के लोगों की सहायता करने के लिए हर समय तत्पर रहती थी। अत: गाँव की शायद ही कोई ऐसी स्त्री हो जिसने किसी न किसी रूप में उससे सहायता न ली हो। शरत बाबू ने उसे बहन का नाम दिया हुआ था। अत: वे उसे 'दीदी' कहकर पुकराते थे। नीरू भी शरत को प्राणों के समान प्यारा समझती थी।

विशिष्ट–लेखक ने शरत की तीक्ष्ण बुद्धि की सराहना की है। इस प्रकार की बुद्धि उनमें बचपन से ही थी। इसी कारण एक बार उन्होंने शास्त्री मोशाय को रोने के संबंध में बताया था कि असली रोना तो दरिद्रों का होता है क्योंकि वे दुख में डूबकर करुण रुदन करते हैं। दूसरी ओर धनी लोग स्वार्थवश दिखावे के लिए रोते हैं। एक छोटी आयु का बालक यदि रोने के विषय में इतना सूक्ष्म पर्यवेक्षण करता है तो वह अवश्य ही तीक्ष्णबुद्धि का बालक माना जाएगा। साथ ही लेखक ने गांव की विधवाओं के विषय में भी अपने विचार प्रकट किए हैं क्योंकि बंग-समाज में विधवाओं को बड़ी हेय दृष्टि से देखा जाता था। यदि वे समाज की घिसी-पिटी मर्यादा को तोड़ने का साहस करती थीं तो उनको 'कुल-कलंकनी' की उपाधि दे दी जाती थी। शरत बाबू ऐसी स्त्रियों को जगाना चाहते थे। वे चाहते थे कि समाज में उनको भी मान मिले।

टास्क प्रभाकर जी ने राजू की असाधारण प्रतिभा का वर्णन किस प्रकार किया है?

7

"उसके बाद वह जैसे मुक्त हो गया। उसका अधिकतर समय राजू के साथ बीतने लगा। वह इन दिनों पढ़ना-लिखना छोड़कर लकड़ी के कारखाने में काम सीखता था। यदि वह मोती जैसे अक्षर लिख सकता था तो लकड़ी की सुंदर वस्तुएँ भी बना सकता था। अद्‌भुत चरित्र था उसका। एक साथ वीरता और बाँसुरी की विद्या में निष्णात। कंठ स्वर मधुर था। हारमोनियम, क्लेयर नेट खूब अच्छी तरह बजाता था। अभिनय करने की उसमें असाधारण-प्रतिभा थी। वह प्रतिभाशालियों के वंश में पैदा हुआ था। इसीलिए प्रतिभा ने उसका मुक्त होकर वरण किया था।" (पृष्ठ–26)

प्रसंग–शरत के समय में लोग बंगाल के खंजरपुर गाँव में लाला गुलजारी लाल से कर्ज लेने के लिए पहुँचा करते थे। गुलजारी उधार के धन पर काफी सूद लिया करते थे। शरत को भी उधार लेकर ही परीक्षा का शुल्क भरना पड़ता था। लेकिन शरत का एक मित्र था राजू जो समय पर शरत की हर प्रकार की सहायता करने के लिए तैयार रहता था। शरत को अपने इस मित्र से काफी आशाएँ रहती थीं। प्रस्तुत गद्यांश में लेखक ने राजू के विचित्र आचरण का उल्लेख किया है।

व्याख्या–परीक्षा देने के पश्चात् शरत को मानो मुक्ति मिल गई। अब वह अपना अधिकांश समय अपने मित्र राजू के साथ व्यतीत करने लगा। राजू एक धनी बाप का बेटा था। लेकिन उसने पढ़ाई-लिखाई का कार्य छोड़ दिया था और एक लकड़ी के कारखाने में काम सीखने के लिए जाने लगा था। शायद उसके पिता को यह विश्वास हो गया था कि वह स्कूल में पढ़ता-लिखता नहीं है और दिनभर मटरगश्ती में समय गुजार देता है। इस दृष्टि से यदि वह कोई काम सीख जाएगा तो उसका जीवन सुधर जाएगा।

राजू का लेख बहुत सुंदर था। वह मोती के समान सुंदर-सुंदर अक्षर लिखा करता था। उसके लेख की सभी लोग प्रशंसा करते थे। कारखाने में कुछ समय तक काम सीखने के उपरांत उसने लकड़ी की कुछ वस्तुएँ बनाना भी सीख लिया था। इस प्रकार राजू एक अनोखे चरित्र वाला लड़का था। वह जितना साहसी और वीर था उतना ही बाँसुरी बजाने में भी निपुण था। जिस समय वह बाँसुरी की मीठी ध्वनि बजाता था उस समय लोग उसे सुनने के लिए उसके पास आकर इकट्ठे हो जाते थे। वह बड़ी तन्मयता के साथ बाँसुरी बजाता था। उसके गले से मीठा स्वर निकलता था। इस प्रकार वह गाना और बाँसुरी बजाना दोनों प्रकार की विधाऐं जानता था। बांसुरी के अतिरिक्त वह हारमोनियम और क्लेयर नेट भी भली-भाँति बजा लेता था। उसे अनेक प्रकार के गीत बजाने का अभ्यास था। इस कला के कारण वह सारे गाँव में प्रसिद्ध था।

लेखक ने राजू के अद्‌भुत चरित्र का परिचय देते हुए लिखा है कि वह अभिनय करना भी जानता था। इस कला की उसमें अद्‌भुत प्रतिभा थी। शायद ये कलाएँ उसने इसलिए सीखी थीं क्योंकि वह एक ऐसे वंश में उत्पन्न हुआ था जो प्रतिभाशालियों का था। इसी कारण उसमें विभिन्न प्रकार की कलाएँ बड़ी सुरुचि के साथ आ गई थीं। वह कभी-कभी उनका सदुपयोग भी करता था।

विशिष्ट

1. प्रस्तुत गद्यांश में लेखक ने शरत के मित्र राजू के असाधारण चरित्र का वर्णन किया है। राजू एक ऐसा बालक था जो एक साथ बाँसुरी, हारमोनियम और क्लेयर नेट बजाना जानता था। वह बाँसुरी पर तरह-तरह की धुन निकालने में निपुण था। उसे गायन विद्या भी आती थी। उसमें अभिनय प्रतिभा थी। किसी एक बालक को

नोट

इतनी सारी कलाओं का ज्ञान होना वास्तव में विचित्र बात थी। इसीलिए लेखक की दृष्टि में राजू प्रतिभाशाली था।

2. इस गद्यांश की भाषा सरल किंतु संस्कृत के तत्सम शब्दों के साथ लिखी गई है। भाषा में जीवनी का प्रवाह न होकर औपन्यासिक भाषा का समावेश किया गया है। इस कारण भाषा में प्रसाद गुण आ गया है। इस भाषा से पाठकों को राजू के चरित्र के गुणों का परिचय सरलतापूर्वक मिल जाता है।

स्व-मूल्यांकन (Self-Assessment)

रिक्त स्थानों की पूर्ति करें (Fill in the blanks) :

1. शरत बाबू सुंदरता को समझने का गहरा .... रखते थे।
2. शरत के पास शैतानियों का अक्षय .... था।
3. राजू शरतचंद्र का परम .... था।
4. गुलजारी उधार के धन पर काफी .... लिया करते थे।

8

बाहर आकर उसने बताया, "उस मोहल्ले के तारापद का बेटा अभी-अभी हैजे में मर गया है। बेचारा तीन साल का बच्चा अनेक प्रयत्न करने पर भी बच नहीं सका। माँ-बाप पागलों की तरह रो-पीट रहे हैं। लेकिन उस रोग के रोगी की लाश को अधिक देर तक नहीं रखना चाहिए। इसी दम शमशान पहुँचा देना चाहिए। मोहल्ले के सभी लोग यहाँ यात्रा देखने के लिए आ गए हैं। अब तू भी मेरे साथ चल।"

(पृष्ठ–33)

प्रसंग–राजू और शरत दोनों परम मित्र थे। दोनों एक-दूसरे के सुख-दु:ख में भी साथ देने के लिए तैयार रहते थे। उन दिनों भारत में अंग्रेजों का शासन था। कुछ अंग्रेज भारतीयों को घृणा की दृष्टि से देखते थे। यही कारण था कि भोले-भाले भारतीयों का शोषण करने के लिए वे हर समय तैयार रहते थे। देश के प्रांतों, नगरों तथा गाँवों में जनता मलेरिया, प्लेग, कालरा आदि भयंकर बीमारियों से ग्रसित रहती थी। हजारों स्त्री-पुरुष और बच्चे दवा आदि के अभाव में असमय ही काल के गाल में समा जाते थे परंतु सरकार को इसकी बिल्कुल चिंता नहीं थी। राजू और शरत का हृदय यह सब देखकर करुणा से भर जाता था। लेकिन अभी वे बालक थे। उन्होंने जो कुछ देखा था उसी को कहने के लिए तैयार भी थे। जब कभी कोई घटना घट जाती या किसी की मृत्यु हो जाती तो टोले, मुहल्ले के लोग उसे देखने के लिए तो तैयार हो जाते थे परंतु उसके शव को उठाने के लिए कोई तैयार नहीं होता था। मानवीय करुणा की इस संवेदना को समेटने के लिए राजू और शरत हर समय तैयार रहते थे। प्रस्तुत पंक्तियों में लेखक ने दोनों मित्रों की ऐसी ही संवेदना का उल्लेख किया है–

व्याख्या–उस समय शरत चुपचाप एक कोने में बैठा हुआ था। मुहल्ले-टोले के लोग धीरे-धीरे एक स्थान पर इकट्ठे हो रहे थे। कारण यह था कि मुहल्ले में तारापद नामक एक व्यक्ति रहते थे। इस समय मुहल्ले में हैजा फैला हुआ था। बाबू तारापद का पुत्र भी हैजे का शिकार हो गया था। लोग उस अभागे के शव को करुणामयी दृष्टि से देख रहे थे। तारापद का सारा परिवार रो रहा था। मृतक की आयु लगभग तीन साल की थी। दवा-दारू के अभाव में बालक की मृत्यु हुई थी। इस दृश्य को देखकर राजू शरत के पास आया। उसने कहा कि तारापद के पुत्र की मृत्यु देखकर सभी लोग दुखी हैं। माँ-बाप की हालत तो देखी नहीं जा रही है। उन्होंने अपने जिगर के टुकड़े को बचाने के लिए सभी तरह के उपाय किए परंतु वे उसे बचा नहीं सके क्योंकि ईश्वर को यही मंजूर था। इसलिए माँ-बाप पागलों के समान हाथ-पैर पीट-पीट कर रो रहे हैं। परंतु दुख की बात यह है कि हैजे में मरे बालक की लाश को कोई हाथ नहीं लगाना चाहता है। सब लोग सोच रहे हैं कि कहीं उन्हें भी यह रोग न लग जाए। इसी बीमारी से बस लोग बचना चाहते हैं। ऐसी स्थिति में शव को घर में अधिक देर तक नहीं रखा जा सकता। इसलिए हम दोनों

को मिलकर शव को इसी समय शमशान पहुँचा देना चाहिए। मुहल्ले के सभी लोग शव-यात्रा देखने के लिए आ गए हैं। इस प्रकार राजू शरत को शमशान तक चलने के लिए राजी कर लेता है।

विशिष्ट

1. प्रस्तुत पंक्तियों में लेखक ने यह दिखाया है कि बंग-समाज कितना अंधविश्वासी और पिछड़ा हुआ था। इसी कारण वे लोग हैजे में मरे बालक को हाथ लगाने के लिए तैयार नहीं थे। शायद मन में बसी एक घिसी-पिटी और अशिक्षा से भरी विचारधारा उनको सहायता करने से विमुख कर रही थी। मानव समाज कितना पिछड़ा है, इस बात को लेखक ने बहुत सुंदर शब्दों में व्यक्त किया है। मुहल्ले-टोले में सभी प्रकार के लोग रहते हैं परंतु वे छूत-छात से डरते हैं। उनके हृदय में मानवीय संवेदना का अभाव है। इसी समय दो बालक आते हैं और हैजे से मृत्यु को प्राप्त हुए उस बालक को शमशान ले जाने के लिए तैयार हो जाते हैं। लेखक ने यथार्थ का चित्रण करते हुए यह दर्शाया है कि दोनों बालक असली जिन्दगी के कितने निकट हैं। उनमें साहस, मानवीय संवेदना, दया और करुणा के भाव हैं।
2. गद्यांश में रूढ़ियों और कुरीतियों का दृश्य बड़े मार्मिक ढंग से चित्रित किया गया है। बालक आपस में जो कुछ कहते हैं उसका तात्पर्य बड़ा गूढ़ और मर्मस्पर्शी है। राजू मृतक को देखकर वह कार्य करने के लिए तैयार हो जाता है, जिसे बड़े-बड़े करने से संकोच करते हैं। लेखक ने दिखाया है कि मानवता सभी व्यक्तियों में नहीं होती। इस मानवता को वही पहचान सकता है जो मानव के अति निकट होता है। ऐसे व्यक्ति का हृदय भावुक होता है और वह मानव जाति की सेवा करने के लिए एकदम उद्यत हो जाता है।
3. इन पंक्तियों की भाषा सरल और सुबोध है। इसी कारण राजू की सीधी-सादी बात बड़ी जल्दी समझ में आ जाती है।

9

"चूँकि साहित्य की चर्चा उन दिनों प्रत्यक्ष रूप से नहीं हो सकती थी, इसलिए उनकी यह गोष्ठी अभिभावकों की दृष्टि से बचाकर ही काम करती थी। सप्ताह में एक दिन किसी निर्जन स्थान पर वे इकट्ठे होते थे। कभी सरकारी स्कूल के पास बड़े नाले में पैर लटकाकर प्रबंध-पाठ और आलोचनाएँ करते, कभी मठ में पेड़ के नीचे या टीले पर चढ़कर ये तरुण बंधु अपना विद्रोह प्रकट करते। कब्रिस्तान में भी यह गोष्ठी होती थी। शरत के नेतृत्व में जाने कितनी अमानिशाएँ उस दल ने वहाँ काटी थीं और स्तब्ध होकर सुना था उसका संगीत।" (पृष्ठ–37)

प्रसंग–शरत साहित्य-साधना में रत रहने लगा था। उसके चारों ओर मित्रों का एक दल इकट्ठा हो गया था। उन सबने मिलकर साहित्य-गोष्ठी का निर्माण किया था। ये सब लोग एक स्थान पर इकट्ठा होकर आपस में साहित्य चर्चा करते थे। शरत ने साहित्य के माध्यम से विभूति और निरुपमा के यहाँ आना-जाना भी शुरू कर दिया था। निरूपमा लिखने का कार्य करती थी लेकिन उसके लेखकीय कार्य को उसका भाई विभूति विचार गोष्ठियों में रखता था। ये दोनों बालक सबजज श्री नफरभट्ट की संतान थे। शरत ने निरुपमा की कविताओं का रसास्वादन लिया था और वह उसकी प्रशंसा भी करता था। निम्नांकित पंक्ति में लेखक ने शरत की साहित्यिक गोष्ठी का वर्णन सीधे-सादे शब्दों में किया है–

व्याख्या–बंगाल में साहित्यिक चर्चा को शायद अच्छा नहीं समझा जाता था। इसी कारण उन दिनों प्रत्यक्ष रूप से इस चर्चा में कोई भाग नहीं ले सकता था। समाज में भी इस कार्य को अच्छा नहीं समझा जाता था। लोग सोचते थे कि साहित्यिक चर्चा के बहाने युवक अपना समय नष्ट करते हैं। लेकिन शरत तथा उसके अन्य साथी साहित्य संबंधी बातचीत के लिए किसी एकांत स्थान को चुन लेते थे और वहाँ पहुँच कर वे माता-पिता तथा संरक्षकों की आँखों से छिपकर आपस में बातचीत करते थे। यह कार्य सप्ताह में एक दिन होता था क्योंकि प्रतिदिन एक स्थान

नोट

पर इकट्ठे होकर साहित्यिक चर्चा के माने थे अभिभावकों का कोप-भाजन बनना। इसलिए वे सोचे-समझे एकांत स्थान में इकट्ठे होकर अपनी-अपनी रचनाओं को सबके सामने सुनाते थे। साहित्यिक चर्चा के लिए उनका स्थान कभी तो किसी सरकारी स्कूल के पास बड़े नाले के किनारे होता था जहाँ वे नाले में अपने-अपने पाँव नीचे लटकाकर तैयार किया हुआ पाठ पढ़ते थे तथा उसकी आलोचना को प्रस्तुत करते थे, या फिर वे कभी किसी मठ में वृक्ष के नीचे टीले पर चढ़कर कार्य का संचालन करते थे। ये तरुण बालक अपने लेखों के द्वारा देश, समाज और मानव के प्रति अपना क्रोध प्रकट किया करते थे क्योंकि समाज में रूढ़िवादिता और कुरीतियों ने अपने पाँव फैला रखे थे और मानव अशिक्षित होने के कारण उन परंपराओं को छोड़ना नहीं चाहता था।

कभी-कभी ये साहित्यकार किसी कब्रिस्तान में भी जा पहुँचते थे और गोष्ठी करते थे। उस समय शरत इन तरुणों का नेतृत्व करता था। वह गोष्ठी का अध्यक्ष चुना जाता था। इस प्रकार न जाने कितनी अमावस की रातें इन लोगों ने एकांत स्थान में व्यतीत की थीं। इस गोष्ठी में शरत गीत भी गाता था। अत: उसके गीत-संगीत का भी आनंद लोगों ने लिया था।

विशिष्ट

1. प्रस्तुत पंक्तियों में लेखक ने शरत तथा उसके दल के तरूणों की साहित्यिक गोष्ठी की चर्चा की है। ये गोष्ठियाँ प्राय: एकांत स्थान में हुआ करती थीं क्योंकि ये लोग कुछ विशेष कारणों से उनका आयोजन सार्वजनिक रूप से नहीं कर सकते थे। ये लोग सप्ताह में एक दिन प्राय: शमशान भूमि, कब्रिस्तान, नाले के निकट आदि स्थान में बैठा करते थे। इन गोष्ठियों के विषय में ज्ञान प्राप्त कर यह विदित होता है कि बंग-समाज अत्यधिक पिछड़ा हुआ था। इसी कारण वे अपने बालकों को कोई भी सार्वजनिक कार्य करने की आज्ञा नहीं देते थे। इन पंक्तियों से पता चलता है। कि शरत को साहित्यिक जीवन जीने के लिए कितनी कठिनाइयों का सामना करना पड़ता था।
2. यह गद्यांश शरत की साहित्यिक गतिविधियों का परिचय देता है।
3. गद्यांश की भाषा सरल किंतु संस्कृतनिष्ठ है।

टास्क शरत किस प्रकार सौंदर्य देवी की उपासना में डूबे रहते थे?

10

"गृहस्थी से शरत का कभी लगाव नहीं रहा। संसार के इस कुत्सित रूप से मुँह मोड़कर वह काल्पनिक संसार में जीना चाहता था। इस दुर्दान्त निर्धनता में भी उसकी सौंदर्य भावना तनिक भी धूमिल नहीं हुई थी। वह जितना उच्छृंखल था उसका रहने का कमरा उतना ही व्यवस्थित था। लेकिन सौंदर्य-भावना पेट की आग नहीं बुझा सकती। गृहस्थी कल्पना के सहारे नहीं चलती, वह तो ठोस द्रव्य चाहती है और यहाँ उसका कोई संतोषजनक प्रबंध नहीं था। न उसे इसकी चिंता थी और न उसके पिता को। जो कुछ बेचने योग्य था वह सब बिक गया था। मित्र और रिश्तेदार कब तक सहायता कर सकते हैं?" (पृष्ठ–40)

प्रसंग–शरत आवारा प्रकृति का व्यक्ति था इसलिए उसे विवाह करके गृहस्थी जोड़ने में बिल्कुल रुचि नहीं थी। गृहस्थी को वह एक बंधन समझता था। इसी कारण उसने कभी सोचा ही नहीं कि किसी स्त्री से विवाह किया जाए। लेकिन नियति को कुछ और ही मंजूर था। कुछ समय बाद उसके हृदय में प्रेम के बीच अंकुरित हुए थे और उसने अपनी गृहस्थी सजाई थी। इन पंक्तियों में लेखक ने शरत की आन्तरिक भावना के संबंध में लिखा है–

व्याख्या–शरत को गृहस्थी से कभी प्रेम नहीं रहा। इसका मुख्य कारण यह था कि वह गृहस्थी को संसार का एक बुरा रूप समझता था। असल में वह साहित्यकार था इसलिए उसकी इच्छा कल्पना के विश्व में विचरण करने की रहती थी। वह स्वांत: सुखाय के लिए प्रत्येक कार्य करता था। यह दूसरी बात थी कि वह साहित्यिक गोष्ठियों में भी जाता था। यद्यपि वह निर्धन था। फिर भी इस गरीबी में भी वह सौंदर्य देवी की उपासना में डूबा रहता था अर्थात् उसके हृदय में सुंदरता के विचार बराबर उठते रहते थे। लेखक के कथनानुसार वह स्वतंत्र विचारधारा में विचरण करता रहता था। लेकिन उसने अपने कमरे में प्रत्येक वस्तु को यथास्थान पर रखने का प्रयास किया था। अपने कमरे को सजाकर रखने में उसे सुख मिलता था। इसी कारण वह प्रत्येक वस्तु को ठीक ठिकाने से रखने के लिए परिश्रम करता रहता था। लेकिन सुंदरता की पूजा करने से रोजी का प्रश्न हल नहीं हो सकता था। इसके लिए कोई न कोई रोजगार करना जरूरी था। गृहस्थी को चलाने के लिए धन की आवश्यकता होती है और यह धन रोजगार या नौकरी के द्वारा ही प्राप्त हो सकता है। इसलिए ऐसा कहा गया है कि साहित्यकार भूखे मरते हैं क्योंकि गृहस्थी को चलाने के लिए ठोस रूप में धन की आवश्यकता होती है। लेकिन शरत के पास नियमित रूप से ऐसा कोई धंधा नहीं था जिससे वह अपने घर-बार की व्यवस्था कर सकता। उसे धनोपार्जन की चिंता भी नहीं रहती थी क्योंकि वह इधर-उधर भ्रमण करने और साहित्य-सृजन में अपना समय व्यतीत कर दिया करता था। धनोपार्जन की चिंता उसके पिता को भी नहीं थी। इसी कारण उसके घर में सदैव धनाभाव रहता था। गृहस्थी धन से चलती है। इसलिए उसे चलाने के लिए घर में जो भी वस्तु बेचने लायक थी उसे बेचकर काम चला लिया गया था। इसके बाद मित्रों और सगे-संबंधियों से भी सहायता ली गई थी परंतु वे लोग कब तक सहायता कर सकते थे। ऐसी स्थिति में शरत को हर समय कठिनाइयों का सामना करना पड़ता था।

विशेष

1. शरत किसी भी हालत में सौंदर्य भावना को छोड़ना नहीं चाहता था। लेकिन सौंदर्य भावना से साहित्यकार का पेट नहीं भर सकता। पेट भरने के लिए साहित्यकार को कोई न कोई रोजगार या किसी की नौकरी अवश्य करनी पड़ती है। परंतु शरत के पास धनोपार्जन के साधन नहीं थे। पिता की ओर से भी उसको धन संबंधी कोई सहायता प्राप्त नहीं थी। अत: शरत का जीवन अत्यधिक गरीबी में व्यतीत होता था। इतने पर भी शरत साहित्य सृजन के कार्य में लगा हुआ था। उसने अपनी पुस्तकों आदि को अलमारी में सजाकर रखा था।
2. इन पंक्तियों में लेखक ने शरत के साहित्यिक जीवन पर थोड़ा-सा प्रकाश डाला है। एक अच्छा साहित्यकार बनने के लिए अच्छी कल्पना और पेट पालने के लिए किसी न किसी धंधे की भी आवश्यकता पड़ती है क्योंकि साहित्यकार भी मानव है और मानव तभी जीवित रह सकता है जबकि उसे पेट भरने के लिए भोजन और तन ढकने के लिए वस्त्र मिलते रहें।

11

"इस घृणा और अपमान के कारण उसके दर्द की कोई सीमा नहीं थी। अक्सर सोचता था कि दूसरे के घर पर रहकर अपमान पाने से तो सड़क, जंगल, रेगिस्तान कहीं भी रह जाना अच्छा है। उसकी बड़ी बहन कलकत्ता के पास गोविन्दपुर गाँव में रहती थी। प्रयत्न किया कि उसके पास जाकर रहे। गिरीन्द्रनाथ को लिखे एक पत्र से ऐसा लगता है कि वह वहाँ जाकर रहा भी था।" (पृष्ठ–46, 47)

प्रसंग–शरत जब भाई-बहनों की व्यवस्था करके कुछ निश्चिन्त हुआ तो जीविका की खोज में बिहार से कलकत्ता जा पहुँचा। उसके रिश्ते के एक मामा ने उसे एक काम दिला दिया। जैसे-तैसे वह दिन काटने लगा। उसे मालिक के घर के अन्य कार्य भी करने पड़ते थे जैसे सब्जी लाना, संबंधियों के घर से सामान ढोकर लाना आदि। एक बार शरत के मामा ब्रुश को लेकर उस पर नाराज हो गए और उन्होंने शरत से ब्रुश छीनकर बाहर फेंक दिया। शरत समझ गया कि उसके मामा उससे नौकरों जैसा व्यवहार करते हैं। वह इस अपमान को मन ही मन विष की घूँट की तरह पीकर रह गया। इस गद्यांश में लेखक ने शरत के दुखों और कष्टों का वर्णन किया है।

नोट

व्याख्या—अपने मामा द्वारा अपमानित होने के कारण शरत को असहनीय पीड़ा पहुँची लेकिन देखा गया है कि जब मनुष्य किसी के यहाँ रहकर उसके अहसानों से दबा रहता है, तो वह चुपचाप सब कुछ सहन कर लेता है। शरत ने भी मामा के घर रहकर तरह-तरह के अपमान सहन किए। तब वह सोचा करता था कि दूसरे के घर पर रहना एक प्रकार से दासता का जीवन है। अत: ऐसे जीवन से तो किसी सड़क के किनारे, जंगल या रेगिस्तान में समय काट देना कहीं अच्छा है। उसकी बड़ी बहन कलकत्ता के पास गोविन्दपुर गाँव में रहती थी। शरत ने सोचा कि इससे अच्छा तो यही है कि मैं गाँव में उसके पास जाकर रहूँ क्योंकि वह उसकी सगी बहन थी और शरत के विश्वास के अनुसार बहन भाई को अत्यधिक प्यार करती है। लेखक ने इस प्रसंग में किन्हीं गिरीन्द्रनाथ का हवाला दिया है। शायद शरत ने उनको पत्र लिखा था जिसमें बहन के पास जाने का जिक्र मालूम पड़ता है। परंतु यह बात निश्चित नहीं है। कुछ भी सत्य हो, किंतु शरत का स्वच्छंद स्वभाव वहाँ भी अधिक समय उसे निभाव के मार्ग पर ले जाकर खड़ा नहीं कर सका। इस प्रकार एक दिन शरत ने बहन का घर भी छोड़ दिया।

विशेष—शरत वास्तव में आत्मस्वाभिमानी तरुण था। कोई उसका अपमान करे और वह उसे सहन कर ले, ऐसी बात उसकी आत्मा कभी स्वीकार नहीं करती थी। इस कारण वह छोटे से अपमान को देखकर भी स्थान को तुरंत छोड़ देता था। अपमान का ऐसा ही घूंट पीकर शरत ने अपने मामा का घर छोड़ दिया था। शरत को बड़ा दुख हुआ था कि जो व्यक्ति संबंधी होकर भी उससे घृणा करता है, वास्तव में वह मानव न होकर दानव है। मानवता छोटे-बड़े का भेदभाव नहीं करती है। मानवता के हाथों में तो दया, धर्म, सहानुभूति, सहृदयता और स्नेह के सूत्र होते हैं जिनको जोड़कर वह व्यक्ति को देवत्व की ओर ले जाता है। फिर भला शरत जैसा व्यक्ति जो स्वतंत्र विचारों को सदैव अपने हृदय में बसाए रहता था, एक स्थान पर बंधकर और वह भी अपमानित जीवन जीकर कभी नहीं रह सकता था। इसी कारण उसको घाट-घाट का पानी पीना पड़ा।

12

"ऐसा लगा जैसे दुख के दिन बीत गए, लेकिन वह मात्र एक छल था। नौकरी डेढ़ वर्ष भी नहीं चल सकी और बर्मी भाषा की परीक्षा में भी सफलता नहीं मिली। तब वकील कैसे बन सकता था? जो स्वप्न उसने देखा था वह बस स्वप्न बनकर ही रह गया। हाँ, अपने जन्मजात गुणों के कारण यहाँ के मध्यवर्गीय बंगाली समाज में वह अब तक काफी प्रसिद्ध हो चुका था। उसका गाना सुनने के लिए अनेक भद्र लोग अघोरनाथ के घर आते थे।" **(पृष्ठ–52)**

प्रसंग—शरत जीविकोपार्जन के लिए रंगून जा पहुँचा। बर्मा में प्राय: प्लेग फैल जाता था। इसलिए वहाँ की सरकार बहुत सावधान रहती थी। शरत भिक्षुक जैसे वेश में अपने रिश्ते के एक मौसा अघोरनाथ के घर गया। अघोरनाथ एक दयालु व्यक्ति थे। वे रंगून के प्रसिद्ध एडवोकेट तथा बड़े व्यक्ति थे। उन्होंने शरत की सहायता करने का वचन दिया। उनके घर में प्रत्येक शनिवार को गाने-बजाने का कार्यक्रम होता था। उसमें सभी जातियों और धर्मों के लोग भाग लेते थे। शरत ने भी सबको अपना गीत सुनाया। सब लोग उसका गीत सुनकर बड़े प्रसन्न हुए। उसके मौसा ने उसे बर्मा रेलवे के आडिट आफिस में काम दिला दिया। मौसेरी बहन को संगीत की शिक्षा देने के लिए भी नियुक्त कर दिया। इस प्रकार शरत की रोजी-रोटी का एक ठिकाना हो गया। प्रस्तुत गद्यांश में लेखक ने शरत के बर्मी जीवन का वर्णन किया है।

व्याख्या—शरत को मौसा द्वारा आर्थिक सहायता मिलने लगी। अत: अब उसके दु:खों का जैसे अंत होने लगा। परंतु प्रभाकर जी के कथनानुसार वह सब कुछ दिखावटी था। उसके पीछे दुख, दैन्य और अलगाव के भाव छिपे हुए थे। शरत की नौकरी मुश्किल से डेढ़ वर्ष तक ही चल सकी। बर्मा की सरकार के आदेशानुसार शरत को बर्मी भाषा की परीक्षा देनी पड़ी। परंतु वह बर्मी भाषा की परीक्षा में अनुत्तीर्ण घोषित कर दिया गया क्योंकि वह परीक्षा की ठीक प्रकार से तैयारी नहीं कर सका। यह परीक्षा उत्तीर्ण करने के पश्चात् वह वकालत भी पास कर सकता था। लेकिन उसकी सारी योजना पानी में बह गई। जो सपना उसने अपने मन में संजोया था वह साकार रूप धारण नहीं कर सका। परंतु संगीत और साहित्य में रुचि लेने के कारण बंगाली लोग उसे पहचानने लगे थे। अत: वह अपने जन्मजात गुणों

नोट

के कारण बंगाली समाज में आदर पा चुका था। उसे सुनने के लिए लोग लालायित रहते थे क्योंकि वह साधारण बातें न बताकर गूढ़ बातें बताता था जिनमें देश और समाज की भलाई हो सकती थी। उसका गाना सुनने के लिए अघोरनाथ के घर अनेक सज्जन पुरुष आया करते थे इसलिए अघोरनाथ ने भी परीक्षा में फेल हो जाने के पश्चात् उससे कुछ नहीं कहा।

विशेष

1. शरत को अचानक रंगून में रेलवे में एक नौकरी मिल गई। इससे उसको लगा कि अब दुख के दिन समाप्त हो गए हैं। परंतु मनुष्य के कर्म उसके साथ-साथ चलते हैं। शरत का भाग्य ने साथ नहीं दिया। वह बर्मी भाषा की परीक्षा में असफल रहा। इस कारण उसका वकील बनने का स्वप्न टूट गया। उसके जन्मजात गुणों ने उसे टूटने नहीं दिया। चूँकि वह गाना बजाना जानता था अत: बंगाली समाज में वह प्रसिद्ध हो गया। इस प्रकार उसके दिन किसी प्रकार कटने लगे परंतु अभी दुख के दिन समाप्त नहीं हुए थे क्योंकि वह स्थायी रूप से किसी नौकरी में नहीं लग पाया था। यहाँ पर शरत को टूट जाना चाहिए था, परंतु वह एक साहसी व्यक्ति था इसलिए उसने ईश्वर को धन्यवाद दिया और आगे के विषय में सोचने लगा।
2. इन पंक्तियों में लेखक ने शरत के कार्यों पर प्रकाश डाला है। मनुष्य जैसा कर्म करता है वैसा ही उसे फल मिलता है। यदि शरत बर्मी भाषा की तैयारी मनोयोग से करता तो उसका भविष्य सुधर सकता था। लेकिन उसने असावधानी से बर्मी भाषा की तैयारी की। इसी कारण वह असफल रहा।

नोट्स सफलता उसी के चरण चूमती है जो सफलता पाने के लिए दृढ़ प्रतिज्ञ होकर कर्म करता है।

13

"वह अपने को निरीश्वरवादी कहकर प्रचारित करता था। लेकिन सारे व्यसनों और दुर्गुणों के बावजूद उसका मन वैरागी मन था। वह बहुत पढ़ता था। समाज विज्ञान, यौन विज्ञान, भौतिक विज्ञान, दर्शन, कुछ भी तो उससे नहीं छूटा था। मणीन्द्र कुमार मित्र के साथ पाश्चात्य दार्शनिकों को लेकर उसकी खूब चर्चा चलती थी। इसी दर्शन-प्रेम के कारण वह स्थानीय रामकृष्ण मिशन के स्वामी रामकृष्णानंद के संपर्क में आया।" (पृष्ठ–55)

प्रसंग–शरत सदैव न्याय की बातें किया करता था। उसे बंग-समाज की दकियानूसी और घिसीपिटी बातों में विश्वास नहीं था। वह कहता था कि दीन-दुखियों की मदद करना हमारा कर्तव्य है। स्त्रियों को समाज में आदर मिलना चाहिए क्योंकि पुरुषों के समान स्त्रियाँ भी मनुष्य जाति की एक अंग हैं। ईश्वर उसी की सहायता करता है जो अपनी सहायता स्वयं करता है। जो लोग स्वार्थवश ईश्वर को याद करते हैं वे ढोंगी हैं। इस प्रकार शरत ऐसे ईश्वर को मानता था जो कभी अन्याय और स्वार्थ की बात नहीं बताता। उसे चमत्कार में विश्वास नहीं था। जबकि बंग-समाज में जो परम्पराएँ थीं वे अंधविश्वास पर आधारित थीं। यदि शरत इन परंपराओं को तोड़कर सच्ची बात मानने के लिए कहता था तो लोग कहते थे कि शरत ईश्वर को नहीं मानता है। प्रस्तुत गद्यांश में लेखक ने शरत के मनोभावों का बड़े दार्शनिक रूप में वर्णन किया है।

व्याख्या–शरत अपने आपको ईश्वर न मानने वाला व्यक्ति कहकर प्रचारित करता था। उसका कहना था कि अंधी भक्ति और अज्ञानता से भरी ईश्वर की वंदना से तो ईश्वर को न मानना कहीं अच्छा है। उसने अत्यधिक निर्धनता और अभाव का जीवन जिया था इसलिए उसका विश्वास ईश्वर पर से उठ गया था। इसी कारण वह निरीश्वरवादी के रूप में प्रसिद्ध हो गया था। उसमें अन्य व्यसन जैसे शराब पीना, अफीम खाना आदि मौजूद थे। लेकिन इन बुराइयों के बावजूद भी उसके मन में संसार से दूर हटकर सोचने की भावना थी। इस प्रकार से वह वैरागियों की तरह भ्रमण

नोट

किया करता था। उसके मन में कोई एक बात अच्छी तरह जमती ही नहीं थी। इतने पर भी वह अध्ययन की ओर विशेष ध्यान देता था। वह समाज विज्ञान, यौन विज्ञान, भौतिक विज्ञान, दर्शन आदि विषयों को विशेष रुचि के साथ पढ़ता था। पाश्चात्य दर्शन पर वह मणीन्द्रनाथ के साथ भली-भाँति विवाद करता था और इसके बाद भारतीय दर्शन से उसकी तुलना करके किसी निष्कर्ष पर पहुँचना चाहता था। इस प्रकार उसे दर्शन से भी विशेष प्रेम था। इसी प्रेम के कारण उस समय के प्रसिद्ध स्वामी रामकृष्णानंद जो रामकृष्ण मिशन के अध्यक्ष थे, से भी दर्शन विषय पर अच्छी तरह चर्चा होती थी। इससे पता चलता है कि शरत को सभी प्रकार के ज्ञान-विज्ञान को ग्रहण करने की इच्छा रहती थी और उसने कुछ विषयों का तो गंभीरता से अध्ययन भी किया था।

विशिष्ट

1. शरत ने अनेक प्रकार के विज्ञान और दर्शन का अध्ययन किया था। जिसके फलस्वरूप वह इस परिणाम पर पहुँचा था कि दरिद्रों, दुखियों और स्त्रियों की सहायता करने में जितनी प्रसन्नता होती है उतनी प्रशंसा भगवान की पूजा करने में भी नहीं होती। इस दृष्टि से वह जीवित मानव की सेवा करना ही ईश्वर की सेवा मानता था। उसकी इस भावना को देखकर कुछ लोगों ने कहना शुरू कर दिया था कि शरत निरीश्वरवादी है। पर शरत वास्तव में निरीश्वरवादी नहीं था। उसका हृदय मानवीय संवेदना से भर उठता था और इसी कारण वह बंग-समाज से रूढ़िवादी विचारधारा को निकाल फेंकना चाहता था।
2. इन पंक्तियों में लेखक ने शरत की अध्ययनशीलता पर प्रकाश डाला है। शरत एक साहित्यकार था और वह समाज के सुख-दुख को अपना सुख-दुख समझता था। इसी कारण उसने ज्ञान-विज्ञान का गंभीरतापूर्वक अध्ययन किया था। उसे पाश्चात्य दर्शन का भी अच्छा ज्ञान था।
3. इस गद्यांश की भाषा सरल और सुबोध है। इसमें विचारों को प्रकट करने की क्षमता है। इसके माध्यम से शरत की गहन अध्ययन में कितनी रुचि थी, इस बात को स्पष्ट किया गया है।

टास्क 'हिरण्यमयी के कारण हिन्दु के घर में तुलसी का पौधा भी आ गया।' इस पंक्ति से क्या तात्पर्य है?

14

"एक बार फिर जैसे उसके लिए जीवन के अर्थ बदल गए। गृहस्थी बसा लेने के बाद उसकी सौंदर्य भावना फिर जाग गई थी। प्रेम ने उसके घर में फूलों की सुषमा बिखेर दी। उसे पुस्तकों से प्रेम था, पशु-पक्षियों से प्रेम था। वह प्रेम अब सुव्यवस्थित और सघन हो उठा। हिरण्यमयी के कारण हिन्दू के घर में तुलसी का पौधा भी आ गया।" **(पृष्ठ-70)**

प्रसंग–शरत ने कृष्णदास अधिकारी महोदय की कन्या मोक्षदा से समाज और कानून को ठोकर मारकर विवाह किया। इसके बाद मोक्षदा का नाम हिरण्यमयी रखा। मोक्षदा जैसी सेवक पत्नी को पाकर शरत को लगा, जैसे उसके हृदय में प्रकाश की किरण फूट पड़ी हो। मोक्षदा अब उसकी प्रेरणा बन गई, शक्ति बन गई। इस प्रकार मोक्षदा ने भी कानूनी पत्नी न होते हुए भी पत्नीत्व के दायित्व को पूर्ण रूप से निभाया। लेखक ने प्रस्तुत पंक्तियों में सच्चे प्रेम और मिलन का वर्णन बड़े सुंदर शब्दों में किया है।

व्याख्या–मोक्षदा अर्थात हिरण्यमयी के आ जाने के बाद शरत के हृदय के प्रेम-प्रसून खिल उठे। अभी तक उसका जीवन बड़ा अव्यवस्थित रहता था। लेकिन जब सच्चे विवाह को उसने स्वीकार कर लिया तो एक बार फिर उसके जीवन में बहार आ गई। उसकी पूर्व पत्नी की मृत्यु हो चुकी थी। अत: वह बड़ा अनमना-सा रहता था। पर मोक्षदा

का साथ पाकर उसके मन में ठीक प्रकार से जीने की लालसा बढ़ गई। उसने गृहस्थी बसा ली थी इसलिए वह पुन: सुंदरता को पाने वाले विचारों में तैरने लगा। जब व्यक्ति का टूटा हुआ प्रेम फिर से जुड़ जाता है तो उसके मुख पर प्रेम की लाली अपने आप आकर बिखर जाती है। शरत के चेहरे पर भी ऐसी ही लाली ने अपना घर बना लिया। प्रेम के ऐसे सुखद वातारण के कारण उसके घर में फूलों की-सी छटा दिखाई देने लगी। शरत को पुस्तकों और पशु-पक्षियों से अत्यधिक प्रेम था। इसी कारण उसके पास पुस्तकों की एक लायब्रेरी थी। उसने तोता, मैना, कुत्ता आदि पशु-पक्षी पाल रखे थे। वह इन सबका बहुत ध्यान रखता था। पत्नी के घर में आ जाने के कारण उसे इन सबकी ओर से चिंता नहीं रही क्योंकि गृहिणी इन सबकी देखभाल अच्छी तरह कर सकती थी। हिरण्यमयी के आने के कारण शरत ने घर में तुलसी का पौधा भी लगा लिया। तुलसी में ऑक्सीजन (शुद्ध वायु) अधिक होती है। वातावरण को शुद्ध करने के लिए प्रत्येक हिन्दू अपने घर में तुलसी का पौधा लगाना शुभ मानता है।

विशेष

1. लेखक ने दर्शाया है कि प्रेम का संसार कितना निराला है। जिस व्यक्ति की पहली पत्नी की मृत्यु हो जाती है उसकी गृहस्थी एक प्रकार से अव्यवस्थित हो जाती है। उसके चारों ओर अंधकार ही अंधकार दिखाई देने लगता है। शरत के जीवन में भी अंधकार छाया हुआ था लेकिन अचानक दूसरी पत्नी मोक्षदा के आ जाने से उसकी सौंदर्य भावना फिर से जाग गई। उसकी गृहस्थी व्यवस्थित हो चली। वास्तव में प्रेम का संसार बड़ा निराला है।
2. शरत के जीवन का वास्तविक चित्रण इस गद्यांश में किया गया है। विवरण को सीधे-साधे शब्दों में व्यक्त किया गया है। भाषा में काव्यात्मकता का-सा आनंद है जिससे शरत की प्रेम-भावना उभर कर पाठकों के सामने आ जाती है।

15

"उसी समय सहसा धोबी का आर्त्तनाद सुना। प्राणों के भय से वह अपनी बकरी खोलना भूल गया था। शरत तुरंत दौड़ा। किसी के निषेध की उसने परवाह नहीं की। जलते हुए घर में घुस गया। सभी लोग हाय-हाय करने लगे। परंतु उसी क्षण आग और धुएँ के कुण्डल के बीच में से बकरी के बच्चे को छाती से चिपकाए हुए वह विद्युत गति से बाहर आया। ठीक इसी समय वह जलता हुआ घर बड़े जोर से टूटकर गिर पड़ा।"

प्रसंग–शरत धनोपार्जन के लिए रंगून में रहने लगा था। अचानक एक संध्या को उसके घर में आग लग गई। घर का सारा सामान उस आग में जल गया। शरत ने एक विदेशी व्यक्ति से बहुत सी पुस्तके खरीदी थीं। वे पुस्तकें भी अग्नि में स्वाहा हो गईं। इसके अतिरिक्त वर्षों की तपस्या के बाद उसने 'चरित्रहीन' नामक एक उपन्यास लिखा था। आग ने उसे भी अपनी लपटों में समेट लिया। शरत को सबकुछ जल जाने का बड़ा दुख हुआ किंतु उसे इस बात की प्रसन्नता भी थी कि उसने कुछ पुस्तकें, अपनी पत्नी और पशु-पक्षी को बचा लिया था। प्रस्तुत पंक्तियों में लेखक ने आग लगने के बाद शरत के द्वारा एक धोबी की सहायता करने का वर्णन किया है।

व्याख्या–शरत जिस मकान में रहता था उसके नीचे के तल्ले में एक धोबी रहता था। अचानक घर में आग लग गई। जिस समय घर में आग लगी, सब लोग सोए हुए थे। पड़ोसियों के चीखने-चिल्लाने पर सब लोग उठ-उठकर इधर-उधर भागने लगे। शरत ने उस आग से किसी तरह अपनी पत्नी, पशु, पक्षी आदि को बचा लिया लेकिन वह पुस्तकों को नहीं बचा सका। इसी समय उसके कान में एक धोबी के रोने-धोने की आवाज आई। धोबी आग देखकर स्वयं अपने प्राण लेकर मकान के बाहर भाग गया था परंतु वह अपनी बकरी को बाहर निकालना भूल गया था। शरत ने धोबी की चीख-पुकार सुनी तो वह तुरंत भीतर की ओर दौड़ पड़ा। लोग मना करते रहे लेकिन उसने किसी की बात नहीं सुनी। वह सबके देखते-देखते उस जलते हुए घर में प्रविष्ट हो गया। जिसने देखा वही दुख में डूब गया। बहुत से स्त्री पुरुष हाय-हाय करने लगे। लेकिन शरत मकान के भीतर से बकरी को खोजने लगा। उसने शीघ्र ही

नोट

बकरी को ढूँढ़ लिया। थोड़ी देर बाद लोगों ने देखा कि शरत धुएँ के बादलों के बीच में से बकरी के बच्चे को छाती से चिपटा कर बड़ी तेजी से बाहर की ओर आ रहा है। सब लोग उसके साहस को देखकर चकित रह गए। ठीक इसी समय आग ने लगते हुए घर को ढा दिया। सचमुच शरत ने अप्रतिम साहस का परिचय दिया था।

विशिष्ट–लेखक ने दर्शाया है कि शरत कितना साहसी था। वह दूसरों के दु:ख को बिल्कुल नहीं देख पाता था। उसे दूसरों की सहायता करने में विशेष आनंद आता था। वह जानता था कि मानवता क्या चीज है? इसी कारण जब उसने देखा कि धोबी भूलवश बकरी का बच्चा ऐसे मकान में छोड़ आया है जो चारों ओर बुरी तरह आग से घिर गया है, तो वह उस निरीह पशु को लेने के लिए आग में घुस गया। उस समय उसने अपनी जान की भी परवाह नहीं की। सच है, जो लोग साहसी और परोपकारी होते हैं वे आगे बढ़ने के बाद पीछे हटना नहीं जानते हैं, ऐसे लोग देवता होते हैं, मसीहा होते हैं, कृष्ण होते हैं, शिवाजी होते हैं। उनमें मानवीयता के गुण बचपन से ही आ जाते हैं। शरत इस क्षेत्र में अपना उदाहरण स्वयं था।

स्व-मूल्यांकन (Self-Assessment)

बहुविकल्पीय प्रश्न (Multiple Choice Questions) :

5. शरत की शरारत पर माया ने शरत की किससे पिटाई की?

   (क) चाबुक (ख) चप्पल

   (ग) डंडा (घ) इनमें से कोई नहीं।

6. प्रभाकर जी के अनुसार शरत ने किसकी उपासना की प्रतिज्ञा ली होगी?

   (क) देवी (ख) सौंदर्य

   (ग) भगवान (घ) इनमें से कोई नहीं।

7. बर्मी भाषा की परीक्षा पास करने के बाद शरत बाबू क्या बन सकते थे?

   (क) डॉक्टर (ख) इंजीनियर

   (ग) वकील (घ) इनमें से कोई नहीं।

16

"उसमें अब रवींद्रनाथ जैसा लिखने का विश्वास पैदा हो गया था। इसलिए वह चाहता था कि बचपन की रचनाओं को यदि प्रकाशित करना ही है तो एक बार फिर से देख लेना आवश्यक है। इस दृष्टि से 'काशीनाथ' जब पुस्तकाकार छपा तो उसमें उसने काफी संशोधन किए। पत्रिका में छपते समय इस रचना का अंत काशीनाथ हत्या और कमला की हत्या से होता है, परंतु पुस्तक रूप में आने पर वह कथा सुखांत हो गई।"

प्रसंग–रंगून से लौटकर शरत ने तेजी से लिखना शुरू कर दिया था। बंगाल में लोगों को पता चल चुका था कि शरतचंद्र नाम का एक व्यक्ति है जो कथाशिल्पी है। शरत की कहानियाँ 'यमुना' नामक पत्रिका में छपती थीं जिन्हें पढ़कर लोग आश्चर्यचकित रह जाते थे क्योंकि शरत बंगाल की अनेक समस्याओं को अपनी कहानियों में रखता था। इसी समय बचपन में लिखी बहुत-सी रचनाएँ भी मित्रों के सहयोग से छपने लगीं। कुछ लोग उसकी रचनाओं की प्रशंसा करते थे और कुछ कहते कि ये अपरिपक्व मस्तिष्क की रचनाएँ हैं। लेकिन जो बात सच होती उसे शरत भी स्वीकार करता। वह अपनी प्रशंसा कभी नहीं करता, वरन अपने साहित्य के द्वारा लोगों को यही समझाने की चेष्टा करता कि बंगाल के समाज में सुधार की आवश्यकता है। स्त्रियों के क्षेत्र में विधवाओं, वेश्याओं आदि के प्रति सहानुभूतिपूर्ण व्यवहार करने की जरूरत है क्योंकि स्त्रियाँ हैं तो मनुष्य ही। यदि स्त्रियाँ नहीं होंगी तो मानव कैसे रहेगा?

नोट

व्याख्या—शरत हर समय कुछ न कुछ अवश्य लिखता था। बंगाल में उसकी प्रतिष्ठा लेखक के रूप में होने लगी थी। रवींद्रनाथ बंगाल के प्रसिद्ध लेखक थे। इस प्रकार इस समय तक शरत में भी रवींद्रनाथ के समान लिखने का विश्वास पैदा हो गया था। उसने बचपन में बहुत-सी रचनाएँ लिखी थीं जो अभी तक प्रकाशित नहीं हुई थीं। उसके मित्र उन रचनाओं को भी छपवाना चाहते थे। परंतु शरत चाहता था कि उन रचनाओं को प्रकाशित कराने से पहले एक बार देख लेना आवश्यक हैं क्योंकि उन रचनाओं में बहुत-सी ऐसी बातें हो सकती हैं जो देश और समाज को हानि पहुँचा सकती हैं, लोगों को ठेस पहुँचा सकती हैं। इस दृष्टि से उसने 'काशीनाथ' में काफी संशोधन किया। पहले यह रचना दुखांत थी लेकिन संशोधन के बाद इसे सुखांत किया गया। लेखक ने लिखा है कि 'काशीनाथ' पत्रिका धारावाहिक के रूप में छपी थी। उस समय इस रचना में काशीनाथ तथा कमला की हत्याएँ की गई थीं। परंतु जब इसका प्रकाशन पुस्तक के रूप में किया गया तो इसे सुखांत बना दिया गया। काशीनाथ और कमला की हत्या वाले भाग निकाल दिए गए। हो सकता है कि शरत ने काशीनाथ की कथा को मधुर बनाने के लिए ऐसा किया हो। लेकिन कथा रोचक हो गई।

विशिष्ट—प्रस्तुत गद्यांश में लेखक ने दर्शाया है कि शरत 'काशीनाथ' नामक रचना के पुस्तक के रूप में प्रकाशित होने तक बंगाल में एक लेखक के रूप में प्रतिष्ठापित हो चुका था। उसके अंदर प्रौढ़ों की गंभीरता और एक प्रसिद्ध लेखक की गौरव गरिमा समा गई थी। इसी कारण प्रभाकर जी की दृष्टि में शरत एक सीमा तक रवींद्रनाथ के बराबर का लेखक हो गया था। परंतु वह अपने से संतुष्ट नहीं था। वह अपने लेखकीय कार्य में सुधार करना चाहता था। इसी कारण इस काल में उसने जितनी रचनाएँ प्रकाशनार्थ दीं, सभी में कुछ न कुछ संशोधन अवश्य किया। भाषा-सुधार की ओर भी उसने ध्यान दौड़ाया। इससे रचनाओं में प्रसाद गुण आ गए और साधारण पाठक भी उनको पढ़ने के लिए लालायित हो उठा।

उदाहरण—शरत के घर में आग लगी होने पर भी पड़ौसी के आग लगते हुए घर से बकरी को बचाकर लाना एक अच्छा इन्सान होने का प्रतीक है।

17

"जो पक गया है उसको बाँधे रखना दूसरों के लिए देखने में अच्छा लग सकता है, लेकिन जिस आदमी के शरीर में घाव है उसको तो कोई सुविधा नहीं होती। केवल सौंदर्य-सृष्टि के अतिरिक्त उपन्यास लेखक का और एक महत्त्वपूर्ण काम है। वह काम यदि घाव को देखना है तो वैसा करना ही होगा। आस्टिन मेरी कारेली एवं सारा ग्रेंड ने समाज के अनेक घावों पर से पर्दा उठाया है। ठीक करने के लिए, केवल लोगों को दिखाकर भयभीत करने या मनोरंजन करने के लिए नहीं...तुमने लिखा है 'चरित्रहीन' दूसरे नाम से प्रकाशित करना, इससे सबसे अधिक दुख हुआ।" (पृष्ठ-82)

प्रसंग—छोटी से छोटी रचनाओं के साथ-साथ शरत 'चरित्रहीन' बराबर लिख रहा था। उसको प्रकाश्ति करने के संबंध में एक प्रकार की हलचल मची हुई थी। 'यमुना' नामक पत्रिका में 'चरित्रहीन' का विज्ञापन छपना शुरू हो गया था। लेकिन शरत ऐसा नहीं चाहता था। अत: वह बहुत कठिनाई में पड़ गया। अत: उसने प्रमथ को एक पत्र लिखा। पत्र में उसने यही व्यक्त किया कि 'चरित्रहीन' का विज्ञापन देना एक प्रकार से अनुचित है क्योंकि लोगों पर इसका गलत प्रभाव पड़ सकता है। लोग पढ़ेंगे तो सोचेंगे कि शरत स्त्रियों का नेता बनना चाहता है। इतना सब कुछ होने के उपरांत भी शरत ने पुस्तक की पाण्डुलिपि प्रमथनाथ को प्रेषित कर दी। पाण्डुलिपि द्विजेन्द्रलाल राय ने पढ़ी। पढ़ने के पश्चात् उन्होंने अपनी राय जाहिर की कि यह रचना अत्यंत अश्लील है। इसलिए इसे किसी अच्छे पत्र में नहीं छापा जा सकता क्योंकि अच्छे लोग इस उपन्यास को कभी नहीं पढ़ेंगे। प्रकाशक हरिदास चट्टोपाध्याय ने भी उसे अनैतिक कहकर प्रकाशन के अयोग्य बताया। प्रभाकर जी ने प्रस्तुत गद्यांश में शरत की पाण्डुलिपि 'चरित्रहीन' के बारे में विचार व्यक्त किए हैं।

नोट

व्याख्या—शरत ने जब प्रकाशक का पत्र पढ़ा तो वह एकाएक क्रुद्ध हो उठा। उसने प्रकाशक को लिखा कि उसकी रचना 'चरित्रहीन' तुरंत लौटा दी जाए। साथ ही अपने उत्तर को समझाते हुए उसने निम्नांकित बातें स्पष्ट की—

अंग विशेष को खोलकर कभी नहीं दिखाया जाता है इस बात को मैं भली-भांति जानता हूँ। लेकिन क्या घायल स्थान को खोलकर नहीं दिखाना चाहिए? समाज में यदि कोई ऐसा डॉक्टर है जो घायलों की चिकित्सा करता है, जिस समय वह अपना कार्य करता है तो क्या वह किसी की बात सुनता है। उसे तो जो कुछ करना होता है उसे तुरंत कर देता है, वरना बीमार उसे फोड़े पर हाथ भी धरने नहीं देगा। जो पक गया है उसको बाँध कर रखने में कोई लाभ नहीं है। उसे तो दिखाकर ही इलाज किया जा सकता है। जिसके शरीर में घाव होता है उसे तो चिकित्सा कराने में ही सुविधा रहती है। सुंदरता की दृष्टि से प्राकृतिक कार्यो का अपना महत्त्व अलग से होता है। लेकिन सौंदर्य-रचना के साथ-साथ उपन्यास लेखक का एक महत्त्वपूर्ण काम और भी होता है। वह काम यह है कि यदि सच्चाई का पता लगाना है तो उससे संबंधित बातों को भी स्पष्ट रूप में लिखना होगा। बिना ऐसा किए समाज के सामने सच्चाई कभी खुलकर आ ही नहीं सकती है। उदाहरण के लिए आस्टिन, मेरी कारेगली और सारा ग्रेंड का नाम लिया जा सकता है। इन लोगों ने समाज के बहुत से घावों को खोलने के लिए अनेक बातें लिखी हैं। घाव का वास्तव में इलाज तभी हो सकता है जब डॉक्टर उसे साफ-साफ देखता है। मैंने भी अपने उपन्यास में जो कुछ लिखा है वह लोगों को डराने या जनसाधारण का मनोरंजन करने के लिए नहीं लिखा है। आपने जो यह लिखा है कि 'चरित्रहीन' उपन्यास किसी दूसरे नाम से प्रकाशित कर दिया जाए, इसके लिए मैं तैयारी नहीं हूँ। मैं इस दुख को कभी सहन नहीं कर सकता। उपन्यास न छपे यह दूसरी बात है।

विशिष्ट

1. प्रस्तुत पंक्तियों में लेखक ने शरत के स्पष्टवक्ता होने के संबंध में अपने विचार व्यक्त किए हैं। शरत वास्तव में स्पष्टवादी और आत्मस्वाभिमानी व्यक्ति था। वह साहित्य के माध्यम से बंग-समाज की कुरीतियों और कमजोरियों को लोगों के सामने रखना चाहता था। उसका कहना था कि उपन्यासकार का कर्त्तव्य केवल पाठकों का मनोरंजन करना ही नहीं है वरन समाज में व्याप्त अनेक घावों को भी खोलना है ताकि लोग उन घावों को भरने के लिए कोई इलाज सोच सके।
2. प्रस्तुत पंक्तियों में लेखक ने यह दर्शाया है कि शरत स्वतंत्र लेखन का पक्षपाती था। उसके चिंतन में समाज की कमजोरियों का स्पष्ट विवरण प्राप्त होता है। वह अत्यधिक आत्मस्वाभिमानी, स्पष्टवादी और क्रांतिकारी विचारों का पोषक था। इन विचारों के कारण उसे अनेक कठिनाइयों का सामना करना पड़ा लेकिन उसने इसकी बिल्कुल चिंता नहीं की।
3. पंक्तियों की भाषा सृजनात्मक है।

18

"लेखक रूप में प्रसिद्ध होने पर उसकी प्रतिष्ठा भी बढ़ रही थी। उसके साथी अब उपेक्षा से उसे चिढ़ाते नहीं थे। इसके विपरीत जब भारत से स्वदेशी आंदोलन के नेता श्री सुरेंद्रनाथ सेन रंगून आए तब उनकी अभ्यर्थना के लिए जो सभा अयोजित की गई उसके सभापति के पद पर उसी को बिठाया गया। जीवन में पहली बार वह अध्यक्ष की कुर्सी पर बैठा तब वह कितना नर्वस हो उठा था। सेर डेढ़ सेर की माला उसके गले में पड़ी थी। उसके भार से सीधा खड़ा नहीं हो पा रहा था। देखकर दया आती है।"

प्रसंग—शरत इस समय तक एक प्रसिद्ध साहित्यकार हो चुके थे। अत: उन्होंने 'विराज बहू' लिखना आरंभ किया, जिसे लिखने में उनको एक माह से अधिक समय लगा। इस उपन्यास को उन्होंने बड़े धैर्य के साथ लिखा था। लिखने के बाद उन्होंने उसे अपने मित्रों को सुनाया था, ताकि विचार-विनिमय के बाद इसमें संशोधन किया जा सके। लिखने के संबंध में बहुत सजग रहते थे। वह कभी ऐसी बात नहीं लिखते थे। जिससे लोगों को चोट पहुँचे। लेकिन वह

नोट

जो कुछ कहना चाहते थे उसमें किसी प्रकार का छिपाव नहीं करते थे। समाज की कमजोरियों को वे इस रूप में रखना चाहते थे, जिससे लोग जागृत हों और बुराइयों को दूर करने का प्रयास करें।

व्याख्या–शरत लेखक के रूप में प्रसिद्ध हो चुका था। अत: लेखकीय समाज के साथ-साथ अन्य लोगों के बीच भी उसकी प्रतिष्ठा बढ़ रही थी। किसी समय उसके मित्र उसकी हँसी-मजाक उड़ाया करते थे। लेकिन अब वे उसकी उपेक्षा नहीं करते थे। इन बातों के अतिरिक्त जब भारत से स्वदेशी आंदोलन के नेता श्री सुरेंद्रनाथ सेन रंगून पहुँचे थे तो उनके स्वागत के लिए एक सभा बनाई गई। उस सभा का सभापति शरत बाबू को ही बनाया गया। इससे शरत को कोई विशेष प्रसन्नता नहीं हुई क्योंकि वह सोचता था कि अध्यक्ष अत्यधिक योग्य व्यक्ति को बनाया जाए। फिर भी उस समय अध्यक्ष की कुर्सी पर बैठकर वह भीतर ही भीतर छोटा पड़ने लगा। वह सोचता था कि अध्यक्ष पद स्वीकार करके उसने बहुत बड़ी गलती की है।

उसके गले में सैकड़ों व्यक्तियों ने फूलों की मालाएँ डालीं। उसका स्वागत किया। इस प्रकार उसके गले में कम से कम सेर डेढ़ सेर का वजन हो गया। मालाओं के भार के कारण उसको सीधे खड़े होने में बड़ी परेशानी हो रही थी। उसकी यह दशा देखकर दया आने लगी क्योंकि एक पतला-दुबला व्यक्ति अपने गले में इतने सारे बोझ को सहन कर रहा था।

विशेष–इन पंक्तियों में लेखक ने दर्शाया है कि लेखक के रूप में उसकी प्रतिष्ठा बढ़ गई थी। इसलिए अब सब लोग उसे सम्मान की दृष्टि से देखते थे। यहाँ प्रभाकर जी ने शरत की मन:स्थिति का चित्रण बड़ी कुशलता से किया है। इस प्रकार शरत के व्यक्तित्व का वर्णन लेखक द्वारा बड़े सरल शब्दों में किया गया है।

टास्क शरत अपना परिचय देने से क्यों हिचकिचाते थे? कारण स्पष्ट कीजिए।

19

"प्रमाण और साक्षी की आवश्यकता शायद ही पड़ी हो। लेकिन इसमें तनिक भी संदेह नहीं है कि इन कहानियों के पीछे किसी न किसी रूप में उसकी अनुभूति होती थी। और अनुभूति के ये स्रोत उसे सहज भाव से मिल भी जाते थे। वही दृष्टि तो उसका मूलधन थी।" **(पृष्ठ–84)**

प्रसंग–शरत अपना परिचय देने में सदा ही झिझकता था। वह वस्त्रों और चाल-ढाल से ऐसा मालूम पड़ता था मानो वह बिल्कुल देहाती है। फिर भी मित्रों के साथ प्रेम व्यवहार करना और किसी भी गोष्ठी में शामिल होने में उसे विशेष आनंद आता था। प्राय: बहुत से साहित्यकार प्रतिदिन 'यमुना' के कार्यालय में इकट्ठे होते थे। उनमें कथा शिल्पी और कवि सुधींद्रनाथ ठाकुर भी थे। वे शरत को बड़ी श्रद्धा के साथ देखते थे। इस बैठक में कवि और साहित्यकार, साहित्यिक आलोचनाएँ न करके हँसी-मजाक किया करते थे। शरत अपनी कोई ताजा कहानी साहित्यकारों को सुनाता तो लोग कहते, शरत तुम यह मनगढ़ंत कहानी सुना रहे हो। इस पर शरत उत्तर देता कि यह सच्ची घटना है। वह इसके लिए साक्ष्य और प्रमाण देने के लिए भी तैयार हो जाता था। शरत की ऐसी बातें सुनकर साहित्यकार आश्चर्य से उसका मुख देखने लगते थे। प्रस्तुत गद्यांश में लेखक ने शरत की ऐसी ही एक घटना का वर्णन किया है।

व्याख्या–शरत अपनी कथा साहित्यकारों को सुनाता तो लोग उसकी बात पर विश्वास नहीं करते थे। वे सोचते थे कि शरत शायद मनगढ़ंत कथा सुना रहा है। इस पर शरत प्रमाण और साक्षी देने को तैयार हो जाता। वह शायद इसलिए कि उसने किसी सत्य घटना पर अपनी कहानी गढ़ी होती। इस प्रकार शरत को कभी प्रमाण और साक्ष्य की जरूरत ही नहीं पड़ी। लेकिन इसमें भी झूठ नहीं था कि शरत जितनी भी कहानियाँ लिखता था उनके काल्पनिक

नोट

अनुभव का स्तेय अवश्य होता। ऐसी अनुभूति के साधन उसे आसानी से प्राप्त हो जाते थे क्योंकि वह जिस समाज में रहता था उसमें समस्याओं का अंबार लगा हुआ था और घटनाएँ भी आसानी से बिना किसी मुसीबत के प्राप्त हो जाती थीं। जिस दृष्टिकोण को लेकर वह कथा लिखता था, असल में वही उसका मूल होता था। उसका दृष्टि कोण बड़ा परिपक्व और ठोस होता था। लोगों को उसकी आलोचना करने का अवसर नहीं मिलता था।

विशेष–लेखक ने दर्शाया है कि शरत कहानी या उपन्यास किसी सत्य घटना को आधार बनाकर लिखता था। बंगाल में आए दिन नई-नई घटनाएँ घटती रहती थीं। शरत उनको देखकर एक कहानी बुन लेता था। इस प्रकार वह योजनाबद्ध ढंग से लेख का कार्य करता था। यदि लोग उसकी कहानी पर विश्वास नहीं करते थे तो वह कहता था कि यदि लोगों को प्रमाण की आवश्यकता है तो मैं वह भी दे सकता हूँ। वह अन्य लोगों की साक्षी देने के लिए भी तैयार हो जाता था। इस प्रकार उसकी कहानियाँ मानव मन को छूने वाली होती थीं।

20

"इसी समय वह रवींद्रनाथ से भी मिला। वह उनका परमभक्त था और रवींद्रनाथ भी शरत की प्रतिभा से परिचित हो चुके थे। अभी-अभी उन्होंने उसकी नई कृति 'पंडित मोशाय' पढ़ी थी। असित कुमार हाल्दार ने लिखा है, मुझे याद है, 'पंडित मोशाय' पढ़ने के बाद उन्होंने मुझसे कहा था, "मैंने काफी दिनों से इधर-उधर की चीजें पढ़ना छोड़ दिया है, किंतु इस पुस्तक की लेखनी मुझे मरुभूमि में शाद्वल के समान नज़र आती है।" (पृष्ठ–87)

प्रसंग–'यमुना' के कार्यालय में जो साहित्यिक बैठकें होती थीं, उन्हीं में शरत का परिचय उस काल के साहित्यकारों से भी हुआ। उनमें एक हेमेंद्र कुमार राय भी थे। वह यमुना के संपादक फणींद्रनाथ पाल की सहायता करते थे। उन्होंने शरत को देखकर भी नहीं पहचाना क्योंकि शरत एक सीधा-साधा, पतले चेहरे वाला रोगी के समान व्यक्ति था। हेमेंद्र ने सोचा, यह शायद कार्यालय का कोई दफ्तरी है। तभी वहाँ आकर फणींद्रनाथ पाल ने शरत का परिचय दिया। हेमेंद्र को बड़ा आश्चर्य हुआ। उन्होंने कहा कि मैंने तो मन ही मन आपको कोई दफ्तरी समझा था। यह सुनकर शरत खिलखिलाकर हँस पड़ा। कुछ समय के बाद दोनों में गहरी मित्रता हो गई। लेखक ने शरत की उसी प्रकार की एक साहित्यिक भेंट का परिचय दिया, जो रवींद्रनाथ से थी।

व्याख्या–अन्य साहित्यकारों के समान शरत का परिचय रवींद्रनाथ से भी हुआ। शरत रवींद्रनाथ को बड़ी श्रद्धा की दृष्टि से देखता था। इसी प्रकार रवींद्रनाथ भी शरत की योग्यता और प्रतिभा को मानने लगे थे क्योंकि इस समय तक शरत काफी लिख चुका था। इसी कारण उसकी ख्याति लगभग सारे बंगाल में हो चुकी थी। कुछ समय पहले रवींद्रनाथ ने शरत की एक नई रचना 'पंडित मोशाय' पढ़ी थी। उस रचना की उन्होंने बहुत प्रशंसा की। इस बात को असित कुमार हाल्दार ने भी लिखा है कि तथ्य उन्हें भली-भाँति स्मरण हैं, पढ़ने के बाद रवींद्रनाथ टैगोर ने अपने विचार व्यक्त करते हुए कहा था कि उन्होंने काफी समय से इधर-उधर की पुस्तकों को पढ़ना त्याग दिया है। उनकी इच्छा उच्च कोटि की पुस्तकें पढ़ने की रहती है। लेकिन अचानक उन्होंने जब 'पंडित मोशाय' नामक पुस्तक पढ़ी तो उनको लगा कि यह पुस्तक रेतीले स्थान में कहीं अचानक झरना बहने और हरी-भरी घास दिखाई देने के समान है।

विशिष्ट

1. इन पंक्तियों में लेखक ने शरत की लेखनी की प्रशंसा की है। उनकी लिखी पुस्तक 'पंडित मोशाय' की प्रशंसा रवींद्रनाथ ठाकुर ने भी की। इससे स्पष्ट होता है कि शरत का लेखन कार्य प्रशंसनीय हो चला था।
2. गद्यांश की भाषा विचारात्मक है। इस पर भी वह बोधगम्य है। शरत के साहित्यिक विषय पर गहरी बात को भी सीधी-सादी भाषा में कह देना प्रभाकर जी की विशेषता है।

21

"'पल्ली समाज' में केवल दुख-दैन्य से पीड़ित, संकीर्ण सांस्कृतिक घेरे के भीतर बँधे हुए, परंपरा-प्रचलित कुसंस्कारों से घिरे हुए, बंगाल के निम्न-मध्यवर्गीय देहाती समाज का सीधा-सादा यथार्थ चित्रण है। शरत का बचपन और यौवन का भी कुछ समय गाँव में ही कटा था। गाँव को वह प्यार करता था। उसी के आधार पर उसने इस पुस्तक की रचना की।" (पृष्ठ-89)

प्रसंग–इस समय तक शरत साहित्यकार के रूप में ख्याति प्राप्त कर चुका था। एक दिन वह फणींद्रनाथ के पास पहुँचा और उनसे 'बड़ी दीदी' पुस्तक की सारी प्रतियाँ मांगी क्योंकि उसे पता चल चुका था कि फणींद्रनाथ उसकी पुस्तकों को बेचकर काफी धन कमा रहे हैं। एक संबंधी ने बताया कि पुस्तकें अलमारी में हैं पर चाबी फणींद्रनाथ के पास हैं। शरत बड़ा दुखी हुआ। उसने कील की चाबी बनाकर ताला खोला और सारी प्रतियाँ निकाल कर ले गया। कुछ देर बाद फणींद्रनाथ आए तो उनकों शरत द्वारा नई बात खड़ी कर देने के विषय में पता चला। शरत को अपनी गलती का अनुभव हुआ। वह बहुत पछताया। अब वह केवल 'भारतवर्ष' के लिए लिखने लगा। इसी समय कुछ मित्रों के कहने पर उसने 'पल्ली समाज' नामक रचना लिखना शुरू किया। प्रस्तुत गद्यांश में इसी रचना के संबंध में विचार व्यक्त किए गए हैं।

व्याख्या–शरत ने 'पल्ली समाज' नामक रचना पर काम करना आरंभ कर दिया। इस पुस्तक में शरत ने बंगाल के निम्न-मध्यवर्गीय और सीधे-सादे लोगों का चित्रण किया है। इस वर्ग के लोग केवल दीनता और दुखों से परेशान ही नहीं थे वरन कुछ और भी ऐसी बातें थीं जिनके कारण उनको दुख उठाना पड़ता था। वे लोग परंपरागत बुरे संस्कारों से घिरे हुए थे। बंगाल का देहाती समाज कितना सीधा-सादा और सरल हृदय था, इसका चित्रण इस पुस्तक में विस्तार से किया गया है। लेखक वही लिखता है जो अपने आसपास देखता है। वह जिस समाज में रहता है। उसकी अच्छाई और बुराई का सीधा प्रभाव उसके ऊपर पड़ता है। समाज में जो कुछ होता है उसे वह अपनी खुली आँखों से देखता है। शरत ने इसी बंगाली समाज का यथार्थ लेखा-जोखा 'पल्ली समाज' में रखा है। शरत का बचपन और यौवन भी कुछ समय के लिए गाँव में व्यतीत हुआ था। इसलिए वह गाँव की गली-गली से प्रेम करता था। इन सब बातों को आधार मानकर उसने इस पुस्तक का प्रणयन किया था।

विशिष्ट–प्रस्तुत पंक्तियों से पता चलता है कि शरत बंगाल के निम्न-मध्यवर्गीय लोगों के जीवन से संबंधित चित्रण करने में सिद्धहस्त था। शायद इसका मुख्य कारण यह हो सकता है कि शरत का बचपन और यौवन इसी प्रकार के लोगों के बीच व्यतीत हुआ था। वह गाँव और वहाँ के लोगों से अत्यधिक प्रेम करता था क्योंकि प्राकृतिक वातावरण का आनंद गाँव के जीवन में आसानी से प्राप्त हो जाता है। इन पंक्तियों में विवरणात्मक शैली का प्रयोग किया गया है। भाषा सीधी, सरल और दार्शनिक है।

टास्क प्रभाकर जी ने शरत की गायन प्रतिभा एवं संगीत प्रियता के तथ्यों को किस प्रकार प्रस्तुत किया है?

22

"लेकिन स्नेह की प्रगाढ़ता केवल रूप की अपेक्षा नहीं रखती। उनमें ऐसी कुछ विलक्षणता थी जो शीघ्र ही दर्शक का ध्यान आकर्षित कर लेती थी, फिर दिलीप तो उनकी रचनाओं के उपासक थे। शीघ्र ही उनकी हार्दिक सरलता, निश्छलता, स्नेह और संतों जैसी सादगी ने दिलीप के मन को जीत लिया। इस श्रद्धा का एक और कारण था उनका मधुर कंठ। दिलीप कुमार स्वयं भी तो सुंदर गायक थे। अपने पिता के कीर्तन गान और हिंदुस्तानी संगीत में उनकी अच्छी गति थी। जब वे अपने पिता का यह गीत सुनते–'ओ जे गाना

नोट

गेय-गेय चोले जाए।' तो शरत बाबू बार-बार सुनकर भी तृप्त नहीं होते थे।" (पृष्ठ–95)

प्रसंग–जिस समय शरत ने कलकत्ता छोड़कर रंगून का मार्ग पकड़ा था, उस समय वह असहाय था। उसके पास पैसे का अभाव था। लेकिन तेरह वर्ष बाद जब वह कलकत्ता लौटा तो, वह एक प्रसिद्ध कथाकार हो चुका था। उसका स्वागत करने के लिए बंगाल के लोग बड़े उत्सुक रहते थे। नाटककार द्विजेंद्रलाल राय शरत की बड़ी प्रशंसा करते थे। कुछ समय बाद उनके पुत्र दिलीप कुमार राय भी उनके भक्त हो गए। दोनों धीरे-धीरे मित्रवत व्यवहार करने लगे थे। शरत को देखकर दिलीप कुमार का हृदय प्रसन्नता से खिल उठता था। लेखक ने दार्शनिक भावों के मेल से प्रस्तुत गद्यांश में दो मित्रों के हृदयगत भावों का खुलासा किया है।

व्याख्या–जब दो व्यक्तियों में प्रेम-संबंध घनिष्ठ हो जाते हैं तो सुंदरता की ओर कोई ध्यान नहीं देता है। शरत बाबू और दिलीप कुमार एक दूसरे के आसानी से मित्र हो गए थे। शरत बाबू में कुछ ऐसे गुण थे जिनके कारण लोग बड़ी जल्दी उनकी ओर खिंचते चले जाते थे। फिर उनके मित्र दिलीप कुमार तो उनकी कृतियों को बड़े मनोयोग से पढ़ते थे और हर समय उनकी प्रशंसा करते रहते थे। शरत की बातें बड़ी सीधी-सादी और सच्ची होती थी। दूसरे, शरत व्यवहार कुशल भी थे। अत: शीघ्र ही उनके सरल स्वभाव, निश्छल प्रेमभाव और साधु-संतों के समान सादे रहन-सहन ने दिलीप कुमार के मन को जीत लिया। एक अन्य कारण से भी दिलीप कुमार शरत के भक्त हो गए थे। शरत का गला बड़ा सुरीला और मीठा था। अपने पिता के द्वारा कीर्तन गाने और भारतीय संगीत का उनको अच्छा ज्ञान था। दिलीप कुमार को गाने-बजाने का भी शौक था। अत: वह भी कभी-कभी मधुर कंठ से कीर्तन और भारतीय संगीत की तान छेड़ देते थे। उनके गीत-संगीत में इतनी मिठास होती थी कि शरत बाबू की इच्छा होती थी कि वे उन्हें सुनते ही रहें। यही कारण था कि बार-बार उस मीठे संगीत को सुनने के बाद भी शरत का मन कभी भरता नहीं था।

विशिष्ट–लेखक ने इन पंक्तियों के माध्यम से शरत की गान विद्या और संगीत प्रियता के तथ्यों को प्रस्तुत किया है। शरत और उनके मित्र को भारतीय संगीत बहुत प्रिय थे। इस प्रकार शरत एक ओर साहित्यकार थे तो दूसरी ओर गाने-बजाने के भी शौकीन थे। उनका कंठ मधुर था। अत: जिस समय वे गाते थे तो लोग उनके गाने पर मुग्ध हो जाते थे। शरत संगीत के स्वरों में इतने डूब जाते थे कि वह सबकुछ भूल जाते थे। बंग समाज में प्राय: उनके गीतों की प्रशंसा की जाती थी।

23

"जहाँ एक ओर उसके विरुद्ध इतना तीव्र आंदोलन उठ खड़ा हुआ था वहीं दूसरी ओर बहुत से व्यक्तियों ने उसकी आत्मा तक पहुँचने का प्रयत्न भी किया। बहुत दिनों बाद एक धर्मपरायण व्यक्ति ने एक गोष्ठी में उससे कहा, "आप मुँह से चाहे जो कहें, आपकी रचनाओं को पढ़कर मुझे लगता है कि सनातन धर्म की मर्यादा को आप ठेस पहुँचाना नहीं चाहते।" (पृष्ठ–100)

प्रसंग–शरत चंद्र के जीवन में एक प्रकार से स्वर्ण युग आ गया था क्योंकि देखते-देखते उनकी रचनाएँ बंगाल के घर-घर में छा गईं। एक के बाद एक रचना निकलती चली जा रही थी। फिर 'चरित्रहीन' के प्रकाशित होते ही बंगाल में जैसे एक नई लहर व्याप्त हो गई। लोग शरत बाबू की आलोचना करने लगे। 'चरित्रहीन' में जिस नारी का चरित्र लिखा गया था उसकी कमी बंगाल में कभी नहीं रही, लेकिन समाज में कुछ रूढ़िवादी और धर्मपरायण व्यक्ति ऐसे थे जो उनके विरूद्ध हो गए। तब शरत ने लोगों को समझाया कि किरणमयी के द्वारा मैंने नारी जीवन की व्यर्थता को दिखाने की चेष्टा की है। कुछ भी सत्य था, लेकिन लोग ऐसा मानकर चलते थे कि यह पुस्तक समाज के वातावरण को गंदा कर देगी।

व्याख्या–शरत की 'चरित्रहीन' पुस्तक प्रकाशित हो चुकी थी। अत: लोग उसे पढ़कर शरत के विरुद्ध छींटाकशी करने लगे थे। इस प्रकार यदि एक तरफ लोग उनके विरुद्ध एक तीव्र आंदोलन लेकर आगे बढ़ गए थे तो दूसरी ओर बहुत से नवयुवक इस बात की चेष्टा करने लगे थे कि 'चरित्रहीन' के लेखक को पास से समझा जाए। वे शरत

की आत्मा की गहराई की थाह लेना चाहते थे। वे सोचने लगे थे कि जिस व्यक्ति ने अपनी रचना के द्वारा समाज के यथार्थ को सबके सामने खोलकर रखा है, वास्तव में वह कितना साहसी है। वे साहित्यिक शरतचंद्र से ऊपरी मन से तो घृणा कर सकते थे लेकिन भीतर से वे उनके कार्यों की प्रशंसा करने के लिए विवश थे क्योंकि शरत ने 'चरित्रहीन' में समाज में प्रचलित ज्वलंत प्रश्न को उठाया था। वे नारी को प्रतिष्ठित करना चाहते थे और इसी कारण उन्होंने बंग समाज की घिसी-पिटी बातों को समाप्त करने के लिए आवाज उठाई थी। काफी समय के उपरांत शरत का साक्षात्कार एक ऐसे व्यक्ति से हुआ जो धार्मिक प्रवृत्ति का व्यक्ति था। उसने शरत की 'चरित्रहीन' पुस्तक का गंभीरतापूर्वक अध्ययन किया था। उस व्यक्ति ने शरत से कहा कि आप अपने मुँह से कुछ भी कहें लेकिन आपकी पुस्तकों को पढ़कर मैं इस नतीजे पर पहुँचा हूँ कि सनातन धर्म की मर्यादा के विरुद्ध आपने कुछ भी नहीं लिखा है। इसलिए आपकी कृतियों से सनातन धर्म की परंपराओं को कोई हानि नहीं पहुँच सकती। आपने जो कुछ लिखा है हमारे समाज में आए दिन वैसा ही होता है। आपने समाज रूपी दर्पण को सबके सामने रख दिया है। उस दर्पण में जो देखेगा उसे अपना ही चेहरा दिखाई देगा।

विशिष्ट–इन पंक्तियों में लेखक द्वारा शरत की रचनाओं में लिखित नारी धर्म की मर्यादा का स्पष्ट चित्रण किया गया है। 'चरित्रहीन' उपन्यास एक प्रकार से नारी जाति का लिखित विधान है। इसे पढ़कर रूढ़िवादी और धर्मपरायण व्यक्ति भी शरत का खुलकर विरोध नहीं कर पाए क्योंकि शरत ने वही लिखा है जो समाज में होता है। उन्होंने समाज की मर्यादा का उल्लंघन नहीं किया है। यह दूसरी बात है कि 'चरित्रहीन' पढ़कर भिन्न-भिन्न स्वभाव के लोगों ने अपने-अपने ढंग से उसका अर्थ लगाया परंतु जब उन्होंने शरत की आत्मा में झाँककर देखा तो उन्हें लगा कि शरत ने जो कुछ लिखा है उसे किसी भी स्थिति में झुठलाया नहीं जा सकता। वास्तव में पाठक की समझ पर ही सबकुछ निर्भर है। जिसकी जितनी बुद्धि होती है वह बात का उतना ही अर्थ लगाता है। लेकिन यथार्थ अपने स्थान पर रहता है। उसे किसी भी दशा में टाला नहीं जा सकता है।

24

"एक दिन अचानक ऐसी नारी से शरत बाबू की भेंट हो गई जिसने 'चरित्रहीन' पढ़कर उन्हें अपना गुरु और त्राता स्वीकार किया था। वह सब काशी आए हुए थे। एक दिन वहाँ के प्रवासी बंगालियों ने उनके सम्मान में सभा का आयोजन किया। माला-चंदन, धूप-धूनी किसी भी वस्तु की कमी नहीं रही। सच्चा आंतरिक स्वागत था। लौटते समय बहुत से लोगों ने उन्हें घेर लिया। उनमें दो नारियाँ भी थीं। दोनों विधवाएँ थीं। एक प्रौढ़ा थी, दूसरी युवती। अवसर पाकर वह युवती उनके पास आई। मधुर स्वर में बोली, "आपने मुझे बचाया है। आप गुरु हैं। मैं आपकी विशेष कृतज्ञ हूँ।" (पृष्ठ–101)

प्रसंग–शरत बाबू ने 'चरित्रहीन' नामक उपन्यास लिखा। उसे पढ़कर बहुत से लोग उत्तेजित हो उठे, वे उनके विरुद्ध आवाज बुलंद करने लगे। लेकिन कुछ व्यक्ति ऐसे थे जिन्होंने लेखक के मन की गहराई तक जाने का प्रयास किया। एक व्यक्ति तो उनकी बहुत प्रशंसा करने लगा। उसका कहना था कि जो साहित्यकार समाज की असलियत को इस रूप में सबके सामने खोल सकता है वह वास्तव में महान है। शरत ने लोगों को समझाया कि 'चरित्रहीन' एक ऐसी रचना है जिसमें नारी की सच्चाई को बताया गया है। लेकिन तब भी अनेक लोगों की समझ में उनकी बातें नहीं आईं। अध्यापकगण इस पुस्तक के भ्रष्ट कहते थे लेकिन संपूर्ण पुस्तक पढ़े बिना वे भी नहीं रह सके। लेखक ने निम्न पंक्तियों में यह दर्शाया है कि स्त्रियाँ शरत की रचनाओं को पढ़कर बहुत प्रसन्न थीं क्योंकि उन्होंने स्त्रियों की आत्मा को छूकर देखा है।

व्याख्या–शरत इस समय तक एक प्रतिभाशाली साहित्यकार के रूप में प्रसिद्ध हो चुके थे। स्त्रियाँ उनको सम्मान की दृष्टि से देखने लगीं थीं क्योंकि उन्होंने स्त्रियों के विषय में काफी लिखा था। अत: एक दिन शरत जब कहीं जा रहे थे तो उनके सामने अचानक एक स्त्री आकर खड़ी हो गई। वह 'चरित्रहीन' पुस्तक पढ़ चुकी थी। उस पुस्तक को पढ़कर उसे पता चला था कि बंग समाज में स्त्रियों की क्या दशा है? और इस स्थिति को सुधारने के लिए क्या

नोट

उपाय किए जा सकते हैं? उसने शरत को अपने मन के विचार रखते हुए बताया कि मैंने मन ही मन आपको अपना गुरु और हितकारी व्यक्ति मान लिया है। वह स्त्री अन्य लोगों के साथ काशी आई हुई थी और वहीं पर उसकी भेंट शरत से हो गई थी। काशी में बहुत से प्रवासी बंगाली रहते थे। हजारों विधवाएँ भी काशी वास के लिए आ जाती थीं। सबने मिलकर शरत के सम्मान में एक सभा बुलाई। वहाँ माला, चंदन, धूप-धूनी आदि स्वागत की वस्तुएँ मँगा ली गईं। सारे बंगाली स्त्री-पुरुष उनका हृदय से सच्चा सम्मान करना चाहते थे। सम्मान के फलस्वरूप बंगाली स्त्रियों ने उनकी आरती उतारी। लोगों ने उनके गले में मालाएँ डालीं। इस सम्मान को पाने के पश्चात् शरत बाबू जब लौट रहे थे तो कुछ बंगाली पुरुषों ने उनको घेर लिया। उनमें दो स्त्रियाँ भी थीं। दोनों के पति मृत्यु को प्राप्त हो चुके थे। उनमें एक प्रौढ़ थी और दूसरी युवती। युवती स्त्री शरत के पास आई। उसने शरत को प्रणाम किया और फिर मीठी वाणी में बोली कि आपने मेरा उद्धार किया है, वरना इस गंदे समाज में रहकर मैं मर ही जाती। इसलिए मैं आपको अपना गुरु मानती हूँ। मैं आपके काम से इतनी गद्‌गद् हूँ कि कुछ कहा नहीं जा सकता। शरत बाबू उसका चेहरा देखते रह गए।

विशेष—शरत बाबू स्त्रियों के पक्षधर थे। इसी कारण उन्होंने 'चरित्रहीन' तथा अन्य उपन्यास लिखे। सभी कृतियों में उन्होंने विधवाओं, बहिष्कृत स्त्रियों, परित्यक्ताओं, वेश्याओं आदि के विषय में बहुत कुछ लिखा था। अत: शरत जब कभी स्त्रियों के मध्य आ जाते थे तो स्त्रियाँ उनका अभिनंदन करती थीं। वे चाहती थीं कि शरत बाबू इसी प्रकार स्त्रियों का मार्गदर्शन करते रहें। शरत का कथन था कि पुरुष के समान स्त्री भी समाज का एक अंग है। जिस पुरुष को उसने जन्म दिया है, जो पुरुष माँ, बहन, चाची, मौसी आदि के दर्जे से उसकी पूजा करता है वह स्त्री पतित कैसे हो सकती है? यही कारण था कि काशी में एक अवसर पर कुछ स्त्रियों ने उनका अभिनंदन किया था।

स्व-मूल्यांकन (Self-Assessment)

निम्नलिखित कथनों में सत्य अथवा असत्य की पहचान करें

(State Whether the following statements are True or False) :

8. शरत ने अपनी जान पर खेलकर बकरी को आग में जलने से बचाया।
9. शरतचंद्र ज्योतिष विद्या में अटूट विश्वास रखते थे।
10. शरत को पतंग उड़ाने एवं गिल्ली-डन्डा खेलने का बिल्कुल भी शौंक नहीं था।
11. 'आवारा मसीहा' में राजू ऐसा पात्र है जिसने शरत बाबू का हर कदम पर साथ दिया।

25

"यही दुख कातरता उनके साहित्य में मुखर हुई और इसी कारण वह इतने लोकप्रिय हुए। उनके पाठक जान गए थे कि 'श्रीकांत' की आवारगी के बावजूद उन्हें भारी दुखों के बीच में से अपना रास्ता ढूँढना पड़ा है और यह भी कि अन्याय को देखकर उसका क्रोध उफन उठता है। जैसे उनके विचारों के अंतराल में, वैसे ही जीवन में भी पीड़ा की धारा प्रवाहित होती रही है।" (पृष्ठ–106)

प्रसंग—शरत एक साहित्यकार थे। साहित्यकार अपनी पुस्तकों में वही लिखता है जो कुछ वह देश, समाज और परिवार में देखता है। शरत ने अत्यधिक गरीबी देखी थी। वह जानते थे कि दुख क्या होता है? अत: जब वह किसी प्राणी को दुख में डूबा देख लेते तो मानवीय संवेदना से भर उठते थे। उस समय वह सोचते थे कि यदि मनुष्य ही मनुष्य के दुख दूर नहीं करेगा, तो फिर कौन करेगा? इसी भावना से उन्होंने अपने साहित्य में दूसरों के दुखों के विषय में लिखा है तथा उसे दूर करने के लिए कुछ उपाय भी सुझाए हैं। पर दुख कातरता के संबंध में उन्होंने लेखनी उठाकर लोगों को कुछ सोचने-समझने का अवसर दिया। प्रस्तुत गद्यांश में लेखक ने शरत की ऐसी ही भावना के बारे में अपने विचार प्रकट किए हैं।

व्याख्या—शरत एक साहित्यकार होने की दृष्टि से अत्यधिक भावुक प्रवृत्ति के थे। दूसरे के दुख को देखकर उनको लगता था जैसे वह दुख उन्हीं का है। अत: वह उसे दूर करने के लिए तन-मन से जुट जाते थे। यदि उनके पास

पैसा होता था तो वह दुखी जन की सहायता पैसे से भी करने को तत्पर हो जाते थे। इस प्रकार दूसरे के दुख की बातें उनके साहित्य में भरी पड़ी हैं। जो साहित्यकार जन-साधारण की नाड़ी पहचान कर साहित्य का सृजन करता है वह बहुत जल्दी लोकप्रिय होता है। शरत इसी प्रकार के साहित्यिक व्यक्ति थे। इसीलिए बंगाल की जनता उनको अतिशीघ्र पहचान गई। दुखी लोगों के बीच एक विचार उत्पन्न हुआ कि कम से कम एक ऐसा व्यक्ति तो हमारे समाज में उठ खड़ा हुआ है जो दुखी और दरिद्र लोगों को पहचानता है। और जिसने समाज के आडंबर को दूर करने का बीड़ा उठाया है। शरत साहित्य को पढ़ने वाले पाठकों ने शरत द्वारा लिखित 'श्रीकांत' नामक उपन्यास भी पढ़ा था। उसमें शरत ने 'श्रीकांत' की आवारगी का वर्णन किया है। लेकिन अन्य समस्याओं का निराकरण करते हुए 'श्रीकांत' ने अनेक दुखों और संकटों के बीच से अपना मार्ग स्वयं खोजा है। इसके साथ ही समाज में होने वाले अन्याय के विरुद्ध भी उसने कदम उठाए हैं। कुछ लोगों के मतानुसार 'श्रीकांत' में शरत ने अपने जीवन चरित्र का वर्णन किया है। क्योंकि अन्याय को देखकर शरत बाबू को अत्यधिक क्रोध आता था और लोगों से वह खरी-खरी कहने लगते थे। मानो उन्होंने जिन विचारों को व्यक्त किया है वह उनके भीतर जीवन की पीड़ा रूपी नदी की धारा के समान बह रही हो। इस प्रकार लेखक ने शरत बाबू की मानवता के प्रति विचारों को एक नए ढंग से रखा है।

विशेष

1. शरत एक ऐसे व्यक्ति थे जो दूसरे को दुखी और पीड़ित देखकर स्वयं दुखी होने लगते थे। यही कारण है कि शरत ने दुखी मानवता के दुखों को दूर करने के लिए अपने साहित्य में नए ढंग के विचार व्यक्त किए हैं। साधारण लोग इस बात को मानने के लिए तत्पर नहीं थे कि एक साधारण-सा दिखने वाला व्यक्ति इतनी ऊँची और ढंग की बात लिख सकता है। वे सोचते थे कि शरत ने जो कुछ लिखा है वह उधार का ग्रहण किया हुआ है। लेकिन असल बात दूसरी है। शरत ने जो कुछ लिखा है वह लोगों के वास्तविक दुख को देखकर लिखा है।
2. प्रस्तुत पंक्तियों में 'श्रीकांत' उपन्यास के संदर्भ में लेखक ने शरत की मन:स्थिति और विचारधारा का निष्पक्ष चित्रण किया है।
3. गद्यांश की भाषा सरल, सुबोध और पाठकों को कुछ सोचने के लिए एक मार्ग दिखाती है।

26

"अत्यंत लोकप्रियता के कारण जन साधारण, विशेषकर विद्यार्थी लोग उनकी प्रत्येक गतिविधि पर ध्यान रखते थे। और उसका अर्थ निकालने की चेष्टा करते थे। जब वह बनारस गए तो अनेक विद्यार्थी उनसे मिलने के लिए आए और अनेक विषयों पर उनके साथ विचार-विनिमय किया। एक दिन सबको साथ लेकर विश्वनाथ मंदिर भी गए। उस समय वहाँ आरती हो रही थी। एक कोने में वह जाकर खड़े हो गए और आरती के पश्चात् बिना दर्शन किए चुपचाप चले आए।" **(पृष्ठ—109)**

प्रसंग—शरत बाबू निरीश्वरवादी नहीं थे। लेकिन वह सच्ची श्रद्धा के कायल थे। अन्य लोगों को भगवान के प्रति अपार श्रद्धा रखते देखकर वह प्रसन्न होते थे लेकिन वह अपने भले के लिए ईश्वर की पूजा-अर्चना कभी नहीं करना चाहते थे। उनका कहना था कि ईश्वर तो घट-घट का वासी है। वह सबकुछ जानता है। फिर मनुष्य धन-दौलत के लिए उसे बीच में क्यों लाता है। मनुष्य को अपने कर्त्तव्यों का पालन करते रहना चाहिए। ईश्वर जो फल देना चाहता है, वह मनुष्य को अवश्य देगा। यदि हम दिन भर पाप कर्म करते हैं और संध्या को ईश्वर से कहते हैं कि वह हमें क्षमा कर दे, तो क्या ऐसे व्यक्ति दुष्कर्मों को ईश्वर के खाते में डाल देगा। शरत बाबू की दार्शनिक बातें बड़ी ठोस होती थीं। किसी भी बुद्धिमान व्यक्ति में इतना साहस नहीं होता था कि वह उनको काट सके। लेकिन कभी-कभी बुद्धिमान व्यक्ति भी धर्मपरायण व्यक्तियों और समाज के भय से सच्चे तर्क को छोड़कर कुतर्क पर उतर आता था। तब शरत बाबू शांत हो जाते थे क्योंकि वह जानते थे कि यह व्यक्ति बाहर से तो पढ़ा लिखा है परंतु उसके अंतर से रूढ़िवादी विचार नहीं निकल सके हैं।

नोट

व्याख्या—लेखक ने शरत की लोकप्रियता और ईश्वर भक्ति का सच्चा चित्रण करते हुए कहा है कि शरत अत्यंत लोकप्रिय हो चुके थे इसलिए साधारण व्यक्ति और कुछ विद्यार्थी उनके प्रत्येक कार्य को बड़े ध्यान से देखते रहते थे। वे उनके कार्यों और बातों का कुछ न कुछ अर्थ निकाल कर किसी विशेष उद्देश्य की ओर जाना चाहते थे। वे सोचते कि इतना लोकप्रिय व्यक्ति जो कुछ करता है वह काफी सोचने और समझने के पश्चात ही करता है। इसीलिए ऐसे व्यक्ति के कार्यों का गंभीरतापूर्वक अध्ययन करने के पश्चात् कोई न कोई शिक्षा अवश्य ग्रहण करनी चाहिए।

एक बार शरत बाबू वाराणसी पहुँचे। विद्यार्थियों को उनके आगमन की सूचना मिली तो वह उनसे मिलने के लिए आए। वे उनके साथ अनेक प्रकार के विषयों पर विचारों का आदान-प्रदान करने लगे। एक दिन शरत उन विद्यार्थियों के साथ विश्वनाथ मंदिर गए। विद्यार्थी बड़े प्रसन्न हुए कि शरत जैसे निरीश्वरवादी उनके साथ विश्वनाथ बाबा के दर्शन को आ गए हैं। जब विद्यार्थियों के साथ शरत मंदिर में पहुँचे तो वहाँ भगवान विश्वनाथ के विग्रह की आरती उतारी जा रही थी। आरती का एक अर्थ विनती करना भी है। सब लोग आरती को शांत मन से देख रहे थे। कुछ लोग हाथ जोड़े हुए मन ही मन ईश्वर का स्मरण कर रहे थे। शरत बाबू उन सब लोगों से हट एक कोने में जाकर चुपचाप खड़े हो गए। थोड़ी देर बाद आरती का कार्य समाप्त हुआ। शरत बिना विश्वनाथ का दर्शन किए शांत मन से बाहर चले आए। एक विद्यार्थी ने उनसे पूछा कि आप धार्मिक व्यक्ति नहीं हैं क्योंकि आपके उपन्यासों को पढ़कर ऐसा पता चलता है। लेकिन फिर भी आप मंदिर में गए इस पर शरत ने उत्तर दिया कि मैं भक्त को प्रेम करता हूँ इसलिए मैं मंदिर में चला गया। इस प्रकार शरत ने उस विद्यार्थी को संतुष्ट किया। उनकी बातों से विद्यार्थियों को ज्ञात हो गया कि शरत अपनी जगह सही हैं।

विशेष—प्रस्तुत पंक्तियों में लेखक ने यह दर्शाया है कि शरत प्रत्येक कार्य की तह तक जाना चाहते थे। उनके तर्क बड़े ठोस होते थे। वह निरीश्वरवादी होते हुए भी ईश्वरवादी थे। वह नास्तिक होते हुए भी आस्तिक थे। उनकी दृष्टि में सच्चाई, अच्छे कर्म, अपने कर्त्तव्यों का पालन, मानवीयता, नि:स्वार्थ विचार, पर सेवा के लिए समर्पण आदि ही ईश्वर की सच्ची सेवा थी। वे इन बातों पर चलते भी थे। इसी दृष्टि को ध्यान में रखकर उन्होंने विद्यार्थियों की शंका का समाधान किया था। जो व्यक्ति एक अनपढ़ ग्रामीण की सच्ची भक्ति देखकर आँखों में आंसू भर लाता हो, क्या वह व्यक्ति कभी निरीश्वरवादी हो सकता है? उनका कहना था कि दरिद्र नारायण का सत्कार और उसकी सच्चे मन से सेवा ही ईश्वर भक्ति है। इसी कारण वह मानवीय संवेदना के प्रति एक प्रकार से न्यौछावर थे। ऐसी संवेदना का आनंद शरत जैसा व्यक्ति ही ले सकता है। शरत पाप में भी पुण्य ढूँढ़ लेते थे।

टास्क शरत की कुण्डली देखकर पंडित जी ने क्या बात बताई?

27

"यही स्थिति ज्योतिष के संबंध में थी। विश्वास न होने पर भी वह उसमें रुचि लेते थे। बनारस में एक पंडित ने उनकी कुंडली देखकर उनके अतीत जीवन की सारी घटनाएँ विस्तार से बता दी थीं। कहा था, "यह किसी महायोगी या किसी राजतुल्य व्यक्ति की कुंडली है। धर्म-स्थान में बृहस्पति का इतना पूर्ण स्थान मैंने कभी नहीं देखा।" (पृष्ठ—109)

प्रसंग—शरत बाबू के मन में भगवान के प्रति वैसी श्रद्धा नहीं थी जैसी भक्त के प्रति थी। वह भक्त को प्यार करते थे। किसी अनपढ़ ग्रामीण की सच्ची भक्ति को देखकर तो वह गदगद हो उठते थे। उनका कहना था कि भगवान वास्तव में गरीब के पास है। वह हाथ जोड़कर ईश्वर से यही प्रार्थना करते थे कि हे ईश्वर, उनके द्वारा किसी का अनिष्ट न हो। उनसे किसी को कष्ट न पहुँचे। इसीलिए वह सदैव दरिद्रों और दुखियों के विषय में लिखते रहे। उनकी पत्नी धार्मिक प्रवृत्ति की थी। वह ईश्वर में बड़ी निष्ठा रखती थी। उनका कुछ समय व्रत-उपवास आदि में व्यतीत

होता था। यह सबकुछ देखकर भी शरत बाबू ने उनके कार्यों में कभी बाधा नहीं डाली। वह सोचते थे कि जो व्यक्ति जैसा करता है। वह कुछ न कुछ सोचकर ही वैसा करता है, अतएव उसके कार्यों में बाधा डालने का हमें कोई अधिकार नहीं है। प्रस्तुत गद्यांश में लेखक ने धर्म-कर्म और विश्वास से जुड़े एक प्रश्न पर प्रकाश डाला है।

व्याख्या–शरत बाबू किसी भी धार्मिक व्यक्ति से ऐसा कभी नहीं कहते थे कि वह इस आडंबर को छोड़ दे। वह छोटे-बड़े सभी को सम्मान की दृष्टि से देखते थे। वह ज्योतिष विद्या पर विश्वास नहीं करते थे। लेकिन इसके बावजूद वह ज्योतिष में रुचि लेते थे। जिस समय वह बनारस में थे तो एक विद्वान ब्राह्मण ने उनकी कुंडली देखकर उनके विषय में बहुत सी बातें बताई थीं। यद्यपि उन्होंने पंडित की बातों पर विश्वास नहीं किया था परंतु उन्होंने उसकी बातें बड़े ध्यान से सुनी थीं। पंडित ने कहा कि यह जन्मकुंडली या तो किसी बहुत बड़े योगी पुरुष की है या किसी राजसी व्यक्ति की है क्योंकि कुंडली में जो अक्षरों का विधान रखा गया है वह बेजोड़ है। इसमें धर्म स्थान में बृहस्पति का पूर्ण स्थान है। इस प्रकार का स्थान बहुत कम लोगों की कुंडली में पाया जाता है। इस प्रकार ज्योतिषी ने शरत बाबू के कार्यों को न देखकर भी अनेक बातें ऐसी बताई थीं जो बाद में सच निकलीं। यद्यपि शरत ने अंत तक उन पर विश्वास नहीं किया क्योंकि उनका कर्म उनके आड़े आ जाता था। वह सोचते थे कि जब कर्म ही जीवन है तो अन्य बातें बिना कर्म किए अपना प्रभाव कैसे छोड़ सकती हैं? वह कर्म के सिद्धांत में यहाँ तक विश्वास करते थे कि आँखों के सामने अचानक हुए दैवी परिवर्तनों में भी उनकी आस्था कभी विश्वास के पंखों पर नहीं बैठ पाई। इस दृष्टि से शरत वास्तव में महायोगी थे।

विशेष

1. शरत के अंत:करण को समझने में उपर्युक्त गद्यांश हमारी बहुत अधिक सहायता करता है। समाज में रहने के कारण शरत जो कुछ देखते थे उसमें कभी बाधा उपस्थित नहीं करते थे परंतु उनका विश्वास, ईश्वर पूजा, नियम व्रत, उपासना, ज्योतिष, फलित आदि में बिल्कुल नहीं था।
2. गद्यांश की भाषा सरलता से समझ में आने लायक है। संस्कृत के शब्दों का प्रयोग भाषा के प्रवाह में बाधक नहीं है। शरत की विद्वत्ता के पीछे जीवन का कटु सत्य छिपा हुआ था, जिसे लेखक ने उनके कार्यों की तुला पर रखकर तोला है।

28

राजनीतिक क्षितिज पर तेजी के साथ नई परिस्थितियाँ पैदा हो रही थीं। ब्रिटिश क्राउन के प्रति वफादारी की प्रतिज्ञा लेने वाली कांग्रेस ने केंचुली उतार फेंकी थी क्योंकि प्रथम महायुद्ध के समाप्त हो जाने पर भारत के हार्दिक सहयोग के बदले में उसी क्राउन ने रौलेट एक्ट प्रदान किया था। दक्षिण अफ्रीका में रंगभेद के विरुद्ध संघर्ष करने वाले महत्मा गाँधी ने घोषणा की, "यदि रौलेट कमीशन की सिफारिश को बिल का रूप दिया गया तो मैं सत्याग्रह आरंभ कर दूँगा।" **(पृष्ठ-110)**

प्रसंग–शरत बाबू एक उपन्यासकार के रूप में विख्यात हो चुके थे। इतना ही नहीं, उनके उपन्यासों को पढ़कर लोग उनके दर्शन करने तथा उनसे विचार-विनिमय के लिए भी उतावले रहते थे। लेकिन शरत सदैव अपने को साधारण व्यक्ति ही कहते रहे। जिस समय चारों ओर उनके उपन्यासों की धूम मची हुई थी, उसी समय देश में स्वाधीनता की लहर भी तीव्रगति से दौड़ रही थी। शरत के जीवन में भी क्रांति की एक लहर दौड़ी। वह संपूर्ण देश के साथ अपने को भी समर्पित कर देना चाहते थे। वह ठोस राजनीति में विश्वास करते थे और चाहते थे कि लोग ऐसे कार्य करें जिससे अंग्रेजों को हमारा देश छोड़ने के लिए विवश होना पड़े। वह क्रांतिकारियों के कार्यों में बहुत विश्वास करते थे। इसी कारण उन्होंने सदैव गरम दल का समर्थन किया। प्रस्तुत गद्यांश में लेखक ने देश में व्याप्त स्वतंत्रता आंदोलन पर प्रकाश डाला है।

व्याख्या–भारत में राजनीति के आकाश पर बड़ी तेजी के साथ नई-नई घटनाएँ उत्पन्न हो रही थीं। चारों ओर क्रांति

नोट

की लहर दौड़ चुकी थी। लोग आजादी का महत्त्व समझने लगे थे। अंग्रेजों ने भारतीयों को विश्वास दिलाया था कि वे उनके साथ ऐसा कोई व्यवहार नहीं करेंगे जिससे लोगों की आस्था को चोट पहुँचे। परंतु धूर्त और मक्कार अंग्रेजों ने अपने दिए हुए वचनों का पालन नहीं किया। उस समय देश में स्वतंत्रता के आंदोलन की बागडोर कांग्रेस नामक संस्था के हाथों में थी। अत: अंग्रेजों के आश्वासन देने के कारण कांग्रेस ने ब्रिटिश-ताज के प्रति अपनी संपूर्ण भक्ति दर्शाई थी। अर्थात् कांग्रेस से अंग्रेजों ने कहा था, यदि वह प्रथम विश्व युद्ध में हमारी सहायता जन बल से करेगी तो हम उसके बदले में भारतीयों के राजनीतिक कार्यों के प्रति सदय और सहयोगी हो जायेंगे परंतु धूर्त अंग्रेजों ने काम निकल जाने के बाद अपना वचन नहीं निभाया था। अत: कांग्रेस रूपी सर्प ने अपने शरीर से अंग्रेजों को हानि न पहुँचाने वाली केंचुली उतार कर फेंक दी थी। इस समय महात्मा गाँधी दक्षिण अफ्रीका में अंग्रेजों के विरुद्ध न्याय पाने के लिए संघर्षशील थे। वहाँ अंग्रेजों ने गोरे-काले का भेदभाव बना रखा था। गाँधी जी रंगभेद की इस घृणित नीति को समाप्त करने के लिए आंदोलन कर रहे थे। जब उन्होंने सुना कि अंग्रेजों ने अपना वायदा नहीं निभाया है तो वे खुलकर उनके विरुद्ध संघर्ष करने के लिए सामने आ गए। अंग्रेजों ने भारतीयों के सहयोग के बदले रौलेट एक्ट दिया। अत: गाँधीजी ने घोषणा की, रौलेट कमीशन की सिफारिशों को कानून का रूप न दिया जाए। अगर ऐसा किया तो मैं सत्याग्रह करने के लिए विवश हो जाऊँगा। सत्याग्रह गाँधी जी का मूलमंत्र था।

विशेष

1. लेखक ने बड़ी कुशलता से शरत कालीन भारत के स्वाधीनता आंदोलन के वातावरण का चित्रण किया है। उस समय देश में स्वाधीनता की लहर बड़ी तीव्रगति से दौड़ रही थी। इस लहर में शरत भी सम्मिलित हुए बिना न रह सके। लेखक ने इस स्थिति का वर्णन सामान्य रूप में किया है। समूचा देश जब एक नई करवट ले रहा था तो शरत के जीवन में भी क्रांति के बीज का फूटना स्वाभाविक था क्योंकि शरत एक स्वाभिमानी व्यक्ति थे। स्वाभिमान दासता की मधुर रोटियाँ और पकवान कभी स्वीकार नहीं करता।
2. प्रस्तुत पंक्तियाँ स्वाधीनता आंदोलन की गरम हवा को महसूस कराती हैं। शरत के मन में क्रांति के बीजों का उदय होना इस बात का सूचक है कि वह स्वतंत्रता का महत्त्व समझते थे और क्रांतिकारियों को अपना पूर्ण सहयोग देना चाहते थे।
3. गद्यांश में संस्कृत के शब्दों के साथ-साथ उर्दू और फारसी के शब्दों का प्रयोग भी किया गया है, जैसे 'वफादारी'।

29.2 सारांश (Summary)

- शरत बाबू सांसारिक सुंदरता को भली-भाँति आत्मसात करना जानते थे। परंतु उस सुंदरता को पूर्णरूपेण रचना के रूप में व्यक्त करने से घबराते थे। शायद वह किसी ऐसी बात को कहना चाहते थे जो आदर्शपूर्ण और विचित्र हो।
- नई-नई शैतानियों के कारण शरत को दंड भी मिलता था परंतु वे शैतानी किए बिना रह ही नहीं पाते। ज्यों ही उन्हें अवसर मिलता था। वह कुछ न कुछ नया कर ही डालते थे।
- शरत एकान्तप्रिय व्यक्ति थे। बचपन में वह एकांत में जाकर बैठ जाते थे और घंटों न जाने क्या-क्या सोचते रहते थे। उनके बैठने के स्थान खंडहर, शमशान या फिर गंगा के किनारे के रेतीले स्थान होते थे।
- शरत का एक परम मित्र था, जिसका नाम राजू था। दोनों स्वच्छंद प्रकृति के थे। वे खेलने के लिए घर से निकल जाते और घंटों किसी मैदान में खेलते रहते थे। वह शरत की प्रेरणा था क्योंकि शरत को अच्छे कार्यों को करने की प्रेरणा वही दिया करता था।
- शरत के समय में लोग बंगाल के खंजरपुर गाँव में लाला गुलजारी लाल से कर्ज लेने के लिए पहुँचा करते थे।

गुलजारी उधार के धन पर काफी सूद लिया करते थे। शरत को भी उधार लेकर ही परीक्षा का शुल्क भरना पड़ता था।

- शरत आवारा प्रकृति का व्यक्ति था इसलिए उसे विवाह करके गृहस्थी जोड़ने में बिल्कुल रुचि नहीं थी। गृहस्थी को वह एक बंधन समझता था। इसी कारण उसने कभी सोचा ही नहीं कि किसी स्त्री से विवाह किया जाए।
- शरत वास्तव में आत्मस्वाभिमानी तरुण था। कोई उसका अपमान करे और वह उसे सहन कर ले, ऐसी बात उसकी आत्मा कभी स्वीकार नहीं करती थी। इस कारण वह छोटे से अपमान को देखकर भी स्थान को तुरंत छोड़ देता था।
- शरत को अचानक रंगून में रेलवे में एक नौकरी मिल गई। इससे उसको लगा कि अब दुख के दिन समाप्त हो गए हैं। परंतु मनुष्य के कर्म उसके साथ-साथ चलते हैं। शरत का भाग्य ने साथ नहीं दिया। वह बर्मी भाषा की परीक्षा में असफल रहा। इस कारण उसका वकील बनने का स्वप्न टूट गया।
- दरिद्रों, दुखियों और स्त्रियों की सहायता करने में जितनी प्रसन्नता होती है उतनी प्रशंसा भगवान की पूजा करने में भी नहीं होती। इस दृष्टि से वह जीवित मानव की सेवा करना ही ईश्वर की सेवा मानता था।
- मोक्षदा अर्थात हिरण्यमयी के आ जाने के बाद शरत के हृदय के प्रेम-प्रसून खिल उठे। अभी तक उसका जीवन बड़ा अव्यवस्थित रहता था। लेकिन जब सच्चे विवाह को उसने स्वीकार कर लिया तो एक बार फिर उसके जीवन में बहार आ गई।
- उसके गले में सैकड़ों व्यक्तियों ने फूलों की मालाएँ डालीं। उसका स्वागत किया। इस प्रकार उसके गले में कम से कम सेर डेढ़ सेर का वजन हो गया। मालाओं के भार के कारण उसको सीधे खड़े होने में बड़ी परेशानी हो रही थी।
- शरत अपना परिचय देने में सदा ही झिझकता था। वह वस्त्रों और चाल-ढाल से ऐसा मालूम पड़ता था मानो वह बिल्कुल देहाती है। फिर भी मित्रों के साथ प्रेम व्यवहार करना और किसी भी गोष्ठी में शामिल होने में उसे विशेष आनंद आता था।
- जिस समय शरत ने कलकत्ता छोड़कर रंगून का मार्ग पकड़ा था, उस समय वह असहाय था। उसके पास पैसे का अभाव था। लेकिन तेरह वर्ष बाद जब वह कलकत्ता लौटा तो, वह एक प्रसिद्ध कथाकार हो चुका था।
- शरत एक साहित्यकार थे। साहित्यकार अपनी पुस्तकों में वही लिखता है जो कुछ वह देश, समाज और परिवार में देखता है। शरत ने अत्यधिक गरीबी देखी थी। वह जानते थे कि दुख क्या होता है?
- शरत बाबू निरीश्वरवादी नहीं थे। लेकिन वह सच्ची श्रद्धा के कायल थे। अन्य लोगों को भगवान के प्रति अपार श्रद्धा रखते देखकर वह प्रसन्न होते थे लेकिन वह अपने भले के लिए ईश्वर की पूजा-अर्जना कभी नहीं करना चाहते थे।
- भारत में राजनीति के आकाश पर बड़ी तेजी के साथ नई-नई घटनाएँ उत्पन्न हो रही थीं। चारों ओर क्रांति की लहर दौड़ चुकी थी। लोग आजादी का महत्त्व समझने लगे थे।
- शरत के मन में क्रांति के बीजों का उदय होना इस बात का सूचक है कि वह स्वतंत्रता का महत्त्व समझते थे और क्रांतिकारियों को अपना पूर्ण सहयोग देना चाहते थे।

29.3 शब्दकोश (Keywords)

1. अनिवार्य – जरूरी
2. साक्षी – गवाह
3. आजीवन – जीवनभर
4. कामना – इच्छा
5. निपुण – कुशल
6. मार्ग – रास्ता
7. श्याम – काला
8. वर्ण – रंग

नोट

9. माहिर – कुशल
10. विलक्षण – अद्‌भुत
11. लालायित – उत्सुक
12. प्रेरणा – आदर्श।

29.4 अभ्यास प्रश्न (Review Questions)

1. लेखक ने शरतचन्द्र के मन की गति का वर्णन किस प्रकार किया है?
2. शरत के प्रकृति सौंदर्य-प्रेमी एवं एकान्त-प्रिय होने का किन बातों से पता चलता है?
3. ईश्वर ने शरत को कैसा व्यक्तित्व और रंग-रूप प्रदान किया था? वर्णन कीजिए।
4. बंग-समाज में व्याप्त अंधविश्वास और पिछड़ेपन का प्रभाकर जी ने कैसे चित्रण किया है?
5. अपने मामा के घर में शरतचन्द्र को किन दुखों एवं कष्टों का सामना करना पड़ा?
6. शरत ने धोबी की बकरी को किस प्रकार बचाया?
7. 'चरित्रहीन' उपन्यास के माध्यम से शरत ने समाज की किन समस्याओं को उजागर किया है?
8. उदाहरण देकर समझाइए कि किस प्रकार शरत 'नास्तिक होते हुए भी आस्तिक थे'।

उत्तर : स्व-मूल्यांकन (Answers : Self-Assessment)

1. ज्ञान
2. भण्डार
3. मित्र
4. सूद
5. (क)
6. (ख)
7. (ग)
8. सत्य
9. असत्य
10. असत्य
11. सत्य।

29.5 सन्दर्भ पुस्तकें (Further Readings)

पुस्तकें आवारा मसीहा–विष्णु प्रभाकर, राजकमल एंड संस, दिल्ली।

नोट

इकाई–30: 'आवारा मसीहा' : प्रमुख पात्रों का चरित्र-चित्रण

अनुक्रमणिका (Contents)

उद्देश्य (Objectives)
प्रस्तावना (Introduction)
30.1 दिशाहारा व्यक्तित्व का धनी : शरतचन्द्र
30.2 स्वच्छंदता और साहस का प्रेरक : राजू
30.3 मोक्षदा का चरित्र-चित्रण
30.4 'आवारा मसीहा' : क्रान्तिकारी जीवन का अग्रदूत
30.5 सारांश (Summary)
30.6 शब्दकोश (Keywords)
30.7 अभ्यास प्रश्न (Review Questions)
30.8 सन्दर्भ पुस्तकें (Further Readings)

उद्देश्य (Objectives)

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् विद्यार्थी योग्य होंगे–

- 'आवारा मसीहा' के पात्रों के चरित्र को समझने में;
- शरतचंद्र के निजी जीवन के खास पलों को जानने में;
- एक 'क्रांतिकारी' के रूप में शरतचंद्र की भूमिका की व्याख्या करने में।

प्रस्तावना (Introduction)

प्रभाकर जी ने 'आवारा मसीहा' नामक कृति में शरत बाबू के चरित्र के चारों ओर अन्य चरित्रों का चित्रण किया है। इस दृष्टि से शरतचन्द्र इस जीवनी का मुख्य पात्र है। इस रचना में लेखक ने शरत बाबू के महान् चरित्र का उद्घाटन बड़े प्राकृतिक रूप में किया है। उन्होंने जीवनी में विशेष व्यक्तित्व को उभारने के फलस्वरूप प्रमुख तत्वों का ही समावेश नहीं किया है, वरन जीवनी के तत्वों से संबंधित सामाजिक, आर्थिक, मनोवैज्ञानिक और सांस्कृतिक तत्वों के द्वारा भी व्यक्तित्व में निखार लाने का प्रयास किया है। वह इस बात को भी नहीं भूले हैं कि मानव का जीवन कितना संवेदनशील, सामाजिक, सक्रिय और गतिशील है और उसे बराबर गतिशील बनाए रखने के लिए क्या-क्या क्रियाएँ की जानी चाहिए। असल में जीवनी साहित्य को प्रभावपूर्ण बनाने के लिए लेखक सभी आवश्यक तत्वों और तथ्यों का सहारा लेता है।

नोट

30.1 दिशाहारा व्यक्तित्व का धनी : शरतचन्द्र

शरतकालीन चंद्रमा के समान शरतचन्द्र

मनुष्य एक ऐसा प्राणी है जिसे समाज में रहकर पग-पग पर अनेकानेक बाधाओं और विरोधों का सामना करना पड़ता है। इसके बावजूद उसे जीवित रहना पड़ता है क्योंकि उसे प्रकृति ने जीवित रहने के लिए ही बनाया है। परंपराओं, प्रथाओं और रीति-नीति की दुनिया में वह अपने आपको ढालता है और परिस्थितियों पर विजय प्राप्त करने का प्रयास करता है। इस प्रकार लक्ष्य होता है, अपने अस्तित्व और आदर्शों को बनाए रखना। इसी कारण वह समुद्र की गहराई से मोती खोजता है और सामाजिक प्रतिबंधों से तादम्य स्थापित करता है। उसके आचरण आदर्श और प्रतिदर्श बनते हैं। उसकी क्रियाएँ और उपलब्धियाँ अन्य व्यक्तियों के लिए अनुकरणीय हो जाती हैं। वह आत्मा को समझने के लिए सत्यम्, शिवम् और सुंदरम् को समझने का प्रयास करता है।

यदि हम 'आवारा मसीहा' नामक जीवनी के नायक शरत बाबू की इच्छाओं, जिजिविषाओं आदि पर विचार करें तो हमें पता चलता है कि शरत बाबू एक ऐसे व्यक्ति थे जो प्रकृति से जुड़े हुए थे और जिनको आरंभ से ही प्रकृति ने साहित्य सृजन के लिए बनाया था। उनके भीतर असीम करुणा, दया और सांसारिक माया का एक विशाल साम्राज्य बसा हुआ था जिससे प्रेरित होकर वह साहित्य सृजन करते रहते थे। यद्यपि बंग समाज में बंधने, उनके पाँवों में बेड़ी जकड़ने के लिए आगे बढ़ते रहते थे तथापि वह उनको तोड़कर स्वच्छंदता के साथ आगे बढ़ने और कुछ करने का प्रयास करते रहते थे। ऐसा कहा जाता है कि तत्कालीन समाज की रूढ़ियाँ उनको विवश करती रहती थीं कि वे उच्छृखंल और चरित्रहीन बने रहें। इस दृष्टि से शरत बाबू का व्यक्तित्व किसी एक दिशा की ओर बहने वाला नहीं था, वरन वह अनेक दिशाओं की ओर चलता रहता था। इन परिस्थितियों में लेखक ने यथार्थता और सत्यता को बनाए रखने के लिए एक ओर उनको लुच्चा और लफंगा कहा है तो दूसरी ओर उनमें देवत्व के गुणों का भी बखान किया है। इस संबंध में लेखक ने शरत बाबू को उच्चकोटि का साहित्यकर्मी और रवींद्रनाथ ठाकुर के समान बंगाली साहित्यकार स्वीकार किया है। शरत बाबू के व्यक्तित्व की यह दुरंगी दशा बचपन से ही दिखाई देती है। एक निर्धन पिता का पुत्र शरत, अर्थ यह कि ऐसे पिता का पुत्र जो यायावर वृत्ति का था और जो ससुराल में रहकर अपना भरण पोषण कर रहा था, कैसे किसी बंधन में बँध कर रह सकता था? सचमुच शरत बाबू को सामाजिक बंधनों से घृणा थी। इसी कारण उनका चरित्र सामाजिक जटिलताओं के बीच उभरकर आता है। जो बालक बचपन में ही समाज के थपेड़े खाकर निरंकुश प्रवृत्ति का हो गया था, वह बड़ा होकर समाज के नियमों और मर्यादाओं का कैसे आदर करता? इसी बात को ध्यान में रखकर शरत बाबू के संबंध में हमें ऐसी विचारधारा के दर्शन होते हैं जो दुधारू है। यहाँ हम शरत बाबू के चरित्र से संबंधित गुणावगुणों की व्याख्या कुछ विस्तार से करेंगे–

1. नटखट, स्वतंत्र किंतु दयालु स्वभाव का व्यक्ति–शरत बचपन से ही नटखट स्वभाव का बालक था। उसने साधारण परिवार के बालकों के समान साधारण पाठशाला में विद्या आरंभ की। नटखट प्रकृति के बालकों में जिज्ञासा की प्रवृत्ति अधिक होती है और इसी कारण उनकी बुद्धि तीव्र होती है। वह जो कुछ शैतानियाँ करता है उनसे उसकी शारीरिक और मानसिक शक्ति परिपक्व होती रहती है। शरत को पढ़ते समय तरह-तरह की शरारतें सुझाई देती रहती हैं। वह अपने नाना जी तथा परिवार के अन्य लोगों से भी प्रायः झूठ बोल दिया करता था। इसके फलस्वरूप उसको दंड भी मिलता था और कभी-कभी तो उसे असहनीय शारीरिक दंड भी भुगतना पड़ता था। परंतु इतने पर भी वह शरारत नहीं छोड़ता था और पुनः अपने संगी-साथियों के साथ तरह-तरह के क्रिया-कलापों में डूब जाता था। उसे पशु-पक्षी पालने का भी शौक था। जब कभी उसके पालतू पक्षी को कोई बीमारी हो जाती थी तो वह बहुत दुखी होता था। इन सब कार्यों की इजाजत उसे घरवालों से नहीं मिलती थी इसलिए वह इन कार्यों को गुप्त रूप से करता था। उसके नाना जी नहीं चाहते थे कि शरत अपना समय खेलकूद में व्यतीत करे। वह उसकी पढ़ाई-लिखाई में विश्वास करते थे। उनका कहना था, "जो बालक दिनभर नटखटी करने में अपना समय बिताता है वह निकम्मा होता है। इसलिए बच्चों को अपना जीवन बनाने के लिए अच्छे-अच्छे कार्य करने चाहिए।" कभी-कभी वह शरारती बालकों के साथ पकड़ा जाता तो पास के जंगल में छिप जाता था। तब उसे ढूँढ़ना मुश्किल हो जाता था।

नोट

नोट्स शरत पतंग उड़ाने और गुल्ली-डंडा खेलने का शौकीन था। जब कभी उसे इस कार्य के लिए मना किया जाता था तो वह शमशान भूमि या खंडहर में छिप जाता था। वह बचपन से बड़ा साहसी था। अत: उसे जरा भी डर नहीं लगता था।

इन सब कार्यों के बावजूद वह बड़ा दयालु बालक था। वह दूसरे के दुख को देखकर बड़ी जल्दी पिघल जाता था। उसने खेल-खेल में कभी किसी को नहीं सताया और न किसी को हानि पहुँचाई। वह अपने संगी साथियों को संकट में पड़ा देखकर उनके कष्टों का निवारण करने के लिए कटिबद्ध हो जाता था। इस दृष्टि से उसे बुरा व्यक्ति कैसे कहा जा सकता है? जबकि समाज में लोग उसे अच्छा व्यक्ति नहीं समझते थे। प्रभाकर जी के शब्दों में, "वह खिलाड़ी था, विद्रोही भी उसे कह सकते हैं, पर बदमाश वह किसी दृष्टि से नहीं था। पिता की तरह उसमें भी प्रचुर मात्रा में सौंदर्य-बोध था। पढ़ने के कमरे को खूब सजाकर रखता। चौकी और उस पर एक सुंदर सी तिपाई, एक बंद डेस्क और उसमें पुस्तकें, कापियाँ, कलम-दवात इत्यादि-इत्यादि।"

"स्वभाव से वह अपरिग्रही था। दिनभर में वह जितनी गोलियाँ और लट्टू जीतता, संध्या को वह उन सबको छोटे बच्चों में बाँट देता। देने में उसे मानो आनंद आता था। नींद और आहार पर भी उसे अधिकार था। बचपन से ही वह स्वल्पाहारी था।"

उस दिन अवकाश प्राप्त अध्यापक अघोरनाथ अधिकारी स्नान के लिए गंगाघाट की ओर जा रहे थे। कपड़े उठाए पीछे-पीछे चल रहा था शरत। एक टूटे हुए घर के भीतर से एक स्त्री के धीरे-धीरे रोने का करुण स्वर सुनाई दिया। अधिकारी महोदय ठिठक गए। बोले, "यह कौन रोता है? क्या हुआ इसे?"

शरत ने उत्तर दिया, "मास्टर मोशाई, इस नारी का स्वामी अंधा था। लोगों के घरों में काम-काज करके यह उसको खिलाती थी। कल रात वह अंधा स्वामी मर गया। यह बहुत दुखी है। दुखी लोग बड़े आदमियों की तरह दिखाने के लिए जोर-जोर से नहीं रोते। उनका रोना दुख से विदीर्ण प्राणों का क्रंदन होता है। मास्टर मुशाई, यह सचमुच का रोना है।"

"सूक्ष्म पर्यवेक्षण की प्रवृत्ति उसमें बचपन से ही थी। जो कुछ भी देखता उसकी गहराई में जाने का प्रयत्न करता और यही अभिज्ञता उसकी प्रेरणा बन जाती। गाँव में एक ब्राह्मण की बालविधवा बेटी थी, नाम था उसका नीरू। बत्तीस साल की उमर तक कोई कलंक उसके चरित्र को छू भी नहीं पाया था। सुशीला, परोपकारिणी, धर्मशीला और कर्मठ होने के नाते वह प्रसिद्ध थी। वह उसे 'दीदी' कहकर पुकारता था। दीदी भी उससे बहुत प्यार करती थी। दोनों एक ही परदुखकातर जाति के व्यक्ति जो थे।"

स्व-मूल्यांकन (Self-Assessment)

रिक्त स्थानों की पूर्ति करें (Fill in the blanks) :

1. शरतचंद्र को प्रकृति ने आरंभ से ही .... सृजन के लिए बनाया था।
2. शरत खिलाड़ी था, विद्रोही भी उसे कह सकते हैं, पर .... किसी दृष्टि से नहीं था।
3. शरत में बचपन से ही सूक्ष्म .... की प्रवृत्ति थी।
4. शरत बाबू द्वारा लिखित 'चरित्रहीन' की .... भी जलकर राख हो गई थी।

2. भावुक तथा संवेदनशील व्यक्ति–शरत एक भावुक और संवेदनशील व्यक्ति था। वह दूसरों के दुख को देखकर द्रवित हो जाता था। चूँकि वह साहित्यकार था इसलिए उसके पास किसी भी बात को समझने के लिए गहरी दृष्टि थी। वह चाहता था कि लोग दुखी न रहें। वह सोचता था कि लोग दुखी क्यों रहते हैं? क्या इस संसार में दुख नाम की कोई चीज है? लेखक ने शरत का जीवन चरित्र लिखते समय इस बात को समझाया है कि शरत सचमुच

नोट

एक मसीहा था–'आवारा मसीहा।' उसका हृदय बचपन से ही किसी को दुखी देखकर रो उठता था। वह जानता था कि दरिद्रता ही दुख का मुख्य कारण है। एक बार गाँव में कालरा फैला। सब लोग गाँव छोड़कर भागने लगे, लेकिन शरत रोगियों की सेवा करने के लिए प्राणपण से जुट गया। उसने इस बात की चिंता नहीं थी कि रोग उस पर कुपित हो सकता है।

"एक बार रंगून शहर में प्लेग की महामारी ने आक्रमण किया। चारों ओर हाहाकार मच उठा। इधर-उधर लाशें दिखाई देने लगीं। तभी एक दिन शरत ने घर लौटकर पाया कि शांति को ज्वर हो गया है। वह काँप उठा। उसने बहुत पास से उस ज्वर के उग्र रूप को देखा था। परंतु पहचान गया कि यह प्लेग है। सहायता के लिए पड़ोसियों से प्रार्थना की, लेकिन ऐसे समय कौन आगे आता। दौड़ता हुआ वह अपने मित्र गिरींद्र सरकार के पास पहुँचा और अवरुद्ध कंठ से बोला, "भाई गिरीन! मैं बड़ी विपद् में फँस गया हूँ। शांति तीव्र ज्वर में छटपटा रही है।"

"एक बुढ़िया को प्लेग लगा। उसके बचने की कोई आशा नहीं थी। शरत उसे देखकर कातर हो उठा। विकल-विहवल वह शांति की प्राण-रक्षा के लिए बार-बार डॉक्टर से अनुरोध करने लगा। लेकिन वह क्या कर सकते थे? सांत्वना देकर तथा उपचार बताकर वहाँ से चले गए। शरत फिर रोगिणी की शय्या के पास आ गया।"

शरत के हृदय में पशु-पक्षियों के प्रति भी विशेष प्रेम था। वह उनको बड़े प्यार से पालता, दुलारता और उनको तरह-तरह की चीजें खिलाता था। वह कहता था कि पशु-पक्षी भी मनुष्य की तरह जीवित प्राणी हैं। यदि उनसे प्यार करो तो वे मन से प्यार करते हैं। वह मनुष्य की तरह छली, कपटी, बेईमान और विश्वासघाती नहीं होते हैं। इन बातों से अभिभूत होकर ही उसने तोता, कुत्ता और बिल्ली पाल रखे थे। जब वह रंगून में थे तो मकान में आग लग गई। वह घर की आग को किंकर्त्तव्यविमूढ़-सा देखता रहा। उसने 'चरित्रहीन' उपन्यास लिखा था, उसकी पाण्डुलिपि भी जलकर राख हो गई। शायद कुछ पुस्तकें भी आग निगल गई। अंततः वह घबराया नहीं।

लेखक के शब्दों में, "पक्षी उसके पास निरंतर रहते थे। एक मैना थी, जिसे प्यार से वह 'मौना' कहकर पुकारता था। अचानक उसकी मृत्यु हो गई। वह ऐसे दुखी हुआ, जैसे कोई संतान के मरने पर होता है। फिर एक सिंगापुरी नूरी पक्षी ले आया। बड़े प्यार से उसका नाम रखा 'बाटू बाबा'। उसे बातें करना सिखाया। रात को बार-बार उठकर उसे खिलाता।"

"एक दिन यह 'बाटू बाबा' मर गया। सोने की जंजीर उसके गले में फँस गई। शरत अत्यंत कातर हो उठा। विधिपूर्वक नदी-तट पर ले जाकर उसका दाह-संस्कार किया। कई दिन तक न तो घर से बाहर निकला, न खाया, न पिया। जब निकला तो शोक के कारण उसका हृदय भरा हुआ था। बाल बिखरे हुए थे। मित्रों ने पूछा, "क्या हुआ शरत बाबू? आप इतने दुखी क्यों हैं?"

शरत ने उत्तर दिया, "मेरे बच्चे की मृत्यु हो गई।"

इस प्रकार शरत पशु, पक्षी और मानव सभी से अटूट प्रेम करता था। इसी विशिष्ट गुण के कारण शरत बाबू ने शास्त्री जी की कन्या को अपनी जीवन संगिनी बना लिया जबकि उस समय उनकी चित्तवृत्ति ग्रहस्थी बसाने की नहीं थी। उन्होंने अपनी प्रिय कहानी 'काशीनाथ' के स्वत्वाधिकार प्रमथनाथ मजूमदार को दे दिए थे, क्योंकि उनसे मजूमदार की निर्धनता देखी नहीं गई थी। गाँव में कोई बीमार हो जाता तो वह उसे देखने जाता और उसके पास जो भी दवा होती वह रोगी को देता। यदि उस दवा से रोगी को लाभ नहीं होता तो वह डॉक्टर को बुलाकर लाता और उसका सारा व्यय स्वयं ही वहन करता।

शरत विधवाओं से भी विशेष सहानुभूति रखते थे। अपनी पुस्तकों में उन्होंने ऐसी बहुत सी महिलाओं के विषय में लिखा है जो सामाजिक परंपराओं और रूढ़ियों के कारण पतित, वेश्या आदि मान ली गई थीं।

"और उस दिन हिरण्यमयी ने कानून सम्मत पत्नी न होते हुए भी पत्नीत्व के दायित्व को पूर्ण रूप से ओढ़ लिया। मन का मिलन ही सच्चा विवाह है।"

शरत बाबू ने एक स्थान पर लिखा है, "देखो, किरणमयी के चरित्र द्वारा मैंने नारी-जीवन की व्यर्थता को दिखाना

चाहा है। किरणमयी और हाशन बाबू का गृहस्थ जीवन बड़ा ही करुण है। स्वामी का प्यार उसने पाया नहीं। घर में स्वामी है, सास है, एक दार्शनिक है जो पत्नी को पढ़ाकर सुखी है। सास घोर स्वार्थी है। पुत्रवधू से खूब काम लेती है। किरणमयी दोनों विरुद्ध प्रकृति के स्त्री-पुरुष के प्रेमहीन मेल को हिंदू समाज विधि का नियम मानकर स्वीकार नहीं करती। वहीं से किरणमयी के जीवन की ट्रेजडी आरंभ होती है।"

शरत बाबू जब सत्तावन वर्ष के हुए तो बंगाल की स्त्रियों ने उनका जन्मदिवस मनाते हुए उनका अभिनंदन किया। उनको पराधीन समाज की असहाय नारियों के कष्टों को दूर करने वाला बताया। ऐसा भी कहा कि शरत बाबू ने अपने साहित्य में नारियों की गूढ़ प्रकृति को सम्मान देकर उनको उठाने का भरसक प्रयास किया है। इस प्रकार उनको स्त्री-चरित्र के रहस्य को ज्ञाता बताकर उनकी वंदना की गई।

अंत में एक धर्मपरायण व्यक्ति ने एक गोष्ठी में उनसे कहा, "आप मुँह से चाहे जो कहें, आपकी रचनाओं को पढ़कर मुझे लगता है कि सनातन धर्म की मर्यादा को आप ठेस पहुँचाना नहीं चाहते। जब देखता हूँ कि 'चरित्रहीन' उपन्यास की उस लड़की ने स्टीमर पर एक बालक के साथ एक बिछौने पर रहते हुए भी अपने शील को नष्ट नहीं होने दिया तो क्या हम लोग कहेंगे कि आप सनातन धर्म को नहीं मानते?"

टास्क शरत की भावुक एवं संवदेनशील प्रकृति को उदाहरण देकर समझाइए।

3. **उत्साही एवं तीक्ष्ण बुद्धि वाला व्यक्ति**–शरत बाबू की बुद्धि बचपन से ही तीक्ष्ण थी। वह जिस व्यक्ति को एक बार देख लेते थे उसे कभी नहीं भूलते थे। वह व्यक्ति यदि वर्षों बाद भी उन्हें दिखाई दे जाता था तो वह बड़ी सहजता से उसका नाम पता बता दिया करते थे। शायद इसी एक विशेष गुण के कारण उन्होंने बंगाल के जीवन से संबंधित अनेक बातों को सोचा और समझा था। वह चाहते थे कि समाज में गली-सड़ी बातें और जीवन को नरक बनाने वाली जो परंपराएँ पनप गईं हैं उनका हर दृष्टि से निराकरण हो। उन्हें पढ़ने का अवसर कम प्राप्त हुआ परंतु जितना पढ़ा उसमें उन्होंने पूर्ण दक्षता प्राप्त की। बचपन में उनके नटखट व्यवहार से शिक्षकगण अवश्य दुखी होते थे, परंतु जब वह उनके मुख से सूझ-बूझ की बातें सुनते थे तो वे उनको किसी भी प्रकार का दंड नहीं दे पाते थे।

उनका बचपन गरीबी, दीनता और धनाभाव में व्यतीत हुआ था। उनके पास परीक्षा देने के लिए शुल्क नहीं था। इसलिए वह अपने मामा लोगों को टयूशन पढ़ाकर शुल्क के लिए धन जुटाते थे। इस संबंध में यह बात भी स्मरणीय है कि वह बड़े साहसी, लगनशील, उत्साही एवं उच्चकोटि के व्यक्ति थे। अपनी ओर से वह कभी कोई ऐसा कार्य नहीं करना चाहते थे जिससे दूसरों को कष्ट पहुँचे।

उस दिन विज्ञान की परीक्षा थी उन्होंने अपने विद्यार्थियों से कहा, "आज रात तुम मुझे परेशान न करना। जो कुछ पूछना हो कल सवेरे आकर पूछ लेना।" और इसके बाद वह विज्ञान की पुस्तकें लेकर पढ़ने बैठ गए। वह रातभर दत्तचित्त होकर पढ़ते रहे। उनमें पढ़ने की इतनी धुन रहती थी कि वह गूढ़ से गूढ़ विषय के रहस्य को हृदयंगम करने के उपरांत ही चैन से बैठते थे। इसके बाद जब उन्होंने प्रश्नपत्रों के उत्तर दिए तो परीक्षक उनके उत्तरों को देखकर चकित रह गए। वे विश्वास ही नहीं कर पा रहे थे कि शरत बाबू इतने अनूठे उत्तर लिख सकेंगे। वे सोचने लगे, कहीं शरत ने नकल तो नहीं की है। इसकी जाँच करने के लिए उन्होंने शरत बाबू को बुलाया और उनको नया प्रश्नपत्र तैयार करके दिया। इस बार शरत बाबू ने सभी प्रश्नों के उत्तर मौखिक रूप में दे दिए। यह देखकर अध्यापकों के आश्चर्य का ठिकाना नहीं रहा। उनकी स्मरण-शक्ति के सामने अध्यापकगण उनका चेहरा देखते रह गए। प्रभाकर जी ने उनके संबंध में लिखा है, "अत्यंत लोकप्रियता के कारण जनसाधारण, विशेषकर विद्यार्थी लोग उनकी प्रत्येक गतिविधि पर ध्यान रखते थे। वे उसका अर्थ निकालने की चेष्टा करते थे। जब वे बनारस गए तो अनेक विद्यार्थी उनसे मिलने के लिए आए और अनेक विषयों पर उनके साथ विचार-विनिमय किया। एक दिन उन सब को साथ लेकर वह विश्वनाथ के मंदिर में भी गए। उस समय वहाँ आरती हो रही थी। एक कोने में जाकर वे खड़े हो गए

नोट

और आरती के पश्चात् बिना दर्शन किए चुपचाप चले आए।" एक विद्यार्थी ने पूछा, "आपके उपन्यास से पता चलता है कि आप कंजर्वेटिव या आर्थोडक्स नहीं हैं। तब आप मंदिर में क्यों गए?"

शरतचन्द्र ने उत्तर दिया, "भगवान के प्रति मेरे मन में वैसी श्रद्धा नहीं, लेकिन मैं भक्त को प्यार करता हूँ। एक अनपढ़ ग्रामीण की सच्ची भक्ति में देवत्व रहता है। मैं वही देखने गया था। वह देखकर मैं कृतकृत्य अनुभव करता हूँ।"

4. विद्रोही प्रकृति का व्यक्ति–शरत बाबू ऐसे समाज में रहते थे जिसमें सड़ी-गली मान्यताओं को श्रेष्ठ स्थान दिया गया। था। अत: शरत बाबू इन मान्यताओं और परंपराओं के सख्त विरोधी थे। वह उनको स्वीकार करने में हिचकिचाते थे। उनके विरोध में जो सच्ची बातें उनके हृदय में जन्म लेती थीं उनको वह तुरंत कर देते थे। एक बार दादी के मना करने के बाद भी वह बसंतपुर चले गए। विद्रोह की इस भावना के कारण वह कुछ जिद्दी हो गए थे। तंबाकू खाने लगे थे। कलकत्ता में पहुँचे तो उन्होंने वेश्याओं के मुहल्ले में मकान लिया, क्योंकि वह मानते थे कि वेश्याएँ भी समाज का एक अंग हैं। लोगों ने झूठी मान्यताओं के कारण उनको समाज से बहिष्कृत कर रखा है। वह वेश्याओं में भी सच्चरित्र स्त्रियों को ढूँढ़ते थे। वह उनकी सदाशयता और महानता की प्रशंसा किया करते थे। वह सोचते थे कि किसी कारणवश वे पथ भ्रष्ट हो गई हैं, परंतु वे भी नारियाँ हैं। इन नारियों में ही माँ, बहिन और पत्नी होती हैं। सचमुच मनुष्य का बाहरी रूप उसका असली परिचय नहीं है। उनका कहना था–हजारों ऐसी सती नारियाँ समाज में मिलेंगी जो ऊपर से तो भली और सुपथगामी दिखाई देती हैं परंतु भीतर से वे झूठी, कुकर्मी, चोर, धोखेबाज, ईर्ष्यालु और जाने क्या-क्या होती हैं। इसके विपरीत जिनकों हम दुराचारिणी कहते हैं, उनके भीतर दया, प्रेम, श्रद्धा आदि गुणों की खान रहती है।

शरत बाबू कहते थे–"परमात्मा ने मानव को मानव बने रहने के लिए बनाया है, दानव नहीं। इसलिए मनुष्य को मनुष्य से घृणा कभी नहीं करनी चाहिए। घृणा पाप को जन्म देती है और पाप से मनुष्य की प्रवृत्ति अपराधी बन जाती है। उनका कहना था शास्त्रों में जो कुछ लिखा है वह समयानुसार ठीक था। इसलिए शास्त्रों में संशोधन करने का मनुष्य को अधिकार है। शास्त्रों ने तो मनुष्य के अधिकारों का बखान किया है परंतु कर्त्तव्यों के बारे में कुछ नहीं कहा है। ऐसी दशा में पुरुष तो कुछ भी करता फिरे उसके लिए कोई उँगली नहीं उठाता, परंतु भूल से स्त्री का पाँव फिसल जाता है तो लोग उसे कुलटा, कलंकिनी, दुराचारिणी, पथभ्रष्टा और न जाने क्या-क्या कहने लगते हैं। ऐसी बात क्यों है? समाज में स्त्रियों को भी उतना ही सम्मान मिलना चाहिए जितना एक पुरुष को दिया जाता है। स्त्री भी प्राणवान् प्राणी है। वह सती है। वह गृहस्थी को सजाती है और पुरुष को जन्म देने वाली देवी है। और वह मनुष्य की प्रेरणा है। अत: हमें स्त्री जाति का सम्मान करना चाहिए।"

5. विलक्षण प्रतिभा का धनी साहित्यकार–शरत बाबू ने बचपन से ही जीवन को निकट से देखा था। उसकी गहराइयों को पहचानने की चेष्टा की थी। अत: विरला अथवा महान् साहित्यकार बनना तो जैसे वह अपने भाग्य में लिखा कर लाए थे। वह बचपन से ही कहानी, कथा आदि सुनने में रुचि लेते थे। वह स्थानीय जमींदार के पुत्र के साथ प्राय: थियेटर देखने चले जाते थे। वह रास्ते में अचानक ही उससे पूछ बैठते थे-"क्या तुम इस पर कहानी लिख सकते हो?" कुछ क्षण बाद वे स्वयं उसी से मिलती-जुलती कहानी गढ़कर सुनाने लग जाते थे। कुछ दिनों बाद वह एक सुंदर कहानी रचकर भी दिखाते थे। उनको कहानी लिखने की प्रेरणा अपने पिता की 'हरिदास की गुप्त बातें' और 'भवानी पाठ' जैसी पुस्तकों से मिली। ये दोनों पुस्तकें उन्होंने अपने पिता की अलमारी में से चुपके से निकाल कर पढ़ी थीं। चूँकि उनके पिता ने उनसे कह रखा था कि पाठ्य पुस्तकों के अलावा दूसरी पुस्तकों को पढ़ना अच्छे लड़कों का कर्त्तव्य नहीं है। अत: शरत बाबू के विद्रोही मन ने उन पुस्तकों को जान-बूझकर पढ़ा। वह देखना चाहते थे कि जिन पुस्तकों के विषय में उनसे मना किया गया था, आखिर उनमें ऐसी क्या बात है? इस प्रकार की पुस्तकों से ही उनको नई कहानियाँ और उपन्यास लिखने की प्रेरणा मिल सकी थी।

जिज्ञासा मानव मन की प्यास बुझाती है तो उसे एक नई खोज करने की प्रेरणा भी देती है। शरत बाबू जिन कहानियों को गढ़-गढ़ कर लिखते थे, वे दूसरों को भी सुनाते थे। उनके संगी-साथी उन कहानियों को सुनकर प्रभावित हुए बिना नहीं रहते थे। वह अपने मामा सुरेंद्रनाथ, विभूतिभूषण और विधवा बहन के साथ गुप्त रूप से गोष्ठियाँ भी करते

थे। अपनी युवावस्था में ही उन्होंने काशीनाथ, शिशु, चंद्रनाथ, हरिचरण बालस्मृति, शुभदा, देवदास, अनुपमा का प्रेम, कोरेल ग्राम आदि कृतियाँ लिख डाली थीं। उन्हें साहित्यिक गोष्ठियों में विशेष आनंद आता था। वहाँ बैठकर वे सभी प्रकार की रचनाओं पर चर्चा करते थे। उनके साहित्यिक जीवन के विषय में भी विष्णु प्रभाकर ने लिखा है, "जैसा कि उनका स्वभाव था वह बहुत अधिक नहीं लिख पाते थे। आग्रह करने वाले बहुत थे। सब की रक्षा करना उनके लिए असंभव था। जो उनको जानते थे और उनके परमभक्त थे, वे ही उनसे लिखवा सकते थे। उनमें अग्रणी थे–भारतवर्ष के ख्यातनामा संपादक राय बहादुर जलधर सेन। बैकुंठ का वसीयत नामा, अरक्षणीया, श्रीकांत, निष्कृति तथा समाज धर्मेर मूल्य आदि उनकी रचनाएँ भारतवर्ष में ही प्रकाशित हुईं। निष्कृति का एक अंश 'घर भांगा' के नाम से 'यमुना' में भी छपा था।"

नोट्स शरत के साहित्यिक जीवन पर अपने विचार प्रकट करते हुए प्रफुल्लचंद्र राय ने कहा था–"धन्य शरतचंद्र! तुम इतने दिन कहाँ थे? कहाँ से आ गए? सचमुच तुम्हारे समान एक लेखक की बड़ी आवश्यकता थी। सामाजिक व्याधि और दुर्नीति का चित्रण करने के लिए जिस प्रकार तुमने कलम पकड़ी उसकी कोई तुलना नहीं हो सकती। तुमने कभी भी धर्ममत के ऊपर ओछा व्यंग्य-विद्रूप नहीं किया।"

6. सच्चा राष्ट्रभक्त–शरत बाबू को अपने देश से अटूट प्रेम था। वह देश सेवा के लिए बड़े से बड़ा कार्य भी छोड़ने के लिए तैयार हो जाते थे। वह राजनीति के क्षेत्र में लोगों को सक्रिय होने की प्रेरणा देते थे और चाहते थे कि भारत से दुष्ट और धूर्त अंग्रेजों के राज्य का हर दशा में अंत होना चाहिए। वह स्वतंत्रता आंदोलन को हृदय से अपना लेना चाहते थे, किंतु कुछ कारणवश वह वैसा नहीं कर पाए जैसा सोचा करते थे। वह एक साहित्यकार थे। लोगों के कथनानुसार साहित्यकार को राजनीति की गंदी बातों में नहीं पड़ना चाहिए परंतु शरत बाबू कहते थे कि गाँधी जी ने जो आंदोलन छेड़ा है उसका साथ सभी लोगों को देना चाहिए क्योंकि वह देश की मुक्ति का आंदोलन है। जो व्यक्ति दासता में रहकर साँस लेने में गुरेज नहीं करता वह सच्चा साहित्यकार नहीं है। सच्चा साहित्यकार दासता की बेड़ियों को तोड़ने के लिए हर तरह के कर्म कर सकता है। जब कभी उनके संगी-साथी उनसे कहते कि आप तो साहित्यिक हैं आपका काम साहित्य चर्चा है राजनीतिक नहीं, तो वह उत्तर देते, "यह आपकी भूल है। राजनीति में योगदान देना देशवासियों का कर्त्तव्य है। विशेषकर हमारे देश में यह राजनीति आंदोलन देश की मुक्ति का आंदोलन है। इस आंदोलन में साहित्यकारों को सबसे आगे बढ़कर योगदान देना चाहिए। लोकमत को जागृत करने का गुरुभार संसार के सभी देशों में साहित्यिकों का ही रहा है। युग-युग में उन्होंने ही तो मनुष्य के मन में मुक्ति की आकांक्षा जगाई है। यदि आपकी बात मान लें तो वकील, बैरिस्टर, विद्यार्थी सभी यही तर्क उपस्थित करेंगे, तब राजनीति को कौन संभालेगा?"

शरत बाबू चाहते थे कि देश की मुक्ति के आंदोलन में लोगों को अवश्य भाग लेना चाहिए। इसी भावना के कारण उनकी देश संबंधी में पूरी श्रद्धा नहीं थी, किंतु वह आजादी के महत्त्व को खुले हृदय से बताते थे। उन्होंने कहा, "मैं गाँधी जी को व्यक्तिगत रूप से इतना बड़ा मानता हूँ जिसकी तुलना आसानी से खोजे नहीं मिल सकती। मेरे मन में उनके प्रति लोगों से कहीं अधिक श्रद्धा है। उनके प्रति मेरे मन में यदि वह श्रद्धा नहीं होती तो आज मैं किसी के दबाव या आग्रह से हावड़ा जिला कांग्रेस कमेटी के अध्यक्ष का पद कभी स्वीकार नहीं करता। पर उनके सिद्धांतों से अक्षरश: सहमत होने की कसम मैंने खाई है। मैं मनुष्य हूँ मिट्टी का जड़ पुतला नहीं हूँ। इसलिए किसी भी साधारण या महत्त्वपूर्ण विषय पर स्वतंत्र रूप से चिंतन करने की सामर्थ्य मुझमें है।"

जब उनसे पूछा गया कि अहिंसक सत्याग्रह और हिंसक विप्लव में किसका समर्थन करते हैं? तो उन्होंने उत्तर दिया, "मैं हिंसा का समर्थन नहीं करता यह ठीक है। फिर भी न जाने क्यों, क्रातिंकारियों के प्रति मेरे अंदर यह एक

नोट

कमजोरी रह गई है। इसलिए खतरा उठाकर भी इनसे संपर्क रखने और कभी-कभी यथासंभव आर्थिक मदद करने में मैं तनिक भी आगा-पीछा नहीं करता।"

एक बार, गाँधी जी के आह्वान पर भारत की नारी सामूहिक रूप से पुरुष के कंधे से कंधा मिलाकर रणभूमि में उतरी थी। दोनों साथ-साथ रहेंगे तो क्या आपत्तिकर घटनाएँ न घटेंगी? यह आशंका अनेक व्यक्तियों को परेशान कर रही थी। शरत बाबू ने इस अवसर पर स्पष्ट शब्दों में कहा, "मशाल के दीप्त प्रकाश से अंधकार नष्ट होता है, यही बात सब लोग जानते हैं लेकिन उससे उठने वाली किंचित बदबू की ओर क्या किसी का ध्यान जाता है? जल प्लावन से धरती उर्वर हो उठती है? यदि उस जल के साथ कुछ मैला भी आ जाए तो परेशान होने की क्या बात है?"

इस प्रकार यह कहा जा सकता है कि शरत बाबू बड़े उत्साही, दयालु, विद्रोही परंतु धर्म की वास्तविकता को समझने वाले और घुमक्कड़ व्यक्ति थे। उन्होंने जीवन को बहुत पास से देखा और उसे समझने का प्रयास किया। सचमुच वह एक निस्वार्थी और मानव को मानव समझने वाले व्यक्ति थे। ऐसे व्यक्ति संसार में कम ही होते हैं।

टास्क सच्चे राष्ट्रभक्त के रूप में शरत ने क्या भूमिका निभाई?

30.2 स्वच्छंदता और साहस का प्रेरक : राजू

राजू का चरित्र–'आवारा मसीहा' में श्री विष्णु प्रभाकर ने वैसे तो मुख्य रूप से शरच्चंद्र के चरित्र का चित्रण किया है, लेकिन साथ में आए अन्य पात्रों के चरित्रों पर भी बहुत-कुछ लिखा है। इसका मुख्य कारण यह है कि चरित्र-चित्रण करते समय चरित नायक का लेखक जिन समस्याओं, मान्यताओं और परिस्थितियों के संबंध में लिखता है, उससे संबंधित पात्रों के चरित्रों को दर्शाना भी आवश्यक हो जाता है। जीवनी में आने वाली सभी सहायक पात्र काल्पनिक न होकर वास्तविक होते हैं। इन लोगों का चरित नायक से किसी न किसी रूप में सीधा संबंध होता है। इनके व्यक्तित्व का निर्माण करने से अधिकारों और कर्त्तव्यों के विषय में बहुत कुछ पता चल जाता है। पाठकों को भी नई बातों की जानकारी होती है।

'आवारा मसीहा' में राजू भी इसी तरह का पात्र है जिसने शरत बाबू का हर कदम पर साथ दिया। यदि शरत बाबू की ओर से किसी प्रकार की नई शरारत होती तो राजू उनको चेतावनी देता और गलत कार्य करने से रोकता था। इस प्रकार राजू एक ऐसा लड़का है जो शरत बाबू को एक नई दिशा प्रदान करता है। इससे प्रेरित होकर शरत बाबू एक दु:साहसी लड़के से साहित्यकार और समाज सेवक बन गए। यह मान्यता है कि यदि राजू शरत बाबू के जीवन में नहीं आता तो शरत बाबू शायद साहित्यकार न बनकर कुछ और बन जाते।

राजू के पिता का नाम बाबू रामरतन मजूमदार था। वे जिला इंजीनियर थे। भागलपुर में आकर रामरतन बाबू ने शरत बाबू के पड़ोस में मकान लिया। कुछ सामाजिक कारणों से दोनों परिवारों में अनबन हो गई लेकिन बच्चों में पहले के समान प्रेमभाव रहा। इस प्रकार शरत बाबू और राजू दोनों दो तन एक प्राण के रूप में कार्य करने लगे। असल में दोनों बालकों के स्वभाव एक से ही थे। दोनों बालक तरह-तरह के खेलों में पारंगत थे। वे कभी पतंग उड़ाते और कभी गुल्ली डंडा खेलते। राजू कीमती पतंगें खरीदकर लाता था और शरत की पतंग से पेंच लड़ाता था। दोनों की गहरी जान-पहचान पतंगबाजी के कारण ही हुई थी। दोनों एक दूसरे के विचारों का स्वागत करते थे और जहाँ तक संभव होता था प्रतियोगिता के कारण आपसी प्रेमभाव को प्रभावित नहीं होने देते थे।

राजू एक साहसी, अच्छा सुझाव देने वाला और प्रत्युपन्नमति बालक था। जब कभी वह शरत के सामने कोई बात रखता, अपने सुझाव देता तो उसे शरत के शांत और धैर्यपूर्ण उत्तर को सुनकर चकित रह जाना पड़ता क्योंकि शरत के सुझाव बेजोड़ होते थे। एक उदाहरण यह है–

"उसका अधिकतर समय राजू के साथ बीतने लगा। वह इन दिनों पढ़ना-लिखना छोड़ लकड़ी के कारखाने में काम सीखता था। यदि वह मोती जैसे अक्षर लिख सकता था तो लकड़ी की सुंदर वस्तुएँ भी बना सकता था। अद्‌भुत चरित्र था उसका। एक साथ वीरता और बाँसुरी की विद्या में निष्णात। कंठ स्वर मधुर था। हारमोनियम, क्लेयरनेट सभी खूब अच्छी तरह से बजाता था। अभिनय करने की उसमें अद्‌भुत क्षमता थी। वह प्रतिभाशालियों के वंश में पैदा हुआ था इसलिए प्रतिभा ने उसका मुक्त होकर वरण किया था।"

"उसकी एक नाव थी और उसी में वह घूमता रहता था। कभी-कभी घोर अँधेरी रात और पूरमपूर भरी होती गंगा, वह शरत को पकड़ता और कहता, 'चलो नाव में घूम आवें' शरत को डर लगता, पर राजू तो उसका गुरु है, मना करे भी तो कैसे करे?"

एक बार की बात है कि फुटबाल के मैदान में दंगा हो गया। इस बारे में लेखक ने लिखा है, "अन्याय के विरुद्ध सीना तानकर खड़ा हो जाना राजू का स्वभाव था।" इस पंक्ति से यह बात स्पष्ट होती है कि राजू दु:साहसी होने के कारण कभी-कभी झगड़ा भी करने लगता था। राजू की उम्र शरत से अधिक थी। अत: वह उसे हर प्रकार से उत्साहित करता रहता था। राजू संगीत और बाँसुरी बजाने में भी रुचि लेता था। उसका कंठ मधुर था। जब गाता तो श्रोतागण मुग्ध हो जाते थे। आजकल राजू ने पढ़ना-लिखना छोड़ दिया था। वह लकड़ी के एक कारखाने में काम सीख रहा था। देखा जाए तो वह ऐसे काम की ओर भी प्रवृत्त हो जाता था जिसे दूसरा बालक कभी नहीं कर सकता था।

स्व-मूल्यांकन (Self-Assessment)

बहुविकल्पीय प्रश्न (Multiple Choice Questions) :

5. शांति को बुखार होने पर शरत किसके पास जाता है?

   (क) राजू (ख) नीरू

   (ग) गिरींद्र सरकार (घ) इनमें से कोई नहीं।

6. कितने वर्ष का होने पर बंगाली स्त्रियों ने शरत का जन्मदिन मनाकर उनका अभिनन्दन किया?

   (क) सत्तावन (ख) पचपन

   (ग) बावन (घ) इनमें से कोई नहीं।

7. किससे प्रेरित होकर शरत बाबू एक दु:साहसी लड़के से साहित्यकार और समाज सेवक बन गये?

   (क) नीरू (ख) राजू

   (ग) मोक्षदा (घ) इनमें से कोई नहीं।

एक बार की बात है, गंगा में कुछ स्त्रियाँ स्नान कर रही थीं। राजू भी शरत के साथ किनारे पर अपनी नाव ठीक कर रहा था। अचानक वहाँ कुछ असामाजिक तत्व आ गए। वे स्त्रियों की ओर घूरने लगे। राजू ने उनमें से एक व्यक्ति को पकड़ लिया। फिर उसे गंगा में खूब गोते लगवाए। अंत में उससे प्रतिज्ञा करवाई कि वह भविष्य में स्त्रियों के प्रति कभी गलत व्यवहार नहीं करेगा। इसी प्रकार एक अंग्रेज ने मोक्षदा संस्कृत पाठशाला के एक अध्यापक की मार्ग में कोड़े से पिटाई कर दी। उनकी पीठ पर चाबुक की मार से खाल उधड़ गई और खून छलक आया। राजू ने यह सब देखा तो उसका रक्त खौल उठा। उसने उस दुष्ट और पापी अंग्रेज से बदला लेने की प्रतिज्ञा कर ली। फिर अध्यापक से निवेदन के रूप में कहा–"आप धैर्य धारण करके अपने घर जाएँ। कल जो कुछ होगा उसे आप स्वयं सुन लेंगे।" दूसरे दिन राजू, शरत तथा कुछ अन्य साथी एक मोटी-सी रस्सी लेकर पेड़ों के पीछे छिप गए। उन सब ने मिलकर रस्सी पेड़ों से दो तनों के बीच बाँध दी। वह अंग्रेज शाम के समय क्लब को जाता था। अचानक उसका घोड़ा रस्सी में उलझ कर गिर पड़ा। तभी सब लड़के पेड़ों से नीचे कूद पड़े। उन्होंने उस पापी अंग्रेज की मन माफिक

नोट

पिटाई की और उससे माफी मंगवाई। इसके बाद वह अंग्रेज मारे लज्जा के भागलपुर से स्थानांतरण करा के भाग गया।

इस घटना से यह सिद्ध होता है साहसी होने के साथ-साथ राजू बुद्धिमान और निडर भी था। उसे अन्याय जरा भी पसंद नहीं था। एक उदाहरण से यह बात स्पष्ट हो जाती है—

पास आकर राजू ने शरत से कहा, "उस मुहल्ले के तारापद का बेटा अभी-अभी हैजे से मर गया है। बेचारा तीन साल का बच्चा अनेक प्रयत्न करने पर भी बच नहीं सका। माँ-बाप पागलों की तरह रो-पीट रहे हैं। लेकिन इस रोग के रोगी की लाश को अधिक देर तक नहीं रखना चाहिए। इसी दम शमशान पहुँचा देना चाहिए। मोहल्ले के सभी लोग यहाँ यात्रा देखने के लिए आ गए हैं। अब तू भी मेरे साथ चल।"

"दोनों तारापद के घर पहुँचे। माँ-बाप को समझा कर बच्चे की लाश शमशान की ओर ले चले। आधी रात बीत चुकी थी। शमशान ठीक गंगा के तट पर था। जितना बड़ा उतना ही डरावना। दूर-दूर तक बस्ती का निशान नहीं था। चारों ओर बालू का अखंड राज्य, कहीं-कहीं खजूर के एक-दो पेड़ या कंटीली झाड़ियाँ, यही कुछ वहाँ दिखाई देता था।"

"शमशान के बीचों-बीच एक झोंपड़ा था। आँधी-पानी आने पर या किसी कारण विश्राम करने की आवश्यकता हो तो उसका उपयोग किया जा सकता था। लेकिन लोगों का विश्वास था कि इस झोपड़े में भूत रहते हैं। दिन में भी उसके भीतर जाने से डरते थे।"

लेकिन राजू इन बातों की चिंता नहीं करता था। वह सीधा उसी झोंपड़े में जा घुसा। शरत भी पीछे-पीछे चला आया, लेकिन डर के मारे वह काँप रहा था। राजू ने लाश को फर्श पर रख दिया। बोला, "बहुत देर से बीड़ी नहीं पी है। पहले एक बीड़ी पी लूँ।"

तभी सहसा अँधेर में एक आवाज आई, "एक मुझे भी दोगे?"

शरत के रोंगटे खड़े हो गए। शरीर से पसीना बहने लगा। राजू ने पूछा, "कौन है?" और साथ ही दियासलाई जलाकर देखा, पास ही एक मैले से बिस्तर पर एक आदमी गुदड़ी से ढका हुआ लेटा है।

...अंत में राजू ने सबसे पहले लड़के को गाड़ा, फिर स्नान किया। उसके बाद शरत से कहा—"मैं इस बूढ़े को कंधे पर उठा लेता हूँ। तू इसकी गुदड़ी बगल में दबा ले।"

इस प्रकार 'आवारा मसीहा' में राजू की निडरता और साहस की अनेक कहानियाँ भरी पड़ी है। भागलपुर में माघ के महीने का जाड़ा प्रसिद्ध है। एक दिन अचानक बेगला सकूल की पत्नी का स्वर्गवास हो गया। उस दिन अँधेरी रात्रि थी और आकाश में घने बादल थे। ऐसी दशा में गाँव का कोई भी व्यक्ति शमशान जाने को तैयार नही हुआ। लेकिन राजू, शरत तथा अपने अन्य साथियों की सहायता से इस कार्य को करने के लिए तैयार हो गया। जब वे लोग शव को शमशान घाट की ओर ले जा रहे थे तो मार्ग में बड़ी तेज वर्षा होने लगी। देखते-देखते रास्ते और घाट पानी में डूब गए। ऐसे में लाश को कैसे फूँका जा सकता था? राजू बोला—"हम लोग इमली के पेड़ के नीचे बैठ कर साँस ले लें।" इसी समय ओले गिरने लगे। ऐसे में पेड़ के नीचे बैठना भी ठीक नहीं था। पर मुर्दे को अकेले कैसे छोड़ा जाए? राजू बोला, "आप सब जा सकते हैं, मैं अकेला यहाँ रहूँगा।" राजू ने किसी प्रकार लाश को ठिकाने लगाया और ओले-पानी में हँसता हुआ घर की ओर चल पड़ा। सचमुच राजू एक परोपकारी, अदम्य साहसी और बात का धनी लड़का था।

राजू के हृदय मे निर्धन मित्रों के प्रति बड़ी दया का भाव रहता था। वह जब-तब निर्धन छात्रों की सहायता करता रहता था। उसने जीवन के हर क्षेत्र में शरत की सहायता की। शरत ने राजू से ही सीखा था कि दया क्यों आती है? और करुणा क्यों फूट-फूट कर रोती है? शरत बाबू राजू से प्रेरणा लेकर कार्य करते थे। एक दिन अचानक पता चला कि राजू कहीं चला गया है। शरत को लगा जैसे किसी ने उनकी आत्मा को निचोड़ लिया हो। कुछ दिनों के बाद कुछ लोगों ने राजू को हरिद्वार में देखा। वह उदासी पंथ के अखाड़े में एक गीत गा रहा था। एक बंगाली जान-पहचान की महिला ने राजू को पहचान लिया। उसी स्त्री ने उससे कहा कि "तेरे माता-पिता तेरे कारण पागल हो गए हैं।"

लेकिन राजू शांत रहा। इस प्रकार वह किसी को कुछ बताए बिना समाज और शरत से दूर चला गया और फिर कभी नहीं मिला।

प्रश्न उठता है कि कहीं राजू कोई काल्पनिक पात्र तो नहीं है? परंतु शरत की प्रेरणा और कदम-कदम पर सहायता के प्रमाण प्रस्तुत करने वाला राजू काल्पनिक पात्र नहीं हो सकता। हाँ, राजू एक विचित्र चरित्र वाला बालक है। संभवत: उसके हृदय में शुरू से ही संन्यास लेने की आकांक्षा बलवती हो रही थी। अंत में जब वह कदाचित् संसार की गंदी बातों, माया, मोह और मृत्यु से बचने की तरकीब सोचता है तो संन्यासियों के अखाड़े में जा पहुँचता है। इसके हृदय में मानव-जाति के प्रति दया और प्रेम का भाव है। वह निडर है और अन्याय के विरुद्ध इसी कारण सीना तानकर खड़ा हो जाता है। उसने साहस का परिचय छोटी-सी आयु में ही दे दिया था। कुछ भी सही, राजू शरत की प्रेरणा का स्रोत था।

30.3 मोक्षदा का चरित्र-चित्रण

हिरण्यमयी देवी–शरत बाबू जिस स्त्री से प्रेम करते थे उसका नाम हिरण्यमयी देवी था। हिरण्यमयी देवी शरत बाबू की पत्नी थी लेकिन समाज की दृष्टि में, "शरत बाबू ने उसे अपनी जीवन संगिनी बना लिया था।" कुछ भी सत्य हो लेकिन शरत उससे ऐसा कोई व्यवहार नहीं करते थे जो अपयश का कारण था। हिरण्यमयी देवी एक देहाती स्त्री थी, और वह कम पढ़ी-लिखी थी। वह सीधी, सादी, समाज की बहुत-सी बातों की जानकार और शांतिपूर्ण जीवन व्यतीत करने में विश्वास रखती थी। शरत बाबू की उससे जान पहचान भी बड़े अनोखे ढंग से हुई। उनकी पहली धर्म पत्नी शांति का देहावसान हो चुका था। शांति के सानिध्य से शरत बाबू का जीवन आनंदपूर्वक बीत रहा था, परंतु उसकी मृत्यु के उपरांत शरत बाबू जैसे टूट गए थे। इस कारण उन्होंने दूसरी स्त्री से विवाह करने की बात त्याग दी थी। यद्यपि शरत बाबू की आयु काफी हो चुकी थी और वे तरह-तरह के कष्टों को सहन करते हुए अधूरे और अस्वस्थ रहने लगे थे, जैसे-तैसे जीवन-नैया को चला रहे थे। रंगून में रहते समय वह अनेक स्त्रियों के संपर्क में आए परंतु उन्होंने किसी से भी विवाह की बात नहीं चलाई। कुछ विद्वानों का कहना है कि रंगून में उनके घर में एक स्त्री रहती थी। परंतु पता नहीं चल पाया कि वह कौन थी और उनके साथ क्यों रहती थी? कोई नहीं जानता कि वह उनकी जीवन संगिनी थी या कोई रखैल स्त्री।

टास्क मोक्षदा के चरित्र पर अपने विचार व्यक्त कीजिए।

बंगाल के बहुत से लोग उन दिनों धन कमाने के लिए रंगून जाया करते थे। उन्हीं में से कृष्णदास अधिकारी नामक एक संभ्रांत व्यक्ति रंगून पहुँचे थे। वह मेदिनीपुर जिले के रहने वाले थे। उनके साथ उनकी एक पुत्री थी। जिसका नाम मोक्षदा था। वह साधारण कन्या थी। उसे सुंदर किसी भी दशा में नहीं कहा जा सकता। उसका रंग मटमैला और शरीर भी सुडौल नहीं था, पर वृष्टि से भीगे फूल पत्तों जैसा लावण्य, चेहरे से श्रीमयी और स्नेहमयी भी कम नहीं थी। उसके पिता निर्धन थे। अत: वह कन्या के लिए दहेज जैसी घृणित वस्तु जुटाने में असमर्थ थे। उसके पिता ने शरत से कहा कि यदि आप अनुग्रहपूर्वक मेरी बेटी को स्वीकार कर लें तो बड़ा उपकार होगा। लेकिन शरत बाबू अभी इसके लिए तैयार नहीं थे क्योंकि उनको अपनी पूर्व पत्नी की याद सताती रहती थी। इसलिए शरत मानसिक रूप से विवाह नहीं करना चाहते थे।

इसी समय शरत बाबू बीमार पड़ गए। बीमारी का मुख्य कारण उच्छृंखल जीवन और खान-पान में बदपरहेजी आदि था। दूसरे बर्मा में मलेरिया और प्लेग जैसे रोग फैले हुए थे। इसलिए ऐसे वातावरण में कोई भी व्यक्ति बीमार हो सकता है। उस समय मोक्षदा ने बड़े स्नेह से शरत बाबू की तीमारदारी की। धीरे-धीरे शरत बाबू का ज्वर उतर गया।

नोट

एक दिन उन्होंने आँख खोल कर देखा कि मोक्षदा उनके सिरहाने बैठी है। शरत को आश्चर्य हुआ और उसके प्रति सहानुभूति उमड़ी। वे सोचने लगे माँ के पश्चात मोक्षदा ही एक ऐसी स्त्री है जिसने मुझे स्नेह दिया है। वह मोक्षदा की ओर आकर्षित होते गए।

एक दिन शरत को पता चला कि कृष्णदास बिना कुछ बताए कलकत्ता चले गए हैं। वह मोक्षदा का भार उनके ऊपर छोड़ गए हैं। शरत को मोक्षदा के लिए वर खोजने का भार वहन करना पड़ा।

तब शरत ने अचानक मोक्षदा से कहा, "आज मैंने तुम्हारे लिए एक वर ढूँढ लिया है।"

मोक्षदा हठात् शरत की ओर देखने लगी। फिर उसकी आँखें भर आईं। बोली, "इस तरह की बातें करते आपको अच्छा लगता है?"

शरत ने कहा, "ना ना, मैं परिहास नहीं कर रहा और तुम्हें बुरा भी नहीं मानना चाहिए। आखिर तुम्हें विवाह तो करना ही है, जो व्यक्ति मैंने तुम्हारे लिए ढूँढा है, वह तुम्हारा आदर करता है और तुम्हारे प्रति सदय भी है।"

मोक्षदा और भी विस्मित हो उठी। अटक-अटक कर उसने कहा, "मैं इस बारे में कुछ नहीं जानती। वह व्यक्ति कौन है? बिना जाने उसके बारे में क्या कह सकती हूँ।"

शरत ने शरारत से मुस्कुराते हुए कहा, "तुमने उसे देखा है।"

"क्या?"

"बहुत बार देखा है।"

जैसे मोक्षदा के मस्तिष्क में प्रकाश उभरने लगा। फिर भी अनजान बने रहते हुए उसने कहा, "मैं कुछ नहीं जानती।"

शरत बोला, "मुझे नहीं जानती।"

मोक्षदा ने एकाएक दृष्टि उठाकर शरत की ओर देखा। अविश्वास और विस्मय से भरी वह दृष्टि शरत के अंतर में भर गई। फिर सहसा भरी हुई बदली की तरह वह नीचे झुकी कि शरत के चरण पकड़ ले लेकिन बीच में ही रोक कर शरत ने कहा, "क्या तुम्हें वह व्यक्ति स्वीकार है?"

मोक्षदा ने अब भी कोई जवाब नहीं दिया। वह उसी तरह नीचे झुकी रही। इसके बाद शैव-रीति से दोनों ने विवाह कर लिया। यद्यपि समाज ने इस संबंध को स्वीकार नहीं किया परंतु शरत सामाजिक विधि-विधानों को कब मानता था? उसने कहा, "आज से तुम हिरण्यमयी देवी हुईं। तुम खरे सोने के समान हो। इस पर कभी भी किसी प्रकार का मैल नहीं जम सकता। तुम्हारे अंतर के उज्जवल रूप को मैंने देख लिया। वह मेरी शक्ति बनेगा।"

"और उस दिन से हिरण्यमयी देवी ने कानून सम्मत पत्नी न होते हुए भी पत्नी के दायित्व को पूर्ण रूप से ओढ़ लिया। मन का यह मिलन ही सच्चा विवाह है।"

हिरण्यमयी देवी एक सीधी-सादी और सरल हृदय स्त्री थी। वह शरत का बहुत सम्मान करती थी। वह हमेशा उसके कार्यों को प्राण-पण से पूर्ण करती थी। शरत बाबू को उसने कभी शिकायत का अवसर नहीं दिया। एक बार शरत बाबू किसी क्रांतिकारी की सहायता करना चाहते थे। हिरण्यमयी देवी ने अपने पति के द्वारा उस मनुष्य की सहायता को अच्छा समझा और उससे जो करते बना, उसने किया। इस तरह वह दोहरा भार ढोती हुई भी गृहस्थी के नियमों का पालन करती रहती थी। अनपढ़ होने के कारण हिरण्यमयी देवी को बहुत सी अच्छी-बुरी बातों का ज्ञान नही था। जब कभी कोई उससे शरत साहित्य के स्त्री पात्रों के विषय में कुछ बात करना चाहता तो वह हँसकर अनभिज्ञता प्रकट कर देती थी। उसका हृदय सदैव इसी बात में डूबा रहता था कि लोगों को उसके द्वारा कष्ट न पहुँचे। वह निश्छल प्रेम से शरत बाबू की सेवा करती रहती थी। इसी प्रेम के कारण उसने एक आवारा साहित्यकार के हृदय को जीत लिया था। उसकी सेवा परायणता, निश्छलता और प्रेम के विषय में लेखक ने संक्षेप में बहुत कुछ कह दिया है।

30.4 'आवारा मसीहा' : क्रांतिकारी जीवन का अग्रदूत

'आवारा मसीहा' में प्रभाकर जी ने सुप्रसिद्ध उपन्यासकार शरतचन्द्र चट्टोपाध्याय की जीवनी का चित्रण किया है। इसमें लेखक ने 'कुछ नहीं' को 'सबकुछ' के रूप में व्यक्त करने की चेष्टा की है और वह अपने इस महत्त्वपूर्ण कार्य में सफल भी हुआ है। उसने शब्दों के माध्यम से शरत बाबू तथा उनसे संबंधित पात्रों, घटनाओं, रूढ़ियों, कार्यकलापों आदि के विषय में जो कुछ समझाया है उसे देखकर यही लगता है कि यदि लेखक चाहे तो पीतल को भी सोना बना सकता है। लेखक की इस पुस्तक के अध्ययन से साहित्कारों और पाठकों को एक नई दिशा मिली है। यह निर्विवाद सत्य है कि जो व्यक्ति विचारवान होते हैं वे संवेदनशील भी होते हैं। निरक्षर भट्टाचार्य के हृदय में प्रेम, भक्ति, शालीनता, सहृदयता, दया, करुणा आदि का समुद्र वेग नहीं उमड़ता। अत: विज्ञ पाठक संवेदनशील व्यक्ति से ही कुछ आशा रख सकता है, निरक्षर से नहीं। सच्चाई तो यह है कि जिस व्यक्ति का हृदय भाव-सरिता से भीगता नहीं, जिसका मस्तिष्क चेतना-सागर में गोते नहीं लगाता, वह अच्छा लेखक या कवि कभी नहीं बन सकता। शरत बाबू ऐसे व्यक्ति थे जो हर समय कुछ न कुछ पढ़ते रहते थे। उन्होंने प्राणी विज्ञान, जीव विज्ञान पाश्चात्य, भारतीय शास्त्रों आदि का गंभीरतापूर्वक अध्ययन किया था। अत: वह विभिन्न विषयों पर वाद-विवाद कर सकते थे। विद्वता की इसी लहर में डूबकर वह साहित्य की रचना करते थे और उसी से अपना जीवन-यापन करते थे। उनके विचार इतने परिपक्व होते थे कि किसी को काटने का साहस नहीं होता था। अपने इन्हीं विचारों के कारण वह विश्वप्रसिद्ध व्यक्ति माने गए। उनके साहित्य का विश्व की अनेक प्रसिद्ध भाषाओं में अनुवाद हुआ। जिसने उनके साहित्य को पढ़ा और मनन किया है, वह जानता है कि समाज और मनुष्य का जीवन क्या है? जीवन को किस सीमा तक जिया जा सकता है? ईश्वर ने इस जीवन को क्या केवल जीने के लिए बनाया है या किसी कार्य के लिए?

प्रभाकर जी ने उनके जीवन चरित में अनेक स्थलों पर उनकी जीवनी से संबंधित अनेक बातों को उद्धृत किया है। ये बातें विचारणीय हैं और इनका अध्ययन करके चरित नायक की उच्छृंखल प्रकृति पर कुछ सोचा-समझा जा सकता है। शरत बाबू के उपन्यासों में जो उनके विचार मिलते हैं, वे बड़े गंभीर और ठोस हैं। उनको मानकर चलने में आज भी सामाजिक कार्यकर्ता उँगली उठा सकते हैं। परंतु यदि वह शरत बाबू के समान दृढ़ निश्चय वाला व्यक्ति है तो वह पीछे न हटकर आगे ही बढ़ सकता है। इस अध्याय में हम उनके क्रांतिकारी विचारों का अध्ययन संक्षेप में करेंगे।

सबसे पहली बात तो यह है कि शरत बाबू उदात्त, सर्वोत्कृष्ट और सर्वतोमुखी हिंदू धर्म के समर्थक थे, परंतु जब कभी वह हिंदू धर्म की रूढ़ियों और ढकोसलों को देखते थे तो वह उनका विरोध करने के लिए ताल ठोंक कर सामने आ जाते थे। इस कारण उनको विरोध का भी सामना करना पड़ता था। इसके बावजूद उन्होंने समाज में व्याप्त समस्याओं के विषय में अपने विचार स्पष्ट रूप से रखे।

"मैं अपनी रचना द्वारा मनुष्य की आत्मा का अपमान नहीं करना चाहता। पुरुष हो या स्त्री गिरकर उठने का रास्ता सबके लिए खुला होना चाहिए। हिंदुओं का समाज बड़ा निष्ठुर है। मुस्लिम समाज तुलनात्मक रूप से अच्छा है। ईसाई समाज उससे भी अच्छा है। मेरे 'पल्ली समाज' की रमा और रमेश को लीजिए। दोनों महाप्राण हैं दोनों में मंगल करने की अपार शक्ति है, पर दोनों के जीवन किस प्रकार नष्ट हो गए? इनका मिलन एक 'रिलीजन यूनिटी' नहीं हो पाया। ऐसा क्यों हुआ? क्या यह सोचना वर्जित है? इतने बड़े प्राण नष्ट हो गए। क्या किसी दूसरे समाज में ऐसा होता? मैं तो केवल चिंतन के मार्ग का संकेत देकर चुप हो जाता हूँ। आप लोग समस्या का समाधान करें। हम जो बाहर हैं उससे उलझ कर रह जाते हैं। आंतरिक भी तो है। प्रेम कितनी बड़ी वस्तु है। उसकी शक्ति कितनी अपार है।"

इस प्रकार शरत बाबू ने हिंदू समाज में प्रचलित सती-प्रथा का विरोध करने का क्रांतिकारी कदम उठाया। आश्चर्य की बात यह है कि उस समय बंगाल में कट्टरपंथी हिंदू पंथ और विचारधारा का आंदोलन बड़ी तेजी से चल रहा था। ऐसी स्थिति में बड़ी निडरता के साथ हिंदू धर्म के आडंबरों और कुरीतियों के विरुद्ध आवाज उठाना शरत जैसे दृढ़ निश्चयी और साहसी विचारक का ही काम था।

इस विषय में उन्होंने कहा–"मुझे यश की कामना बिल्कुल नहीं है। यदि मैं यश लोलुप होता तो इतने दिन, इतना

नोट

समय, इतने सहज भाव से नष्ट नहीं कर पाता।"

साहित्य के बारे में उन्होंने अपने विचार इस प्रकार प्रकट किए हैं–

"साहित्य का मूल 'सहित' से है, अर्थात् सब के सहित सहानुभूति रखना आवश्यक है। घर बैठे आराम कुर्सी पर पड़े रहकर साहित्य सृष्टि नहीं होती है। हाँ, नकल की जा सकती है। ये लोग करते क्या हैं कि पुस्तक के किसी एक कैरेक्टर को लेकर इसी में कुछ रद्दोबदल कर एक नवीन कैरेक्टर की सृष्टि कर डालते हैं। मानव क्या है? यह मानव को देखे बिना नहीं समझा जा सकता। अत्यंत कुत्सित गंदगी के भीतर भी मैंने इतनी मानवता देखी कि उसकी कल्पना नहीं की जा सकती। यह सारी अभिज्ञता मेरे मन में बनी रही। मेरी स्मरणशक्ति अच्छी है। जानने की इच्छा मेरी बराबर बनी रहती है। मानव के भीतर की सत्ता को जानना मेरा उद्देश्य है। जो तनिक फिसल गया उसे बिल्कुल फेंक दें, यह क्या बात है?"

"मूर्त रचना करना चाहने पर कल्पना से काम नहीं चलता, अपनी अभिज्ञता चाहिए। मेरी रचनाओं में युक्तियों का प्रयोग या समन्वयात्मक परिणाम अधिक हैं। रूप और स्वभाव का वर्णन प्रायः नहीं है।"

साहित्य भाषा के संबंध में भी उन्होंने बड़े क्रांतिकारी विचार रखे हैं–

"बहुत से लोग कहते हैं कि हमें प्लाट नहीं मिलते, इसलिए लिखते नहीं मैं अवाक् रह जाता हूँ। इतनी विशाल धरती पड़ी है, इतना वैचित्र्य है, और ये लोग प्लाट नहीं खोज पाते? इसका कारण है कि वे मानवता को नहीं खोजते अपनी कथा को लेकर व्यग्र रहते हैं। किससे लोगों का मनोरंजन हो, मैं यह नहीं करता। किसी भी पात्र का व्यक्तित्व मैं नष्ट नहीं होने देता। मैं भाषा अच्छी नहीं जानता। शब्दावली बहुत कम है, फिर भी वह लोगों को क्यों अच्छी लगती है? मैं नहीं जानता। जो कुछ कहना या समझना चाहता हूँ वही मन में रखता हूँ और इसके लिए बहुत परिश्रम करता हूँ। 'वह' और 'उन' का प्रयोग बहुत सावधानी से करना होता है। जो लोग कहते हैं कि जो लिखूँगा, वही उत्कृष्ट है, वे लोग भयंकर भूल करते हैं। मनुष्य की बातचीत की तरह लिखने में भी बहुत सी असंबद्ध बातें रहती हैं। इसलिए भूमिका लिखकर मुझे समझाना नहीं पड़ता। मेरी किसी पुस्तक में भूमिका नहीं है।"

टास्क शरत बाबू के क्रान्तिकारी विचारों पर टिप्पणी कीजिए।

शरत बाबू का कथन था कि मनुष्य सामाजिक प्राणी होने के नाते समाज में होने वाले क्रिया-कलापों के पक्ष या विपक्ष में जब तक वह क्रांतिकारी कदम नहीं उठाएगा तब तक वह सफल नहीं हो सकता। उसके जीवन पर परोक्ष या अपरोक्ष प्रभाव पड़ता ही है। शरत बाबू जिस समय लिखते थे उस समय देश में राष्ट्रीय मुक्ति आंदोलन चल रहा था। अतः उन्होंने उसमें योगदान दिया। परंतु चूँकि वह लेखक थे। अतः उनकी राजनीति संबंधी धारणाएँ बड़े अनोखे ढंग की थीं। वह अपने हिसाब से सोचते थे।

शरत बाबू का राजनीतिक झुकाव सदा गरम दल की ओर रहा। लोकमान्य के प्रति उनकी सच्ची श्रद्धा थी। हरिलक्ष्मी में मंझली बहू शरमाते हुए, हँसते हुए कहती है, "तिलक महाराज की तस्वीर देख-देखकर बनाने की कोशिश की थी जीजी, पर बनी नहीं।" यह कहते हुए उसने उंगली उठाकर सामने की दीवार पर टँगे हुए भारत के कौस्तुभ्य लोकमान्य तिलक का चित्र दिखा दिया। उन्हीं तिलक का जब 31 जुलाई की आधी रात के बाद देहावसान हो गया तब व्याकुल शरतचन्द्र ने लिखा, "तिलक केवल मेरे भाई ही नहीं थे, बंधु ही नहीं थे, नेता ही नहीं थे। वह हम बाइस करोड़ लोगों के मलिन ललाट के, शुभ्र गौरवमय तिलक थे। वही तिलक आज मिट गया है। हम अनाथ हो गए हैं।"

शरत साहित्यकार थे और साहित्यकार प्रायः राजनीति के दल से दूर रहता है। परंतु वे मानते थे कि भारत की स्वतंत्रता के लिए जो आंदोलन गाँधी जी ने चलाया है वह केवल शुष्क राजनीति ही नहीं है, देश की मुक्ति राजनीति ही नहीं

है, देश की मुक्ति का व्रत है। जो देश की दासता को सह सकता है वह साहित्यिक नहीं है। उनके साहित्य में देश और मनुष्य का यही प्रेम परिष्कृत हुआ है। उसी देश और मनुष्य के प्रेम के कारण वह असहयोग आंदोलन से अलग नहीं रह सके। साहित्यिक मित्रों ने उनसे कहा, "आप तो साहित्यिक हैं आपका काम साहित्य चर्चा है राजनीति नहीं।"

शरत ने उत्तर दिया, "यह आपकी भूल है। राजनीति में योग देना देशवासियों का कर्त्तव्य है। विशेषकर हमारे देश में यह राजनीतिक आंदोलन देश की मुक्ति का आंदोलन है। इस आंदोलन में साहित्यिकों को सब से आगे बढ़कर योग देना चाहिए। लोकमत जाग्रत करने का गुरुभार संसार के सभी देशों में साहित्यिकों के ऊपर रहा है। युग-युग में उन्होंने ही तो मनुष्य के मन में मुक्ति की आकांक्षा जगाई है। यदि आपकी बात मान भी लें। तो वकील, बैरिस्टर डॉक्टर और विद्यार्थी सभी यही तर्क उपस्थित करेंगे। तब राजनीति को कौन संभालेगा?"

स्व-मूल्यांकन (Self-Assessment)

निम्नलिखित कथनों में सत्य अथवा असत्य की पहचान करें

(State Whether the following statements are True or False) :

8. शमशान के झोंपड़े में भूत रहता है, ऐसा लोगों का विश्वास था।
9. राजू एक परोपकारी, अदम्य साहसी और बात का धनी लड़का था।
10. हिरण्यमयी देवी एक शहरी और पढ़ी-लिखी स्त्री थी।

शरतचंद्र चाहते थे देश के आंदोलन में सभी वर्गों के लोग हिस्सा ले क्योंकि देश में सभी वर्ग रहते हैं। गाँधीजी के कहने पर महिलाएँ भी स्वतंत्रता आंदोलन में भाग लेने के लिए मैदान में आईं तो उन्होंने बड़े सच्चे शब्द कहें–

"जिस चेष्टा में, जिस आयोजन में देश की नारियाँ सम्मिलित नहीं। उनकी सहानुभूति नहीं, उस सत्य की उपलब्धि करने का कोई ज्ञान, कोई शिक्षा, कोई साहस जिनको आज तक हमने नहीं दिया उनको केवल घर के भीतर बिठाकर केवल चर्खा कातने के लिए बाध्य करने पर कोई बड़ी वस्तु नहीं प्राप्त की जा सकेगी औरतों को हमने जो केवल औरत बना कर रखा हुआ है मनुष्य नहीं बनने दिया उसका प्रायश्चित स्वराज्य से पहले देश को ही करना चाहिए। अत्यंत स्वार्थ की खातिर जिस देश ने अब तक केवल उसके सतीत्व को ही बड़ा करके देखा है, उसके मनुष्यत्व का कोई ख्याल, नहीं किया, उसे उसका देना पहले चुका देना होगा।"

देशबंधु के निवास स्थान पर एक दिन उन्होंने गाँधी जी से कहा था, "महात्मा जी आपने, असहयोग रूपी एक अभेद्य अस्त्र का आविष्कार किया है। अगर जनता सरकार से सहयोग न करे तो वह एक दिन में ही समाप्त हो जाए। तब हम एक वर्ष में नहीं चौबीस घंटे में ही स्वराज्य ले सकते हैं।"

इस प्रकार शरत बाबू एक निर्भीक और महान व्यक्ति थे। उस समय के क्रांतिकारी लोग शरत बाबू के साहित्य को पढ़कर अति प्रसन्न होते थे। वे लोग 'पथेरदाबी' (पथ के दावेदार) की बड़ी प्रशंसा करते थे। शरत बाबू ने कभी भी स्वार्थी पुरुष का समर्थन नहीं किया और न वह अवसरवादी पुरुष को अच्छा समझते थे। यदि उनमें मानवीय दुर्बलताएँ थीं तो अनेक ऊँचे गुण भी थे। वह सदा अन्याय का विरोध करने के लिए उठ खड़े होते थे। वह कहा करते थे कि गुलामी से बुरी चीज नहीं है और जो मनुष्य किसी को दास बनाता है वह बड़ा अन्यायी और नीच है। यही कारण था कि वह देश को अंग्रेजों के पंजों से मुक्त देखना चाहते थे। एक बार उन्होंने कहा था, "महिलाओं के साथ घोर-बर्बर और अमानुषिक अत्याचार देखकर भी तुम लोग नपुंसकों की तरह केवल मूकदर्शक बनकर रह गए। और उस पर तुम इस बात के लिए गर्व प्रदर्शित करते हो अहिंसा और संयम के सिद्धांतों की पूरी रक्षा हुई। चुल्लूभर पानी में डूब न मरे तुम लोग।"

उनके इन उदात्त विचारों के कारण लोगों ने उनका बड़ा सम्मान किया। लेकिन 'चरित्रहीन' जैसे उपन्यास के कारण लोगों ने उनको बुरा-भला भी कहा। परंतु शरत अपने उद्देश्य से जरा भी नहीं डिगे। वह हिमालय की तरह खड़े रहे। देखा जाए तो दृढ़ निश्चयी व्यक्ति कभी विचलित नहीं होता है और न वह टूटता है। हमारे सामने उदाहरण मौजूद

नोट

हैं, भगवान राम, श्रीकृष्ण, बुद्ध, ईसा, मुहम्मद, गाँधी आदि का। लोगों ने उन्हें भगवान, महामानव, पैगम्बर, महात्मा आदि कहा तो उनको बुरा भी कहा। किंतु ये सब महान् व्यक्ति महान ही बने रहे। शरत बाबू ने जीवन में तरह-तरह के कष्ट उठाए थे। लगता था जैसे प्रकृति ने उनको इसीलिए बनाया है। लेकिन शरत बाबू ऐसी मिट्टी के बने थे जिस पर दूसरा रंग चढ़ ही नहीं सकता था। उनमें बात को समझने और उसका मार्गान्तरीकरण करने की शक्ति थी। इसलिए वह अंत तक अपने मार्ग पर डटे रहे। उन्हें कोई डिगा नहीं सका।

30.5 सारांश (Summary)

- मनुष्य एक ऐसा प्राणी है जिसे समाज में रहकर पग-पग पर अनेकानेक बाधाओं और विरोधों का सामना करना पड़ता है। इसके बावजूद उसे जीवित रहना पड़ता है क्योंकि उसे प्रकृति ने जीवित रहने के लिए ही बनाया है।
- शरत एक भावुक और संवेदनशील व्यक्ति था। वह दूसरों के दुख को देखकर द्रवित हो जाता था। चूँकि वह साहित्यकार था इसलिए उसके पास किसी भी बात को समझने के लिए गहरी दृष्टि थी।
- शरत पशु, पक्षी और मानव सभी से अटूट प्रेम करता था। इसी विशिष्ट गुण के कारण शरत बाबू ने शास्त्री जी की कन्या को अपनी जीवन संगिनी बना लिया जबकि उस समय उनकी चित्तवृत्ति ग्रहस्थी बसाने की नहीं थी।
- शरत बाबू की बुद्धि बचपन से ही तीक्ष्ण थी। वह जिस व्यक्ति को एक बार देख लेते थे उसे कभी नहीं भूलते थे। वह व्यक्ति यदि वर्षों बाद भी उन्हें दिखाई दे जाता था तो वह बड़ी सहजता से उसका नाम पता बता दिया करते थे।
- परमात्मा ने मानव को मानव बने रहने के लिए बनाया है, दानव नहीं। इसलिए मनुष्य को मनुष्य से घृणा कभी नहीं करनी चाहिए। घृणा पाप को जन्म देती है और पाप से मनुष्य की प्रवृत्ति अपराधी बन जाती है।
- शरत बाबू को अपने देश से अटूट प्रेम था। वह देश सेवा के लिए बड़े से बड़ा कार्य भी छोड़ने के लिए तैयार हो जाते थे। वह राजनीति के क्षेत्र में लोगों को सक्रिय होने की प्रेरणा देते थे और चाहते थे कि भारत से दुष्ट और धूर्त अंग्रेजों के राज्य का हर दशा में अंत होना चाहिए।
- राजू एक ऐसा लड़का है जो शरत बाबू को एक नई दिशा प्रदान करता है। इससे प्रेरित होकर शरत बाबू एक दु:साहसी लड़के से साहित्यकार और समाज सेवक बन गए। यदि राजू शरत बाबू के जीवन में नहीं आता तो शरत बाबू शायद साहित्यकार न बनकर कुछ और बन जाते।
- राजू के ह्रदय मे निर्धन मित्रों के प्रति बड़ी दया का भाव रहता था। वह जब-तब निर्धन छात्रों की सहायता करता रहता था। उसने जीवन के हर क्षेत्र में शरत की सहायता की। शरत ने राजू से ही सीखा था कि दया क्यों आती है?
- शरत बाबू जिस स्त्री से प्रेम करते थे उसका नाम हिरण्यमयी देवी था। हिरण्यमयी देवी शरत बाबू की पत्नी थी लेकिन समाज की दृष्टि में शरत बाबू ने उसे अपनी जीवन संगिनी बना लिया था।
- हिरण्यमयी देवी एक सीधी-सादी और सरल ह्रदय स्त्री थी। वह शरत का बहुत सम्मान करती थी। वह हमेशा उसके कार्यों को प्राण-पण से पूर्ण करती थी। शरत बाबू को उसने कभी शिकायत का अवसर नहीं दिया।
- शरत बाबू एक निर्भीक और महान व्यक्ति थे। उस समय के क्रांतिकारी लोग शरत बाबू के साहित्य को पढ़कर अति प्रसन्न होते थे। शरत बाबू ने कभी भी स्वार्थी पुरुष का समर्थन नहीं किया और न वह अवसरवादी पुरुष को अच्छा समझते थे।

30.6 शब्दकोश (Keywords)

1. प्रतिबंध – पाबंदी
2. निकम्मा – कामचोर

3. विद्रोही – बागी
4. संध्या – शाम
5. सांत्वना – तसल्ली
6. निरंतर – लगातार
7. जीवन-संगिनी – हमसफर
8. अभिनंदन – स्वागत
9. पराधीन – गुलाम
10. शील – इज्जत।

30.7 अभ्यास प्रश्न (Review Questions)

1. शरत के नटखट स्वभाव का वर्णन कीजिए।
2. शरतचंद्र की विद्रोही प्रकृति किन बातों से व्यक्त होती है?
3. राजू का चरित्र-चित्रण अपने शब्दों में कीजिए।
4. स्त्री जाति के प्रति शरत के मन में किस प्रकार की भावना थी?

उत्तर : स्व-मूल्यांकन (Answers : Self-Assessment)

1. साहित्य
2. बदमाश
3. पर्यवेक्षण
4. पाण्डुलिपि
5. (ग)
6. (क)
7. (ख)
8. सत्य
9. सत्य
10. असत्य।

30.8 सन्दर्भ पुस्तकें (Further Readings)

पुस्तकें आवारा मसीहा–विष्णु प्रभाकर, राजकमल एंड संस, दिल्ली।

नोट

इकाई–31: 'चीड़ों पर चाँदनी' : कथावस्तु एवं उद्देश्य

अनुक्रमणिका (Contents)

उद्देश्य (Objectives)

प्रस्तावना (Introduction)

31.1 कथावस्तु का सार

31.2 ब्रेख्त और एक उदास नगर

31.3 रोती हुई मर्मेड का शहर

31.4 उत्तरी रोशनियों की ओर

31.5 सफेद रातें और हवा

31.6 लिदित्से : एक संस्मरण

31.7 बर्त राम्का : एक शाम

31.8 पेरिस : एक स्टिल लाइफ (एक रूका हुआ जीवन)

31.9 वियना

31.10 चीड़ों पर चाँदनी

31.11 देहरी के बाहर

31.12 काफ्का और चापेक

31.13 देहरी के भीतर चेखव का पत्र

31.14 उद्देश्य

31.15 मानवतावादी दृष्टिकोण से युक्त यात्रा-संस्मरण

31.16 सारांश (Summary)

31.17 शब्दकोश (Keywords)

31.18 अभ्यास प्रश्न (Review Questions)

31.19 सन्दर्भ पुस्तकें (Further Readings)

उद्देश्य (Objectives)

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् विद्यार्थी योग्य होंगे–

- 'चीड़ों पर चाँदनी' के संस्मरण को समझने में;
- यात्रा के दौरान अनेक स्थानों की सभ्यता को जानने में;

नोट

- संस्मरण में निहित निर्मल वर्मा के उद्देश्य की व्याख्या करने में;
- मानवतावादी दृष्टिकोण से युक्त यात्रा-संस्मरण पर टिप्पणी करने में।

प्रस्तावना (Introduction)

'चीड़ों पर चाँदनी' श्री निर्मल वर्मा के यात्रा संस्मरणों का संकलन है जिसमें उन्होंने प्राग, बर्लिन, कोपेनहेगन, आइसलैंड आदि स्थानों की यात्रा के अपने अनुभव एवं प्रतिक्रियाएँ व्यक्त की हैं। श्री निर्मल वर्मा मुख्य रूप से अपने उपन्यासों और कहानियों के माध्यम से जाने जाते हैं परन्तु उन्हें प्राच्य विद्या संस्थान और चेकोस्लोवाकिया लेखक संघ ने चेकोस्लोवाकिया आमंत्रित किया। वह वहाँ 7 वर्ष तक रहे, इस दौरान उन्होंने अनेक स्थानों की यात्रा भी की।

31.1 कथावस्तु का सार

'चीड़ों पर चाँदनी' एक सजग व्यक्ति की अपने वातावरण के प्रति सहज प्रतिक्रिया है। वहाँ वह अनेक व्यक्तियों से भी मिले और अनेक साहित्यकारों के व्यक्तित्व से प्रभावित हुए। उसका एक विस्तृत विवरण है 'चीड़ों पर चाँदनी' के संस्मरण। यात्रा की दृष्टि से देखा जाए तो 'ब्रेख्त और एक उदास नगर', 'रोती हुई मर्मेड का शहर', 'उत्तरी रोशनियों की ओर' तथा 'सफेद रातें और हवा' ही शुद्ध रूप में यात्रा संस्मरण हैं। शेष निबंध, संस्मरण, इन्टरव्यू तथा साहित्य का इतिहास विधाओं से संबंधित हैं। इन विविध विधाओं का सम्मिलित रूप ही है 'चीड़ों पर चाँदनी'। अब हम प्रत्येक का उपखंड के आधार पर सार प्रस्तुत करेंगे।

31.2 ब्रेख्त और एक उदास नगर

लेखक प्राग के एक 'होस्पोदा' में बैठा था। 'होस्पोदा' शब्द को व्याख्यायित करते समय उसने कहा है कि न उसमें वह उच्चवर्गीय भद्रता है जो 'बार' में आती है और न आधुनिक युग का सस्ता छिछलापन जो 'रेस्तराँ' शब्द से जुड़ा है। 'होस्पोदा' की अपनी गरम स्निग्ध-सी आत्मीयता है जो संभवत: लंदन के 'टेवर्न' के अधिक निकट है। मालास्त्राना के होस्पोदा में बैठा लेखक अपने मित्र 'थोर्गियेर' के साथ बियर पी रहा था। थोर्गियेर का प्राग में यह अंतिम दिन था। वह एक घुमक्कड़ व्यक्ति था। मूलत: वह आइसलैंडी था। आइसलैंडी यायावर प्रकृति के होते हैं। अत: थोर्गियेर भी किसी स्थान पर एक साथ अधिक समय तक नहीं रह सकता था। वह हमेशा के लिए आइसलैंड जा रहा था। बियर पीते हुए अचानक उसने लेखक से पूछा–"तुम्हें कोई आपत्ति होगी, यदि तुम भी मेरे साथ आइसलैंड चलो।" उस रात वह बात आई गई हो गई परंतु लेखक के मन में सुदूर उत्तर में समुद्र से घिरे इस अकेले देश को देखने की उत्सुकता अवश्य थी अत: वह मान गया। कुछ ही दिनों में वीज़ा आदि की औपचारिकताएँ पूरी करके वह प्राग-बर्लिन की इन्टरनेशनल ट्रेन में बैठ गए। मित्र उन्हें स्टेशन पर छोड़ने आये। लेखक को एक मित्र मारिया ने यह सुझाव दिया कि उसे यात्रा की डायरी लिखनी होगी। यात्रा के समय लेखक को तालस्ताय की प्रसिद्ध पंक्तियाँ याद आईं कि "जब हम किसी सुदूर यात्रा पर जाते हैं–आधी यात्रा पर पीछे छूटे हुए शहर की स्मृतियाँ मंडराती हैं, केवल आधा फासला पार करने के बाद ही हम उस स्थान के बारे में सोच पाते हैं जहाँ हम जा रहे हैं।" लेखक के मन में भी प्राग की स्मृतियाँ छाई हुई थीं। उनकी यात्रा का पहला पड़ाव था बर्लिन में। उनका वास वहाँ एक रात से अधिक का नहीं था क्योंकि पूर्वी जर्मनी में 'ट्राँसिट वीज़ा' केवल चौबीस घंटे का ही मिलता है। इस अल्प समय में बर्लिन में क्या देखा जा सकता है? लेखक की धारणा थी कि कम से कम बर्गोमान म्यूजियम अवश्य देख लिया जाए। थोर्गियेर ने सूचना दी कि स्टेशन पर उसके मित्र मिलेंगे और उन्होंने 'बर्लिन एन्सेम्बल' थियेटर के टिकट लेकर रखे होंगे। लेखक की एक अर्से से इच्छा रही थी परंतु वह इस प्रकार पूरी होगी, लेखक इसे चमत्कार ही मानता है। पूर्व जर्मनी से लेखक कई बार गुजरा परंतु कभी उसका उतरने का मन नहीं हुआ। उसके मन में यह आशंका थी कि उतरते ही द्वितीय विश्वयुद्ध के अनुभव उसे घेर लेंगे। अत: लेखक जब भी किसी जर्मनी को देखता तो उसके भीतर फिजूल-सी बेमानी, बेचैनी भर जाती। लेखक ट्रेन में बैठा बाहर के दृश्यों को देख रहा

नोट

था। उसे आबादी के चिह्न नज़र आने लगे परंतु साथ ही कहीं सिर्फ मलबे और ईंटों के ढूह, आधे टूटे हुए मकान और सूनी कंकाल-सी आँखों की खिड़कियाँ दिखाई दे जातीं। उन पर बमों और गोलियों के निशान अब भी वैसे ही है। बर्लिन पहुँचने पर उन्हें सूचना मिली कि आज ब्रेख्त का नाटक मंचित हो रहा है। ब्रेख्त बीसवीं शती के महान् नाटककार थे जो नात्सी सत्ता स्थापित होने पर जर्मनी से चले गये। उस रात उनका 'टेरर एंड मिजरी आफ थर्ड रायख' नामक नाटक दिखाया जा रहा था। बहुत प्रयास करने के बाद भी वह थियेटर में 15 मिनट देर से पहुँचे। जब प्रबंधकों को ज्ञात हुआ कि लेखक भारतीय है तो उन्होंने चुपचाप उन्हें अंदर प्रवेश करने की आज्ञा दे दी। फिर भी वे अपनी सीटों पर नहीं जा सके। एक महानुभाव उन्हें एक बाक्स की तरफ ले गये जहाँ पहले से एक महिला बैठी थी। बाद में पता चला कि ब्रेख्त की पत्नी हैलेन वेगेल थी। वही इस ऐन्सेम्बल की प्रधान निर्देशिका थीं।

ब्रेख्त के विषय में लेखक ने जानकारी देते हुए कहा है ब्रेख्त कम्युनिस्ट थे क्योंकि उनके लिए कम्युनिस्ट होने के मायने बहुत सहज थे– समकालीन होना। दूसरे शब्दों में, अपने निजी घेरे के बाहर उन सब आवाजों का साक्षी होना जो बीसवीं सदी के अँधेरे से टकराती हुई हमारे पास आती हैं। इसी कारण लेखक को ब्रेख्त के नाटक देखते हुए लगा कि थियेटर की दीवार के परे कुछ आवाजें भटक रही हैं, दरवाजा खटखटा रही हैं और दर्शक, अभिनेता, समूचा मंच और ऑडिटोरियम एक अजीब दबाव के तले धँसने लगते हैं। सिर्फ एक उपाय है मुक्ति पाने का, व्यक्ति बाहर निकल आए और इन आवाजों का साक्षी हो सके।

थियेटर से बाहर निकलने पर उन्हें चिंता हुई कि होटल तलाश लिया जाए, परंतु थोर्गियेर विचित्र प्रकृति का जीव था, उसे चिंता नहीं थी। उसके विचार में ब्रेख्त के बाद बियर पीनी चाहिए। बहुत खोजने पर उन्हें एक रेस्तराँ में खाली जगह मिल पाई। लेखक ने कहा है कि आइसलैंडियों को दो चीजों से प्यार है–बीयर और अपनी भाषा। आइसलैंड की भाषा का एक शब्द है 'संबंध' जिसका वही अर्थ है जो हिंदी के 'संबंध' शब्द का है। जब उसने थोर्गियेर को यह बताया तो वह बड़ा प्रसन्न हुआ और इसी बात पर उन्होंने भारत-आइसलैंड मैत्री के प्रतीक 'संबंध' पर बियर का टोस्ट किया। देर रात तक वे वहाँ बैठकर बियर पीते रहे और उनके मित्र ने फोन पर ही होटल की व्यवस्था कर दी थी। वहाँ से उठने के समय तक थोर्गियेर के आइसलैंडी मित्र लेखक से अनौपचारिक हो गए थे। यद्यपि आइसलैंडी अत्यंत संकोची और शर्मीले होते हैं परंतु संभवत: उनके मन में यह भाव आता था कि एक भारतीय इतनी दूर हमारे देश जा रहा है, अत: सारा संकोच थोड़ी ही देर में समाप्त हो गया। मित्रों ने कहा कि वहाँ जाकर 'विलियन' से अवश्य मिलिएगा। लेक्सनेस विलियन आइसलैंड का नोबल पुरस्कार प्राप्त उपन्यासकार है। लेखक कहता है कि आइसलैंड के अलावा कोई दूसरा नहीं देखा जहाँ लोग इतने खुले मुक्त ढंग से अपने सबसे महान् लेखक के संबंध में बातचीत करते हों।

दूसरे दिन वे बर्लिन से पश्चिमी जर्मनी के बर्लिन जा रहे थे। जाते समय लेखक को शीतयुद्ध के प्रभाव स्पष्ट रूप से दिखाई दिए। द्वितीय विश्वयुद्ध के बाद बर्लिन दो हिस्सों में बँट गया था। लोगों का आधा परिवार पूर्वी भाग में था और आधा पश्चिमी में। वहाँ के वासियों का परस्पर प्रेम तथा एक दूसरे के प्रति आकर्षण राजनीतिक दबावों की अवहेलना करता-सा प्रतीत होता था। फिर भी राजनीति धीरे-धीरे लोगों के दिल में घर करती जा रही थी। पश्चिमी बर्लिन में पूर्वी जर्मनी की व्यवस्था के प्रति कोई अवसर यदि प्राप्त होता तो लोग उस व्यवस्था की खिल्ली अवश्य उड़ाते। परंतु लेखक कहता है कौन सी सीमा पर जाकर कम्युनिज्म का विरोध फासिज्म का चेहरा अपना लेता है मुझे नहीं मालूम किंतु यह वह सीमा है जो पूर्वी जर्मनी को पश्चिमी जर्मनी से अलग करती है।

टास्क 'ब्रेख्त और एक उदास नगर' की लेखक ने किन शब्दों में व्याख्या की है?

31.3 रोती हुई मर्मेड का शहर

कोपेनहेगन पहुँचकर लेखक ने अनेक होटलों में पता किया परंतु किसी होटल में उन्हें रहने का स्थान नहीं मिला।

उन दिनों वहाँ सैलानी विद्यार्थी आए हुए थे जिस कारण भीड़ हो गई थी। अचानक थोर्गियेर को उसका एक मित्र मिल गया एंगुई। वह उन्हें एक होटल में ले गया जहाँ उन्हें एक कमरा मिल गया। एंगुई ने बताया कि आप पूर्वी जर्मनी से आए हैं, अत: पासपोर्ट देखते ही प्रत्येक होटल वाला कमरा देने से इंकार कर देता था परंतु एंगुई ने अपने परिचय का लाभ उठाकर उन्हें कमरा दिला दिया। लेखक के मन में अचानक भाव आया कि शीतयुद्ध का प्रभाव जर्मनी में कितना अधिक है। प्राग का नाम लेते ही वहाँ के लोग चौंक जाते और आने वाले व्यक्ति को संदेह की दृष्टि से देखने लगते थे। दूसरे दिन लेखक सारे शहर में घूमा। कोपनहेगन में उसने पाया कि परंपरागत नैतिक रूढ़ियाँ अन्य यूरोपीय देशों की तुलना में बहुत कम हैं और इससे यह सिद्ध होता है कि बिना किसी कानून अथवा राज्य शक्ति का प्रयोग किए कैसे अप्राकृतिक, असामाजिक वृत्तियों का उन्मूलन किया जा सकता है। वहाँ अनेक युवक थे। पूछने पर पता चला कि ये सब नार्वे के छात्र हैं जो अपनी पुरानी परंपरा को निभाते हुए हर साल यहाँ आते थे और परीक्षा शुरू होने से एक दिन पूर्व अपने देश चले जाते थे। हर वर्ष वे एक नारा लेकर आते थे। इस साल उनका नारा था कि "रूसियों के पास यौन बम नहीं है तो हम क्यों रखें?" नार्वे जाति की रसिकता का बोध लेखक को हुआ। लेखक को पता चला कि नार्वे जाति की यह रसिकता एक निश्छल भोलेपन, सादगी और बहुत ही कोमल संवेदनशीलता का प्रतीक है, ऐसे गुण जो दुनियाभर के पहाड़ी लोगों में सहज ही मिल जाते हैं। लेखक थोर्गियेर के साथ शहर घूम रहा था। वहां वे एक रेस्तराँ में पहुँचे, जहाँ एक विशेष कोने में आइसलैंडी ही बैठते थे। कोपेनहेगन में यदि किसी मित्र से मिलना हो तो वे लोग उसके घर न जाकर शाम को इसी कोने में आकर उसकी प्रतीक्षा करते थे। एक अजनबी व्यक्ति ने लेखक को बताया कि यदि वह आइसलैंड जा रहा है तो स्वयं को कम्युनिस्ट ही घोषित करे। आइसलैंडी कम्युनिस्टों से जितनी नफरत करते हैं, उससे ज्यादा उनकी इज्जत करते हैं। इसका कारण यह है कि आइसलैंड के सबसे ईमानदार राजनीतिज्ञ के रूप में वहाँ के कम्युनिस्ट नेता 'ओल्येर ओल्येर सॉन' प्रसिद्ध हैं। लेखक को आभास हुआ कि कम्युनिस्ट देशों के बाहर आइसलैंड ही एक ऐसा देश है जहाँ लोग कम्युनिस्ट विचारधारा से तीव्र मतभेद होते हुए भी कम्युनिस्ट नेता के प्रति गहरी निष्ठा और आस्था रखते हैं। वहीं लेखक को आइसलैंड और डेनमार्क के बीच राजनीतिक मतभेदों का भी पता चला।

क्या आप जानते हैं आइसलैंड जब डेनमार्क का उपनिवेश था तो 13वीं-14वीं शताब्दी में आइसलैंड में अनेक श्रेष्ठ और महत्त्वपूर्ण साहित्यिक और ऐतिहासिक ग्रंथों की सर्जना हुई जिनमें 'सागा ग्रंथों' को सर्वोच्च स्थान प्राप्त है।

'सागा ग्रंथ' शुद्ध धर्म निरपेक्ष संस्कृति के अनुरूप निरे अधार्मिक ईसाई दर्शन एवं चिंतन से बिल्कुल अछूते हैं। इस दृष्टि से उनकी तुलना यूनानी नाटकों से की जाती है। डेनमार्क के आधिपत्य में आने के बाद कोपेनहेगन ही संस्कृति का केंद्र बन गया। अनेक आइसलैंडी लेखकों ने सागा ग्रंथों की रचना कोपेनहेगन में रहकर ही की। इन ग्रंथों की पाण्डुलिपियाँ आज डेनमार्क के संग्रहालयों तथा पुस्तकालयों में सुरक्षित हैं। स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद आइसलैंड सरकार ने डेनमार्क से इन पाण्डुलिपियों को वापस लौटाने की माँग की जिसे आज तक स्वीकार नहीं किया गया। पाण्डुलिपियों का यह विवाद आज आइसलैंड का राष्ट्रीय प्रश्न बन गया है।

जब लेखक ने वहाँ अन्य लोगों से बात की तो उन्होंने कहा "हमें मालूम नहीं था कि डेनमार्क वाले हमारी संस्कृति से इतनी मुहब्बत करते हैं।" इस ज्वलंत प्रश्न पर इस प्रकार का फिकरा सुनकर लेखक दंग रह गया। बाद में उसे समझ आया कि यह आइसलैंड के लोगों की असाधारण आदत है कि जिस विषय पर वे बहुत संजीदा ढंग से सोचते हैं उसके बारे में उनती ही विरल और व्यंग्यात्मक रूप से बात करते हैं। उसकी तुलना में भारतीय प्रत्येक प्रश्न पर गंभीर होने का ढोंग करते हैं। काफी रात तक उस रेस्तराँ में बिताकर वे अपने कमरे में आये। अभी डेनमार्क में उनकी पहली ही रात थी परंतु उन्हें ऐसा लग रहा था कि वे कई दिनों से वहाँ रह रहे हैं। होटल के पैसे बचाने के लिए वे जहाज के केबिन में रहने का विचार बनाकर चले। जहाज पर एक दिन से पहले पहुँचना नियम-विरुद्ध था परंतु जब जहाज के कप्तान को लेखक के भारतीय होने की सूचना मिली तो उन्होंने आदरपूर्वक अपने केबिन में रहने

नोट

का स्थान दे दिया। दिन भर लेखक म्यूजियम तथा आर्ट गैलरी में घूमता और रात को जहाज के केबिन में आकर विश्राम करता। जहाज का नाम गुलफॉस (स्वर्ण प्रपात) था। जब वह चलने लगा तो लेखक के मन में यह लालसा उपजी कि चुपचाप केबिन मे जाकर सो जाए और जब जहाज बीच समुद्र में पहुँच जाए तो बाहर निकले। जहाज में उनके पहले दो तीन दिन बहुत अच्छे बीते, फिर यात्रियों को सी-सिकनेस ने घेर लिया जिसे लेखक ने एक नया नाम दिया था मृत्यु-शय्या। आइसलैंडी लोगों को पढ़ने का चाव बहुत है। उनके मित्र एंगुई ने भी इसका समर्थन करते हुए कहा–"दिन भर स्टीमशिप कम्पनी में काम करता हूँ, शाम बेकेट को पढ़ता हूँ, बड़ी सांत्वना मिलती है।" इसी तरह बातें करते हुए उनके तीन दिन बीत गए।

स्व-मूल्यांकन (Self-Assessment)

रिक्त स्थानों की पूर्ति करें (Fill in the blanks) :

1. थोर्गियेर घुमक्कड़ प्रकृति का .... था।
2. ब्रेख्त बीसवीं शती के महान .... थे।
3. ब्रेख्त की पत्नी हैलेन वेगेल, ऐन्सेम्बल की प्रधान .... थीं।
4. कोपनहेगन में परम्परागत नैतिक रूढ़ियाँ अन्य .... देशों की तुलना में बहुत कम हैं।

31.4 उत्तरी रोशनियों की ओर

चारों ओर अंतहीन समुद्र का पानी। उनका काम था कंबलों में सिकुड़े बण्डलों की तरह लेटे रहना, खाना खाना और सो जाना। जहाज के साथ-साथ समुद्री पक्षी उड़ रहे थे। किचन से जब बेकार बचा हुआ खाना बाहर समुद्र में फेंका जाता तो वे उसे खा लेते फिर उस प्रतीक्षा में उड़तें रहते कि फिर कब खाना मिलेगा। जहाज के डेक पर सर्दी बहुत थी फिर भी लेखक वहीं रहना अधिक श्रेयस्कर मानता था।

समुद्र का यह नशा और उल्लास ज्यादा दिन तक नहीं रह पाया। अचानक जहाज को प्रागैतिहासिक काल की बनैली आदिम लहरों ने लपेट लिया। ऐसा होता था जैसे कोई अदृश्य दानव 'गुलफॉस' को एक नन्हे से खिलौने के समान ऊपर नीचे उछाल रहा था। धीरे-धीरे सभी लोग 'मृत्यु-शय्या' से ग्रस्त हो गये। लीथ की बंदरगाह पहुँचते ही यात्रियों के तीन दल बन गए–

1. वे यात्री जिनके लिए समुद्र का होना न होना बराबर था। वे अक्सर आराम से अपने बिस्तर पर सोते रहते या 'बार' में जाकर बियर पीते।
2. डैकवासी केबिन में जाते ही जिनका सिर चकराने लगता। रात दिन कड़कड़ाती सर्दी में भी वे डेक पर ही रहना पसंद करते क्योंकि वहाँ ताजी हवा आती थी।
3. मृत्यु शय्यावासी, जो डैक के कष्टों से घबराकर अपने गरम बिस्तरों में सोने का मोह संवरण नहीं कर सके और वहीं के होकर रह गए।

तीसरे दिन जब जहाज लीथ की बंदरगाह पहुँचा तो पृथ्वी पर पैर रखकर अजीब-सा सुखद अनुभव हुआ। उतरते ही लेखक स्कॉटलैंड के शहर एडिनबरा गए। स्कॉट जाति के विषय में लेखक ने कहा है–जीने और मरने की भूखी हठीली चाह, हर अन्याय के विरुद्ध सुलगता विद्रोह, दूर पहाड़ियों की पुकार और शहरी पबों की पियक्कड़ चीखें, यह सब था एडिनबरा की गलियों में। समय सीमित था अत: लेखक को फोर्ट और आर्ट गैलरी देखने में से एक का चुनाव करना पड़ा। वहाँ 'तितियान' के चित्र देखे। उन्हें देखकर लेखक को ऐसे लगा कि जैसे मानव आत्मा अपने सब बंधनों को तोड़कर सुनहरे असीम आलोक के ज्वलंत रंगों में फैल गई हो। पृथ्वी का संस्पर्श पाकर सभी यात्रियों में मानो पुन: जीवन आ गया हो। उस रात सभी आपस में घुलमिल गये।

नोट

जहाज अटलाण्टिक सागर के बीच में आ गया था। जितना ही अधिक वह उत्तर की ओर सरकता जाता रातें ज़्यादा सफेद होती जाती थीं। रात और दिन की सीमा रेखा दिन पर दिन धुँधली होती जा रही थी। जहाज में स्कॉटलैंड से अनेक यात्री चढ़े थे। उनमें से एक था बर्ट जो डॉ० राधाकृष्णन की 'दि हिंदू व्यू आफ लाईफ' पढ़ रहा था। उसने लेखक को बताया कि उसे भारत से बहुत प्यार है। उसे भारत बहुत अच्छा और आकर्षक प्रतीत होता है। वह सोचता था कि आज के संकट का हल भारत में अवश्य मिल जाएगा।

समुद्र के छोर पर क्षितिज के संग-संग एक बहुत ही हल्की, मटमैली-सी रेखा दिखाई दी, यह आइसलैंड का पहला ग्लेशियर था। कुछ ही देर बाद दूसरा ग्लेशियर दिखाई दिया। सबके चेहरों पर अजीब-सी चमक और ताजगी आ गई। सारी थकावट, अकुलाहट, अकेलापन, उनींदापन दूर हो गया। अब सबको एक आशा थी कि आइसलैंड अब दूर नहीं है। हवा का वेग भी एकदम कम हो गया था। उस रात सूर्योदय बिल्कुल अचानक हो गया। रिक्याविक के आउट हार्बर में पहुँचते ही हल्की-हल्की बारिश होने लगी थी। सभी कोई एक दूसरे से मिल रहे थे। नोटबुकों में पते नोट कर रहे थे। दूर सुबह की धुँध के ऊपर रिक्याविक की लाल, नीली, हरी छतें दिखाई देती थीं। लगता था कि यह शहर दुनिया के एक छोर पर बसा हुआ है, इसके आगे कुछ नहीं है। थोर्गियेर ने उँगली से अपना घर दिखाया–नेशलन थियेटर के पास। वे जहाज से उतर कर शहर में आ गये।

31.5 सफेद रातें और हवा

आइसलैंड की राजधानी का नाम है रिक्याविक (धुएँ का शहर)। नार्वे से जब पहले पहल 'वाइकिंग्स' यहाँ आए तो गरम पानी के झरनों से उठते हुए धुएँ को देखकर उन्होंने शहर का नामकरण किया था। लेकिन इस शहर का धुएँ से कोई संबंध नहीं था। इस शहर के निवासी कोयले का प्रयोग नहीं करते। गरम पानी के झरनों से समूचे शहर को बिजली बैठे बिठाए मिल जाती थी। आइसलैंड में बर्फ भी इतनी अधिक नहीं पड़ती थी, बल्कि वहाँ हरियाली थी। इसलिए लेखक के मन में आया कि आइसलैंड का नाम बदलकर ग्रीनलैंड और ग्रीनलैंड का नाम आइसलैंड रखना चाहिए। संस्मरण लिखते समय लेखक याद कर रहा है–समुद्र की लहरों से घुलता शहर, बासी खट्टी गंध से घिरे बंदरगाह, एक पहाड़ी कस्बा जो मध्यरात्री के जामुनी आलोक में सोया पड़ा है पर इन सब से अधिक याद आती है रिक्याविक की हवा। वहाँ के लोग लंबे और सुंदर हैं, भारतीय उनके सामने बौने प्रतीत होते हैं किंतु स्वभाव से वे अत्यंत विनम्र, शालीन और चुप्पे थे। पिछले हजारों वर्षो से जो देश आसपास की दुनिया से अलग सिर्फ ग्लेशियर और ज्वालामुखी पर्वत से घिरा हुआ है उसकी वीरानी और खामोशी की छाया यदि वहाँ के निवासियों में चुप्पी बनकर आए तो कोई आश्चर्य नहीं। आइसलैंड की स्त्रियाँ संसार की सभी देशों की स्त्रियों से अधिक उन्मुक्त, स्वतंत्र एवं निर्द्वन्द हैं। निपट, ग्रंथिहीन, कुण्ठारहित। वहाँ नैतिकता जीवन पर थोपी नहीं गई अपितु वह जीवन क्रिया का अदृश्य अंग है।

क्या आप जानते हैं आइसलैंड यूरोप में अकेला देश है जिसकी अपनी कोई सेना नहीं। इस देश की जनसंख्या 1962 में एक लाख सत्तर हजार थी जो दिल्ली के करोल बाग में रहने वाले लोगों का एक चौथाई है। उनके लिए सेना और सैनिक अनुशासन हास्यास्पद-सा प्रतीत होता है।

लेखक के एक आइसलैंडी मित्र ने बताया कि पिछले तीस या चालीस वर्षों में चोरी या डाके जैसी घटना नहीं हुई। किसी व्यक्ति की हत्या तो प्रागैतिहासिक चीज बन गई है। इसका कारण उन्होंने बताया आइसलैंड की आबादी। इस देश की आबादी इतनी कम है कि मुश्किल से कोई ऐसा व्यक्ति मिलेगा जो दूसरे को प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से न जानता हो। उनके बीच कोई पुराना रिश्ता आसानी से निकाला जा सकता है। ऐसी एक स्थिति में बैंक में डाका डालना हो तो परिचितों से ही धन छीनना पड़ेगा। यह दुविधापूर्ण स्थिति चोर डाकुओं के लिए ही नहीं वहाँ के निवासियों को भी झेलनी पड़ती है। यहाँ शायद ही कोई ऐसा व्यक्ति हो जिसके जीवन की छोटी से छोटी तफसील से दूसरा

व्यक्ति परिचित न हो। ज्यादातर इन व्यक्तिगत भेदों को लोग घरेलू राज की भाँति अपने तक ही सीमित रखते हैं। दिलचस्पी इससे आगे नहीं जाती। एक दूसरे की जिंदगी में कोई दखल नहीं देता।

दूसरे दिन लेखक आइसलैंड के तीर्थस्थान 'थिगविलियर' देखने गए। इसका संबंध धर्म से नहीं है। इसका अर्थ है प्रथम लोकतंत्र। वहाँ अब उजाड़ जमीन पड़ी है फिर भी रिक्याविक वालों का इस स्थान के प्रति बहुत आदर है। फिर वे गर्म झरनों को देखने गये। वहाँ पर लावा उगलने वाले ज्वालामुखी थे परंतु प्रतीक्षा करने पर भी उस समय उसमें विस्फोट नहीं हुआ। हवीता नदी के बाद रास्ता ऊबड़-खाबड़ हो गया था, अत: कई स्थान पर उन्हें उतरकर बस को धक्का लगाना पड़ा। वहाँ का मौसम ऐसा था कि अचानक बारिश हो जाती थी और फिर धूप निकल आती थी। उसी सुनसान स्थान पर एक झोंपड़ीनुमा सुंदर मकान था जहाँ आइसलैंडी लेखक हॉलदार विलियन लैक्सनेस रहते थे। आइसलैंड को वास्तुकला से कोई ज्यादा दिलचस्पी नहीं थी क्योंकि वहाँ कोई पुराना किला या ऐतिहासिक स्मारक नहीं था। उसके स्थान पर वहाँ मूर्तिकला के प्रति अत्यंत लगाव था। सीमित साधनों और भौगोलिक अलगाव के बावजूद भी मूर्तिकला के प्रति लगाव विस्मयकारी था। वे दूसरे दिन आइसलैंड के प्रमुख मूर्तिकार आस्मुन्दुर स्वेनसॉन से मिलने गए उन्होंने लेखक को अपनी कई नई मूर्तियाँ दिखाईं। वे आधुनिक युग के मूर्तिकारों के समकक्ष ही बैठते थे। आइसलैंड में पुस्तकों की अत्यधिक माँग थी। रिक्याविक की आबादी 75000 है परंतु वहाँ अनेक पत्रिकाएँ छपती हैं। वहाँ लिखे हुए शब्द से प्यार किया जाता है। किसी के घर जाओ तो वह व्यक्ति खाना खिलाने के बाद यह अवश्य पूछता है कि आप कौन-सा सागा सुनना पसंद करेंगे? आइसलैंड में संस्कृति का अर्थ है 'लोक-संस्कृति'। किसी भी समय वह किसी वर्ग विशेष की संपत्ति नहीं रही। इस प्रकार लेखक धूप में लेटकर ताजी हवा में साँस लेता हुआ रिक्याविक में अपने दिन बिता रहा था।

31.6 लिदित्से : एक संस्मरण

लेखक सात वर्षों तक प्राग में रहा। अत: चेकोस्लोवाकिया के एक छोटे से गाँव लिदित्से की जो दुर्गति द्वितीय विश्वयुद्ध में हुई उसके संस्मरण लिख रहा है। बचपन में उसने पढ़ा था 'लिदित्से विल लिव'। स्थान जानने की इच्छा से उसने एटलस उठाई परंतु लिदित्से उसमें न मिला। प्राग में वह अनेक देशों के युवकों के साथ आमंत्रित थे तथा दर्शनीय स्थल देख रहे थे। प्रत्येक ऐतिहासिक स्थल दिखाते समय डॉ० फ्रीड उसके विषय में कुछ अवश्य बताते परंतु लिदित्से की दुखद घटनाओं को वे भी वर्णित न कर सके। लिदित्से फैक्टरी मजदूरों का गाँव था जो प्राग से बीस पच्चीस मील के फासले पर होगा। कुछ दिन पहले एक बड़े जर्मन अफसर को किसी ने गोली मार दी। चारों ओर तनाव और आतंक का वातावरण छा गया। चेकोस्लोवाकिया के हर शहर में हत्यारे को पकड़ने के लिए इश्तेहार छापे गए किंतु बहुत छानबीन के बाद भी फासिस्ट हत्या के संबंध में कोई सुराग नहीं मिला। धीरे-धीरे यह संदेह पक्का हो गया कि हत्यारा लिदित्से में ही छिपा है। बच्चे से लेकर बूढ़े तक से पूछा गया परंतु किसी ने कुछ नहीं बताया। जर्मन हाईकमान ने एक घोषणा पत्र जारी किया कि "आने वाली पीढ़ियाँ कभी नहीं जानेंगी कि इस धरती पर किसी ऐसे गाँव का अस्तित्व था जिसने जर्मन राज्य के शत्रु को आश्रय दिया था।" 10 जून 1942 को प्राग से मिलिटरी ट्रकें लिदित्से आईं, देखते-देखते सारा गाँव आग की लपटों में घिर गया और एक भी निवासी नहीं बचा। आज भी लोग वहाँ टूटी दीवार का मलबा, जली हुई ईंटों का ढेर, सूने खामोश पत्थर, प्राइमरी स्कूल की जली हुई इमारत देख पाते हैं। सूने गिरजे का कोर्टयार्ड, वहाँ सामूहिक कब्रें। उस गाँव में कोई भी साबुत इमारत नहीं है। म्यूजियम में उन लोगों के पासपोर्ट रखे हैं, बच्चों की अधजली गुड़िया, शराब की बोतलें, शेव का सामान आदि रखा है। यही लिदित्से की कहानी है। म्यूजियम की विजिटर बुक में लेखक हस्ताक्षर करके उदास मन से बाहर आ गया।

लेखक विचारमग्न हो गया कि भारतीय यद्यपि इस दुर्घटना से अछूते रहे परंतु कोई सहृदय मानव इस दृश्य को देखकर भावुक हुए बिना नहीं रह सकता। युद्ध की विभीषिका प्रत्येक व्यक्ति को अपने भीतर खींच लेती है। अभी तक लेखक स्वयं को बाहर का आदमी महसूस करता था परंतु आज वही फासिज्म का रूप लेखक की आत्मा में गहरे बैठ गया है। अब अपने लिए आउट साईडर शब्द बेमानी लगने लगा। उसे लगा जैसे टूटी हुई दीवारों के मलबे के

नीचे हम सब की आत्मा का एक अंश दब गया है, क्योंकि जिस सदी में हम जीते हैं, हममें से हर व्यक्ति उसका गवाह है और गवाह होने के नाते जवाबदेह भी।

टास्क द्वितीय विश्वयुद्ध में लिदित्से गांव की क्या दुर्गति हुई?

31.7 बर्त राम्का : एक शाम

प्राग का एक कोना माला-स्त्राना (लिटिल क्वार्टर) शहर से जरा अलग है। वल्तावा नदी के दूसरी ओर, छोटी-सी पहाड़ी तले सिमटा है। पहाड़ी पर जरा पीछे 'लारेंतों चेपल' सत्ताईस घण्टियों का बारोक चर्च है। रात के नीरव वातावरण में जब ये घंटियाँ बोलती हैं तो बड़ा विचित्र मायावी संगीत रिसने लगता है। लेखक अपने अन्य मित्रों के साथ स्थानीय महत्त्वपूर्ण स्थल देखने जा रहा था। एक अँधेरी-सी गली में छोटा सा नाला पार करके वे सूनी, सुनसान सड़क पर आ गये। बाँयी ओर 'पेत्रशिन' की पहाड़ी पर निरीक्षण बुर्ज का लाल सितारा तिमिराच्छन्न आकाश में चुपचाप चमक रहा था। अगली कतार वाले व्यक्ति सीधी सड़क की ओर मुड़ गये और किसी ने सूचना दी यह है 'बर्त राम्का प्रसिद्ध संगीतज्ञ मोत्सार्ट का निवास स्थान।' अंदर से एक अधेड़ व्यक्ति निकले जो अब इस घर 'म्यूजियम' की देखरेख करते थे, आये और इनका स्वागत करते हुए अंदर ले गये। मोत्सार्ट यद्यपि वियना निवासी थे परंतु उन्हें प्राग से बहुत प्यार था। वे अक्सर कहा करते थे प्राग के लोग जितना अधिक उन्हें समझते थे, शायद उतना कहीं और नहीं। इस घर में एक खिड़की थी। उसके साथ एक अजीब सी घटना जुड़ी हुई थी।

इन दिनों मोत्सार्ट का प्रसिद्ध आपेरा 'डान-जुआन' प्राग में प्रस्तुत किया जाने वाला था। सब तैयारी हो चुकी थी। अंतिम रिहर्सल सफलतापूर्वक समाप्त हो गया था। शहर में चारों ओर पोस्टर लग गये थे। प्राग वासियों का यह सौभाग्य था कि 'डान-जुआन' का प्रथम उद्घाटन वियना में नहीं प्राग में होने जा रहा था किंतु आपेरा का निर्देशक बहुत परेशान था। उसके बहुत आग्रह अनुनय के बावजूद मोत्सार्ट ने अभी तक अपने आपेरा का पूर्वरंग नहीं लिखा था। वे हमेशा उसे कल पर टाल देते। हताश होकर एक रात उनके मित्रों ने उन्हें इस कमरे में बंद कर दिया और बाहर दरवाजे पर ताला लगा दिया। उन्हें साफ-साफ कह दिया गया था कि जब तक वे पूर्वरंग नहीं लिखेंगे दरवाजा नहीं खुलेगा। रातभर उनके मित्र कमरे के बाहर चिंतामग्न घूमते रहे। उन्हें मालूम था कि जब तक कमरे की बत्ती जलती रहेगी, मोत्सार्ट लिखते रहेंगे, कहते हैं रस्सी पर भोजन की पोटली और शराब की बोतल उन्हें इसी खिड़की से भीतर भिजवाई गई थी।

मोत्सार्ट प्राग वासियों में इतने लोकप्रिय थे कि उनकी मृत्यु का संवाद सुनकर हजारों निवासी यहाँ जमा हो गये किंतु वियना में उनकी अर्थी के साथ उनके इने-गिने मित्र ही गये थे। एक साधारण से कब्रिस्तान में उन्हें दफना दिया गया था। इस मकान में आगे एक हाल था जहाँ कन्सर्ट हुआ करता था। समर स्कूल के छात्रों के लिए विशेष रूप से कन्सर्ट की व्यवस्था की गई थी। चेक फिलोहार्मोनिक आर्केस्ट्रा के कुछ सदस्य वहाँ स्वयं मौजूद थे। तीन अलग-अलग संगीत अंश–यानाचेक, द्वोर्शाक और सबसे अंत में मोत्सार्ट। इन संगीत रचनाओं को सुनकर लेखक भावविभोर हो उठा।

31.8 पेरिस : एक स्टिल लाइफ (एक रुका हुआ जीवन)

फ्राँस में लेखक अपने मित्र दुबुआ के साथ रहता था। एक दिन दुबुआ सुबह बाहर जाते समय दरवाजे पर अनजाने में कुंडा लगा गया। अब लेखक सारा दिन उस कमरे में बंद हो गया। उस दिन उसे टार्चर चेम्बर की यातना का अनुभव हुआ। उसे अपनी स्थिति बारबूस के उस 'इन-साइडर' सी लगी जो दिनभर अपनी कोठरी में बंद रहकर सिर्फ

नोट

दरवाजे के की-होल से बाहर झाँका करता था। शाम को जब दुबुआ लौटे और पहली स्पेस यात्रा की खुशी में नाचने लगे। रूस के यात्री यूरी गैगरीन प्रथम बार अंतरिक्ष गये थे। इसलिए वह प्रसन्न थे और एक अच्छे से होटल में जाकर उन्होंने शेम्पेन पी। लेखक ने एक संस्मरण का हवाला देते हुए कहा कि किसी से पूछा गया कि फर्ज करो अणुयुद्ध में तुम्हें किसी शहर को बचाने के लिए कहें तो किसे बचाओगे? उसने बिना सोचे उत्तर दिया पेरिस, क्योंकि यदि यह जीवित रहता है तो मानव संस्कृति को अणुबम के बाद भी पुन: जीवित होने में अधिक समय नहीं लगेगा। पेरिस में एक चीज सबसे पहले आकर्षित करती है और वह है यहाँ के रंग। उन्होंने अपने घूमे हुए स्थानों की एक-एक चीज इस प्रकार बताई रिक्याविक की हवा, प्राग के पुल, वियना के बाग और पेरिस के रंग। लेखक एक दिन अकेला ही पेरिस देखने निकल पड़ा। सेन नदी के किनारे हेनरी चतुर्थ की मूर्ति, पुल पार करने पर पेरिस का मौन द्वीप, पैलेस आफ जस्टिस की विशाल इमारत जिसमें मारी आन्तेय नेत बंदी थी। घर आकर अपने मित्र के साथ बैठा शराब पीता रहा और संगीत सुनता रहा। पेरिस से टाल्सताय भी प्यार करते थे। वह भी अंतिम समय में सेन नदी के किनारे जाकर अंतिम उपन्यास लिखना चाहते थे। लेखक ने फ्रेंच लोगों के विषय में कहा है कि वे अपने में निर्लिप्त बिल्कुल उदासीन होते हैं, वे एक संग बहुत रसज्ञ और रूखे होते हैं। लेखक को हमेशा यह दुख रहेगा कि वह पेरिस कम समय ही रह सका।

> *टास्क* लेखक ने पेरिस की विशेषताओं की व्याख्या किन शब्दों में की है?

31.9 वियना

लेखक वियना के कार्ल सकिर्चे के चर्च में बैठा रहा, जहाँ जाने कितनी सदियों का मौन जमा था। चर्च खाली था। एक बूढ़ी स्त्री मोमबत्ती के आगे बैठी थी। चर्च से बाहर आने पर सबकुछ चमकीला-सा दिखने लगा। आज छुट्टी का दिन था। वियना निवासी पार्क में कुर्सियाँ डाले धूप सेंक रहे थे। लेखक वहाँ यूथ फेस्टीवल में गया था, अत: दिनभर सेमिनार होते थे और रात को संगीत और नाच गाना। अनेक देशों के युवक-युवतियाँ वहाँ एकत्रित थे। चारों तरफ मित्रता का वातावरण था। उस रात लेखक के मन में वियना से संबंधित स्मृतियाँ जगने लगीं जिनमें चलते हुए मोत्सार्ट का संगीत, आर्थर श्लीजर की कहानियाँ साकार हो उठीं। इस सौहार्द्रपूर्ण वातावरण को देखकर लेखक को लगा कि लड़ाई खत्म होने के बाद पहली बार ऐसा लगा कि शीतयुद्ध की वर्षा धीरे-धीरे पिघलने लगी है।

31.10 चीड़ों पर चाँदनी

लेखक शिमला में अपने निवास का स्मरण करता हुआ कह रहा है कि बचपन में हम एक प्रश्न किया करते थे–"इन पहाड़ों के पीछे क्या होगा?" आज पता चला चाहे स्विटरजलैंड हो या शिमला सब के पहाड़ लगभग एक जैसे हैं। रात को सोते समय आकाश साफ होता था, सुबह उठने पर चारों ओर घनी वर्षा छाई होती थी, सभी कुछ बर्फ से ढक जाता। उसी प्रकार अप्रैल की रातों में फीकी-सी चाँदनी चारों ओर फैल जाती। खिलनमर्ग की हिमाच्छादित चोटियों पर चाँदनी के छुईमुई से झिलमिलाते कण ऊपर से नीचे तक बर्फ पर फिसल रहे थे। सबकुछ एक दूसरे में चुपचाप सिमट आया था। लगता था जैसे सफेद संगमरमर के चूरे की हल्की-हल्की बारिश हो रही है। बादल, बर्फ, चाँदनी, तीनों के अलग-अलग रंग थे, अलग-अलग लय थी। उस क्षण उसे लगा मानो किसी मायावी संगीत के चमकीले सुरों ने समस्त वन्य स्थल को अपने स्वप्निल, निष्पंद पंखों के भीतर समेट लिया हो। पहाड़ों पर अद्भुत मायाजाल लेखक ने पहली बार देखा था। यही सौंदर्य उन्हें आखू की पहाड़ी पर दिखाई दिया। उन्हें लगा पहाड़ों में भी साँप की आँख जैसा एक अविस्मृत, जादुई सम्मोहन होता है। एक भुतैला-सा सौंदर्य जो एक साथ हमें आतंकित और आकर्षित करता है। यही सौंदर्य उन्होंने नैनीताल की झील में भी देखा। सुबह, दोपहर, शाम के पल दिन बदलते

रंगों के संग झील अपना आवरण उतारती है निरावृत होकर स्तब्ध भाव से चारों ओर झाँकती है और फिर सबकी आँख बचाकर धीरे से चुपचाप नया रंग ओढ़ लेती है। दोपहर की उनींदी खाड़ी में ताम्रवर्णी जल ठहर जाता है। झील के भी अनेक चेहरे होते हैं या चेहरा एक होता है परंतु भंगिमाएँ अनेक होती हैं। रात होने पर झील के दो चेहरे हो जाते हैं, एक हँसता हुआ दूसरा सोया था। पानी बँट जाता है आधा जल गहरा हरा, आधा सफेद जैसे किसी ने चूने का चिट्टा चूरा पानी में घोल दिया हो।

31.11 देहरी के बाहर

लेक्सनेस : एक इंटरव्यू

आइसलैंड के रिक्याविक नगर में रहने वाले नोबल पुरस्कार विजेता महान् उपन्यासकार हॉलदार विलियन लेक्सनेस से मिलने की इच्छा लेखक की बर्लिन से ही थी। जब वे आइसलैंड पहुँचे तो लेक्सनेस का इंटरव्यू लेने का मोह संवरण न कर पाये। लेक्सनेस का व्यक्तित्व बहुत ही गैर रोमांटिक और नार्मल था। शायद वह हमारे युग के सबसे नार्मल साहित्यकार हैं। लेखक ने उनसे पूछा कि क्या उनकी रचनाओं पर सागा ग्रंथों का प्रभाव है? उन्होंने स्वीकार किया कि आइसलैंड का शायद ही कोई ऐसा लेखक हो जो इन महान् कृतियों से स्वयं को असंपृक्त रख पाये। उनके उपन्यास 'हैपी वरियर्स' पर सागा ग्रंथों का गहरा प्रभाव है। उन्होंने यह स्वीकार नहीं किया कि भौगोलिक स्थिति से अलग होने पर भी आइसलैंड यूरोपीय प्रभाव से अछूता हो। सत्रहवीं शताब्दी से पहले इंग्लैंड, फ्रांस और मध्य युग में जर्मनी के सांस्कृतिक और धार्मिक आंदोलन का आइसलैंड की जीवनधारा पर गहरा प्रभाव पड़ा। लेकिन हजारों साल डेनमार्क के आधिपत्य में रहने के बाद भी डेनिश साहित्य या संस्कृति का गहरा प्रभाव नहीं पड़ा। उन्होंने एक प्रश्न के उत्तर में कहा कि उन्हें अकेलेपन या अलगाव की स्थिति ने कभी प्रभावित नहीं किया। लेखक ने सात्री को उद्धृत करके कहा कि आज के युग में कोई भी प्रतिगामी लेखक महान् साहित्य की रचना नहीं कर सकता। लेक्सनेस इस मत से सहमत नहीं थे। उनके अनुसार इलियट, काम्यू ने महान् साहित्य की रचना की। टैगोर की धार्मिक कविताएँ पढ़कर आज भी उन्हें आनंद आता है। उनका मत था कि आज के प्रकार के युग में लेखकों की आवाज का कोई विशेष महत्त्व या प्रभाव नहीं है। छोटे से छोटे देश में भी राजनीतिज्ञों का ही बोलबाला है। उनका विचार था कि अणु युद्ध नहीं होगा। पहले या दूसरे युद्ध से पूर्व युद्ध के प्रति कई देशों में उत्साह पाया जाता था परंतु आज किसी देश में यह उत्साह नहीं है। लेखक वस्तुस्थिति में अधिक अंतर नहीं डाल सकता। दूसरे युद्ध से पूर्व भी जर्मनी के अनेक साहित्यकारों ने फासिज्म का विरोध किया था परंतु राजनीतिज्ञों की चालों के आगे उन्हें सफलता नहीं मिली। भारत के विषय में अनेक विचार थे कि नेताओं और जनता के आर्थिक स्तर में बहुत अधिक अंतर है। आधुनिक भारतीय लेखक उनकी दृष्टि में आधुनिक नहीं थे। उनकी शैली यूरोप के पुराने लेखकों का स्मरण दिलाती है। ह्यूगो, लफीत और रोलाँ से आगे शायद उनकी जानकारी नहीं जाती। लेखक का अनुभव था कि ऐसे लेखकों की संख्या दिन पर दिन कम होती जा रही है जो अपनी आस्था कमीज की आस्तीन पर लटका कर नहीं चलते। हर आइसलैंडी की तरह वे भी जिस चीज को जितनी गहराई और संवेदना से महसूस करते थे उसके संबंध में उतने ही रूखे और अनमने-भाव से बातचीत करते थे।

स्व-मूल्यांकन (Self-Assessment)

बहुविकल्पीय प्रश्न (Multiple Choice Questions) :

5. ब्रेख्त का नाटक देखने के लिए लेखक थियेटर में कितने विलम्ब से पहुँचे?

    (क) 15 मिनट (ख) 45 मिनट

    (ग) 30 मिनट (घ) इनमें से कोई नहीं।

नोट

6. आइसलैण्ड की भाषा के 'संबंध' शब्द का अर्थ हिन्दी के किस शब्द से मिलता है?
   (क) रिश्ते-नाते (ख) संबंध
   (ग) परम्परा (घ) इनमें से कोई नहीं।
7. युद्ध के कितने वर्ष बाद तक भी चेक साहित्य युद्ध की विभीषिका से मुक्त नहीं हो पाया?
   (क) 12 वर्ष (ख) 19 वर्ष
   (ग) 16 वर्ष (घ) इनमें से कोई नहीं।

31.12 काफ्का और चापेक

समकालीन चेक साहित्य

लेखक ने चेक साहित्य का संक्षिप्त इतिहास लिखने का प्रयास किया है। चेक साहित्य के एक सीमांत पर हैं यारोस्लाव हाशेक और दूसरे सीमांत पर हैं काफ्का। एक अपने युग के सबसे प्रखर व्यंग्यकार थे और दूसरे महान् ट्रैजिक लेखक। दोनों को चेक संस्कृति से बाहर करके देखना असंभव है। चेक संस्कृति पर रूसी प्रभाव कोई आज की बात नहीं है। पिछले सौ वर्षों से चेक संस्कृति और साहित्य के पुनरुत्थान के युग में चेक लेखक और दार्शनिक बौद्धिक चेतना और आध्यात्मिक संबल के लिए रूस को ही तीर्थस्थान मानते आए हैं। यह एक संस्कार बन गया है परन्तु आधार नहीं। चेक साहित्य में पूर्व पश्चिम की द्विविधा सदा बनी रही है। आधुनिक चेक साहित्य की मूल प्रवृत्ति है मानवीयता। सन् 1620 का वर्ष चेक इतिहास में एक निर्णायक काल बिंदु माना जाएगा। इस वर्ष सफेद पर्वत के युद्ध में चेक सेनाएँ पराजित हुई थीं। चेकोस्लोवाकिया अपनी स्वतंत्रता खोकर हैप्सबुर्ग साम्राज्य का एक प्रांत बनकर रह गया था। ये वर्ष चेक संस्कृति के लिए अंधकार युग थे। 18वीं शताब्दी में शायद ही कोई लेखक अपनी भाषा में लिख सकता था। हिटलर पहला व्यक्ति नहीं था जिसने चेक साहित्य और संस्कृति की स्वतंत्र सत्ता को नष्ट करने का बीड़ा उठाया था वह तो जर्मनीकरण की प्रक्रिया को अंतिम स्टेज पर ले जाना चाहता था।

चेक भाषा में अद्भुत सूक्ष्मता, लचीलापन, अनेक स्तरों पर अर्थ देने की अद्भुत क्षमता है। यह उसे कई सदियों के संघर्ष के बाद मिली। साहित्य में पुनरुत्थान तथा राष्ट्रीय जागरण के लक्षण 1810 में प्राप्त होते हैं, जब काटेल हिनेक मारवा ने चेक साहित्य को नया मोड़ दिया था। कविता में रोमांटिक परिवर्तन आया, कथा साहित्य में व्यापक यथार्थवाद। इस परिवर्तन को लाने का श्रेय है बोजेना न्यमसोवा के उपन्यास 'दादी माँ' को। उपन्यास साहित्य यान नेरूदा (1834-91) के आने तक परिपक्व हो चुका था। आधुनिक चेक साहित्य का विश्लेषण करते समय काफ्का की अवहलेना नहीं की जा सकती। काफ्का का युग बीसवीं शताब्दी के आरंभ में एक संक्रान्ति काल से गुजर रहा था। यारोस्लाव हाशेक ने अपने उपन्यास 'अच्छा सिपाही श्वायक' में एक अमर पात्र 'श्वायक' दिया। चेक लोग कहते हैं कि विदेशी चेक के बारे में केवल तीन चीजें जानते हैं, चेक डम्पलिंग, पिल्सन बियर और श्वायक। प्रथम युद्ध की समाप्ति और द्वितीय युद्ध के प्रारंभ के बीच का काल चेक साहित्य के लिए स्वर्ण काल माना जाता है। इन बीस वर्षों में लेखकों ने चेक साहित्य को अकेलेपन और उपेक्षित अवस्था से मुक्त करके उसे अंतर्राष्ट्रीय मंच पर स्थापित कर दिया। इर्शी वोल्कर, न्यूमान, जोसेफ होरा, नजवल ईवान, ऑल ब्राख्त इसी पीढ़ी के लेखक हैं। मानवतावादी मूल्यों की स्थापना करने में काटेल चापेक का प्रमुख स्थान है। वे उपन्यासकार, कहानी लेखक, नाट्यकार होने के अलावा निबंध और यात्रा-संस्मरण भी सुंदर रूप से लिखते थे। द्वितीय विश्वयुद्ध में चापेक की हत्या हो गई ब्लादीस्लाव वाँचूरा को भी गोली से उड़ा दिया गया। इन कठिन परिस्थितियों में भी चेक साहित्य जीवित रहा। युद्ध के बाद भी 16 वर्ष तक (जब लेखक प्राग में थे) चेक साहित्य युद्ध की विभीषिका से मुक्त नहीं हो पाया। आधुनिक काल में यानविस, लुदविक, अश्केनाजी और इर्शी मारेक की रचनाएँ अपने नवीन प्रयोगों वैविध्य और ताजगी के कारण महत्त्वपूर्ण हैं। लेखक कहते हैं कि यदि मुझसे कोई पूछे कि चेक कथा साहित्य में कौन-सी

चीज ने सबसे अधिक आकर्षित किया तो मैं कहूँगा उसका एक विचित्र ढंग का एस्थेटिक ग्रेस, एक सुरुचि संपन्न गरिमा जो आज के पोलिस और अंग्रेजी युवा साहित्यकारों की झुँझलाहट और आक्रोश से भिन्न है और उसकी सब से बड़ी और आँखों को खटकने वाली कमजोरी है, उसमें इसी आक्रोश और झुँझलाहट का अभाव। किंतु इन दोनों चीजों को एक साथ चाहना शायद लेखक की लोभी प्रवृत्ति का प्रतीक है।

टास्क लेखक द्वारा लिखे गये चेक साहित्य के संक्षिप्त इतिहास का उल्लेख कीजिए।

31.13 देहरी के भीतर चेखव का पत्र

जब हम किसी व्यक्ति के पत्र पढ़ते हैं तो ऐसा प्रतीत होता है कि हम उसके व्यक्तिगत कमरे में प्रवेश कर गये हैं। पत्रों की अपनी विशिष्ट परिधि है। जिसकी सीमा रेखा एक ओर डायरी को छूती है, दूसरी कहानी को। कहानी निरपेक्ष है आत्मानुभूति के स्तर पर, डायरी आत्मानुभूत लेखा है निरपेक्षता के स्तर पर। पत्रों में, विशेष रूप से लेखकों के पत्रों में डायरी की आत्मानुभूति और कहानी की निरपेक्षता आधी-आधी बँट जाती है, इसलिए वे इतने दिलचस्प और आकर्षक लगते हैं। डायरी की निरावृत स्थिति पत्रों में ढक जाती है, उसी तरह जैसे कहानी के ढके हुए अंग उनमें खुल जाते हैं। पत्रों में भी अंतर है। साधारण व्यक्ति पत्र लिखते समय चिंता करता है अत: उसके पत्र गंभीर होते हें और लेखक चिंतन से मुक्त होने के लिए पत्र लिखता है, उनमें वे प्राय: हल्का फुलका अंदाज बनाये रखते हैं। चेखव के पत्रों को पढ़कर ऐसा लगता है कि उल्लास, व्यंग्य विनोद के पीछे हल्की-सी किरकिरी छिपी रह गई है। चेखवन ने अपनी मृत्यु से पूर्व जो पत्र अपनी बहन को लिखा था उसमें अपनी बीमारी के बारे में बहुत कम लिखा था। साहित्य के बारे में एक शब्द भी नहीं। अपने शारीरिक दुख-दर्द को दो-चार लाइनों में रफा-दफा कर दिया था। चेखव दूसरों के सामने अपने दुख-दर्द व्यक्त करने से घबराते थे। जिंदगी की हर खूबसूरत चीज उन्हें आकर्षित करती थी। वे तपेदिक के रोगी थे परंतु अपनी बीमारी के संबंध में वे अक्सर मौन साध लेते थे। अपनी कृतियों के विषय में चेखव ने बहुत कम लिखा, अक्सर वे उनका मजाक उड़ाते थे। ऐसे बहुत कम लेखक मिलेंगे जिन्होंने कला को नये, क्रांतिकारी मोड़ पर लाकर खड़ा कर दिया परंतु जो स्वयं अपनी इस अभूतपूर्व देन से असंतुष्ट थे। चेखव के पत्र संकल्प, विकल्प, व्यंग्य और विरोधाभास से भरे हुए हैं। वह अपने पत्रों में सदा एक केज्यूअल भाव रखते थे। किंतु इस केज्यूअल टोन, इस अधूरेपन में ही उनकी सहज आत्मीयता उनकी सार्थकता निहित है। पत्रों का कोई शाश्वत सत्य है तो वह उनकी तत्कालिकता में और चेखव के पत्र इस संबंध में खरे उतरते हैं।

31.14 उद्देश्य

प्रसिद्ध आलोचक स्काट जेम्स ने साहित्य को दो भागों में बाँटा है–

1. ज्ञान का साहित्य
2. शक्ति का साहित्य।

प्रथम प्रकार का साहित्य हमें सिखाता है, दूसरे प्रकार का साहित्य हमें द्रवित करता है। संस्मरण को हम शक्ति के साहित्य के अंतर्गत रखते हैं। अर्थात् संस्मरण हमें कुछ सिखाता है, उस व्यक्ति अथवा स्थान का बोध कराता है। वहाँ की विभिन्न परिस्थितियों से अवगत कराता है। साथ ही हमें मानवीयता से युक्त करके मन में करुणा के भाव भरकर हमें द्रवित भी करता है। ठीक अर्थों में कला का अर्थ मनोरंजन मात्र नहीं, अपने उच्चतम अर्थों में कला का उद्देश्य होता है–ईश्वर के गौरव का दर्शन करना और तज्जन्य आह्लाद को अपनी अभिव्यक्ति के माध्यम से दूसरों को भी उस दिव्य आनंद का साझीदार बनाना, अत: स्वाभाविक रूप से लेखक का उद्देश्य जीवन की व्याख्या करना

नोट

हो जाता है। यह व्याख्या दो प्रकार से हो सकती है। एक तो इसका व्यक्तिगत रूप होता है जिसमें प्रायः मनुष्य का आंतरिक भावनाओं का विश्लेषण किया जाता है, दूसरे प्रकार में वह जीवन की समस्याओं आदि का विश्लेषण करता है। अच्छे लेखक चिंतक और पर्यवेक्षक दोनों ही होते हैं। किंतु उसकी चिंता का विषय अमूर्त प्रश्न न होकर जीवन के ठोस तत्व होते हैं। वह इन तथ्यों को नैतिक अर्थ देने का प्रयास करता है। वास्तव में मानव अपनी सचेतन अवस्था में कभी भी निरुद्देश्य नहीं रह सकता। अतः कोई भी सर्जनात्मक साहित्य किसी उद्देश्य से ही रचा जाता है। साहित्य का एकमात्र उद्देश्य है कि वह मनुष्य की अपने समस्त आयामों और समग्र परिवेश के साथ साहित्यिक भूमि पर अवतारणा कर उसके समस्त उलझे हुए सूत्र, फैले हुए सीमांत और गति तथा प्रसार के अतिरिक्त गहराई के आयाम का चित्रण करके मानव जीवन का सर्वथा संपूर्ण प्रतिपादन करे।

निर्मल वर्मा का संकलन 'चीड़ों पर चाँदनी' एक संस्मरण गुम्फ है, जिसमें उन्होंने यूरोप के विभिन्न देशों की यात्रा के विवरण प्रस्तुत किए हैं। उनका उद्देश्य मूलरूप से स्मृति को पुनर्जागृत करके पाठक को उन सभी स्थानों से परिचित कराना है जहाँ-जहाँ वह गए, परंतु मात्र इतना ही कर देना उनका उद्देश्य नहीं। साथ ही यूरोप की सामाजिक, राजनीतिक आदि स्थितियों का विश्लेषण करते हुए मानवीयता के आधार पर उनका विश्लेषण करना भी उनका उद्देश्य रहा है। युद्धोत्तर कालीन यूरोप ने इतनी विभीषिकाएँ देखी हैं कि एक 'बाहर' का व्यक्ति यदि उसे देखे तो वह विचलित हुए बिना नहीं रह सकता। उसके हृदय में निरंतर प्रश्न उठते रहते हैं कि क्या युद्ध किन्हीं स्थितियों में उपादेय भी हो सकता है? और प्रत्यक्षदर्शी होने के बाद वह इस निष्कर्ष पर पहुँचता है कि युद्ध कभी भी मनुष्य का हित नहीं कर सकता।

31.15 मानवतावादी दृष्टिकोण से युक्त यात्रा-संस्मरण

लेखक का मुख्य उद्देश्य अपने यात्रा-संस्मरणों के माध्यम से पाठक की मानवीय भावनाओं को जगाना है। उसे यूरोपवासियों के विचारों से अवगत कराना है। इस उद्देश्य को लेकर लेखक के मन को आलोकित कर देने वाले तथ्यों का उन्होंने मानवतावादी दृष्टिकोण से चिंतन के आधार पर विश्लेषण किया है। वास्तव में 'चीड़ों पर चाँदनी' एक भारतीय लेखक के रूप में अपने से बाहर निकलकर स्वयं अपने को गवाह बनाने का प्रयत्न है। लेखकीय अनुभवों का जीता जागता शब्द-सागर है जिसमें से सुधी पाठक यदि चाहे तो करुणा, प्रेम, अहिंसा, मानवता के रत्न खोज सकता है। लेखक ने एक स्थान पर कहा है–"सिर्फ साँस लेना, जीवित रहकर धरती के चेहरे को पहचान पाना, यह भी अपने में एक सुख है।" उन्होंने अपनी यात्राओं से यही सीखा। अतः अपनी यात्राओं के अनुभवों को करुणा मिश्रित करके मानवतावादी दृष्टिकोण के आधार पर पाठक के समक्ष प्रस्तुत करना ही उनका मुख्य उद्देश्य था।

सर्वप्रथम लेखक अपने सूक्ष्म वर्णनों द्वारा उस वर्णित स्थान का शब्द-चित्र प्रस्तुत करते हैं बाद में वह स्वयं चिंतन में लीन हो जाते हैं तथा पाठक के सामने अनेक प्रश्न छोड़ जाते हैं। इस स्थानीय वातावरण का एक दृश्य देखें–

"सेन के जिस छोर पर मैं खड़ा हूँ, वहाँ चेस्टनर की शाखाएँ बहते भूरे पानी पर झुक गई हैं। बहुत कम फासले पर पोंत न्यूफ है और उसके परे मधुमक्खियों के छत्ते-सा द्वीप एवं पानी के बीच एक भूखंड जहाँ नात्रेदाम की मीनारें धूप में झिलमिलाती हैं। पुल के पास हेनरी चतुर्थ की मूर्ति है और उसके नीचे, सेन से सटा एक छोटा-सा बाग···किनारे पर इक्के-दुक्के मछुए दिखाई दे जाते हैं। ऊपर पुल की सबसे ऊँची सीढ़ी पर एक कैनवस रखा है···आँखें उठती हैं उस दृश्य की ओर, जो न जाने कितने टूरिस्ट पोस्टकार्डों पर अंकित है···आगे की ओर पोंत न्यूफ, किनारे पर ऊँघते मछुए, सेब के एम्बेंकमेंट पर सेकंड हैंड किताबें और घटिया चित्रों की दुकान···हवा में फरफराते पिक्चर पोस्टकार्ड और इन सब को रिलीफ देता हुआ नात्रेदाम। विश्वास नहीं होता कि वह लड़की हजार बार दोहराये गये इस लैंडस्केप को नये सिरे से छेड़ने का प्रयत्न करेगी।"

इस प्रकार स्थान वर्णन के माध्यम से पाठक को उस स्थान का पूरा परिचय देकर उसकी कल्पना में वह चित्र-विशेष उभारना लेखक का उद्देश्य रहा है। परंतु लेखक यहीं तक रुक नहीं जाता अपितु तुरंत विचारशील हो जाता है और अपनी भावनाओं को भी पाठक तक पहुँचाता है–

"ब्रेख्त भी यही करते हैं, बिल्कुल दूसरे ढंग से। बाह्य परिस्थिति उनके लिए ऐतिहासिक है। सूक्ष्म अर्थ में नहीं, समय के हाड़-माँस, ठोस पिंजर में आबद्ध, जिस सर्दी में हम जीते हैं, उसके संदर्भ में बेहद इंटेंस, राजनीतिक। फासिज्म बंदी-शिविर, नर-संहार···ये महज दीवार की छायाएँ नहीं, जिन्हें एक आत्मपरक प्रतीक दिया जा सके, क्योंकि ये स्वयं प्रतीक है एक विघटन प्रक्रिया के जिसमें हम सब अलग-अलग व्यक्ति की हैसियत से शामिल हैं। यह आकस्मिक नहीं कि ब्रेख्त का नाटक देखते हुए अचानक एक ऐसा क्षण आता है जब लगता है, जैसे थियेटर की दीवार के परे बरबस कुछ आवाजें भटक रही हैं। दरवाजा खटखटा रहा है, और हम दर्शक और अभिनेता, समूचा मंच और यह 'ऑडिटोरियम' एक अजीब दबाव तले धँसने लगते हैं। सिर्फ एक उपाय है मुक्ति पाने का। हम बाहर निकल आयें और इन आवाजों के साक्षी बन सकें।"

टास्क 'चीड़ो पर चाँदनी' का लेखक ने मानवतावादी दृष्टिकोण से किस आधार पर विश्लेषण किया है?

इसी प्रकार चेकोस्लोवाकिया के गाँव लिदित्से में नर-संहार एवं हिंसा के स्मृति-चिह्नों को देखकर भी लेखक विचारशील हो उठता है और कहता है कि–

"क्या अर्थ है हमारे लिए लिदित्से का? हम जो दुनिया के दूर-सुदूर देशों से यहाँ आए हैं? हम सबने अलग-अलग शहरों में अरसा पहले लिदित्से का नाम सुना था। अपने-अपने ढंग से उसके संबंध में सोचा था। किंतु इस क्षण लगता है, एक उड़ती हुई धुँधली अनुभूति हम सबको छू गई है। ऐसा कुछ जो, जब कभी महसूस होता है, हम हठात् चौंक से जाते हैं। एक अजीब-सी छाया जो अब सरसराती सी हमें छूती हुई निकल जाती है, हमें लगता है जैसे हमारे भीतर एक अँधेरा खोखला-सा खुल गया है। यूरोप के शहरों में घूमते हुए मुझे यह अक्सर महसूस हुआ कि इन लोगों के बीच मैं महज एक 'आउटसाइडर' हूँ–एक बाहर का आदमी। यूरोप के लिए फासिज्म का जो अर्थ रहा है क्या मैं उसे कभी सही-सही समझ सकूँगा? महसूस कर पाऊँगा? आज वह उसकी आत्मा का एक हिस्सा है–पूरे अर्थ में एक पाप, जो सिर्फ अतीत की विरासत ही नहीं, किंतु जिसे हर व्यक्ति कमोबेश अपने में लिये जीता है और तब लिदित्से के खंडहरों के बीच भटकते हुए मुझे पहली बार अपने लिए 'आउटसाइडर' शब्द अजीब बेमानी-सा लगा। टूटी हुई दीवार के मलबे के नीचे हम सबकी आत्मा का एक अंश दब गया है क्योंकि जिस सदी में हम जीते हैं, हममें से हर व्यक्ति उसका गवाह है, और गवाह होने के नाते जवाबदेह भी···।"

इस प्रकार हमने देखा कि लेखक मात्र यात्रा-विवरण ही प्रस्तुत नहीं कर रहा अपितु मानवीय संवेदना से युक्त करके उन दृश्यों के माध्यम से एक प्रश्न भी उठा रहा है। यही वह कारण है जिससे संस्मरण मात्र तथ्यात्मक विवरण न होकर साहित्यिकता को प्राप्त करते हैं। एक सहज आत्मीयता से युक्त होने पर संस्मरण जीवंत हो उठता है। जिस प्रकार महादेवी के संस्मरण उनकी करुणा व सहानुभूति से ओतप्रोत हैं उसी प्रकार निर्मल वर्मा के संस्मरणों का उद्देश्य भी अपने अनुभवों को करुणा से युक्त कर पाठक को आंदोलित करना है।

उपर्युक्त मूलोद्देश्य के साथ ही लेखक ने सामाजिक यथार्थ के विभिन्न संदर्भ भी प्रस्तुत किए हैं जिनको देखते हुए कहा जा सकता है कि उनका चित्रण करना भी निर्मल वर्मा का उद्देश्य रहा है। इस उद्देश्य को सामाजिक यथार्थ के संदर्भ में निम्नलिखित रूपों में देखा जा सकता है–

1. सामाजिक परिस्थितियों का चित्रण
2. राजनीतिक परिस्थितियों का चित्रण
3. सांस्कृतिक परिस्थितियों का चित्रण।

1. सामाजिक परिस्थितियों का चित्रण–'चीड़ों पर चाँदनी' में यूरोप के अनेक देशों में सामाजिक परिस्थितियों को देखते हुए लेखक ने उनका यथावत् चित्रण किया है। युद्धोत्तर यूरोप में सामाजिक अव्यवस्था रही थी। जर्मनी के

नोट

दो भाग हो चुके थे। लोग हिंसा के दौर से मुक्त होकर पुनर्निर्माण में लगे हुए थे फिर भी यूरोप का समाज जीवंत था। उसमें जिजीविषा थी तभी तो किसी के द्वारा यह पूछने पर कि यदि सारा विश्व तबाह हो जाए और एक शहर बच जाए तो आप कौन-सा शहर बचाना चाहेंगे। इसके उत्तर में 'पेरिस' को ही सभी ने वरीयता दी क्योंकि वह सांस्कृतिक गतिविधियों का केंद्र है। समाज में आए विभिन्न परिवर्तनों एवं विभिन्न आंदोलनों को उसने स्वीकार किया था। लेखक ने विस्तार से आइसलैंड की सामाजिक स्थितियों का वर्णन किया है परंतु साथ ही प्राग, पेरिस, बर्लिन आदि स्थानों के विषय में भी अपने विचार व्यक्त किए हैं।

"हर स्टेशन पर गाड़ी रुकती है कुछ लोग भीतर आते हैं। पूर्वी बर्लिन के निवासी जो दूसरे क्षेत्र में जा रहे हैं। पूर्व से पश्चिम और पश्चिम से पूर्व, बिना किसी औपचारिकता या रुकावट के आया जाया जा सकता है। आज ये पंक्तियाँ लिखते समय बर्लिन में अनेक परिवर्तन आ चुके हैं। पहले जैसा मुक्त यातायात आवागमन संभव नहीं। आइसलैंड से वापस आते समय मैं बर्लिन में चार दिन ठहरा था। और इस थोड़े समय में मैं जो कुछ देख, समझ पाया वह इस अभिशप्त नगर की असाधारण झाँकी देने के लिए काफी था। शीतयुद्ध की इतनी नंगी, बेलैस तस्वीर शायद यूरोप के किसी शहर में नहीं दिखाई देती। हजारों लोग ऐसे हैं जिनके घर पूर्वी बर्लिन में हैं और जो हर रोज काम करने के लिए पश्चिमी बर्लिन जाते हैं। अनेक ऐसे परिवार हैं जो इस विभाजित शहर का आईना हैं। आधा परिवार पूर्वी भाग में, आधा पश्चिमी भाग में। मैं किसी पत्रकार की हैसियत से बर्लिन नहीं गया था। अतः किसी प्रकार की निश्चित सूचना देना न मेरा लक्ष्य है न बस की बात। आर्ट गैलेरीज और म्यूजियम देखने के लिए अक्सर मुझे शहर के दोनों ओर जाना पड़ता था और इस दौरान जो कुछ आँखों के सामने पड़ जाता था, उससे बहुत कुछ खुले-छिपे संकेत मिल जाते थे। अपने में बहुत साधारण और छोटे किंतु असाधारण स्थिति के द्योतक। कौन प्रभावित नहीं होगा? पश्चिमी बर्लिन की ऊँची भव्य दुकानों, होटलों और रेस्तराओं की तड़क-भड़क से। इन ऊँची और गगनचुंबी इमारतों ने युद्ध के भद्दे अवशेषों को अपने अंदर छिपा लिया है। यह आकस्मिक नहीं कि पूर्वी बर्लिन से हर रोज सैकड़ों आदमी पश्चिमी भाग में सैर-सपाटे के लिए अथवा चीजें खरीदने के लिए आते हैं। अक्सर मैंने जू स्टेशन पर एक्सचेंज बैंक के आगे इन लोगों की लंबी कतारें देखी हैं जो पूर्वी जर्मनी के मार्क को पश्चिमी जर्मनी के मार्क में बदलने के लिए खड़े हैं। आश्चर्य नहीं आज पश्चिमी बर्लिन पश्चिमी यूरोप की जगमगाती 'शो विंडो' के रूप में पूर्वी यूरोप के सामने उपस्थित है—स्वतंत्र यूरोप के आदर्शों का एक स्वतंत्र-सा प्रतीक।

किंतु यह विरोधाभास अपने में अकेला नहीं। बर्लिन के दोनों भाग इस विचित्र विरोधाभास को अपने में प्रतिबिंबित करते हैं। अक्सर कहा जाता है कि पश्चिमी देशों की संस्कृति, स्वतंत्रता और न्याय जैसे आध्यात्मिक सिद्धांतों पर आधारित है, जबकि दूसरी ओर कम्युनिस्ट देश उनकी नितांत अवहेलना करते हैं तथा मनुष्य की निम्नतम भौतिक इच्छाओं पर जोर डालते हैं। शायद यह सच हो किंतु बर्लिन में लगता है जैसे ये रोल आपस में बदल लिये गये हैं। पश्चिमी जर्मनी की सबसे बड़ी आध्यात्मिक अपील अमरीकी सिगरेट, स्काच, ह्विस्की, फ्रेंच कोन्याक, नायलन कमीजें तथा हेनरी मिलर और वात्स्यायन की पुस्तकें जिन्हें देखने और खरीदने हजारों लोग पूर्वी जर्मनी से आते हैं। जहाँ तक इन चीजों के प्रति आकर्षण का प्रश्न है, मैंने पूर्वी और पश्चिमी बर्लिन के लोगों में कोई भेद नहीं देखा। उनके राजनीतिक सिद्धांत या आध्यात्मिक मान्यताएँ एक-दूसरे से कितनी भी भिन्न क्यों न हों?

इसलिए एक प्रश्न बार-बार मंडराता है—क्या पश्चिमी यूरोप बर्लिन में 'स्ट्रिपटीज' और 'नाइट क्लबों' के अलावा अपनी सांस्कृतिक स्वतंत्रता प्रदर्शित करने का कोई दूसरा बेहतर माध्यम नहीं प्रस्तुत कर सकता? और दूसरा प्रश्न, क्या इन सब चीजों का आकर्षण पूर्वी बर्लिन निवासियों के लिए इतना अधिक गहरा है कि वे कम्युनिस्ट व्यवस्था के सम्मुख आर्थिक संकट उपस्थित कर देंगे? एक दृष्टि से परिचय की तुलना में पूर्वी जर्मनी की कम्युनिस्ट सरकार अपने भौतिक दर्शन के बावजूद अत्यंत आदर्शवादी जान पड़ती है। जहाँ पश्चिमी जर्मनी में नाइट क्लबों के भड़कीले इश्तिहार दिखाई देते हैं, वहीं पूर्वी बर्लिन के चौराहों पर, स्टेशन की दीवारों पर अक्सर बड़ी-बड़ी सुर्खियों में चेतावनी के ये शब्द आँखों को रोक देते हैं—'फासिज्म नेवर अगेन'। यह आकस्मिक नहीं कि पश्चिमी बर्लिन में मैंने आइखमैन के खिलाफ एक भी इश्तहार नहीं देखा।"

इसी प्रकार आइसलैंड के समाज का वर्णन करते हुए लेखक ने लिखा है कि वहाँ स्त्रियों को पूरी आजादी है और वह आजादी केवल दिखावे की नहीं अपितु व्यवहार में भी प्रयुक्त होती है। यह स्वाधीनता बराबरी के अधिकार तथा वोट तक ही सीमित नहीं अपितु बहुत ही सहज और अनायास रूप से उनके जीवन का एक अंग बन गई है। वहाँ स्त्रियों में एक अजीब सी उच्छलता है जो परंपरागत नैतिकता से बिल्कुल अदूषित है। बहते पानी की तरह नैसर्गिक व्यवहार, आधुनिक समाजों में भी अनैतिक माना जाएगा परंतु आइसलैंड में इस संबंध में भिन्न विचार है। यदि कोई स्त्री माँ बनती है तो सभी उसे बधाई देने आते हैं परंतु कोई यह प्रश्न नहीं पूछता कि वह विवाहित है या अविवाहित। यही कारण है कि आइसलैंड में अवैध बच्चों की संख्या यूरोप में सबसे अधिक है परंतु यह आश्चर्य की बात है कि अवैध की कुंठा या अपराध भावना उनमें कहीं भी नहीं दिखाई देती। अहिंसा की भावना उनके जीवन का एक अंग है। इसीलिए पिछले तीस-चालीस वर्षों से वहाँ चोरी अथवा डाके की एक घटना भी नहीं घटी। हत्या के संबंध में लोग भूल ही गये हैं। वहाँ का समाज इतना घनिष्ठ है कि एक दूसरे के व्यक्तिगत जीवन की अनेक बातों का पता होते हुए भी उन्हें वे व्यक्तिगत घरेलू राज की तरह ही रखते हैं। कोई किसी के जीवन में दखल नहीं देता।

स्व-मूल्यांकन (Self-Assessment)

निम्नलिखित कथनों में सत्य अथवा असत्य की पहचान करें

(State Whether the following statements are True or False) :

8. आइसलैण्डी यायावार प्रकृति के होते हैं।
9. लेक्सनेस विलियन को अथक प्रयासों के बावजूद नोबल पुरस्कार की प्राप्ति नहीं हो सकी।
10. आइसलैण्ड के तीर्थस्थान 'थिगविलियर' का अर्थ 'प्रथम लोकतन्त्र' से है।
11. सन् 1630 में सफेद पर्वत के युद्ध में चेक सेनाऐं पराजित हुई थीं।

2. राजनीतिक परिस्थितियाँ–लेखक ने अपनी यात्रा 1959 में की जो कि द्वितीय विश्वयुद्ध समाप्त होने के 14 वर्ष बाद ही थी। इतनी अल्प-अवधि में अभी इस युद्ध की विभीषिका से लोग मुक्त नहीं हुए थे। उसके साथ ऐसी अनेक घटनाएँ घटित हुईं जिससे उसे वहाँ की राजनीतिक परिस्थितियों का बोध हो गया। उन घटनाओं का वर्णन करके लेखक पाठक को भी वहाँ की राजनीतिक परिस्थितियों से अवगत कराना चाहता है। बर्लिन में आकर लेखक जहाज पकड़ने के लिए एक दिन ठहरा परंतु उसे होटल में कमरा नहीं मिला परंतु उसके मित्र थोर्गियेर के कहने पर कमरा मिल गया। इस घटना का वर्णन लेखक इस प्रकार करता है–

"क्लाक रूम" से अपना सामान लाने के लिए हम स्टेशन की ओर रवाना हो गये। "देखा आपने, कमरा कितनी जल्दी मिल गया?" एंगुई ने मुस्कुराते हुए हमारी ओर देखा। "लेकिन माजरा क्या है? हम अभी कुछ देर पहले गये थे और मैनेजर ने विवशता प्रदर्शित करते हुए कहा था कि सब कमरे पहले से ही बुक हो गये हैं।" मैंने कहा। "ठीक तो है", एँगुई ने कहा, "कमरा आपको नहीं मुझे मिला है, कोपेनहेगन में रहता हूँ, इसलिए वे मुझ पर संदेह नहीं करते।" "कैसा संदेह?" थोर्गियेर ने पूछा, "हम पर संदेह करते हैं?" आपने अपना पासपोर्ट दिखाया होगा?" एँगुई ने कहा। "दो वर्ष से आप प्राग में रह रहे हैं, आयरन कर्टेन के पीछे, क्या यह कम सबूत है कि आप खतरनाक लोग हैं?" एँगुई हँसने लगा था।

पहले क्षण में इस कड़वे सत्य को आसानी से गले के नीचे नहीं उतार सका था। मैं भारतीय हूँ। यह इतना महत्त्वपूर्ण नहीं है जितना यह कि मैं एक कम्युनिस्ट देश से आ रहा हूँ। शीतयुद्ध की यह नई बीमारी छुआछूत यूरोप की दैनिक चर्चा का अभिन्नतम अंग बन गई थी। इसका भयानक अनुभव मुझे लंदन में भी हुआ था। टामसकुक कंपनी से प्राग का टिकट लेने गया था। टिकट माँगने पर एक बहुत ही शालीन और भद्र अंग्रेज बाबू ने मिचमिचाती आँखों से मेरी ओर देखा–"प्राग?" गले में साँस अटक गई। "बट डोंट यू नो इट इज बिहाइंड आयरनकर्टेन?" (लेकिन क्या आप नहीं जानते कि वह लौह दीवार के पीछे है?)

नोट

"ओह रियली?" (क्या सचमुच) मैंने कहा।

एक अन्य स्थान पर जब लेखक से यह कहा गया कि वह यदि स्वयं को कम्युनिस्ट घोषित करेगा तो आइसलैंड में उसका सम्मान होगा क्योंकि आइसलैंडी कम्युनिस्टों से जितनी नफरत करते हैं, उससे ज्यादा उनकी इज्जत करते हैं। उस व्यक्ति ने कहा कि मैं उनका कट्टर विरोधी हूँ। हर चुनाव में मैने उनके खिलाफ वोट दिया है। इसके बावजूद यदि कोई मुझसे पूछे कि आइसलैंड में सबसे ईमानदार राजनीतिज्ञ कौन है, तो मैं कहूँगा—आल्येर सॉन। लेखक ने कहा है "यह पहला अवसर था जब आइसलैंड की राजनीति के भीतर झाँकने का मौका मिला था। आल्येर सॉन के नाम से पहले भी परिचित था किंतु एक कम्युनिस्ट विरोधी व्यक्ति भी उनके प्रति इतने सम्मान की भावना रख सकता हैं, इसका परिचय पहली बार मिला। बाद में यह अनुभव अनेक बार हुआ। शीतयुद्ध की राजनीति में जहाँ हर चीज काले और सफेद रंगों में देखी जाती है, यह अपने में विलक्षण और असाधारण घटना थी। कम्युनिस्ट देशों के बाहर आइसलैंड ही एक ऐसा देश है जहाँ लोग कम्युनिस्ट विचारधारा से तीव्र मतभेद रखते हुए कम्युनिस्ट नेता के प्रति इतनी गहरी निष्ठा और आस्था प्रकट कर सकते हैं।"

3. सांस्कृतिक परिस्थितियाँ—लेखक एक साहित्यिक व्यक्ति है। अत: किसी स्थान पर जाकर उस स्थान की सांस्कृतिक गतिविधियों से परिचित होना स्वाभाविक ही है। उन्होंने अनेक नाटक देखे, म्यूजियम, कला संग्रहालय आदि का भ्रमण किया और उसका वर्णन सुंदर रूप से किया है। बर्लिन में ब्रेख्त का नाटक 'टेरर एंड मिजरी' देखा जिसे देखकर लेखक अत्यंत रूप से प्रभावित हुआ। आइसलैंड के नोबल पुरस्कार विजेता लेक्सनेस से तो उनकी विस्तार से बातचीत हुई। कोपेनहेगन में वे स्कैन्डेनेवियन चित्रकारों की प्रदर्शनी देखने गए। फर्नीचर के डिजाइन, दस्तकारी का सूक्ष्म काम तथा नई वास्तुकला में विचित्र प्रयोग करने वाले डेन लीग चित्रकला के क्षेत्र में 'पास्तेश' और उथलेपन में सार्थकता खोजेंगे, यह देखकर लेखक को आश्चर्य हुआ। उन्होंने लिखा है कि सीमित साधनों और भौगोलिक अलगाव के बावजूद आइसलैंडियों का मूर्तिकला के प्रति जो लगाव रहा है वह विस्मयकारी है। रिक्याविक में उन्नीसवीं शताब्दी के मूर्तिकार आइनर थोहोन्सोन की कृतियों का एक अलग संग्रहालय है। यद्यपि उनकी अत्यधिक रोमांटिक शैली मुझे अधिक रुचिकर नहीं प्रतीत हुई परंतु उनकी मूर्तियों में उत्तरी देशों की पौराणिक गाथाओं का अद्‌भुत चित्रण मिलता है। चेकोस्लोवाकिया में वे मोत्सार्ट का संगीत संग्रहालय देखने गये। उस संगीत को सुनने के बाद लेखक पर जो प्रभाव पड़ा उसका वर्णन उन्होंने बहुत काव्यात्मक ढंग से किया है—

"जो सच है, जो रात की उस घड़ी में सच था, वह अब महज अर्धस्वप्नों, स्मृतियों का पुंज रह गया है, आकारहीन, स्वरहीन, धुँधली धुँध के लौंदे सा। वह एक पुल था। हजारों सदियों के कुहरे को काटता हुआ, अतीत के उस सीमांत को छूता हुआ, जहाँ मौन, शब्दों के अभाव से नहीं, उनके अधूरेपन से उत्पन्न होता है। ऐसा पुल जो कितना कुछ जोड़ता है, उतने में ही टूट जाता है। सोचता हूँ, आज नहीं, उस रात सोचा था, जैसे वह लौ बिल्कुल अकेली, बिल्कुल नंगी हो गई है जिसे हम अपने अस्तित्व से ढके रहते हैं। कितनी जल्दी वह आसपास के घेरे को निगल रही है, भूखी प्यासी लौ, लपलपाती, हाँफती हवा में साँस लेती है। कुछ भी ऐसा नहीं रहा जिस पर उँगली रखकर कह सकें यह आज है, यह कल।

फिर आखिरी लम्हा और तब उसके इर्द-गिर्द सबकुछ डूब जाता है। हमारा प्यार, आधी रात में जागे पसीने से लथपथ दु:स्वप्न, एक पगली सी धड़कन और फिर वह भी नहीं। जो शेष रह जाता है, देर तक हवा में टँगा रहता है, वह है एक अजनबी अपनापन, जिसे हमने पहले कभी नहीं देखा था।"

निष्कर्ष

इस विवेचन से स्पष्ट हो जाता है कि 'चीड़ों पर चाँदनी' में लेखक निर्मल वर्मा का क्या उद्देश्य है? मानवीय संवेदना से युक्त करके घूमे हुए स्थानों के सुंदर शब्द-चित्रों के माध्यम से वे स्थान पाठक की कल्पना में साकार किए गए हैं। साथ ही यूरोप की राजनीतिक, सामाजिक एवं सांस्कृतिक परिस्थितियों का भी लेखक ने सुंदर रूप से चित्रण किया है। कहना न होगा कि लेखक अपने इस उद्देश्य में सफल रहा है।

31.16 सारांश (Summary)

- 'चीड़ों पर चाँदनी' श्री निर्मल वर्मा के यात्रा संस्मरणों का संकलन है जिसमें उन्होंने प्राग, बर्लिन, कोपेनहेगन, आइसलैंड आदि स्थानों की यात्रा के अपने अनुभव एवं प्रतिक्रियाएँ व्यक्त की हैं। श्री निर्मल वर्मा मुख्य रूप से अपने उपन्यासों और कहानियों के माध्यम से जाने जाते हैं।
- थोर्गियेर का प्राग में यह अंतिम दिन था। वह एक घुमक्कड़ व्यक्ति था। मूलत: वह आइसलैंडी था। आइसलैंडी यायावर प्रकृति के होते हैं। अत: थोर्गियेर भी किसी स्थान पर एक साथ अधिक समय तक नहीं रह सकता था।
- कोपेनहेगन पहुँचकर लेखक ने अनेक होटलों में पता किया परंतु किसी होटल में उन्हें रहने का स्थान नहीं मिला। उन दिनों वहाँ सैलानी विद्यार्थी आए हुए थे जिस कारण भीड़ हो गई थी। अचानक थोर्गियेर को उसका एक मित्र मिल गया एंगुई।
- समुद्र का यह नशा और उल्लास ज्यादा दिन तक नहीं रह पाया। अचानक जहाज को प्रागैतिहासिक काल की बनैली आदिम लहरों ने लपेट लिया। ऐसा होता था जैसे कोई अदृश्य दानव 'गुलफॉस' को एक नन्हे से खिलौने के समान ऊपर नीचे उछाल रहा था।
- समुद्र के छोर पर क्षितिज के संग संग एक बहुत ही हल्की, मटमैली-सी रेखा दिखाई दी, यह आइसलैंड का पहला ग्लेशियर था। कुछ ही देर बाद दूसरा ग्लेशियर दिखाई दिया। सबके चेहरों पर अजीब-सी चमक और ताजगी आ गई।
- मोत्सार्ट प्राग वासियों में इतने लोकप्रिय थे कि उनकी मृत्यु का संवाद सुनकर हजारों निवासी यहाँ जमा हो गये किंतु वियना में उनकी अर्थी के साथ उनके इने-गिने मित्र ही गये थे। एक साधारण से कब्रिस्तान में उन्हें दफना दिया गया था।
- लेखक शिमला में अपने निवास का स्मरण करता हुआ कह रहा है कि बचपन में हम एक प्रश्न किया करते थे–इन पहाड़ों के पीछे क्या होगा? आज पता चला चाहे स्विटरजलैंड हो या शिमला सब के पहाड़ लगभग एक जैसे हैं।
- ऐसे लेखकों की संख्या दिन पर दिन कम होती जा रही है जो अपनी आस्था कमीज की आस्तीन पर लटका कर नहीं चलते। हर आइसलैंडी की तरह वे भी जिस चीज को जितनी गहराई और संवेदना से महसूस करते थे उसके संबंध में उतने ही रूखे और अनमने भाव से बातचीत करते थे।
- जब हम किसी व्यक्ति के पत्र पढ़ते हैं तो ऐसा प्रतीत होता है कि हम उसके व्यक्तिगत कमरे में प्रवेश कर गये हैं। पत्रों की अपनी विशिष्ट परिधि है। जिसकी सीमा रेखा एक ओर डायरी को छूती है, दूसरी कहानी को।
- निर्मल वर्मा का संकलन 'चीड़ों पर चाँदनी' एक संस्मरण गुम्फ है, जिसमें उन्होंने यूरोप के विभिन्न देशों की यात्रा के विवरण प्रस्तुत किए हैं। उनका उद्देश्य मूलरूप से स्मृति को पुनर्जागृत करके पाठक को उन सभी स्थानों से परिचित कराना है।
- अहिंसा की भावना उनके जीवन का एक अंग है। इसीलिए पिछले तीस-चालीस वर्षों से वहाँ चोरी अथवा डाके की एक घटना भी नहीं घटी। हत्या के संबंध में लोग भूल ही गये हैं।
- वह यदि स्वयं को कम्युनिस्ट घोषित करेगा तो आइसलैंड में उसका सम्मान होगा क्योंकि आइसलैंडी कम्युनिस्टों से जितनी नफरत करते हैं, उससे ज्यादा उनकी इज्जत करते हैं।

31.17 शब्दकोश (Keywords)

1. अर्सा – समय
2. फिजूल – बेकार
3. विचित्र – अजीब
4. हताश – परेशान

नोट

5. खिल्ली – मजाक
6. सैलानी – घूमने वाले
7. संजीदा – गंभीर
8. फर्ज करो – सोचो।

31.18 अभ्यास प्रश्न (Review Questions)

1. वर्मा जी ने 'रोती हुई मर्मेड का शहर' किसको कहा है?
2. 'धीरे-धीरे सभी लोग मृत्यु-शय्या से ग्रस्त हो गये।' इस पंक्ति का वर्णन अपने शब्दों में कीजिए।
3. प्रसिद्ध संगीतज्ञ मोत्सार्ट के निवास स्थान बर्त राम्का का लेखक ने किस प्रकार वर्णन किया है?
4. 'चीड़ों पर चाँदनी' से लेखक का क्या तात्पर्य है?
5. लेखक द्वारा लिये गये 'लेक्सनेस' के इन्टरव्यू के कुछ अंशों का अपने शब्दों में उल्लेख कीजिए।
6. निर्मल वर्मा के संकलन 'चीड़ों पर चाँदनी' का क्या उद्देश्य है?

उत्तर : स्व-मूल्यांकन (Answers : Self-Assessment)

1. आइसलैण्डी	2. नाटककार	3. निर्देशिका	4. यूरोपीय
5. (क)	6. (ख)	7. (ग)	8. सत्य
9. असत्य	10. सत्य	11. असत्य।	

31.19 सन्दर्भ पुस्तकें (Further Readings)

पुस्तकें चीड़ों पर चाँदनी–निर्मल वर्मा, राजकमल प्रकाशन, दिल्ली।

नोट

इकाई–32: 'चीड़ों पर चाँदनी' : भाषा-शैली एवं गद्यांशों की व्याख्या

अनुक्रमणिका (Contents)

उद्देश्य (Objectives)
प्रस्तावना (Introduction)
32.1 'चीड़ों पर चाँदनी' की भाषा
32.2 भाषा सम्बंधी विशेषताएँ
32.3 वाक्य रचना सम्बंधी विशेषताएँ
32.4 शब्द-शिल्प सौन्दर्य
32.5 'चीड़ों पर चाँदनी' की शैली
32.6 प्रमुख गद्यांशों की सप्रसंग व्याख्या
32.7 सारांश (Summary)
32.8 शब्दकोश (Keywords)
32.9 अभ्यास प्रश्न (Review Questions)
32.10 सन्दर्भ पुस्तकें (Further Readings)

उद्देश्य (Objectives)

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् विद्यार्थी योग्य होंगे–

- 'चीड़ों पर चाँदनी' की भाषा-शैली को समझने में;
- भाषा एवं वाक्य संबंधी विशेषताओं को जानने में;
- 'चीड़ों पर चाँदनी' के शब्द-शिल्प सौंदर्य की व्याख्या करने में;
- प्रमुख गद्यांशों की सप्रसंग व्याख्या की जानकारी प्राप्त करने में।

प्रस्तावना (Introduction)

'चीड़ों पर चाँदनी' संस्मरण विधा का एक महत्त्वपूर्ण संकलन है। संस्मरण की भाषा पत्रकारिता से उपजी है और पत्रकारिता की भाषा सीधी, वर्णन क्षम और अधिकांश रूप से अभिधा वाचक होती है जिससे उसे अधिक-से-अधिक व्यापक परिवेश मिल सके।

32.1 'चीड़ों पर चाँदनी' की भाषा

भाषा भावों की वाहिका है अर्थात् संस्मरणकार की स्मृति की अभिव्यक्ति भाषा के माध्यम से ही होती है। 'चीड़ों पर चाँदनी' की भाषा की समीक्षा करते समय हमें दो दृष्टियों से विचार करना होगा। लेखक की अपनी भाषा तथा

नोट

दूसरे उसके पत्रों द्वारा प्रयुक्त भाषा। दूसरे प्रकार की भाषा भी लेखक की अपनी ही भाषा होती है परंतु संस्मरणकार यथासंभव स्मृति के माध्यम से परिचित पात्रों की भाषा को यथावत् रखने का प्रयास करता है जिससे उनके मनोभावों, व्यक्तिगत गुणों एवं चारित्रिक विशेषताओं के दर्शन हो ही जाते हैं। जो भाषा लेखक वर्णन में प्रयोग करता है वह निश्चित रूप से उसकी अपनी भाषा होती है। किसी भी साहित्यिक रचना का मूल्य उसके अन्य गुणों के साथ ही भाषा-शैली से भी आँका जाता है। रचना में यदि भाषा प्रभावी मार्मिक एवं सहज संप्रेषणीय नहीं होगी उसे शब्दाडंबर की ही अभिव्यक्ति माना जाएगा जिससे रचना अपनी अर्थवत्ता खो बैठेगी।

'चीड़ों पर चाँदनी' की भाषा का अध्ययन करते समय उसके निम्नलिखित रूप सामने आते हैं–

(क) वस्तु-वर्णन में प्रयुक्त भाषा-रूप

1. सरल एवं स्वाभाविक बोलचाल की भाषा
2. अलंकृत एवं काव्यात्मक भाषा
3. गंभीर चिंतन-प्रधान भाषा।

(ख) संवादों में प्रयुक्त भाषा-रूप

1. साधारण बोलचाल की भाषा
2. शुद्ध, परिनिष्ठित भाषा
3. गंभीर चिंतन-प्रधान भाषा
4. अलंकृत और काव्यात्मक भाषा।

अब आगे इन पर सोदाहरण 'चीड़ों पर चाँदनी' के परिप्रेक्ष्य में विचार किया जाएगा।

(क) वस्तु-वर्णन में प्रयुक्त भाषा-रूप

1. सरल एवं स्वाभाविक बोलचाल की भाषा–सरल एवं स्वाभाविक बोलचाल की भाषा संस्मरण की भाषा का महत्त्वपूर्ण गुण है। यद्यपि लेखक ने ऐसी भाषा का प्रयोग सर्वत्र किया है फिर भी, एक उदाहरण द्रष्टव्य है–

"वह कई दिनों से हमारे आगमन की प्रतीक्षा कर रहे थे, किंतु उन्हें यह नहीं मालूम था कि हम आज ही उन्हें इतने अचानक तरीके से पकड़ लेंगे। उन्हें जब हमारी परेशानी का पता चला, तो चुपचाप सिर हिला दिया। अपने संग हमें बीच शहर के एक छोटे से होटल में ले गये। थोर्गियेर ने उनसे कहा कि यहाँ पूछताछ करना बेकार है, हमें पहले ही जवाब मिल चुका है कि कोई कमरा खाली नहीं। एंगुई ने कुछ नहीं कहा, सीधा होटल के दफ्तर में घुस गया। पाँच मिनट बाद आकर कहा कि हम अपने पासपोर्ट भीतर जमा करा दें, कमरा हमें मिल गया है।

इस यात्रा में चमत्कारों से पीछा नहीं छूटेगा। मैं आश्चर्य से एंगुई को देखता रहा। पाँच मिनट पहले हम सब आशा छोड़ बैठे थे। अब हमारे पास अपना कमरा था, दो गुदगुदे बिस्तर, ऊपर छत और ढेरमी नींद, जो प्राग से कोपेनहेगन आने तक रफ्ता-रफ्ता इकट्ठी होती गई थी।"

2. अलंकृत एवं काव्यात्मक भाषा–संस्मरण में आत्मीयता का तत्व विद्यमान रहता है। इसी रागात्मकता के कारण अभिव्यक्ति भी काव्यात्मक हो जाती है। लेखक के व्यक्तिगत संबंध उसमें भावनात्मक आंदोलन उपस्थित करते हैं और उस भावावेश की स्थिति में भाषा में काव्यात्मक गुणों का समावेश होना स्वाभाविक है। श्री निर्मल वर्मा एक लब्ध प्रतिष्ठित साहित्यकार हैं अत: किसी रचना में शास्त्रीय अलंकृत भाषा का आना भी स्वाभाविक है। 'चीड़ों पर चाँदनी' में उन्होंने अधिकांशत: प्रकृति दृश्यों को ही वर्णित किया है। प्रकृति वर्णन करते समय अभिव्यक्ति का काव्यात्मक होना अत्यंत स्वाभाविक है। लेखक ने कालका शिमला की पहाड़ियों का वर्णन करते समय काव्यात्मक भाषा का प्रयोग सुंदर रूप से किया है। जिसका एक उदाहरण द्रष्टव्य है–

"कमरे में हल्की, फीकी-सी चाँदनी बिखर आई थी। आँखें खिड़की के पार बीच के तरल अंधेरे को लाँघती हुई खिलनमर्ग की हिमाच्छादित चोटियों पर जा टिकीं। चाँदनी के छुईमुई से झिलमिलाते कण ऊपर से नीचे तक बर्फ पर फिसल रहे थे। सबकुछ एक दूसरे में चुपचाप सिमट आया था। लगता था जैसे संगमरमर के सफेद चूरे की हल्की-हल्की बारिश हो रही है। एक पीला उजला सा आलोक होटल के बाहर पोलोग्राउँड की घास पर फैलता हुआ हवा में बार-बार काँप उठता था। बादल, बर्फ, चाँदनी···तीनों के अलग-अलग रंग थे, अलग-अलग लय थी। उस क्षण मुझे लगा मानो किसी मायावी संगीत के चमकीले सुरों ने समस्त वन्य-स्थल को अपने स्वप्निल निस्पंद पंखों के भीतर समेट लिया हो, लगा था जैसे चाँदनी के रेशमी डोरों में खिंचती हुई खिलनमर्ग की बर्फीली पहाड़ियाँ होटल के कमरे के पास तक सरक आई हैं और खिड़की के बाहर हाथ फैलाते ही मैं उन्हें छू लूँगा।

पहाड़ों पर चाँदनी का यह अद्भुत मायाजाल मैंने पहली बार देखा था और एक अलौकिक विस्मय से मेरी आँखें अनायास मुँद गई थीं। उस रात मुझे लगा था कि पहाड़ों में भी साँप की आँख जैसा एक अविस्मृत जादुई सम्मोहन होता है···एक भुतैला-सा सौंदर्य, जो एक साथ हमें आतंकित और आकर्षित करता है। जिसके मोहपाश में बँधना उतना ही यातनामय है जितना उससे मुक्त होना।"

काव्य में किस प्रकार प्रकृति का मानवीकरण किया जाता है उसका एक संक्षिप्त-सा उदाहरण प्रस्तुत है–

"खिड़की के सामने पुराना चिर-परिचित देवदार का वृक्ष था, जिसकी नंगी शाखा पर रूई के मोटे-मोटे गोले-सी बर्फ चिपक गई थी। लगता था जैसे वह 'सान्ता क्लाज' हो। एक रात में ही जिसके बाल सन-से सफेद हो गये है। टेलीग्राफ की तार बर्फ की पर्तों में लिपटकर मोटी सफेद रस्सियों की तरह आकाश में खिंच आई हो–हर क्षण बाद इन रस्सियों की बर्फ के 'आइसिकल' फर में लिपटी सफेद गिलहरियों से नीचे लटक आते थे।

कुछ देर बाद धूप निकल आती है। नीले चमचमाते आकाश के नीचे बर्फ से ढकी पहाड़ियाँ धूप सेंकने के लिए अपना चेहरा बादलों के बाहर निकाल लेती हैं।"

3. **गंभीर चिंतन-प्रधान भाषा**–जहाँ संस्मरण लेखक विचारों की अभिव्यक्ति करता है तो उसका चिंतन पक्ष प्रबल हो जाता है, वहीं भाषा भी विचारों के अनुरूप गंभीर, परिष्कृत एवं चिंतन-प्रधान हो जाती है। इस प्रकार की भाषा का प्रयोग भी 'चीड़ों पर चाँदनी' में अनेक स्थानों पर हुआ है। लिदित्से के विषय में संस्मरण लिखते समय लेखक की विचार-प्रक्रिया का क्रम चालू हो जाता है और वह इस प्रकार सोचता है–

"सोचता हूँ क्या अर्थ है हमारे लिए लिदित्से का? हम जो दुनिया के दूर-सुदूर देशों से यहाँ आए हैं? हम सबने अरसा पहले अपने-अपने शहरों में लिदित्से का नाम सुना था। अपने-अपने ढंग से उसके विषय में सोचा था, किंतु इस क्षण लगता है, एक उड़ती हुई धुँधली अनुभूति हम सबको छू गई है। ऐसा कुछ जो जब कभी महसूस होता है, हम हठात् चौंक से पड़ते हैं। एक अजीब-सी छाया, जो जब सरसराती-सी हमें छू जाती है तो हमें लगता है जैसे हमारे भीतर एक अँधेरा खोखल-सा खुल गया है···।

क्या यह मृत्यु की छाया है? जिसने हमें लिदित्से की वीरान बस्ती में इतने नजदीक से स्पर्श किया है? किंतु अगस्त के इस दिन जब चारों ओर घनी शांत धूप फैली है, दूर पहाड़ियों पर अलसाये से इक्के-दुक्के बादल बिखर आए हैं? ऐसी शांत सुनहरी घड़ी में मृत्यु बहुत दूर की चीज लगती है, उसके बारे में कुछ भी सोचना असंभव-सा प्रतीत होता है।

यूरोप के शहरों में घूमते हुए मुझे यह अक्सर महसूस हुआ है कि इन लोगों के बीच मैं महज 'आउटसाइडर' हूँ–एक बाहर का आदमी। यूरोप के लिए फासिज्म का जो अर्थ रहा है, क्या मैं उसे कभी सही-सही समझ सकूँगा, महसूस कर पाऊँगा? आज वह उसकी आत्मा का एक हिस्सा है, पूरे अर्थ में 'एक पाप' जो सिर्फ अतीत की विरासत ही नहीं अपितु जिसे हर व्यक्ति कमोबेश अपने में लिये जीता है।

और तब लिदित्से के खंडहरों के बीच भटकते हुए मुझे पहली बार अपने लिए 'आउटसाइडर' शब्द अजीब-सा बेमानी लगा है। टूटी हुई दीवारों के मलबे के नीचे हम सबकी आत्मा का एक अंश दब गया है···क्योंकि जिस सदी

नोट

में हम जीते हैं, हममें से हर व्यक्ति उसका गवाह है और गवाह होने के नाते जवाबदेह भी···
शायद मैं गलत हूँ, किंतु लिदित्से से वापस लौट आने बाद मैं इस पर विश्वास करना चाहूँगा।"

टास्क 'चीड़ों पर चाँदनी' की भाषा पर अपने विचार व्यक्त कीजिए।

(ख) संवादों में प्रयुक्त भाषा-रूप

1. साधारण बोलचाल की भाषा–वर्णनों में निर्मल वर्मा ने कहीं-कहीं परिवेश के ध्वनन हेतु विचार प्रधान परिनिष्ठित भाषा का प्रयोग किया है परंतु सवाद प्राय: सहज, सरल बोलचाल की भाषा में ही लिखे हैं। हम देखते हैं कि वे बड़े ही सहज भाव से वार्तालाप में प्रयुक्त होते हैं। वर्णनों की अपेक्षा संवादों में भाषा की सहजता अधिक स्पष्ट होकर सामने आई है। इससे संस्मरणकार के संपर्क में आने वाले व्यक्ति भी जीवंत और स्वाभाविक होकर सामने आए हैं। उदाहरण के लिए निम्न संवाद प्रस्तुत हैं–

रायरवस्टैक की इमारत के सामने पहुँचने पर उसका स्वर फिर जीवंत हो उठा–"आपको मालूम होगा।" उसने कहा, "बल्गेरियन कम्युनिस्ट दित्रिट्रोव ने रायरवस्टाक को जलाने का षड्यंत्र किया था, किंतु हिटलर ने उसका भंडाफोड़ कर दिया।" उसके सुंदर सलोने चेहरे पर विजय मुस्कान खिल गई।

"लेकिन यह सच नहीं है।" मैंने कहा। बस में बैठे सब लोग मेरी ओर आश्चर्य से देखने लगे। मुझे लगा, जैसे उसका विरोध करके मैंने अत्यंत अपराध कर डाला है।

"क्या कहा आपने?" उसने मेरी ओर घूरते हुए कहा।

"दित्रिट्रोव के खिलाफ कोई सबूत नहीं मिला और उसे बाद में छोड़ दिया गया।" मैंने कहा।

"शायद, मुझे यह सबकुछ नहीं मालूम।" उसने लापरवाही से कहा। "बट वाजष्ट ही ए ब्लडी कम्युनिस्ट?"

जाहिर है मैं इससे इंकार नहीं कर सका। वह फिर जीत गया था। सब लोगों ने चैन की साँस ली।

2. शुद्ध, परिनिष्ठित भाषा–लेखक के साथ दुविधा यह है कि वह विदेशों में यात्रा करने निकला था अत: स्वाभविक रूप से उसके सभी वार्तालाप अंग्रेजी अथवा अन्य किसी विदेशी भाषा में हुए होंगे। संस्मरणों में उसने उन संवादों को स्मरण करके उनका हिंदी अनुवाद प्रस्तुत किया है। अनुवाद को सहज स्वाभाविक बनाने का उन्होंने यथासंभव प्रयास किया है परंतु फिर भी उसमें परिनिष्ठिता आ ही गई है। अनुवाद करते समय लेखक अपने हिंदी की शान को परे नहीं रख सका और भाषा की परिनिष्ठिता बनी रही।

साथ ही उसका संबंध अधिकांश रूप से साहित्यिक व्यक्तियों से ही हुआ। साहित्यकार किसी भी भाषा का प्रयोग करे उसके शुद्ध रूप पर ही अधिक बल देगा। एक उदाहरण इसी के अनुरूप देखें–

"उनके होंठो पर हल्की-सी व्यंग्य भरी मुस्कुराहट उभर आई। आपका मतलब है डेन्मार्क का आइसलैंड पर प्रभाव? शायद यह बात आपको अजीब लगे, लेकिन यह सच है कि आइसलैंड पर सैकड़ों वर्षों से डैनिश राजनीतिक प्रभुत्व के बावजूद डैनिश साहित्य या संस्कृति का हमारे देश पर कोई गहरा या स्थायी प्रभाव नहीं पड़ा। लेकिन यह कहना सत्य के काफी निकट होगा कि साहित्य और कला के क्षेत्र में डेन्मार्क को आइसलैंड से निरंतर प्रेरणा मिलती रही। यह तनिक आश्चर्य की बात है कि राजनीतिक प्रभुत्व और सांस्कृतिक प्रभाव हमेशा संग नहीं जाते।"

"आपने सृजन-प्रक्रिया में लेखक के अलगाव का प्रश्न उठाया है। अंतत: यह मनुष्य के अकेलेपन की समस्या है। मैं समझता हूँ यह समस्या पश्चिम के आधुनिक लेखकों को काफी पीड़ित करती रही है लेकिन मैंने आज तक

नोट

जिंदगी में यह अलगाव और अकेलापन महसूस नहीं किया। मैंने कभी यह महसूस नहीं किया कि मेरे और दूसरे लोगों के बीच ऐसी कोई खाई है, जिसे पार नहीं किया जा सकता है।"

"अकेलापन···" एक लंबे क्षण तक वे चुप रहे। मैंने देखा उनके माथे पर तीखी रेखाएँ खिंच आई हैं। फिर सहसा निर्णयात्मक लहजे में उन्होंने कहा, "नहीं, मैं नहीं समझता कि इस समस्या ने मुझे कभी पीड़ित किया है।"

"कुछ अरसा पहले अंग्रेजी नाट्य आलोचक टॉयनन से बातचीत करते हुए सार्त्र ने कहा था कि आज के युग में कोई भी प्रतिगामी लेखक महान् साहित्य की रचना नहीं कर सकता। इस संबंध में आप क्या सोचते हैं?"

"इस कथन से सहमत होना मुश्किल है। वैसे मैं स्वयं एक ऐसा लेखक हूँ जिसे लोग 'वामपंथी' या 'समाजवादी' कहते आए हैं। इसके बावजूद मैं सोचता हूँ अपने प्रतिगामी विचारों के रहते भी इलियट और काम्यू ने महान् रचनाओं की सृष्टि की है।"

3. गंभीर चिंतन-प्रधान भाषा–संस्मरणों में लेखक के सामने ऐसे कई क्षण आए हैं जब वह धर्म, राजनीति, व्यक्ति, फासिज्म आदि को लेकर गंभीर चिंतन करता है। साथ ही इस संबंध में विचार-विमर्श भी करता है, परंतु उसके अधिकांश विचारात्मक संवाद लेक्सनेस के साथ बातचीत करने पर ही स्पष्ट होते हैं। ऐसे अवसरों पर संवादों की भाषा भी गंभीर एवं चिंतन प्रधान हो जाती है। इसी आधार पर निम्न उदाहरण प्रस्तुत है–

"आज के प्रचार के युग में लेखकों की आवाज कोई विशेष महत्त्व या प्रभाव रखती है मुझे इसमें संदेह है। गंभीर साहित्य की ओर भला कितने लोग ध्यान देते हैं? 'लाइफ' और 'टाइम्स' की पत्रिकाएँ मेरी पुस्तकों से कहीं ज्यादा लोकप्रिय हैं। सस्ती फिल्में, रेडियो, टेलीविजन का गोरखधंधा लोगों के दिमागों पर इस कदर हावी है कि कुछ भी सोचने समझने का अवकाश इन्हें शायद ही कभी मिल पाता हो। मेरे विचार में आज भी प्रत्येक छोटे-बड़े देश में राजनीतिज्ञों का ही बोलबाला है। आम लोगों की नियति उनके दाँव-पेंच द्वारा ही नियोजित होती है। वैसे मेरे विचार में शुद्ध निश्चित रूप से नहीं होगा, इसलिए नहीं कि लेखक अपनी शक्ति से उसे टालने में सफल होंगे बल्कि इसलिए कि आज राजनीतिज्ञ भी अणु अस्त्रों की संहार शक्ति से डरते हैं। पहले या दूसरे विश्वयुद्ध से पूर्व कई देशों में युद्ध के प्रति काफी उत्साह पाया जाता था। आज मुझे कहीं किसी देश में वह दिखाई नहीं देता···।"

"आपका अभिप्राय है कि इस युग के लेखक एक असहाय गवाह होने के अतिरिक्त कुछ कर पाने में असमर्थ हैं?"

"मुझे संदेह है कि वह वस्तुस्थिति में कोई बुनियादी परिवर्तन कर सकता है। दूसरे युद्ध के आरंभ होने से पूर्व जर्मनी में अनेक ऐसे साहित्यकार थे, जिन्होंने फासिज्म का तीव्र विरोध किया था किंतु क्या उन्हें राजनीतिज्ञों की चालों के आगे कुछ भी सफलता मिल सकी?"

4. अलंकृत और काव्यात्मक भाषा–संस्मरण में काव्यात्मकता आना स्वाभाविक ही है परंतु संवादों में अलंकृत भाषा का प्रयोग कम हुआ है। प्राय: ऐसी भाषा स्वगत कथनों में ही प्रयुक्त हुई है। स्वगत-कथन भी एक प्रकार के संवाद हैं। वहाँ स्वयं व्यक्ति अपने निज से बात करता है अत: संवादों के अंतर्गत आत्मकथनों को लेना समीचीन ही होगा। एक उदाहरण द्रष्टव्य है–

"उस रात 'टेरर ऐंड मिजरी' देखते हुए मैं पहली बार समकालीन शब्द से परिचित हो पाया। यदि उसका कोई अर्थ है तो सिर्फ एक प्रयोग, जब आदमी के अस्तित्व की हर तह एक नये स्तर पर अप्रत्याशित अर्थ ग्रहण कर लेती है···जब बाह्य परिस्थिति एक बेडोल, विकृत छाया है (एक गूँगे दैत्य की मानिंद) जो न कुछ कहती है, न हमारे सामने से हटती है, एक असह्य-सा दबाव जिसे हर मनुष्य सोते जागते अपने पर महसूस करता है। कुछ लेखक हैं जो इस दैत्य से मुक्ति पाने के लिए उसे अपने एक आत्मपरक प्रतीक में ढाल लेते हैं। तब बाह्य इतना पराया, इतना डरावना नहीं रहता। काफ्का और एक दूसरे अर्थ में सार्त्र ऐसे ही लेखक हैं। यह एक रास्ता है, इस भयावह सुरंग से बाहर आने का, एक अमानवीय 'दैत्य' को निजी प्रतीक द्वारा साधारण औसत वास्तविकता में ढालने की प्रक्रिया।"

नोट

स्व-मूल्यांकन (Self-Assessment)

रिक्त स्थानों की पूर्ति करें (Fill in the blanks) :

1. संस्मरण में .... का तत्व विद्यमान रहता है।
2. संस्मरणों की भाषा सरल, रोचक तथा .... है।
3. पेरिस में घूमते समय लेखक .... की गलती से कमरे में बंद हो गया।
4. .... बोझिलता को कम करने के लिए लेखक ने अरबी, फारसी के शब्दों का प्रयोग किया है।

32.2 भाषा संबंधी विशेषताएँ

निर्मल वर्मा की भाषा विशेषताओं का पर्यवेक्षण करने पर हम पाते हैं कि उसमें निम्नांकित विशेषताएँ मुख्य रूप से मिलती हैं–

1. सरलता, रोचकता एवं प्रवाहपूर्णता–कोई भी रचना पूरी तरह से पढ़े जाने के लिए लिखी जाती है। इसलिए उसके प्रत्येक वाक्य और अनुच्छेदों में कुछ ऐसी व्यवस्था की जाती है कि पाठक रुचिपूर्वक उसे पढ़ता चले। इसके लिए आवश्यक है कि संस्मरण की भाषा सरल एवं प्रवाहपूर्ण हो। संस्मरण स्मृति को आधार बनाकर लिखा जाता है। उस स्मृति को काँट-छाँट कर रोचक बनाकर प्रस्तुत करना लेखक का कौशल है। संस्मरणकार लिखते-लिखते कभी कोई वाक्य या प्रसंग छोड़, जोड़ देता है, डॉट देता है, विस्मयादि चिह्न लगाता है, प्रसंग बदलता है। इस प्रकार से वह वर्णन को रोचक, सरल एवं प्रवाहपूर्ण बनाता है। 'चीड़ों पर चाँदनी' की भाषा में यह गुण हमें सर्वत्र मिलता है। संस्मरणों की भाषा सरल, रोचक तथा प्रवाहपूर्ण है। इसीलिए अपने परिवेश के ध्वनन में पूर्णतया सार्थक रही है और इन्हीं गुणों के कारण हमें सर्वत्र स्वाभाविकता परिलक्षित होती है और प्रत्येक प्रसंग को भली-भाँति समझने में सहायक भी हुई है। भाषा की ये विशेषताएँ वर्णन और संवाद दोनों में मिलती हैं। इसीलिए वर्णन एवं संवाद दुरूह न होकर सहज संवेद्य बन पड़े हैं।

2. प्रसंगानुकूलता–निर्मल वर्मा की भाषा की एक अन्य विशेषता उसकी प्रसंगानुकूलता है। प्रसंग के अनुरूप ही वह बदल जाती है। उस परिवेश का पूर्णरूपेण अनुभव पाठक को हो जाता है। चिंतन-प्रधान क्षणों में उसकी भाषा गंभीर, विचार प्रेरक तथा तत्सम शब्दावली युक्त होती है तथा भावुक क्षणों में भाषा चित्रात्मक एवं प्रतीकात्मक। इसी प्रकार के एक वर्णन में उनकी भावना प्रधान भाषा का अवलोकन करें–

"कितने कम याद रह पाते हैं चित्र, दीवार पर टँगे फ्रेमों में बंद खून और पसीने से लिथड़े स्वप्न और हम हैं कि हर कदम पर सदियों को पार करते जाते हैं। संग रह जाता है एक आभास। रंगों और आकृतियों से उत्पन्न हुई किंतु उससे अलग एक स्मृति। शून्यता को काटती हुई एक उड़ान, एक चीख, बंद सदियों की कुछ चाभियाँ, जिन्हें हम अपने संग ले आते हैं और बाद में खोलते हैं, अकेले में, अपने ही अकेलेपन को।"

3. प्रसाद एवं माधुर्य गुण संपन्नता–संपूर्ण पुस्तक को देखा जाए तो उसकी भाषा में प्रसादत्व एवं माधुर्य पाते हैं। कहीं-कहीं तो लेखक पूर्णतः कवि के सामने झुक गया है, वहाँ भाषा में माधुर्य का भाव स्वयंमेव आ जाता है। भावपूर्ण क्षणों में माधुर्य गुण की अजस्र धारा प्रवाहमान होती परिलक्षित होती है। उदाहरणार्थ एक वर्णन देखें–

"चट्टानों के शिखरों पर घास के कुछ टुकड़े हैं जिन पर सागर पक्षियों का झुंड चक्कर काट रहा है, उनकी छाया नंगी चट्टानों पर मँडराती है और गायब हो जाती है। रात के धुँधले आलोक में उनके फड़फड़ाते डैने जैसे किसी बहुत पुराने दुःस्वप्न के स्मृति अंश हों। मध्यरात्री की डूबती धूप में डबडबाये द्वीप ··· एक जबरदस्त चाह। सबकुछ एक स्वप्निल, अशरीरी छायालोक में लिपटा जान पड़ता है लेकिन देखें तो कुछ भी स्वप्निल नहीं, कुछ भी अशरीरी नहीं। अपने अनुभव पर ही अविश्वास होता है ··· क्या हम छू सकते हैं (पकड़कर रख सकते हैं?) उसको जो कभी दिबूसी की सिंपानी 'सागर' में छलछला आया था, स्वरों का फेनिल आलोक, फड़फड़ाहट (दिल की, पंखों की), क्रंदन

अपने निजत्व की सीमाओं को तोड़ता हुआ एक मदमाता ज्वार।

फिर एक अजीब-सी चाह, जिसका कोई तुक कोई अर्थ नहीं।

एक चाह, उस सीमा तक, जहाँ मृत्यु है।

टास्क निर्मल वर्मा के संस्मरण की भाषा की विशेषताओं पर प्रकाश डालिए।

4. **चित्रात्मकता**–संस्मरणकार अपने भोगे हुए क्षणों की स्मृतियों को साकार करता है और पाठक से यह अपेक्षा रखता है कि उसके अनुभवों का सहभागी बने। अत: यह अत्यंत आवश्यक है कि अपने वर्णनों में चित्रात्मकता का समावेश करे जिससे दृश्य पाठक की कल्पना में साकार हो उठें। 'चीड़ों पर चाँदनी' में प्रकृति तथा वातावरण के दृश्य चित्रोपमता से युक्त हैं। एक उदाहरण इस संदर्भ में प्रस्तुत है–

"हवा सचमुच धुले काँच की तरह पारदर्शी है, इतनी साफ और हल्की कि उसे जेब में ठूँसकर दिल्ली ले जाने का मन करता है। दुख इतना ही है कि आसपास कहीं भी एक पेड़, हवा में सरसराता एक भी पत्ता नहीं दिखाई देता। चारों ओर वनहीन नंगी धरती का फैलाव। जन्म से मैं पहाड़ी हूँ, वृक्षों के बिना हमेशा मुझे अजीब-सी रिक्तता का आभास होता है। किंतु जंगल नहीं है, इस अभाव की पूर्ति मानो आसपास फैला मांसल, लगभग मन-स्पर्शी वायुमंडल कर देता है। धरती खुली और अबाध धरती की रूपरेखा इतनी कोमल और सुडौल हो सकती है, इसकी कल्पना कभी नहीं की थी। पेड़ों का होना, यह अपना सुख है, लेकिन इस सुख से मैं परिचित हूँ। उनके न होने से जो एक विशाल हल्कापन चाकू की-सी चमकीली धार सी, हवा में तिरते रंग, दूरी को निकट से देखने का मायावी चमत्कार, यह एक अलग अनुभूति थी, जिसका परिचय पहले कभी नहीं मिला। इसलिए मैं कहता हूँ कि हर यात्री को अपनी झोली खोलकर यात्रा करनी चाहिए। जो न मिले उसका दुख न करके जो मिले उसे समेटकर ही अपने भाग्य की सराहना करनी चाहिए क्योंकि यह मैं अपने अनुभव से जानता हूँ कि सुख का अभाव कभी दुख का कारण नहीं बनता, उल्टे एक नये अपरिचित सुख को जन्म देता है।"

5. **पात्रानुकूलता**–'चीड़ों पर चाँदनी' के संवादों की भाषा पात्रानुकूल है। प्रत्येक पात्र अपनी ही भाषा बोलता दिखाई देता है। अधिकांश पात्र विदेशी हैं अत: उनके संवादों में स्वभावत: अंग्रेजी के शब्द आ जाते हैं। साथ ही लेखक का परिचय अधिकांशत: साहित्यिक लोगों से हुआ था अत: भाषा में साहित्यिक पुट भी दिखाई अवश्य पड़ता है। उदाहरणार्थ–

और तब मैंने सुना, पीछे से कोई कह रहा है–

"हैलो, एन इंडियन?"

"या", मैंने कहा।

"वांट सम बियर?"

"मे बी सम।"

उसने अपने गिलास से थोड़ी-सी बियर मेरे गिलास में उड़ेल दी। उसका उच्चारण अमरीकी लड़कियों सा था। मुझे यह जानकर खुशी हुई कि मुझे उसके संग इशारों से बात नहीं करनी पड़ेगी।

"प्योर इंडिया" उसने अपना गिलास हवा में उठाया और मेरे गिलास से छू दिया ···· "प्योर?" मेरी प्रश्नभरी निगाहें उसके चेहरे पर उठ गईं। मैंने सोचा था वह इंग्लैंड या अमेरिका कहेगी। उसने फिर अपना गिलास उठाया और धीरे से कहा–"कैनाडा।"

नोट

इस तरह लेखक के साहित्यिक मित्रों की बातचीत की भाषा उनके अनुकूल ही है–

"दो साल पहले मैं कुछ भी नहीं समझती थी। महज दिन-रात एक फिजूल-सी बेचैनी महसूस करती थी और अब ····" वह क्षणभर रुकी मानो शब्दों को टटोल रही हो। "और अब कभी-कभी लगता है जैसे मैं अपनी तरफ से जिंदगी को माने दे सकी हूँ ····"

"अपनी तरफ से?"

"हाँ, क्योंकि सूक्ष्म अर्थ में मुझे अपने काम से ज्यादा सुकून नहीं मिलता।"

उसकी आवाज हल्के से सिहर गई।

"पिछले साल मैं अल्जीरिया गई थी सिर्फ चंद हफ्तों के लिए। गाँव के गाँव तबाह हो गए हैं वहाँ ···· हजारों आदमी बिना घर-बार के, सड़कों पर भूखे और बीमार बच्चे। 'मानव उत्पीड़न', पहली बार मुझे इस शब्द के सही माने पता चले।"

6. **वर्णन विचित्रता**–निर्मल वर्मा की भाषा कई स्थलों पर विस्तार को समेटने के लिए घटनाओं को आगे सरका देती है। उससे एक तो पाठकीय श्रम बचता है, दूसरे भाषा में वर्णन वैचित्र्य आ जाता है। पेरिस में घूमते समय वह एक दिन दुबुआ की गलती से कमरे में बंद हो गया परंतु उसने उस बात को अधिक विस्तार नहीं दिया। पूरे एक दिन वह कमरे में बंद रहे परंतु लौटकर आने पर उसने दुबुआ से शिकायत या बंद करके जाने की अधिक व्याख्या नहीं की।

"जब दुबुआ लौटे, तो रंग दूसरा ही था। इससे पेशतर कि मैं कुछ कह पाता, वह मुझे बिस्तर पर घसीट कर नाचने लगे थे। पीकर आए थे और पूरी आवाज में गा रहे थे। उनके मित्र प्लूम कोने में कुर्सी घसीटकर बैठ गए थे और बराबर हँसते जा रहे थे। जब वह कुछ बोलने लायक हुए तो पहली बार गेगरीन का नाम कानों में पड़ा। दुबुआ के उत्साह की कोई सीमा नहीं थी। पहली 'स्पेस यात्रा' की खुशी कहाँ और किस तरह मनायी जाए, देर तक इसी पर विवाद होता रहा। सीढ़ियों के नीचे उतरते हुए भी हम चीखते-चिल्लाते इसी विषय पर बहस कर रहे थे। प्रस्ताव रखने की देर न होती कि उसे ठुकरा दिया जाता।"

32.3 वाक्य रचना संबंधी विशेषताएँ

1. **संक्षिप्त और चुस्त वाक्य रचना**–'चीड़ों पर चाँदनी' का वाक्य रचना का स्वरूप प्रायः संक्षिप्त और चुस्त है। न तो उसमें शैथिल्य है न ही अधिक विस्तार। इस कारण उसमें अर्थ गाम्भीर्य एवं कसाव आ गया है। निर्मल वर्मा की वाक्य रचना संबंधी यह विशेषता वर्णन में भी है और संवादों में भी। सुविधा के लिए दोनों प्रकार की वाक्य रचना के उदाहरण प्रस्तुत हैं–

"स्काउल!" अचानक मेरे सामने बियर का गिलास उठाया गया। मेरे गिलास को अपने गिलास से टकराते हुए उनकी अजनबी आँखें मुझ पर उठ आयीं। छोटी सी 'गोरी' दाढ़ी बियर के सफेद भाग में भीग रही थी।

"कहाँ के रहने वाले हो?"

"हिंदुस्तानी।"

"यहाँ कैसे आना हुआ?"

"जहाज की प्रतीक्षा कर रहा हूँ ··· आइसलैंड के लिए।"

"आइसलैंड!" एक अजीब विस्मय का भाव चेहरे पर सिमट आया, जैसे उन्हें मेरी बात पर विश्वास ना हुआ हो।

"क्या करोगे आइसलैंड जाकर?"

"खास कुछ नहीं।"

"मेरा मतलब है ··· आइसलैंड ही क्यों?" और मैंने पहली बार उनकी ओर ध्यान से देखा ··· भूरी दाढ़ी के बीच दो आँखें एक अर्थहीन मुस्कराहट में चमक रही थीं। वह कुर्सी खींचकर मेरे निकट खिसक आए और दबे स्वर में लगभग फुसफसाते हुए उन्होंने पूछा, "तुम कम्युनिस्ट हो?"

इस प्रकार मेरी रूखी उत्सुकता एक गहरे कौतूहल में बदल गई। बियर का घूँट लेकर मैंने जानबूझकर रहस्य-भरे लहजे में उनसे पूछा, "यदि हूँ तो ··· ?"

"यदि न भी हो तो आइसलैंड जाकर जरूर बहाना करना होगा कि तुम कम्युनिस्ट हो ··· यह मेरी नेक सलाह है और कुछ नहीं।"

"लेकिन क्यों?"

"यह ज्यादा इज्जत की बात मानी जाती है। आइसलैंडी कम्युनिस्टों से जितने नफरत करते हैं, उससे ज्यादा उनकी इज्जत करते हैं। विरोधाभास है न?"

इसी प्रकार वर्णन में भी संक्षिप्त वाक्य रचना का प्रयोग किया गया है। एक उदाहरण प्रस्तुत है–

"स्मृतियों में वे जिप्सी स्मृतियाँ हैं, जिनका कोई घर ठिकाना नहीं। भीतर हमें बच-बचकर रास्ता बनाना पड़ा। बियर के गिलास से आँखें ऊपर उठीं। एक हल्की-सी मुस्कुराहट उनके होंठों पर आ सिमटी। मैंने सोचा उन्हें शायद कोई नई हँसी-मजाक की बात सूझी है। किंतु वे चुप रहे। सिर्फ गिलास पर मुस्कुराहट की छाया झूलती रही।"

टास्क लेखक को दुबुआ द्वारा कमरे में बंद कर दिये जाने की घटना का वर्णन कीजिए।

2. **प्रभावात्मक लंबे-लंबे वाक्य**–प्रभाव की सृष्टि करने के लिए निर्मल वर्मा ने अनेक स्थानों पर लंबे-लंबे वाक्यों की संयोजना की है। इन लंबे-लंबे वाक्यों द्वारा लेखक की मन:स्थिति एवं वातावरण की सृष्टि सुंदर रूप ले सकी है। जैसे–

"चट्टानों के शिखरों पर घास के कुछ टुकड़े हैं, जिन पर सागर पक्षियों का झुंड चक्कर काट रहा है, उनकी छाया नंगी चट्टानों पर मँडराती है और गायब हो जाती है, रात के धुँधले आलोक में उनके फड़फड़ाते डैने जैसे किसी बहुत पुराने दु:स्वप्न के स्मृति अंश हों। मध्य रात्री में डूबती धूप में डबडबाये द्वीप ···· एक जबरदस्त चाह। सबकुछ एक स्वप्निल, अशरीरी छायालोक में लिपटा जान पड़ता है, लेकिन देखो तो कुछ भी स्वप्निल नहीं, कुछ भी अशरीरी नहीं ···· अपने अनुभव पर ही विश्वास होता है ···· क्या हम छू सकते हैं (पकड़कर रख सकते हैं)?"

3. **कलात्मकता और सुघड़ता**–निर्मल वर्मा की वाक्य रचना बड़ी कलात्मक और सुघड़ दृष्टिगत होती है। कहीं-कहीं काफी छोटे वाक्यों द्वारा लेखक ने कलात्मकता की सृष्टि की है जिससे प्रभाव क्षमता में वृद्धि हुई है। कहीं-कहीं लंबे वाक्यों द्वारा इस कलात्मकता को उत्पन्न किया गया है। चूँकि यह गुण पुस्तक में सर्वत्र उपलब्ध होता है इसका उदाहरण देना इसीलिए उचित नहीं।

32.4 शब्द-शिल्प सौंदर्य

निर्मल वर्मा की भाषा के शब्द सौंदर्य का वर्णन करने के लिए हमें रचना में प्रयुक्त शब्दों, मुहावरों, अलंकारों आदि को देखना पड़ेगा। इस दृष्टि से निर्मल वर्मा जी की भाषा में प्रयुक्त शब्द प्रसंगानुकूल अनेक रूपों तथा भाषाओं के मिलते हैं। उनका संक्षिप्त आकलन नीचे दिया जा रहा है–

1. **हिंदी के तत्सम शब्दों का प्रयोग**–'चीड़ों पर चाँदनी' की भाषा में तत्सम के अनेक शब्दों का प्रयोग किया गया है जिससे भाषा में गरिमा एवं उदात्तता आ गई है। ये शब्द शुद्ध एवं परिनिष्ठित हिंदी का निर्माण करने में सहायक

नोट

हैं। जैसे–अयथार्थ, स्वप्निल, आलोक, विस्मय, मंत्र-मुग्ध, भीमकाय, प्रतिक्रिया, संस्कृति, अखंडित, प्रवाहित, विशिष्ट, संदर्भ, सम्पृक्त, वैविध्य, अर्थ, सूक्ष्मतम, पुनरुत्थान, जागरण, प्रस्फुटित, परिपक्व, संदिग्ध, भविष्य।

2. हिंदी के तद्भव शब्दों का प्रयोग–प्रभावोत्पादकता उत्पन्न करने एवं स्वाभाविकता, परिवेशगत स्वाभाविकता लाने के लिए कहीं-कहीं निर्मल वर्मा ने हिंदी के तद्भव शब्दों का प्रयोग भी किया है। इससे भाषा का रूप निखर आया है–उदाहरणार्थ : 'अंधड़, घोटने वाला, दम उखाड़ना, हथियाना, दुतल्ला, उजड़ा, सिमटी, झुर्रियाँ, तपती, गर्माहट आदि।

3. अरबी, फारसी-शब्द–भाषागत बोझिलता को कम करने के लिए निर्मल वर्मा ने कई स्थानों पर अरबी, फारसी के शब्दों का प्रयोग किया है जिससे भाषा में सहजता तथा स्वाभाविकता आ जाती है। जैसे–फुरसत, होश, शामिल, दरवाजे, जिंदगी, वक्त, गुजरना, खोयी-सी, हकीकत, चीज, अक्सर, सिर्फ, महसूस, औसत, बिल्कुल, सदी, हैसियत, दीवार, अजीब, लापरवाही, आबादी, निगाह, वीरान, मानिंद, फासले, मलबा, मुद्दत, इमारतें, चारदीवारी, साबुत, महज, हैरत, बिस्तर आदि।

4. अंग्रेजी शब्दों का प्रयोग–लेखक ने अपने यूरोप यात्रा के संस्मरण 'चीड़ों पर चाँदनी' में संकलित किये हैं, इसलिए अंग्रेजी भाषा के शब्दों का आना स्वाभाविक ही था। कहीं-कहीं तो लेखक ने संवादों में पूर्णत: अंग्रेजी भाषा का ही प्रयोग किया है। जैसे–थियेटर, फासिस्ट, फोटोग्राफी, प्लेटफार्म, स्काउल, एक्सप्रेशनिस्ट पेंटिंग इंडिपेण्डेन्ट पीपुल, ब्लैकडेथ, ट्रेन, कोन्याक, नॉयलान, पेम्फलेट, स्ट्रिपटीज, नाइट क्लब, बल्गेरियन, फासिज्म, नेवर अगेन, मिनिस्टरी, बट वाजंट ही ब्लडी कम्युनिस्ट, किस्टोपार, डफल बैग, हिच-हाइकिंग, लिफ्ट, रोमाटिक, वेटिंग रूम, मेरी गो एराउंड, आरियंटल, प्रिजर्वेटिव, पिक्चर पोस्टकार्ड, कंसर्ट, क्लॉक रूम, आयरन कर्टेन, बट डोंट यू नो इट इज बिहाइंड आयरन कर्टेन, रियली इत्यादि।

5. मुहावरे और लोकोक्तियाँ–निर्मल वर्मा ने यत्र-तत्र मुहावरों आदि का प्रयोग किया है जिससे भाषा में प्रवाह एवं चमत्कार उत्पन्न हो गया है। कुछ मुहावरे द्रष्टव्य हैं–उबल पड़ना, ताकना, खिल्ली उड़ाना, आँख दिखाना इत्यादि।

6. सूक्तियों का प्रयोग–भाव सबलता के लिए लेखक ने कई विचारकों के विचारों को उद्धृत किया है जिनमें से कुछ निम्न हैं–

1. हजारों मील की यात्रा एक छोटे कदम से आरंभ होती है।
2. ब्राथल्स ग्रो व्हेयर सेलर्ज गो (जहाँ नाविक वहाँ वेश्यालय)।
3. हर जाति अपने जीवन-सौंदर्य को अभिव्यक्त करने का साधन चुन लेती है।
4. बीच यात्रा में मुहब्बत से बचना चाहिए।

7. अलंकारों का प्रयोग–निर्मल वर्मा कवि हृदय युक्त व्यक्ति हैं, अत: उनकी भाषा में काव्यात्मकता अधिक है। संस्मरण में काव्यात्मकता होना उसका एक आवश्यक गुण है। काव्यात्मकता आने से अलंकारों का सहज प्रयोग भी संभव है। अत: लेखक ने अनेक स्थानों पर अलंकारों का प्रयोग किया है जैसे–

1. रिक्याविक का शहर उस प्रेमिका की मानिन्द है जिसकी सही पहचान चेहरे में न होकर समूची देह में छिपी है।
2. ये ख्याल बादलों की तरह बह आते हैं।
3. दीवार पर टंगे फ्रेमों में बंद खून और पसीने में लिथड़े स्वप्न।

32.5 'चीड़ों पर चाँदनी' की शैली

निर्मल वर्मा के संस्मरण संकलन में लेखक ने अनेक प्रकार की शैलियों का प्रयोग किया है। यद्यपि संस्मरण की शैली संस्मरणात्मक वर्णन शैली ही अधिक होती है परंतु लेखक ने विविधता लाने के लिए इसमें अनेक शैलियों का

नोट

समावेश किया है जिससे रचना सरस और रोचक हो गई है। रचना में निम्न प्रकार की शैलियाँ मिलती हैं–

1. वर्णनात्मक शैली
2. नाटकीय शैली
3. पत्रात्मक शैली
4. भावात्मक-रसात्मक शैली
5. चित्रात्मक शैली।

अब आगे इन पर 'चीड़ों पर चाँदनी' के आधार पर सोदाहरण विचार किया जाएगा।

1. **वर्णनात्मक शैली**–संस्मरण पुरानी घटनाओं का स्मरण कर उसे पुनः प्रस्तुत करने की विधि है। अतः इसमें सबसे उपयोगी शैली यही वर्णनात्मकता ही है। इस शैली में लेखक घटनाओं, चरित्रों आदि का वर्णन करता चलता है। लेखक की विशेषता यह है कि इस शैली का प्रयोग करते हुए भी इसमें न तो शैथिल्य आया है न ही पुरानापन वरन् इसमें सर्वत्र नयापन विद्यमान है। इसका एक उदाहरण प्रस्तुत है–

"आइसलैंड यूरोप का अकेला देश है, जिसकी अपनी कोई सेना नहीं। वैसे भी एक देश के लिए जिसकी जनसंख्या दिल्ली के एक इलाके करोल बाग की आबादी की भी चौथाई है, अलग से सेना रखना काफी अर्थहीन है। आइसलैंड के निवासियों के लिए सेना, सैनिक अनुशासन हमेशा उपहास का विषय रहे हैं। कई चीजें हैं जिसकी कल्पना मैं कभी नहीं कर सकता। आइसलैंडी के फौजी पोशाक में 'मार्च' करते हुए देखना उनमें से एक है। तोपों और बंदूकों से कभी उन्हें अपने देश की रक्षा करने की आवश्यकता नहीं पड़ी। शायद इसी कारण जब अमरीकी सेनाओं ने उनकी रक्षा के लिए अड्डे स्थापित किए तो किसी आइसलैंडी को उनकी उपयोगिता पर अधिक विश्वास नहीं हुआ। इस संदर्भ में लेक्सनेस का एक वाक्य याद आता है।"

"मुझे अमरीकी बहुत अच्छे लगते हैं, यदि उनसे फौजी पोशाक में अपने देश में न मिलना पड़े।"

टास्क 'चीड़ों पर चाँदनी' में वर्मा जी द्वारा प्रयुक्त शैली पर अपने मत प्रकट कीजिए।

2. **नाटकीय शैली**–संवादों में निर्मल वर्मा की नाटकीय शैली द्रष्टव्य है। संवादों में जहाँ भी कथा का पूर्वा से संबंध होता है नाटकीयता आ जाती है और वहाँ नाटकीय शैली का प्रयोग किया गया है। लेखक का एलिस से वार्तालाप इसी शैली में लिखा गया है–

"नाट डान्सिग?" ऐलिस ने मेरी ओर देखा।

"और तुम?"

"मुझे बियर ज्यादा अच्छी लगती है।" ऐलिस उम्र में कुछ ज्यादा बड़ी है, लेकिन उसकी मुस्कुराहट में बच्चों की निरीहता झलकती है। एवलिन एक इराकी के संग नाचने के लिए कुर्सी से उठ खड़ी हुई किंतु उसके हाथ में बियर का गिलास अब भी झूल रहा है।

"मुझे डर है मेरे जाने के बाद तुम सारा गिलास खाली कर दोगे।" उसने मुझसे कहा।

"गुड लक एवलिन!" ऐलिस ने कहा।

पियानो पर नीग्रो युवक ने एक नई धुन छेड़ दी और एवलिन कुछ देर के लिए भीड़ में खो-सी गई।

मैं और ऐलिस बातें करने लगे। वह कैनाडा में सोशल वर्कर है और पहली बार यूरोप आई है।

नोट

"लगता है यह मेरा अपना फेस्टीवल है।" उसने कहा।

"कुछ दिनों के लिए एवलिन के साथ साल्जवर्ग जाऊँगी। फिर होम स्वीट होम ···।"

"यहाँ मैंने तुम्हें पहली बार देखा है क्या तुम रोज आती हो?"

"हाँ ···· हर रात। जानते हो कैनाडा में मैं उतने लोगों से खुलकर नहीं मिल पाती थी। यहाँ अभी तक मैंने पचास इराकियों को मित्र बनाया है। हम हर रोज सोचते हैं, आज किस देश के प्रतिनिधियों को फ्रेटर्नाइज किया जाए, बट यू आर द फर्स्ट इंडियन।"

3. **पत्रात्मक शैली**–रचना यद्यपि स्वतंत्र संस्मरणों का समूह है फिर भी लेखक की शैली एक-सी रही है। कहीं पत्रों के माध्यम से वह अपनी बात को प्रस्तुत करते हैं। जैसे–

"तुम्हें मेरी कहानियों के पात्र बहुत उदास और दुखी जान पड़ते हैं। यह मैं जानबूझकर नहीं करता। लिखते समय स्वत: हो जाता है। मैं अपने को दुखी व्यक्ति नहीं मानता। कम से कम लिखते समय मैं अपने आप को हमेशा सुखद मन:स्थिति में पाता हूँ। यह बात हमेशा नोट की गई है कि लोग स्वभावत: दुखी और निराश होते हैं। वे बहुधा हल्की-फुल्की और हँसी-मजाक की चीजें लिखते हैं जबकि शांत और सुखी लेखकों की कृतियाँ अक्सर अवसादपूर्ण होती हैं। मैं एक ऐसा ही प्रसन्न व्यक्ति हूँ, कम से कम मैंने अपनी जिंदगी के आरंभिक तीस वर्ष आराम से बिताए हैं।"

4. **भावात्मक-रसात्मक शैली**–संस्मरणों का संबंध चूँकि प्रकृति से होता है, अत: उसमें काव्यात्मकता आना स्वाभविक ही है। लेखक ने संस्मरण की वस्तु के साथ काव्यात्मकता का इस प्रकार सायुज्य बिठाया है कि उसकी भाषा गरिमापूर्ण ओज प्रधान बन गई है इसके लिए लेखक ने रसात्मक भावात्मक शैली को व्यवहृत किया है। एक उदाहरण इस प्रकार की शैली का द्रष्टव्य है–

"फिर आखिरी लम्हा–और तब उसके इर्द-गिर्द सबकुछ डूब जाता है–हमारा प्यार, आधी रात में जागे हुए पसीने में लथपथ स्वप्न, एक पगली-सी धड़कन और फिर वह भी नहीं जो शेष रह जाता है, देर तक हवा में टँगा रहता है वह है एक अजनबी अपनापन, जिसे हमने पहले कभी नहीं देखा जिसे हमने पिछले चंद क्षणों में पहली बार जाना था और जो अगले चंद क्षणों में दुबारा अजनबी बन जाएगा। एक स्वरहीन आलोक।"

5. **चित्रात्मक शैली**–इस प्रकार की शैली का प्रयोग 'चीड़ों पर चाँदनी' में बहुत हुआ है क्योंकि चित्रों के माध्यम से लेखक पाठक की स्मृति को जागृत कर उसके आगे दृश्य उपस्थित करने में सक्षम हो पाएगा। इसके द्वारा लेखक ने प्रकृति का वातावरण भी सुंदरतापूर्वक व्यक्त किया है। प्रस्तुत है चित्रात्मक शैली का एक उदाहरण–

"बीहड़ रास्ता, कहीं-कहीं बहुत तंग और छोटे पुलों पर हिचकोले खाते हुए हमारी लॉरी को घसीटना पड़ता था। कई बार ऐसा जान पड़ता था कि मोटर शेड को बीच में ही नाले परनाले ने ग्रस लिया है। बीच नाली की धार में आकर बस के पहिए अड़ जाते थे। जूते-मोजों को उतारकर और पतलूनों के पहुँचे चढ़ाकर हम पानी के भीतर घुस पड़ते थे। बस को आगे धकेलते हुए जान पड़ता था जैसे पानी की बर्फीली धार काँच के टुकड़ों सी हमारे नंगे पैरों को छील रही है। खाँसती-खँखारती लॉरी आगे बढ़ती थी और हम हाथों से नीले सिकुड़े पैरों को सेंकते हुए खिड़की के बाहर देखने लगते थे–बाहर जहाँ दिन की मंद पड़ती हुई रोशनी अँधेरे को महज छू-भर लेती थी, लेकिन वास्तव में अँधेरा कहीं नहीं था। सिर्फ रोशनी की ही नरम, पीली-सी छाया थी जो दिन के आलोक पर पतले छिलके सी उतर आती थी।"

निष्कर्ष

निष्कर्षत: कहा जा सकता है कि निर्मल वर्मा की भाषा-शैली अत्यंत उत्कृष्ट, सुघड़, कलात्मक एवं प्रवाहपूर्ण है। इसमें भाषा और शैली की विविधता दिखाई देती है किंतु जिस प्रकार अलग-अलग संस्मरण होते हुए भी उसमें ऐक्य है उसी प्रकार भाषा शैली की विविधता होते हुए भी आंतरिक संघटन है। संस्मरणों की भाषा क्लिष्ट, काव्यात्मक

है परंतु साधारण बोलचाल की भाषा एवं अंग्रेजी के शब्दों का प्रयोग करके लेखक ने उसे सरल बनाने का प्रयास किया है। संक्षेप में कहा जा सकता है कि किसी साहित्यिक रचना की भाषा में गुण होने चाहिए वे सभी 'चीड़ों पर चाँदनी' में उपलब्ध हैं।

32.6 प्रमुख गद्याशों की सप्रसंग व्याख्या

1

"मुझे कई बार ऐसा लगता है कि जो समय सबके लिए, यहाँ के निवासियों के लिए बीत गया है, वह मेरे लिए अभी तक जीवित है, प्रतीक्षारत है और जब तक मैं उसे अन्य प्राणियों की तरह भोग नहीं लूँगा, वह मुझ से छूटेगा नहीं। गड़े मुर्दे? वह हर आदमी के भीतर होते हैं–जब कभी मध्य यूरोप से गुजरता हूँ मुझे उनका ठण्डा स्पर्श महसूस होने लगता है। मैं पूर्वाग्रह ग्रस्त नहीं हूँ किंतु आज भी मैं किसी जर्मन को देखता हूँ, तो मेरे भीतर एक फिजूल बेमानी-सी बेचैनी होने लगती है।"

प्रसंग–हिंदी साहित्य में संस्मरण विधा कतिपय नवीन विधाओं में से एक है। उसमें किसी व्यक्ति, स्थान अथवा घटना से जुड़ी स्मृतियों को पुनर्जीवित करके पाठक के समक्ष रखा जाता है। श्री निर्मल वर्मा ने 'चीड़ों पर चाँदनी' नामक संस्मरण संग्रह में अपनी यूरोप की यात्रा के अनुभव लिखे हैं। अलग-अलग स्थान पर उन्हें अलग तरह की अनुभूति होती है और वह उसकी उसी प्रकार से अभिव्यक्ति करते हैं। यहाँ वह आइसलैंड जाते हुए रास्ते में बर्लिन रुके तो उनके हृदय में द्वितीय विश्वयुद्ध की स्मृतियाँ उभर आईं और उन्होंने कहा–

व्याख्या–जब तक व्यक्ति किसी घटना को भोग नहीं लेता वह उसके लिए व्यतीत नहीं होती। लेखक बर्लिन में गया है और विभाजित बर्लिन को देखकर उसके हृदय में द्वितीय विश्वयुद्ध की विभीषिका का आतंक भर आया। वह मानते हैं कि वह युद्ध का समय संभवत: यूरोप वासियों के लिए बीत गया है क्योंकि वे उस अनुभव से गुजर चुके हैं। वह अनुभव इतना पीड़ादायक था कि वे उसे पुन: दोहराना नहीं चाहते परंतु लेखक ने उसके विषय में मात्र सुना था। वह उसके जीवन का सत्य नहीं है। अत: उसे यह प्रतीत होता है कि वह युद्ध का काल संभवत: अभी भी उसकी प्रतीक्षा कर रहा है। जब तक लेखक भी उसे पूरी तरह भोग नहीं लेगा, उसके लिए वह समय व्यतीत नहीं होगा, लेखक यह मानता है कि हर व्यक्ति के भीतर गड़े मुर्दे होते हैं। वे मुर्दे स्मृतियों के होते है कि अनचाही स्मृतियों का उसने दमन कर लिया होता है। परंतु उचित सहचर्य मिलने पर वे स्मृतियाँ पुन: जागृत हो जाती हैं। उन गड़े मुर्दों का ठण्डा स्पर्श लेखक को तब महसूस होता था जब वह मध्य यूरोप में जाता था। इसकी स्मृति में वे दृश्य जागृत हो जाते थे जब लाखों यहूदियों की सामूहिक निर्मम हत्या की गई थी। लेखक कहते हैं कि उनके मन में जर्मनी के लोगों के प्रति कोई दुर्भावना नहीं है परंतु वह जब भी किसी जर्मन को देखते हैं उनके हृदय में अजीब-सी-निरर्थक सी व्याकुलता भर जाती है कि यही वह जाति है जिसके एक सदस्य ने विश्वविजय का झूठा स्वप्न देखा और उसे पूरा करने के लिए लाखों लोगों की नृशंस हत्या की।

टास्क लेखक ने 'ठण्डा स्पर्श' शब्द का प्रयोग किसके लिए किया है?

विशेष–प्रस्तुत पंक्तियाँ लेखक की राजनीतिक जागरूकता तथा मानवीय संवेदना की द्योतक हैं। यह एक मनोवैज्ञानिक सत्य है कि अनुभव से गुजरना ही व्यक्ति को अनुभवी बनाता है। कोई भी बात व्यक्ति की अपनी नहीं होती जबतक कि वह उसका भोगा हुआ यथार्थ न बने। 'गड़े मुर्दे' के माध्यम से लेखक ने 'अचेतन' सिद्धांत की मान्यता को स्पष्ट किया है। अचेतन विस्मृत स्मृतियों का पुंज है। उचित साहचर्य (associations) मिलने पर वे स्मृतियाँ पुन: जागृत हो जाती हैं इसीलिए लेखक ने उन भयावह स्मृतियों के लिए 'ठण्डा स्पर्श' शब्द का प्रयोग किया है।

नोट

संस्मरण व्यक्तिगत अनुभूतियों को स्थानीय अनुभवों से युक्त करके प्रस्तुत करने की कला है। इन पंक्तियों में लेखक की संवेदनशीलता एवं विचारशीलता के दर्शन होते है। शास्त्रीय ढंग से यदि भाषा का विश्लेषण करें तो पाएंगे कि प्रस्तुत गद्यांश की भाषा सहज, बोधगम्य एवम् साधारण बोलचाल की भाषा है जो प्रसाद गुण युक्त है। गड़े मुर्दे रूपकातिशयोक्ति अलंकार है तथा बेमानी-सी बेचैनी में आनुप्रासिकता है जिससे यह भी स्पष्ट हो जाता है कि लेखक की प्रवृत्ति काव्यात्मक अभिव्यक्ति की है। अपनी आत्मीयता को काव्य के माध्यम से प्रस्तुत करने की प्रवृत्ति लेखक में है जिसके उदाहरण हमें अन्य संदर्भो में उपलब्ध होंगे। मूल रूप से समकालीन होने तथा इसी कारण गवाह होने और फिर जवाबदेही होने की स्थिति लेखक की तत्कालीन मन:स्थिति की द्योतक है।

2

"धूल का अंधड़ आने से पूर्व जैसे समूचे शहर में एक पीला, दम घोटने वाला आशंकित धुंधलका, धुंधलका भी नहीं उजाले का गिलगिला-सा फैल जाता है, जब हम सूनी सड़क पर किसी अज्ञात घर की दीवार से सटे खड़े रहते हैं और हर वह चीज जो बहुत साधारण और परिचित है, एक भयावह विकृत छाया लिये सामने से गुजर जाती है, मेरे लिए मध्य यूरोप का यह बहुत पुराना, परिचित स्मृति चित्र है जो आज भी रेल की खिड़की के बाहर देखते हुए उभर आता है।"

प्रसंग–'चीड़ों पर चाँदनी' श्री निर्मल वर्मा द्वारा लिखित यात्रा विवरणात्मक संस्मरण संग्रह है। लेखक की चेकोस्लोवाकिया से आइसलैंड तक की यात्रा के अनुभव इनमें संकलित हैं। बर्लिन में से गाड़ी गुजर रही है और लेखक जर्मनी के अतीत के प्रेम से भयभीत है। उसकी भावनाएँ काव्यात्मक होकर इस प्रकार व्यक्त हो रही हैं।

व्याख्या–लेखक कह रहा है कि वह लंदन और पेरिस जाते समय कई बार जर्मनी के बीच से गुजरा है किंतु यहाँ उतरने का मन नहीं हुआ। सदैव उसके सामने कोई अदृश्य-सा भय, अजीब सी झिझक आकर खड़ी हो जाती है। उस अमूर्त भय का मूर्तिकरण करने का प्रयास करते हुए लेखक कह रहा है–जिस प्रकार धूलभरी आँधी आने से पूर्व वातावरण में एक अजीब-सा सूनापन, एक धुंधलका-सा छा जाता है, एक दम घोटने वाला, पीला (दुखपूर्ण) धुँधलका छा जाता है, मध्य यूरोप में प्रवेश करते समय लेखक को यही महसूस होता है कि उजाला नहीं उजाले का आभास है। अभी तक युद्ध, आतंक, भय का वातावरण है और उस भय के वातावरण में सभी चीजें अस्पष्ट हो जाती हैं। उस स्थिति में जब व्यक्ति उस अंधड़ से बचने के लिए सूनी सड़क पर किसी अज्ञात घर की सूनी दीवार का सहारा लेकर खड़े रहते हैं, वहीं स्थिति उसे मध्य यूरोप में घूमते हुए महसूस होती है कि युद्ध के इस वातावरण से बचने का कोई उपाय नहीं है। एक दीवार का सहारा आँधी से बचने के लिए काफी नहीं, उसी प्रकार यह विचार उसे निरंतर भयभीत करता रहता है। उस आँधी में साधारण-सी चीजों की छाया भी अत्यंत विकृत और भयावह हो जाती है। वही भयावह चित्र लेखक की आँखों में, उसकी स्मृति में छाया हुआ है जो रेल में बैठे हुए भी उसका पीछा नहीं छोड़ रहा।

विशेष–लेखक ने गद्य में काव्यात्मकता का समावेश कर दिया है। एक उपमा के माध्यम से अमूर्त को मूर्त कर देने का प्रयास किया गया है। एक अजीब-सा भय उन्होंने धूल के अंधड़ के माध्यम से मानो साकार कर दिया हो। साथ ही उसके अंतर्मन की भावनाओं का स्पष्ट निरूपण हमें इन पंक्तियों के द्वारा मिलता है। उनकी संवेदना उन्हें विश्वयुद्ध की विभीषिका का स्मरण दिलाती रहती है।

पद्यांश की भाषा संस्कृतनिष्ठ तथा अलंकारयुक्त है जिससे वैचारिक गरिमा का प्रभाव आ गया है। रेल की खिड़की के बाहर देखकर स्मृत चित्रों का उभरना चेतना प्रवाह शैली का सुंदर उदाहरण है।

स्व-मूल्यांकन (Self-Assessment)

बहुविकल्पीय प्रश्न (Multiple Choice Questions) :

5. लेखक के अनुसार उसने अपनी जिंदगी के कितने वर्ष आराम से बिताये हैं?

(क) बीस (ख) तीस

(ग) पन्द्रह (घ) इनमें से कोई नहीं।

6. 'चीड़ों पर चाँदनी' में निर्मल वर्मा ने कहाँ की यात्रा के अनुभव लिखे हैं?

(क) अमेरिका (ख) इंग्लैण्ड

(ग) यूरोप (घ) इनमें से कोई नहीं।

7. अनेक साहित्यिक एवं ऐतिहासिक ग्रंथों में 'सागा ग्रंथों' को कौन-सा स्थान प्राप्त है?

(क) सर्वोच्च (ख) तृतीय

(ग) द्वितीय (घ) इनमें से कोई नहीं।

3

"नाटक की समस्त परंपरागत मान-मर्यादाओं को तोड़कर उसे बीसवीं सदी के विशिष्ट प्रतीक के रूप में सर्वथा नया मोड़ देने वाला यह जर्मन लेखक एक फासिस्ट विरोधी, कम्युनिस्ट भी हो सकता है, पश्चिम के आलोचकों के लिए यह सदा एक विवाद का विषय रहा है। आश्चर्य नहीं कि अभी तक समाजवादी देशों में भी उनके क्रांतिकारी प्रयोगों का ठीक से मूल्यांकन नहीं हो पाया।"

प्रसंग–प्रस्तुत गद्यांश श्री निर्मल वर्मा द्वारा लिखित संस्मरण संग्रह 'चीड़ों पर चाँदनी' में से लिया गया है। इस संस्मरण का शीर्षक है 'ब्रेख्त और उदास नगर'। लेखक आइसलैंड जाते समय बर्लिन में रुके तथा वह वहाँ रहकर अपने समय का सदुपयोग करना चाहते थे। अत: उन्होंने यही उचित समझा कि इस रात को ब्रेख्त का नाटक देखकर गुजारा जाए। ब्रेख्त के विषय में अपनी राय व्यक्त करते हुए लेखक कहते हैं–

व्याख्या–ब्रेख्त जर्मनी के सबसे महान् नाटककार माने जाते हैं। उनकी तुलना शेक्सपीयर से की जाती है। नात्सी सत्ता स्थापित होने पर वह जर्मनी से बाहर चले गये। उन्होंने अपने सबसे महत्त्वपूर्ण और लोकप्रिय नाटकों की रचना देश से बाहर रहकर ही की। कम्युनिस्टों पर प्राय: संकीर्णता और कट्टरता का आरोप लगाया जाता है परंतु अपने नाटकों 'गेलिलियो' और 'मदर करेज' में जो उन्होंने प्रयोग किए हैं वे सराहनीय हैं। उन्होंने नाटक के समस्त स्थापित मानदंडों को तोड़ा तथा नाटक को अनेक प्रयोगों द्वारा युगानुरूप बनाने का प्रयास किया। उन्होंने शीतयुद्ध के रुग्ण वातावरण का विरोध करते हुए युद्ध के उपरांत पूर्वी जर्मनी में रहना स्वीकार किया। लेखक का मंतव्य है कि यदि वह पश्चिमी जर्मनी में होते तो उनकी योग्यताओं का पूर्णरूपेण मूल्यांकन हो पाता परंतु ऐसा संभव नहीं। पश्चिम के आलोचक 'लौह दीवार' के कारण उनके साहित्य से पूर्णतया परिचित नहीं हो पाये, यही कारण है कि उन्हें सदा यह आश्चर्य रहा कि एक कम्युनिस्ट भी महान् साहित्यकार हो सकता है। वास्तव में ब्रेख्त के नवीन प्रयोगधर्मी नाटकों का सही मूल्यांकन पूर्वी जर्मनी में भी नहीं हो सका। पश्चिम के आलोचक उनके साहित्य की सराहना करते हैं जब कि पूर्वी जर्मनी में उनके कम्युनिस्ट होने से ही उनका आदर हुआ, साहित्य के कारण नहीं। यह एक विडंबना है जो कम्युनिस्ट देशों के साथ लगी रहती है। वहाँ व्यक्ति के कृतित्व का निरपेक्ष रूप से मूल्यांकन नहीं होता अपितु उन सभी स्थितियों को भी देखा जाता है जिनमें वह लेखक रहता है। यदि उसके विचार सत्ता पक्ष के विचारों से मेल नहीं खाते, तो फिर वह कितना ही महान् लेखक हो, उसे स्वीकृति, मान्यता एवं सम्मान नहीं मिलेगा। लेखक ने इसे शीतयुद्ध का परिणाम कहा है जबकि यह वास्तव में कम्युनिस्ट शासकों की पूर्वाग्रहपूर्ण नीतियों का परिणाम है।

विशेष–लेखक ने इन पंक्तियों के द्वारा अपनी बहुज्ञता का परिचय दिया है। ब्रेख्त के विषय में उनकी जानकारी उनके नाटकों के प्रति उनकी रुचि, उनकी सांस्कृतिक अभिरुचि का परिचायक है। संस्करण में आत्मीयता का तत्व आना स्वाभाविक है। उस आत्मीयता से ही वह अपने निजी विचारों को प्रस्तुत कर रहे हैं। पूर्वी और पश्चिमी यूरोप में साहित्यिक मानदंडो में जो अंतर है, उसका विश्लेषण लेखक ने सुंदरतापूर्वक किया है। यह उनकी विश्लेषण क्षमता का द्योतक भी है। गद्यांश की भाषा सरल, प्रवाहमय एवं सारगर्भित है जिससे लेखक व्यक्तिगत मान्यताएँ आसानी से पाठक के सामने रख पाया है।

नोट

4

"नाटक मंच पर खेलने की चीज नहीं है वह जीने की सक्रिय कला है, हर परिचित पुरानी चीज को नये सिरे से छूने की अपेक्षा है ताकि हम उसे आज का, इस क्षण का धड़कता सत्य दे सकें। हकीकत ही तो नाटक है, सिर्फ उसे समकालीन दृष्टि से पहचानने की आवश्यकता है।"

प्रसंग–'चीड़ों पर चाँदनी' श्री निर्मल वर्मा के यात्रा-विवरणात्मक संस्मरणों का संग्रह है। इसमें उन्होंने अपनी आइसलैंड की यात्रा तथा उसके मध्य पड़ने वाले विभिन्न पड़ावों का सुंदर चित्र प्रस्तुत किया है। यात्रा के दौरान वह एक रात के लिए बर्लिन रुके तथा वहाँ 'बर्लिन एंसेम्बल' ब्रेख्त का नाटक देखा। उस नाटक के विषय में चर्चा करते समय लेखक ने नाटक को परिभाषित करने का प्रयास किया। उनका विचार है कि–

व्याख्या–नाटक मात्र मंच पर मंचित कर देने की चीज नहीं। अर्थात् यह केवल मनोरंजन की वस्तु नहीं, अपितु यह जीवन को समझने की एक नवीन दृष्टि प्रदान करता है। वह जीवन को जीना सिखाता है। वर्तमान काल में जीवन-मूल्यों की व्याख्या करके उन्हें कसौटी पर कसता है। यह जीवन जीने की एक कला है। नाटक का कार्य है कि हर नयी, पुरानी, परिचित चीज को उठाकर उसका मूल्यांकन करना और उनकी सत्यता प्रतिष्ठापित करना। परंपराओं का विश्लेषण करना, जीवन सत्यों के विषय में खोज करना नाटक का ही कार्य है क्योंकि नाटक का मुख्य आधार है मनुष्य और मनुष्य के क्रिया-कलाप ही नाटक की घटनाएँ बनती हैं। अत: मनुष्य के आचरण से उचित अनुचित का न्याय नाटक द्वारा संभव ही है। वस्तुत: नाटक प्रस्तुत को काल, परिस्थिति, लेखक की मन:स्थिति, सामाजिक मूल्यों एवं मर्यादाओं के आधार पर पुन: प्रस्तुत करने की एक विधा है। परिचित सत्यों को वर्तमान के जीवन सत्यों के आलोक में देखना, उसकी परीक्षा करना नाटक का कर्त्तव्य है। परंपराओं को प्रासंगिक बनाने के लिए नाटक उनमें से जड़ता, पश्चगामिता तथा प्रतिक्रिया के तत्व निकालकर उन्हें समकालीन बनाता है। आधुनिक काल में लिखे गये पौराणिक कथाओं पर आधारित उन्हीं मूल्यों को पुनर्विश्लेषित करने का ही एक प्रयास है। वास्तव में नाटक में कल्पना नहीं वास्तविकता ही मुख्य रूप से वर्तमान होती है। उसका सामाजिक यथार्थ ही उसे आधुनिक समकालीन एवं प्रासंगिक बनाता है। नाटक यदि आधुनिक काल में गद्य विधाओं में सबसे सशक्त विधा है तो उसका कारण यही है कि वह मूल्यों के उचित-अनुचित का न्याय उसके दोनों पक्षों को दिखाकर सुंदरतापूर्वक कर सकता है।

विशेष–प्रस्तुत गद्यांश लेखक की नाटक संबंधी मान्यताओं को प्रस्तुत करता है। लेखक ने स्वयं भी 'तीन एकांत' नामक नाटक की रचना की है। अत: वह नाटक की रचना-प्रक्रिया से परिचित है। उसकी यथार्थ धर्मिता तथा युगीन सत्यों को प्रस्तुत करने की क्षमता को वह मानते हैं। वस्तुत: समास शैली (सूत्र शैली) में लिखी गई ये पंक्तियाँ नाटक को, पूर्ण रूप से उसकी संवेदना को व्यक्त करती हैं। कोई भी नाटक उस समय तक अच्छा तथा प्रभावी नहीं हो सकता जब तक कि वह युगीन सत्य को व्याख्यायित करता हुआ उसका पक्ष न हो। वास्तव में नाटक सत्य है वह मनोरंजन का साधन नहीं अपितु जीवन जीने की एक कला है।

टास्क लेखक ने नाटक की क्या परिभाषा दी है?

5

"यह आकस्मिक नहीं कि ब्रेख्त का नाटक देखते हुए अचानक एक ऐसा क्षण आता है, जब लगता है जैसे थियेटर की दीवार के परे बरबस ही कुछ आवाजें भटक रही हैं, दरवाजा खटखटा रही हैं और हम, दर्शक और अभिनेता, समूचा मंच और 'ऑडिटोरियम' एक अजीब दबाव तले धँसने लगते हैं, सिर्फ एक उपाय है मुक्ति पाने का, बाहर निकल आएँ और इन आवाजों के साक्षी हो सकें....।"

प्रसंग–प्रस्तुत गद्यांश श्री निर्मल वर्मा द्वारा विरचित एवं संकलित यात्रा विवरणात्मक संस्मरण 'चीड़ों पर चाँदनी' से

नोट

लिया गया है। इसमें लेखक अपने बर्लिन प्रवास के समय ब्रेख्त के नाटक 'टेरर और मिजरी' को देखते समय अपनी प्रतिक्रियाओं को व्यक्त कर रहा है।

व्याख्या–ब्रेख्त के नाटक 'टेरर और मिजरी' में लेखक ने बाह्य परिस्थिति को एक ऐतिहासिक सत्य के रूप में चित्रित किया है सूक्ष्म अर्थ में नहीं। अपितु समय के हाड़-मांस ठोस पिंजर में आबद्ध, जिस सदी में हम जीते हैं, उसके संदर्भ में बहुत इंटेन्स और राजनीतिक। उस नाटक में बंदी शिविर, फासिज्म, नर संहार आदि का इतना सजीव चित्रण किया गया है कि वे महज दीवार की छायाओं के समान अवास्तविक प्रतीत नहीं होते। वे सत्य रूप में उद्घाटित होते हैं क्योंकि वे स्वयं एक प्रतीक हैं उस विघटन प्रकिया का जिसमें हम सब अलग-अलग व्यक्ति की हैसियत से शामिल हैं। युद्ध की विभीषिका को देखकर, उसका सजीव चित्रण देखकर ऐसा महसूस होता है, जैसे यह सबकुछ मंच पर नहीं हो रहा अपितु बाहर समाज में इसी समय घटित हो रहा है। अत: यह आश्चर्य की बात नहीं कि ब्रेख्त का नाटक 'टेरर और मिजरी' देखकर तथा उसमें वर्णित युद्ध बंदियों के शिविर, नर-संहार आदि की घटनाओं को देखकर ऐसा महसूस हो कि थियेटर की दीवार के परे कुछ आवाजें भटक रही हैं, उनकी आवाजें जिनकी सामूहिक हत्या की गई। वे आवाजें थियेटर का दरवाजा खटखटा रही हैं कि सभी प्रेक्षक उस वास्तविकता से परिचित हो जाएँ जो उन पर बीतीं। उस समय उस ठोस और कठोर यथार्थ को देखकर समूचा 'ऑडिटोरियम' उस भय के वातावरण से युक्त हो जाता है जैसे मानो वह भी उन लोगों की कब्रों में समाने जा रहा हो जिनकी हिंसक हत्या फासिस्ट शासकों ने की थी। लेखक का मन्तव्य यह है कि उस नाटक में यथार्थ का इतना सही चित्रण किया गया है कि प्रेक्षक भावनात्मक रूप में स्वयं को भी उसी स्थिति में पाता है जबकि यह नरसंहार हो रहा था। प्रत्येक बुद्धिजीवी, जो स्वयं को समकालीन मानता है उसके लिए आवश्यक है कि वह उस नरसंहार का साक्षी रहे और साक्षी होने के नाते कहीं जिम्मेदार भी क्योंकि लेखक के लिए समकालीन होने का अर्थ है अपने निजी घेरे से बाहर उन सब आवाजों का साक्षी होना जो बीसवीं सदी के अँधेरे से टकराती हुई हमारे पास आती हैं। ब्रेख्त कम्युनिस्ट थे। अत: यथार्थवादी थे और उन्होंने यथार्थ का ऐसा चित्रण किया कि लेखक उससे अत्यंत प्रभावित हुआ।

विशेष–इन पंक्तियों से ब्रेख्त की रचना की सशक्तता सिद्ध होती है कि वह प्रेक्षकों से साधारणीकरण करने में संभव है। वास्तव में प्रत्येक युग का सत्य उस युग के लोगों के लिए प्रासंगिक होता है। अत: उस युग के लोगों को प्रभावित भी करता है। साथ ही इन पंक्तियों के माध्यम से लेखक के संवेदनशील होने का भी संकेत मिलता है। वह उस विभीषिका से इतने आक्रान्त हैं कि उन्हें समूचा ऑडिटोरियम धँसता हुआ दिखाई देता है। सत्य की यथार्थ अभिव्यक्ति संवेदनशील व्यक्ति को ऐसे ही झिंझोड़ती है। इस पद्यांश की भाषा सरल है परंतु अत्यंत प्रभावशाली, एक सफल लेखक की विशेषता है कि वह सीधे सरल शब्दों में महत्त्वपूर्ण एंव गंभीर बात कह जाता है। प्रसिद्ध रूसी लेखक चेखव के शब्दों में महान् लेखक साधारण शब्दों में कोई गंभीर बात इस प्रकार कहते हैं कि वह सर्वसाधारण को समझ में आ सके क्योंकि इसी से प्रभाव गहरा पड़ता है। वास्तव में विचारों की तुच्छता ही गंभीर भाषा के आवरण में छिपी रहती है।

6

"अक्सर यह कहा जाता है कि पश्चिमी देशों की संस्कृति स्वतंत्रता और न्याय जैसे आध्यात्मिक सिद्धांतों पर आधारित है, जबकि दूसरी ओर कम्युनिस्ट देश उसकी नितांत अवहेलना करते हुए मनुष्य की निम्नतम भौतिक इच्छाओं पर जोर डालते हैं। शायद यह सच हो परंतु, बर्लिन में लगता है जैसे ये 'रोल' आपस में बदल लिये गये हों।"

प्रसंग–प्रस्तुत पंक्तियाँ श्री निर्मल वर्मा द्वारा विरचित 'चीड़ों पर चाँदनी' से उद्धत हैं। 'चीड़ों पर चाँदनी' यात्रा-विवरणात्मक संस्मरणों का संकलन है। जिसमें लेखक आइसलैंड जाते समय बर्लिन की संस्कृति के विषय में अपने विचार व्यक्त कर रहा है। लेखक मूलत: साम्यवादी विचारधारा से प्रभावित है। अत: उसे पश्चिम की अपेक्षा पूर्व यूरोप के देशों के राजनीतिक सिद्धांत अधिक श्रेयस्कर प्रतीत होते हैं। इसी आधार पर वह कह रहे हैं–

व्याख्या–लेखक अन्य लोगों की ओर संकेत करते हुए कहते हैं कि प्राय: लोग यह कहते हैं कि पश्चिमी यूरोप के

नोट

प्रजातांत्रिक देशों की राजनीति का मूल आधार है—वैयक्तिक स्वतंत्रता तथा समतापूर्ण न्याय। तथा पूर्वी यूरोप के साम्यवादी देश व्यक्तिगत स्वतंत्रता तथा सामाजिक न्याय की पूर्ण रूप से अवहेलना करते हैं तथा उसके स्थान पर मनुष्य की मूलभूत इच्छाओं की पूर्ति करने पर ही बल देते हैं। लेखक कहते हैं शायद यह सच हो। इस सत्य को स्वीकार करते हुए वह घबरा रहे हैं जबकि सत्य यही है कि पश्चिमी देशों में प्रजातंत्र है, बहुपार्टी प्रणाली के आधार पर चुनाव होता है तथा वहाँ व्यक्ति स्वतंत्रता तथा व्यक्ति के मौलिक अधिकारों को सर्वोपरि माना जाता है। व्यक्ति को राजनीतिक, धार्मिक, आर्थिक स्वतंत्रता है एवं साथ ही वहाँ सामाजिक न्याय को महत्त्व दिया जाता है, जबकि पूर्वी यूरोप के कम्युनिस्ट देशों में लोगों की भौतिक आवश्यकताएँ पूर्ण करने की गारंटी राज्य की है। अत: खाने-पीने की वस्तुएँ, शिक्षा इत्यादि सस्ती अथवा मुफ्त हैं परंतु व्यक्ति को मौलिक अधिकार से वंचित रखा गया है। वह कम्युनिस्ट पार्टी से भिन्न विचार नहीं रख सकता। यदि ऐसा है तो उसका स्थान जेल या मानसिक चिकित्सालय है। लेखक जब बर्लिन गया तो वहाँ उसे ऐसा प्रतीत हुआ कि ये दोनों 'रोल' दोनों देशों की जनताओं ने बदल लिये हैं। उन्होंने पाया कि अमरीकी सिगरेट, व्हिस्की इत्यादि के प्रति दोनों देशों के लोगों के मन में समान रूप से आकर्षण है। उनके राजनीतिक सिद्धांत अथवा मान्यताएँ कितनी ही भिन्न क्यों न हों, व्यक्ति सामान्य रूप से अपनी भावनाओं की अभिव्यक्ति एक समान ही करते हैं।

विशेष—किन्हीं स्थितियों में साहित्य कितना काल-सापेक्ष्य होता है, इसका उदाहरण हमें इन पंक्तियों में मिल जाता है। इन संस्मरणों की रचना सन् 1964 में हुई थी जब शीतयुद्ध अपने चरम शिखर पर था परंतु 26 वर्षों बाद इन पंक्तियों की प्रासंगिकता ही समाप्त हो गई क्योंकि 1990 में अधिकांश पूर्वी यूरोप के कम्युनिस्ट देशों में राजनीतिक परिवर्तन आया और वहाँ भी प्रजातंत्र की लहर दौड़ गई। इस परिवर्तन ने उस मिथ पर से भी पर्दा उठा दिया कि किस प्रकार मार्क्स की विचारधारा पर आधारित राज्य जन-कल्याण का कार्य करते हैं। वहाँ की आर्थिक अवस्था एवं वैज्ञानिक उन्नति देखकर स्पष्ट ही दिखता है कि स्वतंत्र व्यक्ति ही अधिक प्रसन्न हो सकता है। इन पंक्तियों से लेखक की आत्मीयता झलकती है जो कि संस्मरण का एक महत्त्वपूर्ण तत्त्व है व्यक्तिगत विचारों और यशोनिन्दा का समावेश संस्मरण में सहज ही हो जाता है।

टास्क लेखक को पश्चिम की अपेक्षा पूर्वी यूरोप के देशों के राजनीतिक सिद्धांत अधिक श्रेयस्कर क्यों प्रतीत होते हैं?

7

"कौन-सी सीमा पर जाकर कम्युनिज़्म का विरोध फासिज़्म का चेहरा अपना लेता है मुझे नहीं मालूम, किंतु यह वह सीमा है, जो पश्चिमी बर्लिन को पूर्वी बर्लिन से अलग करती है। यह एक चुनौती भी है, जिसका सामना हर ईमानदार व्यक्ति को कभी न कभी करना पड़ेगा।"

प्रसंग—प्रस्तुत पंक्तियां श्री निर्मल वर्मा द्वारा लिखित यात्रा-विवरणात्मक संस्मरणों के संकलन 'चीड़ों पर चाँदनी' से उद्धृत की गई हैं। लेखक ने आइसलैंड जाते समय पश्चिमी बर्लिन में पड़ाव डाला और वहाँ की स्मृतियों का अंकन 'ब्रेख्त एक उदास नगर' संस्मरण में कर रहा है। लेखक टूरिस्ट बस में बैठकर पश्चिमी बर्लिन के दर्शनीय स्थल देखने गया। वहाँ गाईड ने रायर वस्टैक की इमारत दिखाते हुए कहा कि बल्गेरियन कम्युनिस्ट दित्रिट्रोव ने रायर वस्टैक को जलाने का षड्यंत्र किया था। लेखक ने कहा कि यह सच नहीं है क्योंकि दित्रीट्रोव के खिलाफ कोई सबूत नहीं मिला, इसलिए हिटलर ने उसे छोड़ दिया तो गाईड ने कहा 'बट वाजण्ट ही ए ब्लडी कम्युनिस्ट?' लेखक इस बात से इंकार नहीं कर सका और यहीं से उसके मन में यह विचार उत्पन्न हुआ कि—

व्याख्या—लेखक स्पष्ट नहीं है कि वह कौन सी सीमा है जहाँ कम्युनिज़्म का विरोध फासिज़्म का चेहरा अपना लेता

है। अर्थात् व्यक्ति कम्युनिज़्म का विरोध करते-करते फासिज़्म का रूप धारण कर लेता है क्योंकि उनकी दृष्टि में वहाँ के लोगों को हिटलर का नहीं दित्रीट्रोव का पक्ष लेना चाहिए था। यही वह विभाजक रेखा है जो पश्चिमी बर्लिन और पूर्वी बर्लिन को बाँट रही है। पूर्वी बर्लिन कम्युनिस्ट देश है अत: वह फासिज्म का विरोध करता है जबकि पश्चिम जर्मनी एक प्रजातांत्रिक राष्ट्र है जो कम्युनिज़्म का विरोध करता है परंतु साथ ही वह हिटलर का भी विरोध करता है। यह एक ऐसी चुनौती है जिसका सामना लेखक की दृष्टि में हर ईमानदार व्यक्ति को करना ही होगा। उनकी मान्यता है कि हमें वह सीमा निर्धारित करनी होगी कि हम किस सीमा तक कम्युनिस्टों का विरोध करें? वास्तव में फासिज़्म मूल रूप में राष्ट्रवाद के रूप में विकसित हुआ था। जिसे बाद में अधिनायकवाद के अर्थ में जाना जाने लगा। कम्युनिस्ट इसे ह्रासोन्मुख पूंजीवाद की अंतिम अवस्था मानते हैं। जबकि एक अन्य व्याख्या के अनुसार जनतंत्र में असाधारण व्यक्तियों को अपनी प्रतिभा और शक्ति दिखाने का पूरा अवसर नहीं मिलता। अत: उनका जनतंत्र के प्रति रोष उत्पन्न हो जाता है, वे ऐसी व्यवस्था की कामना करने लगते हैं जिसमें उन्हें कार्य करने का पूरा अवसर मिल सके। वास्तव में पश्चिमी बर्लिन के वासियों की राष्ट्रवादी भावना ही दित्रीट्रोव के विरोध में बोल रही थी, जब उन्हें रायर वस्टैक की इमारत में आग के विरोध में उसकी निन्दा करते हुए पाया गया। इसका अर्थ कदापि हिटलर का समर्थन करना नहीं था।

विशेष–लेखक ने वास्तव में एक मूलभूत प्रश्न को उठाया है कि प्रत्येक ईमानदार व्यक्ति को यह तय करना होगा कि फासिज़्म बुरा है, अधिनायकवाद श्रेष्ठ नहीं है। राजाओं के एकाधिपत्य से हम आगे बढ़ आये हैं और हमने प्रजातंत्र को स्वीकारा है, अत: उस स्थिति में लौट जाने की स्थिति में हम नहीं हैं। प्रजातंत्र ही व्यक्ति के लिए उपादेय तंत्र है परंतु क्या जहाँ एक ही पार्टी का शासन है वहाँ अधिनायकवाद नहीं है? इस प्रश्न पर भी प्रत्येक बुद्धिजीवी को विचार करना होगा और उसका निर्णय प्रजातंत्र के ही पक्ष में जाएगा।

8

"आश्चर्य नहीं कि आईखमैन के लिए लाखों यहूदियों को यातना में भेजना भी इतना ही सहज और मानवीय तथ्य रहा होगा। मानवीय चिंतन को उसके सोचने समझने के ढंग को कितनी आसानी से अत्यंत विकृत ढाँचे में ढालकर सहज, स्वयंसिद्ध, स्वयंचालित 'सत्यों' का निर्माण किया जा सकता है, इसकी कल्पना शायद जार्ज आरवेल ने अपने भयंकरतम दु:स्वप्नों में भी न की होगी।"

प्रसंग–प्रस्तुत पंक्तियाँ श्री निर्मल वर्मा द्वारा लिखित पुस्तक 'चीड़ों पर चाँदनी' से ली गई हैं, जिसमें उन्होंने आइसलैंड जाते समय लंदन के प्रवास की एक घटना का संस्मरण सुनाया है। इस संस्मरण का नाम है–'रोती हुई मर्मेड का शहर' लंदन में उसने एक अधिकारी से प्राग जाने की टिकट माँगी तो उसने कहा–'क्या आप जानते नहीं कि वह लौह-दीवार' के पीछे है और लेखक ने आश्चर्य-सा व्यक्त करते हुए कहा–'क्या सचमुच?' यही घटना उक्त पंक्तियों का मूल स्रोत है। उसे प्रतीत हुआ कि यह व्यक्ति कितने स्वाभाविक ढंग से यंत्रचालित रूप से इन शब्दों का प्रयोग कर रहा है। यदि उससे यह कहा जाए कि इस तरह के शब्द शीतयुद्ध विचारधारा के द्योतक हैं तो वह ऐसे देखेगा जैसे बहुत अनहोनी बात कह दी हो।

व्याख्या–लेखक का कथन है कि कुछ लोग स्वयं ही, बिना किसी उचित तर्क के कुछ विचार बना लेते हैं और उन्हें ही अंतिम सत्य मानने लगते हैं। ऐसा करते समय वे निश्चित व सहज होते हैं। उन्होंने एक उदाहरण देकर यह समझाने का प्रयत्न किया कि जब आईखमैन ने लाखों यहूदियों को यातना-गृहों या गैस-चैम्बर में भेजा होगा तो उसके सामने भी एक स्वयं निर्मित सत्य था कि जर्मन जाति सबसे महान् जाति है और यहूदी उनके मार्ग का सबसे बड़ा अवरोध हैं। आईखमैन के लिए यह तथ्य बड़ा ही सहज और मानवीय रहा होगा परंतु यह विचारधारा एकपक्षीय थी। लेखक प्रश्न करते हैं कि मानवीय चिंतन को कितनी सरलतापूर्वक मोड़ा जा सकता है। सोचने समझने के ढंग को कितना सरल रूप से अत्यंत विकृत ढाँचे में ढाला जा सकता है कि एक मनुष्य अथवा जाति दूसरे से श्रेष्ठ है, सभ्य है। इस आधार पर अनेक स्वयं सिद्ध, सहज और स्वयं चालित निर्णय लिये जा सकते हैं। ऐसे निर्णय जो तर्क से सिद्ध न किये गये हो। अपितु एक ही व्यक्ति की विचारधारा का परिणाम हों, निश्चित ही उतने ही घातक हैं जितना

नोट

कि द्वितीय विश्वयुद्ध में लाखों यहूदियों को मारना। जार्ज ऑरवेल ने अनेक दु:स्वप्नों का वर्णन किया है परंतु यह तथ्य उनके भयंकरतम दु:स्वप्नों से भी अधिक क्रूर है। अत: 'आइरन कर्टेन' का जो स्वयं निर्धारित सत्य पश्चिमी जगत ने अपना रखा है वह भी अत्यंत क्रूर और अमानवीय है।

9

"अमस्टरडम अपनी एक आत्मा है। नहरों से सटे हुए मकान इतने संतुलित और आत्मीय और कालजित् कि लगता है आदमी के हाथों ने उन्हें नहीं बनाया, खुद-ब-खुद फूलों से नहरों के किनारे किनारे उग आये हैं। वे आईना हैं–जिसमें चहारदीवारी के भीतर रहने वाले डच निवासियों की जिंदगी झलकती है।"

प्रसंग–'रोती हुई मर्मेड का शहर' नामक संस्मरण जो 'चीड़ों पर चाँदनी' संकलन में से लिया गया है, निर्मल वर्मा द्वारा लिखित है। लेखक विभिन्न स्थानों पर अपने प्रवास के दौरान उन स्थानों का सामाजिक, सांस्कृतिक जीवन व्यक्त करता हुआ, उस शहर का अपने पर पड़ा प्रभाव अंकित कर रहा है। जब वह हालैंड की राजधानी अमस्टरडम गये तो उन पर जो प्रभाव पड़ा, उसका चित्र उक्त पंक्तियों में दिखाई देता है।

व्याख्या–अमस्टरडम को नहरों का शहर कहा जाता है। वहाँ शहर की गलियों के बीच नहरें हैं और उनके दोनों तरफ मकान हैं। नहरों में ही दुकानें हैं यहाँ तक कि यातायात के लिए नावों का प्रयोग किया जाता है। इसीलिए लेखक ने कहा कि अमस्टरडम की भी एक आत्मा है। वैसे प्रत्येक शहर की एक आत्मा होती है, एक विशिष्टता होती है जो उसे अन्य नगरों से अलग करती है। उसी आधार पर अमस्टरडम की भी एक विशिष्टता है कि वह नहरों की तरह तरल, शीतल और आनन्ददायी है। लेखक का कवि उस दृश्य का वर्णन इस प्रकार करता है कि नहरों के दोनों ओर के घर मानों व्यक्तियों द्वारा निर्मित न हों। अपितु वे फूल हैं जो स्वयमेव नहरों के किनारे-किनारे उग आये हैं। मनुष्य के निर्माण में अधूरापन है जबकि प्रकृति का निर्माण पूर्ण है। उस सौंदर्य को मानो प्रकृति ने स्वयं अपने हाथों से गढ़ा हो। वे मात्र मकान नहीं हैं अपितु डच निवासियों के जीवन का प्रतिबिंब है। किस प्रकार हॉलैण्डवासी जल से प्रेम करते हैं। वे जल ही के समान स्वच्छ और निर्मल हैं। उनमें कलुषता का लेशमात्र भी नहीं है। नहरों के किनारे बने मकान उनके जीवन के रहन-सहन के ढंग को बताते हैं। पानी में फैलाव का गुण है और जल राशि को देखते ही व्यक्ति की आत्मा भी विस्फारित हो जाती है, आनंदातिरेक से। वे डच निवासी भी जल के समान बड़े हृदय वाले हैं, यह उन व्यक्तियों के घरों से ही पता चल जाता है। मूलत: वे बहुत ही शालीन परंपराओं का आदर करने वाले हैं, संयमित एवं संकोची हैं। इसीलिए लेखक ने उनके लिए 'चहारदीवारी के भीतर रहने वाले' विशेषण का प्रयोग किया है।

विशेष–लेखक ने बहुत ही सुंदर भाषा में प्रतीकात्मक रूप से डच निवासियों के चरित्र का वर्णन किया है। इन पंक्तियों में काव्यात्मकता मुखरित हो रही है। लेखक के भीतर का कवि डच निवासियों के घरों की तुलना स्वयंमेव उग आये फूलों से कर रहा है। यह काव्यात्मकता संस्मरण का एक आवश्यक उपकरण है। लेखक व्यक्तिगत प्रतिक्रियाएँ करता हुआ उस स्थान का वर्णन करता चलता है। यहाँ उसकी आत्मीयता भी झलक रही है। पंक्तियों की भाषा सहज, सरल और बोधगम्य है।

टास्क लेखक पर हालैण्ड की राजधानी अमस्टरडम का क्या प्रभाव पड़ा?

10

"भीतर का दृश्य उस फिल्म के टुकड़े की मानिन्द धुंधला पड़ गया है जो अपने में अत्यंत तीव्र और सजीव होने के बावजूद इतनी तेजी से आँखों के आगे भड़भड़ाता हुआ गायब हो गया कि बाद में जब हम याद करने की कोशिश करते है तो दृश्य के बाहरी पहलू उजागर होने के बजाय महज मन के कोने-कोने में भी

नोट

नहीं हैं कुछ अनर्गल छिटपुटी प्रतिक्रियाएँ घूम जाती हैं जो उस क्षण के दबाव से ऊपर उठ आई थीं–एक दूसरे से अलग, शृंखलाहीन और झूठ-सच के ऊपर।"

प्रसंग–प्रस्तुत गद्यांश 'चीड़ों पर चाँदनी' नामक संस्मरण संग्रह से उद्धृत की गई है। इन पंक्तियों के लेखक श्री निर्मल वर्मा हैं। इन संस्मरणों में अधिकांश यात्रा विवरणात्मक संस्मरण हैं जिनमें लेखक अपने यूरोप प्रवास के समय विभिन्न शहरों के सामाजिक जीवन पर अपनी प्रतिक्रिया व्यक्त कर रहा है।

व्याख्या–अमस्टरडम में लेखक अपने मित्र थोर्गियेर और एँगुई के साथ एक बियर घर में गए। अँधेरी संकरी गलियों के भीतर वह बियर घर था। उसके वातावरण का वर्णन करते हुए कह रहे हैं कि उस बियर घर में इतनी भीड़ थी। उसका दृश्य स्मरण करना अब संभव नहीं है। उन्होंने एक सुन्दर उपमा के माध्यम से उसे समझाने का प्रयास किया है। वह दृश्य उस चित्र के मानिन्द था जो अचानक व्यक्ति की आंखों के सामने से तेजी से हटा लिया जाए। जिसकी सूक्ष्म डिटेल्स व्यक्ति को याद नहीं रहती, केवल एक मोटा प्रभाव स्मरण में रह जाता है। उस बियर घर का दृश्य भी फिल्म के उस टुकड़े के समान धुंधला पड़ गया है जो हमारे सामने तेजी से निकल गया हो। जब जब उस दृश्य का स्मरण करते हैं। तो उसके बाह्य पहलू उजागर न होकर केवल मन के एक कोने में कुछ असंबद्ध सी स्मृतियाँ ही रह जाती हैं, जो कि उस क्षण के दबाव से ऊपर उठ आई थीं। जिनका परस्पर कोई संबंध नहीं है, क्रम नहीं है जो कि झूठ-सच से ऊपर है। कुछ ऐसा ही दृश्य उस बियर घर का था। वहाँ अंधेरा था, चहल-पहल थी अत: कुछ भी स्पष्ट नहीं था।

विशेष–लेखक ने स्मृतियों की विशेषता बताई है कि कुछ ऐसे क्षण होते हैं जिनकी स्पष्ट स्मृति नहीं रहती परंतु उनकी धुंधली-सी छाया मन पर अवश्य बन जाती है। यह एक वैज्ञानिक सत्य है कि चलचित्र के दृश्य यदि तेज चला दिये जाएँ तो उनमें से कतिपय बाहरी पहलू उजागर नहीं होते फिर भी एक स्थायी-सा प्रभाव वे अवश्य छोड़ जाते हैं। उस काल की स्मृति तथा उस स्मृति के आधार पर उस दृश्य का वर्णन कर पाना अत्यंत कठिन है। यही भावना लेखक उक्त पंक्तियों में व्यक्त करना चाहता है। वहाँ अनेक चेहरे हैं परंतु एक भी चेहरा जाना पहचाना नहीं, और अंधकार के कारण स्पष्ट नहीं। अत: उनका वर्णन करना असंभव है, मात्र चेहरों का ही स्मरण रहता है। भाषा की दृष्टि से भाषा अत्यंत सरल है परंतु यह सूक्ष्म विचार को लिये होने के कारण सहज-सुबोधता के तत्व को समाविष्ट नहीं कर पाई।

11

"उनकी तुलना में हम भारतीय बहुत गंभीर हैं। (कम से कम कोशिश यही रहती है कि गंभीर दिखें।) आधारभूत समस्याओं की प्रश्नावली सदा जेब में रहती है। हालाँकि एक प्रश्न बार-बार तंग करता है कि अपनी गंभीरता के बावजूद हममें से कितने भारतीय 'बुद्धिजीवी' लंदन की 'इंडिया लायब्रेरी' को भारत वापस लौटाने के लिए उतने ही चिंतित हैं जितना वह उज्जड़ आइसलैंडी व्यापारी मुखर परिहास के बावजूद अपने देश की पाण्डुलिपियों के बारे में था।"

प्रसंग–प्रस्तुत पद्यांश श्री निर्मल वर्मा द्वारा लिखित यात्रा-विवरणात्मक संस्मरण संकलन 'चीड़ों पर चाँदनी' से लिया गया है। इन संस्मरणों में लेखक ने अपनी आइसलैंड की यात्रा उसके सामाजिक, सांस्कृतिक जीवन के प्रभावों को अंकित करने का प्रयास किया है। यहां उन्होंने आइसलैंड की राजनीति की एक प्रखर समस्या का विश्लेषण करते हुए आइसलैण्डियों की भारतीय चरित्र से तुलना की है तथा किन्हीं अर्थों में उन्हें भारतीयों से श्रेष्ठ ठहराया है।

व्याख्या–13वीं-14वीं शताब्दी में आइसलैंड में अनेक साहित्यिक और ऐतिहासिक ग्रंथों की सर्जना हुई। उन दिनों आइसलैंड डेनमार्क का उपनिवेश था। इन ग्रंथों में 'सागा ग्रंथों' को सर्वोच्च स्थान प्राप्त है। इन ग्रंथों की पाण्डुलिपियाँ आज डेनमार्क के संग्रहालयों और पुस्तकालयों में सुरक्षित है। स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद आइसलैंड सरकार ने डेनमार्क से इन पाण्डुलिपियों को लौटाने की माँग की जिसे आज तक स्वीकार नहीं किया गया। यह प्रश्न आइसलैंड में एक 'राष्ट्रीय प्रश्न' बन गया है। लेखक ने जब एक व्यापारी से इस विषय में बात की तो उसने व्यंग्यपूर्ण उत्तर दिया कि

नोट

हमें नहीं पता था कि डेनमार्क वाले हमारी संस्कृति से इतना प्यार करते हैं। यह सुनकर लेखक के मन में भारतीयों का चरित्र सामने आ गया और उन्होंने कहा कि आइसलैंडियों की तुलना में हम भारतीय अधिक गंभीर है या हम यह दिखावा करना चाहते हैं कि हम गंभीर हैं। प्रत्येक भारतीय के पास प्रश्नों का ढेर है। वह अनेक प्रकार के राजनीतिक प्रश्न करके निरंतर बहस करता रह सकता है। अपनी सरकार को कोसता है, सामाजिक व्यवस्था पर प्रश्नचिह्न लगाता है, परंतु इस दिखावटी गंभीरता दिखाने वाले किसी बुद्धिजीवी के हृदय में यह भाव नहीं आया कि हमारी अनेक दुर्लभ पाण्डुलिपियाँ अंग्रेज ले गये थे और आज के लंदन में 'इंडिया-लाइब्रेरी' में रखी हैं, उन्हें वापस लाने के विषय में विचार किया जाए या आंदोलन खड़ा किया जाए। भारतीय कोरी सैद्धांतिक बहस करने की सीमा तक गंभीर हैं परंतु वास्तविकता में वे किन्हीं प्रश्नों को गंभीरता से नहीं लेते। आइसलैंड का एक सामान्य व्यापारी भी अपने देश के सागा-ग्रंथों की पाण्डुलिपियों को वापस लाने के लिए चिंतित है परंतु भारतीय बुद्धिजीवी भी अधिकारों की बात करते हुए कहीं अपने रष्ट्रीय दायित्व को पूरा नहीं करते। आइसलैंडी व्यापारी के परिहास में भी एक पीड़ा थी परंतु भारतीय पीड़ित होने का मात्र ढोंग करके रह जाते हैं।

विशेष—लेखक ने भारतीय और आइसलैंडी मानसिकता का विश्लेषण सुंदरतापूर्वक किया है। ऐसा वही व्यक्ति कर सकता है जो दोनों ही समाजों की अभिरुचियों, संस्कृतियों आदि से परिचित हो। भारतीय बुद्धिजीवियों के विषय में की गई उनकी व्याख्या पीड़ादायक अवश्य हो सकती है। परंतु सत्य से वह परे नहीं है। गंभीर बात कहने के लिए उन्होंने जिस सहज, सरल, बोधगम्य भाषा का प्रयोग किया है, वह प्रशंसनीय है।

स्व-मूल्यांकन (Self-Assessment)

निम्नलिखित कथनों में सत्य अथवा असत्य की पहचान करें

(State Whether the following statements are True or False) :

8. सन् 1964 में शीतयुद्ध अपने चरम शिखर पर था।
9. लेखक ने पश्चिमी बर्लिन की स्मृतियों का अंकन 'ब्रेख्त एक उदास नगर' में किया है।
10. यूरोप के शहरों में घूमते हुए लेखक को महसूस हुआ कि वह केवल 'आउटसाइडर' ही नहीं है।
11. राजनीतिक प्रभुत्व एवं सांस्कृतिक प्रभाव हमेशा संग रहते हैं।

12

"क्या यह सच नहीं है कि हर जाति अपने जीवन सौंदर्य को अभिव्यक्त करने का जो विशिष्ट साधन चुनती है, उसके बाहर कोई अन्य साधन (या माध्यम) उसकी प्रेरणा को न केवल कृत्रिम और निर्बल बना देते हैं, बल्कि एक खास ढंग से विकृत भी कर देते हैं?"

प्रसंग—प्रस्तुत पद्यांश श्री निर्मल वर्मा द्वारा लिखित यात्रा-विवरणात्मक संस्करण संकलन 'चीड़ों पर चाँदनी' से उद्धत किया गया है। इन संस्मरणों में लेखक ने अपनी आइसलैंड की यात्रा के समय मार्ग में आए अनेक स्थानों की सांस्कृतिक गतिविधियों का ब्यौरा दिया है। उसी क्रम में डेनमार्क की चित्रकला के विषय में उनकी राय यह है कि—

व्याख्या—लेखक एक प्रदर्शनी देखने गया और उसे देखकर उसे निराशा ही हुई। उनका कथन है कि फर्नीचर के 'डिजाइन' दस्तकारी का सूक्ष्म काम तथा नई वास्तुकला में दिलचस्प प्रयोग करने वाले डेन लोग चित्रकला के क्षेत्र में 'पास्तेश' और उथलेपन में सार्थकता खोजेंगे। यह देखकर एक प्रश्न उठता है, वह यह कि प्रत्येक जाति का अपने जीवन सौंदर्य को अभिव्यक्त करने का एक साधन होता है। कोई वास्तुकला के माध्यम से उस सौंदर्य की अभिव्यक्ति करता है तो कोई खाने-पीने के बर्तनों में। कोई चित्रकला के माध्यम से सौंदर्य की अभिव्यक्ति करता है तो कोई कालीनों, शालों अथवा वस्त्रों में। यह सौंदर्याभिव्यक्ति उसी माध्यम से हो तभी उचित है जबकि वह साधन अपनी सहजता के साथ उसे अपना लेता है। उसमें उसके जीवन-सौंदर्य की अभिव्यक्ति बिना किसी कृत्रिमता के हो जाती है, परंतु यदि वह जाति किसी दूसरी जाति के साधनों का अनुकरण करेगी तो उसमें निजता का अभाव रहेगा, प्रामाणिकता की कमी रहेगी। बाहर के माध्यम उसकी प्रेरणा को ही निर्बल बना देते हैं क्योंकि प्रत्येक जाति की

अपनी परिस्थितियाँ होती हैं और वह परिस्थितियों के अनुकूल ही अपनी भावनाओं की अभिव्यक्ति कर सकता है। लेखक कहते हैं कि चित्रकला के क्षेत्र में यह तथ्य न केवल डेनमार्क पर बल्कि न्यूनाधिक मात्रा में अन्य स्कैंडेनेवियन देशों पर भी लागू किया जा सकता है क्योंकि वे सभी नकल की उपज हैं क्योंकि इन देशों के सौंदर्य अभिव्यक्ति का माध्यम सदा से मूर्तिकला और वास्तुकला रही है।

विशेष–लेखक ने महत्त्वपूर्ण तथ्य इतनी सरलता और स्पष्टता से कह दिया, यह उनकी भाषा की विशेषता है। भारत में भी ऐसी अनेक जातियाँ हैं जो विभिन्न प्रकार से अपने भावों की अभिव्यक्ति करती हैं, यही उनकी विशिष्टता है। यदि वे अन्य प्रकार से, दूसरों को नकल करके किसी अन्य विधा में उनको प्रकट करने का प्रयास करेंगी तो निश्चय ही उसमें एक बनावट रहेगी। वह सहजता और अपनापन नहीं आ पाएगा जो उनकी मूल विधा में रहता है।

13

"हम असीम अंधेरे के एक छोटे से टुकड़े पर तिर रहे हैं कि हमारे नीचे एक नीली रहस्यमयी जादुई दुनिया बसी है, हमारे संग-संग रेंग रही है–क्षुब्ध अशांत और निस्तब्ध। इस दुनिया का आभास उसी समय होता है, जब कोई अल्हड़-सी लहर पूरी निर्ममता से हमारे जहाज को धकेल देती है।"

प्रसंग–प्रस्तुत गद्यांश श्री निर्मल वर्मा द्वारा विरचित संस्मरण संग्रह 'चीड़ों पर चाँदनी' से उद्धृत किया गया है। इनमें लेखक ने अपनी आइसलैंड की यात्रा का वर्णन किया है। उस दौरान समुद्री जहाज की यात्रा का दृश्य और उनके अनुभव इस गद्यांश में अंकित किए गए हैं।

व्याख्या–लेखक समुद्री जहाज पर 'उत्तरी रोशनियों की ओर' जा रहा है। रात का समय है। चारों ओर अंधकार है। समुद्र का असीम अंधकार और लेखक को अनुभव हो रहा है कि वह इस अनंत अंधकार के एक छोटे से टुकड़े पर तिरते हुए जा रहे हैं। उनके जहाज के नीचे एक रहस्यमयी नीली जादुई दुनिया है। समुद्र की दुनिया जिसमें अनेक रहस्य छुपे हुए हैं और उनके कारण वह लेखक को रहस्यमयी प्रतीत होती हैं और जादुई भी। अनेक विस्मयों से भरी जादुई दुनिया उनके नीचे और वह उसके ऊपर से तिरते चले जा रहे हैं। वह जादुई दुनियाँ समाप्त नहीं होती, वह लेखक के संग-संग तिर रही है। उस जादुई दुनिया को लेखक ने क्षुब्ध, अशांत और निस्तब्ध कहा है। समुद्र के अंदर प्रत्येक पल लहरें उठ रही हैं इसलिए लेखक को ऐसा प्रतीत होता है कि समुद्र अशांत है, क्रुद्ध है और निस्तब्ध है परंतु ऊपर से बिल्कुल शांत। उस जादुई दुनिया का आभास उन्हें केवल उसी समय होता है जब कोई बड़ी-सी लहर आकर जहाज को हिला देती है और उनके बियर पीने वाले गिलास लड़खड़ा जाते हैं, अन्यथा चारों ओर एक गंभीर शांति का वातावरण फैला हुआ है। अंधकार समय और दूरी का अंतर मानो मिटा देता है और चारों ओर दूर-तक अंधकार की परत फैली दिखाई देती है जिस पर वे चुपचाप तिर रहे हैं।

विशेष–इन पंक्तियों के माध्यम से लेखक समुद्र यात्रा के अनुभवों का वर्णन कर रहा है। समुद्र में जहाज पर रात का दृश्य बहुत ही काव्यात्मक ढंग से, प्रभावशाली रूप में किया गया है। रूपकातिशयोक्ति के द्वारा उन्होंने जादुई दुनिया का वर्णन किया है। गद्यांश की भाषा काव्यमय है परंतु भाषा में ओज गुण के अनुरूप शब्दों को प्रयोग किया गया है। संभवतः समुद्र की विकरालता का बोध करने के लिए ही लेखक ने ऐसी शब्दावली को चुना है। कुल मिलाकर ये पंक्तियाँ पाठक की दृष्टि के आगे वह बिंब प्रस्तुत करने में सफल रही हैं।

टास्क वर्मा जी ने आइसलैण्ड की समुद्री जहाज की यात्रा का वर्णन किस प्रकार किया है?

14

"कितने कम याद रह पाते हैं, चित्र दीवार पर टंगे फ्रेमों में बंद खून और पसीने में लिथड़े स्वप्न। और हम हैं कि हर कदम पर सदियों को पार करते जाते हैं। संग रह जाता है केवल आभास–रंगों आकृतियों से

नोट

उत्पन्न हुई किंतु उससे अलग एक स्मृति। शून्यता को काटती एक उड़ान, एक चीख, बंद सदियों की कुछ चाभियाँ, जिन्हें हम अपने संग ले जाते हैं और बाद में खोलते हैं अकेले में, अपने ही अकेलेपन को।"

प्रसंग–प्रस्तुत पंक्तियाँ श्री निर्मल वर्मा द्वारा विरचित संस्मरण संग्रह 'चीड़ों पर चाँदनी' से उद्धृत की गई हैं। इस पुस्तक में लेखक ने अपनी आइसलैंड की यात्रा के संस्मरण प्रस्तुत किए हैं। समुद्र की यात्रा के दौरान उनका प्रथम पड़ाव था स्कॉटलैंड। लेखक के पास समय बहुत कम था फिर भी उन्होंने एडिनबरो के राष्ट्रीय संग्रहालय को देखने का समय निकाल ही लिया। उस माध्यम से उन्होंने स्कॉट जाति के अनेक पक्षों को जाना। वहाँ की आर्ट गैलरी देखने के बाद लेखक ने अपनी प्रतिक्रिया इस प्रकार व्यक्त की–

व्याख्या–लेखक कहता है कि उसने अनेक आर्ट गैलरियाँ देखीं, उन पर टंगे हुए हजारों चित्र भी देखे परंतु उन सबको याद रखना कितना कठिन है। वे चित्र जिनको कलाकारों ने खून-पसीने की मेहनत करके बनाया था। वे चित्र जिनमें कलाकारों के स्वप्न अंकित थे। उनकी आकांक्षाएँ, आशाएँ टिकी थीं, कितना याद रह जाते हैं वे चित्र। दर्शक केवल एक दृष्टि ही उन पर डाल पाता है और आगे बढ़ जाता है। अपनी सदी के महत्त्वपूर्ण चित्रों को देखकर वह अगले समय के महत्वपूर्ण चित्र देखने पहुँच जाता है, इस माध्यम से वह एक कदम में ही एक सदी पार कर लेता है। जिन चित्रों को बनाने में कलाकारों का जीवन व्यतीत हो गया, उन्हें एक विहंगम दृष्टि डालकर दर्शक आगे बढ़ जाता है। उसके साथ रह जाता है एक आभास–रंगों और आकृतियों से उत्पन्न हुई एक स्मृति, जिसे वह शायद हमेशा याद रखता है। इस अनुभूति को लेखक ने मानो शून्य में एक चीख माना है या एक उड़ान। लेखक ने कहा है कि हम 'आर्ट गैलरी' में चित्र देखकर उन सदियों को बंद कर आते हैं परंतु उन बंद सदियों की चाभियाँ अपने साथ ले आते हैं तथा बाद में स्मृति के माध्यम से उन चित्रों को, उनके साथ जुड़ी हुई भावनाओं को पुन: खोलते हैं, जिससे अपना अकेलापन समाप्त हो जाता है।

विशेष–लेखक ने वैयक्तिक भावनाओं की प्रतिक्रिया की काव्यात्मक अभिव्यक्ति की है। 'हर कदम पर सदियों को पार करना', शून्यता को काटती एक उड़ान' तथा 'बंद सदियों की चाभियाँ' सुंदर प्रयोग है। पूरा अंश ही मानो एक कविता है जिसे गद्य में प्रस्तुत किया गया है। लेखक ने स्मृतियों को बंद सदियों की 'चाभियाँ' कहा है। स्मृति में यह विशेष गुण होता है कि वह कभी नष्ट नहीं होती। अचेतन में दमित अवश्य हो जाती है। परंतु उन्हें चेतन में लाने के लिए विशेष प्रयास नहीं करना पड़ता। वे ऐसी चाभियाँ है जिनसे किसी भी समय कहीं का भी ताला खोला जा सकता है। उस व्यतीत जगत् में पुन: प्रवेश किया जा सकता है। भावों के अनुरूप ही भाषा भी काव्यात्मकता के अनुरूप है। किसी सुंदर कविता के सभी गुण हमें इन पंक्तियों में उपलब्ध होते हैं।

32.7 सारांश (Summary)

- किसी भी साहित्यिक रचना का मूल्य उसके अन्य गुणों के साथ ही भाषा-शैली से भी आँका जाता है। रचना में यदि भाषा प्रभावी मार्मिक एवं सहज संप्रेषणीय नहीं होगी उसे शब्दाडंबर की ही अभिव्यक्ति माना जाएगा जिससे रचना अपनी अर्थवत्ता खो बैठेगी।
- यूरोप के शहरों में घूमते हुए मुझे यह अक्सर महसूस हुआ है कि इन लोगों के बीच मैं महज 'आउटसाइडर' हूँ–एक बाहर का आदमी। यूरोप के लिए फासिज्म का जो अर्थ रहा है, क्या मैं उसे कभी सही-सही समझ सकूँगा, महसूस कर पाऊँगा?
- लेखक के साथ दुविधा यह है कि वह विदेशों में यात्रा करने निकला था। अत: स्वाभविक रूप से उसके सभी वार्तालाप अंग्रेजी अथवा अन्य किसी विदेशी भाषा में हुए होंगे। संस्मरणों में उसने उन संवादों को स्मरण करके उनका हिंदी अनुवाद प्रस्तुत किया है।
- कोई भी रचना पूरी तरह से पढ़े जाने के लिए लिखी जाती है। इसलिए उसके प्रत्येक वाक्य और अनुच्छेदों में कुछ ऐसी व्यवस्था की जाती है कि पाठक रुचिपूर्वक उसे पढ़ता चले। इसके लिए आवश्यक है कि संस्मरण की भाषा सरल एवं प्रवाहपूर्ण हो।

- जब दुबुआ लौटे, तो रंग दूसरा ही था। इससे पेशतर कि मैं कुछ कह पाता, वह मुझे बिस्तर पर घसीट कर नाचने लगे थे। पीकर आए थे और पूरी आवाज में गा रहे थे। उनके मित्र प्लूम कोने में कुर्सी घसीटकर बैठ गए थे और बराबर हँसते जा रहे थे।
- स्मृतियों में वे जिप्सी स्मृतियाँ हैं, जिनका कोई घर ठिकाना नहीं। भीतर हमें बच-बचकर रास्ता बनाना पड़ा। बियर के गिलास से आँखें ऊपर उठीं। एक हल्की-सी मुस्कुराहट उनके होंठों पर आ सिमटी।
- संस्मरण पुरानी घटनाओं का स्मरण कर उसे पुनः प्रस्तुत करने की विधि है। अतः इसमें सबसे उपयोगी शैली यही वर्णनात्मकता ही है। इस शैली में लेखक घटनाओं, चरित्रों आदि का वर्णन करता चलता है।
- जब तक व्यक्ति किसी घटना को भोग नहीं लेता वह उसके लिए व्यतीत नहीं होती। लेखक बर्लिन में गया है और विभाजित बर्लिन को देखकर उसके हृदय में द्वितीय विश्वयुद्ध की विभीषिका का आतंक भर आया।
- नाटक मात्र मंच पर मंचित कर देने की चीज नहीं अर्थात् यह केवल मनोरंजन की वस्तु नहीं, अपितु यह जीवन को समझने की एक नवीन दृष्टि प्रदान करता है। वह जीवन को जीना सिखाता है।
- इन संस्मरणों की रचना सन् 1964 में हुई थी जब शीतयुद्ध अपने चरम शिखर पर था परंतु 26 वर्षों बाद इन पंक्तियों की प्रासंगिकता ही समाप्त हो गई क्योंकि 1990 में अधिकांश पूर्वी यूरोप के कम्युनिस्ट देशों में राजनीतिक परिवर्तन आया और वहाँ भी प्रजातंत्र की लहर दौड़ गई।
- पूर्वी बर्लिन कम्युनिस्ट देश है अतः वह फासिज्म का विरोध करता है जबकि पश्चिम जर्मनी एक प्रजातांत्रिक राष्ट्र है जो कम्युनिज्म का विरोध करता है परंतु साथ ही वह हिटलर का भी विरोध करता है।
- अमस्टरडम को नहरों का शहर कहा जाता है। वहाँ शहर की गलियों के बीच नहरें हैं और उनके दोनों तरफ मकान हैं। नहरों में ही दुकानें हैं यहाँ तक कि यातायात के लिए नावों का प्रयोग किया जाता है।
- 13वीं-14वीं शताब्दी में आइसलैंड में अनेक साहित्यिक और ऐतिहासिक ग्रंथों की सर्जना हुई। उन दिनों आइसलैंड डेनमार्क का उपनिवेश था। इन ग्रंथों में 'सागा ग्रंथों' को सर्वोच्च स्थान प्राप्त है। इन ग्रंथों की पाण्डुलिपियाँ आज डेनमार्क के संग्रहालयों और पुस्तकालयों में सुरक्षित है।
- लेखक समुद्री जहाज पर 'उत्तरी रोशनियों की ओर' जा रहा है। रात का समय है। चारों ओर अंधकार है। समुद्र का असीम अंधकार और लेखक को अनुभव हो रहा है कि वह इस अनंत अंधकार के एक छोटे से टुकड़े पर तिरते हुए जा रहे हैं।

32.8 शब्दकोश (Keywords)

1. रफ्ता-रफ्ता – धीरे-धीरे
2. मुंदना – बंद होना
3. क्षण – पल
4. वीरान – उजड़ी हुई
5. निर्णय – फैसला
6. इस कदर – इतना
7. परिलक्षित – दिखाई
8. मध्यरात्रि – आधी रात
9. पारदर्शी – आरपार दीखने वाला।

32.9 अभ्यास प्रश्न (Review Questions)

1. 'चीड़ों पर चाँदनी' में लेखक ने भाषा के कितने रूपों का वर्णन किया है?
2. निर्मल वर्मा ने अपने संस्मरण में प्रयुक्त भाषा में वाक्य रचना संबंधी किन विशेषताओं की व्याख्या की है?
3. निर्मल वर्मा की भाषा के शब्द-सौंदर्य का संक्षिप्त आकलन कीजिए।
4. निर्मल वर्मा जी ने संस्मरण संकलन में कितने प्रकार की शैली का वर्णन किया है?

नोट

5. लेखक ने ब्रेख्त के नाटक 'टेरर और मिजरी' देखते समय क्या प्रतिक्रियाएं व्यक्त की?
6. निर्मल वर्मा जी ने स्मृतियों की क्या विशेषता बताई है?
7. वर्मा जी के अनुसार आइसलैंडी किस प्रकार भारतीयों से श्रेष्ठ हैं?
8. एडिनबरो के राष्ट्रीय संग्रहालय की आर्ट गैलरी देखने के बाद लेखक ने क्या प्रतिक्रिया व्यक्त की?

उत्तर : स्व-मूल्यांकन (Answers : Self-Assessment)

1. आत्मीयता	2. प्रवाहपूर्ण	3. दुबुआ	4. भाषागत
5. (ख)	6. (ग)	7. (क)	8. सत्य
9. सत्य	10. असत्य	11. असत्य।	

32.10 सन्दर्भ पुस्तकें (Further Readings)

पुस्तकें चीड़ों पर चाँदनी—निर्मल वर्मा, राजकमल प्रकाशन, दिल्ली।

LOVELY PROFESSIONAL UNIVERSITY
Jalandhar-Delhi G.T. Road (NH-1)
Phagwara, Punjab (India)-144411
For Enquiry: +91-1824-300360
Fax.: +91-1824-506111
Email: odl@lpu.co.in